

امام شرف الدین بوسیری کی مشہور زمانہ کتاب
قصیدہ پردہ شریف کی شرح خرپوتی کا سلیس اردو ترجمہ

(خرپوتی)

شرح قصیدہ پردہ



تالیف

العلامہ عمر بن احمد الخرپوتی

مترجم

شاہ محمد چشتی

پروگریسو بکس

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ
جمہ حقون بکن نامہ محفوظ ہیں

(خرپوتی)

تالیف

العلامہ عمر بن احمد الخزپوتی

منتجم

شاہ محمد چشتی

شرح قصیدہ

| | | |
|---------|-------|------------------------------------------------------|
| بار اول | | مارچ 2016ء |
| پرنٹرز | | آصف صدیق، پرنٹرز |
| تعداد | | 1100/- |
| ناشر | | چوہدری غلام رسول - میاں جواد رسول میاں شہزاد رسول |
| قیمت | | = / روپے |

ملنے کے پتے

مکتبہ بکریہ

042-37112941
0323-8836776 گنج بخش روڈ لاہور فون

ملت پبلی کیشنز

فیصل مسجد اسلام آباد 051-2254111 Ph:

E-mail: millat_publication@yahoo.com

شوروم ملت پبلی کیشنز دوکان نمبر 5- مکہ سنٹر نیوار دو بازار لاہور 0321-4146464
Ph: 042-37239201 Fax: 042-37239200

یوسف ماریٹ ۰ غزنی سٹریٹ
اردو بازار ۰ لاہور
فون 042-37124354 فیکس 042-37352795

پروگریسو بکس

فہرست

| صفحہ | عنوانات |
|------|-----------------------------------------------|
| 28 | ☆ گفتارِ ناشر |
| 30 | ☆ میری سنئے |
| 31 | ☆ خطبہ |
| 31 | ☆ نام رکھنے کی وجہ |
| 32 | ☆ حالاتِ مصنف |
| 32 | ☆ وجہ تصنیفِ قصیدہ |
| 33 | ☆ شرائطِ قصیدہ |
| 35 | ☆ قصیدہ پڑھنے کے اثرات |
| 35 | ☆ قصیدہ کے نام کی تحقیق |
| 36 | ☆ امام بوسیری رحمہ اللہ پر ایک اعتراض کا جواب |
| 36 | ☆ قصیدہ کی تقسیم |
| 37 | ☆ قصیدہ بردہ شریف ☆ (متن مع ترجمہ) |
| 91 | پہلی فصل: اپنے نفس سے باتیں |
| 91 | شعر (۱) |
| 91 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 91 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 91 | ☆ ذکر اور ذکر میں فرق |
| 92 | ☆ ”التفات“ تین طرح کا ہوتا ہے |
| 94 | ☆ لفظ ”ذی“ کا استعمال |

| صفحہ | عنوانات |
|------|---------------------------------------------------------|
| 94 | ☆ ”ذی“ اور ”صاحب“ میں فرق |
| 95 | ☆ لفظ ”مزج“ اور ”خلط“ میں فرق |
| 95 | ☆ غم اور خوشی کے آنسوؤں کی پہچان |
| 97 | شعر (۲) |
| 97 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 97 | ☆ حرف ”آم“ متصلہ اور منقطعہ |
| 101 | شعر (۳) |
| 102 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 102 | ☆ فاء فصیحہ کی وضاحت |
| 102 | ☆ لفظ ”قول“ کے استعمالات |
| 105 | ☆ روح اور جسم میں سے پہلے کسے پیدا کیا گیا؟ |
| 105 | ☆ دل کی شکل و صورت |
| 106 | ☆ شعر ۱، ۲، ۳ کا عمل جانور سدھانے اور زبان کھولنے کیلئے |
| 107 | شعر (۴) |
| 107 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 110 | ☆ محکمہ عشق میں درخواست |
| 111 | شعر (۵) |
| 111 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 111 | ☆ حرف ”لو لا“ کی تحقیق |
| 112 | ☆ لفظ ”ہوی“ کے تین معنی |
| 114 | ☆ شعر نمبر ۵: تنگ دلی اور پریشانی دور کرنے کیلئے |
| 116 | شعر (۶) |
| 116 | ☆ تحقیق الفاظ |

| صفحہ | عنوانات |
|------|----------------------------------------------------------|
| 117 | ☆ "اضافہ" کی تحقیق |
| 119 | ☆ شعر نمبر ۶: برائے حصولِ مراد |
| 120 | ☆ شعر (۷) |
| 120 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 123 | ☆ شعر (۸) |
| 123 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 123 | ☆ لفظ "نعم" کے مقصد |
| 123 | ☆ "بلی" اور "نعم" میں فرق |
| 126 | ☆ ہارون رشید کو حضرت بہلول نے کیا سمجھایا؟ |
| 127 | ☆ شعر نمبر ۸: عورت کے دل کا راز لینے اور چور پکڑنے کیلئے |
| 128 | ☆ شعر (۹) |
| 128 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 129 | ☆ قبیلہ بنو عذرہ کی عظمت |
| 129 | ☆ امام اصمعی رحمہ اللہ کی دلچسپ حکایت |
| 133 | ☆ شعر (۱۰) |
| 133 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 134 | ☆ لفظِ حال کی وضاحت |
| 137 | ☆ شعر (۱۱) |
| 137 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 138 | ☆ حرف "ان" کے عمل کی تحقیق |
| 141 | ☆ شعر نمبر ۱۱: کسی کے شر اور مکر سے بچنے کیلئے |
| 142 | ☆ شعر (۱۲) |
| 143 | ☆ بڑھاپے سے نصیحت لینے کا فاروقی واقعہ |

| صفحہ | عنوانات |
|------|--------------------------------------------------|
| 145 | دوسری فصل: اپنی خواہشوں پر چلنے سے خوف دلانے میں |
| 145 | شعر (۱۳) |
| 147 | ☆ ”نفس“ کی تحقیق |
| 147 | ☆ نفس کی پیدائش کا مقصد |
| 148 | ☆ صوفیہ کے ہاں نفس کے سات مراتب |
| 148 | ☆ ساتوں نفسوں کی پہچان |
| 150 | شعر (۱۴) |
| 150 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 154 | شعر (۱۵) |
| 154 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 156 | شعر (۱۶) |
| 156 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 159 | شعر (۱۷) |
| 159 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 162 | شعر (۱۸) |
| 162 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 162 | ☆ بچپن میں بچہ کیا کیا کہلاتا ہے؟ |
| 164 | ☆ سب سے گھٹیا تشبیہ کون سی؟ |
| 165 | شعر (۱۹) |
| 165 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 166 | ☆ حرف ”اَوْ“ کے معنی |
| 170 | شعر (۲۰) |
| 170 | ☆ تحقیقِ الفاظ |

| صفحہ | عنوانات |
|------|----------------------------------------------|
| 174 | شعر (۲۱) |
| 174 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 175 | ☆ لفظ ”الْمَرْءُ“ کی تحقیق |
| 176 | ☆ حیثیت تین طرح کی |
| 179 | شعر (۲۲) |
| 179 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 179 | ☆ فعل امر کے معنی |
| 180 | ☆ بھوک کیا ہوتی ہے |
| 182 | ☆ ”رَبِّ“ کے لفظ کی لغات |
| 183 | ☆ پیٹ بھر کھانے کے چھ نکتے |
| 184 | ☆ کھانے کی قسمیں |
| 185 | شعر (۲۳) |
| 185 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 186 | ☆ قیامت میں امت کے آنسو آگ بجا دیں گے |
| 187 | ☆ ایک بال کی سفارش پر بخشش |
| 188 | ☆ شعر نمبر ۲۳: کتاب کا مقام حل نہ ہونے کیلئے |
| 189 | شعر (۲۴) |
| 189 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 190 | ☆ لفظ ”شَيْطَانُ“ کی تحقیق |
| 190 | ☆ شیطان کے بارے میں |
| 190 | ☆ کیا اس کی اولاد ہے؟ |
| 194 | شعر (۲۵) |
| 194 | ☆ تحقیق الفاظ |

| صفحہ | عنوانات |
|------|-------------------------------------------------------------|
| 194 | ☆ قصیدہ کا مشکل ترین شعر |
| 195 | ☆ وسوسہ کیسے ہوتا ہے؟ |
| 196 | ☆ وسوسہ سے بچاؤ کا طریقہ |
| 196 | ☆ نفس و شیطان کو پیدا کرنے کی وجہ |
| 197 | ☆ شعر ۲۴، ۲۵: گناہوں پر اصرار کرنے والوں کیلئے |
| 198 | ☆ شعر (۲۶) |
| 198 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 201 | ☆ شعر (۲۷) |
| 201 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 202 | ☆ استقامت کا مقابلہ کرامت سے |
| 205 | ☆ شعر (۲۸) |
| 205 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 207 | ☆ حضرت جنید ابو عبد اللہ اور امام ابو حنیفہ کی عبادت کے رنگ |
| 209 | ☆ تیسری فصل: کمالاتِ مصطفیٰ ﷺ |
| 209 | ☆ شعر (۲۹) |
| 212 | ☆ حضور علیہ السلام پر تہجد فرض تھی |
| 213 | ☆ عبادتوں میں نماز کو اہمیت کریں؟ |
| 215 | ☆ شعر (۳۰) |
| 215 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 219 | ☆ شعر (۳۱) |
| 219 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 220 | ☆ صبر والے فقیر کا مرتبہ |
| 221 | ☆ حضور ﷺ کی حضرت یوسف سے برتری |

| صفحہ | عنوانات |
|------|-----------------------------------------------|
| 222 | شعر (۳۲) |
| 222 | ☆ زہد نبی اکرم صلی اللہ علیہ وسلم |
| 223 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 225 | شعر (۳۳) |
| 225 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 226 | ☆ لفظ دنیا کیا ہے؟ |
| 226 | ☆ دنیا کو دنیا کہنے کی وجہ |
| 228 | شعر (۳۴) |
| 228 | ☆ اسم ”محمد“ کا افضل ہونا |
| 229 | ☆ سید الکونین کی وضاحت |
| 230 | ☆ ”ثقلین“ کون ہیں؟ |
| 232 | شعر (۳۵) |
| 232 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 232 | ☆ نبی اور رسول میں فرق |
| 233 | ☆ لفظ ”آحد“ کی اصل |
| 236 | شعر (۳۶) |
| 236 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 237 | ☆ خلیل اور حبیب میں فرق |
| 237 | ☆ امام غزالی رحمہ اللہ کا ایک واقعہ |
| 238 | ☆ ”رجاء“ اور ”تمنی“ میں فرق |
| 239 | ☆ شفاعت پانچ طرح کی |
| 239 | ☆ شعر نمبر ۳۶: دنیاوی اور اخروی ضرورتوں کیلئے |

| صفحہ | عنوانات |
|------|------------------------------------------------|
| 241 | شعر (۳۷) |
| 241 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 241 | ☆ ارشاد اور دعوت میں فرق |
| 244 | شعر (۳۸) |
| 244 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 245 | ☆ عظمت رسول پر دلائل |
| 247 | ☆ نبیوں میں سے کسی کو دوسروں پر برتری دینا منع |
| 247 | ☆ برتری کیلئے صورتیں |
| 249 | شعر (۳۹) |
| 249 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 249 | ☆ لفظ ”کُل“ کی تحقیق |
| 250 | ☆ دعاء التماس اور امر میں فرق کیا ہے |
| 252 | شعر (۴۰) |
| 252 | ☆ لفظ ”لَدَى“ پڑھنے کے آٹھ طریقے |
| 252 | ☆ ”لَدَى“ اور ”عِنْدَ“ میں فرق |
| 253 | ☆ ”الْحَدَّ“ کے چھ معنی |
| 256 | شعر (۴۱) |
| 256 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 259 | شعر (۴۲) |
| 259 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 260 | ☆ علماء و متکلمین کے ہاں جوہر کی قسمیں |
| 262 | شعر (۴۳) |
| 262 | ☆ تحقیق الفاظ |

| صفحہ | عنوانات |
|------|------------------------------------------------------------|
| 263 | ☆ عیسائیوں کے تین اہم فرقے |
| 265 | شعر (۴۴) |
| 265 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 265 | ☆ لفظ "ذات" کی تحقیق |
| 266 | ☆ شرف اور عظمت میں فرق |
| 267 | شعر (۴۵) |
| 267 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 269 | شعر (۴۶) |
| 271 | ☆ کیا حضور علیہ السلام کو مردے زندہ کرنے کا معجزہ ملا تھا؟ |
| 272 | ☆ شعر نمبر ۴۶: موت کی سختی سے بچاؤ |
| 273 | شعر (۴۷) |
| 273 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 273 | ☆ امام کسائی اور علمِ نحو |
| 274 | ☆ عقل کو عقل کہنے کی وجہ |
| 274 | ☆ عقل، نفس اور ذہن |
| 274 | ☆ عقل کے کئی معنی |
| 275 | ☆ عقل کہاں ہوتی ہے؟ |
| 278 | شعر (۴۸) |
| 278 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 278 | ☆ لفظ "لَیْسَ" کیا ہے؟ |
| 280 | شعر (۴۹) |
| 280 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 281 | ☆ زمین کے مقابلے سورج ایک سو ساٹھ گنا سے زیادہ |

| صفحہ | عنوانات |
|------|-----------------------------|
| 283 | شعر (۵۰) |
| 283 | ☆ علم کے بارہ مرتبے |
| 284 | ☆ لفظ "قوم" میں تین قول |
| 284 | ☆ نیند کیا ہے؟ |
| 286 | شعر (۵۱) |
| 286 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 286 | ☆ بشر کیا ہوتا ہے؟ |
| 288 | شعر (۵۲) |
| 288 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 288 | ☆ لفظ "آتی" کے کئی معنی |
| 290 | ☆ حدیث نور |
| 292 | شعر (۵۳) |
| 292 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 294 | ☆ عظمت حبیب اور دیگر انبیاء |
| 294 | ☆ حضرت ادریس علیہ السلام |
| 295 | ☆ حضرت نوح علیہ السلام |
| 295 | ☆ حضرت ابراہیم علیہ السلام |
| 295 | ☆ حضرت موسیٰ علیہ السلام |
| 296 | ☆ حضرت ہارون علیہ السلام |
| 296 | ☆ حضرت یوسف علیہ السلام |
| 297 | ☆ حضرت داؤد علیہ السلام |
| 297 | ☆ حضرت سلیمان علیہ السلام |
| 297 | ☆ حضرت عیسیٰ علیہ السلام |

| صفحہ | عنوانات |
|------|-----------------------------------------|
| 298 | شعر (۵۴) |
| 298 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 299 | ☆ اشتمال اور شمول میں فرق |
| 300 | ☆ کیا آقا ہنستے بھی تھے؟ |
| 302 | شعر (۵۵) |
| 302 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 303 | ☆ پھول کے سفید، سرخ اور زرد ہونے کی وجہ |
| 304 | ☆ کرم، جود اور سخا میں فرق |
| 305 | ☆ ”دھر“ کی تحقیق |
| 306 | شعر (۵۶) |
| 306 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 306 | ☆ کبیر، جلیل اور عظیم بولنے میں فرق |
| 307 | ☆ آقا کے سامنے ابو جہل کا خوف |
| 309 | شعر (۵۷) |
| 309 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 309 | ☆ پیسی کیا ہوتی ہے؟ |
| 312 | شعر (۵۸) |
| 312 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 314 | ☆ قبر انور کی زیارت کا شرعی مقام |
| 316 | شعر (۵۹) |
| 316 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 316 | ☆ لفظ ”عَنْ“ کے کئی معنی |
| 317 | ☆ عجائباتِ ولادت |

| صفحہ | عنوانات |
|------|-----------------------------------------|
| 319 | چوتھی فصل: میلادِ مصطفیٰ ﷺ |
| 319 | شعر (۶۰) |
| 319 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 319 | ☆ یومِ ولادت کا صحیح وقت |
| 319 | ☆ پیر کے دن کی اہمیت |
| 320 | ☆ اہلِ فارس کی خوبی میں حدیث |
| 320 | ☆ ولادتِ مبارکہ پر نوشیروان کی خواب |
| 321 | ☆ سطحِ راہب کی تعبیر اور قتل |
| 322 | شعر (۶۱) |
| 322 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 322 | ☆ بادشاہوں کے لقب |
| 323 | ☆ ”ایوان“ پر تبصرہ |
| 325 | شعر (۶۲) |
| 325 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 328 | شعر (۶۳) |
| 328 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 330 | شعر (۶۴) |
| 330 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 332 | شعر (۶۵) |
| 332 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 322 | ☆ جنوں اور فرشتوں کا نظر نہ آنا رحمت ہے |
| 322 | ☆ جنوں کی تین قسمیں |

| صفحہ | عنوانات |
|------|----------------------------------|
| 333 | ☆ جنوں کے بھی مذہب ہیں |
| 335 | شعر (۶۶) |
| 335 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 337 | شعر (۶۷) |
| 337 | ☆ کاہن کون ہوتا ہے؟ |
| 338 | ☆ یہودی کا ولادتِ محبوب پر بیان |
| 340 | شعر (۶۸) |
| 340 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 340 | ☆ آسمانی فیصلے زمین پر کیسے؟ |
| 341 | ☆ ”صنم“ اور ”وثن“ میں فرق |
| 343 | شعر (۶۹) |
| 343 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 345 | شعر (۷۰) |
| 345 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 345 | ☆ ابرہہ بادشاہ کا واقعہ |
| 349 | شعر (۷۱) |
| 349 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 351 | ☆ حضرت یونس علیہ السلام کا واقعہ |
| 353 | پانچویں فصل: معجزاتِ مصطفیٰ ﷺ |
| 353 | شعر (۷۲) |
| 353 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 353 | ☆ شجرِ نبات اور نجم میں فرق |

| صفحہ | عنوانات |
|------|----------------------------------------------------|
| 356 | شعر (۷۳) ☆ تحقیق الفاظ |
| 356 | |
| 358 | شعر (۷۴) ☆ تحقیق الفاظ |
| 358 | |
| 359 | ☆ واقعہ بحیرہ راہب |
| 361 | شعر (۷۵) ☆ اللہ کے علاوہ قسم کا حکم |
| 361 | |
| 365 | شعر (۷۶) ☆ تحقیق الفاظ |
| 365 | |
| 368 | شعر (۷۷) ☆ تحقیق الفاظ |
| 368 | |
| 369 | ☆ لعاب مبارک لگانے سے زہر کا اثر ختم |
| 371 | شعر (۷۸) ☆ تحقیق الفاظ |
| 371 | |
| 371 | ☆ کبوتر کے کمالات |
| 372 | ☆ عنکبوت کی حقیقت |
| 374 | شعر (۷۹) ☆ ہجرت مدینہ کا مقصد |
| 375 | |
| 375 | ☆ شعر نمبر ۷۹: جنگلی درندوں سے ڈروالی جگہ پر حفاظت |
| 377 | شعر (۸۰) ☆ تحقیق الفاظ |
| 377 | |
| 377 | ☆ زمانہ کی بُرائی منع ہے |
| 379 | ☆ شعر نمبر ۸۰: سفر سے واپسی تک حفاظت کیلئے |

| صفحہ | عنوانات |
|------|-----------------------------------------------------|
| 380 | شعر (۸۱) |
| 380 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 382 | شعر (۸۲) |
| 382 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 382 | ☆ وحی کے معنی اور طریقے |
| 383 | ☆ ”رؤیا“ کیا ہے؟ |
| 386 | شعر (۸۳) |
| 386 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 388 | شعر (۸۴) |
| 388 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 391 | شعر (۸۵) |
| 391 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 393 | ☆ آیات شفاء |
| 393 | ☆ دعاء کرب ہر مشکل کیلئے |
| 393 | ☆ علامہ خرپوتی کے استاذ کی بیوی کو دعاء کرب سے شفاء |
| 394 | ☆ ہرنی کا واقعہ |
| 396 | شعر (۸۶) |
| 396 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 399 | شعر (۸۷) |
| 399 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 400 | ☆ وادی عرم کیسی تھی؟ |

| صفحہ | عنوانات |
|------|-----------------------------------------|
| 402 | چھٹی فصل: قرآن کریم کی اہمیت اور عظمت |
| 402 | شعر (۸۸) |
| 402 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 404 | شعر (۸۹) |
| 404 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 406 | شعر (۹۰) |
| 406 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 408 | شعر (۹۱) |
| 408 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 409 | ☆ کلام اللہ کے بارے میں سات مذہب |
| 411 | شعر (۹۲) |
| 411 | ☆ متکلمین اور حکماء کے ہاں زمان کیا ہے؟ |
| 412 | ☆ قصہ قوم عاد |
| 413 | ☆ عاد کی اولاد |
| 415 | شعر (۹۳) |
| 415 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 415 | ☆ معجزہ کیا ہوتا ہے؟ |
| 416 | ☆ عادت کے خلاف کام آٹھ ہوتے ہیں |
| 418 | شعر (۹۴) |
| 418 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 419 | ☆ احکام قرآن کی دس قسمیں |
| 421 | شعر (۹۵) |
| 421 | ☆ تحقیق الفاظ |

| صفحہ | عنوانات |
|------|------------------------------------------|
| 422 | ☆ ولید بن مغیرہ خاموش ہو گیا |
| 424 | ☆ شعر (۹۶) |
| 424 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 427 | ☆ شعر (۹۷) |
| 427 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 429 | ☆ شعر (۹۸) |
| 429 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 430 | ☆ ”علی“ بمعنی ”مع“ |
| 432 | ☆ شعر (۹۹) |
| 432 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 435 | ☆ شعر (۱۰۰) |
| 435 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 436 | ☆ قرآن دیکھ کر پڑھنا کیوں زیادہ بہتر ہے؟ |
| 437 | ☆ مسواک، روزہ اور تلاوت کے فائدے |
| 437 | ☆ دکھلاوا کرنے پر تلاوت کا ثواب نہیں |
| 438 | ☆ بچوں کو قرآن پڑھانے پر اجر |
| 439 | ☆ شعر (۱۰۱) |
| 439 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 439 | ☆ حوض کوثر کہاں ہوگا؟ |
| 440 | ☆ حوض ایک ہوگا یا دو؟ |
| 440 | ☆ معرفہ کی صفت کبھی نکرہ بھی ہو سکتی ہے |
| 441 | ☆ قرآن کس شکل میں شفاعت کرے گا؟ |

| صفحہ | عنوانات |
|------|------------------------------------------------|
| 443 | شعر (۱۰۲) |
| 443 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 443 | ☆ پل صراط کیسی ہوگی؟ |
| 443 | ☆ میزان کیسی ہوگی؟ |
| 444 | ☆ حضرت سعید بن جبیر کا حجاج کے سامنے علمی جواب |
| 446 | شعر (۱۰۳) |
| 446 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 446 | ☆ حسد اور غبطہ میں فرق |
| 448 | شعر (۱۰۴) |
| 448 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 448 | ☆ نور اور ضیاء میں فرق |
| 451 | ساتویں فصل: معراج مصطفیٰ ﷺ |
| 451 | شعر (۱۰۵) |
| 451 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 454 | شعر (۱۰۶) |
| 454 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 454 | ☆ نعمت دو طرح کی |
| 455 | ☆ تصوف میں نعمت کی قسمیں |
| 455 | ☆ معراج کی حکمت |
| 458 | شعر (۱۰۷) |
| 458 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 458 | ☆ کیا معراج روح اور جسم دونوں کو ہوئی؟ |
| 458 | ☆ ۳۴ معراج |

| صفحہ | عنوانات |
|------|-----------------------------------------------|
| 459 | ☆ بیت اللہ کیلئے قلعہ |
| 459 | ☆ حرم کی حدیں |
| 459 | ☆ معراج رات ہی کو کیوں؟ |
| 462 | ☆ شعر (۱۰۸) |
| 462 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 463 | ☆ آپ کی دعاء اور اُمت پر کرم |
| 463 | ☆ شعر نمبر ۱۰۸: طے شدہ شادی میں رکاوٹ کیلئے |
| 465 | ☆ شعر (۱۰۹) |
| 465 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 466 | ☆ کیا بیت المقدس میں نماز معراج سے پہلے ہوئی؟ |
| 466 | ☆ نماز فرض تھی یا نفل |
| 467 | ☆ شعر (۱۱۰) |
| 467 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 470 | ☆ شعر (۱۱۱) |
| 470 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 471 | ☆ سدرۃ المنتہیٰ کیا ہے؟ |
| 472 | ☆ شعر (۱۱۲) |
| 472 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 472 | ☆ ”مقام“ اور ”مُقام“ میں فرق |
| 473 | ☆ ”اِذْ“ کا استعمال چار طرح |
| 476 | ☆ شعر (۱۱۳) |
| 476 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 477 | ☆ حضور ﷺ نے اللہ کو کس طرح دیکھا؟ |

| صفحہ | عنوانات |
|------|-------------------------------------|
| 477 | ☆ صاحبِ کواشی کا عندیہ |
| 477 | ☆ علامہ حقی کی تحقیق |
| 479 | ☆ اللہ نے آپ کو کون سی وحی فرمائی؟ |
| 480 | شعر (۱۱۴) |
| 480 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 481 | ☆ حجاب ذہب اور حجاب لؤلؤ تک رسائی |
| 482 | شعر (۱۱۵) |
| 482 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 482 | ☆ ”مَا أَوْحَى“ میں کیا تھا؟ |
| 485 | شعر (۱۱۶) |
| 485 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 485 | ☆ ”مَعَشَر“ کا مفہوم |
| 486 | ☆ اُمت کی خصوصیات |
| 489 | شعر (۱۱۷) |
| 489 | ☆ تحقیقِ الفاظ اور ”لما“ کا استعمال |
| 490 | ☆ اُمت کی ایک اور عظمت |
| 492 | آٹھویں فصل: جہادِ مصطفیٰ ﷺ |
| 492 | شعر (۱۱۸) |
| 492 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 495 | شعر (۱۱۹) |
| 495 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 495 | ☆ حضور ﷺ جن جنگوں میں خود لڑے |

| صفحہ | عنوانات |
|------|------------------------------------------------------|
| 497 | شعر (۱۲۰) |
| 497 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 499 | شعر (۱۲۱) |
| 499 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 500 | ☆ بارہ مہینوں کے قدیم و جدید نام اور ان کی وجہ تسمیہ |
| 503 | شعر (۱۲۲) |
| 503 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 503 | ☆ دین کی وضاحت |
| 506 | شعر (۱۲۳) |
| 506 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 506 | ☆ لشکر کے حصے |
| 509 | شعر (۱۲۴) |
| 509 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 511 | شعر (۱۲۵) |
| 511 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 511 | ☆ دین، شریعت، ملت اور ناموس میں فرق |
| 513 | شعر (۱۲۶) |
| 513 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 514 | ☆ یتیم کون ہوتا ہے؟ |
| 516 | شعر (۱۲۷) |
| 516 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 518 | شعر (۱۲۸) |
| 518 | ☆ تحقیقِ الفاظ |

| صفحہ | عنوانات |
|------|---------------------------------------|
| 518 | ☆ واقعہ جنگِ حنین |
| 519 | ☆ غزوہ بدر |
| 520 | ☆ جنگِ احد کا واقعہ |
| 522 | شعر (۱۲۹) |
| 522 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 524 | شعر (۱۳۰) |
| 524 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 526 | شعر (۱۳۱) |
| 526 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 528 | شعر (۱۳۲) |
| 528 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 530 | شعر (۱۳۳) |
| 530 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 532 | شعر (۱۳۴) |
| 532 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 534 | شعر (۱۳۵) |
| 534 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 536 | شعر (۱۳۶) |
| 536 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 537 | ☆ علماء و اولیاء کو آقا کی مدد ملی ہے |
| 538 | شعر (۱۳۷) |
| 538 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 538 | ☆ اُمت کی دو قسمیں |

| صفحہ | عنوانات |
|------|--------------------------------------|
| 541 | شعر (۱۳۸) |
| 541 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 543 | شعر (۱۳۹) |
| 543 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 545 | نویں فصل: رسول کریم ﷺ کو وسیلہ بنانا |
| 545 | شعر (۱۴۰) |
| 545 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 547 | شعر (۱۴۱) |
| 547 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 549 | شعر (۱۴۲) |
| 549 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 551 | شعر (۱۴۳) |
| 551 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 554 | شعر (۱۴۴) |
| 554 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 555 | ☆ ”بیع“ کی تسمیہ |
| 557 | شعر (۱۴۵) |
| 557 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 559 | شعر (۱۴۶) |
| 559 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 559 | ☆ عظمت نام محمد (ﷺ) |
| 561 | شعر (۱۴۷) |
| 561 | ☆ تحقیق الفاظ |

| صفحہ | عنوانات |
|------|---------------------------------------------|
| 562 | ☆ حرفِ "آلا" کیا ہے؟ |
| 563 | ☆ شعر (۱۴۸) |
| 563 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 565 | ☆ شعر (۱۴۹) |
| 565 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 567 | ☆ شعر (۱۵۰) |
| 567 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 567 | ☆ "حیا" اور "حیاء" میں فرق اور عجیب واقعہ |
| 570 | ☆ شعر (۱۵۱) |
| 570 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 570 | ☆ زہیر شاعر کا تعارف |
| 572 | ☆ دسویں فصل: بارگاہِ مصطفیٰ ﷺ میں درخواستیں |
| 572 | ☆ شعر (۱۵۲) |
| 572 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 573 | ☆ شعر (۱۵۳) |
| 573 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 574 | ☆ شعر (۱۵۴) |
| 574 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 575 | ☆ لوحیں چار ہیں |
| 577 | ☆ شعر (۱۵۵) |
| 577 | ☆ تحقیقِ الفاظ |
| 578 | ☆ کبیرہ گناہ کون کون سے؟ |

| صفحہ | عنوانات |
|------|------------------------------------|
| 579 | شعر (۱۵۶) |
| 579 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 581 | شعر (۱۵۷) |
| 581 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 583 | شعر (۱۵۸) |
| 583 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 583 | ☆ نیک و بد کو پوشیدہ رکھنے کی حکمت |
| 585 | شعر (۱۵۹) |
| 587 | شعر (۱۶۰) |
| 587 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 589 | شعر (۱۶۱) |
| 589 | ☆ تحقیق الفاظ |
| 589 | ☆ ہوا کے چار اقسام |
| 589 | |



گفتارِ ناشر

انسان دنیا میں رہ کر اپنی عزت، شہرت، عظمت اور ناموری کے لیے گونا گوں کام کرتا ہے لیکن دل کی اتھاہ گہرائیوں میں حقیقی اور واقعی اطمینان و سکون نہیں پاتا، آخر وجہ کیا ہے؟ اس کا جواب قرآن مجید کی یہ آیت مبارکہ ہے:

ءَا لَّا بَدَّكَرَ اللّٰهُ تَطْمِثِنَ الْقُلُوْبَ .

کے دلوں کا اطمینان و سکون ذکرِ الہی ہی میں مضمر ہے جس کے ذیل میں تلاوت، نوافل، خوش گفتاری اور تالیفِ قلوب وغیرہ جیسے بے شمار اعمال و اعتقادات آتے ہیں جن سے آخرت سنورتی ہے اور جو مدعائے مسلم ہے، البتہ سرورِ کونین ﷺ کی نگاہِ انور میں سب سے پسندیدہ کام دینِ متین میں لگے رہنا ہے خواہ تدریسی، تقریری، تالیفی و تصنیفی شکل میں ہو یا تعلیمی و محافلِ علمیہ کے انعقاد کی صورت میں ہو، بہر حال ہر مسلمان کے لیے ضروری ہے کہ اپنی آخرت سنوارنے کے لیے دنیا میں رہ کر کچھ تو ضرور کرے تاکہ بارگاہِ الہی و مصطفائی میں حاضری کے موقع پر کائنات کے سامنے رسوائی اٹھانا نہ پڑے۔

بفضلہ تعالیٰ ہم نے بھی دوسرے بھائیوں کی طرح نثری سلسلے کا آغاز کر رکھا ہے اور مختصر عرصہ میں مسند ابوداؤد طیالسی، صحیح ابن حبان، صحیح ابن خزیمہ، مسند حمیدی، المعجم الاوسط، شرح المعجم الصغیر للطبرانی جیسی ضخیم کتب کے تراجم شائع کیے ہیں جنہیں زبردست پذیرائی ملی ہے۔ علاوہ ازیں کئی بھاری بھر کم کتب کے تراجم کرائے جا رہے ہیں جو انشاء اللہ جلد یا بدیر شائع کیے جائیں گے۔

پھر مزید برآں ہمارے ادارے کی مطبوعات میں مولانا محمد سعید نقشبندی رحمہ اللہ (سابق خطیب داتا صاحب) کے قلم سے کیمیائے سعادت، منہاج العابدین اور مکتوباتِ امام ربانی کے تراجم بھی شامل ہیں، پروفیسر محمد اقبال مجددی کے قلم سے تذکرہ علماء و مشائخ پاکستان و ہند مقاماتِ مظہری اور حدیقتہ الاولیاء شامل ہیں اور مولانا محمد صدیق ہزاروی کا ترجمہ احیاء العلوم (غزالی) بھی شامل ہے۔

اس وقت ہم بارگاہِ رسول ﷺ میں مقبول قصیدہ بردہ کی تحقیقی، تفصیلی اور علمی شرح

”قصیدۃ الشہدہ“ کا ترجمہ پیش کر رہے ہیں جو علامہ عمر بن احمد خرپوتی رحمہ اللہ کی تالیف ہے۔ یہ قصیدہ بردہ کی سب سے بڑی شرح اور پاک و ہند کے علماء میں بڑی مقبول ہے۔ علامہ خرپوتی نے قصیدۃ مبارکہ کے ہر مبہم و مشکل مقام کو عربی گرائمر کے ذریعہ حل کیا ہے، دوسرے شعر کا پہلے شعر سے رابطہ بتایا ہے، مشکل الفاظ کی وضاحت کی ہے، مناسب مقامات پر آیات و احادیث کے علاوہ اکابر کی کلام سے استناد کیا ہے، عجیب و غریب تحقیقات بیان کی ہیں، قصیدہ کے فنی کمالات کو اجاگر کیا ہے، استعارات کی وضاحت کی ہے، ضروری واقعات کا ذکر کیا ہے اور ان اشعار کی نشاندہی کر دی ہے جو دنیا کے کسی بھی کام کے لیے کارآمد ہیں۔ ترجمہ شاہ محمد چشتی سیالوی (پتو) نے کیا ہے جو اڑھائی درجن سے زیادہ عربی کتابوں کے ترجمے کر چکے ہیں۔ ترجمہ پڑھ کر آپ کے دلوں میں عشقِ رسول ﷺ مزید موجزن ہوگا۔

علامہ نے اس شرح میں صحاح ستہ کے علاوہ تیس سے زیادہ کتب سامنے رکھی تھیں جس سے شرح کی اہمیت کا پتہ چلتا ہے۔

ہم اسے نہایت عقیدت و محبت کے ساتھ بہترین صورت میں پیش کر رہے ہیں۔
دعا ہے کہ اللہ تعالیٰ اسے شرفِ قبولیت سے نوازے اور ہمارے لیے ذریعہ نجات بنائے۔

آپ لوگوں کی دعاؤں کے طلبگار:

چو ہدری غلام رسول
چو ہدری شہباز رسول
چو ہدری جواد رسول
چو ہدری شہزاد رسول



میری سنئے

مطلوبِ کائنات عشقِ رسول ﷺ وہ عنوان سرنامہ ہے جس میں جلا دینے کا مفہوم موجود ہے اور خوش قسمت صاحبانِ عشقِ کائنات بھر میں لا تعداد ہو چکے اور تاقیامت ہوتے رہیں گے جن کا تنوع ”ہر گلے رارنگ و بوئے دیگر است“ کے مطابق ہے۔ موضوع کی پاکیزگی، ندرت، اہمیت اور ہر دلعزیزی نے رونقِ خلق کی خاطر نباتات، حیوانات، جمادات اور انسانوں میں سے مجموعی طور پر ان گنت افراد کا ایک گونہ تعارف کرایا ہے۔ نظمی کلام کی روح نعتیہ قصائد بنتے ہیں جن میں بالخصوص روح انسانی کو تڑپا دینے والی کیفیت موجود ہے صاحبانِ قصائد میں سے کچھ لوگ مقبولیت کی بناء پر عالمی طور پر متعارف ہو چکے ہیں، عاشقِ جمالِ رسول ﷺ علامہ شرف الدین محمد بن سعید مصری بوسیری (م ۶۹۴ھ) نور اللہ مرقدہ نے بھی ”قصیدہ بردہ شریف“ کے نام سے ایک قصیدہ لکھا جسے سرکارِ دو عالم ﷺ نے خود ان کی زبانی سن کر بلکہ اپنی طرف سے ایک مصرعہ ایزاد فرما کر اسے عالمی مقبولیت کی سند عطا فرمادی جس کی کئی زبانوں میں شرحیں ہوئیں جن میں علامہ محمد بن عمر خرپوتی (ترکی) قدس سرہ کی شرح ”عصیدہ الشہدہ“ کے اردو ترجمہ کا شرف خوش قسمتی سے میرے حصہ میں آیا ہے اور بر بنائے صحت یقیناً یہ میرے لئے ایک اعزاز ہے۔

علامہ خرپوتی نے عظیم قصیدہ مبارکہ کی شرح نہایت انوکھے انداز میں کی ہے۔ ہر شعر کا پچھلے شعر سے رابطہ بتایا ہے۔ حلی لغات میں بعض لفظوں کے کئی معانی بتا کر شعر سے متعلق معنوں کی نشاندہی کی ہے، لفظوں کے اعرابی احتمالات بیان کرتے ہوئے ہر اعرابی حالت کے مطابق معانی پر روشنی ڈالی ہے، قصیدہ کے لفظوں کے قرآنی و حدیثی ماخذ بتائے ہیں اور ان میں مندرجہ واقعات کی طرف اشارے کرتے ہوئے دلچسپ اور قابلِ ضرورت واقعات کا ذکر بھی کر دیا ہے۔

شرح مبارک میں علمِ لغت، علمِ صرف، علمِ نحو، علمِ منطق، علمِ فلسفہ، علمِ ریاضی، علمِ قراءت، علمِ معانی، علمِ بیان اور علمِ بدیع ایسے علوم کو استعمال فرمایا ہے اور یوں قصیدہ مبارکہ کے قابلِ پذیرانی بننے کا راز بیان کیا ہے چنانچہ یہ شرح ٹھوس اہلِ علم، مدرسین، طلباء، مدارس دینیہ اور عام اہلِ محبت مؤمنین کیلئے ایک نعمتِ غیر مترقبہ بن گئی ہے۔ امید ہے کہ یہ سب حضرات اس سے کما حقہ مستفید ہوں گے۔

ادارہ پروگریسو بکس نے اسے عمدہ طریقے پر چھاپ کر قارئین کی دینی و روحانی دلچسپی میں اضافہ کر دیا ہے اور اپنے لئے بارگاہِ رسالت میں مضبوط رشتہ عقیدت کی بنیاد فراہم کر لی ہے۔ پروردگار سرکارِ دو عالم ﷺ سے رشتہ موڈت بنانے کی توفیق عطا فرمائے۔ آمین!

نوٹ: ترجمہ کی ممکنہ کوتاہیوں پر اہلِ علم سے توجہ چاہوں گا۔

اساتذہ و مشائخ کے بے نام خادم: شاہ محمد چشتی سیالوی عفی عنہ

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ

خطبہ

ہر تعریف اس اللہ تعالیٰ کی ہے جس نے شاعروں کے دلوں میں حکمت و دانائی بھر رکھی ہے اور عاشقوں کے دلوں میں اپنی بہت ساری محبت ڈالی ہے اور رحمتیں ہمارے اس سردار حضرت محمد (صلی اللہ علیہ وسلم) پر اُترتی رہیں جنہیں سراہنے والوں نے اپنے قصیدوں اور شعروں کے ساتھ سراہا ہے، وہ ان کی شان بیان کرنے سے عاجز آگئے اور اپنی عاجزی ماننے پر مجبور ہو گئے اور ان کی ایسی آل پر اُترتی رہیں جو راہنمائی کرنے والے اور ہماری پیروی کے لائق ہیں اور پھر آپ کے ان صحابہ کرام پر اُترتی رہیں کہ جو بھی ان کی پیروی کرتا ہے، سیدھی راہ پر چل نکلتا ہے۔

نام رکھنے کی وجہ

حمد و صلوة کے بعد ایک بیمار اور ناکارہ فقیر عمر بن احمد خرپوتی (اللہ تعالیٰ باپ بیٹوں کو دنیا اور آخرت میں عزت عطا فرمائے) کہتا ہے کہ جب میں نے ۱۲۴۱ھ میں مولانا علامہ (ہم سے بہتر اور بہت سمجھدار دوست دل اور مضبوط رائے والے رسول اکرم صلی اللہ علیہ وسلم کے حُسن پر عاشق اللہ کے نبی کی محبت میں خالص) اپنے استاد محمد بن عبد اللہ قصیری کے ہاں قصیدہ بردہ مبارکہ پڑھنا شروع کیا (جو ملک و طاقتور اللہ کے نبی کے ہمنام ہیں، اللہ انہیں ہمارے لئے ایک کامل رہنما اور بڑی رحمت بنائے رکھے، ہمیں ان کے وجود کا سایہ نصیب کرے اور ہمیں ان کی سخاوت کے ہاتھوں سے عزت بخشے) اور میں نے اس عجیب و غریب قصیدے پر ان کی ایسی تقریریں دیکھیں جو قیمتی موتیوں کی پروئی ہوئی لڑی ہیں تو میں نے کوئی کمی کئے بغیر انہیں جمع کرنے کا ارادہ کر لیا بلکہ اپنی طرف سے کچھ قاعدے اور بیان بڑھا دیئے حالانکہ میں اس میدان میں ایک عاجز اور بے ہمت ہوں بلکہ ایسے حال میں میں نے اللہ سے مدد مانگی جو بادشاہ مہربان اور خوبصورت ہے اور ہر بڑے کام میں مدد دیتا ہے۔ میرے جیسے کیلئے تو کسی کہنے والے کے مطابق یوں کہنا ضروری ہے کہ: ”بیچ جاؤ کہ کہیں یہ کام تمہاری کمر نہ توڑ دے“ تاہم میں نے اس دور کے علماء کی ہمتوں سے سبق سیکھا کیونکہ وہ لوگوں میں جانے پہچانے اور اسلام کے مددگار ہیں چنانچہ میری مرضی کے مطابق یہ کتاب اور پسندیدہ شرح تیار ہو گئی، میں نے اس کا نام

”عَصِيدَةُ الشَّهَدَةِ شَرَحُ الْقَصِيدَةِ الْبُرْدَةِ“ رکھا (چھتے سے نکلنے والے بہترین شہد کا ستھرا حلوہ جو قصیدہ بردہ کی شرح ہے)۔ میں اللہ کی مدد اور اپنے اس رب کی مہربانی سے شرح کرتا ہوں جو عظیم بادشاہ اور رحیم و کریم ہے۔

حالاتِ مصنف

اس سلسلے میں مجھ پر لازم ہے کہ ناظم قصیدہ کے کچھ حالات بتاؤں، حضور ابوالقاسم نبی کریم علیہ السلام کی شان میں لکھے گئے اس قصیدہ کے لکھنے کا سبب بتاؤں، اسے پڑھنے کی شرطیں بیان کروں، اسے یہ نام دینے کی وجہیں لکھوں اور قصیدہ پڑھنے کے اثرات بیان کر دوں تاکہ پڑھنے والوں میں اس کی شانوں سے دلچسپی پیدا ہو سکے۔

یاد رہے کہ قصیدہ لکھنے والے ذہین عالم رحمہ اللہ تعالیٰ مصر کے رہنے والے تھے اور ان کا نام شرف الدین محمد بوسیری تھا کیونکہ وہ مصر کے ایک گاؤں ”بوسیر“ میں رہتے تھے، عربی علموں کے عالم بڑے فصیح اور زبردست بلغ تھے (ہر بات کو کھل کر اور موقع محل کے مطابق بیان کرتے تھے) بلکہ یوں کہنا چاہیے کہ بھرے مجموعوں میں ان جیسا فصیح و بلغ دیکھنے میں نہیں آیا۔ ابتدائی عمر میں آپ بادشاہوں کے قریبی اور سب کے ہاں مانے ہوئے تھے، آپ اپنے فصیح شعروں کے ساتھ انہیں سراہتے اور سخت بُرے الفاظ میں ان کے دشمنوں پر برستے تھے۔

ایک دن آپ ایک بادشاہ سے مل کر گھر واپس آ رہے تھے کہ بازار میں ایک بزرگ شیخ سے ملاقات ہو گئی، انہوں نے آپ سے پوچھا کہ کیا آج رات آپ کو رسول اللہ ﷺ کی زیارت نصیب ہوئی ہے؟ امام بوسیری بتاتے ہیں کہ میں نے گزشتہ رات نبی کریم ﷺ کی زیارت تو نہیں کی تھی تاہم ان کی اس بات پر میرا دل حضور ﷺ کے عشق و محبت سے بھر گیا چنانچہ میں گھر واپس آ کر سو گیا تو خواب میں مجھے رسول اللہ ﷺ کی زیارت ہوئی، آپ کے صحابہ بھی ہمراہ تھے اور آپ ان میں یوں دکھائی دے رہے تھے جیسے ستاروں میں سورج نمایاں نظر آتا ہے۔ میں جاگا تو میرے دل میں محبت اور خوشی بھر چکی تھی اور پھر میرے دل میں اس نور سے پیار عرصہ تک قائم رہا چنانچہ میں نے اس کے بعد آپ کی شان میں قصیدہ مُضْرِيہ اور قصیدہ ہَمْزِيہ جیسے بہت سے قصیدے لکھے۔

وجہ تصنیفِ قصیدہ

امام بوسیری بتاتے ہیں کہ اس کے بعد مجھ پر فالج کا ایسا حملہ ہوا کہ جس نے میرا آدھا جسم بے کار کر دیا اور مجھے ہلنے جلنے سے بھی روک دیا۔ اسی دوران مجھے خیال آیا کہ نبی کریم ﷺ کی شان

میں ایک قصیدہ لکھ کر اس کے ذریعے اللہ سے تندرستی مانگتا ہوں چنانچہ میں نے یہ قصیدہ لکھا، میں سویا تو خواب میں مجھے نبی کریم ﷺ کی زیارت ہو گئی۔ میں نے آپ کو پورا قصیدہ پڑھ کر سنایا جس پر آپ نے میرے جسم کے حصوں پر ہاتھ مبارک پھیر دیا، میں خواب سے بیدار ہوا تو پوری طرح تندرست ہو چکا تھا اور کوئی تکلیف باقی نہ رہی تھی۔ اسی دوران سویرے سویرے میں گھر سے نکلا تو اپنے دوست شیخ ابوالرجاء سے ملاقات ہو گئی، انہوں نے مجھ سے کہا کہ اے بھائی! مجھے وہ قصیدہ تو دکھاؤ جس میں آپ نے نبی کریم ﷺ کی شان بیان کی ہے حالانکہ ابھی تک میں نے اس قصیدے کے بارے میں کسی سے بات نہیں کی تھی چنانچہ میں نے پوچھا: آپ کس قصیدے کی بات کر رہے ہیں، میں نے تو آپ کی شان میں کئی قصیدے لکھے ہیں؟ انہوں نے کہا کہ وہی قصیدہ جو ”امن تذکر جیران الخ“ کے شعر سے شروع ہوتا ہے۔ میں نے پوچھا کہ اے ابوالرجاء! میں نے تو اپنے پاس آنے والے کسی بھی شخص کو یہ قصیدہ پڑھ کر نہیں سنایا تو آپ نے کہاں سے یاد کر لیا ہے؟ اس پر انہوں نے بتایا کہ میں نے اسی گزشتہ رات کو نبی کریم ﷺ کے سامنے تمہیں سناتے ہوئے سنا ہے جس پر وہ خوشی سے یوں جھوم رہے تھے جیسے صبح کی ہواؤں سے پھل دار ٹہنیاں ہلتی ہیں چنانچہ میں نے انہیں وہ قصیدہ دے دیا اور وہ سب لوگوں میں مشہور ہو گیا۔

شرائطِ قصیدہ

یاد رہے کہ قصیدہ پڑھنے کے لیے کچھ ضروری شرطیں ہیں جن کی وجہ سے اس کام میں کامیابی ہوتی ہے جس کے لیے اسے پڑھا جاتا ہے، شرطیں یہ ہیں:

(۱) پڑھنے والا وضو کر کے پڑھے

(۲) منہ قبلہ کی طرف کرے

(۳) اسے پڑھتے وقت ہر لفظ اور اس کی حرکتوں کو محنت کر کے صحیح طور پر پڑھے۔

(۴) پڑھنے والا اس کے معنوں کو سمجھتا ہو کیونکہ دعائیں پڑھنے والا اگر ان کے معنی نہ جانتا ہو تو ان میں

اثر پیدا نہیں ہوتا جیسے حضرت علامہ علی قاری رحمہ اللہ نے اپنی کتاب ”حزبِ اعظم“ کی ابتداء میں یوں فرمایا ہے کہ ”اے پڑھنے والے! تمہیں اس حزب کے لفظوں پر نظر رکھنی چاہیے اور اس کے معنوں پر غور کرنا چاہیے۔“

(۵) اسے شعروں کی طرح پڑھے، عام عبارت کی طرح نہ پڑھے۔

(۶) اسے زبانی یاد کر لے۔

(۷) اسے پڑھتے وقت اس کا ورد رکھنے والا کسی عامل سے اجازت لے۔

(۸) پڑھتے وقت نبی کریم ﷺ پر درود پاک پڑھتا جائے لیکن اس کے لیے ضروری ہے کہ ہر شعر کے ساتھ وہی درود پاک پڑھے جو حضرت امام بوسیری رحمہ اللہ نبی کریم ﷺ کی خدمت میں قصیدہ سناتے ہوئے پڑھتے جاتے تھے اور وہ یوں ہے:

مَوْلَايَ صَلِّ وَسَلِّمْ دَائِمًا اَبَدًا
عَلَى حَبِيْبِكَ خَيْرِ الْخَلْقِ كُلِّهِمْ

اس درود کے بغیر کوئی اور درود نہ پڑھے ورنہ اس کا اثر نہیں ہو سکے گا جیسے بتایا گیا ہے کہ حضرت امام غزنوی رحمہ اللہ نبی کریم ﷺ کی خواب میں زیارت کیلئے یہ قصیدہ ہر رات پڑھا کرتے تھے لیکن انہیں کوئی ایسی خواب نہیں آتی تھی چنانچہ ایک کامل شیخ سے شکایت کرتے ہوئے یہ راز جاننے کی کوشش کی تو انہوں نے کہا: لگتا ہے کہ تم اس کی شرطیں پوری نہیں کرتے ہو انہوں نے کہا: میں شرطیں تو پوری کیا کرتا ہوں۔ اس پر شیخ نے مراقبہ (آنکھیں بند کرتے ہوئے گردن جھکائی) کرنے کے بعد فرمایا: مجھے اس کی وجہ معلوم ہو گئی ہے اور وہ یہ ہے کہ تم وہ درود پاک نہیں پڑھتے جو امام بوسیری نے نبی کریم ﷺ پر قصیدہ پڑھتے ہوئے پڑھا تھا انہوں نے یہ درود پاک پڑھا تھا:

مَوْلَايَ صَلِّ وَسَلِّمْ دَائِمًا اَبَدًا
عَلَى حَبِيْبِكَ خَيْرِ الْخَلْقِ كُلِّهِمْ

اور یہی درود پاک پڑھنے میں راز یہ ہے کہ انہوں نے قصیدہ پڑھتے وقت آپ پر یہی درود پڑھا تھا اور جب انہوں نے یہ مصرعہ پڑھا:

فَمَبْلَغُ الْعِلْمِ فِيْهِ اَنَّهٗ بَشَرٌ

تو امام بوسیری رُک گئے حضور ﷺ نے فرمایا: آگے پڑھو! مگر انہوں نے عرض کی کہ یا رسول اللہ! دوسرا مصرعہ آگے ذہن میں نہیں آ رہا کہ کیا پڑھوں! اس پر آپ نے فرمایا: اے امام! یوں پڑھو:

وَ اَنَّهٗ خَيْرُ خَلْقِ اللّٰهِ كُلِّهِمْ

چنانچہ امام بوسیری نے نبی کریم ﷺ کے پڑھے ہوئے مصرعہ کو اپنے درود میں شامل کر لیا اور نبی کریم ﷺ سے حد درجہ اور زبردست پیار کی وجہ سے ہر شعر کے آخر میں اسے ہر بار پڑھا۔ (اس قصیدہ کی ”شفاء“ نام والی شرح سے لیا گیا ہے)۔

(۹) درود کا یہ شعر ہر شعر کے آخر میں پڑھا کرے۔

قصیدہ پڑھنے کے اثرات

اس قصیدہ کی شرح کرنے والے مشہور بزرگ ”شیخ زادہ“ فرماتے ہیں کہ اس قصیدہ کی برکتیں عام علماء کتابوں میں سے جانتے ہیں لہذا مجھے اس کی خوبیاں بتاتے ہوئے بات کو بڑھانے کی ضرورت نہیں۔ ہاں قصیدہ کی شرح کرنے والے بہت سے بزرگوں نے بتایا ہے کہ جب سعد فاروقی کی دونوں آنکھوں میں سرخی آجانے کی وجہ سے سخت تکلیف تھی اور وہ اندھا ہونے کو تھے تو اسی دوران انہوں نے زیارت کے موقع پر نبی کریم ﷺ کو یوں فرماتے سنا کہ فلاں شخص کے پاس جا کر اس سے قصیدہ لے کر اپنی دونوں آنکھوں پر لگا لو۔ آپ اس کے پاس گئے، قصیدہ لے کر اپنی دونوں آنکھوں پر لگا لیا اور اسے پڑھنے لگے جس کی وجہ سے اللہ نے انہیں شفاء دے دی۔

ایک مضبوط شرح میں یہ بھی لکھا ہے کہ جو شخص اسے جمعہ کی ہر رات کو مغرب اور عشاء کے درمیان پوری شرطوں کے ساتھ پڑھے گا، وہ ایمان و اسلام پر فوت ہوگا۔

قصیدہ کے نام کی تحقیق

قصیدہ بردہ شریف کے نام میں علماء کا اختلاف ہے، کچھ فرماتے ہیں کہ اس کا نام ”بُرَّاه“ ہے (باء پر پیش اور ساتھ ہمزہ ہے) کیونکہ امام بوسیری رحمہ اللہ اس قصیدہ کی برکت پر جب بیماری سے تندرست ہوئے تو اس کا نام ”بُرَّاه“ پڑ گیا، یہ ان ناموں کی طرح ہے جو خود سبب ہوتے ہیں لیکن انہیں نام وہ دیا جاتا ہے جس کا یہ سبب ہوتے ہیں۔

کچھ علماء فرماتے ہیں کہ اس کا نام ”بُرْدَة“ (باء پر پیش اور حرف دال پر زبر ہے) اسے یہ نام دینے کی وجہ یہ ہے کہ یہ قصیدہ گویا ایک طرح کی پوشاک ہے جو نبی کریم ﷺ کے جسم مبارک پر سجائی گئی ہے کیونکہ امام بوسیری رحمہ اللہ نے اس میں آپ کی شانیں بیان کی ہیں چنانچہ آپ کی خوبیوں کو پوشاک کا نام دے دیا گیا گویا ان ساری خوبیوں نے پوشاک کی طرح آپ کے مبارک جسم کو ڈھانک رکھا ہے۔

کچھ فرماتے ہیں کہ اس کا نام ”بُرْدِيَّة“ ہے جس میں حرف ”ياء“ نسبت پیدا کرنے والا ہے کیونکہ امام بوسیری رحمہ اللہ نے جب یہ قصیدہ نبی کریم ﷺ کے سامنے پورا پڑھا تو آپ نے انہیں اپنی چادر مبارک اوڑھادی تھی جس کی وجہ سے آپ تندرست ہو گئے تھے چنانچہ اس کا نام ”بُرْدِيَّة“ رکھ دیا گیا تاہم جو لوگوں میں مشہور ہے کہ اس کا نام قصیدہ بُرْدِيَّة ہے تو یہ بالکل غلط ہے۔

امام بوسیری رحمہ اللہ پر ایک اعتراض کا جواب

اس کے بعد سمجھدار ناظم قصیدہ نے قرآن پاک کی پیروی کرتے ہوئے مرتبوں والے نبی کریم ﷺ کی حدیث کو سامنے رکھتے ہوئے اور پہلے بزرگوں کے طریقے پر چلتے ہوئے ”بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ“ فرمایا اور چونکہ بسم اللہ شریف کے بارے میں بحث کرنا ان لوگوں میں مشہور ہے جو فائدہ کرتے اور لیا کرتے ہیں لہذا ہمیں اسے دُہرانے کی ضرورت نہیں لیکن حضرت ناظم پر ایک اعتراض ہوتا ہے کہ انہوں نے حمد و درود کو چھوڑ دیا ہے حالانکہ ان دونوں کے بارے میں حدیثیں ملتی ہیں تو یہ ان کی طرف سے بے ادبی بنتی ہے چنانچہ ہم ان کی طرف سے اس کا جواب دیتے ہیں کہ ہم ان کی طرف سے دونوں کا چھوڑ دینا نہیں مانتے کیونکہ کسی عربی سے سنا گیا ہے کہ حضرت ناظم رحمہ اللہ نے حمد و صلوة کے بارے میں مستقل طور پر یہ شعر لکھا تھا:

الْحَمْدُ لِلّٰهِ مَنْشَى الْخَلْقِ مِنْ عَدَمٍ
ثُمَّ الصَّلٰوةُ عَلٰی الْمُخْتَارِ فِي الْقِدَمِ

اور اگر اس شعر کو ان کا نہ بھی مانا جائے تو پھر یہ کیسے ناممکن ہے کہ ”أَمِنْ تَذَكُّرِ جِوَارِ الْخِ“ میں آنے والا ہمزہ ”اللذ“ کے نام کی طرف اشارہ کرتا اور حمد الہی کی خبر دیتا ہو جیسے اہل تصوف کے ہاں مشہور ہے اور اگر اس کا جائز ہونا نہ بھی مانا جائے تو ہم یہ ماننے کو تیار نہیں ہیں کہ ان دونوں کے لکھنے کے بارے میں کوئی حدیث آئی ہے بلکہ ان دونوں کے بارے میں آنے والی حدیث زبانی ذکر کرنے کو کہتی ہے اور سمجھدار ناظم نے اگرچہ دونوں کو نہیں لکھا مگر منہ سے انہیں ادا کر دیا ہو اور اگر مان بھی لیا جائے تو ہم ان کی بے ادبی کو نہیں مانتے اور ایسا ہونا بھی کیسے ممکن ہے انہوں نے تو دونوں کو اپنی عاجزی بتانے کیلئے چھوڑا ہے جیسے کہ اس طرح کی مثالیں بڑے بڑے عالموں کی طرف سے ملتی ہیں۔

قصیدہ کی تقسیم

یاد رکھئے کہ حضرت ناظم رحمہ اللہ نے اپنے قصیدے کو دس فصلوں میں ترتیب دیا ہے جن میں سے پہلی فصل میں اپنی زبردست محبت اور دلی خواہشوں کا ذکر کیا ہے چنانچہ اپنے آپ میں ایک اور بوسیری فرض کرتے ہوئے اسی سے کلام کی ہے جس سے اپنے زوردار رونے کا سبب پوچھا ہے اور یہ پوچھا ہے کہ رونے کے دوران وہ اپنے آنسو جاری خون کے ساتھ کیوں ملاتا ہے؟ چنانچہ ایسے قصیدہ کے لکھنے پر اللہ ناظم کو بہتر جزاء دے۔

قصیدہ بردہ شریف

شعر (۱)

أَمِنْ تَذَكُّرٍ جِزْرَانٍ مَبِيدِي سَلَمٍ
مَزَجَتْ دَمْعًا جَرِيًّا مِنْ مُقْلَةٍ مَبِيدٍ

(ترجمہ:) ”اے بوسیری! کیا تمہیں ”ذی سلم“ جگہ کے ہمسایوں کی یاد آ رہی ہے کہ تم آنکھوں سے خون ملے آنسو بہا رہے ہو؟“

شعر (۲)

أَمْ هَبَّتِ الرِّيحُ مِنْ تِلْقَاءِ كَاظِمَةٍ
أَوْ أَوْمَضَ الْبَرْقُ فِي الظُّلْمَاءِ مِنْ أَضْمٍ

(ترجمہ:) ”یا اس لئے کہ اس مقام کاظمہ کی طرف سے ہوا چلنے لگی ہے یا کیا پھر اندھیری رات میں ”اضم“ پہاڑ کی طرف سے بجلی چمکی ہے۔“

شعر (۳)

فَمَا لِعَيْنَيْكَ إِنْ قُلْتَ أَكْفَاهَمَنَا
وَمَا لِقَلْبِكَ إِنْ قُلْتَ اسْتَفِيقُ يَهُم

(ترجمہ:) ”اگر خون ملے آنسو تمہارے عشق کا سبب نہیں تو) پھر تمہاری دونوں آنکھوں کو کیا ہو گیا کہ تم جیسے جیسے انہیں روکتے ہو وہ اور آنسو بہاتی ہیں اور دل کو کیا ہوا کہ اسے سنبھلنے کا کہتے ہو تو وہ زیادہ پریشان ہو جاتا ہے۔“

شعر (۴)

أَيْحَسِبُ الصَّبُّ أَنَّ الْحُبَّ مُنْكَتِمٌ
مَا بَيْنَ مُنْسَجِمٍ مِّنْهُ وَمُضْطَرِمٍ

(ترجمہ:) ”کیا کوئی عاشق بہتے آنسوؤں اور بے چین دل کے باوجود یہ سمجھتا ہے کہ اس کی محبت چھپ سکتی ہے؟“

شعر (۵)

لَوْ لَا الْهَوَى لَمْ تُرِقْ دَمْعًا عَلَى ظَلَلٍ
وَلَا أَرِقْتَ لِذِكْرِ الْبَانِ وَالْعَلَمِ

(ترجمہ:) ”تمہیں محبت نہ ہوتی تو تم ٹیلوں پر آنسو نہ بہاتے پھرتے اور نہ ہی ”بان“ جیسے لمبے درخت اور پہاڑ (اضم) کو یاد کر کے جاگتے رہتے۔“

شعر (۶)

فَكَيْفَ تُنْكِرُ حُبًّا مَبْعَدًا مَا شَهِدْتَ
بِهِ عَلَيْكَ عُدُولُ الدَّمْعِ وَالسَّقَمِ

(ترجمہ:) ”تو پھر تم اس بڑی محبت کا انکار کیسے کر سکتے ہو جبکہ تمہارے آنسو اور بیماری اس محبت کے بارے میں صاف صاف بتا رہے ہیں۔“

شعر (۷)

وَأَثْبَتَ الْوَجْدُ خَطِيءَ عَبْرَةٍ وَضَنِّي
مِثْلَ الْبَهَارِ عَلَى خَدَّيْكَ وَالْعَنَمِ

(ترجمہ:) ”جبکہ اس عشق نے تو تمہارے دونوں رخساروں پر
آنسوؤں اور کمزوری و بیماری کے ایسے نشان بنا دیئے ہیں جو زرد
گلاب اور لمبے عنم درخت جیسے ہیں۔“

شعر (۸)

نَعَمْ سَوَى طَيْفٍ مَنْ أَهْدَى فَأَرْقِنِي
وَالْحُبُّ يَعْتَرِضُ اللَّذَاتِ بِالْأَلَمِ

(ترجمہ:) ”ہاں رات ہوئی تو مجھے اپنے محبوب کی یاد آ گئی جس
نے مجھے بیدار کر دیا کیونکہ محبت کا کام ہی یہ ہوتا ہے کہ مزے ختم
کر کے غم اور بے چینی پیدا کر دیتی ہے۔“

شعر (۹)

يَا لَأَيْبِي فِي الْهَوَى الْعُدْرِيِّ مَعْدِرَةً
مِثِّي إِلَيْكَ وَلَوْ أَنْصَفْتَ لَمْ تَلْمِ

(ترجمہ:) ”اے قبیلہ بنو عدزہ جیسی زبردست محبت رکھنے پر مجھے
برا بھلا کہنے والے! میں اس میں مجبور ہوں لہذا بہتر تو یہی تھا کہ تم
مجھے برا بھلا کہنے سے رُک جاتے۔“

شعر (۱۰)

عَدَّتْكَ حَالِي لَا سِرِّي بِمُسْتَتِرٍ
عَنِ الْوُشَاةِ وَلَا دَائِي بِمُنْحَسِمٍ

(ترجمہ:) ”میرا یہ حال تم سے گزر کر اوروں تک جا چکا ہے اب میرا یہ راز برائی کرنے والے منافقوں سے چھپ نہ سکے گا اور نہ ہی میری یہ بیماری (محبت) ختم ہو سکے گی۔“

شعر (۱۱)

فَحَضَّتْنِي النَّصِيحَ لَكِنْ لَسْتُ أَسْمَعُهُ
إِنَّ الْمُحِبَّ عَنِ الْعُدَّالِ فِي صَمَمٍ

(ترجمہ:) ”تم نے کسی لالچ کے بغیر مجھے سمجھایا لیکن میں یہ نصیحت سن نہیں سکوں گا کیونکہ ایک عاشق شخص بُرا بھلا کہنے والوں کی بات سننے پر کان ہی نہیں دھرا کرتا۔“

شعر (۱۲)

إِنِّي اتَّهَمْتُ نَصِيحَ الشَّيْبِ فِي عَدَائِي
وَالشَّيْبُ أَبْعَدُ فِي النَّصِيحِ عَنِ التُّهْمِ

(ترجمہ:) ”میرا تو بڑھاپا بھی طعنہ دیتے ہوئے مجھے سمجھاتا رہا لیکن میں نے اس کی نصیحت بھی نہیں مانی حالانکہ نصیحت دینے کے معاملہ میں بڑھاپے کی نصیحت کو بُرا نہیں کہا جاسکتا۔“

شعر (۱۳)

فَإِنَّ أَمَّارَتِي بِالسُّوءِ مَا اتَّعَظْتُ
مِنْ جَهْلَهَا بِنَذِيرِ الشَّيْبِ وَالْهَرَمِ

(ترجمہ:) ”میرے بُرائی پر لگانے والے نفس نے اپنی جہالت کی بناء پر بڑھاپے اور بڑی عمر ہونے سے بھی نصیحت حاصل نہیں کی۔“

شعر (۱۴)

وَلَا أَعَدَّتْ مِنَ الْفِعْلِ الْجَبِيلِ قِرَى
ضَيْفِ أَلَمٍ بِرَأْسِي غَيْرَ مُحْتَشِمِ

(ترجمہ:) ”اور (میرے نفس نے) مہمان کی طرح آنے والے اس (بڑھاپے) کو دیکھتے ہوئے بھی کوئی اچھا کام نہیں کیا جو اچانک میرے سر پر آ گیا ہے۔“

شعر (۱۵)

لَوْ كُنْتُ أَعْلَمُ أَيُّ مَا أَوْقَرُهُ
كَتَمْتُ سِرًّا مَبْدَأِي مِنْهُ بِالْكَتْمِ

(ترجمہ:) ”اگر مجھے پتہ ہوتا کہ میں اس مہمان (بڑھاپے) کی عزت نہیں کر سکوں گا تو اس راز (بڑھاپا) کو جو مجھے دکھائی دے رہا ہے خضاب لگا کر ڈھک دیتا۔“

شعر (۱۶)

مَنْ لِي بِرِدِّ جَمَاحٍ مِّنْ غَوَايَتِهَا
كَمَا يُرَدُّ جَمَاحُ الْخَيْلِ بِاللُّجْمِ

(ترجمہ:) ”بھلا ایسا کون ہو سکتا ہے جو میرے نفس کی ڈھٹائی کی سرکشی کو ایسے روکے جیسے بے قابو گھوڑوں کو لگام دے کر روک لیا جاتا ہے؟“

شعر (۱۷)

فَلَا تَرْمِ بِالْمَعَاصِي كَسَرَ شَهْوَتِهَا
إِنَّ الطَّعَامَ يُقَوِّى شَهْوَةَ النَّهْمِ

(ترجمہ:) ”تم زیادہ گناہ کر کے نفس کی خواہش ختم کرنے کی کوشش نہ کرو کیونکہ زیادہ کھانا ملنے پر پیٹو شخص کی خواہش اور زیادہ بڑھ جاتی ہے۔“

شعر (۱۸)

وَالنَّفْسُ كَالطِّفْلِ إِنْ تَهَيْلَهُ شَبَّ عَلَى
حُبِّ الرِّضَاعِ وَإِنْ تَفْطِمَهُ يَنْفَطِمِ

(ترجمہ:) ”نفس تو بچے کی طرح ہوتا ہے کہ اسے روکو گے نہیں تو وہ جوان ہونے تک دودھ پیتا ہی چلا جائے گا لیکن چھوڑنے کو کہو گے تو چھوڑ دے گا۔“

شعر (۱۹)

فَاَصْرِفْ هَوَاهَا وَحَاذِرْ اَنْ تُوَلِّيَهُ
اِنَّ الْهَوٰى مَا تُوَلِّىْ يُصِمُّ اَوْ يَصِيْمُ

(ترجمہ:) ”تم نفس کو اپنی مرضی نہ کرنے دو اور اسے اپنے اوپر قابو پانے کا موقع نہ دو کیونکہ نفسانی خواہش بڑھ جانے پر یا تو نفس کو مار ڈالتی ہے یا بے کار کر دیتی ہے۔“

شعر (۲۰)

وَرَاعِيهَا وَهِيَ فِي الْاَعْمَالِ سَائِمَةٌ
وَ اِنْ هِيَ اسْتَحَلَّتِ الْمَرْغٰى فَلَا تُسِيْمُ

(ترجمہ:) ”جب تمہارا نفس نیک کاموں میں لگا ہوا ہو تو اس پر دھیان دیتے ہی رہو لیکن اگر وہ ان کاموں میں (تکبر و فخر جیسی) کوتاہیاں کرنے لگے تو اسے کرنے نہ دو۔“

شعر (۲۱)

كَمْ حَسَنَتْ لَذَّةً لِلْمَرْءِ قَاتِلَةً
مِّنْ حَيْثُ لَمْ يَدْرِ اَنَّ السَّمَّ فِي الدَّسَمِ

(ترجمہ:) ”انسانی نفس آدمی کیلئے کئی مار دینے والی مزیدار لذتوں اور خواہشوں کو سجا رکھتا ہے کیونکہ وہ یہ بات جانتا ہی نہیں کہ زیادہ روغن والے کھانے میں زہر بھی مل سکتا ہے۔“

شعر (۲۲)

وَإِخْشَ الدَّسَائِسِ مِنْ جُوعٍ وَمِنْ شَبَعٍ
فَرُبَّ فَخْصَةٍ شَرُّ مِّنَ التُّخْمِ

(ترجمہ:) ”بھوک اور پیٹ بھرنے جیسے خفیہ کاموں (مکروں) پر
دھیان رکھا کرو کیونکہ کئی بار ایسا ہوتا ہے کہ بھوک، پیٹ بھرنے سے
زیادہ نقصان کرتی ہے۔“

شعر (۲۳)

وَاسْتَفْرِغِ الدَّمَاعَ مِنْ عَيْنٍ قَدْ اُمْتَلَأَتْ
مِنَ الْمَحَارِمِ وَالزَّمَّ حِمِيَةَ النَّدَمِ

(ترجمہ:) ”تم اپنی اس آنکھ سے خوب آنسو بہایا کرو جو گویا حرام
کاموں سے بھر چکی ہے اور (گناہوں پر) روز روز کی شرمندگی
مُل نہ لیا کرو۔“

شعر (۲۴)

وَخَالَفِ النَّفْسَ وَالشَّيْطَانَ وَاعْصِيهَا
وَإِنْ هَبَا فَحَضَّاكَ النَّصْحَ فَاتَّبِعْهُم

(ترجمہ:) ”تم نفس اور شیطان کی کوئی بات نہ مانا کرو بلکہ ان کے خلاف نیک
کام کر دکھاؤ اور اگر وہ تمہیں (طرح طرح سے بہلا کر) کسی غلط کام پر لگائیں تو
انہیں غلط سمجھو۔“

شعر (۲۵)

وَلَا تُطِعْ مِنْهَا خَصَبًا وَلَا حَكَمًا
فَأَنْتَ تَعْرِفُ كَيْدَ الْخَصْمِ وَالْحَكْمِ

(ترجمہ:) ”(یاد رکھو) ان دونوں کی بات نہ مانو خواہ وہ دشمنی کے
رُوپ میں ہوں یا انصاف والوں کے کیونکہ آخر تم دشمن اور
انصاف کی بات کرنے والوں کی چالوں کو خوب جانتے ہو۔“

شعر (۲۶)

أَسْتَغْفِرُ اللَّهَ مِنْ قَوْلٍ بِلَا عَمَلٍ
لَقَدْ نَسَبْتُ بِهِ نَسْلًا لِيَذَى عُقْمِ

(ترجمہ:) ”میں اس بات پر اللہ سے بخشش مانگتا ہوں جس پر میرا
اپنا عمل نہیں ہوتا ہے کیونکہ یہ ایسا ہوگا جیسے میں کسی اولاد کو بانجھ
عورت کی بنا دوں۔“

شعر (۲۷)

أَمْرُكَ الْخَيْرُ لَكِنْ مَا اتَّهَمْتُ بِهِ
فَمَا اسْتَقَمْتُ فَمَا قَوْلِي لَكَ اسْتَقِمْ

(ترجمہ:) ”اور میں تمہیں تو نیکی کرنے کو کہتا ہوں لیکن خود نیک
کام نہیں کرتا چنانچہ جب میں خود صحیح کام نہیں کرتا تو میرا حق نہیں
بنتا کہ تمہیں سیدھی رات پر چلنے کو کہوں۔“

شعر (۲۸)

وَلَا تَزَوَّدْتُ قَبْلَ الْمَوْتِ نَافِلَةً
وَلَمْ أَصَلِّ سِوَى فَرِيضٍ وَّلَمْ أَصُمْ

(ترجمہ:) ”اور مرنے سے پہلے میں کوئی سفر خرچ جمع نہیں کر سکا چنانچہ نہ تو فرض نماز کے بغیر کسی قسم کی نماز پڑھی اور نہ روزے ہی رکھ سکا ہوں۔“

شعر (۲۹)

ظَلَمْتُ سُنَّةَ مَنْ أَحْيَى الظَّلَامَ إِلَى
أَنْ اشْتَكَيْتُ قَدَمَاهُ الضَّرَّ مِنْ وَّرَمٍ

(ترجمہ:) ”میں اس شخصیت کی سنت پر ظلم کر بیٹھا ہوں جو اندھیری راتوں میں اس قدر عبادت کر کے انہیں زندہ بناتے تھے کہ سوج کی وجہ سے ان کے دونوں مبارک پاؤں میں تکلیف ہو جاتی تھی۔“

شعر (۳۰)

وَشَدَّ مِنْ سَغَبٍ أَحْشَاءَهُ وَطَوَى
تَحْتَ الْحِجَارَةِ كَشْحًا مُتْرَفَ الْأَدَمِ

(ترجمہ:) ”اور پھر آپ سخت بھوک لگنے کے دوران پیٹ کو گس کر باندھ دیتے اور مبارک نرم پہلو کو پتھر کے نیچے کر دیتے۔“

شعر (۳۱)

وَرَاوَدَتْهُ الْجِبَالُ الشُّمُّ مِنْ ذَهَبٍ
عَنْ نَفْسِهِ فَأَرَاهَا أَيَّمَا شَمَمٍ

(ترجمہ:) ”سونے کے اونچے اونچے پہاڑوں نے آپ کی خدمت میں اپنا آپ پیش کیا لیکن آپ نے انہیں کوئی اہمیت نہ دی۔“

شعر (۳۲)

وَأَكَّدَتْ زُهْدَهُ فِيهَا ضَرُورَتُهُ
إِنَّ الضَّرُورَةَ لَا تَعْدُو عَلَى الْعِصَمِ

(ترجمہ:) ”آپ کی ہر دنیاوی غرض اور ضرورت نے آپ کے دنیا سے بے تعلق رہنے کو اور واضح اور پکا کر دیا کیونکہ کسی میں ضرورت اور غرض کا پیدا ہو جانا دنیا سے منہ موڑنے والے پر دھبہ نہیں بنتا۔“

شعر (۳۳)

وَكَيفَ تَدْعُو إِلَى الدُّنْيَا ضَرُورَةُ مَنْ
لَوْلَاهُ لَمْ تَخْرُجِ الدُّنْيَا مِنَ الْعَدَمِ

(ترجمہ:) ”اور یہ کیسے ممکن ہے کہ اس شخصیت کی ضرورت انہیں دنیا جمع کرنے کی طرف بلائے کیونکہ اگر وہ نہ ہوتے تو دنیا عدم سے وجود میں نہ آتی۔“

شعر (۳۴)

مُحَمَّدٌ سَيِّدُ الْكُونَيْنِ وَالثَّقَلَيْنِ
وَالْفَرِيقَيْنِ مِنْ عَرَبٍ وَمِنْ عَجَمٍ

(ترجمہ:) ”حضرت محمد ﷺ دونوں جہانوں اور جنوں انسانوں بلکہ عرب و عجم دونوں ہی کے سردار اور سرپرست ہیں۔“

شعر (۳۵)

نَبِينَا الْأَمْرُ النَّاهِي فَلَا أَحَدٌ
أَبْرَ فِي قَوْلٍ ”لَا“ مِنْهُ وَلَا ”نَعَمْ“

(ترجمہ:) ”نیکوں پر لگانے اور بُرائیوں سے روکنے میں حکم تو ہمارے ہی نبی (ﷺ) کا چلتا ہے چنانچہ ایسا کوئی نہیں جو ”نہ“ کی جگہ ”نہ“ اور ”ہاں“ کی ”ہاں“ کہنے میں آپ جیسا بہترین سمجھدار ہو۔“

شعر (۳۶)

هُوَ الْحَبِيبُ الَّذِي تُرْجَى شَفَاعَتُهُ
لِكُلِّ هَوَالٍ مِّنَ الْأَهْوَالِ مُقْتَحِمٍ

(ترجمہ:) ”وہ (اللہ کے) ایسے حبیب ہیں کہ ہم کسی بھی اچانک گھبراہٹ میں ان سے سفارش کی امید رکھ سکتے ہیں۔“

شعر (۳۷)

دَعَا إِلَى اللَّهِ فَالْمُسْتَسْكُونَ بِهِ
مُسْتَسْكُونَ بِحَبْلِ غَيْرِ مُتَّفَعِهِ

(ترجمہ:) ”رسول اللہ ﷺ لوگوں کو اللہ کے حکم ماننے پر لگاتے رہے چنانچہ آپ کے حکم پر چلنے والے ایسے ہیں کہ گویا انہوں نے نہ ٹوٹنے والی رسی پکڑ رکھی ہے۔“

شعر (۳۸)

فَاقَ النَّبِيِّينَ فِي خَلْقٍ وَفِي خُلُقٍ
وَلَمْ يُدَانُوهُ فِي عِلْمٍ وَلَا كَرَمٍ

(ترجمہ:) ”آپ کی پیدائش اور اخلاق کو دیکھیں تو آپ سارے نبیوں سے بڑھ کر تھے وہ انبیاء آپ کے علم اور مہربانی کرنے میں آپ کے مرتبہ تک نہ پہنچ سکے۔“

شعر (۳۹)

وَكُلُّهُمْ مِّنْ رَسُولِ اللَّهِ مُلْتَمِسٌ
غَرَفًا مِّنَ الْبَحْرِ أَوْ رَشْفًا مِّنَ الدَّيْمِ

(ترجمہ:) ”سب نبی اور رسول اپنے اپنے مرتبوں کے لئے حضور ﷺ کی بارگاہ میں درخواست کرتے رہے کہ انہیں رحمت کے سمندر میں سے گویا قطرہ سایا بارش کا گویا ایک ہی قطرہ مل جائے۔“

شعر (۴۰)

وَوَاقِفُونَ لَدَيْهِ عِنْدَ حَدِّهِمْ
مِنْ نُقْطَةِ الْعِلْمِ أَوْ مِنْ شَكْلَةِ الْحِكْمِ

(ترجمہ:) ”سارے انبیاء علیہم السلام اپنے اپنے مرتبوں کے باوجود آپ کے سامنے اس حیثیت سے کھڑے ہیں جیسے علم کا ایک نقطہ اور انہیں اللہ کی طرف سے ملی ہوئی حکمت کی کتاب کی گویا زبر زیر اور پیش ہوتی ہیں۔“

شعر (۴۱)

فَهُوَ الَّذِي تَمَّ مَعْنَاهُ وَصُورَتُهُ
ثُمَّ اصْطَفَاهُ حَبِيبًا بَارِي النَّسَمِ

(ترجمہ:) ”تو پھر وہ وہی تو ہے جن کے اخلاق اور حلیہ مبارکہ ویسا ہے جیسے ہونا چاہئے اور پھر مخلوق پیدا فرمانے والے نے انہیں اپنا حبیب قرار دے دیا۔“

شعر (۴۲)

مُنَزَّاهٌ عَنِ شَرِيكَ فِي فَحَاسِنِهِ
فَجَوْهَرُ الْحُسْنِ فِيهِ غَيْرُ مُنْقَسِمِ

(ترجمہ:) ”انہی مرتبوں کی بناء پر آپ ایسے ستھرے ہیں کہ آپ کے برابر خوبیاں کسی اور کو ملی ہی نہیں چنانچہ یہ ماننا پڑے گا کہ آپ میں حسن اور خوبیوں کا جوہر صرف آپ ہی میں ہے اور وہ تقسیم نہیں ہو سکتا۔“

شعر (۴۳)

دَعُ مَا ادَّعَتْهُ النَّصَارَىٰ فِي نَبِيِّهِمْ
وَاحْكُمْ بِمَا شِئْتَ مَدْحًا فِيهِ وَاحْتَكِمْ

(ترجمہ:) ”تم ان بے مقصد (بیٹا بنانا) باتوں کو چھوڑ دو جو عیسائیوں نے اپنے نبی کے بارے میں گھڑ رکھی ہیں اور آپ کی مدح میں جو چاہو کہو بلکہ مسلسل کہتے جاؤ۔“

شعر (۴۴)

فَانْسُبْ إِلَىٰ ذَاتِهِ مَا شِئْتَ مِنْ شَرَفٍ
وَأَنْسُبْ إِلَىٰ قُدْرِهِ مَا شِئْتَ مِنْ عِظَمٍ

(ترجمہ:) ”تو تم حضور ﷺ کی ذات میں جس بھی بزرگی کا دعویٰ چاہو کر دو اور ان کی خوبیوں کو جتنا چاہو بڑھا چڑھا کر بتاتے جاؤ۔“

شعر (۴۵)

فَإِنَّ فَضْلَ رَسُولِ اللَّهِ لَيْسَ لَهُ
حَدٌّ فَيُعْرَبُ عَنْهُ نَاطِقٌ بِفَمٍ

(ترجمہ:) ”کیونکہ رسول اکرم ﷺ کے فضل و کرم کی ایسی کوئی حد نہیں کہ جسے کوئی بولنے والا زبان سے بتا سکے۔“

شعر (۴۶)

لَوْ نَأْسَبَتْ قَدْرَهُ آيَاتُهُ عِظْمًا

أَحْيَى اسْمُهُ حِينَ يُدْعَى دَارِسَ الرَّمَمِ

(ترجمہ:) ”اگر بڑائی میں آپ کے معجزے لگ بھگ آپ کی عزت کے مطابق ہوتے تو آپ کا اسم گرامی لیتے ہی وہ گلی سڑی ہڈیوں تک کو زندہ کر دیتے۔“

شعر (۴۷)

لَمْ يَمْتَحِنَّا بِمَا تَعَى الْعُقُولُ بِهِ

حِرْصًا عَلَيْنَا فَلَمْ نَرْتَبْ وَلَمْ نَهَم

(ترجمہ:) ”سرورِ دو عالم ﷺ نے ہم پر نہایت مہربانی فرماتے ہوئے ہمیں ایسی آزمائش میں نہیں ڈالا جو لوگوں کی سمجھ ہی میں نہ آسکیں تو ہمیں آپ کے بارے میں شک کرنے اور بات ماننے پر حیران ہونے کی ضرورت ہی نہیں۔“

شعر (۴۸)

أَعْيَى الْوَرَى فَهَمُ مَعْنَاهُ فَلَيْسَ يُرَى

لِلْقُرْبِ وَالْبُعْدِ مِنْهُ غَيْرُ مُنْفَعِمِ

(ترجمہ:) ”آج تک پوری مخلوق یہ سمجھنے میں حیران ہے کہ آپ کی حقیقت اور کمالات کیسے تھے؟ چنانچہ دور و نزدیک کے وقت یا جگہ میں انہیں سمجھنے والا کوئی نظر نہیں آیا، انہیں جاننے کا دعویٰ وہی کرے گا جو بے سمجھ ہے۔“

شعر (۴۹)

كَالشَّمْسِ تَطْهَرُ لِلْعَيْنَيْنِ مِنْ بَعْدِ
صَغِيرَةً وَتُكَلُّ الطَّرْفَ مِنْ أَمَمٍ

(ترجمہ:) ”آپ دونوں آنکھوں کے سامنے دور سے دیکھنے پر سورج کی طرح چھوٹے لگتے ہیں لیکن نزدیک سے دیکھیں تو آنکھوں میں دیکھنے کی ہمت نہیں رہنے دیتے۔“

شعر (۵۰)

وَكَيفَ يُدْرِكُ فِي الدُّنْيَا حَقِيقَتَهُ
قَوْمٌ نِيَامٌ تَسَلَّوْا عَنْهُ بِالْحُلْمِ

(ترجمہ:) ”بھلا یہ کیسے ممکن ہوگا کہ دنیا میں سوئے ہوئے وہ لوگ آپ کی حقیقت کا پتہ لگالیں جو آپ کے بارے میں خوابوں ہی سے تسلی پاتے رہتے ہیں۔“

شعر (۵۱)

فَمَبْلَغُ الْعِلْمِ فِيهِ أَنَّهُ بَشَرٌ
وَأَنَّهُ خَيْرُ خَلْقِ اللَّهِ كُلِّهِمْ

(ترجمہ:) ”چنانچہ ان کے بارے میں لوگوں کا علم تو صرف یہی کچھ بتاتا ہے کہ وہ صرف ایک بشر ہیں حالانکہ اللہ کی ساری مخلوق میں سب سے بڑا مرتبہ رکھتے ہیں۔“

شعر (۵۲)

وَكُلُّ أَيْ آتَى الرَّسُلَ الْكِرَامَ بِهَا
فَإِنَّمَا اتَّصَلَتْ مِنْ نُورِهِ بِهِمْ

(ترجمہ:) ”ایسے سارے معجزے جو رسول لے کر آئے تھے تو وہ سارے کے سارے حضور ﷺ کے نور ہی کے ذریعے انہیں ملے تھے۔“

شعر (۵۳)

فَإِنَّهُ شَمْسٌ فَضْلٍ هُمْ كَوَاكِبُهَا
يُظْهِرْنَ أَنْوَارَهَا لِلنَّاسِ فِي الظُّلَمِ

(ترجمہ:) ”یہ فیصلہ ہو گیا کہ وہ مرتبے میں سورج کی طرح ہیں جبکہ سارے انبیاء علیہم السلام ان کے گویا ایسے ستارے ہیں جو اندھیروں میں لوگوں کیلئے روشنی کر رہے ہیں۔“

شعر (۵۴)

أَكْرَمَ بِمَخْلِقِ نَبِيِّ زَانَهُ خُلُقُ
بِالْحُسْنِ مُشْتَبِلٍ بِالْبِشْرِ مُتَّسِمٍ

(ترجمہ:) ”ہمارے نبی ﷺ کی اللہ کی طرف سے پیدائش کتنی پیاری لگتی ہے جس نے آپ کے اخلاق کو خوبصورت بنا کر سجا دیا ہے چنانچہ ان میں ہنس مکھ ہونے کی ایسی خوبی ہے کہ جس کی مثال ہی نہیں ملے گی۔“

شعر (۵۵)

كَالزَّهْرِ فِي تَرْفٍ وَالْبَحْرِ فِي شَرَفٍ
وَالْبَحْرِ فِي كَرَمٍ وَالذَّهْرِ فِي هِمَمٍ

(ترجمہ:) ”کیونکہ یہ نبی مکرم ﷺ خوشحالی میں گلاب کے پھول کی طرح ہوتے، شان و شوکت میں گویا چودھویں رات کا چاند ہوتے، عطائیں فرماتے تو سمندر لگتے اور ان کی دینی و اخلاقی ہمتوں کا اثر زمانے بھر میں تھا (تو گویا زمانہ تھے)۔“

شعر (۵۶)

كَأَنَّهُ وَهُوَ فَرْدٌ فِي جَلَالَتِهِ
فِي عَسْكَرٍ حِينَ تَلْقَاهُ وَفِي حَشَمٍ

(ترجمہ:) ”جب بھی تم ان سے بات چیت کرو گے تو جنگی لشکر اور جانثار غلاموں میں یوں دکھائی دیں گے جیسے اپنے دبدبے میں بے مثال ہیں۔“

شعر (۵۷)

كَأَمَّا اللُّوْلُو الْمَكْنُونُ فِي صَدْفٍ
مِّنْ مَّعْدِنِي مَنْطِقِي مِنْهُ وَمُبْتَسِمٍ

(ترجمہ:) ”جب آپ گفتگو کے دوران تبسم فرماتے تو دانت مبارک یوں چمکتے تھے جیسے سیپ میں محفوظ موتی ہوتا ہے۔“

شعر (۵۸)

لَا طِيبَ يَعْدِلُ تَرْبًا ضَمَّ اعْظَمَهُ
طُوبَى لِمُنْتَشِقٍ مِّنْهُ وَمُلْتَمِمْ

(ترجمہ:) ”دونوں جہان میں ایسی کوئی خوشبو نہیں جو اس پاک مٹی میں ہے جو حضور ﷺ کے جسمِ انور سے لگی ہوئی ہے، اس کا مزہ وہی جانتا ہے جو اسے سونگھے اور چومے۔“

شعر (۵۹)

أَبَانَ مَوْلِدُهُ عَن طِيبِ عُنْصُرِهِ
يَا طِيبَ مُبْتَدَاءٍ مِّنْهُ وَمُخْتَمِّمِ

(ترجمہ:) ”حضور ﷺ کے میلاد شریف نے تو آپ کے وجودِ مبارک کی پاکیزگی بتا دی ہے لہذا لوگو! تم ان کی ولادتِ مبارکہ اور وصال شریف کی پاکیزگی کا ملاحظہ کر لو۔“

شعر (۶۰)

يَوْمَ تَفْرَسَ فِيهِ الْفُرْسُ أَنَّهُمْ
قَدْ أَنْذِرُوا بِحُلُولِ الْبُؤْسِ وَالنِّقَمِ

(ترجمہ:) ”ولادتِ مبارکہ کا دن ایسا تھا کہ جس میں فارسیوں (ایرانیوں) نے سمجھ لیا کہ اب انہیں آنے والی تنکیوں اور سختیوں سے ڈرایا جا رہا ہے۔“

شعر (۶۱)

وَبَاتَ اَيَّوَانُ كِسْرَى وَهُوَ مُنْصَدِعٌ
كُشْبَلِ اَصْحَابِ كِسْرَى غَيْرَ مُلْتَمِعِ

(ترجمہ:) ”اور کسریٰ (ساسان بادشاہ) کے محل کی اینٹ سے
اینٹ یوں بجی جیسے نوشیروان کا لشکر ایسے بکھرا کہ دوبارہ اکٹھا نہ ہو
سکا۔“

شعر (۶۲)

وَالنَّارُ خَامِدَةٌ الْاَنْفَاسِ مِنْ اَسْفِ
عَلَيْهِ وَالنَّهْرُ سَاهِي الْعَيْنِ مِنْ سَدَمِ

(ترجمہ:) ”اور (ہزاروں سالوں سے بھڑکتی) آگ کے شعلے اس پر
افسوس کی وجہ سے بجھ گئے اور نہر (ساوہ ندی) سخت پریشانی کی وجہ
سے اپنا راستہ تبدیل کر بیٹھی۔“

شعر (۶۳)

وَسَاءَ سَاوَةٌ اَنْ غَاضَتْ بِحَيْرِئِهَا
وَرُدٌّ وَاَرِدُهَا بِالْغَيْظِ حَيْنَ ظَمِي

(ترجمہ:) ”اور ساوہ ندی والوں نے اس بات پر غم کیا کہ ان کی
بجیرہ نامی نہر کا پانی سوکھ گیا اور جب وہ سوکھ گئی تو وہاں پر آنے
والوں کو غصے سے خالی ہاتھ واپس ہونا پڑا۔“

شعر (۶۴)

كَأَنَّ بِالنَّارِ مَا بِالمَاءِ مِنْ مَبَلِّ
حُزْنًا وَبِالمَاءِ مَا بِالنَّارِ مِنْ ضَرَمٍ

(ترجمہ:) ”یوں لگتا تھا کہ آگ میں پانی کا اثر (طراوت) اور پانی میں آگ کا اثر (سوزش اور ساڑ) پیدا ہو گیا تھا۔“

شعر (۶۵)

وَالجَنُّ تَهْتِفُ وَالْأَنْوَارُ سَاطِعَةٌ
وَالْحَقُّ يَظْهَرُ مِنْ مَعْنَى وَمِنْ كَلِمٍ

(ترجمہ:) ”جن آپ کی نبوت کو غائبانہ آواز سے مان رہے ہیں، اس کے انوار ہر طرف بکھر رہے ہیں اور اس کی سچائی دلوں اور زبانوں سے مانی جا رہی ہے۔“

شعر (۶۶)

عَمُوا وَصَمُّوا فَأَعْلَانُ البَشَائِرِ لَمْ
يُسْمَعْ وَبَارِقَةُ الإِنْدَارِ لَمْ تُشْمِ

(ترجمہ:) ”کافر انوارِ حبیب سے اندھے اور بہرے بھی ہو گئے کہ جنوں کی بشارتیں نہ سن سکے اور اللہ کا ڈر سنانے والی چیزوں میں سے انہیں گویا کوئی چمک دکھائی نہ دی۔“

شعر (۶۷)

مِنْ مَبْعَدِ مَا أَخْبَرَ الْأَقْوَامَ كَاهِنُهُمْ
بِأَنَّ دِينَهُمُ الْمُبْعُوجُ لَمْ يَقُمْ

(ترجمہ:) ”وہ اس وقت اندھے بہرے ہوئے جب ان کا کاہن (غیبی خبریں دینے والا) انہیں یہ بات بتا چکا تھا کہ غلط راستے پر چلانے والا ان کا یہ دین اب رہے گا نہیں۔“

شعر (۶۸)

وَبَعْدِ مَا عَايَنُوا فِي الْأُفُقِ مِنْ شُهُبٍ
مُنْقِضَةٍ وَفَقَّ مَا فِي الْأَرْضِ مِنْ صَنِمٍ

(ترجمہ:) ”اور اس کے بعد یہ بھی دیکھا کہ آسمان سے ستارے یوں گر رہے ہیں جیسے زمین پر بت اوندھے ہو کر گرتے ہیں“ (لیکن آپ کو پھر بھی نہ مانا)۔

شعر (۶۹)

حَتَّىٰ غَدَا عَنْ طَرِيقِ الْوَحْيِ مُنْهَزِمٌ
مِّنَ الشَّيَاطِينِ يَقْفُوا أَثَرَ مُنْهَزِمٍ

(ترجمہ:) ”چنانچہ وہ وقت آ گیا کہ وحی کے راستے (آسمان) سے شکست کھانے والے شیطان واپس ہوتے ہوئے ایک دوسرے کے پیچھے بھاگ رہے تھے۔“

شعر (۷۰)

كَانَهُمْ هَرَبًا أَبْطَالُ أَبْرَهَةَ

أَوْ عَسْكَرٌ بِالْحَضَى مِنْ رَأْحَتِيهِ رُمِي

(ترجمہ:) ”وہ بھاگتے ہوئے یوں لگتے تھے کہ ابرہہ کے بہادر سپاہی (مکہ سے) بھاگے تھے یا اس لشکر کی طرح لگتے تھے جیسے آپ کے ہاتھوں کے ساتھ (جنگ حنین) میں کنکر مارے گئے تھے۔“

شعر (۷۱)

نَبْدًا مَرِيهٍ بَعْدَ تَسْبِيحٍ مَرِيْبَطْنِهَمَا

نَبْدَ الْمَسِيحِ مِنْ أَحْشَاءِ مُلْتَقِمِ

(ترجمہ:) ”(آپ نے) وہ کنکریاں دونوں ہتھیلیوں سے تسبیح کے بعد ایسے نکال پھینکیں جیسے تسبیح کہنے والے کو (اللہ تعالیٰ نے) مچھلی کے پیٹ سے باہر نکال پھینکا تھا۔“

شعر (۷۲)

جَاءَتْ لِدَعْوَتِهِ الْأَشْجَارُ سَاجِدَةً

تَمْشِي إِلَى سَاقِ مَبْلَا قَدَمِ

(ترجمہ:) ”پھر آپ کے بلانے پر سجدہ کرتے اور پاؤں کی بجائے تنوں پر چلتے ہوئے درخت تک بھی خدمت میں حاضر ہوئے۔“

شعر (۷۳)

كَأَمَّا سَطَرْتُ سَطْرًا لِمَا كَتَبْتُ
فُرُوعُهَا مِنْ بَدِيعِ الْخَطِّ فِي اللَّقْمِ

(ترجمہ:) ”یوں لگتا تھا کہ جیسے ان درختوں نے راستے کے درمیان خوبصورت خط میں لکھتے وقت لکیریں لگا دی تھیں۔“

شعر (۷۴)

مِثْلُ الْغَمَامَةِ أُنِي سَارَ سَائِرَةٌ
تَقِيهِ حَرٌّ وَطَيْسٌ لِلْهَجِيرِ حَمِي

(ترجمہ:) ”وہ درخت آپ کیلئے اس بادل کی طرح تھے جو آپ کے کسی بھی جگہ تشریف لے جاتے ہوئے آپ پر سایہ کرتا اور آپ کو دوپہر کی سخت گرمی سے بچاتا تھا۔“

شعر (۷۵)

أَقْسَمْتُ بِالْقَبْرِ الْمُنَشَقِّ إِنَّ لَهُ
مِنْ قَلْبِهِ نِسْبَةً مَبْرُورَةَ الْقَسَمِ

(ترجمہ:) ”میں دو ٹکڑے ہونے والے چاند کی سچی قسم کھا کر کہتا ہوں کہ ”اسے آپ کے دل کے ساتھ گہرا تعلق ہے۔“

شعر (۷۶)

وَمَا حَوَى الْغَارُ مِنْ خَيْرٍ وَمِنْ كَرَمٍ
وَكُلُّ ظَرْفٍ مِّنَ الْكُفَّارِ عَنِّي

(ترجمہ:) ”اور ایک معجزہ وہ بھی ہے کہ غار نے نری بھلائی اور کرم کو اس وقت اپنے اندر سما رکھا تھا جبکہ کفار ہر طرف سے آپ کو دیکھ نہ سکتے“ (گویا نابینا ہو گئے)۔

شعر (۷۷)

فَالصِّدْقُ فِي الْغَارِ وَالصِّدِّيقُ لَمْ يَرِ مَا
وَهُمْ يَقُولُونَ مَا بِالْغَارِ مِنْ أَرَمٍ

(ترجمہ:) ”چنانچہ نری سچائی (حضور ﷺ) اور حضرت صدیق رضی اللہ عنہ غار ہی میں رہتے وہاں سے ہلے نہیں جبکہ کفار آپس میں کہہ رہے تھے کہ غار میں تو کوئی ہے ہی نہیں“۔

شعر (۷۸)

ظَنُّوا الْحَمَامَ وَظَنُّوا الْعَنْكَبُوتَ عَلَى
خَيْرِ الْبَرِيَّةِ لَمْ تَنْسُجْ وَلَمْ تَحْمِ

(ترجمہ:) ”ان کے ذہن نے اتنا ہی کام کیا کہ کبوتری اور مکڑی نے مخلوق میں سب سے بہتر کے آس پاس نہ تو جالا تیا اور نہ ہی انڈے دیئے ہیں“۔

شعر (۷۹)

وَقَايَةُ اللَّهِ أَغْنَتْ عَنْ مُضَاعَفَةِ
مِنَ الدُّرُوعِ وَعَنْ عَالٍ مِّنَ الْأُطْمِ

(ترجمہ:) ”چونکہ اللہ تعالیٰ آپ کی حفاظت فرما رہا تھا تو اس حفاظت نے ان کیلئے کئی گنا زرہوں اور بڑے قلعوں کی ضرورت ہی نہ رہنے دی۔“

شعر (۸۰)

مَا سَامَنِي الدَّهْرُ ضَيْمًا وَاسْتَجَرْتُ بِهِ
إِلَّا وَنِلْتُ جَوَارًا مِّنْهُ لَمْ يُضْمِ

(ترجمہ:) ”جب سے میں ان کی حفاظت میں آ گیا ہوں، دنیا والے مجھے نقصان نہیں پہنچا سکے بلکہ میں ان سے ایسی پناہ میں آ گیا ہوں جو ختم ہی نہ ہو سکے گی۔“

شعر (۸۱)

وَلَا التَّمَسُّتُ غِنَى الدَّارَيْنِ مِنْ يَدَيْهِ
إِلَّا اسْتَلَمْتُ النَّدَى مِنْ خَيْرِ مُسْتَلِمِ

(ترجمہ:) ”اور پھر میں نے جب بھی آپ کے مبارک ہاتھوں سے دنیا و آخرت کیلئے کچھ مانگا تو ان مبارک (اور چومے جانے والے) ہاتھوں سے مجھے سب کچھ مل گیا ہے۔“

شعر (۸۲)

لَا تُنْكِرِ الْوَحْيَ مِنْ رُؤْيَاہُ إِنَّ لَہُ
قَلْبًا إِذَا نَامَتِ الْعَيْنَانِ لَمْ يَنَمْ

(ترجمہ:) ”تم حضور ﷺ کی خواب میں اُترنے والی وحی کا انکار نہ کیا کرو کیونکہ اس وقت اگرچہ دونوں آنکھیں سو رہی ہوتی تھیں مگر آپ کا دل مبارک سویا نہیں ہوتا تھا۔“

شعر (۸۳)

فَذَاكَ حِينَ بُلُوغِ مِّنْ نُّبُوَّتِهِ
فَلَيْسَ يُنْكِرُ فِيهِ حَالُ مُحْتَلِمٍ

(ترجمہ:) ”چنانچہ خوابوں میں وحی کا آنا اس موقع پر تھا جب آپ کو نبوت ملنے والی تھی اور اب جبکہ انہیں نبوت مل ہی چکی تھی تو ایسے سمجھدار کا انکار نہیں کیا جاسکے گا۔“

شعر (۸۴)

تَبَارَكَ اللهُ مَا وَحَّى بِمُكْتَسَبٍ
وَلَا نَبِيٍّ عَلَى غَيْبٍ بِمَتَّهِمٍ

(ترجمہ:) ”اللہ کتنی عظیم ذات ہے (میں اسی کے یقین پر بات کرتا ہوں کہ) کسی وحی کا اُترنا کسی محنت کے نتیجے میں نہیں ہوتا اور نہ ہی کوئی ایسا نبی ہوا جسے غیب کی خبریں دینے پر غلط کہا گیا۔“

شعر (۸۵)

كَمْ أَبْرَأْتُ وَصِبًّا بِاللُّمِيسِ رَاحَتُهُ
وَاطْلَقْتُ أَرِبًا مِّنْ رَّبُّقَةِ اللَّيْمِ

(ترجمہ:) ”ایسے کتنے ہی بیمار تھے جنہیں آپ کا ہاتھ مبارک لگتے ہی شفاء ہو گئی اور کتنے ہی ضرورت مند تھے جنہیں آپ نے بے سمجھی سے بچا لیا۔“

شعر (۸۶)

وَأَحْيَيْتِ السَّنَةَ الشَّهْبَاءَ دَعْوَتُهُ
حَتَّى حَكَّتْ غُرَّةً فِي الْأَعْصِرِ الدُّهُمِ

(ترجمہ:) ”آپ کی دعاء نے سخت ترین قحط سالی کو ایسا خوشگوار بنا دیا کہ وہ موسم کفر کی اندھیروں میں اسلام کی روشنی دے گیا۔“

شعر (۸۷)

بِعَارِضٍ جَادٍ أَوْ خِلْتِ الْبِطَاحِ بِهَا
سَيِّبًا مِّنَ الْيَمِّ أَوْ سَيَّلًا مِّنَ الْعَرَمِ

(ترجمہ:) ”آپ ہی کی دعا نے اس قحط کو تیز بارش کے ذریعے سرسبزی میں بدل دیا تو وادیوں کو یوں خیال کر لے کہ وہ دریا کی طرح بہ رہی تھیں یا ایسے لگتا تھا کہ جیسے عرم نامی وادی کے گھنے پانی کا بند ٹوٹ گیا ہے۔“

شعر (۸۸)

دَعْنِي وَوَصْفِي آيَاتٍ لَهُ ظَهَرَتْ
ظُهُورَ نَارِ الْقِرَى لَيْلًا عَلَيَّ عِلْمَ

(ترجمہ:) ”(اے سمجھانے والے!) مجھے رہنے دو کہ رسول اللہ ﷺ کی خوبیاں یوں ظاہر کروں جیسے کوئی پہاڑ کی چوٹی پر مہمانوں کی خدمت کیلئے آگ روشن کر کے دکھاتا ہے۔“

شعر (۸۹)

فَاللُّهُ يَزِدَادُ حُسْنًا وَهُوَ مُنْتَظَمٌ
وَلَيْسَ يَنْقُصُ قَدْرًا غَيْرَ مُنْتَظَمٍ

(ترجمہ:) ”کیونکہ موتی ہار میں پرویا ہوتا وہ بہت خوبصورت لگتا ہے لیکن اگر نہ بھی پرویا ہوتا اس کی خوبصورتی میں کمی نہیں آتی۔“

شعر (۹۰)

فَمَا تَطَاوَلَ أَمَالُ الْمَدِيحِ إِلَى
مَا فِيهِ مِنْ كَرَمِ الْأَخْلَاقِ وَالشَّيْمِ

(ترجمہ:) ”اس تعریف والے کے بارے میں اُمیدیں کتنی زیادہ ہیں؛ ذرا ان کے بہترین اخلاق اور پیاری پیاری عادتیں تو دیکھو۔“

شعر (۹۱)

آيَاتُ حَقِّ مِّنَ الرَّحْمَنِ مُحَدَّثَةٌ
قَدِيمَةٌ صِفَةُ الْمَوْصُوفِ بِالْقَدَمِ

(ترجمہ:) ”یہ اخلاق اور نشانیاں (معجزے) سچی ہیں اور یہ رحمن کی طرف سے اُترنے میں حادث (نئی اُتری) ہیں لیکن چونکہ ان کا تعلق ذات سے ہے تو اس تعلق کے لحاظ سے قدیم بھی ہیں۔“

شعر (۹۲)

لَمْ تَقْتَرِنِ مَبْزَمَانٍ وَهِيَ تُخْبِرُنَا
عَنِ الْمَعَادِ وَعَنْ عَادٍ وَعَنْ إِرَمِ

(ترجمہ:) ”ان آیتوں کا کسی زمانے اور وقت سے کوئی تعلق نہیں، ہاں یہ آخرت، قوم عاد اور ارم کے قبیلہ کے بارے میں ضرور بتاتی ہیں۔“

شعر (۹۳)

دَامَتْ لَدَيْنَا فَفَاقَتْ كُلَّ مُعْجَزَةٍ
مِّنَ النَّبِيِّينَ إِذْ جَاءَتْ وَلَمْ تَدْمِ

(ترجمہ:) ”یہ آیتیں ہمارے پاس مسلسل رہیں گی، یہ سارے نبیوں کے معجزوں سے اس بناء پر بڑھ کر ہیں کہ وہ انہیں ملے اور ختم ہوتے چلے گئے۔“

شعر (۹۴)

مُحْكَمَاتٌ فَمَا يُبْقِينِ مِنْ شُبِّهِ

لِذِي شِقَاقٍ وَلَا يَبْغِينِ مِنْ حَكْمِ

(ترجمہ:) ”وہ آیتیں ایسے فیصلے کرنے والی ہیں کہ جن جھگڑنے والوں کے دلوں میں کوئی شبہ ہو تو یہ رہنے نہیں دیتیں اور نہ ہی انہیں فیصلہ کرنے میں کسی اور آیت کی ضرورت ہوتی ہے۔“

شعر (۹۵)

مَا حُورِبَتْ قَطُّ إِلَّا عَادَ مِنْ حَرْبٍ

أَعْدَى الْأَعَادِي إِلَيْهَا مُلْقَى السَّلَامِ

(ترجمہ:) ”ان آیتوں کے مقابلے میں جب بھی کوئی بڑے سے بڑا مخالف آیا ہے تو اپنی مخالفت چھوڑ کر ان کے سامنے اپنی ہار ہی مانی ہے۔“

شعر (۹۶)

رَدَّتْ بَلَاغَتَهَا دَعْوَى مُعَارِضِهَا

رَدَّ الْغَيُورِ يَدَ الْجَانِحِ عَنِ الْحَرَمِ

(ترجمہ:) ”آیتوں میں اتنی زبردست بلاغت ہے کہ انہوں نے مقابلے کا ارادہ کرنے والوں کو یوں دھتکار دیا جیسے کوئی غیرت مند اپنے محرم یعنی بیوی بہن وغیرہ کی طرف بڑھنے والے ہاتھ کو سختی سے روکتا ہے۔“

شعر (۹۷)

لَهَا مَعَانٍ كَمَوْجِ الْبَحْرِ فِي مَدَدٍ
وَفَوْقَ جَوْهَرِهِ فِي الْحُسْنِ وَالْقِيَمِ

(ترجمہ:) ”ان آیتوں میں فائدہ مند معنی اتنے زیادہ ہیں جیسے سمندر کی موجیں اونچا اٹھنے کیلئے ایک دوسرے کا ساتھ دیتی ہیں بلکہ ان کے حسن اور قیمت کو دیکھا جائے تو یہ سمندر کے موتی سے بھی بڑھ کر حسین اور قیمتی ہیں۔“

شعر (۹۸)

فَلَا تُعَدُّ وَلَا تُحْصَى عَجَائِبُهَا
وَلَا تُسَامُ عَلَى الْإِكْثَارِ بِالسَّامِ

(ترجمہ:) ”چنانچہ ان آیتوں کے عجیب معنی نہ گنتی میں آسکتے ہیں اور نہ ہی شمار کئے جاسکتے ہیں اور انہیں بار بار پڑھنے سے تکلیف بھی نہیں ہوا کرتی۔“

شعر (۹۹)

قَرَّتْ بِهَا عَيْنٌ قَارِيَهَا فَقُلْتُ لَهُ
لَقَدْ ظَفِرْتَ بِحَبْلِ اللَّهِ فَاَعْتَصِمِ

(ترجمہ:) ”جب اسے پڑھنے والے کی آنکھوں کو ایک سکون سا ملا تو میں نے اس سے کہا کہ تم اللہ تک رسائی حاصل کر چکے ہو تو اس کام پر جمے رہو۔“

شعر (۱۰۰)

إِنْ تَتْلُهَا خَيْفَةً مِّنْ حَرِّ نَارٍ لَّظِي
أَطْفَأَتْ نَارَ لَظِي مِنْ وَرْدِهَا الشَّبِيمِ

(ترجمہ:) ”اگر تم ان آیتوں کو دوزخ کی آگ سے پیدا ہونے والی گرمی کے ڈر کی بناء پر پڑھنا چاہو تو (یاد رکھو کہ) تم اس کے سرد (سکون دینے والے) ورد کی وجہ سے دوزخ کی آگ بجھا ڈالو گے۔“

شعر (۱۰۱)

كَأَنَّهَا الْحَوْضُ تَبْيَضُّ الْوُجُوهُ بِهِ
مِنَ الْعُصَاةِ وَقَدْ جَاؤُوهُ كَالْحُمَمِ

(ترجمہ:) ”یوں لگتا ہے کہ وہ آیتیں گویا حوضِ کوثر ہیں کہ جسے دیکھ کر گنہگاروں کے چہرے مسکراتے ہوں گے حالانکہ وہ وہاں پہنچنے پر کونلوں جیسے سیاہ ہوئے ہوں گے۔“

شعر (۱۰۲)

وَكَالصِّرَاطِ وَكَالْبِيزَانِ مَعْدِلَةً
فَالْقِسْطُ مِنْ غَيْرِهَا فِي النَّاسِ لَمْ يَقُمْ

(ترجمہ:) ”اور یہ آیتیں ایسا انصاف کریں گی جیسے پل صراط اور ترازو کریں گے چنانچہ اس دن ان کے علاوہ لوگوں کو انصاف نہیں مل سکے گا۔“

شعر (۱۰۳)

لَا تَعْجَبَنَّ لِجَسُودٍ رَّاحَ يُنْكِرُهَا
تَجَاهُلًا وَهُوَ عَيْنُ الْحَاذِقِ الْفَهْمِ

(ترجمہ:) ”تمہیں جہالت کی بناء پر اس حسد کرنے والے پر تعجب کی ضرورت نہیں کیونکہ وہ تو تجربہ کار اور سمجھدار ہونے کے باوجود حسد کئے جا رہا ہے۔“

شعر (۱۰۴)

قَدْ تُنْكِرُ الْعَيْنُ ضَوْءَ الشَّمْسِ مِنْ رَمَدٍ
وَيُنْكِرُ الْفَمُّ طَعْمَ الْمَاءِ مِنْ سَقَمٍ

(ترجمہ:) ”ایسا ہوتا رہتا ہے کہ کسی تکلیف کی وجہ سے آنکھ سورج کی روشنی دیکھ نہیں سکتی اور بیماری کی وجہ سے منہ پانی کا مزہ نہیں لے سکتا۔“

شعر (۱۰۵)

يَا خَيْرَ مَنْ يَمَّمُ الْعَافُونَ سَاحَتَهُ
سَعِيًّا وَفَوْقَ مُتُونِ الْأَيْتِقِ الرَّسْمِ

(ترجمہ:) ”اے ایسے سب لوگوں سے بڑھ کر شان والے کہ جن کی خدمت میں سائل یا تو دوڑتے ہوئے حاضر ہوتے ہیں یا پھر تیز ترین دوڑنے والی اونٹنیوں پر سوار ہو کر چلے آتے ہیں۔“

شعر (۱۰۶)

وَمَنْ هُوَ الْاَيَةُ الْكُبْرَى لِبُعْتِدِ
وَمَنْ هُوَ النِّعْمَةُ الْعُظْمَى لِبُعْتِنِمِ

(ترجمہ:) ”اور اے ایسے کمالات والے جو کھڑا کھوٹا پہچان کر چلنے والے کیلئے تو بہت بڑی نشانی ہیں اور اے وہ کہ نعمت کو غنیمت سمجھنے والے کیلئے بہت بڑی نعمت ہیں۔“

شعر (۱۰۷)

سَرِيَتْ مِنْ حَرَمٍ لَيْلًا اِلَى حَرَمِ
كَمَا سَرَى الْبَدْرُ فِي دَاجٍ مِّنَ الظُّلَمِ

(ترجمہ:) ”آپ تورات کے تھوڑے سے حصے میں ایک حرم (بیت اللہ) سے دوسرے حرم (مسجد اقصیٰ) تک اتنی آب و تاب سے تشریف لے گئے جیسے سخت تاریکی میں چاند روشنی پھیلاتے ہوئے چلا جاتا ہے۔“

شعر (۱۰۸)

وَبِتَّ تَرْفِي اِلَى اَنْ نِّلْتَ مَنزِلَةً
مِّنْ قَابِ قَوْسَيْنِ لَمْ تُدْرِكْ وَلَمْ تُرَمِ

(ترجمہ:) ”آپ اس حد تک اوپر چڑھتے گئے کہ آخر قاب قوسین کے اس مقام تک جا پہنچے کہ جس کا نام ہی کسی نے نہ سنا تھا اور نہ ہی وہاں تک پہنچنے کی کسی نے خواہش کی۔“

شعر (۱۰۹)

وَقَدَّمْتُكَ جَمِيعُ الْأَنْبِيَاءِ بِهَا
وَالرُّسُلِ تَقْدِيمَ مَخْدُومٍ عَلَى خَدَمِ

(ترجمہ:) ”تمام انبیاء اور رسولوں نے بیت المقدس میں آپ کو یوں سربراہ بنایا جیسے خدمت کرانے والے کو خدمت کرنے والوں کا سربراہ بنایا جاتا ہے۔“

شعر (۱۱۰)

وَأَنْتَ تَخْتَرِقُ السَّبْعَ الطَّبَاقَ بِهِمْ
فِي مَوْكِبٍ كُنْتَ فِيهِ صَاحِبَ الْعَلَمِ

(ترجمہ:) ”آپ نے جس مجمع میں جھنڈا اٹھایا ہوا تھا اسے ساتھ لے کر سات آسمانوں کو چیرتے ہوئے آگے گزر گئے۔“

شعر (۱۱۱)

حَتَّىٰ إِذَا لَمْ تَدَعْ شَأْوًا لِّمُسْتَبِقِ
مِّنَ الدُّنْيَا وَلَا مَرَقًا لِّمُسْتَنِمِ

(ترجمہ:) ”اور یوں وہ موقع بھی آ گیا جب آپ نے قریب ہونے کی خاطر کسی کیلئے آگے پہنچ جانے کا موقع ہی نہ چھوڑا اور نہ ہی اوپر چڑھ جانے کی خاطر کسی کیلئے کوئی راہ رہنے دی۔“

شعر (۱۱۲)

خَفَضْتَ كُلَّ مَقَامٍ بِالْإِضَافَةِ إِذْ
نُودِيَتْ بِالرَّفْعِ مَثَلُ الْمُفْرَدِ الْعَلَمِ

(ترجمہ:) ”آپ نے اپنے مقام کے مقابلے میں عین اس وقت ہر مقام کو نیچے چھوڑ دیا جب آپ کو تنہا پہاڑ کی حیثیت میں اوپر جانے کیلئے بلایا گیا۔“

شعر (۱۱۳)

كَيْمَا تَفُوزَ بِوَصْلِ أُمِّي مُسْتَتِرٍ
عَنِ الْعُيُونِ وَسِرِّ أُمِّي مُكْتَتِمِ

(ترجمہ:) ”آپ کو اتنا قریب لانے کا مقصد ایک تو ایسی ملاقات تھی جو پوشیدہ ہونے کی وجہ سے کسی کو نظر نہ آسکی اور دوسرا یہ کہ آپ کو وہ راز مل سکیں جو بہت ہی چھپے ہوئے تھے۔“

شعر (۱۱۴)

فَحَزَّتْ كُلَّ فِخَارٍ غَيْرَ مُشْتَرِكٍ
وَجَزَّتْ كُلَّ مَقَامٍ غَيْرَ مُزْدَحِمٍ

(ترجمہ:) ”چنانچہ آپ نے عزت کا ہر کام یوں کر لیا کہ کوئی دوسرا اس میں شامل نہ ہو سکا اور ہر مقام حاصل کرنے میں آپ کو کوئی بھی مشکل پیش نہ آئی۔“

شعر (۱۱۵)

وَجَلَّ مِقْدَارُ مَا وُلِّيتَ مِنْ رُتَبٍ
وَعَزَّ إِذْرَاكَ مَا أُولِيْتَ مِنْ نِعَمٍ

(ترجمہ:) ”اور جن جن مرتبوں کا آپ کو والی بنایا گیا ان کا حساب لگائیں تو بہت زیادہ تھے اور جو جو نعمتیں آپ کو عطا کی گئیں وہ کسی کے علم میں بھی نہیں آسکتیں۔“

شعر (۱۱۶)

بُشْرَى لَنَا مَعْشَرَ الْإِسْلَامِ إِنَّ لَنَا
مِنَ الْعِنَايَةِ رُكْنًا غَيْرَ مُنْهَدِمٍ

(ترجمہ:) ”اے مسلمان ساتھیو! ہمیں اللہ کی مہربانی سے خوش ہونے کا حق ہے کہ ہمیں ایک ایسا سہارا مل گیا ہے جو ڈولے گا نہیں۔“

شعر (۱۱۷)

لَنَا دَعَى اللَّهِ دَاعِينَا لِبَطَاعَتِهِ
بِأَكْرَمِ الرُّسُلِ كُنَّا أَكْرَمَ الْأُمَمِ

(ترجمہ:) ”جب اللہ نے اپنی عبادت پر لگانے کیلئے ہمیں بلانے والے کو ”اکرم الرسل“ (سب رسولوں سے بڑے مرتبے والے) کا نام دے دیا تو پھر ہم ساری اُمتوں میں سے اکرم یعنی زیادہ عزت والے ہو گئے۔“

شعر (۱۱۸)

رَاعَتْ قُلُوبَ الْعِدَىٰ أَنْبَاءُ بِعُثْتِهِ
كَنْبَاءٍ أَجْفَلَتْ غُفْلًا مِّنَ الْغَنَمِ

(ترجمہ:) ”آپ کے نبی بننے کی خبروں نے دشمنوں کے دلوں میں دھڑکن یوں پیدا کر دی کہ جیسے شیر بے دھیان بکریوں میں گھبراہٹ پیدا کر دیتا ہے۔“

شعر (۱۱۹)

مَا زَالَ يَلْقَاهُمْ فِي كُلِّ مُعْتَرِكٍ
حَتَّىٰ حَكَّوْا بِالْقِنَا لَحْمًا عَلَىٰ وَضِيمِ

(ترجمہ:) ”رسول اکرم ﷺ ہر معرکہ جنگ میں کافروں سے جنگ کرتے رہے جس کی وجہ سے وہ کافر نیزوں پر لٹکے ہوئے گوشت کی طرح لٹک رہے ہوتے۔“

شعر (۱۲۰)

وَدُّوا الْفِرَارَ فَكَادُوا يَغِيْطُونَ بِهِ
أَشْلَاءَ شَالَتْ مَعَ الْعِقْبَانِ وَالرَّحْمِ

(ترجمہ:) ”ان جنگوں میں کفار بھاگنا پسند کرتے تھے چنانچہ وہ یہ چاہتے تھے کہ گوشت کے ایسے ٹکڑے ہوتے کہ جنہیں عقاب اور مردار خور جانور اٹھالے جاتے۔“

شعر (۱۲۱)

تَمْضَى اللَّيَالِي وَلَا يَدْرُونَ عِدَّتَهَا
مَا لَمْ تَكُنْ مِنْ لَيَالِي الْأَشْهُرِ الْحُرْمِ

(ترجمہ:) ”ان کفار کا حال یہ ہوا ہے کہ راتیں گزر رہی ہیں لیکن وہ جنگ سے روکے گئے عزت والے مہینوں (رجب ذیقعد ذی الحجہ اور محرم) کی راتوں کے علاوہ دوسری راتیں گننا نہیں جانتے“
(ان کے ہوش اڑ چکے تھے)۔

شعر (۱۲۲)

كَأَمَّا الدِّينُ ضَيْفٌ حَلَّ سَاحَتَهُمْ
بِكُلِّ قَرْمٍ إِلَى لَحْمِ الْعِدَى قَرْمٍ

(ترجمہ:) ”(کافر اس لئے بے چین ہیں کہ) گویا مسلمانوں کیلئے ان کا دین ایک مہمان آ گیا ہے جو ان کفار کی حویلیوں کے تمام ایسے بہادروں کو لے آیا ہے جو دشمن کے گوشت کا شوق رکھتے ہیں۔“

شعر (۱۲۳)

يَجْرُ بِحَرِّ خَمِيسٍ فَوْقَ سَابِحَةٍ
يَرْمِي بِمَوْجٍ مِنَ الْأَبْطَالِ مُلْتَطِمٍ

(ترجمہ:) ”دین اپنے دریا جیسے گھوڑ سوار لشکر کو یوں لے چلتا ہے کہ گویا جنگجو بہادروں کی ایسی موج اور لہر ہے جو آپس میں مونڈھے کو مونڈھا مارتے چلتی ہے۔“

شعر (۱۲۴)

مِنْ كُلِّ مُنْتَدِبٍ لِلَّهِ مُحْتَسِبٍ
يَسْطُو بِمُسْتَأْصِلٍ لِلْكَفْرِ مُصْطَلِمٍ

(ترجمہ:) ”اس لشکر کا ہر بہادر اللہ کے حکم پر چلتا، ثواب کی نیت سے جہاد کرتا، تیز تلوار سے حملہ کرتا اور کفر کو جڑ سے اکھاڑ پھینکنے والا تھا۔“

شعر (۱۲۵)

حَتَّىٰ غَدَتْ مِلَّةَ الْإِسْلَامِ وَهِيَ بِهِمْ
مِنْ بَعْدِ غُرْبَتِهَا مَوْصُولَةَ الرَّحِمِ

(ترجمہ:) ”آخر کار ملتِ اسلام جو انہی کی تھی، اپنی بے بسی اور کمزوری کے بعد اپنے باہمی ملاپ کے اصل ٹھکانے پر آ گئی۔“

شعر (۱۲۶)

مَكْفُولَةٌ أَبَدًا مِّنْهُمْ بِخَيْرٍ أَبِي
وَخَيْرٍ بَعْلِ فَلَمْ تَيْتَمُ وَلَمْ تَيْمِ

(ترجمہ:) ”چنانچہ ملتِ مجاہد صحابہ کی مسلسل جنگوں کے صلے میں ہمیشہ کیلئے محفوظ کر دی گئی اور اب نہ تو اسے کسی باپ کی ضرورت ہے نہ اچھے شوہر کی جس کی وجہ سے اسے نہ تو یتیم ہونے کا اندیشہ ہے اور نہ ہی بے شوہر ہونے کی فکر ہے۔“

شعر (۱۲۷)

هُمْ الْجِبَالُ فَسَلْ عَنْهُمْ مَّصَادِمَهُمْ
مَاذَا رَأَوْا مِنْهُمْ فِي كُلِّ مُصْطَدِمٍ

(ترجمہ:) ”وہ اپنے ارادوں اور وفاداری میں پہاڑوں جیسے مضبوط ہیں اور یہ بات تم ان کے جنگوں کے میدانوں سے پوچھ سکتے ہو کہ کافروں نے ہر میدان جنگ میں ان کے کیا کیا کرشمے دیکھے تھے۔“

شعر (۱۲۸)

وَسَلْ حُنَيْنًا وَسَلْ بَدْرًا وَسَلْ أَحَدًا
فُصُولَ حَتْفٍ لَهُمْ أَذْهَى مِنَ الْوَأْخَمِ

(ترجمہ:) ”اور پھر حنین، بدر اور احد میں لڑنے والوں سے پوچھو کہ انہیں کئی طرح کی موت کیسے آئی تھی جو کسی بھی وباء سے زیادہ تباہی والی تھی۔“

شعر (۱۲۹)

الْمُصْدِرِ الْبَيْضِ حُمْرًا بَعْدَ مَا وَرَدَتْ
مِنَ الْعِدَى كُلِّ مُسْوَدٍ مِّنَ اللَّيْمِ

(ترجمہ:) ”وہ بہادر جب اپنی پالش کر کے چمکائی ہوئی تلواریں دشمنوں کے کندھوں، لمبے اور سیاہ بالوں کے اوپر (یعنی سر پر) مارتے تو وہ خون سے سرخ ہو کر واپس آتیں۔“

شعر (۱۳۰)

وَالْكَاتِبِينَ بِسُمْرِ الْخَطِّ مَا تَرَكَتْ
أَقْلَامُهُمْ حَرْفَ جِسْمٍ غَيْرَ مُنْعَجِمٍ

(ترجمہ:) ”وہ بہادر مقام ”خط“ سے بنے گندمی نیزوں کے ذریعے لکھتے (قتل کرتے) تھے اور ایسا ہو ہی نہ سکتا تھا کہ ان کے نیزوں والے قلم تو چلیں مگر کفار کے جسم کا کوئی نقطہ لگانے (زخمی کرنے) سے رہ جائے۔“

شعر (۱۳۱)

شَاكِي السِّلَاحِ لَهُمْ سِيْمًا تُمَيِّزُهُمْ
وَالْوَرْدُ يَمْتَنَزُ بِالسِّيْمَا مِنَ السَّلْمِ

(ترجمہ:) ”بہادروں کے پورے ہتھیار تھے ان کی ایک خاص نشانی تھی جو انہیں دوسروں سے یوں الگ کر دکھاتی تھی جیسے گلاب کا پھول، کیکر کے درخت سے الگ لگتا تھا۔“

شعر (۱۳۲)

تُهْدِي إِلَيْكَ رِيَّاحُ النَّصْرِ نَشْرَهُمْ
فَتَحْسِبُ الزَّهْرَ فِي الْأَكْمَامِ كُلِّ كَيْبِي

(ترجمہ:) ”ان بہادروں کو ملنے والی خدائی مدد کی ہوائیں تمہارے پاس ان کے کارنامے پہنچا رہی ہیں تو تم ان دلیروں کو یوں سمجھو کہ جیسے وہ غلافوں میں شگوفے تھے۔“

شعر (۱۳۳)

كَانَهُمْ فِي ظُهُورِ الْخَيْلِ نَبَتْ رُبِّي
مِنْ شِدَّةِ الْحَزْمِ لَا مِنْ شِدَّةِ الْحُزْمِ

(ترجمہ:) ”گویا یہ بہادر گھوڑوں کے تنگ گسے ہونے کی وجہ سے نہیں بلکہ ماہر گھوڑا سوار ہونے کی وجہ سے گھوڑوں کی پیٹھوں پر یوں ابھرے دکھائی دیتے ہیں کہ جیسے ٹیلے پر سبزہ ابھرا ہوتا ہے۔“

شعر (۱۳۴)

طَارَتْ قُلُوبُ الْعِدَى مِنْ بَأْسِهِمْ فَرَقًا
فَمَا تَفَرَّقُ بَيْنَ الْبُهْمِ وَالْبُهْمِ

(ترجمہ:) ”دشمنوں کے دل صحابہ کرام سے جنگ کی بناء پر بے قابو ہو گئے تھے چنانچہ وہ بکریوں کے بچوں اور بہادروں میں تمیز تک نہیں کر سکتے تھے۔“

شعر (۱۳۵)

وَمَنْ تَكُنْ بِرَسُولِ اللَّهِ نُصْرَتُهُ
إِنْ تَلَقَهُ الْأَسَدُ فِي أَجَامِهَا تَجْمُ

(ترجمہ:) ”جسے رسول اکرم ﷺ کی مدد حاصل ہو جاتی ہے تو اس کی راہ میں جنگلی شیر بھی رکاوٹ نہیں بن سکتے۔“

شعر (۱۳۶)

وَلَنْ تَرَى مِنْ وَّلِيٍّ غَيْرٍ مُنْتَصِرٍ

بِهِ وَلَا مِنْ عَدُوٍّ غَيْرٍ مُنْقَصِمٍ

(ترجمہ:) ”تم آپ کا ایسا کوئی غلام نہ دیکھو گے کہ جسے حضور ﷺ سے مدد نہ ملی ہو اور نہ ہی آپ کا ایسا دشمن دیکھو گے جو ذلیل اور رسوا نہ ہو۔“

شعر (۱۳۷)

أَحَلَّ أُمَّتَهُ فِي حِرْزِ مِلَّتِهِ

كَاللَّيْثِ حَلَّ مَعَ الْأَشْبَالِ فِي أَجْمٍ

(ترجمہ:) ”سید دو عالم ﷺ نے اپنی امت کو اپنے دامن میں لے کر یوں پناہ دے رکھی ہے جیسے شیر جنگل میں اپنے بچوں کو پوری حفاظت میں لیتا ہے۔“

شعر (۱۳۸)

كَمْ جَدَلْتُ كَلِمَاتُ اللَّهِ مِنْ جَدِلٍ

فِيهِ وَكَمْ خَصَمَ الْبُرْهَانَ مِنْ خَصِمٍ

(ترجمہ:) ”ایسے کئی موقعے آچکے ہیں کہ اللہ کے کلمات یعنی قرآن نے آپ کے مقابلہ کرنے والوں کو پٹخ اور پچھاڑ دیا اور بہت مرتبہ ایسا بھی ہوا کہ برہان یعنی آپ کے معجزوں نے سخت دشمنوں پر بھی قابو پالیا۔“

شعر (۱۳۹)

كَفَّاكَ بِالْعِلْمِ فِي الْأُمِّيِّ مُعْجِرَةً
فِي الْجَاهِلِيَّةِ وَالتَّادِيْبِ فِي الْيَتِيْمِ

(ترجمہ:) ”تم اسی پر غور کر لو تو آپ کے معجزے ماننے کیلئے یہی کافی ہوگا کہ ایک امی (کسی سے نہ پڑھنے والا) دینی علم سے خالی دور میں زبردست علم کا مالک ہو اور یتیم ہو کر بھی ہر کام یوں کرتا ہو جیسے اسے کرنا چاہیے۔“

شعر (۱۴۰)

خَدَمْتُهُ بِمَدِيْحٍ اسْتَقِيْلُ بِهِ
ذُنُوْبَ عُمَرَ مَضَى فِي الشَّعْرِ وَالْخِدْمِ

(ترجمہ:) ”میں نے سرورِ کونین رضی اللہ عنہ کی شان میں یہ قصیدہ اس لیے لکھا ہے کہ اس کے ذریعے عمر کے پہلے حصے کے وہ گناہ معاف کرالوں جو شعر کہتے اور حکمرانوں کو سراہتے گزر رہے۔“

شعر (۱۴۱)

اِذْ قَلَّدَانِي مَا تُخْشِي عَوَاقِبُهُ
كَانَنِي بِهَمَا هَدَىٰ مِّنَ النَّعْمِ

(ترجمہ:) ”شعر کہنے اور شاہوں کی مدح کرنے نے ایسا جکڑا ہوا تھا کہ اس کے انجام سے ڈر لگ رہا ہے اور لگتا ہے کہ میں ان دونوں کاموں کی وجہ سے قربانی کا جانور بن چکا ہوں“ (جسے ذبح ہی ہونا ہوتا ہے)۔

شعر (۱۴۲)

أَكْطَعْتُ غَمِّي الصِّبَا فِي الْحَالَتَيْنِ وَمَا
حَصَلْتُ إِلَّا عَلَى الْأَثَامِ وَالنَّدَمِ

(ترجمہ:) ”میں ان دونوں کاموں میں بچوں جیسی بے پرواہی سے کام لیتا رہا لیکن گناہوں اور شرمندگی کے علاوہ کچھ نہ کمایا۔“

شعر (۱۴۳)

فِيَا خَسَارَةَ نَفْسِي فِي تِجَارَتِهَا
لَمْ تَشْتَرِ الدِّينَ بِالدُّنْيَا وَلَمْ تَسْمِ

(ترجمہ:) ”تو سنو! مجھے اپنے آپ کے ایسا سودا کرنے میں نفس کے گھاٹے پر سخت افسوس ہے کہ اس نے سودا کرتے وقت دنیا کے مقابلے میں دین پر عمل نہیں کیا اور نہ ہی ایسی تیاری کر سکا۔“

شعر (۱۴۴)

وَمَنْ يَبِيعُ أَجَلًا مِّنْهُ بِعَاجِلِهِ
يَبِنُ لَهُ الْغَبْنُ فِي بَيْعٍ وَفِي سَلَمٍ

(ترجمہ:) ”جو آخرت کیلئے کچھ کرنے کی بجائے دنیا ہی میں لگن رہتا ہے تو کوئی نیکی نہ کرنے کی وجہ سے دنیا و آخرت میں خرابی پیدا کر بیٹھتا ہے۔“

شعر (۱۴۵)

إِنْ أَتِ ذَنْبًا فَمَا عَهْدِي بِمُنْتَقِضٍ
مِّنَ النَّبِيِّ وَلَا حَبْلِي بِمُنْصَرِمٍ

(ترجمہ:) ”میں اگرچہ بہت بڑا گنہگار ہوں لیکن میرا رشتہ اپنے پیارے نبی ﷺ سے ٹوٹنے والا بالکل نہیں اور نہ اس تعلق کی رسی ٹوٹ سکتی ہے۔“

شعر (۱۴۶)

فَإِنَّ لِي ذِمَّةً مِّنْهُ بِتَسْبِيَّتِي
مُحَمَّدًا وَهُوَ أَوْفَى الْخَلْقِ بِالذِّمَمِ

(ترجمہ:) ”کیونکہ مجھے اپنا نام محمد رکھنے پر ان کی ضمانت مل چکی ہے اور وہ پوری کائنات میں سب سے بڑھ کر ذمہ نبھانے والے ہیں۔“

شعر (۱۴۷)

إِنْ لَّمْ يَكُنْ فِي مَعَادِي أَخِيذًا بِيَدِي
فَضْلًا وَإِلَّا فَقُلْ يَا زَلَّةَ الْقَدَمِ

(ترجمہ:) ”اگر قیامت میں آپ نری مہربانی فرماتے ہوئے مجھے (خدا نخواستہ) اپنے دامن میں نہیں لیتے ہیں تو بوسیری کہہ دو کہ ہائے افسوس! غلطی تو میری طرف سے ہے۔“

شعر (۱۴۸)

حَاشَا أَنْ يُحْرِمَ الرَّاجِيَ مَكَارِمَهُ
أَوْ يَرْجِعَ الْجَارُ مِنْهُ غَيْرَ مُحْتَرَمٍ

(ترجمہ:) ”یہ تو ہو ہی نہیں سکتا کہ آپ سے مہربانیوں کی اُمید لگانے والا کسی صورت میں محروم ہو جائے یا آپ کی پناہ میں رہنے والا آپ سے باعزت اور بامراد ہو کر واپس نہ آئے۔“

شعر (۱۴۹)

وَمَنْذُ الْأَزْمَتِ أَفْكَارِي مَدَائِحِهِ
وَجَدُّهُ لِخَلَاصِي خَيْرٌ مُلْتَزِمٍ

(ترجمہ:) ”جب سے میں نے اپنی سوچوں کو اس طرف لگا لیا ہے کہ لازمی طور پر ان کی مدح خوانی میں لگا رہوں گا تو دیکھ رہا ہوں کہ میری نجات کیلئے ان کے در سے بہتر کوئی اور ذر نہیں ہے۔“

شعر (۱۵۰)

وَلَنْ يَفُوتَ الْغِنَى مِنْهُ يَدًا تَرَبَّتْ
إِنَّ الْحَيَا يُنْبِتُ الْأَزْهَارَ فِي الْأَكْمِ

(ترجمہ:) ”آپ کی بہت بڑی مہربانی مٹی لگے ہاتھ کو محروم نہیں رکھتی کیونکہ جب بارش ہوتی ہے تو ٹیلوں پر بھی پھول پیدا کر دیتی ہے۔“

شعر (۱۵۱)

وَلَمْ أَرِدْ زَهْرَةَ الدُّنْيَا الَّتِي اقْتَطَفْتُ

يَدَا زُهَيْرٍ بِمَا أَثْنَى عَلَيَّ هَرَمٍ

(ترجمہ:) ”مجھے دنیا کی ان بہاروں کو حاصل کرنے کا شوق نہیں

جنہیں ”ہرم“ کی تعریف کر کے زہیر کے دونوں ہاتھوں نے سمیٹا

تھا۔“

شعر (۱۵۲)

يَا أَكْرَمَ الْخَلْقِ مَا لِي مِنْ الْوُدِّ بِهِ

سِوَاكَ عِنْدَ حُلُولِ الْحَادِثِ الْعَمِّ

(ترجمہ:) ”اے پوری کائنات میں سب سے پیارے

(محبوب)! جب مجھ پر بے شمار پریشانیاں اتر رہی ہوں تو ایسے

میں میں اپنا رونا دھونا آپ کے علاوہ کسے جاسناؤں؟“

شعر (۱۵۳)

وَلَنْ يَضِيقَ رَسُولَ اللَّهِ جَاهُكَ بِي

إِذِ الْكَرِيمِ تَجَلَّى بِاسْمِ مُنْتَقِمِ

(ترجمہ:) ”یا رسول اللہ! جب اللہ کریم ”منتقم“ (بدلہ لینے والا)

کی شان میں آ کر ہر ایک کے سامنے ہو گا تو میری شفاعت پر

رسول اللہ ﷺ کوئی فرق نہیں پڑے گا۔“

شعر (۱۵۴)

فَإِنَّ مِنْ جُودِكَ الدُّنْيَا وَضَرَّتْهَا
وَمِنْ عُلُومِكَ عِلْمَ اللُّوحِ وَالْقَلَمِ

(ترجمہ:) ”کیونکہ اس دنیا اور اس کی ساری رونقیں آپ ہی کے
طفیل ہیں اور لوح و قلم کے بے شمار علم آپ کے علموں کے مقابلے
میں تھوڑی سی حیثیت رکھتے ہیں۔“

شعر (۱۵۵)

يَا نَفْسُ لَا تَقْنَطِي مِنْ زَلَّةٍ عَظُمَتْ
إِنَّ الْكِبَائِرَ فِي الْغُفْرَانِ كَاللَّمَمِ

(ترجمہ:) ”اے میرے نفس! کوئی بڑی غلطی ہونے پر بے امید
ہونے کی ضرورت نہیں کیونکہ بخشش ہوگی تو بڑے گناہ بھی چھوٹوں
ہی کی طرح بخش دیئے جائیں گے۔“

شعر (۱۵۶)

لَعَلَّ رَحْمَةَ رَبِّي حِينَ يَقْسِمُهَا
تَأْتِي عَلَى حَسَبِ الْعَصِيَانِ فِي الْقِسْمِ

(ترجمہ:) ”(غور سے سنو) اللہ تعالیٰ جب اپنی رحمتیں بانٹ رہا
ہوگا تو بانٹ میں گناہوں کے مطابق ہی ملیں گی۔“

شعر (۱۵۷)

يَا رَبِّ وَاجْعَلْ رَجَائِي غَيْرَ مُنْعَكِسٍ
لَدَيْكَ وَاجْعَلْ حِسَابِي غَيْرَ مُنْخَرِمٍ

(ترجمہ:) ”اے میرے پروردگار! میں تجھ سے جو جو اُمیدیں لگائے رکھتا ہوں، انہیں رد نہ فرما اور تیری رحمت کے بارے جو میں یقین رکھتا ہوں، اس پر مجھے بے اُمید نہ ہونے دے۔“

شعر (۱۵۸)

وَالْطُّفُ بِعَبْدِكَ فِي الدَّارَيْنِ إِنَّ لَهُ
صَبْرًا مَّتَى تَدْعُهُ الْأَهْوَالُ يَنْهَزِمُ

(ترجمہ:) ”اور اپنے اس بندے پر دونوں جہانوں میں مہربانی کا برتاؤ فرما کیونکہ گھبراہٹیں آتے ہی اس کا صبر ڈول جاتا ہے۔“

شعر (۱۵۹)

وَأَذِنَ لِسُحْبِ صَلَوَةٍ مِّنْكَ دَائِمَةً
عَلَى النَّبِيِّ بِمُنْهَلٍ وَمُنْسَجِمٍ

(ترجمہ:) ”(اے اللہ!) تو ان رحمت کے بادلوں کو اجازت دے دے کہ یہ اس نبی (ﷺ) پر شب و روز موسلا دھار بارش برساتے چلے جائیں۔“

شعر (۱۶۰)

وَالْأَلِ وَالصَّحْبِ ثُمَّ التَّابِعِينَ لَهُمْ
أَهْلِ التُّقَى وَالنُّقَى وَالْحِلْمِ وَالْكَرَمِ

(ترجمہ:) ”اور پھر یہ بادل آپ کی ایسی آلِ پاک، صحابہ کرام اور ان کے تابعین پر برسا کریں کہ جو سب کے سب اللہ سے ڈرنے والے گناہوں سے پاک، حوصلے والے اور مہربان تھے۔“

شعر (۱۶۱)

مَا رَمَحَتْ عَذَابَاتِ الْبَانِ رِيحٌ صَبَا
وَأَطْرَبَ الْعَيْسَ حَادِي الْعَيْسِ بِالنَّعْمِ

(ترجمہ:) ”ان پر بارش کا یہ سلسلہ اس وقت تک جاری رہے جب تک صبح کی پیاری پیاری ہوا ”بان“ درخت کی ٹہنیوں کو ہلاتی رہے اور جب تک اونٹوں کو ہانکنے والے انہیں ہانکتے وقت خاص طریقے کی سُر میں لگاتے رہیں۔“



بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ

پہلی فصل:

اپنے نفس سے باتیں

شعر (۱)

أَمِنْ تَذَكُّرٍ جِيدَانٍ مَبْدِئِي سَلَمٍ

مَزَجَتْ دَمْعًا جَرِيًّا مِنْ مُقْلَةٍ مَبْدَمٍ

(ترجمہ:) ”اے بوسیری! کیا تمہیں ”ذی سلم“ جگہ کے ہمسایوں کی یاد آ رہی ہے کہ تم

آنکھوں سے خون ملے آنسو بہا رہے ہو؟“

تحقیق الفاظ

یہاں ”ہمزہ“ استفہام کیلئے ہے اور ”مِنْ“ کا حرف ”مَزَجَتْ“ سے تعلق رکھتا ہے اور ”مِنْ“ کا حرف یا تو حُضْر کیلئے پہلے لائے ہیں یا شعر کی ضرورت ایسی ہے یا اس لئے کہ ”یاد کرنا“ آنسوؤں کے خون ملے ہوئے ہونے کا سبب ہے چنانچہ اسے پہلے ہی لے آئے تاکہ اس کا ذکر بعینہ اس کے مطابق ہو جائے جو اس ترتیب کو چاہتا ہے۔ رہا ہمزہ کو پہلے لانا تو یہ بات اپنی جگہ مانی ہوئی ہے کہ استفہام کا حرف اس لفظ پر آتا ہے جس کے بارے میں سوال کیا جا رہا ہوتا ہے جبکہ یہاں پوچھی جانے والی چیز آنسوؤں کا خون سے ملنا نہیں بلکہ یہ پوچھا جا رہا ہے کہ یہ آنسو خون سے کیوں ملے ہیں اور وہ سبب ہمسائیوں کو یاد کرنا ہے۔ اس کے پہلے آنے کی ایک وجہ یہ بھی ہے کہ یہ آیا ہی ابتداء میں کرتا ہے اور یہ بات سب جانتے ہیں۔

تحقیق الفاظ

ذِکْر اور ذُکْر میں فرق

”تَذَكُّرٌ“ کا لفظ ”تَذَكُّرٌ“ فعل کی مصدر ہے اور یہ لفظ یا تو ”ذِکْرٌ“ (ذال پرزیر) سے بنا ہے یا ”ذُکْرٌ“ (ذال پر پیش) سے لیا گیا ہے۔ ہاں دونوں میں فرق یہ ہے کہ پہلا لفظ زبانی یاد کرنے کا معنی دیتا ہے جبکہ دوسرا دل سے یاد کرنے کا مطلب دیتا ہے چنانچہ امام خیالی رحمہ اللہ نے علم کے بارے میں گفتگو کرتے ہوئے یہی لکھا ہے۔

”تَذَكَّرُ“ کا لفظ اپنے مفعول کی طرف مضاف ہے اور اس کا فاعل محذوف ہے جو ”كَ“ ہے جو خطاب کیلئے آتا ہے عبارت یوں ہوگی: ”أَمِنْ تَذَكَّرِكَ“ چنانچہ اس حرف کو ماننے کیلئے ”مَزَجَتْ“ کا لفظ اشارہ دیتا ہے جس میں ناظم اپنے آپ سے بات کر رہے ہیں۔ اس میں ”علم بدیع“ کی ایک بات پائی جاتی ہے جسے ”تَجْرِيدُ“ کہتے ہیں (یعنی شاعر اپنے آپ میں اپنے نام کا ایک اور شخص فرض کرتا ہے اور اس سے باتیں کرتا ہے) چنانچہ امام بوصیری نے اپنے آپ میں ایک اور شخص فرض کرتے ہوئے اس سے باتیں کی ہیں انہیں اپنے آپ سے بات کرنے کی بجائے اپنے اندر ایک اور شخص فرض کرنے کی ضرورت صرف اس لئے پیش آئی کہ انہیں دنیا بھر میں کوئی ایک بھی سچا عاشق نہیں مل سکا (جو خون ملے آنسو بہاتا ہو)۔

اس شعر میں آپ نے ”الْتِفَاتُ“ کا قاعدہ برتا ہے کیونکہ شعر کی ظاہری حالت یہ چاہتی تھی کہ آپ ”یائے متکلم“ کو ”تذکر“ کے ساتھ ملا کر ”تَذَكَّرِي“ کہتے لیکن آپ اسے چھوڑ کر صیغہ خطاب لے آئے چنانچہ یہ التفات ہوا جیسا کہ علامہ سکا کی نے بیان کیا ہے اور اسے ہر ایک جانتا ہے کیونکہ ان کے نزدیک یہ شرط نہیں کہ جس چیز کو لفظ کا ظاہر چاہتا ہے اس کا ذکر کسی نہ کسی طرح پہلے ہو خواہ وہ خود پہلے ہو یا نہ ہو جبکہ عام علماء اس کے خلاف ہیں کیونکہ وہ ظاہر کے مطابق ہونے والی چیز کو کسی نہ کسی طرح پہلے بتا دینا شرط قرار دیتے ہیں بلکہ یہ جائز ہے کہ ان کے مذہب پر بھی التفات ثابت ہو جائے کیونکہ بسم اللہ شریف میں بھی کسی نہ کسی طرح بولنے کا ذکر آچکا ہے (کیونکہ اس سے پہلے ”شروع کرتا ہوں“ فرض کیا جاتا ہے)۔

اگر تم یہ سوال کرو کہ جمہور (اکثر علماء) کا مذہب اس صورت میں بنتا ہے جب بسم اللہ شریف اس قصیدہ کا ایک حصہ ہو جبکہ یہ شبہ والی بات ہے۔ میں اس کا جواب یہ دوں گا کہ یہاں بسم اللہ شریف کا اس کتاب کا حصہ ہونا ثابت ہے کیونکہ زیادہ تر شرح کرنے والے اشارہ کرتے ہیں کہ حضرت ناظم رحمہ اللہ مذہب کے لحاظ سے شافعی ہیں جن کے نزدیک بسم اللہ شریف اس کتاب کا حصہ بنتی ہے اور اسے سب عقلمند جانتے ہیں۔

”التفات“ تین طرح کا ہوتا ہے

اگر تم سوال کرو کہ یہاں ”الْتِفَاتُ“ کرنے میں نکتہ کیا ہے؟ تو میں کہوں گا کہ علامہ عصام نے اپنی لمبی کلام میں لکھا ہے کہ التفات میں تین نکتے ہیں وہ متکلم کی طرف سے ہوگا، کلام کی طرف سے

ہوگا یا پھر مخاطب کی طرف سے ہوگا، بہر حال یہاں یہ نکتہ کلام کرنے والے کی وجہ سے ہوگا چنانچہ اس میں اشارہ ہے کہ کلام کرنے والا اپنی کلام کو کئی طریقوں سے بیان کرنے کی ہمت رکھتا ہے۔ رہا کلام کی وجہ سے التفات تو وہ کلام کو خوبصورت کرنے کی غرض سے ہوتا ہے کیونکہ کہتے ہیں کہ کئی طرح کی کلام کرنے سے دل خوش ہو جاتے ہیں۔ رہا مخاطب کے لحاظ سے التفات تو اس میں کلام کو صرف بیان کر دینے کی بجائے آنکھوں سے دکھایا جاتا ہے کیونکہ خطاب کرنا، آنکھوں سے دکھانا بنتا ہے جبکہ کلام کرنا صرف بیان ہوتا ہے۔

”جِیرَان“ کا لفظ ”جَار“ کی ویسی ہی جمع ہے جیسے ”نَار“ کی ”نِیرَان“ ہے اور کسی کے جار (ہمسایہ) ہونے کا مطلب یہ ہوتا ہے کہ جس کا گھر اس کے گھر کے قریب ہو۔ یہاں ”جِیرَان“ سے مجاز اور استعارہ کے طور پر محبوب مراد ہے اور وہ یوں کہ ناظم نے محبوب کو حقیقی ہمسائے جیسا قرار دیا کیونکہ اس کے ساتھ بیٹھنا اٹھنا ہوتا ہے اور اس کی طرف توجہ رہتی ہے چنانچہ ناظم بوسیری نے بھی اپنے محبوب کے ساتھ یونہی کیا اور دعویٰ کیا کہ یہ محبوب ہمسائے کی جنس سے ہے اور پھر اسے اس محبوب کیلئے استعمال کیا چنانچہ ”جیران“ کا ذکر کر کے محبوب مراد لیا، اس صورت میں لفظ ”جیران“ برتنا صرف عظمت و بزرگی بتانے کیلئے ہوگا جیسے اللہ تعالیٰ کے فرمان ”فَنِعْمَ الْمَاهِدُونَ“ (سورۃ الذاریات، آیت: ۴۸) میں جمع کا لفظ عظمت و بزرگی بتانے کیلئے ہے اور ”جیران“ کی تنوین اس کی تعظیم بتانے کیلئے ہے جیسے اللہ کے اس فرمان میں ہے: ”فِيهِ اٰيٰتٌ بَيِّنٰتٌ“ (سورۃ آل عمران، آیت: ۹۷)۔

”بِذِي سَلَمٍ“ میں حرف باء ”فِي“ کے معنی میں ہے اور یہ ظرف مُسْتَقَرُّ کہلاتی ہے جو ”جیران“ کی صفت بن رہی ہے، مطلب یہ ہوگا کہ وہ ہمسائے جو ”ذِي سَلَمٍ“ میں رہتے تھے ”سَلَمٍ“ (لام پر زبر) ایک درخت کے نام ہے اور لام کے زیر کے ساتھ ”سَلِمَةٌ“ کا اسم جنس ہے جیسے ”كَلِمٌ“ اور ”كَلِمَةٌ“ ہے اور یہ اس درخت کا نام ہے جو مکہ اور مدینہ کی درمیانی وادی میں تھا چنانچہ یہاں اس سے یہی مراد ہے کیونکہ ”جیران“ سے ناظم اپنا محبوب مراد لیتے ہیں جو نبی کریم ﷺ ہیں اور اس درخت کا نبی کریم ﷺ سے تعلق ہے کیونکہ آپ مکہ جاتے ہوئے اس درخت کے نیچے ٹھہر کر آرام فرمایا کرتے تھے تو اس مصرعہ کا معنی یہ بنا ”کیا اس محبوب کی یاد میں جو خاص قسم کے درخت کی جگہ سے گزرتے ہوئے وہاں ٹھہرتے تھے؟“ (آنسو بہاتے ہو)

یہ بھی کہا گیا ہے کہ ”سَلَمٍ“ سے مراد ”دار السلام“ (سلامتی کا گھر) ہے جو جنت میں ہے

چنانچہ اس میں استعارہ ہوگا اور وہ یوں کہ مصنف ناظم نے نبی کریم ﷺ کے روضہ مبارک کو جنت کے دارالسلام سے ملایا کیونکہ یہ دونوں شریف اچھے ٹھکانے ہیں اور روضہ مبارک کو دارالسلام جیسا قرار دیتے ہوئے دعویٰ کیا کہ روضہ مبارک دارالسلام ہی کی طرح کا ہے اور پھر دارالسلام کہہ کر استعارہ کرتے ہوئے روضہ مبارک مراد لیا اور یوں وہ لفظ ذکر کیا جس کا مطلب دارالسلام ہے اور اس سے روضہ مبارک مراد لیا۔

یہ بھی کہتے ہیں کہ ”سَلَم“ سے مراد گناہوں سے سلامتی اور بچاؤ ہے کیونکہ ناظم کا ”ذِي سَلَم“ کہنا حذف کیے ہوئے موصوف کی صفت بنتی ہے اور وہ موصوف ”سلامتی والا مکان“ ہے اور اس ”مکان“ سے مراد اعلیٰ علیین ہے چنانچہ اس بناء پر ”جیران“ سے مراد نبیوں، ولیوں اور صالح لوگوں کی روحیں ہوں گی اور اس کے پڑوسی ہونے کا مطلب ہے عالم ارواح میں روحوں کے بدنوں میں داخل ہونے سے پہلے کے ہمسائے جیسے نبی کریم ﷺ کا فرمان ملتا ہے کہ ”روحیں جمع شدہ لشکر کی طرح ہیں چنانچہ ان میں سے جس کو ایک دوسرے کی پہچان ہو جاتی ہے ان کی آپس میں محبت ہو جاتی ہے اور جو بیگانہ رہتی ہیں ان کا آپس میں اختلاف ہوتا ہے“ (صحیح البخاری، کتاب احادیث الانبیاء، باب الارواح جنود مجنۃ، جلد ۲ صفحہ ۳۱۴، رقم الحدیث: ۳۳۳۶) چنانچہ اس مصرعہ سے یہی معنی نکلتا ہے: ”کیا تم اپنے پڑوسیوں اور عالم ارواح کے ان لوگوں کو یاد کرنے کی وجہ سے روتے ہو جو ایسے مقام پر ہیں جس میں امن ہے کیونکہ روحوں کا اصل عمل اور مقام اعلیٰ علیین ہے۔“

لفظ ”ذِي“ کا استعمال

علامہ عصام رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ ”ذِي“ کا لفظ اگر نکرہ کی صفت بنے تو اسے نکرہ ہی کی طرف مضاف کیا جاتا ہے اور اگر نکرہ نہ ہو تو نکرہ کی طرف مضاف بھی نہیں کیا جاتا۔

”ذِي“ اور ”صَاحِبُ“ میں فرق

لفظ ”ذِي“ اور ”صَاحِبُ“ میں فرق یہ ہے کہ ”ذِي“ میں مضاف مضاف الیہ سے بڑے درجے والا ہوتا ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے اس فرمان میں ہے: ”ذُو الْعَرْشِ الْمَجِيدُ“ (سورۃ البروج، آیت: ۱۵) کہ یہاں عرش والا عرش سے زیادہ مرتبے والا ہے جبکہ ”صَاحِبُ“ میں اس کا الٹ ہوتا ہے جیسے حضرت ابو ہریرہ رضی اللہ عنہ کے بارے میں فرماتے ہیں کہ ”صَاحِبُ النَّبِيِّ“ ہیں انہیں ”ذُو النَّبِيِّ“ نہیں کہتے ہیں۔

”مَزَجَتْ“ کا لفظ خطاب کا ہے اور یہ خطاب اس شخص کو ہے جسے ناظم نے اپنے اندر الگ فرض کر رکھا ہے اور اسے ماضی کا صیغہ لانے کا مطلب ہے کہ وہ آنسوؤں کو خون سے یقیناً ملا چکے۔

لفظ ”مَزَج“ اور ”خَلَط“ میں فرق

”مَزَج“ کا معنی ملا دینا ہوتا ہے تاہم زیادہ تر علماء ”مَزَج“ اور ”خَلَط“ میں فرق نہیں کرتے لیکن کچھ نے یہ فرق بتایا ہے کہ ”مَزَج“ اس ملانے کو کہتے ہیں جس میں کئی چیزیں مل کر ایک ہی چیز شمار ہو جیسے وہ حلوا جو شہد گھی اور آٹے کو ملا کر پکایا جائے لیکن ”خَلَط“ کا لفظ اس سے عام ہے خواہ ان چیزوں کے ملنے کے بعد ایک ہی حقیقت بن جائے جیسے ”مَزَج“ میں ہوتا ہے یا ہر ایک کی حقیقت الگ الگ ہو جیسے درہموں کو دیناروں میں ملایا جائے (ان کی حقیقت الگ الگ رہتی ہے) چنانچہ ”مَزَج“ اور ”خَلَط“ میں (علم منطق کے قاعدے کے مطابق) عموم خصوص مطلق کا تعلق ہے دیکھئے ہر ”مَزَج“، ”خَلَط“ ہوتا ہے لیکن اس کا اُلٹ نہیں ہوتا چنانچہ ناظم قصیدہ کا لفظ ”مَزَج“ کو لینا اور ”خَلَط“ کو نہ لینا مبالغہ کیلئے ہے جسے ہر ایک جانتا ہے۔

غم اور خوشی کے آنسوؤں کی پہچان

”دَمَع“ وہ نمکین پانی ہوتا ہے جو غم کے وقت آنکھ سے بہتا ہے علماء نے غم اور خوشی کے رونے میں یوں فرق کیا ہے کہ خوشی میں آنکھ سے بہنے والا پانی ٹھنڈا ہوتا ہے جبکہ غم میں گرم ہوتا ہے۔

”دَمَع“ کا لفظ اسم جنس ہے جیسے ”تَمْر“ اور ”تَمْرَة“ ہے لیکن ناظم نے ”دَمَعَة“ کا لفظ یا تو اس اشارہ کیلئے نہیں بولا کہ اس کی آنکھوں سے بہنے والا پانی ایک قطرہ نہیں بلکہ بہت سارا ہے یا پھر شعر کی ضرورت کیلئے ”دَمَع“ کہا ہے۔

”جَرَى“ کا لفظ ”جَرَى“ اور ”جَرِيَان“ سے لیا گیا ہے جس کا مطلب بہنا ہے اور یہ پورا جملہ ”دَمَع“ کی صفت ہے لیکن یہ صفت ”وَقُوعِي“ ہے (یعنی یہ کام ہو چکا) ”اِحْتِرَازِي“ نہیں (کہ اس کے ذریعے کسی اور آنسو کو نکالا جائے کیونکہ آنسو تو آنکھوں سے ہی نکلا کرتے ہیں) جیسے اللہ کے فرمان ”وَلَا طَائِرٍ يَطِيرُ بِجَنَاحَيْهِ“ (سورۃ الانعام آیت: ۳۷) میں وقوعی ہے۔

”مِنْ مُقَلَّةٍ“ کے لفظ کا تعلق ”جَرَى“ سے ہے اور ”مقلہ“ اس سفیدی اور سیاہی کو کہتے ہیں جو آنکھ میں ہوتی ہے جیسے شاعر نے کہا ہے:

”جب میری آنکھوں کی سفیدی اور سیاہی میں تکلیف ہوتی ہے تو میرا سرمہ ابوتراب

(حضرت علی) رضی اللہ عنہ کے جوتوں سے لگی خاک ہوتی ہے کیونکہ وہ رات کے وقت بہت زیادہ رونے والے تھے اور جنگ کے دن خوش ہوتے تھے۔

”بِدَمِّ“ کا تعلق ”مزجت“ کے ساتھ ہے اور ”دَمْعًا مُقْلَةً“ اور ”دَمِّ“ میں سے ہر ایک کی تنوین مضاف الیہ کے بدلے میں ہے جو ”ك“ خطاب کا ہے۔ پھر ذہن میں رکھئے کہ آنسوؤں کو خون سے ملانا یا تو ایک حقیقت ہے جیسے ناظم کا اگلا یہ فرمان اشارہ کرتا ہے: ”وَأَثَبَتِ الْوَجْدُ خَطِيءَ عِبْرَةٍ وَضَنَى“ یا پھر ”ملادینا“ کو لازم ہونے والی چیز یعنی غم اور پریشانی مراد ہے۔

پھر ذہن میں رکھو کہ ناظم نے اپنے اندر جس شخص کو فرض کیا ہے تو گویا اس نے تصوف کی کتابوں پر عمل کرتے ہوئے اپنے عشق کو چھپا کر محبت کا انکار کیا ہے جن میں یوں لکھا ہے کہ عشق کو دل میں جتنا بھی چھپاؤ گے وہ کستوری کی طرح خوشبو میں اور بڑھے گا کیونکہ عشق جتنا پوشیدہ ہوتا ہے اتنا ہی اسے ہر ایک جانتا ہے تو سمجھدار ناظم نے اسے اس شخص کے مقابلے میں ثابت رکھا ہے جسے اس نے اپنے آپ سے الگ فرض کر رکھا ہے اور اس کے لیے ”مَزَجَتْ“ کا لفظ استعمال کیا ہے جیسے قیاس استثنائی میں ہوتا ہے (کہ اس قیاس میں بعینہ نتیجہ یا اس کی نقیض واقعی موجود ہوتی ہے) اس کی ترتیب یوں ہے: ”محبت کا بادشاہ تمہارے دل کے شہر میں ہے (قضیہ صغریٰ ہے) اور اگر محبت کا بادشاہ تیرے دل کے شہر میں نہ ہوتا تو تم آنسوؤں کو خون سے نہ ملاتے (دوسرا قضیہ ہے) لیکن یہاں دوسرا قضیہ غلط ہے تو پہلا بھی غلط ہوا چنانچہ اس کی نقیض ثابت ہوگئی کہ محبت کا بادشاہ تمہارے دل میں موجود ہے اور جب اپنے سے الگ فرض کئے جانے والے شخص کی طرف سے اس قیاس کا لازم منع ہے تو ناظم نے اسے یوں کہہ کر ثابت کر دیا: ”أَمِنْ تَذَكُّرِ الْخ“ اور اس کے ساتھ اگلا معطوف شعر بھی شامل ہے کیونکہ یہ پہلے کی طرح اس کی علت اور سبب ہے۔ معطوف شعر یہ ہے: ”أَمْ هَبَّتِ الرِّيحُ الْخ“ چنانچہ یہ قیاس یوں بنے گا کہ ”تمہارا آنسوؤں کو خون سے ملانا محبت کی نشانی ہے (پہلا قضیہ) کیونکہ تمہارا آنسوؤں کے ساتھ خون کو ملانا یا تو ہمسائیوں کو یاد کرنے کی وجہ سے ہے یا ہواؤں کے ”كَاطَمَهُ“ کی طرف سے چلنے کی بناء پر ہے یا پھر اندھیری رات میں ”إِضْم“ سے ہوا چلنے کے سبب سے ہے اور ہمسائیوں کو یاد کرنا محبت کی نشانیاں بتاتا ہے ”كَاطَمَهُ“ کی طرف سے ہوائیں چلنا محبت کی نشانی بنتا ہے اور بجلی کا چمکنا بھی محبت ہی بتلاتا ہے (دوسرا قضیہ) جس کا نتیجہ یہ ہوگا کہ ”تمہارا آنسوؤں کے ساتھ خون ملانا محبت کی نشانی ہے۔“

شعر (۲)

أَمْ هَبَّتِ الرِّيحُ مِنْ تِلْقَاءِ كَاظِمَةٍ
أَوْ أَوْمَضَ الْبُرُقُ فِي الظُّلْمَاءِ مِنْ أَضْمٍ

(ترجمہ:) ”یا اس لئے کہ اس مقام کاظمہ کی طرف سے ہوا چلنے لگی ہے یا کیا پھر اندھیری رات میں ”اضم“ پہاڑ کی طرف سے بجلی چمکی ہے۔“

تحقیق الفاظ

حرف ”آم“ متصلہ اور منقطعہ

پھر ”آم“ کا لفظ یا تو متصلہ ہے یا منقطعہ شرح کرنے والے زیادہ تر علماء متصل کہنے کو اولیت دیتے ہیں کیونکہ ”آم منقطعہ“ ایسے دو جملوں میں آیا کرتا ہے کہ جن میں سے ہر ایک دوسرے کے بغیر مستقل فائدہ دیتا ہے اور یہاں ایسے نہیں ہے کیونکہ یہ شعر اپنے دونوں مصرعوں اور پہلے شعر کے ساتھ مل کر ایک کلام ہے جو سب بنتی ہے کیونکہ تم جانتے ہی ہو کہ آنسوؤں کو خون سے ملانا محبت کی نشانی ہے مگر دونوں شعروں میں سے کوئی بھی دوسرے سے بے نیاز نہیں ہے (بلکہ دونوں کا باہم تعلق ہے)۔

رہا ”آم“ متصلہ تو وہ ایسا ہوتا ہے کہ اس کا پہلے اور بعد والا حصہ ایک دوسرے سے بے نیاز نہیں ہوتے اور یہاں بھی یونہی ہے اور جو اسے منقطعہ بنانا پسند کرتا ہے تو وہ اس شعر کو پہلے سے الگ کرتا ہے گویا کہ کہا یوں گیا ہے: ”کیا تم نے ہمسائیوں کو یاد کر کے ملائے ہیں، نہیں بلکہ ہواؤں کے چلنے کی وجہ سے۔“

”رِیح“ کا لفظ ”رِیَاح“ کا واحد ہے یہ مذکر اور مؤنث استعمال ہوتا ہے یہ ”رَوْح“ سے لیا گیا ہے جس کا معنی ”جانا“ ہے اور ”رِیح“ کو اس بناء پر ریح کہتے ہیں کہ یہ ہر وقت چلتی رہتی ہے۔
”مِنْ تِلْقَاءِ“ کا لفظ ”هَبَّتْ“ سے تعلق رکھتا ہے ”تلقاء“ کا معنی ”جانب اور طرف“ ہوتا ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے فرمان ”تِلْقَاءَ مَدِينِ“ (القصص آیت: ۲۲) میں ہے۔

”كَاطِمَةٍ“ کا لفظ مدینہ (اللہ سے قیامت تک منور رکھے) کا ایک نام ہے اور یہ ”كَظْمَ“ سے فاعل کا صیغہ ہے جس کا معنی غصے کو پی لینا ہوتا ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے فرمان ”وَالْكَاطِمِينَ الْغَيْظَ“

(آل عمران آیت: ۱۳۴) میں ہے چنانچہ ”گاظمہ“ کی مدینہ کے ساتھ نسبت یوں مجازی ہے جیسے مجازی طور پر کہہ دیتے ہیں کہ ”نہر چل رہی ہے“ کیونکہ مدینہ غصہ کو پیتا نہیں بلکہ اس کی خصوصیت یہ ہے کہ جو بھی اس میں ٹھہرتا ہے اس کا غصہ تھم جاتا ہے۔

کچھ نے ”گاظمہ“ سے مجازاً روضہ رسول اکرم ﷺ مراد لیا ہے کہ ایک عام لفظ بول کر خاص چیز کو مراد لیا۔

پھر مدینہ کی طرف سے ہواؤں کا چلنا یا تو واقعی حقیقت ہے کیونکہ محبوب کی طرف سے آنے والی ہوا عاشق میں غم کو تیز کر دیتی ہے اور اسے رونے پر مجبور کر دیتی ہے یا پھر اس سے مراد ہواؤں کے ساتھ لازم چیز ہے یعنی محبوب کی نشانیوں اور خبروں کا پہنچنا (جو ہوا کو لازم ہے) کیونکہ ہوا کو لازم چیزوں میں سے مثلاً خوشبو اور خشک گھاس وغیرہ کو ایک جگہ سے دوسری جگہ پر پہنچانا ہوتا ہے چنانچہ اس بناء پر یہ ان لوگوں کے نزدیک مجازِ مُرْسَلِ مُرْغَبِ بِنے گا جو اسے مانتے ہیں (ایک لفظ جو دوسرے پر مجازاً بولا جاتا ہے تو پہلے کے ساتھ کسی امر میں ایک جیسا نہ ہونے کی صورت میں مجازِ مُرْسَلِ کہلاتا ہے تاہم اسے مرکب اس صورت میں کہتے ہیں کہ جب یہ لفظ تشبیہ میں مبالغہ کیلئے آئے اور پورے طور پر اصلی معنی کے ساتھ کسی مشابہت میں استعمال ہو) اب اس شعر کا حاصل معنی یہ ہو گا کہ ”یا پھر تم تک کاظمہ کی طرف سے خبریں اور نشانیاں پہنچی ہیں“ یا ”رِیح“ سے مراد عمدہ بو ہے جیسے قرآن کریم میں حضرت یعقوب علیہ السلام کا فرمان ملتا ہے کہ ”إِنِّي لَأَجِدُ رِيحَ يُوسُفَ“ (سورۃ یوسف آیت: ۹۴) یعنی میں اس کی طرف سے اچھی خوشبو پاتا ہوں اس صورت میں ہواؤں کا چلنا مجازی طور پر پھیل جانے کے معنی میں ہے کہ ملزوم چیز کا ذکر کر کے لازم شے مراد لی گئی ہے چنانچہ معنی یہ بنے گا کہ ”یا پھر کاظمہ کی طرف سے چل کر پھیل جانے والی خوشبودار ہواؤں کو تمہاری ناک نے سونگھا ہے؟“ یا اس ”رِیح“ سے مراد صبح کو چلنے والی ہوا ہے چنانچہ اس صورت میں مجازاً اور استعارہ نبی کریم ﷺ کی خوبیاں مراد ہوں گی اور وہ یوں کہ ناظم نے نبی کریم ﷺ کی خوبیوں اور عظیم اخلاق کو صبح کی ہوا سے اس بارے میں تشبیہ دی ہے کہ یہ دونوں چیزیں خوشی کا سبب بنتی ہیں چنانچہ جیسے صبح کی ہوا جس تک پہنچتی ہے اسے خوشی دیتی ہے، یونہی حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کی خوبیاں اور اخلاق اسے خوشی دیتے ہیں جو انہیں سنتا ہے۔ ناظم کا دعویٰ یہ ہے کہ نبی کریم ﷺ کی خوبیاں بھی صبح کی ہوا جیسی ہیں اور پھر صبح کی ہوا کہہ کر بطور استعارہ نبی کریم ﷺ کی خوبیاں مراد لی ہیں چنانچہ ناظم نے صبح کی ہوا کا ذکر کیا جس سے مراد

آپ کے اخلاق ہیں اس صورت میں ”هَبَّتْ“ کا لفظ اس استعارے کیلئے ترشح بنے گا جس میں واضح طور پر حرکت دینے یا پھیلانے کا معنی ہے (لفظ کے اصلی معنی کے مناسب کو ثابت کرنا، ترشح کہلاتا ہے)۔

”وَأَوْمَضَ“ میں حرفِ واو یا تو اصلی معنی میں ہے جو دو چیزوں کو اکٹھا کر دینا ہوتا ہے اس صورت میں رونے کا سبب یا تو پڑوسیوں کا ذکر یا پھر ہوا کا چلنا اور بجلی کا چمکنا مل کر سبب بن رہے ہیں یا پھر یہ واو ”اَوْ“ کے معنی میں ہے جو دو چیزوں میں علیحدگی پیدا کرتی ہے چنانچہ اس صورت میں رونے کا سبب یا تو صرف ہمسائیوں کو یاد کرنا یا صرف ہوا کا چلنا ہے یا پھر صرف بجلی کا چمکنا ہے یہاں مجازی طور پر ”اَوْ“ کو چھوڑ کر واو لانے میں نکتہ یہ ہے کہ ذکر کی گئی تینوں چیزیں ”مَانِعَةُ الْخُلُوِّ“ ہیں یعنی رونے کا سبب ان تین چیزوں سے خالی نہیں ہاں انہیں اکٹھا کیا جاسکتا ہے۔

پھر ”هَبَّتِ الرِّيحُ“ اور ”أَوْمَضَ الْبَرْقُ“ مصدری معنی دیتے ہیں جو ”تَذَكَّرُ“ پر معطوف ہیں یعنی ہوا کا چلنا اور بجلی کا چمکنا۔

”أَوْمَضَ“ کا لفظ ”اَيْمَاضُ“ سے ماضی کا صیغہ ہے جس کا معنی چمکنا اور ظاہر ہونا ہے ”الْبَرْقُ“ (قاف پر پیش) ”أَوْمَضَ“ کا فاعل ہے اور ”فِي الظُّلْمَاءِ“ کا لفظ ”أَوْمَضَ“ کے ساتھ تعلق رکھتا ہے یہ صفت بنتا ہے جس کا موصوف محذوف ہے یعنی تاریک رات یہ ”أَظْلَمُ“ کی مونت ہے پھر اندھیری رات میں بجلی کا چمکنا یا تو حقیقی ہے کیونکہ جب عاشق کی طرف بجلی چمکے تو وہ جانب روشن ہو جاتی ہے اور عاشق کیلئے دہشت بن جاتی ہے یا اندھیری رات سے مراد عشق کی ابتداء ہے اور پہلا حصہ مجازی استعارہ ہے جیسے کسی شاعر نے کہا ہے:

صُدُّغُ الْحَبِيبِ وَحَالِي كِلاهُمَا كَاللَّيَالِي

”محبوب کی کنپٹی کے بال اور میرا حال دونوں ہی راتوں جیسے سیاہ ہیں“۔

تو گویا ناظم نے یہاں عشق کی ابتداء اور اول حصے کو حیرانی ہونے اور راہ گم کرنے میں اندھیری رات جیسا بنا دیا ہے چنانچہ جیسے اندھیری رات میں چلتے ہوئے راہ گم کرنے والا حیران ہو جاتا ہے یونہی عاشق کو ابتداء میں کئی حالات سے گزرنا پڑتا ہے جس کی وجہ سے وہ حیرانی میں راستہ گم کر بیٹھتا ہے۔ پھر اندھیری رات کو بطور استعارہ عشق کی ابتداء کے لئے لا کر اندھیری رات کا ذکر کیا ہے جس سے عشق کی ابتداء مراد لی گئی ہے چنانچہ اس صورت میں بجلی چمکنے میں بھی استعارہ ہے کیونکہ ناظم محبوب

کی ملاقات اور انتہائی عشق کو بھی چمکنے سے تشبیہ دیتا ہے کہ یہ چمک کر فوراً چلی جاتی ہے چنانچہ جیسے بجلی کا چمکنا جلدی ختم ہو جاتا ہے یونہی ملاپ بھی جب اپنی جگہ ثابت ہو جاتا ہے کہ عاشق کا معشوق کب پہنچتا ہے تو وہ دنیا میں نہیں رہتا بلکہ تیزی سے چلا جاتا ہے۔

”مِنْ اِضْمٍ“ کا تعلق ”اَوْ مَصَّ“ سے ہے اور ”اِضْمٍ“ (ہمزہ پرزیر اور ضاد پرزیر) ایک پہاڑ ہے جو مدینہ کے قریب ہے جہاں حضور ﷺ عام طور پر ٹھہرا کرتے تھے چنانچہ اس سے مراد یا تو حقیقتہً پہاڑ ہی ہے یا پھر اس سے مراد محبوب ہے تو یہاں مجاز ہوگا کہ محل (جگہ) بول کر حال (ٹھہرنے والا) مراد لیا گیا ہے اور اگر بجلی چمکنے سے نبی کریم ﷺ کے نور کا ظاہر ہونا مراد لینے کی صورت میں یہی معنی مناسب ہیں تو اس میں استعارہ مصرحہ ہوگا اور وہ یوں کہ ناظم نور نبی ﷺ کے ظاہر ہونے کو روشنی دینے اور اندھیرا دور کرنے کی خاطر بجلی چمکنے سے تشبیہ دیتے ہوں گے پھر نبی کریم ﷺ کے نور کے ظہور کو بجلی چمکنے کیلئے استعارہ کے طور پر لائے ہوں گے چنانچہ یہاں مشبہ بہ کو ذکر کر کے مشبہ مراد لے لیا گیا ہوگا چنانچہ اس صورت میں اندھیری رات سے مراد واقعی اندھیری رات ہی ہوگی۔ اس معنی کی تائید یوں بھی ہوتی ہے کہ جب کوئی حاجی مدینہ کے قریب پہنچتا ہے تو کچھ خالص حاجیوں کو وہاں سے نبی کریم ﷺ کا نور دکھائی دینے لگتا ہے اور سمجھدار ناظم تو خالصوں میں سے بھی خالص ہیں تو انہیں کیوں دکھائی نہ دیا ہوگا؟

یہاں مصنف فرماتے ہیں کہ ہوا کا چلنا اور بجلی کا چمکنا محبوب کے دور والے ٹھکانے کا پتہ دیتے ہیں اور بلوغ لوگوں کی عادت ہے کہ وہ شان بڑھانے کیلئے سفر کی دوری کو عظیم مرتبہ اور بڑی عزت کیلئے استعمال کرتے ہیں جیسے کسی شاعر نے کہا ہے:

”میری محبوبہ گویا آسمان میں سورج کی طرح ٹھہری ہوئی ہے چنانچہ دل نے اس کی خاطر اچھا صبر کیا ہے تم میں نہ تو اس تک پہنچنے کی طاقت ہے اور نہ ہی وہ تمہاری طرف اتر سکتی ہے۔“

شعر (۳)

فَمَا لِعَيْنَيْكَ إِنْ قُلْتَ الْكُفَاهِمَتَا

وَمَا لِقَلْبِكَ إِنْ قُلْتَ اسْتَفِقُ يِهِمْ

(ترجمہ:) ”اگر خون ملے آنسو تمہارے عشق کا سبب نہیں تو) پھر تمہاری دونوں آنکھوں کو کیا ہو گیا کہ تم جیسے جیسے نہیں روکتے ہو وہ اور آنسو بہاتی ہیں اور دل کو کیا ہوا کہ اسے سنبھلنے کا کہتے ہو تو وہ زیادہ پریشان ہو جاتا ہے۔“

لگتا ہے کہ جب ناظم کے قیاس پر اس فرض کئے گئے شخص کی طرف سے قضیہ صغریٰ کے نہ ماننے کی بات یوں کی گئی کہ میرے آنسوؤں کا خون سے ملنا یا تو اسی لیے ہے کہ یہاں پڑوسیوں کا ذکر ہے، ہوا چلنے کی بات ہے یا پھر بجلی کے چمکنا کا ذکر کیا ہے تو یہ کیوں جائز نہیں کہ یہ رونا کسی اور سبب سے ہو جیسے مرض کا جسم کو لگنا یا اسے تکلیف کا پہنچانا لہذا اسی بناء پر ناظم نے اس مقدمہ کو ثابت کرنا چھوڑ دیا جو ان پر لازم تھا اور دوسری دلیل دے دی جو رونا ثابت کرتی ہے کیونکہ آنسو کے خون سے مل جانے کا سبب عشق و محبت ہے چنانچہ فرمایا: ”فَمَا لِعَيْنَيْكَ الْخ“ یعنی آنسوؤں کے خون سے ملنے کا سبب عشق و محبت ہے (پہلا قضیہ) اور اگر تمہارا آنسوؤں کے ساتھ خون ملانا محبت اور عشق سے نہ ہوتا تو تم اپنی آنکھوں اور دل پر قابو رکھتے (دوسرا قضیہ) لیکن دوسرا قضیہ باطل ہے تو پہلا بھی ویسا ہی ہوا چنانچہ اس کی نقیض ثابت ہو گئی اور وہ محبت و عشق سے آنسوؤں کو خون سے ملانا ہے اور ناظم نے ”إِنْ قُلْتَ الْخ“ کہہ کر دوسرے قضیہ کو ثابت کیا ہے یعنی تم اپنی دونوں آنکھوں اور دل پر قابو نہیں رکھتے اور اگر قابو رکھتے ہوتے تو آنکھوں کو رُک جانے کا کہنے پر وہ رُک جاتیں اور دل کو تھم جانے کا کہنے پر وہ سنبھل جاتا لیکن دوسرا قضیہ غلط ہے کیونکہ اگر تم دونوں کو رُکنے کا کہتے تو وہ رُک نہ جاتیں بلکہ آنسو بہائے جاتیں اور دل کو آرام کرنے کا کہتے تو وہ سنبھل نہ جاتا بلکہ بے چین ہوتا جاتا اور چونکہ پہلا قضیہ اسی کی طرح ہے تو اس کی نقیض ثابت ہوئی۔

اگر تم سوال کرو کہ ایک دلیل سے ہٹ کر دوسری کی طرف جانا کسی علت بتانے والے کیلئے جائز نہیں ہوتا کیونکہ یہ ایک لحاظ سے اسے چپ کرانا بنتا ہے تو یہ سمجھ دار ناظم کیلئے کیسے ممکن ہوگا؟ میں کہتا ہوں کہ ایک دلیل چھوڑ کر دوسری کو اپنانا اسی وقت جائز نہیں ہوتا جب تعلیل والا کئی طرح

کے دلائل سے پہلا حکم ثابت کرنے کی ہمت نہ رکھتا ہو جیسے حضرت ابراہیم علیہ السلام کی طرف سے لعنتی نمرود کے ساتھ بحث میں ہوا تھا لیکن جب اس میں ہمت ہو اور وہ اصل مقصد کو ثابت کرنے کا ارادہ رکھتا ہو اور کئی دلیلیں دے سکتا ہو تو اس تبدیلی میں حرج نہیں اور اس مقام کا واقعہ دوسری شکل کا ہے اسے ہر ایک جانتا ہے۔

تحقیق الفاظ

فاء فصیحہ کی وضاحت

لفظ ”فَمَا“ میں حرف فاء فصیحہ ہے اور یہ فاء وہ ہوتی ہے جو محذوف شرط کا پتہ دیتی ہے اور وہ یہاں یہ ہے کہ ”اگر تمہارا آنسوؤں کو خون کے ساتھ ملانا عشق و محبت کی وجہ سے ہے تو پھر یہ تمہاری دونوں آنکھوں کو حاصل نہیں ہوگا الخ“۔

یہ تو کشاف کا بیان ہے لیکن سکا کی کے نزدیک یہ فاء وہی ہے جو سبب کا پتہ دیتی ہے یعنی شرط کے علاوہ سبب محذوف کا پتہ دیتی ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے اس فرمان میں ہے: ”فَقُلْنَا اضْرِبْ بِعَصَاكَ الْحَجَرَ فَانْفَجَرَتْ“ (سورۃ البقرہ آیت: ۶۰) یعنی حضرت موسیٰ علیہ السلام نے مارا تو پھوٹ پڑے تاہم ان دونوں حضرات کے علاوہ فاء فصیحہ وہی ہوتی ہے جو محذوف سبب کا پتہ دے خواہ وہ شرط ہو یا معطوف علیہ۔

”مَا“ کا لفظ استفہام کیلئے ہے اور یہ وہ ہوتا ہے جس کے ذریعے جنس یا صفت پوچھی جاتی ہے اور یہاں جنس ہی پوچھی جا رہی ہے۔

لفظ ”قَوْل“ کے استعمالات

”لِعَيْنِكَ“ میں لام کا تعلق چھپے ہوئے لفظ سے ہے یعنی ”تمہاری آنکھوں کو کیا حاصل ہوا“۔ خطاب والے ”ك“ میں بھی تجرید ہے (یعنی اپنے آپ میں ایک اور بوسیری فرض کیا گیا ہے) اسے ذہن میں بٹھا لو اور ”اِنْ قُلْتَ اَكْفُفَا“ والا جملہ اسی ”مَا“ کی تفسیر ہے اور ”قُلْتَ“ کا صیغہ خطاب کا ہے جس کا مفعول محذوف ہے جو ”لَهُمَا“ (یعنی ان دونوں آنکھوں سے کہو) ہے چنانچہ یہاں ”قَوْل“ (”قُلْتَ“ میں) کا لفظ خطاب کرنے کے معنی میں ہے کیونکہ یہ بات ثابت ہو چکی ہے کہ ”قَوْل“ کا کوئی لفظ آئے تو کچھ حرفوں کو ساتھ ملانے سے اس کے کئی معنی بن جاتے ہیں کیونکہ اگر اسے ”باء“ کے ساتھ استعمال کریں تو یہ حکم کرنے کا معنی دیتا ہے ”عَلَى“ کے ساتھ استعمال کریں تو

اعتراض کرنے کا معنی دیتا ہے ”فِی“ کے ساتھ استعمال ہو تو اجتہاد کرنے کا معنی دیتا ہے اور ”لام“ کے ساتھ ہو تو کسی سے خطاب کرنے کا معنی دیتا ہے اور پھر دَوَّہ جنگی نے علم صرف کی کتاب ”حاشیہ سعد الدین“ میں لکھا ہے کہ ”قَوْل“ کا لفظ ”باء“ کے ساتھ استعمال ہو تو کئی معنوں کیلئے آتا ہے جیسے کہا جائے: ”قَالَ بِيَدِهِ“ تو معنی ہوگا: ”اس نے اپنے ہاتھ سے پکڑا“، ”قَالَ بِرَجْلِهِ“ کا معنی ”اس نے اپنے پاؤں سے مارا یا اس کے ساتھ چل کر گیا“۔ ”قَالَ بِرَأْسِهِ“ کا معنی ”اس نے اپنے سر سے اشارہ کیا“ ”قَالَ بِالْمَاءِ عَلَى يَدِهِ“ کا معنی ”اس نے اپنے ہاتھ پر پانی اُنڈیلا“۔ ”قَالَ بِثَوْبِهِ“ کا معنی ”اس نے اپنا کپڑا اٹھایا“ ہوتا ہے۔

”اَكْفَفًا“ کا جملہ ”قُلْتُ“ کا مقولہ ہے ”كَفَّ“ سے تشبیہ امر کا صیغہ ہے جس کا معنی ہے: اس نے روکا جیسے کہا گیا ہے: ”خَيْرُ الْمَرْءِ مَنْ كَفَّ فِكَّهُ وَفَكَ كُفَّهُ“ (بہتر آدمی وہ ہوتا ہے جو اپنے جبرے یعنی زبان کو روکے اور سخاوت کی رکاوٹ بند کر دے اور بُرا شخص وہ ہے جو سخاوت روک دے اور بکواس کرتا رہے)۔

اگر تم یہ اعتراض کرو کہ لفظ ”اَكْفَفًا“ میں ادغام کرنا لازم تھا لیکن ناظم نے قانون کی مخالفت کرتے ہوئے اسے توڑ دیا ہے اور یہ بات فصاحت کے خلاف ہے تو میں جواب میں کہوں گا کہ قصیدہ کی شرح کرنے والے حضرات نے اس کے کئی جواب دیئے ہیں چنانچہ علامہ عصام کہتے ہیں کہ ان کا ادغام نہ کرنا شعر کی ضرورت ہے جو جائز ہے جیسے کسی شاعر نے شعر کی ضرورتیں گنواتے ہوئے کہا ہے کہ:

”کبھی ایسا بھی ہوتا ہے کسی حرکت میں ”اشباع“ کیا جاتا ہے ادغام توڑنا پڑتا ہے مذکر کو مؤنث بنانا پڑتا ہے یا کبھی مؤنث لفظ کو مذکر بنانا ہوتا ہے“۔

کہا گیا ہے کہ ”لَعَيْنِكَ“ دونوں آنکھوں کا ذکر صرف صورت ہے جبکہ حقیقت میں ایک ہی مراد ہے چنانچہ لفظ ”اَكْفَفًا“ کو حقیقت میں دیکھیں تو یہ صیغہ مفرد ہوگا اگرچہ دیکھنے میں تشبیہ نظر آ رہا ہے اور مفرد لفظ کا ادغام توڑنا جائز ہوتا ہے لیکن یہ جواب صرف جان چھڑانے کیلئے بنتا ہے کیونکہ یہ وحدۃ الوجودی صوفیوں کے مطابق ہے کیونکہ یہ انہی کا کہنا ہے کہ انسان میں آنکھ صرف ایک ہے دو نہیں ہیں چنانچہ انسان ایک چیز کو دو نہیں دیکھا کرتا اور دیکھنے میں کئی چیزیں ہوں تو اس سے چیز کے ایک ہونے میں فرق نہیں پڑتا اور یوں بھی کہا گیا ہے کہ ادغام توڑنا اس وہم کی وجہ سے ہے کہ شاید یہ لفظ

مفرد ہے چنانچہ اس کی وجہ سے فصاحت میں فرق نہیں پڑتا جیسے ”الْحَمْدُ لِلَّهِ الْعَلِيِّ الْأَجَلِّ“ (تعریف اس اللہ کی ہے جو بلند مرتبہ بزرگ ہے) میں ”اجل“ کے ادغام کو توڑ کر ”أَجَلِّ“ پڑھا گیا ہے۔ کچھ علماء کہتے ہیں: یہ اس بات کی طرف اشارہ ہے کہ سمجھدار ناظم نے خوف اور حیرانی میں یہ لفظ بول دیا ہے اور لگتا ہے کہ انہیں قاعدوں کا خیال ہی نہیں تھا چنانچہ علم بیان میں ایسی چیز کو ”ظرافت“ (خوش طبعی) کہا جاتا ہے تو ایسے موقع پر زبان سے ایسے الفاظ نکلنے کی صورت میں انہیں برا نہیں جانا جائے گا۔

”هَمَّتَا“ کا لفظ ”هَمْي يَهْمِي هَمِيَانًا“ سے تشبیہ کا صیغہ ہے جس کا معنی ہے کہ ”دونوں آنکھیں آنسو بہاتی ہیں“ اس میں تشبیہ کی ضمیر ”عَيْنَيْنِ“ کی طرف لوٹتی ہے ”عَيْنَيْنِ“ کی طرف اس کی نسبت مجاز بنتی ہے کیونکہ آنکھیں نہیں بہتیں بلکہ ان میں سے پانی بہا کرتا ہے اور یہ نسبت ایسے ہی ہے جیسے کہہ دیتے ہیں: ”سَالِ الْمِيزَابُ“ کہ ”پرنا لہ بہنے لگا“ لیکن علامہ سکا کی نے اس مجاز کو نہیں مانا بلکہ اسے استعارہ مکنیہ اور تخیلیہ بنایا ہے اور مجاز عقلی کو مانا ہی نہیں چنانچہ اس بناء پر انہوں نے ذہن کے اندر آنکھ کو فائدہ مند ہونے کی بناء پر بارش سے تشبیہ دی ہے تو جیسے بارش کا پانی سب پانیوں میں بہتر ہوتا ہے یونہی آنکھ بھی انسان کے سارے اعضاء سے بہتر ہوتی ہے پھر مشبہ بہ کیلئے دو افراد لئے ہیں ایک فرد جانا پہچانا ہے جو بارش ہے اور دوسرا آنجانا ہے جو آنکھ ہے پھر ذہن میں مشبہ بہ یعنی بارش جو جانی پہچانی ہے اسے آنکھ کیلئے جو آنجانی ہے بطور استعارہ استعمال کیا پھر خارج میں مشبہ (آنجانا) فرد یعنی آنکھ) کا لفظ بول کر آنکھ مراد لی جو آنجانی ہے پھر مشبہ (آنکھ کا بہنا) کی طرف سے ایک خیالی چیز نکال لی گئی اور اسے پانی کے چلنے سے تشبیہ دی گئی یہ تشبیہ اس کے تیز چلنے میں ہے پھر وہ لفظ لائے جو مشبہ بہ کا پتہ دیتا ہے یعنی ”سَالَتَا“ (دونوں آنکھیں بہتی ہیں) اور اس لفظ سے مشبہ مراد لیا۔ اس میں بھی جمہور کا مذہب جاری ہے اور وہ اس طرح کہ ناظم اپنے ذہن میں آنکھ کو بارش سے تشبیہ دیتا ہے کہ یہ اسی طرح آنسوؤں کو تیزی سے بہاتی ہے پھر ذہن ہی میں بارش کو استعارہ کے طور پر بارش کیلئے استعمال کیا جبکہ خارج میں مشبہ یعنی آنکھ کا ذکر کیا اور اسی کا ارادہ کیا جبکہ رمز اور اس استعارہ کی طرف اشارہ کرنے کیلئے جو ذہن میں تھا ”هَمَّتَا“ کا وہ لفظ لائے جو مشبہ کیلئے مشبہ بہ کی لازم چیزوں میں شامل ہے اور اسے ثابت رکھنا ان علماء کے نزدیک استعارہ تخیلیہ بنتا ہے۔

”هَمَّتَا“ کا جملہ ناظم کے قول ”إِنْ قُلْتَ الْكُفْفَا“ کی جزاء بنتا ہے۔

اگر تم سوال کرو کہ علم نحو کے مطابق شرط ہی جزاء کا سبب بنتی ہے تو پھر ناظم کا ”ان قلت اکففا“ فرمانا پانی کے جاری ہونے کا سبب کیسے بن سکتا ہے سبب تو اس کا اُلٹ چیز بنتی چاہیے؟ تو میں کہوں گا کہ سبب ایک عام چیز ہے، یہ عقلی، عادی اور عرفی ہوتا ہے اور یہ جملہ شرطیہ اس جزاء کیلئے اگرچہ عقلی اور عادی سبب تو نہیں بنتا لیکن عرفی تو بنے گا۔ اس عُرف سے مراد عاشقوں کا عُرف ہوگا کیونکہ ان کے نزدیک عشق وہ کام کراتا ہے جسے عقل نہیں مانتی اور یہاں عقل اگرچہ یہ کہتی ہے کہ رونا چھوڑ دو اور رونے سے روکتی ہے لیکن عشق، عقل کے خلاف کرنے کو کہتا ہے چنانچہ اس کی آنکھوں سے بے تحاشا آنسو بہتے ہیں۔

روح اور جسم میں سے پہلے کسے پیدا کیا گیا؟

ناظم کے فرمان ”وَمَا لِقَلْبِكَ“ کا مطلب ہے کہ تمہارے دل کو کیا حاصل ہوا۔

دل کی شکل و صورت

”دل“ صنوبری شکل کا ہوتا ہے جو بانس پسیلوں کے نیچے ہوتا ہے زندگی اور ایمان کا ٹھکانہ یہی ہوتا ہے چنانچہ کچھ عارف لوگ کہتے ہیں کہ اللہ تعالیٰ نے پہلے رُوح کو پیدا کیا اور بعد میں جسم پیدا کیا، رُوح مَوْنُث جبکہ جسم مذکر ہوتا ہے، پھر رُوح کو جسم کے ساتھ شادی کرنے کا حکم دیا، جس نے اس سے شادی کر لی جس سے دو بچے پیدا ہوئے، ایک مذکر تھا اجدول ہے جس میں ایمان ہوتا ہے اور یہ رُوح کا کہا مانتا ہے، ایک مَوْنُث تھا جو نفس ہے، یہ فساد کی جگہ ہے جو شیطان اور جسم کا کہا مانتا ہے اور اچھی بُری دو چیزوں کا حاصل اور نتیجہ بُرا ہی ہوتا ہے۔

”اِسْتَفِقَ“ کا لفظ ”اِسْتَفَقَ“ سے امر ہے جس کا معنی سنبھل جانا ہوتا ہے اس میں ”س“ کا حرف ”پالینا“ کے معنی میں ہے، یعنی ”تُو آرام پالے“۔

”يَهْمُ“ کا لفظ ”هَامَ يَهْمُ“ سے ہے جس کا معنی ”حیران ہونا“ ہے، ہاء کے بعد اس کی یاء حذف کر دی گئی کیونکہ اس پر (جواب شرط کی وجہ سے) جزم آئی تھی، یہ جملہ پہلے لفظ (ان قلت استفق) کی جزاء بنتا ہے۔

اس پر بھی پہلے جیسا سوال ہوتا ہے اور اس کا جواب بھی وہی ہے جو پہلے کا تھا۔ اسے ذہن نشین کر لو۔

ناظم نے پہلی شرط (ان قلت اکففا) کی جزاء میں ماضی کا صیغہ ذکر کیا کیونکہ ناظم کا روتے رہنا

ثابت ہو چکا اور یہاں مضارع کا صیغہ لائے ہیں کیونکہ دل کے اندر کی چیز پوشیدہ ہوتی ہے جس کا پتہ لگانا مشکل ہوتا ہے۔

اس شعر میں علمِ بدیع کی صنعت ”جناس“ پائی جاتی ہے جو ”ہَمِيَان“ اور ”هَيْمَان“ کے باہمی تعلق کی طرح ہے جیسے فرمانِ الہی میں ہے: ”قَالَ اِنِّي لَعَمَلِكُمْ مِّنَ الْقَالِيْنَ“ (سورۃ الشعراء آیت: ۱۶۸) اس ”قال“ کا لفظ ”قَوْل“ سے اور ”قالين“ کا لفظ ”قَلِي“ سے نکلا ہے۔

شعر ۳، ۲، ۱ کا عمل جانور سدھانے اور زبان کھولنے کیلئے

ان تین شعروں کی خصوصیت یہ ہے کہ اگر تمہارے پاس نہ سیکھنے والا مویشی ہو تو انہیں شیشہ پر لکھ کر بارش کے پانی سے دھو کر وہ پانی مویشی کو پلا دو وہ سیکھے گا اور تمہارا فرمانبردار ہو جائے گا۔ میرے استاد رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ میں اس کا تجربہ کر چکا ہوں اور دیکھا ہے کہ یہ بات ٹھیک ہے۔ فرماتے ہیں کہ میں نے یہ تینوں شعر ہرن کی کھال پر لکھ کر اس شخص کے بازو پر لٹکانے کو کہا جس کی زبان میں کمزوری اور بندش تھی چنانچہ اس شخص کی زبان کھل گئی اور وہ کھل کر باتیں کرنے لگا۔



شعر (۴)

أَيْحَسَبُ الصَّبُّ أَنَّ الْحُبَّ مُنْكَتَمٌ

مَا بَيْنَ مُنْسَجِمٍ مِّنْهُ وَمُضْطَرِمٍ

(ترجمہ:) ”کیا کوئی عاشق بہتے آنسوؤں اور بے چین دل کے باوجود یہ سمجھتا ہے کہ اس

کی محبت چھپ سکتی ہے؟“

جب سمجھدار ناظم کو شدید خواہش تھی کہ وہ فرض کئے ہوئے مخاطب شخص کے دل میں موجود محبت کو ثابت کر دے تو اس کیلئے صرف ایک دلیل دینا کافی نہیں سمجھی بلکہ اس کے اس دعویٰ پر دوسری دلیل لے آئے ہیں چنانچہ فرمایا: ”أَيْحَسَبُ الصَّبُّ الْخ“ مطلب یہ کہ اگر تجھے محبت نہ ہوتی تو نہ تم آنسو بہاتے اور نہ ہی تمہارا دل بے چین ہوتا لیکن چونکہ دوسری بات غلط ہے تو پہلی بھی غلط ہوئی چنانچہ اس کی نقیض (اُلٹ) ثابت ہوگئی۔

تحقیق الفاظ

پھر یہ ہمزہ انکاری ہے اور یہاں اس کا معنی نفی کا ہے جیسے ایک شاعر کہتے ہیں:

”کیا (میرا دشمن) مجھے قتل کر سکتا ہے جبکہ دھیان رکھنے والا میرے بستر کی نگہبانی کر رہا

ہے اور پھر ”زُرْق“ (حملہ کرنے والا ایک جانور) کے دانت تو ایسے ہیں جیسے دیو کے

دانت نوکیلے ہوتے ہیں۔“

”يَحْسَبُ“ کے لفظ میں ”س“ پرزیر اور زبر پڑھی جاسکتی ہے یہ افعالِ قلوب میں سے ہے

”حُسْبَان“ گمان کرنے کو کہتے ہیں۔

اس کا مطلب یہ ہے کہ عاشق محبت کے چھپے رہنے کا گمان بھی نہیں کر سکتا کیونکہ گمان کرنے کو

اس لئے روکا گیا ہے کہ کچھ گمان گناہ بن جاتے ہیں اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: ”اجْتَنِبُوا كَثِيرًا مِّنَ

الظَّنِّ إِنَّ بَعْضَ الظَّنِّ إِثْمٌ“ (سورۃ الحجرات آیت: ۱۲) (بہت سارے گمان نہ کیا کرو کیونکہ کوئی گمان گناہ

بھی بن جاتا ہے)۔

”يَحْسَبُ“ کے لفظ میں جمہور علماء اور علامہ سکاکی کے مطابق بات کو ”خطاب“ سے ”غیبت“

کی طرف موڑا گیا ہے اور اس موڑنے میں ایک نکتہ تو عام سا ہے جبکہ ایک خاص ہے چنانچہ عام سا نکتہ

تو یہ ہے کہ کلام میں ایسی تبدیلی کرنے سے دلوں کو خوش کیا جاتا ہے جبکہ خاص نکتہ یہ ہے کہ ناظم تعریف بننے والے لفظ ”صَبَّ“ کو اپنے اوپے چسپاں کرنا چاہتا ہے کیونکہ اگر وہ یوں کہتا: ”اَتَّحَسَّبُ“ (مخاطب کرنے کا لفظ) تو اسے اپنے اوپر چسپاں کرنا ممکن نہ تھا۔

اب اگر یہاں نہ کہا جائے کہ اگر ناظم ”تَحَسَّبُ“ کہہ دیتے تو پھر بھی تعریف بننے والی صفت کو اپنے آپ پر چسپاں کر سکتے تھے اور وہ یوں کہ ”الصَّبَّ“ کے لفظ کو ”تَحَسَّبُ“ کے فاعل یعنی ”تاءِ ضمیر“ کی صفت یا اس سے ”بدل“ بنا لیتے تو میں کہوں گا کہ یہ دونوں صورتیں ناممکن ہیں کیونکہ ضمیر نہ تو موصوف بن سکتی ہے اور نہ ہی اس کا صفت بننا ممکن ہے جیسے ایک شاعر نے کہا:

”تم نے اپنے دل میں ”شادن“ کی خواہش چھپائی ہے جو علمِ نحو میں مصروف ہے جس کی صفت ناممکن ہے جس پر میں نے کہا کہ میں نے ایک دن بھی اسے دل میں جگہ نہیں دی جس پر اس نے کہا کہ ”مُضْمَر“ (اسمِ ضمیر) کی تعریف نہیں ہوتی۔“

(دوسرا مطلب: یعنی اسمِ ضمیر کی صفت لانا ممکن نہیں) اور ایک وجہ یہ ہے کہ اسمِ ضمیر اس وقت تک اسمِ ظاہر کا بدل نہیں بن سکتا جب تک وہ اسمِ غائب کا صیغہ نہ ہو لیکن یہاں تو مخاطب کا صیغہ ہے۔

اگر تم کہو کہ ہم ”الصَّبَّ“ کا صفت بننا مانتے ہی نہیں تو میں کہوں گا کہ ”الصَّبَّ“ دراصل مصدر ہے جو ”بہانے“ کا معنی دیتی ہے لیکن یہاں اس سے مراد عاشقِ کامل ہے اور عاشقِ کامل کو صرف اس لئے ”صَبَّ“ کہا گیا ہے کیونکہ وہ ہر وقت روتا رہتا ہے جیسے ایک شاعر کہتا ہے:

’پوری مخلوق میں محبت کرنے والے سے بڑھ کر کوئی بد بخت نہیں، خواہ وہ محبت کتنی ہی پیاری کیوں نہ ہو، تم اسے دیکھو گے تو ہر وقت روتا ہوگا کیونکہ یا تو اسے جدائی کا خوف ہوگا یا حد درجہ شوق ہوگا۔‘

حرف ”اَنَّ“ تاکید اور زور پیدا کرنے کیلئے ہے اور ”اَلْحُبَّ“ مصدر ہے ”مُنْگِیْم“، ”اِنْکِتَام“ سے لیا گیا ہے جس کا معنی چھپنے والا اور چھپنے کے لائق ہوتا ہے، ناظم نے اس کلام کو حرف ”اَنَّ“ اور جملہ اسمیہ کے ذریعے پکا کیا ہے کیونکہ یہ مقام انکار کا تھا۔ ”مَا“ کا لفظ زائد ہے ”بَيْنَ“ کا لفظ ”مُنْکِتْم“ کی طرف ہے ”مُنْسَجِم“ محذوف موصوف کی صفت ہے جو ”دَمَّ“ ہے اصل میں ”دَمَّ مُنْسَجِم“ تھا یہ لفظ ”اِنْسِجَام“ سے بنا ہے جس کا معنی بارش کا موٹے قطرے برسنا اور پانی

انڈیلنا ہوتا ہے، یعنی موٹے قطروں والے آنسو۔ ”مِنَهُ“ کا لفظ ”مُنْسَجِمٌ“ سے تعلق رکھتا ہے اور اس کی ضمیر (علم بدیع کے قاعدے پر) استخدا م کے طور پر ”صَبَّ“ کی طرف لوٹتی ہے کیونکہ ”صَبَّ“ سے مراد عاشقِ کامل ہے اور اس کی طرف لوٹنے والی ضمیر سے خاص عضو یعنی آنکھ مراد ہے جسے ہر ایک جانتا ہے۔ ”مُضْطَرِمٌ“ کا لفظ ”مُنْسَجِمٌ“ پر معطوف ہے اور یہ بھی حذف کئے ہوئے موصوف کی صفت ہے یعنی ”قَلْبٌ مُضْطَرِمٌ“ اور اس کا معنی سخت بے چین اور بھڑکا ہوا ہے۔ اس ”مُضْطَرِمٌ“ میں استعارہ مَلَنِیَّہ (علم معانی کا لفظ) ہے کیونکہ ناظم نے اپنے ذہن میں عاشق کے دل کو (جو اس میں موجود ہے کہ اس کی طرف ضمیر لوٹائی گئی ہے) عُود کے درخت کے ساتھ اس بناء پر تشبیہ دی ہے کہ دونوں ہی جلانے کے قابل اور اچھی خوشبو دینے میں سانشے ہیں کیونکہ جب عاشق کا دل جل رہا ہو تو صوفی حضرات کہتے ہیں کہ اس سے اچھی خوشبو آتی ہے، پھر عُود کے درخت کیلئے آپ نے دو افراد ہونے کا دعویٰ کیا جن میں سے ایک تو جانا پہچانا یعنی حقیقۃً عُود ہی کا درخت ہے اور دوسرا اَنجانا ہے یعنی دل، پھر مشبہ کو استعارے کے طور پر مشبہ بہ کے لئے استعمال کیا، پھر خارج میں مشبہ کا ذکر کر کے اس سے مشبہ بہ مراد لیا یعنی دل اور یہ استعارہ مَلَنِیَّہ کہلاتا ہے، پھر مشبہ کی طرف سے ایک خیال نکالا (وہ دل کا پریشان ہونا، جلنا اور جلنے کے وقت اچھی بو کی حالت میں ہونا) جسے عُود درخت کے بھڑکنے سے تشبیہ دی، پھر ایسا لفظ لیا جو مشبہ بہ کا پتا دیتا ہے اور وہ ”مُضْطَرِمٌ“ ہے کیونکہ وہ عُود کے درخت میں حقیقت ہے (کیونکہ دل کی طرح بھی جلتا ہے) اور مشبہ بہ بول کر مشبہ مراد لیا جو دل کا جلنا ہے، یہ استعارہ تَخِیْلِیَّہ ہے، یہ علامہ سکا کی بتاتے ہیں تاہم علامہ خطیب کے نزدیک تخیلیہ یوں بنتا ہے کہ ذہن میں دل کو عُود درخت سے تشبیہ دی جائے اور خارج میں اسے ثابت کیا جائے جو مشبہ کیلئے مشبہ بہ کو لازم ہوتا ہے تاکہ ذہن میں تشبیہ کی طرف اشارہ ہو اور رمز سے بتایا جاسکے۔

حضرت مصنف رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ اگر راز رکھنے والا چغلیخوڑ ہو تو اسے راز چھپانا مشکل ہوتا ہے بلکہ ممکن ہوتا ہے تو ایسے میں کیا ہوگا جب وہ چغلیخوڑ اس کا حصہ ہو، خصوصاً جب وہ دو ہوں اور پھر خاص طور پر جب وہ ایک دوسرے سے تعاون کرتے ہوں جیسے ہمارے سامنے ہے۔

اس شعر کا حاصل معنی یہ ہے کہ اے عاشق! تم یہ گمان نہ کرو کہ محبت چھپنے والی چیز ہے، بھلا یہ کیسے ہو سکتا ہے جبکہ بہنے والے آنسو اور جلنے والا دل صاف بتا رہے ہیں، یہ محبت ظاہر ہو کر رہتی ہے تو پھر تم محبت کے چھپنے کا خیال کیوں کرتے ہو۔

محکمہ عشق میں درخواست

(اس شعر میں) گویا عاشق یہ دعویٰ کرتا ہے کہ محبت دکھائی دینے والی چیز ہے اور جسے ناظم نے اپنے آپ میں فرض کیا ہے اس محبت کا انکار کر رہا ہے چنانچہ وہ دونوں عشق کے محکمہ میں جاتے ہیں وہاں عشق کے قاضی کے پاس جا کر جھگڑا کرتے ہیں قاضی اس حدیث کے مطابق عاشق سے کہتا ہے کہ انصاف والے دو گواہ لاؤ کیونکہ: ”الْبَيِّنَةُ عَلَى الْمُدَّعِي وَالْيَمِينُ عَلَى الْمُنْكَرِ“ (مشکوٰۃ المصابیح، کتاب الامارۃ والقضاء باب الاقضية والشهادات، جلد ۲ صفحہ ۳۵۳، رقم الحدیث: ۳۷۵۸) عاشق اپنا دعویٰ ثابت کرنے کیلئے دو گواہ لاتا ہے جو آنسوؤں کا بہنا اور دل کا جلنا ہیں وہ گواہی دیتے ہیں جس پر قاضی حکم دیتا ہے کہ محبت کھل جانے والی شے ہے۔

اگر تم سوال کرو کہ پہلا گواہ تو مانا ہوا ہے جبکہ دوسرا وہ ہے جسے مانا نہیں جاسکتا کیونکہ اس کا حال چھپا ہوا ہے اس لئے کہ دل کا حال اللہ کے سوا کوئی نہیں جانتا تو میں کہوں گا کہ پہلا گواہ دوسرے کو طاقت دیتا ہے کیوں کہ آنسو بہانا دل کے اندر کا حال بتا دیتا ہے جیسے ایک فاضل کہتے ہیں کہ ”جب دل پر کوئی اثر پڑتا ہے تو یہ اثر آنکھوں تک چلا جاتا ہے چنانچہ سخت غم کے وقت وہ آنسو بہانے لگتی ہیں جبکہ زیادہ خوشی پر چمکنے لگتی ہیں۔“

ہماری اس تقریر سے معلوم ہوا کہ اس شعر میں ”استعارہ تمثیلیہ“ پایا جاتا ہے کیونکہ ناظم رحمہ اللہ نے اس شعر میں ان ساری چیزوں کے نچوڑ کو (یعنی ایک گواہ آنسوؤں کا بہنا اور دوسرا پریشان دل پھر دونوں کی طرف سے محبت کرنے والے کے دعویٰ کو ثابت کرنے کا دعویٰ پھر اس کے دعویٰ کو محسوس ہونے والے امور کے نچوڑ سے باطل کرنا جو محبت کا انکار کرتا ہے) اس ہیئت کے ساتھ تشبیہ دی جو محسوس چیزوں سے نکالی گئی اور وہ دو گواہوں کا خارج میں ایک ایسے آدمی کے دعویٰ کو ثابت کرنا جو محبت کا انکار کرتا ہے اور انکار کرنے والے کے دعویٰ کو باطل کرنا وغیرہ ہیں پھر اس نچوڑ کو غیر محسوس چیزوں کے نچوڑ کیلئے استعارہ کیا گیا چنانچہ مشبہ کو ذکر کر کے اس سے مشبہ بہ مراد لیا گیا اور اسی بناء پر ان تمام چیزوں کے نچوڑ میں استعارہ مُصَرَّحہ جاری کیا اور وہ یوں کہ گواہ کو بہنے والے آنسوؤں سے تشبیہ دی پھر بہنے والے آنسوؤں کا ذکر کر کے گواہ مراد لیا اور یونہی سب کو اس پر قیاس کر لو۔ اس پر غور رکھو۔



شعر (۵)

لَوْ لَا الْهَوَى لَمْ تُرِقْ دَمْعًا عَلَى ظَلَلٍ
وَلَا أَرِقْتَ لِذِكْرِ الْبَانِ وَالْعَلَمِ

(ترجمہ:)"تمہیں محبت نہ ہوتی تو تم ٹیلوں پر آنسو نہ بہاتے پھرتے اور نہ ہی "بان" جیسے لمبے درخت اور پہاڑ (اضم) کو یاد کر کے جاگتے رہتے۔"

اس کے بعد حضرت ناظم رحمہ اللہ اپنے دعویٰ کو پکا کرنے سے طاقت دینے اور اپنے دعویٰ کو سچا ثابت کرنے کی طرف اشارہ کرتے ہیں کہ ان کا دعویٰ جھوٹا اور بہتان نہیں چنانچہ اس پر ایک اور دلیل بھی ذکر کرتے ہیں اور فرماتے ہیں: "لَوْ لَا الْهَوَى الْخ" یعنی محبت کا بادشاہ تیرے دل کے شہر میں ہے اور اگر محبت کا بادشاہ تیرے دل کے شہر میں نہ ہوتا تو تم ٹیلوں پر آنسو بہاتے نہ پھرتے اور نہ ہی بان جیسے اونچے درخت اور پہاڑ کو یاد کر کے جاگتے پھرتے لیکن دوسرا قول باطل ہے تو پہلا بھی باطل ہوا جس کے نتیجے میں نقیض ثابت ہوگئی۔

تحقیق الفاظ

حرف "لَوْ لَا" کی تحقیق

"لَوْ لَا" کا حرف چار طرح سے آتا ہے یہ جملہ اسمیہ پر داخل ہوتا ہے اور دوسری شے کے موجود ہونے کی وجہ سے پہلی شے کا منع ہونا بتاتا ہے اس کے بعد مبتدا کی خبر لازماً محذوف ہوتی ہے۔ کسی کو ابھارنے اور عرض کرنے کیلئے آتا ہے اور یہ صرف فعل مضارع پر آتا ہے۔ تیسرے یہ کہ ڈانٹ ڈپٹ اور شرمسار کرنے کیلئے ہوتا ہے چنانچہ فعل ماضی ہی پر آتا ہے۔ چوتھے یہ کہ استفہام کیلئے آتا ہے۔

یہاں پہلے طریقے پر استعمال ہوا ہے چنانچہ عبارت یوں بنتی ہے: "لَوْ لَا الْهَوَى مَوْجُودٌ فِيكَ" (اگر تمہیں محبت نہ ہوتی)۔

"هَوَى" کا لفظ الف مقصورہ کے ساتھ ہے، فعل "هَوَى" کی مصدر ہے باب "عَلِمَ" سے یا "هَوَى" باب ضَرْب سے ہے اور یہاں اس سے مراد عشق و محبت ہے۔

لفظ ”ہوی“ کے تین معنی

کیونکہ ”ہوی“ کا لفظ تین معنی دیتا ہے:

(۱) نفس کا اس چیز کی طرف جھکاؤ جسے شرع چاہتی ہے اور جو بری ہوتی ہے جیسے اللہ کے اس فرمان میں ”أَفَرَأَيْتَ مَنِ اتَّخَذَ إِلَهَهُ هَوَاهُ“ (سورۃ الجاثیہ آیت: ۲۳) (آپ اُسے دیکھ رہے ہیں جو اپنے خدا کی خواہش بنائے ہوئے ہے؟)۔

(۲) دوسرا معنی عشق ہے۔

(۳) ”مَهْوِيٌّ“ یعنی محبوب کا معنی دیتا ہے جیسے کسی شاعر نے کہا ہے کہ ”میرا محبوب یمنیوں کے ساتھ چڑھنے والا ہے“۔

ہو سکتا ہے کہ ”الہوی“ سے مراد تیسرا معنی بھی ہو اور اس پر الف لام مضاف الیہ کے بدلے میں اصل یوں بنے گا: ”لَوْ لَا مَحْوُوبُكَ“۔

”لَمْ تُرِقْ“ اَرَاقَ يُرِيقُ سے فعل مضارع کا صیغہ ہے اس کا اصل ”يُرِوقُ“ ہے پھر اس میں ”يَقِيمُ“ جیسی تعلیل کی گئی پھر اس پر جزم دینے والا حرف (”لَمْ“) داخل ہوا تو یاء گر گئی۔ ”اَرَاقَهُ“ کا معنی بہانا ہوتا ہے جیسے ابن حاجب نے قتل کے موقع پر کہا تھا:

”میں اپنے قدم کو دیکھتا ہوں کہ میرا خون بہاتا ہے میرا خون ہلکا ہو گیا اور میں شرمسار ہو گیا ہوں“۔

”لَمْ تُرِقْ“ میں غائب سے خطاب کی طرف التفات ہے اور ان کا تیزی سے خطاب کی طرف التفات کلام کو بیان کرنے کی بجائے معائنہ کرانے کیلئے ہے۔ ”دَمَعُ“ کی تعریف گزر چکی ہے تو وہاں سے دیکھ لو اس کی تنوین عظمت و بزرگی بتانے کیلئے ہے جیسے ”طَلَلِ“ کی تنوین حقیر اور گھٹیا بنانے کیلئے ہے جیسے ناظم نے کہا ہے:

”اس کے پاس ہر ایسے امر کیلئے عظیم دربان ہے جو اسے عیب دار کر دے لیکن اس کے پاس طالب عرف کیلئے حقیر سا دربان بھی نہیں ہے“۔

”عَلَى“ کا حرف ”لَمْ تُرِقْ“ سے متعلق ہے ”طَلَلِ“ (دونوں حرفوں پر زبر) کا لفظ تباہ گھر کا اثر بتاتا ہے گویا کہ ناظم فرماتے ہیں کہ اگر تمہیں گھروں والوں اور ان میں رہنے والوں سے محبت نہ ہوتی تو تم اپنی آنکھوں سے عظیم آنسوؤں کو گھر کے حقیر ٹیلوں پر نہ بہاتے۔

یہ بھی ممکن ہے کہ ناظم کے نزدیک ”طلل“ سے مراد مکہ مکرمہ ہو کیونکہ وہ نبی کریم ﷺ کے ہجرت فرما جانے کے بعد معنوی طور پر ویران ہو گیا تھا کیونکہ اس کی رونق تو اس لئے تھی کہ نبی کریم ﷺ وہاں موجود تھے جیسے اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: ”لَا أَقْسِمُ بِهَذَا الْبَلَدِ وَأَنْتَ حِلٌّ بِهَذَا الْبَلَدِ“ (سورۃ البلد آیت: ۱-۲) (میں اس شہر کی قسم صرف اس لئے کھاتا ہوں کہ (اے محبوب!) یہاں تم موجود ہو)۔

اس آیت سے فائدے کی ایک بات یہ نکلتی ہے کہ مکہ مکرمہ اللہ کی قسم کھانے کے لائق اس بناء پر ہوا کہ نبی کریم ﷺ وہاں رہا کرتے تھے لیکن آپ کی ہجرت کے بعد اب مکہ مکرمہ میں بچ جانے ہمیشہ کے باقی معنوی نشان ویرانی کے نشان ہیں چنانچہ اسی بناء پر علماء کا اس بات پر اتفاق ہے کہ حضور ﷺ کے بدن مبارک کے ساتھ لگنے والی مٹی ہر جگہ سے افضل اور سب سے بڑی عزت والی ہے جیسے آگے اس کی وضاحت آرہی ہے۔

اسی محبت کی بناء پر ”عَلَى“ کا معنی لامِ اَجَلِيَّة کا ہو گا یعنی اگر تمہیں محبت نہ ہوتی تو تم مکہ کو اس لیے ملاحظہ کرنے کے وقت آنسو نہ بہاتے کہ محبوب وہاں سے ہجرت فرما گئے ہیں اور باقی زمین ویران ہو چکی ہے۔ اس پر غور کر لو۔

یہ بھی ہو سکتا ہے کہ ”طلل“ کے لفظ میں یوں استعارہ مُصَرَّحہ ہو کہ عاشق کے دل میں موجود محبت و عشق کے نشانوں کو ویران گھر کے نشانوں سے تشبیہ دی جائے کیونکہ دونوں ہی مکمل طور پر نہ تو آباد ہیں اور نہ ہی پوری طرح ویران ہیں اور پھر ویران گھروں کے نشانوں کو محبت کے نشانوں کیلئے بطور استعارہ استعمال کیا جائے چنانچہ مشبہ بہ کا پتہ دینے والے لفظ کو بول کر اس سے مشبہ مراد لیا جائے۔

”وَلَا أَرِقْتُ“ کا ”لَمْ تُرِقْ“ پر عطف ہے حرف ”لَا“ تاکید کیلئے ہے جو نفی کی تاکید کرتا ہے۔ ”أَرِقْتُ“ کا لفظ ”أَرِقُ يَأْرِقُ“ سے ہے جو باب ”عَلِمَ“ سے ہے اور اس کا معنی راتوں کو جاگنا اور نہ سونا ہے یعنی معنی یہ بنے گا کہ اگر محبت کا بادشاہ تیرے دل کے مدینہ میں نہ ہوتا تو تم راتوں کو نہ جاگتے لیکن دوسرا قضیہ باطل ہے تو پہلا بھی باطل ہوگا چنانچہ اس کی نقیض ثابت ہو گئی کیونکہ محبت کرنے والا سویا نہیں کرتا جیسے شاعر نے کہا:

”حیران کی بات ہے محبت کرنے والا کیونکر سوئے گا محبت کرنے والے پر تو ہر طرح کی نیند حرام ہے۔“

”لِذِكْرِ الْبَآئِ الْخ“ میں حرف ”ل“ اَجْلِيَّة (سبب بتانے والا) ہے۔ ”ذِكْر“ پر یا تو زیر ہے یا پیش اور یہ مصدر ہے جو اپنے مفعول کی طرف مضاف ہے فاعل کو ذکر کرنا چھوڑ دیا گیا ہے جس کا مطلب بنتا ہے: ”تمہارے بان درخت کو یاد کرنے کے سبب“۔ ”بان“ ہلکی سی مہک والا درخت ہوتا ہے اور یہ بھی بتاتے ہیں کہ اس سے وہ خاص درخت مراد ہے جو کے قریب ہے جس کے نیچے بیٹھ کر حضور ﷺ اپنے صحابہ کرام رضی اللہ عنہم کے ساتھ بات چیت فرمایا کرتے تھے تو اس بناء پر یہ کہنا مجاز بنے گا کہ جگہ کا ذکر کر کے اس میں ٹھہرنے والا مراد لیا گیا۔ یہ بھی بتاتے ہیں کہ یہ اچھی خوشبو اور قد والا ہوتا ہے تو اس صورت میں استعارہ مُصْرَّحَہ بنے گا کیونکہ نبی کریم ﷺ دیکھنے میں خوبصورت اور نہایت پیارے لگتے تھے پھر اس درخت بطور استعارہ درخت کا نام لے کر نبی کریم ﷺ مراد لئے گئے چنانچہ مشبہ بہ کا ذکر کر کے مشبہ مراد لئے گئے۔

”عَلَم“ ایک پہاڑ کا نام ہے چنانچہ کسی کے شعر میں ہے:

وَإِنَّ صَخْرَ التَّائِمِ الْهُدَاةُ بِهِ كَأَنَّهُ عَلَمٌ فِي رَأْسِهِ نَارٌ

”تائم پتھر سے راہنمائی حاصل ہوتی ہے تو وہ گویا ایسے ہے جیسے ”علم“ پہاڑ ہے جس کی چوٹی پر آگ موجود ہے۔“

بتایا گیا ہے کہ یہاں اس ”عَلَم“ سے مراد مکہ کے پہاڑوں میں سے ایک پہاڑ ہے چنانچہ وہ ”ابوقبیس“ نام کا پہاڑ ہے یا حراء نامی ہے یا وہ پہاڑ ہے جس میں حضور ﷺ کی غار ہے چنانچہ ہر صورت میں یہ ”مجاز مُرْسَل“ بنے گا کہ جگہ کا ذکر کر کے اس میں ٹھہرنے والا مراد لیا گیا کیونکہ ان پہاڑوں میں نبی کریم ﷺ ٹھہرا کرتے تھے یا پھر یہ استعارہ مُصْرَّحَہ ہے اور وہ یوں کہ محبوب کو عظمت رعب خوبصورتی اور بلندی میں پہاڑ سے تشبیہ دی گئی اور پھر پہاڑ کو محبوب کیلئے استعارہ کیا گیا چنانچہ مشبہ بہ کو ذکر کر کے مشبہ مراد لیا گیا۔ اس بناء پر ”لِذِكْرِ الْبَآئِ الْخ“ میں ”ل“ وَثِيَّة ہوگا جیسے اللہ تعالیٰ کے اس فرمان میں ہے: ”لِذَلُّوكِ الشَّمْسِ“ (سورة الاسراء آیت: ۸۷) (سورج غروب ہونے کے وقت)۔

شعر نمبر ۵: تنگ دلی اور پریشانی دور کرنے کیلئے

میرے استاد رحمہ اللہ فرماتے ہیں (اللہ ان کا سایہ ہمیشہ قائم رکھے اور ان کے آخری دن پہلے دنوں سے بہتر رہیں) کہ اس کیلئے شعر کی خصوصیت یہ ہے کہ جس کے دل میں گھٹن ہو وہ مصیبت

میں ہو اور پریشانیوں کی وجہ سے بد حال ہو تو اس شعر کو ایک ایک حرف کر کے سیب پر لکھ کر اسے کھالے تو اس کی تنگ دلی اور بد حالی دور ہوگی اور اگر شیشے کے برتن پر لکھے اور اسے پانی سے مٹا کر پی لے تو اس کی بھی تنگ دلی دور ہو جائے گی لیکن سیب ہی پر لکھیں تو اثر زیادہ ہوتا ہے۔ استاد فرماتے ہیں کہ میں نے اسے کئی بار آزمایا اور درست پایا ہے۔



شعر (۶)

فَكَيْفَ تُنْكِرُ حُبًّا مَبْعَدًا مَا شَهِدَتْ
بِهِ عَلَيْكَ عُدُولُ الدَّمْعِ وَالسَّقَمِ

(ترجمہ:) ”تو پھر تم اس بڑی محبت کا انکار کیسے کر سکتے ہو جبکہ تمہارے آنسو اور بیماری اس محبت کے بارے میں صاف صاف بتا رہے ہیں۔“

جب عاشق اپنے دعویٰ (محبت) پر دو گواہ لے آیا تو گویا ناظم کے اندر فرض کئے گئے شخص کی طرف سے کہا گیا کہ تمہارے یہ دونوں گواہ چونکہ انصاف کرنے والے نہیں ہیں تو ان کی وجہ سے تمہارا دعویٰ ثابت نہیں ہو سکتا تو یہاں ان دونوں کی عدالت ”فَكَيْفَ تُنْكِرُ الخ“ کہہ کر اس کا دعویٰ ثابت کر رہی ہے۔

تحقیق الفاظ

یہاں ”فاء“ فصیحہ (وضاحت کرنے والی) ہے یعنی جب پہلی دلیلوں نے صاف بتا دیا اور پھر اس دعویٰ پر دو گواہوں نے گواہی دے دی کہ محبت کا بادشاہ تمہارے دل میں ہے تو فرمایا: ”فَكَيْفَ الخ“۔ ”كَيْفَ“ کا لفظ حال ہے، مفعول فیہ نہیں اور استفہام یا تو تعجب کیلئے ہے جیسے اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: ”كَيْفَ تَكْفُرُونَ بِاللَّهِ“ (سورۃ البقرہ، آیت: ۲۸) (بھلا تم اللہ کے ساتھ کیونکر کفر کر سکو گے؟) یا ڈانٹ ڈپٹ کیلئے یا پھر دوری چاہنے کیلئے ہے۔ مطلب یہ ہے کہ اس کے بعد تمہیں اس محبت کا انکار نہیں کرنا چاہیے۔

”تُنْكِرُ“ کا لفظ ”انگار“ سے ہے جس کا معنی منکر جانا ہے اور یہ اقرار کرنے کی ضد ہے۔ ”حُبًّا“، ”تُنْكِرُ“ کا مفعول ہے اور اس کی تنوین تعظیم کیلئے ہے جیسے شاعر (یہ شعر سیدہ فاطمہ الزہراء رضی اللہ عنہا سے بھی منسوب ہے) نے کہا:

صَبَّتْ عَلَيَّ مَصَائِبٌ لَوْ أَنَّهَا
صَبَّتْ عَلَيَّ الْآيَامِ صِرْنَ لِيَالِيَا

”مجھ پر اس قدر مصیبتیں ٹوٹیں کہ اگر وہ دنوں پر پڑتیں تو وہ راتیں بن جاتے۔“

”مَبْعَدًا“ کے لفظ پر زبر ہے اور یہ ”تُنْكِرُ“ کی ظرف ہے۔ ”مَا“ کا حرف یا تو مصدر یہ ہے چنانچہ ”بِهِ“ کی ضمیر ”حُبِّ“ کی طرف جاتی ہے یا یہ موصولہ ہے اور ”بِهِ“ کی ضمیر اسی کی طرف لوٹتی

ہے۔ ”شہادۃ“ سچی خبر ہے جو سچے شخص کے منہ سے نکلی ہے اور عُدُول سے تعلق کی بناء پر اس میں استعارہ مُصَرَّحَہ اور تَبَعِیَّہ ہے اور وہ یوں کہ کسی شے کو جنوانے اور ظاہر کرنے کیلئے دلالت کو شہادت کے ساتھ تشبیہ دی اور پھر اس شہادت کو مفہومِ دلالت کیلئے استعارہ بنایا، پھر گویا کہ شہادت کا ذکر کر کے اس سے دلالت مراد لی اور اسی استعارہ کی پیروی میں ”شہادۃ“ کے لفظ سے ”شَهِدْتُ“ کا لفظ نکالا اور ”دلالت“ کے لفظ سے ”ذَلَّتْ“ نکالا اور پھر ان دونوں کی مصدروں میں تعلق کی بناء پر ”ذَلَّتْ“ کی صورت کو ”شَهِدْتُ“ کی صورت سے تشبیہ دی، پھر ”ذَلَّتْ“ کے مفہوم کیلئے ”شَهِدْتُ“ کا استعارہ کیا چنانچہ ”شَهِدْتُ“ کہہ کر ”ذَلَّتْ“ کا مفہوم مراد لیا۔

”عَلَيْكَ“ میں ”عَلَى“ ضرر اور نقصان کے معنی دیتا ہے جیسے اس فرمانِ الہی میں ہے: ”لَهَا مَا اُكْسَبَتْ وَعَلَيْهَا مَا اُكْتَسَبَتْ“ (سورۃ البقرہ آیت: ۲۸۶) (نفس کے فائدے میں ہوتا ہے جو وہ کرتا ہے اور جو کرتا ہے اس کے نقصان میں بھی جاتا ہے) اور جیسے شاعر کہتا ہے:

قَدْ اَصْبَحْتُ اُمَّ الْخِيَارِ تَدْعِي عَلَيَّ ذَنْبًا كُفَّلَهُ لَمْ اَصْنَعِي

”اُمِ خِيَارِ“ نے چلاتے ہوئے دعویٰ کیا کہ مجھ پر وہ پورا گناہ تھونپ دیا گیا جو میں نے کیا ہی نہیں۔

یہاں ”عَلَى“ کو ضرر کیلئے اس بناء پر استعمال کیا گیا کیونکہ عاشق کا دل اپنا عشق بتانے اور ثابت کرنے کیلئے راضی نہیں تھا بلکہ پوری طرح انکار کر رہا تھا تا کہ اس پر مختلف حالات اور راز مرتب ہوں۔

”عُدُول“، ”عَدْل“ کی جمع ہے جس کا معنی فاعل کا ہے یعنی جس کی شہادت پر یقین اور بھروسہ ہو، ”دمع“ (آنسو) اور ”سقم“ (بیماری) کی طرف اس کی اضافت بیانیہ لُغَوِيَّہ ہے یا ”مِنْ“ کے معنی میں ہے یعنی وہ گواہ جو ان دونوں (آنسو اور بیماری) سے سمجھ آتے ہیں۔

”اِضَافَةٌ“ کی تحقیق

علماء بتاتے ہیں کہ مضاف الیہ یا تو مضاف سے الگ چیز ہوتا ہے اور ایسے موقع پر اگر مضاف الیہ مضاف کی ظرف بنتا ہے تو ”فِي“ کے معنی میں ہوگا ورنہ ”لَا“ کے معنی میں ہوگا یا مضاف کے برابر یا عام طور پر اس سے عام ہو تو اضافت نہ ہو سکے گی یا پھر مضاف سے مضاف الیہ عام طور پر خاص ہوگا جیسے ”يَوْمُ الْاِحَادِ“ تو یہ اضافت ”لَا“ کے معنی میں ہوگی یا ”مِنْ“ (ایک لحاظ سے) خاص ہوگا، اب

اگر مضاف الیہ مضاف کیلئے بنیاد بن رہا ہے تو ”مِنْ“ کا معنی ہوگا اور اگر ایسا نہیں تو ”لام“ کا معنی ہوگا اور لام کا معنی دینے کی صورت میں اسے واضح بھی کیا جائے بلکہ اس میں خصوصیت کا معنی ہوگا جو ”لام“ نے بتانا ہوتا ہے۔

پھر علماء یہ بھی لکھتے ہیں کہ اضافت بیانیہ اصطلاحیہ یعنی نحو یہ میں یہ شرط ہوتی ہے کہ دونوں میں عموم خصوص من وجہ کا تعلق ہو اور مضاف الیہ مضاف کیلئے اصل ہو جبکہ اضافت بیانیہ اصطلاحیہ لغویہ میں کبھی دونوں میں عموم مطلق ہوتا ہے اور کبھی ”مِنْ وَجْهِ“ تاہم ”مِنْ وَجْهِ“ کی صورت میں یہ شرط ہے کہ مضاف الیہ اصل نہ ہو۔

اضافت لامیہ میں کبھی تو ان دونوں میں عموم مطلق کی نسبت ہوتی ہے تو اس صورت میں یہ اضافت بیانیہ میں سے ہوگی جیسے اس مقام پر ہے اور کبھی دونوں میں من وجہ عموم ہوتا ہے اور مضاف الیہ مضاف کا اصل نہیں ہوتا۔

میری یہ باتیں یاد کر لو کیونکہ یہ تمہیں بہت سے مقامات پر فائدہ دیں گی۔

ہوسکتا ہے کہ لفظ ”عُدُول“ کی اضافت ایسی ہو جیسے ”أَخْلَاقُ ثِيَابٍ“ (پرانے کپڑے) میں ہے۔

”دَمْع“ کی تعریف پہلے کئی مرتبہ گزر چکی ہے۔ ”سَقَم“ بیماری کو کہتے ہیں اس پر الف لام مضاف الیہ کے بدلے میں ہے یعنی ”سَقَمُ الْقَلْبِ“ (دل کی بیماری) اور جس نے یہ کہا ہے کہ ”دَمْع“ میں الف لام مضاف الیہ کے بدلے میں ہے یعنی ”دَمْعُ الْعَيْنِ“ ہے اس نے غلطی کی ہے اسے سمجھ جاؤ۔

پھر تشبیہ یعنی ”دمع“ اور ”سقم“ کے مقام پر ”عُدُول“ یعنی جمع کا لفظ لانا یا تو تعظیم کیلئے ہے جیسے فرمان الہی میں ہے: ”وَإِنَّ لَهُ لَحَفِظُونَ“ (سورۃ الحجر آیت: ۹) یا اس کی بنیاد یہ قاعدہ ہے کہ جمع کیلئے کم از کم دو چیزیں ہوتی ہیں دلیل یہ ہے کہ نبی کریم ﷺ نے فرمایا: ”الْإِنْسَانِ وَمَا فَوْقَهُمَا جَمَاعَةٌ“ (سنن ابن ماجہ جلد ۱ صفحہ ۵۱۸ رقم الحدیث: ۹۷۲) (دو اور ان سے زیادہ چیزوں کو جماعت کہتے ہیں) اس پر غور کر لو۔ یہ کہنا بھی ممکن ہے جمع کا لفظ اس لئے لایا گیا ہے کہ آنسوؤں اور بیماریوں میں سے ہر ایک اپنے افراد اور انواع کے لحاظ سے جمع بن جاتے ہیں جیسے اللہ کے اس فرمان میں ہے: ”فَقَدْ صَغَتْ قُلُوبُكُمَا“ (سورۃ التحریم آیت: ۴) (تم دونوں کے دل پھر چکے ہیں) اسے ذہن میں رکھو۔

پھر ”دَمَع“ اور ”سَقَم“ میں استعارہ بالکنایہ ہے اور وہ یوں کہ ”دمع“ اور ”سقم القلب“ میں سے ہر ایک کو اس سچے شخص سے تشبیہ دی گئی جو دل کی بات ظاہر کر دیتا ہے اور سچے شخص کے دو فردوں کا دعویٰ کیا جن میں سے ایک جانا پہچانا جو حقیقت سچا ہے اور دوسرا انجانا جو آنسو یا دل کی بیماری ہے، پھر مشبہ کو مشبہ بہ کیلئے بطور استعارہ لایا گیا، پھر خارج میں مشبہ کو لا کر مشبہ بہ مراد لیا گیا، یہ استعارہ ممکنہ ہوا، پھر مشبہ کی طرف سے وہی سا امر لیا گیا جو آنسو اور بیماری ہیں اور اسے سچے شخص کی شہادت دینے سے تشبیہ دی گئی تاکہ حکم کا فائدہ ہو اور پکی شہادت کو خیالی شہادت کے مفہوم کیلئے استعارہ لایا گیا، پھر ”شَهِدَتْ“ میں پکی شہادت کا ذکر کر کے خیالی شہادت مراد لی گئی، یہاں گواہوں کو ثابت کرنا اس استعارہ کی تشریح کہلاتی ہے۔

شعر نمبر ۶: برائے حصولِ مراد

یہ شعر ان چھ شعروں میں پہلا ہے جن پر حضور ﷺ اس وقت جھومے تھے جب امام بوسیری آپ کو خواب میں یہ قصیدہ سنا رہے تھے۔

جب کوئی ضرورت ہو تو اس شعر کو تین مرتبہ پڑھے کیونکہ اس قصیدہ کی شرح کرنے والے حضرت جعفر پاشا نے یونہی لکھا ہے۔

الہی ہمیں فاسق اور خواہش کے پیچھے چلنے والوں میں شمار نہ فرما اور ہمیں ان میں شامل فرما لے جن کے دل تیرے چنے ہوئے نبی ﷺ کی محبت سے بھرے ہیں اور اسے ہر وقت ان کے عشق میں روتے رہنے کیلئے لگائے رکھ۔



شعر (۷)

وَأَثَبْتَ الْوَجْدُ خَطِيءَ عَابِرَةٍ وَضَنِّي
مِثْلَ الْبَهَارِ عَلَى خَدِّكَ وَالْعَنَمِ

(ترجمہ:)"جبکہ اس عشق نے تو تمہارے دونوں رخساروں پر آنسوؤں اور کمزوری و بیماری کے ایسے نشان بنا دیئے ہیں جو زرد گلاب اور لمبے عَنَمِ درخت جیسے ہیں۔"

جب ناظم رحمہ اللہ کے اس دعویٰ پر کہ تمہارے دل میں عشق و محبت موجود ہے سچے اور انصاف پسند دو گواہوں نے گواہی دے دی تو حاکم نے دارالحکومت میں فیصلہ سنا دیا کہ اس کا دعویٰ حق اور سچ ہے، پھر دارالحکومت کے منشی سے کہا کہ ان دونوں کا دعویٰ لکھ لو یعنی اسے دفتر میں جمع کر دو چنانچہ اس نے اسے دفتر میں جمع کر دیا جس کی بناء پر سمجھدار ناظم نے اپنے مخاطب (جسے فرض کیا ہے) سے کہا:

”وَأَثَبْتَ الْوَجْدُ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”أَثَبْتَ“ کا ”شَهِدْتَ“ پر عطف ہے یعنی تم اس محبت سے کیونکر انکار کر سکتے ہو جبکہ دو گواہوں نے شہادت دے دی ہے اور کاتب نے لکھ کر اپنا دعویٰ بھی ثابت کر دیا ہے؟

”إثبات“ کا معنی کسی شے کو ثابت اور مقرر کرنا ہوتا ہے، خواہ تحریر کے ساتھ ہو یا کچھ نہ لکھے لیکن یہاں مراد یہ ہے کہ اس نے اسے تحریر کیا ہے جیسے کلام کا انداز بتا رہا ہے۔

”وَجْدُ“ سے مراد دلی غم اور عشق کے حالات ہیں، یہ پیش والا اور ”أَثَبْتَ“ کا فاعل ہے، اس کا اس سے تعلق مجازی ہے کیونکہ یہ اس کا سبب ہے جیسے ”أَهْلَكَ الْمَرَضُ“ میں ہے۔ اس میں استعارہ مکنیہ ہے اور وہ یوں کہ ناظم نے ذہن میں عشق کے حالات اور دلی غموں کو دارالحکومت کے کاتب اور منشی کو جتانے، اطلاع دینے اور رجسٹر پر لکھنے کے ساتھ تشبیہ دی، پھر ذہن میں کاتب دارالحکومت یعنی نائب وغیرہ کیلئے بنے ہوئے لفظ کو حالات اور دلی غموں کے لئے استعارہ بنایا، پھر اس استعارے کو ذہن میں ایک طرف لگا دیا اور خارج میں مشبہ کا پتہ دینے والے لفظ بمعنی وجد کو ذکر کر کے اس سے وجد ہی کا معنی مراد لیا، یہ استعارہ مکنیہ ہوا، پھر ”إثبات“ جو کاتب کے لئے مناسب ہے، اسے وجد کے ساتھ جوڑا، یہ استعارہ تخیلیہ ہوا اور اسے تحریر پر واقع کرنا ترشح بنتی ہے۔

”خَطَّ“ سے مراد یا تو عربی خط ہے جس کا مطلوب ہجائی حرفوں (اب ت وغیرہ) کی شکل بنانا یا پھر نام ہی کا ہے جسے حکمی کہتے ہیں اور یہ صرف لمبائی میں ہوتا ہے اور یہ بھی کہتے ہیں کہ وہ چوڑائی اور گہرائی کی بجائے صرف لمبائی میں تقسیم ہو سکتا ہے۔ یہ تشبیہ کا لفظ ہے جس کا ”نون“ اضافت کی وجہ سے گرا ہے۔

”عَبْرَه“ (عین پر زبر) وہ پانی جو آنکھوں سے بہہ کر چہرہ پر آ جائے۔

”ضَنَى“ (ضاد پر زبر) کو مجرور مان لیا گیا ہے اور یہ ”عَبْرَه“ پر معطوف ہے اور یہ وہ دُبلاپن اور کمزوری ہے جسے عام طور پر عاشق کے چہرے کی زردی لازم ہوتی ہے اور یہاں اس سے مراد لازم (زردی) ہی ہے۔ لفظ ”خَطَّ“ کی ”عَبْرَه“ کی طرف اضافت ان اضافتوں میں سے ہے جن میں مشبہ کی اضافت مشبہ کی طرف ہوتی ہے جیسے ”لَجِينُ الْمَاءِ“ میں ہے یعنی کمزوری اور زردی کو غم نے لکیر کی طرح ثابت کر دیا ہے کیونکہ ناظم جب بہت عرصہ تک روتے رہے اور آنسوؤں کو خون ملا کر بہا لیا تو ان کے پاکیزہ چہرے پر الف جیسی دوبار یک لکیریں دکھائی دینے لگیں جن میں سے ایک سرخ تھی جو آنکھوں سے نکلنے والے پانی کا اثر اور دوسری زرد تھی جو ان کے دل کا غم بتاتی تھی۔

”مِثْل“ کے لام پر زبر ہے یا تو یہ حال ہے یا ”أَثْبَتَ“ کا دوسرا مفعول ہے جو اپنے اندر ”جَعَلَ“ کا معنی رکھتا ہے اور ممکن ہے کہ یہ ”خَطَّى“ کی صفت ہو۔

”بَهَار“ جو ”نَهَار“ کے وزن پر ہے اس سے مراد گلاب کا وہ زرد پھول ہے جو بہار کے ابتدائی موسم میں نکلتا ہے۔ یہاں رنگ کی تشبیہ صرف زردی میں ہے جسم اور صورت میں نہیں۔

”عَلَى خَدَّيْكَ“ مقدر کے ساتھ متعلق ہے اور ”خَطَّى“ سے حال ہے۔

”عَنَم“ (دونوں حرفوں پر زبر) اس سرخ درخت کا نام ہے جس کی شاخیں نرم ہوتی ہیں جو انگلیوں کے پوروں کی شکل میں ہوتی ہیں۔ کچھ کہتے ہیں کہ یہ مہندی کا درخت ہے اور کچھ کہتے ہیں کہ مچھ کا پودا ہے پہلے معنی کو اولیت اس شعر سے ملتی ہے:

النَّشْرُ مِسْكٌ وَالْوَجُوهُ دَنَا
نِيرٌ وَأَطْرَافُ الْأَكْفِ عَنَمٌ

”خوشبو کستوری ہے چہرے دینار ہیں اور ہتھیلیوں کے گوشت مہندی کا پودا ہیں۔“

خیر جو بھی مراد ہو صرف سرخ ہونے میں دونوں ہی ملتے جلتے ہیں۔

اس شعر میں علم بدیع کی صنعت ”لَفَّ نَشْرٌ مَعْكُوسٌ“ موجود ہے کیونکہ ناظم رحمہ اللہ نے پہلے

مصرعہ میں سرخی کے بعد زردی ذکر کی اور اس مصرعہ کو الٹا کر حال ذکر کیا اور اس کے نکتہ کو وزن اور نظم کیلئے استعمال کیا۔

شعر کا حاصل مطلب یہ ہے: تم محبت کا انکار کیسے کر سکتے ہو جبکہ محبت کی شہادت انصاف پسند دو گواہ دے رہے ہیں، تم ان دونوں کو بے کار کرنے کی ہمت نہیں رکھتے اور پھر قاضی تم پر حکم دے چکا جس کا حکم توڑا نہیں جاسکتا، تمہارے دونوں رخساروں کی کھال پر اس نے دوسرخ لکیروں کے ساتھ محبت کا شاہی فرمان لکھ دیا ہے چنانچہ جو بھی تمہیں دیکھتا ہے وہ تمہارے دونوں رخساروں سے محبت کی نشانی پڑھ لیتا ہے تو تمہارا انکار تمہارے لئے کسی بھی طرح فائدہ مند نہیں۔

اے وہ پروردگار جس کی عام بخشش نے مجھے شوق دلایا ہے، مجھے بخش دے اور میرا وہ کام مجھے معاف فرما دے جس نے تیری خوشی سے مجھے الگ کر دیا ہے اور مجھے جہنم کی آگ میں نہ جلا کیونکہ مجھے تیرے نبی (ﷺ) کے عشق ہی نے جلا دیا ہوا ہے۔



شعر (۸)

نَعْمَ سَوَى طَيْفٍ مِّنْ أَهْدَى فَا رَقَيْتِي
وَالْحُبُّ يَعْتَرِضُ اللَّذَّاتِ بِأَلَاكِمِ

(ترجمہ:) ”ہاں رات ہوئی تو مجھے اپنے محبوب کی یاد آگئی جس نے مجھے بیدار کر دیا کیونکہ محبت کا کام ہی یہ ہوتا ہے کہ مزے ختم کر کے غم اور بے چینی پیدا کر دیتی ہے۔“

جب عاشق نے اپنا یہ دعویٰ ثابت کر دیا کہ محبت کا بادشاہ تمہارے دل میں موجود ہے لیکن اس شخص نے انکار کر دیا جسے اس عاشق نے فرض کر رکھا ہے اور جس سے باتیں کر رہے ہیں اس نے وہ دعویٰ پھر ثابت کر دیا لیکن اس نے انکار کیا تو بات یہاں تک پہنچی کہ عاشق نے دو انصاف والے گواہ لا کر اپنا دعویٰ ثابت کر دیا، منشی نے اسے لکھ کر دفتر میں جمع کر دیا، اب مخاطب کے پاس انکار کی کوئی وجہ باقی نہ رہی، مجبور ہو کر اس نے دعویٰ سچا مانتے ہوئے اقرار کر لیا چنانچہ اس نے کہا: ”نَعْمَ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

لفظ ”نَعْمَ“ کے مقصد

”نَعْمَ“ کا حرف تصدیق کرنے کیلئے آتا ہے، جب کوئی ”قَامَ زَيْدٌ“ کہے تو یہ خبر دے دیتا ہے، جب کوئی ”أَقَامَ زَيْدٌ“ کہہ کر خبر کا پتہ لگانا چاہتا ہے تو اسے اس کے پوچھے کا جواب جتا دیتا ہے اور جب کوئی کسی کام کرنے کرانے روکنے کی بات کرتا ہے تو اس کے مطالبے کو پورا کرنے کا وعدہ کرتا ہے، یہاں دوسرا جواب مراد ہے۔

”بلی“ اور ”نعم“ میں فرق

”نَعْمَ“ اور ”بلی“ میں فرق یہ ہے کہ ”نَعْمَ“ حرف تصدیق ہے لیکن یہ خبر اور استفہام میں ایجاب اور نفی دونوں کی تصدیق واقع ہوتا ہے مگر ”بلی“ کا حرف صرف نفی کے ساتھ خاص ہے خواہ وہ خبر ہو یا استفہام، اور وہ اس بناء پر کہ یہ صرف منفی کی تصدیق بنتا ہے ایجاب کے طریقے پر اور تصدیق واس نہیں ہوتا چنانچہ اسی وجہ سے اگر کہنے والا ”بلی“ کہے تو ”أَلَسْتُ بِرَبِّكُمْ“ (سورۃ الاعراف آیت: ۱۷۲) کے جواب میں مومن ہوگا کیونکہ یہ ”بلی“ اَنْتَ رَبُّنَا“ کے قائم مقام ہوگا اور اگر کہنے والا اس میں ”نَعْمَ“ کہہ دے تو کافر ہو جائے گا کیونکہ یہ ”نَعْمَ لَسْتُ بِرَبِّنَا“ کے معنی میں ہے، کسی شاعر

نے اسے نظم میں لکھ دیا ہے:

”نفسی کے بعد تم ”نعم“ کہہ دو اور ایجاب کے بعد ایسا نہ کہو، یونہی ایجاب کے بعد ”نعم“ کہو، ”بلی“ نہ کہو۔“

”سوی“ کا جملہ استینافیہ ہے کیونکہ جب اس نے عشق کا اقرار کر لیا اور اپنا شوق یوں مان لیا کہ گویا کسی سائل نے کہا کہ ”کیف کان الحال“ (حال کیسا تھا) تو اس نے کہا: ”سری الخ“۔ ”سری“ کا لفظ ”سری“ سے لیا گیا ہے اور یہ صرف رات کی سیر کیلئے آتا ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے فرمان میں ہے: ”سُبْحَنَ الَّذِي أَسْرَى بِعَبْدِهِ لَيْلًا“ (سورۃ الاسراء آیت: ۱) (وہ ذات ہر عیب سے پاک ہے جس نے اپنے خاص بندے کو رات کے تھوڑے حصے میں سیر کرائی)۔

یہاں یوں نہ کہا جائے: ہم یہ بات نہیں مانتے کہ آیت میں ”اسری“ کا لفظ رات کو سیر کرانے کے معنی میں ہے ایسا کیوں ہوگا اس سیر کا رات میں ہونا تو ”لیلاً“ سے سمجھ آتا ہے ورنہ یہ معنی ”اسری“ ہی سے نکالنا پڑتا کیونکہ ہم کہتے ہیں مفسرین نے ذکر کیا ہے کہ ”اسری“ ہی کا معنی رات کو سیر کرنا ہے تاہم آیت میں اس کے بعد ”لیلاً“ کو ذکر کرنا اس بات کی طرف اشارہ ہے کہ یہ سیر رات کے کل حصے کی بجائے کچھ حصے میں تھی کیونکہ ”لیلاً“ کی تنوین تقلیل کیلئے ہے آگے اس کی وضاحت آ رہی ہے۔

”طیف“ کا معنی خیال ہے ”مَنْ“ اسم مفعول ہے جس سے مراد محبوب ہے جسے شان کے بلند ہونے کی وجہ سے چھپایا گیا ہے۔

”اھوی“ متکلم کا صیغہ ہے ”ھوی ھوی“ سے اور اس میں مفعول کی وہ ضمیر جو موصول کی طرف لوٹتی ہے محذوف ہے مطلب یہ ہے کہ جب میرے پاس محبوب اور محبت کا خیال آیا تو اس نے مجھے جگا دیا۔

اس میں خطاب سے متکلم کی طرف التفات ہے لیکن مطلع میں اس کا الٹ ہے۔

”أرق“، ”تأریق“ سے ہے اور اس کا معنی نیند سے بیدار کرنا اور جگانا ہے ”نون“ اس میں وقایہ کا ہے اور نیند سے جگانا یا تو واقعی تھا (کہ آپ جاگ اٹھے تھے) کیونکہ جب عاشق کا دل محبوب کے خیال اور شوق سے بھر جاتا ہے تو آنکھوں سے نیند کو چھین لیا جاتا ہے اور وہ ان دونوں سے کبھی پردے میں نہیں جاتا چنانچہ وہ ہر حال میں بیدار ہی رہتا ہے یا پھر ”جگانا“ مجاز ہے کہ وہ دنیا اور اس کے

حالات سے غافل نہیں رہتا چنانچہ شعر کے ماحول میں یہی معنی مناسب لگتا ہے جیسے تم بھی دیکھ رہے ہو۔

”وَالْحُبُّ“ میں حرفِ واو یا تو حالیہ ہے یا استینافیہ ہے، گویا کہا گیا: کیا تم عشق کے دوران مزے لینے میں لگ گئے تھے تو اس نے کہا کہ ”محبت مزوں کو ختم کر کے غم پیدا کر دیتی ہے“۔ فقیر (علامہ خرپوتی رحمہ اللہ) کہتا ہے: ہو سکتا ہے کہ یہ ”واو“ عاطفہ ہو اور اس میں علت (سبب) کا عطف معلول (یعنی جس کی یہ علت اور سبب ہے) پر ہو کیونکہ یہ حُب اپنے ماقبل (جاگنے) کی علت اور سبب ہے تو گویا سمجھدار ناظم نے کہا: ”کیونکہ محبت لذتیں ختم کر دیتی ہے“ یہاں قیاس (علمِ منطق کا لفظ ہے) ترتیب دیا جاسکتا ہے جو یوں ہوگا: ”محبت نیند کو چھین لیتی ہے اور دور کر دیتی ہے کیونکہ محبت مزے ختم کر کے غم پیدا کر دیتی ہے (پہلا قضیہ ہوگا) اور جو بھی چیز ایسی ہو تو وہ نیند چھین لیا کرتی اور دور کر دیتی ہے (یہ قیاس کا دوسرا قضیہ ہے) اس کا نتیجہ یہ ہوگا کہ محبت نیند کو چھین لیتی اور دور کر دیتی ہے۔

”يَعْتَرِضُ“ کا لفظ اس محاورے سے لیا گیا ہے: ”اِعْتَرَضَ لَهُ بِسَهْمٍ اَقْبَلَ بِهِ قِبَلَهُ فَرَمَاهُ فَقَتَلَهُ“ (وہ تیر لے کر اس کے سامنے سے آگے آیا اور تیر مار کر اسے قتل کر دیا) چنانچہ ”يَعْتَرِضُ“ کا معنی ”يَقْتُلُ“ ہوا، یہاں اس کا حُب سے تعلق مجاز اور استعارہ تَبْعِيَّةً بنتا ہے کیونکہ ناظم نے قتل کو اعتراض کے ساتھ تشبیہ دی کہ دونوں ہی میں زور دار اثر تبدیل کرنے کا معنی ہے کیونکہ جیسے قتل کے ذریعے شکل تبدیل ہو جاتی ہے، اعتراض میں بھی کچھ ہوتا ہے، پھر استعارے کے طور پر اعتراض کو مفہوم قتل کے لئے لیا گیا، چنانچہ اعتراض کو ذکر کر کے قتل مراد لیا گیا اور پھر اسی استعارے کو دیکھتے ہوئے اعتراض کے لفظ سے ”يَعْتَرِضُ“ کا صیغہ نکالا گیا جبکہ قتل سے ”يَقْتُلُ“ کا نکالا گیا اور پھر ”يَقْتُلُ“ کی شکل کو دونوں کی مصدروں کے تعلق کی وجہ سے ”يَعْتَرِضُ“ کی ہیئت و شکل سے تشبیہ دی گئی اور پھر ”يَعْتَرِضُ“ کا ذکر کر کے ”يَقْتُلُ“ مراد لیا گیا البتہ علامہ سکا کی کے مذہب پر ”الْحُبُّ“ میں استعارہ مکنیہ بنتا ہے جسے ہر ایک جانتا ہے۔

”اللذات“ کا لفظ ”لذة“ کی جمع ہے اس پر زبر ہے اور یہ ”يعترض“ کا مفعول ہے اور ”بالآلم“، ”يعترض“ سے متعلق ہے ”آلم“ کا لفظ اور معنی ”كدر“ کی طرح ہے لیکن یہاں یہ مجاز کے طور پر استعمال ہوا ہے اور ”سہم“ سے مستعار ہے کیونکہ ”آلم“ کو ”سہم“ کے ساتھ اس

بناء پر تشبیہ دی گئی ہے کہ یہ ہلاک کرنے والا ہے اور یہ بھی ممکن ہے اس مصرعہ میں استعارہ تمثیلیہ ہو اور وہ یوں کہ اس ہیئت کو جو امور معقولہ (حب کا قاتل ہونا، اس سے پیدا ہونے والے ألم اور غم کا ہلاک کرنے والا ہونا، لذات کا اس کی وجہ سے ختم ہونا اور حب کا ألم کو لذات کی طرف پھیرنا) سے لی گئی ہے، اس ہیئت کے ساتھ تشبیہ دی جائے جو محسوس امور (شخص کا پھینکنے والا ہونا، ”سہم“ کا پھینکا گیا ہونا، دوسرے شخص یا حیوان کا ایسا ہونا جس کی طرف پھینکا گیا اور ”سہم“ کا ہلاک کرنے والا ہونا) سے نکالی گئی ہے، پھر محسوس امور سے نکلنے والی ہیئت کو امور معقولہ سے لی جانے والی ہیئت کے مفہوم کیلئے استعارہ کیا گیا اور پھر امور محسوسہ سے نکلنے والی ہیئت کو ذکر کر کے اس سے وہ ہیئت مراد لی گئی جو معقول امور سے نکلی ہے۔ اسے خوب ذہن نشین کر لو۔

معنی کا حاصل یہ ہے کہ عشق و محبت سامنے آجاتے ہیں اور ”آلم“ کی وجہ سے لذتوں کو ختم کر دیتے ہیں، بالکل اسی شخص کی طرح جو تیر پھینکتا اور اسے قتل کر دیتا ہے جس کی طرف اس نے تیر پھینکا تھا کیونکہ حقیقی عشق جب کسی کے دل میں داخل ہو جاتا ہے تو اسے دنیا کی لذتوں اور نعمتوں سے روک دیتا ہے چنانچہ اسے کسی شے کا ذوق و شوق نہیں رہتا کیونکہ دنیا اور آخرت دو ایسی ضدیں ہیں جو کسی شخص میں اکٹھی نہیں ہوتیں جیسے بتایا گیا ہے کہ:

ہارون رشید کو حضرت بہلول نے کیا سمجھایا؟

ہارون رشید نے ایک دن اپنے اندر جھانکا اور دل ہی دل میں کہا کہ میں آخرت کو دیکھنے کے باوجود دنیا کا مال جمع کر رہا ہوں اور دونوں کو چھوڑتا نہیں ہوں۔ اللہ کے ولی حضرت بہلول رحمہ اللہ نے اپنے دل کی آنکھوں سے ہارون کے دل کی بات پہچان لی اور اس کے گھر جا پہنچے اس کے گھر کے سامنے ایک بڑا ستون تھا جو کئی سالوں سے ویران پڑا تھا، وہ اتنا وزنی تھا کہ اگر شہر بھر کے لوگ جمع ہو کر اسے اٹھانے کی کوشش کریں تو اٹھانہ سکیں بلکہ اسے ہلا بھی نہ سکیں۔ حضرت بہلول نے اسے ایک طرف سے اٹھا کر چھوڑ دیا اور دوسری طرف آ کر اسے بھی اٹھا کر چھوڑ دیا، پھر درمیان میں آ کر اٹھانے کی کوشش کی لیکن اٹھانہ سکے۔ ہارون یہ سب کچھ اپنی آنکھوں سے دیکھ رہا تھا۔ اسی دوران ہارون نے انہیں بلایا تو وہ آگئے۔ ہارون رشید نے ان سے پوچھا کہ اے بہلول! آپ نے یہ سب کچھ کیوں کیا؟ آپ نے فرمایا: میں بادشاہ کو ایک بات سمجھانا چاہتا تھا چنانچہ میں نے دنیا کو جمع کرنے کا ارادہ کیا تو کامیاب بھی ہو گیا مگر اس کے ساتھ آخرت نہ تھی جس کی وجہ سے میں نے دنیا کو چھوڑ کر

آخرت کا ارادہ کیا اور اسے لینے میں کامیاب بھی ہو گیا لیکن آخرت چھوٹ گئی، پھر میں درمیان میں آیا اور دنیا و آخرت جمع کرنے کی کوشش کی لیکن دونوں ہی حاصل نہ ہو سکیں۔ اس سے میں سمجھا کہ تمہارا دنیا و آخرت کو اکٹھا کرنے کے بارے میں سوچنا غلط ہے۔

شعر نمبر ۸: عورت کے دل کا راز لینے اور چور پکڑنے کیلئے

اس شعر میں یہ خاصیت ہے کہ اگر تمہیں بیوی کے چال چلن پر شبہ ہو تو یہ شعر لیموں کے چھلکے پر لکھ کر نیند کے دوران اس کے بائیں پستان پر رکھ دو وہ کئے ہوئے اچھے بُرے سب کام بتا دے گی۔ یہ بات تجربہ شدہ ہے اور صحیح ہے۔

یونہی اگر کسی پر یہ شک ہو کہ اس نے مالک کی کوئی چیز چُرالی ہے تو اس شعر کو مینڈک کی رنگی ہوئی کھال پر لکھ کر اپنی گردن پر لٹکا لو چور گھبرا جائے گا اور انشاء اللہ فوراً چوری مان لے گا۔



شعر (۹)

يَا لَائِي فِي الْهَوَى الْعُذْرِي مَعْدِرَةً
مِّنِّي إِلَيْكَ وَلَوْ أَنْصَفْتَ لَمْ تَلْمِ

(ترجمہ:) ”اے قبیلہ بنو عذرہ جیسی زبردست محبت رکھنے پر مجھے برا بھلا کہنے والے! میں اس میں مجبور ہوں لہذا بہتر تو یہی تھا کہ تم مجھے برا بھلا کہنے سے رُک جاتے۔“

جب وہ پہلا مخاطب اپنی محبت ماننے سے انکار کر رہا تھا تو ان دونوں کے درمیان ”لَا“ (خطاب کا) اور ضمیر کے ذریعے ہمکلامی ہوتی ہے، پھر جب مخاطب اس دعویٰ (محبت) کو مان لیتا ہے تو متکلم اس سے ذرا دور ہو جاتا ہے کیونکہ جب مخالف اپنے انکار والے اسی دعوے کو مان لیتا ہے جسے نہیں مانا تھا تو پھر اس کا پیچھا چھوڑ کر اسے اسی دوران موقع دیا جاتا ہے اور مخالف کو کچھ دیر کیلئے دور کر دیا جاتا ہے چنانچہ ناظم خطاب اور ضمیر خطاب کی طرف حرفِ نداء کے ذریعے مُڑتے ہیں اور فرماتے ہیں: ”يَا لَائِي“ کیونکہ نداء کا صیغہ کسی چیز کا دور ہونا بتاتا ہے اور یہ بھی ہو سکتا ہے کہ ناظم کا نداء کے صیغہ کی بناء پر خطاب کی طرف پھرنا اس لئے ہو کہ جسے نداء دی جا رہی ہے اسے ادا کرنے کی طرف موڑ دے۔ یہ بات حضرت سعدی چلپی نے اس آیت کی تفسیر میں ذکر کی ہے: ”يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الصِّيَامُ“ (سورۃ البقرہ آیت: ۱۸۳) اور یہاں نداء دی جانے والی چیز محبت و خواہش کی مجبوری بتانا اور یہ اُمید رکھنا ہے کہ اُس کے اس گناہ کی مجبوری کو مان لیا جائے۔

تحقیق الفاظ

”الْلَائِي“ اسم فاعل کا صیغہ ”لَوْمٌ“ سے نکلا ہے جیسے یہ لفظ اللہ تعالیٰ کے اس فرمان میں آیا ہے: ”وَلَا يَخَافُونَ لَوْمَةَ لَائِمٍ“ (سورۃ المائدہ آیت: ۵۴) اور یہ متکلم کی ضمیر کا مضاف بن رہا ہے۔ معنی یہ بنتا ہے کہ اے مجھے اپنی ملامت اور ڈانٹ ڈپٹ کا نشانہ بنانے والے!

”فِي الْهَوَى“ اس ملامت کی ظرف ہے جس کی وجہ یہ ہے کہ محبت اس ملامت کا سبب ہے کیونکہ جو محبت میں گرفتار ہو جاتا ہے اسے ہر دن رات ملامت ہوا کرتی ہے کیونکہ محبت کرنے والا ہر حال میں آہیں بھرتا رہتا ہے اور پورے وقت میں زبردست روتا ہے اور یوں وہ پورے طور پر ملامت اور ذلت میں پڑ جاتا ہے اسی لئے کہا جاتا ہے:

نُونُ الْهَوَانِ مِنَ الْهَوَى مَسْرُوقَةٌ فَصَرِيْعُ كُلِّ هَوَى صَرِيْعُ هَوَانٍ
 ”لفظ ”هَوَان“ کا نون ”هَوَى“ (ذلیل ہونا) سے چرایا گیا ہے چنانچہ محبت کا ہر پچھاڑا
 ہوا ”هَوَان“ (ذلت) کا پچھاڑا ہوتا ہے (ذلیل ہوتا ہے)۔“

قبیلہ بنو عذرہ کی عظمت

”الْعُدْرِي“ (یاء پرزیر) ”هَوَى“ کی صفت ہے عین پر پیش ہے اور یہ محبت قبیلہ بنو عذرہ سے تعلق رکھتی ہے۔ یہ یمن کا ایسا قبیلہ تھا جن کا عشق مشہور تھا ان کا حد درجہ کا شوق جانا پہچانا تھا ان کے زیادہ تر نوجوان عشق کی بیماری ہی میں مر جاتے تھے کیونکہ انہیں اس بیماری کی دواء نہیں ملتی تھی ان کے مردوں میں کمزوری تھی یعنی ان میں کھوٹ اور کمینگی نہیں تھی اور ان کی عورتیں پاک دامن تھیں یعنی ان میں بے غیرتی اور بُرائی نہیں تھی۔

شعر کا مطلب یہ ہے کہ اے مجھے اُس محبت میں گرفتار ہونے پر بُرا بھلا کہنے والے! جو قبیلہ بنو عذرہ میں تھی وہ زبردست محبت والے اور ہمیشہ کے عاشق تھے یا یہ معنی ہیں کہ مجھے اس محبت پر بُرا بھلا کہنے والے جو مجھے گھیرا ڈالے ہوئے ہے اور ایسی ہے کہ اس میں گرفتار کا عذر اور مجبوری ہر ایک مان لیا کرتا ہے کیونکہ وہ محبت گھیر کر مجبور کر دیتی ہے چنانچہ اس میں گرفتار ہونے والے کو بڑا چھوٹا کوئی بھی بُرا بھلا نہیں کہتا۔

یہ بھی ممکن ہے کہ اس کا ہلکا پھلکا قیاس ترتیب دے لیا جائے جو (منطق کی) شکلِ اوّل کے مطابق ہو چنانچہ یوں کہا جائے کہ میری محبت مانی ہوئی ہے کیونکہ یہ عُدْرِي (قبیلہ بنو عذرہ جیسی) ہے (قضیہ صغریٰ) اور ہر عُدْرِي محبت مانی ہوئی ہوتی ہے (قضیہ کبریٰ) نتیجہ یہ ہوگا کہ میری محبت مانی ہوئی ہے۔

امام اصمعی رحمہ اللہ کی دلچسپ حکایت

کہتے ہیں کہ امام اصمعی نے سوچا کہ عربوں کے کسی قبیلے کے پاس جائیں جو عقلمندوں کے ہاں فصاحت و بلاغت میں مشہور ہو اور ان کے ہاں سے فصاحت سیکھیں تاکہ ان کی زبان کی بندش دور ہو سکے۔ انہوں نے قبیلوں کی طرف نظر دوڑائی تو انہیں سن کر معلوم ہوا کہ عرب دنیا کے اندر قبیلہ بنو عذرہ کی فصاحت ہر طرف مانی ہوئی ہے چنانچہ وہ یمن میں اس قبیلے کے پاس پہنچے جن میں سے ایک نے انہیں مہمان بنا لیا، گھر والے کی ایک بیٹی تھی جس کا قد خوبصورت، رخسار نرم و نازک تھے وضاحت سے

بات کرتی تھی اور گفتگو دلچسپ تھی۔ امام اصمعی کو اس سے محبت ہو گئی کیونکہ اس کے مہمان تھے اور یہ مشہور ہے کہ کسی سے تعلق ہو جانا اس کی طرف کھینچ لیتا ہے۔ اصمعی بتاتے ہیں کہ میں مہمان نواز کے گھر سے نکل پڑا تا کہ چل پھر کر اس قبیلہ کے حالات دیکھوں۔ اسی دوران میں نے ایک نوجوان کو دیکھا جو پہلی رات کے چاند کی طرح خوبصورت تھا، تنکے جیسا دبلا پتلا تھا، عشق کی وجہ سے اس کا رنگ عنم درخت جیسا زرد تھا، محبت اس کے چہرے سے ایسی صاف دکھائی دے رہی تھی جیسے کسی بلند پہاڑ پر سورج چمک رہا ہو اور اس کے دل میں یوں گھبراہٹ تھی کہ جیسے آخرت کے سفر پر تیار ہے۔

میں نے اس کا حال اور جسم کی اس بُری حالت کے بارے میں پوچھا تو کسی نے کانپتے ہوئے بے چینی میں کہا کہ وہ پیاری لڑکی جس کے گھر میں تم مہمان بن کر ٹھہرے ہو اسی شخص کی چچا زاد ہے جو اس حالت میں نظر آ رہا ہے اور چونکہ اس کے دل میں اس کی محبت ہے تو اسی کی بناء پر اس کے دل میں شعلے بھڑک رہے ہیں اور اس نے کئی سالوں سے اسے دیکھا نہیں چنانچہ یہ اس کی جدائی میں آہیں بھرتا اور سسکیاں لیتا ہے۔

امام اصمعی رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ میں اس کی دلجوئی کیلئے اس شخص کی چچا زادی کے پاس پہنچا کہ اس کا مقصد پورا ہو سکے۔ وہ ٹال مٹول سے کام لیتی رہی۔ میں نے کہا: اے ٹوٹے دلوں کے زخموں کی مرہم! میں دیکھ رہا ہوں کہ تمہارے اندر ہر غریب کیلئے عزت و احترام موجود ہے چنانچہ میں تمہارے پاس اس نوجوان کے معاملے میں سفارش کرنے آیا ہوں، تم اس پر مہربانی کرتے ہوئے اس کے دل پر مرہم رکھ دو۔

وہ کہنے لگی کہ اس کی تندرستی اور کامیابی ہماری جدائی ہی ہے اور اس کا بچاؤ ہمارے شوق کی چنگاریوں سے جل جانے میں ہے۔

آخر کچھ پس و پیش کے بعد اس نے میرے ارادہ کو کامیاب کرنے کی بات مان لی چنانچہ میں اس جوان کے پاس گیا اور کہا کہ اپنی محبوبہ سے ملنے کی تیاری کر لو اور اپنا مطلب حاصل کرنے کیلئے توجہ کر لو (یا سر جھکا لو) اسی دوران محبوب کی طرف سے گرد اڑتی دکھائی دی جس پر وہ غش کھا کر گر گیا اور اپنے سامنے دکھتی آگ میں جا پڑا جس پر اس کے جسم کے کچھ حصے جل گئے۔

میں اس کی محبوبہ کے پاس گیا اور اسے اس کا حال بتایا، جس پر اس نے کہا: اے صاف دل والے! وہ تو ہماری جوتیوں کے غبار دیکھنے کی ہمت نہیں رکھتا، ہمارے حسن کے جلووں کو دیکھنے کی کیا

ہمت رکھے گا؟

حضرت شیخ زادہ (شارح قصیدہ) نے یونہی لکھا ہے لیکن بعینہ میری عبارت نہیں لکھی۔
حضرت شبراخیتی (قصیدہ کے ایک اور شارح) رحمہ اللہ نے بتایا ہے کہ حضرت اصمعی نے اس
قبیلہ میں گھومنے کے دوران ایک پتھر دیکھا تھا جس پر یہ شعر لکھا تھا:

أَيَّامَ عَشْرِ الْعُشَّاقِ بِاللَّهِ أَخْبِرُوا
إِذَا اشْتَدَّ عِشْقُ بِالْفَتَى كَيْفَ يَصْنَعُ

”اے اللہ سے عشق رکھنے والے بندو! مجھے بتاؤ تو سہی کہ اگر کسی نوجوان کا عشق بھڑک
اُٹھے تو وہ کیا کرے؟“

اس پر حضرت علامہ اصمعی رحمہ اللہ نے پتھر پر اس شعر کے نیچے یہ شعر لکھ دیا:

يُدَارِي هَوَاهُ ثُمَّ يَكْتُمُ سِرَّهُ
وَيَصْبِرُ فِي كُلِّ الْأُمُورِ وَيَخْشَعُ

”آدمی اپنے دل پر قابو رکھے اور دل کی باتوں کو چھپائے رکھے پھر ہر کام میں صبر کرے
اور ڈرتا رہے۔“

اصمعی وہاں دوبارہ آئے تو انہوں نے دیکھا کہ ان کے شعر کے نیچے یہ شعر لکھا ہوا تھا:

فَكَيْفَ يُدَارِي وَالْهَوَى قَاتِلُ الْفَتَى
وَفِي كُلِّ يَوْمٍ رُوحَهُ يَتَقَطَّعُ

”ذرا یہ تو بتا دو کہ محبت جب اس جوان کو قتل کر رہی ہو تو وہ دل پر کیسے قابو رکھے ہر دن میں
تو اس کی روح ٹکڑے ٹکڑے ہو جاتی ہے“ (نکلتی رہتی ہے)۔

یہ دیکھ کر امام اصمعی رحمہ اللہ نے اس شعر کے نیچے یہ شعر لکھ دیا:

إِذَا لَمْ يُطِقْ صَبْرًا وَكَيْتَمًا لِسِرِّهِ
فَلَيْسَ لَهُ شَيْءٌ سِوَى الْمَوْتِ أَنْفَعُ

”ایسا شخص جب صبر نہیں کر سکتا اور اپنا راز چھپا نہیں سکتا تو پھر مر جانے سے بہتر اس کیلئے
اور کوئی شے نہیں۔“

حضرت اصمعی رحمہ اللہ تیسرے دن وہاں پہنچے تو دیکھا کہ وہ پتھر پر سر رکھے مر چکا ہے اور پتھر پر

یہ شعر لکھ رکھا ہے:

سَمِعْنَا أَطْعَنَانًا مُمْتَنًا فَبَلَّغُوا

سَلَامِي إِلَى مَنْ كَانَ لِلْوَصْلِ يَمْنَعُ

”ہم نے آپ کی بات سن کر مان لی اور مرچکے ہیں اب ہماری طرف سے اس شخص کو سلام کہہ دو جو وصال (محبت کرنے) سے روکتا ہے۔“

حضرت قرہ باغی نے بھی اپنی ”محاضرات“ میں اس حکایت کو ذکر کیا ہے۔

”مَعْدِرَةٌ“، ”عُذْرٌ“ کی مصدر ہے جس پر زبر ہے کیونکہ اس کا فعل مُقَدَّرٌ ہے یعنی ”أَقْبَلُ“

(خطاب کا صیغہ یعنی میرا عذر مان لے) یا ”إِعْذِرْ“ (مجھے مجبور سمجھ لے) اور ”مِنِّي“ اس کا متعلق ہے ”إِلَى“، ”مَعْدِرَةٌ“ کا صِلَةٌ (علم نحو کا لفظ) ہے۔

حضرت شیخ زادہ رحمہ اللہ فرماتے ہیں: ہو سکتا ہے کہ ”مَعْدِرَةٌ“ اس مقدر فعل کا مفعول ہو ”إِلَيْكَ“ اسم فعل ہے یعنی اے مجھ سے معذرت کی خواہش کی خاطر مجھے بُرا بھلا کہنے والے دُور ہو جا کیونکہ تُو ظالم ہے۔

حضرت ناظم کے قول ”وَلَوْ أَنْصَفْتَ“ میں واو ابتدائیہ یا حالیہ ہے اور ”لَوْ“ کا حرف یہ بتاتا ہے کہ اگر پہلی چیز نہیں ہو سکی تو دوسری بھی نہ ہو سکے گی جیسے ”لَوْ جِئْتَنِي لَا كَرَمْتِكَ“ (تم آ جاتے تو میں ضرور تمہاری عزت کرتا) ”أَنْصَفُ“ کا معنی عدل کرنا ہوتا ہے یعنی اگر تم انصاف کرتے تو مجھے بُرا بھلا نہ کہتے اور ایسے شخص کو مجبور جانتے جو بُری بُری مصیبتوں میں جکڑا ہوا ہے۔

”وَلَمْ تَلْمِ“ فعل جحد مطلق ہے ”مَلَامَةٌ“ سے اور ”يَاءٍ مُتَكَلِّمٍ“ اس کا مفعول ہے، یعنی ”مجھ کو ملامت کرنے سے رُک جاتے۔“

یہاں قیاس استثنائی بنتا ہے اور وہ یوں کہ: ”تُو نے انصاف نہیں کیا (پہلا قضیہ)“ اگر انصاف کرتے تو مجھے بُرا بھلا نہ کہتے (دوسرا قضیہ) لیکن دوسرا قضیہ باطل ہے کیونکہ تُو نے مجھے بُرا بھلا کہہ دیا ہے جیسے ناظم کے قول ”يَا لَانِمِي“ سے سمجھ آ رہا ہے تو پہلا قضیہ بھی باطل ہو گیا اور چونکہ تم نے مجھے ملامت کی ہے تو پہلا قضیہ بھی باطل ہوا جس سے پتہ چلا کہ تم نے انصاف نہیں کیا۔

شعر (۱۰)

عَدَّتْكَ حَالِي لَا سِيرِي بِمُسْتَتِرٍ
عَنِ الْوُشَاةِ وَلَا دَائِي بِمُنْحَسِمٍ

(ترجمہ:) ”میرا یہ حال تم سے گزر کر اوروں تک جا چکا ہے اب میرا یہ راز بُرائی کرنے والے منافقوں سے چھپ نہ سکے گا اور نہ ہی میری یہ بیماری (محبت) ختم ہو سکے گی۔“
جب عاشق کو بُرا بھلا کہنے والے سے اُمید ہو چلی تھی کہ اس کی مجبوری مان لی جائے گی اور وہ اسے بُرا بھلا کہنے سے اس بناء پر باز آ جائے گا کہ اس کا عشق کرنا اس کے بس کی بات نہیں بلکہ وہ اس کیلئے مجبور ہو چکا ہے لیکن بُرا بھلا کہنے والے نے اس کی بات نہیں مانی بلکہ بُرا بھلا کہتا ہی چلا گیا چنانچہ عاشق نے یہ کہہ کر اس کا مقابلہ کیا کہ ”عَدَّتْكَ حَالِي الْخ“۔
کھتیق الفاظ

”عَدَى“ کا لفظ اگر ”الِی“ کے ذریعے متعدی ہو تو اس کا معنی ”اس نے سیر کی“ ہوتا ہے ”عَلَى“ کے ساتھ متعدی ہو تو اس کا معنی ”ظلم“ ”اس نے ظلم کیا“ ہوتا ہے ”عَنْ“ کے ساتھ متعدی ہو تو دور ہونے اور آگے نکل جانے کا ہوتا ہے تاہم یہاں یا تو ”الِی“ کے ساتھ متعدی ہے یعنی یوں ہوگا کہ ”عَدَّتْ اِلَيْكَ“ اس صورت میں یہ ان لفظوں میں شامل ہوگا جن کا متعلق حذف ہوتا ہے اور اسے آگے ملا دیا گیا ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے اس فرمان میں ہے: ”وَاخْتَارَ مُوسَىٰ قَوْمَهُ“۔

(سورة الاعراف آیت: ۱۵۵)

اس صورت میں ”عَدَّتْ“ کا جملہ یا تو ملامت کرنے والے کے خلاف دعاء ہے یا پھر اس کے حق میں دعاء ہے رہا یہ کہ ملامت کرنے والے کے خلاف دعاء کیونکر بنتی ہے تو وہ اس طرح کہ وہ بظاہر چونکہ اس کو بُرا بھلا کہتا رہا ہے چنانچہ ایسی صورت میں اس کے اندر حضور ﷺ کے اس فرمان کی طرف اشارہ ہوگا: ”جو اپنے کسی بھائی کو گناہ کر لینے کی وجہ سے شرمندگی دلائے تو وہ ایسا کام کئے بغیر مرے گا نہیں“ (مشکوٰۃ المصابیح، رقم الحدیث: ۴۸۵۵)۔ اور دعاء یوں بنتی ہے کہ حقیقت وہ اسے یا تو بھلائی کی ہدایت کر رہا ہے یا حضور ﷺ کے اس فرمان پر عمل کر رہا ہے کہ: ”جو تم سے تعلق ٹوڑے تم اس سے تعلق بنایا کرو جو تم پر ظلم کرنے تم معاف کر دیا کرو اور جو تم سے بُرا سلوک کرے تم اس کے ساتھ اچھا سلوک کیا

کرو“ (جامع الاصول رقم الحدیث: ۹۳۱۸)۔

یا یہ لفظ ”عَدَاي“، ”عَنْ“ کے ذریعے متعدی ہوتا ہے یعنی ”عَدَتْ عَنْكَ“ (میرا حال تمہاری پہنچ سے دور ہے) یہ جملہ بھی اس کے خلاف دعاء ہے کہ وہ عاشقوں کے مرتبہ تک پہنچنے سے محروم رہ جائے اور یوں اس کا معنی ہوگا: ”میرا حال تجھ سے گزر چکا ہے اور تمہارے بس میں نہیں رہا“۔ یا پھر یہ اس کے حق میں دعاء ہے اور وہ یوں کہ: میں اللہ سے دعاء کرتا ہوں کہ میرا حال تم سے آگے گزر جائے جو میرے دل کی کمزوری آنکھوں کا رونا اور تمہارا مجھ کو بُرا بھلا کہے جانے کی صورت میں ہے اور ہر صورت میں ”عَدَتْ“ کا جملہ خبریہ بنتا ہے جو مجازی طور پر انشاء کے معنی میں ہے یا یہ استعارہ بنتا ہے اور وہ یوں کہ جملہ انشائیہ کی وہ نسبت جو ”لِیَعُدَّ“ (جملہ انشائیہ کیلئے ”عَدَتْ“ سے بنایا گیا) میں ہے اسے نسبتِ اخباریہ سے تشبیہ دی جائے اور نسبتِ انشائیہ مراد لی جائے اور اسی استعارہ کو دیکھتے ہوئے نسبتِ اخباریہ کیلئے بنائے گئے صیغہ ”عَدَتْ حَالِي“ (یعنی ”لِیَعُدَّ حَالِي“) میں استعمال کیا گیا اور قرآن و حدیث میں اس کی مثالیں بہت ہیں جسے ہر عالم اہل بیان جانتا ہے۔

انشاء کے معنی میں مجازاً لانے کا نکتہ یا تو تَفَاوُل (نیک شگون لینا) ہے کہ اس نے دعاء کی تو گویا قبول کر لی گئی یا یہ چیز ظاہر کرنا مقصد ہوتا ہے کہ اسے اس کام کو واقع کرنے کی بہت زیادہ حرص اور دلچسپی ہوتی ہے گویا کہ اس نے اس کی بڑی حرص کی وجہ سے اس کام کے ہو جانے کا خیال کیا اور اسے ماضی کے صیغہ کو استعمال کر کے بیان کیا۔

”حَالِي“ کا لفظ صرف اس بناء پر پیش والا ہے کہ یہ ”عَدَتْ“ کا فاعل ہے اور ”حال“ کا لفظ مؤنث سماعی ہے اور کبھی مذکر بھی آجاتا ہے۔

لفظِ حال کی وضاحت

حال کا لفظ لغت میں ماضی کی انتہاء اور مستقبل کی ابتداء ہوتا ہے جبکہ نحو یوں کی اصطلاح میں اسے کہتے ہیں جو فاعل یا مفعول بہ کی لفظوں میں حالت بتائے جیسے ”ضَرَبْتُ زَيْدًا قَائِمًا“ (میں نے زید کو کھڑا ہو کر مارا) یا معنی کے لحاظ سے بتائے جیسے ”زَيْدٌ فِي الدَّارِ قَائِمًا“ (زید کھڑا ہوا گھر میں ہے) اور حکماء کے ہاں نفس میں ایک حالت کا نام ہے جو اس میں رچی نہیں ہوتی کیونکہ انہوں نے نفسانی حالتوں کی دو قسمیں بنا رکھی ہیں، اگر یہ طبیعت میں رچی ہوئی ہے تو یہ ”مَلَكَةٌ“ ہے اور اگر رچی نہ ہو تو اسے حال کہتے ہیں چنانچہ اس لحاظ سے حال اسے کہتے ہیں جو معدوم نہ ہو نہ موجود ہو اور

نہ ہمیشہ کا ہو جیسے غم اور خوشی جو دائمی نہیں ہوتے جبکہ اہل حق اور اہل تصوف کے نزدیک یہ حال ایک ایسا معنی و خیال ہوتا ہے جو دل پر اترے اس میں بناوٹ نہ ہو، کوشش کا دخل نہ ہو، نہ اسے خوشی، غم، فیض، بسط، ہیبت اور ڈر سے حاصل کرے اور نفس کی خوبیاں نظر آنے پر ختم ہو جائے خواہ اس کے بعد اس جیسا آسکے یا نہ آئے اور جب یہ معنی اور خیال ہر وقت رہے اور ”مَلْگَہ“ بن جائے تو اسے ”مقام“ کہتے ہیں۔ اس سے معلوم ہوا کہ احوال عطا ہوتے ہیں اور مقامات محنت سے حاصل کرنے ہوئے ہیں اور پھر احوال ایک طرح کی سخاوت ہوتے ہیں جبکہ مقامات کیلئے کوشش کرنا پڑتی ہے۔

یہاں اس حال سے مراد تصوف والا حال ہے تو معنی یہ ہوگا کہ میرے دل میں موجود حقیقی محبت تھی، وہ تمہاری طرف چلی گئی کیونکہ تم نے اگرچہ مجھے بظاہر بُرا بھلا کہا ہے لیکن حقیقت میں نہیں کہا یا یہ کہ اللہ تعالیٰ تمہاری وہی آزمائش کرے جو مجھ سے ہو چکی ہے۔

پھر سوال کرنے والے نے گویا یہ پوچھا کہ تمہارا حال کیا ہے تو ناظم نے جواب دیا کہ ”لَا سِرِّی الخ“ یوں ”لَا سِرِّی بِمُسْتَبْرٍ“ جملہ استینافیہ معانیہ ہو جائے گا۔

”لَا“ کا حرف ”لَیْسَ“ جیسا ہے اور ”سِرِّی“ میں ”سِر“ یا ”سِرِّ“ متکلم کی طرف مضاف ہے جس کا معنی چھپا ہوا کوئی معاملہ ہے، یہ ”لَا“ کا اسم ہے جو محلاً مرفوع ہے۔

اگر تم کہو کہ ”لَیْسَ“ سے ملتے جلتے ”لَا“ کا اسم معرفہ نہیں ہوتا تو ”سِرِّی“ کا لفظ ”لَا“ کا اسم کیسے بن گیا حالانکہ وہ اس بناء پر معرفہ ہے کہ معرفہ کی طرف مضاف ہے تو میں کہوں گا کہ یہ امامِ احنف کا مذہب ہے کیونکہ احنف کے بغیر دوسرے سارے امام اسے نہیں مانتے لیکن وہ جائز کہتے ہیں۔

”بِمُسْتَبْرٍ“ پر ”باء“ زائدہ ہے اور یہ ”لَا“ کی خبر ہے۔ حرف ”عَنْ“ بِمُسْتَبْرٍ سے متعلق ہے۔ ”الْوَشَاةُ“، ”وَأَشٍ“ ویسے ہی جمع ہے جیسے ”نُحَاةُ“ اور ”غُرَاةُ“۔ ”وَأَشٍ“ کا معنی ”لَا مِزَّ“ (بُرا) ہے جو ایسا منافق ہوتا ہے جو عاشق و معشوق کے درمیان فساد پیدا کرنے میں لگا رہتا ہے تاکہ ان دونوں کے درمیان جدائی ڈال دے شاعر کہتا ہے:

لَیْنُ کُنْتَ قَدْ بَلَّغْتَ عَنِّی جَنَایَةَ

لَمُبْلِغِکَ الْوَأَشِیْ اَغْشُ وَاکْذَبُ

”اگر تجھے میری طرف سے کوئی گناہ کرنا پہنچا ہے تو یہ تجھے پہنچانے والا بُرا منافق دوسروں

سے بڑھ کر دھوکے باز اور جھوٹے کا کام ہے۔“

ایک اور شاعر نے کہا ہے:

قَالُوا الْوُشَاةُ قَدْ ادَّعَى بِكَ نِسْبَةً
أَحْزَنْتَ لَمَّا قُلْتَ قَدْ صَدَّقْتُهُ

”انہوں نے کہا کہ ”وشاة“ (چغلیخوروں) نے تمہارے ساتھ تعلق کا دعویٰ کیا ہے اور جب تم نے یہ کہہ دیا کہ میں انہیں سچا جانتا ہوں تو مجھے غمگین کر دیا۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ کا فرمان ”وَلَا دَانِي“، ”لَا سِرِّي“ پر معطوف ہے اس پر ”لَا“ دوبارہ لانا تاکید اور نفی کو پکا کرنے کیلئے ہے۔ ”دَاء“ بیماری کو کہتے ہیں اور یہ یائے متکلم کی طرف مضاف ہے۔ ”وَالْمُنْحَسِم“ اسم فاعل ہے ”إِنْحَسَام“ سے یعنی بے تعلق ہونا اور تعلق کا ختم ہونا یعنی میری بیماری محبوب سے ملے بغیر ختم ہونے والی نہیں۔

یہاں بھی قیاس بنایا جاسکتا ہے اور وہ یوں ہوگا کہ ”میری بیماری ختم ہونے والی نہیں (قضیہ صُغْرَى) کیونکہ اگر یہ بیماری ختم ہونے والی ہوتی تو اس کیلئے طبیب مل جاتے اور اگر اس کیلئے طبیب مل جاتے تو دوستوں سے ملنے کا بہانہ بن جاتا (قضیہ کبریٰ) اس کا نتیجہ یہ ہے کہ اگر میری بیماری ختم ہو جاتی تو دوستوں سے ملنے کا بہانہ بن جاتا لیکن ”تَالِي“ (دوسرا قضیہ) باطل ہے تو پہلا بھی ویسا ہی ہوا چنانچہ اس کی نقیض ثابت ہوگئی یعنی میری بیماری ختم نہیں ہوئی۔

اب اس شعر کا حاصل معنی یہ بنا کہ: اے مجھے بُرا بھلا کہنے والے! میں نے تمہارے سامنے بہت معذرت کی لیکن تُو نے ایک نہ مانی اور بُرا بھلا کہنا نہیں چھوڑا تو اب پھر میں اللہ سے اُمید رکھتا ہوں کہ وہ تمہیں بھی میرے والی بیماری لگا دے تو گویا سائل (سوال کرنے والا) نے اس کی بیماری پوچھی کہ تمہاری بیماری میں تمہارا حال کیا ہے جس پر اس نے کہا کہ میں اس حال میں ہوں جس میں میرا راز ایسے منافق لوگوں سے چھپ نہیں سکتا جو عاشق اور معشوق میں جدائی ڈالتے ہیں کیونکہ یہ میرے بس میں نہیں رہا، مجبوراً کھل گیا ہے کیونکہ کامل اور بڑے بزرگ فرماتے ہیں کہ عشق پردے دور کرتا اور راز کھول دیتا ہے اور میرا عشق بھی جو میری بیماری ہے وہ اختیار والے نبی ﷺ سے دن رات کی کسی گھڑی میں ٹوٹنے والا نہیں، مجھے ان سے دور ہونے اور بھاگ جانے میں فائدہ نہ ہوگا، مجھے تو اس جناب کی بارگاہ میں تعلق چاہئے جن سے پتھروں اور درختوں تک نے کلام کی اور پھر دیکھنے کو ان کا حُسن چاہئے جس سے انوار پھوٹتے ہیں۔

سعر (۱۱)

فَحَضَّتْنِي النَّصْحَ لَكِنْ لَسْتُ أَسْمَعُهُ

إِنَّ الْمُحِبَّ عَنِ الْعُدَّالِ فِي صَمَمٍ

(ترجمہ:) ”تم نے کسی لالچ کے بغیر مجھے سمجھایا لیکن میں یہ نصیحت سن نہیں سکوں گا کیونکہ

ایک عاشق شخص بُرا بھلا کہنے والوں کی بات سننے پر کان ہی نہیں دھرا کرتا۔“

جب ناظم رحمہ اللہ سمجھ چکے کہ بُرا بھلا کہنے والے کی ملامت اگرچہ بظاہر انہی کیلئے ملامت ہے

کیونکہ انہوں نے اپنا عشق مجازی گناہ ہے اور وہ کہہ رہا ہے کہ تمہارا عشق فلاں بن فلاں کے ساتھ ہے

نبی کریم ﷺ اور اللہ رحمن کے ساتھ تو ہے ہی نہیں لیکن درحقیقت اسے نصیحت کر رہا ہے کہ مجازی عشق

ویسا نہیں جیسا ہونا چاہئے کیونکہ یوں تو وقت ضائع ہوتا ہے اور اپنے آپ کو یوں تنگ کرنا بنتا ہے کہ نہ

موٹا ہو سکے اور نہ ہی بے فکر چنانچہ اس نے اپنے نفس کو مارتے ہوئے اور اپنی سچی محبت کا اس بناء پر

انکار کرتے ہوئے (کہ کہیں اس کی وجہ سے ایسا تکبر پیدا نہ ہو جائے جو بہت بڑا گناہ ہے چنانچہ نبی

کریم ﷺ نے فرمایا ہے: ”اگر تم گناہ نہیں کرتے تو مجھے تمہارے بارے میں اس سے بھی بڑے گناہ

کرنے کا اندیشہ ہے جو تکبر ہے اس سے بچتے رہو“ (کشف الخفاء للعجلونی، رقم الحدیث: ۲۱۱۹)۔ فرمایا ہے کہ

”مَحَضَّتْنِي النَّصْحَ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

یہ ”محضت“ خطاب کا صیغہ ہے اور یہ خطاب اسے ہو رہا ہے جو اسے عشق مجازی کا طعنہ دیتا

ہے یہ لفظ ”تَمَحِيضُ“ سے ہے جو ”امحاض“ کے معنی میں ہے یعنی کسی چیز کو خالص اور میل کچیل

سے صاف کر دینا۔

”النَّصْحَ“ کا لفظ ”مَحَضَّتْ“ کا دوسرا مفعول ہونے کی وجہ سے منصوب (زبر والا) ہے

مطلب یہ ہے کہ تو نے مجھے ایسی خالص نصیحت کی ہے کہ اس میں نہ تو بے مقصد غرض ہے اور نہ ہی کوئی

بیکار مشورہ ہے۔

”نُصْحَ“ کا معنی نصیحت یعنی کسی اور کو بھلائی کا راستہ دکھانا ہے۔ ”لكن“ استدراک (کسی کمی

کو دور کرنا) کیلئے ہے اور ایسے خیال کو دور کرتا ہے جو اس سے پہلے والی کلام میں پایا گیا کیونکہ جب

اس نے یہ کہا: ”محضتی النصح“ تو اس سے یہ وہم پیدا ہوا کہ کیا پھر تو نے اس کی نصیحت پر عمل کر لیا ہے؟ ناظم نے اس وہم کو دور کرتے ہوئے کہا کہ ”لکن لست اسمعه الخ“ اس میں اپنے آپ کو بیکار بنا دیا ورنہ سمجھدار ناظم میں عشق مجازی نہیں ہے کہ اسے کسی کی نصیحت کرنے والے کی نصیحت پر چھوڑ دیتا کیونکہ اس کا عشق تو اس وجہ سے حقیقی ہے کہ وہ نبی کریم ﷺ سے ہے۔

”لست اسمعه“ کا معنی ہے کہ میں اس کی طرف توجہ ہی نہیں کر سکتا، یہ معنی مجازِ تبعی کے طور پر کیا اور وہ یوں کہ التفات اور توجہ کو دل کی توجہ کی بناء پر سماع (سننے) کے ساتھ تشبیہ دی چنانچہ ”سماع“ کا لفظ ذکر کر کے اس سے ”التفات“ مراد لی پھر ”التفات“ سے ”التفت“ اور ”سماع“ سے ”اسمع“ کے لفظ نکالے پھر ”التفت“ کو اس تعلق کی بناء پر جو ان دونوں کی مصدروں میں ہے ”اسمع“ کے ساتھ تشبیہ دی چنانچہ ”اسمع“ ذکر کر کے ”التفت“ مراد لیا گیا۔

”إِنَّ الْمُحِبَّ الْخ“ نہ سننے کا سبب ہے اصل میں ”لِأَنَّ الْمُحِبَّ“ ہے لیکن لام حرفِ جر کو حذف کیا کیونکہ ایسا ہوتا ہی رہتا ہے جیسے اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: ”عَبَسَ وَتَوَلَّى أَنْ جَاءَهُ الْأَعْمَى“ (سورۃ عبس، آیت: ۱-۲) (اصل میں ”لِأَنَّ“ ہے)۔

”المحب“ میں الف لام ”استغراق“ (سب کو شامل کرنا) کیلئے ہے یعنی ”ہر محبت کرنے

والا“۔

اب اگر تم کہو کہ اسمِ فاعل اور اسمِ مفعول پر آنے والا الف لام ”الذی“ کے معنی میں ہوتا ہے تو پھر یہاں استغراق کے معنی میں کیسے ہو سکتا ہے؟ تو میں کہوں گا کہ ان دونوں پر آنے والا الف لام ہمیشہ استغراق کے معنی میں نہیں ہوتا، یہ اس وقت اس کا معنی دیتا ہے جب اسمِ فاعل اور مفعول میں حدوث (کوئی کام کر دینا وغیرہ) کا معنی ہو جیسے ”الضَّارِبُ“ اور ”الْمَضْرُوبُ“ کا معنی ہے: ”وہ جس نے مارا“ لیکن اگر ان میں معنی ہر وقت ثابت ہے تو ایسا نہیں ہوتا جیسے ”الْوَاجِبُ“ اور ”الْمُؤْمِنُ“ وغیرہ (کہ یہ دونوں خوبیاں اللہ میں ہمیشہ موجود اور ثابت ہیں) بلکہ وہ ایسے ہوتا ہے جیسے صفت مشبہ میں ثبوت ہے الف لام اس میں تعریف کیلئے ہوتا ہے۔

یہاں اسی سلسلے میں آیا ہے اسے یاد رکھو۔

حرف ”إِنَّ“ کے عمل کی تحقیق

”المحب“ کا لفظ اس بناء پر منصوب ہے کہ یہ ”إِنَّ“ کا اسم ہے۔

اگر تم یہ پوچھنا چاہو کہ ”اِنَّ“ اپنے اسم کو نصب (زبر) اور خبر کو رفع (پیش) کیوں دیتا ہے اس کا اُلٹ کیوں نہیں ہوتا؟ تو میں کہتا ہوں اس کی وضاحت یوں ہے کہ جب یہ حرف ”عامل“ ہے تو پھر اس کی کئی صورتیں ہیں یا تو مبتداء اور خبر دونوں کو رفع (پیش) دے یا دونوں کو نصب (زبر) دے یا مبتداء کو رفع اور خبر کو نصب دے یا مبتداء کو نصب اور خبر کو رفع دے۔ ان میں سے پہلی صورت (دونوں کو رفع) باطل ہوگی کیونکہ وہ تو ”اِنَّ“ کے آنے سے پہلے ہی مرفوع تھے اور اگر ”اِنَّ“ کے داخل ہونے پر بھی دونوں ویسے ہی رہیں تو اس کا اثر کیا ہوا؟ ایک وجہ یہ بھی ہے کہ ”اِنَّ“ نے فِعْل کی طرح ہونے سے عمل کرنا ہوتا ہے اور وہ دو اسموں کو رفع دیتا ہی نہیں تو پھر اس جیسا کیوں دے گا؟ کسی شے کی فرع اور شاخ اصل سے طاقتور نہیں ہوا کرتی دوسری صورت بھی باطل ہے کیونکہ اس نے فعل سے عمل کرنا لیا ہے اور وہ کسی کو رفع دیئے بغیر دو اسموں کو نصب نہیں دیتا۔ تیسری صورت بھی نہیں بن سکتی کیونکہ اگر یہ مبتداء کو رفع اور خبر کو نصب دے تو پھر اصل اور فرع میں فرق نہ رہا بلکہ ایک جیسے ہو گئے اور جب یہ تینوں صورتیں غلط ہو گئیں تو صرف چوتھی صورت ہی باقی رہ گئی چنانچہ ”اِنَّ“ اور ”اِنَّ“ جیسے دوسرے لفظوں کا اپنے اسموں اور خبروں کے لئے یہی طریقہ ہے۔

”اِنَّ الْمُحِبَّ“ جملہ استینافیہ ہے گویا کہ کسی نے کہا: تم نے نصیحت کیوں نہ سنی؟ تو ناظم نے یہ کہہ کر جواب دیا: ”اِنَّ الْمُحِبَّ الْخ“۔

”عَنِ الْعُدَّالِ“ میں حرف ”عَنْ“، ”صَمَمَ“ کے ساتھ متعلق ہے جو آخر میں ہے۔

اگر تم یہ سوال کرو کہ حرف جر کے ماتحت آنے والے لفظ کو اس حرف سے پہلے نہیں لایا جاسکتا تو پھر یہ کیوں کر صحیح ہوگا کہ حرف جر کے تحت آنے والے لفظ کو اس کے معمول (جس پر اس کا عمل ہو چکا) سے پہلے لایا جائے، معمول تو صرف وہیں ہوتا ہے جہاں اس کا عامل (عمل کرنے والا) ہو تو میں کہوں گا کہ اسے پہلے لے آنا، ظرفوں میں گنجائش کی بناء پر ہے کیونکہ ظرفوں میں وہ کچھ سما سکتا ہے جو اور چیزوں میں نہیں سما سکتا یا پھر شعر کی ضرورت کیلئے ایسا کیا گیا ہے جیسے کسی شاعر نے شعر کی ضرورت کے بارے میں کہا ہے:

وَقَدْ جَاءَ فِي التَّرْكِيبِ بَعْضُ تَصَرُّفِ

كَفَضْلِ وَتَقْدِيمِ وَمِثْلِ زِيَادَةِ

”شعروں کو جوڑتے وقت کچھ نہ کچھ دخل دینا پڑ سکتا ہے جیسے لفظوں میں فاصلہ ڈالنا“

لفظوں کو آگے کر لیا اور ان میں زیادتی کر دینا۔

”الْعُدَّال“، ”عاذل“ کی جمع ہے جس کا معنی طعنہ دینے والا ہوتا ہے اور یہ بھی ہو سکتا ہے کہ یہاں اس کا معنی بولنے والا ہو وہ طعنہ دینے والا ہو یا نصیحت کرنے والا اور یہ ایسے ہے جیسے خاص لفظ بول کر عام مراد لے لیتے ہیں جیسے حدیث میں عام طور پر ہوتا ہے۔

”فِي صَمَم“ یعنی وہ ان کی کلام سننے سے بہرہ ہوتا ہے یہ ظرفِ مستقر ہے جو ”ان“ کی خبر بن رہی ہے اور ”صَمَم“ (دوز بریں) سننے کی ضد ہے اس کی ظرفیت مجازی ہے اور یہ استعارہ تبعیہ ہے جو یوں ہے کہ عمومِ مطلق کے شمول کو ظرفیتِ مطلقہ کے شمول سے احاطہ مطلقہ کی بناء پر تشبیہ دی گئی اور پھر ظرفیتِ مطلقہ کے شمول کو عمومِ مطلق کے شمول کے مفہوم کیلئے استعارہ کیا گیا چنانچہ ظرفیتِ مطلقہ کا شمول ذکر کر کے عمومِ مطلق کا شمول مراد لیا گیا اور پھر اسی استعارہ کو دیکھتے ہوئے عمومِ جزئی کے شمول کو سب کے گھیرے کیلئے ظرفیتِ جزئیہ کے شمول سے تشبیہ دی گئی پھر ظرفیتِ جزئیہ کے شمول کی خاطر بنائے گئے لفظ یعنی ”فِي“ عمومِ جزئی کو شمول کے مفہوم کیلئے استعارہ کیا گیا پھر ظرفیتِ جزئیہ کے شمول کی خاطر بنائے گئے لفظ ”فِي“ کو ذکر کیا گیا اور عمومِ جزئی کا شمول مراد لیا گیا۔

یہاں مجاز کا مقصد مبالغہ کرنا ہے تاہم یہ بھی ہو سکتا ہے کہ جس پر ”فِي“ داخل ہے یعنی ”صَمَم“ اس میں استعارہ مکنیہ ہو اور وہ یوں کہ ”صَمَم“ کو کوزہ کے ساتھ تشبیہ دی جائے کہ دونوں گویا چیز کو سماتے ہیں اور اس کیلئے وہ چیز ثابت کی جائے جو مشبہ بہ کی خاصیت بنتی ہے یعنی وہ حرف جو حُلُول حقیقی کا پتہ دیتا ہے۔ اس شعر میں امام بخاری کے بتانے کے مطابق حضور ﷺ کے اس فرمان کی طرف اشارہ ہے: ”حُبُّكَ الشَّيْءُ يُعْمِي وَيُصِمُّ“ (التاریخ الکبیر للبخاری، جلد ۲ صفحہ ۹۳، رقم الحدیث: ۱۸۵۳) (کسی شے سے تمہاری محبت تمہیں اندھا اور بہرہ کر دیتی ہے)۔

یہ بھی یاد رہے کہ اس شعر میں قیاسِ اقترانی بھی بن سکتا ہے جسے یوں ترتیب دیا جائے گا کہ ”میں تمہاری نصیحت نہیں سنوں گا کیونکہ میں محبت ہوں اور محبت طعنہ دینے والوں سے بہرہ ہوتا ہے“ اور ”ہر ایسا شخص جو طعنہ دینے والوں کیلئے بہرہ ہوتا ہے تمہاری نصیحت نہیں سنے گا“ نتیجہ یہ ہو گا کہ ”میں تمہاری نصیحت نہیں سنوں گا“۔

یہاں قیاس کا صغریٰ مخالف کے نزدیک مانا ہوا ہے جبکہ اس کے کبریٰ کیلئے پہلے والی حدیث ثبوت ہے اسے یوں سمجھو کہ ”ہر محبت طعنہ دینے والے کے سامنے بہرہ ہوتا ہے کیونکہ جب

حضور ﷺ نے فرمایا کہ ”کسی شے سے تمہاری محبت تمہیں اندھا اور بہرہ کر دیتی ہے“ (التاریخ الکبیر رقم الحدیث: ۱۸۵۳) یہ حدیث خاص لفظ اور عام معنی والی ہے تو ہر محبت طعنہ دینے والوں سے بہرہ ہوگا لیکن پہلا قضیہ حق ہے تو دوسرا بھی ویسا ہی ہوا۔

شعر نمبر ۱۱: کسی کے شر اور مکر سے بچنے کیلئے

اس شعر کی خصوصیت یہ ہے کہ جب تمہیں کسی کے شر یا مکر کا خوف ہو تو اس شعر کو گول کاغذ پر لکھو اور اپنے سر کی اگلی طرف پگڑی کے نیچے باندھ لو۔ اس طرح تم انشاء اللہ اس کے شر اور مکر سے بچے رہو گے۔



شعر (۱۲)

إِنِّي اتَّهَمْتُ نَصِيحَ الشَّيْبِ فِي عَذَابِي
وَالشَّيْبُ أَبْعَدُ فِي النَّصِيحِ عَنِ التُّهْمِ

(ترجمہ:) ”میرا تو بڑھاپا بھی طعنہ دیتے ہوئے مجھے سمجھاتا رہا لیکن میں نے اس کی نصیحت بھی نہیں مانی حالانکہ نصیحت دینے کے معاملہ میں بڑھاپے کی نصیحت کو برا نہیں کہا جا سکتا۔“

جب عاشق نے نصیحت کرنے والے کی نصیحت نہ سننے کی دلیل کو یوں نہ مانا کہ ہم نہیں مانتے کہ تمہارا قبول نہ کرنا اور نصیحت نہ سننا تمہارے محبت ہونے کی وجہ سے ہے ایسا کیوں نہیں ہو سکتا کہ اس کی وجہ نصیحت کرنے والے کی نصیحت کو تمہارا حسد اور طمع بنانا ہو؟ تو دلیل نہ ماننے کے باوجود اس نے اپنا دعویٰ یہ کہہ کر ثابت کیا: ”إِنِّي اتَّهَمْتُ الْخ“ یہاں ”إِنِّي“ اصل میں ”لَا إِنِّي“ ہے حرف جار کو قیاسی طور پر حذف کیا گیا اصل میں یہ سبب ہے۔

”إِتَّهَمْتُ“ خود کلام کرنے والا کہہ رہا ہے باب اِفتعال سے ہے یعنی میں نے طعنہ پر ابھارا محاورہ ہے: ”انسی اتهمت فلانا بكذا“ یعنی میں نے اسے وہ کچھ کہا جس سے اسے شرمندگی ہو۔ ”تُهْمَةٌ“ اس کی مصدر اسم ہے اس کی تاء واو کی جگہ آئی ہے کیونکہ اس کا اصل ”تُخْمَةٌ“ کی طرح ”وَهْمَةٌ“ ہے۔

”نَصِيحَ الشَّيْبِ“، ”اتهمت“ کا مفعول ہونے کی وجہ سے منصوب ہے یہ فعل کے وزن پر ہے لیکن فاعل کے معنے میں ہے یعنی ”نَاصِحٌ“ یہ ”شيب“ کی طرف مضاف ہے یہ اضافت یا تو ان اضافتوں جیسی ہے جن میں صفت کی موصوف کی طرف اضافت ہوتی ہے یعنی میں نے نصیحت کرنے والے بڑھاپے کو ابھارا کہ طعنہ دے یا مشبہ بہ کے مشبہ کی طرف مضاف ہونے والوں میں سے ہے یعنی وہ موت کے قریب ہونے کی اطلاع دینے کی نصیحت کرتا ہے یا یہ ”نَصِيحٌ“ مصدر ہے تو اس کی ”شيب“ کی طرف نسبت ان میں شامل ہے جہاں مصدر اپنے فاعل کی طرف مضاف ہوتی ہے اور یہ بھی ممکن ہے کہ اضافت بیانیہ ہو۔

”شيب“ کا مطلب ہے: بالوں کا سفید ہو جانا اور یہ بھی کہتے ہیں: یہ سفید بالوں کا نام ہے

نصیحتِ شیب کا مطلب ہے کہ بڑھا پا اپنی حالت دکھا کر گویا کہہ رہا ہے کہ کوچ کا وقت قریب آچکا اور یہاں سے جلدی چلے جانا ہے چنانچہ یہ بُرے حالات سے توبہ کی ابتداء ہوتی ہے جیسے فارسی شاعر نے کہا ہے:

”سفید بال کفن کا پیغام لاتے ہیں اور ٹیڑھی پیٹھ موت کی طرف سے سلام کہہ رہی ہے۔“

بڑھاپے سے نصیحت لینے کا فاروقی واقعہ

کہتے ہیں کہ حضرت عمر رضی اللہ عنہ نے خلیفہ بن کر ایک اعرابی سے فرمایا کہ روزانہ صبح کو ان کے گھر کی پچھلی طرف آواز دیا کرے کہ اے عمر! موت کو بھول نہ جاؤ اور دنیا میں رہتے ہوئے اتنا کام کرو جتنا اس میں رہنا ہے اور جب حضرت عمر رضی اللہ عنہ کو ڈاڑھی میں سفید بال نظر آیا تو فرمایا کہ اب آواز دینا بند کر دو کیونکہ میں اپنے اطلاع دینے اور خبر دینے والے کو اپنی آنکھوں سے دیکھ رہا ہوں لہذا اب تمہاری اطلاع کی ضرورت نہیں رہی۔

”فِي عَدَلِي“، ”اتهمت“ سے متعلق ہے اور ”عَدَل“ (ذال پر جزم) کا معنی ”طعنہ دینا“ ہے لیکن شعر کی ضرورت اور ہلکے پن پر اسے حرکت دی ہے تاہم حضرت محقق عصام فرماتے ہیں کہ اس پر اصل ہی میں حرکت ہے اس کی یاء متکلم کی طرف اضافت اس طرح ہے جیسے مصدر کی مفعول کی طرف اضافت ہوتی ہے یعنی اس کے مجھے طعنہ دینے میں۔

شعر کا مطلب یہ ہے کہ میں نے اس بڑھاپے کو طعنہ دینے پر ابھارا ہے جو نصیحت کرنے والے جیسا ہے یا بڑھاپے کو نصیحت کرنے والا ہے یعنی وہ مجھے اپنی ملامت کرنے میں بوڑھا ہے کیونکہ نصیحت کرنے والا ملامت کرتا اور اس پر ناراض ہوتا ہے جو اسے نصیحت کرے۔

”عدلی“ کو ”فِي عَدَلِي“ بھی پڑھا جاتا ہے (دال کے ساتھ) یوں وہ مصدر ہوگا جس کا معنی پھرنا ہوتا ہے اور اس صورت میں یہ ”نَصِيح“ کے ساتھ متعلق ہوگا اور اس کی اضافت مصدر کی فاعل کی طرف نسبت و اضافت بنے گی یعنی بڑھاپے کا اس بناء پر نصیحت دینا اس بارے میں کہ میں بُرے حالات سے پھر جاؤں اور ایسا پڑھنا زیادہ بہتر ہے کیونکہ اس صورت میں اس کی یاء کی طرف اضافت مصدر کی اپنے فاعل کی طرف اضافت بنے گی جو مصدر میں اصل ہے۔

”وَالشَّيْبُ“ میں واو حالیہ ہے ”الشَّيْبُ“ مبتداء اور ”أَبْعَدُ“ خبر ہے جو اسم تفضیل ہے۔

یہاں یہ مقدر ”مِنْ“ کے ساتھ استعمال ہوا ہے کیونکہ معنی یہ ہے کہ ”الشَّيْبُ أَبْعَدُ مِنْ كُلِّ شَيْءٍ“

نَاصِحٍ - ”فِي نَصِيحٍ“، ”ابعد“ کے ساتھ متعلق ہے اور اس کی تنوین مضاف الیہ کے بدلے میں ہے، یعنی ”فِي نَصِيحِهِ“ ہے۔

”عَنِ التُّهْمِ“ کا تعلق ”ابعد“ سے ہے۔ کچھ نے ”من التهم“ لکھا ہے۔

اب اگر یہ کہا جائے کہ اس صورت میں دو حروف جارہ کا تعلق ایک ہی معنی میں ایک متعلق سے ہو جائے گا اور وہ ناجائز ہے تو میں کہوں گا کہ اس صورت میں اس ”مِنْ“ کا تعلق ”بعْد“ کے مادہ سے ہوگا، ”أَفْعَلُ التَّفْضِيلِ“ سے نہ ہوگا جیسے علماء کہتے ہیں: ”الانسان الا عم من زيد من كذا“ کیونکہ ان کا قول ”من زيد“ عموم کے مادہ سے متعلق ہے، صیغہ سے نہیں ورنہ لازم آئے گا کہ لفظ افعَل التفضیل اکٹھے دو چیزوں کے ساتھ استعمال ہو یعنی لام اور کلمہ ”مِنْ“ اور یہ باطل ہے جیسے علم نحو میں آچکا ہے۔ یہ بات علامہ کلنبوی نے تہذیب کے حاشیے میں لکھی ہے۔

پھر یہ سمجھ لو کہ یہ شعر چونکہ پہلے شعر کا سبب ہے لہذا یہاں اس طور پر قیاس کو ترتیب دیا جاسکتا ہے کہ میں نے تمہاری ملامت اور نصیحت نہیں سنی کیونکہ میں نے اپنی ملامت میں بڑھاپے کی کی ہوئی نصیحت کو تہمت لگا دی ہے (نہیں مانی) باوجودیکہ بڑھاپا، نصیحت کرنے میں تہمت سے بچا ہوتا ہے اور جو ایسا ہو وہ تمہاری نصیحت اور ملامت نہیں بن سکتا، نتیجہ یہ ہوگا کہ میں نے تمہاری ملامت اور نصیحت نہیں سنی۔

اسے دوسری طرح بھی ترتیب دیا جاسکتا ہے جو اس پہلی سے بھی اچھی صورت ہے چنانچہ یوں کہا جائے کہ میں نے اپنی ملامت ہونے کے دوران بڑھاپے کی نصیحت نہیں مانی اور بڑھاپا نصیحت کرنے میں تہمت سے دور ہوتا ہے تو نتیجہ کسی تعارف کرائے بغیر پہلی شکل ہوگا کہ میں نے تہمت سے بچی نصیحت کو نصیحت کے دوران تہمت لگائی (نہیں مانا) اب نتیجہ نکالنے کیلئے ہم اس کے ساتھ یہ ”کبریٰ“ ملاتے ہیں اور وہ یوں کہ اور ”ہر وہ شخص جو تہمت سے بچی نصیحت کو نصیحت کے دوران تہمت لگاتا ہے وہ تیری ملامت اور نصیحت نہیں سنتا“ نتیجہ جانا پہچانا ہے کہ میں نے تمہاری ملامت اور نصیحت نہیں سنی۔



دوسری فصل: اپنی خواہشوں پر

چلنے سے خوف دلانے میں

شعر (۱۳)

فَإِنَّ أَمَّارَتِي بِالسُّوءِ مَا اتَّعَطْتُ

مِنْ جَهْلَهَا بِنَذِيرِ الشَّيْبِ وَالْهَرَمِ

(ترجمہ:)"میرے بُرائی پر لگانے والے نفس نے اپنی جہالت کی بناء پر بڑھاپے اور بڑی عمر ہونے سے بھی نصیحت حاصل نہیں کی۔"

حضرت ناظم علیہ الرحمہ جب عشق و محبت میں ہونے والی پہلی کلام سے فارغ ہوئے تو اچھے طریقے سے اس کلام کی طرف پھرے جس میں نفس کی بیماری اور علاج کا ذکر ہے کیونکہ انہوں نے اپنے قول "فَإِنَّ أَمَّارَتِي السُّوءِ" کو پہلے قول کیلئے سبب بنایا ہے یعنی اپنے قول "إِنِّي اتَّهَمْتُ النِّخ" کیلئے سبب بنایا ہے اور جس چیز کا کوئی چیز سبب بنتی ہے تو دونوں کے درمیان گہرا تعلق ہوتا ہے جسے ہر ایک جانتا ہے چنانچہ "فَإِنَّ" کی فاء سبب بتانے کیلئے ہے یہاں ہو سکتا ہے کہ شکل اول کی صورت میں قیاس کی ترتیب کر دی جائے اور وہ یوں کہ میں نے اپنی ملامت کے دوران بڑھاپے کی نصیحت کو نہیں مانا کیونکہ بُرائی پر اُکسانے والے میرے نفس نے ڈرانے والے بڑھاپے اور پیری کی نصیحت قبول نہیں کی اور جو بھی ایسا ہو وہ میری تہمت کے دوران بڑھاپے کی نصیحت کو نہیں مانے گا چنانچہ نتیجہ یہ ہوگا کہ میں نے اپنی ملامت کے دوران بڑھاپے کی نصیحت کو نہیں مانا۔

"امارة" کا لفظ اسم فاعل میں مبالغہ ہے معنی یہ کہ بُرائی کا بہت زیادہ حکم دینے والا۔ یائے متکلم کی طرف اس کی اضافت "عہد" کیلئے ہے یعنی میرا خاص اُتارہ جو نفس ہے۔

یہ بھی ہو سکتا ہے کہ یہاں موصوف کو حذف کر کے صفت ذکر کی گئی ہو اور اسی کا ارادہ کیا گیا ہو کیونکہ زور دار طریقے سے بُرائی کا حکم دینا، نفس ہی کا کام ہے کیونکہ اللہ تعالیٰ نے حضرت یوسف علیہ السلام کی طرف سے بتاتے ہوئے نفس ہی کا ذکر کیا ہے: "إِنَّ النَّفْسَ لَأَمَّارَةٌ بِالسُّوءِ" (سورۃ یوسف آیت: ۵۳) چنانچہ اس شعر میں اس آیت ہی کی طرف تلمیح و اشارہ ہے۔

”بِالسُّوءِ“ لفظِ امارہ کا صلہ (ملنے والا) ہے اور ”السُّوءُ“ (پیش سے) فتنہ عذاب اور بلاء کے معنی میں اسم ہے جبکہ زبر پڑھنے کی صورت میں مصدر ہے چنانچہ کہتے ہیں: ”رَجُلٌ سُوءٌ“ اس وقت کہتے ہیں جب کسی مصدر کو مبالغہ کے لیے کسی شے کی صفت بنایا جاتا ہے جیسے وہ کہتے ہیں: ”رَجُلٌ عَدْلٌ“۔

”مَا اتَّعَطْتُ“ میں ”مَا“ نافیہ ہے ”اتَّعَطْتُ“، ”اتَّعَاظُ“ سے ہے جس کا معنی وعظ قبول کرنا ہے اس کا جملہ ”إِنَّ“ کی خبر ہے۔

”مِنْ جَهْلِهَا“، ”مَا اتَّعَطْتُ“ سے متعلق ہے جس میں نفی ہے ”مِنْ“ کا حرف یا تو اپنے اصلی معنی پر ہے، معنی یہ کہ نفس کا وعظ کو قبول نہ کرنا اس کی جہالت کی وجہ سے ہے یا ”مِنْ“ کا معنی لامِ تعلیل والا ہے تو اس لحاظ سے قیاس ترتیب دیا جاسکتا ہے اور وہ یوں کہ میرے نفس نے جو بُرائی پر اُکساتا ہے، نصیحت نہیں مانی کیونکہ میرا نفس امارہ جو بُرائی پر اُکساتا ہے بڑھاپے اور پیری کے ڈرانے سے واقف نہیں ہے اور ہر وہ نفس جو ایسا ہو تو وہ نصیحت قبول نہیں کرتا جس کا نتیجہ یہ ہے کہ بُرائی پر اُکسانے والا میرا نفس نصیحت قبول نہیں کرتا۔

”نَذِيرٌ“ کا ”اتَّعَطْتُ“ کے ساتھ تعلق جائز ہے اور اگر ”بِجَهْلِهَا“ کے ساتھ تعلق ہو تو یہ ویسا ہی ہوگا جیسے ایک عالم کو جاہل کے مرتبہ میں اس لئے اتار دیتے ہیں کیونکہ وہ ایسا کام نہیں کرتا جسے علم چاہتا ہے۔

”نَذِيرٌ“ کا لفظ یا تو ”انذار“ کے معنی میں ہے جیسے نکیر انکار کے معنی میں ہے یا یہ ”مُنْذِرٌ“ (ڈرانے والا) کے معنی میں ہے جیسے ”بَدِيعٌ“ بمعنی ”مُبْدِعٌ“ ہے پہلی صورت میں اس کی اضافت ایسی ہوگی جیسے مصدر کی اپنے فاعل کی طرف ہوتی ہے اور دوسری صورت میں اضافت بیانیہ شمار ہوگی اور یہ بھی ممکن ہے کہ اس کی اضافت ان اضافتوں میں شامل ہو جو صفت کی اپنے موصوف کی طرف ہوتی ہیں اور اگر ”شَيْبٌ“ اور ”نَذِيرٌ“ کے درمیان مشابہت کا لحاظ کیا جائے تو یہ ”لَجِينِ الْمَاءِ“ جیسی اضافتوں جیسی ہوگی۔

”وَالْهَرَمُ“ اس کا شیب پر عطف ہے یا تو ہاء اور راء پر زبر یا راء پر زبر ہے، معنی انتہائی بڑھاپا ہے اور خادمی کہتے ہیں کہ اس سے مراد بڑھاپے کا لازم ہے جو گہرا ہو جاتا ہے۔

”نفس“ کی تحقیق

پھر یاد رکھئے کہ یہ مقام تفصیل چاہتا ہے تاکہ مقصد حاصل ہو سکے چنانچہ ہم پہلے بتاتے ہیں کہ علماء کا ”نفس“ کے بارے میں اختلاف ہے کہ آخر یہ ہے کیا؟ چنانچہ کچھ متکلمین اس طرف گئے ہیں کہ یہ جسم اور دکھائی دینے والا ڈھانچہ ہے کچھ کہتے ہیں کہ اصلی جسم ہوتے ہیں جو پہلی عمر سے آخر تک باقی رہتے ہیں۔

ابن راوندی کہتے ہیں کہ یہ وہ اجزاء ہیں جو دل سے الگ نہیں ہوتے جبکہ علامہ نظام کہتے ہیں کہ یہ ہلکا پھلکا ایک نورانی جسم ہے جو جسم میں یوں چلتا ہے جیسے آگ کوئلے میں چلتی ہے۔ کچھ طبیب کہتے ہیں کہ یہ ایک ایسی قوت ہے جو دل کی بائیں طرف رکھی گئی ہے اور اسے ”روح حیوانی“ کہا جاتا ہے اور ان میں سے کچھ دوسرے وہ ہیں جو کہتے ہیں کہ یہ ایک ایسی قوت ہے جو دماغ میں رکھی گئی ہے جسے ”نفسِ انسانیہ“ کہتے ہیں۔

حکماء کہتے ہیں کہ یہ ایک اکیلا جوہر ہے جو بدن سے ایسا تعلق نہیں رکھتا جس کے ذریعے سوچ بچار اور کسی قسم کا دخل دے سکے یہاں نفسِ انسانیہ مراد ہے اور یہ وہی ہے جس سے اللہ تعالیٰ خطاب کرتا ہے اور امر و نہی اسی کو ہوتے ہیں یہ بُرے اخلاق کی جگہ ہے جو سارے انسانی جسم میں رکھ دیئے گئے ہیں اور انہیں اس روحِ رحمانی کی ضد پر پیدا کیا گیا ہے جو اعلیٰ علیین میں ہوتی ہے کیونکہ وہ روح نیکی کرنے کو کہتی اور بُرائی سے روکتی ہے لیکن وہ نفسِ ان روحوں کے تابع ہے جو اسفل السافلین میں ہوتی ہے وہ روہیں وہ شیطان جیسی ہیں جو بُرائی کے علاوہ کوئی اور کام کرنے کو نہیں کہتے اور صرف بھلائی کے کام کرنے سے روکتے ہیں۔

نفس کی پیدائش کا مقصد

رہا اسے پیدا کرنے کا مقصد تو سنو! جب اللہ تعالیٰ نے عہد و میثاق میں مخلوق روح کو حضرت آدم علیہ السلام کے جسم میں پھونکا تو اس روح اور جسم کی شادی سے اللہ تعالیٰ نے گویا دو بچے پیدا کئے جن میں سے ایک مذکر تھا جو دل ہے اور اپنے اس باپ سے مشابہ ہے جو روحِ علوی ہے وہ نیکی کرنے کو کہتا ہے اور بُرائی سے روکتا ہے وہ ہمارے رحمت و بخشش والے رب کی نگاہ اور اس کی دو قدرتی انگلیوں کے درمیان ہوتا ہے۔ دوسرا بچہ مؤنث تھا جو بوجھل نفس ہے اور اپنی اس والدہ جیسا ہے جو نچلا جسم ہے۔

صوفیہ کے ہاں نفس کے سات مراتب

متصوف حضرات کہتے ہیں کہ نفس کے سات مرتبے ہیں:

☆ پہلا نفسِ امارہ، بدنی طبیعت کی طرف اسی کا جھکاؤ ہے، یہ لذتیں حاصل کرنے اور محسوس ہونے والی خواہشیں پوری کرنے کو کہتا ہے، دل کی نچلی طرف کھینچتا ہے چنانچہ شرارتیں اور بُرے اخلاق اسی جگہ ہوتے ہیں کیونکہ تکبر، حرص، شہوۃ، حسد، غضب، بخل اور کینہ اسی میں ہوتے ہیں۔

☆ دوسرا نفسِ لَوَامہ ہے، یہ دل کے نور سے نور لیتا ہے، کبھی تو عقل والی کے تابع چلتا اور کبھی بے فرمان ہوتا ہے، پھر شرم سار ہو کر اپنے آپ کو بُرا بھلا کہتا ہے، شرمساری اسی جگہ ہوتی ہے کیونکہ یہ ہوس، پھسل جانا اور حرص کی جگہ ہے۔

☆ تیسرا نفسِ مطمئنہ: یہ بھی دل کے نور سے نور لیتا ہے، اپنی بُری عادتوں سے خالی ہوتا ہے اور اچھی عادتیں اپناتا ہے۔

☆ چوتھا نفسِ مُلہمۃ: یہ وہ ہے جس کے اندر اللہ تعالیٰ الہام کر کے علم، تواضع، قناعت اور سخاوت پیدا کرتا ہے چنانچہ صبر، تحمل اور شکر کا یہی مقام ہے۔

☆ پانچواں نفسِ رَاضیۃ اور یہ وہ ہے کہ جس پر اللہ تعالیٰ راضی ہوتا ہے اور اس میں اللہ تعالیٰ کی رضا کا اثر نظر آتا ہے چنانچہ وہ بزرگی، خلوص اور ذکر کرنے والا ہوتا ہے۔

☆ چھٹا نفسِ مَرَضیۃ ہے اور یہ وہ ہے جو اللہ تعالیٰ سے راضی ہے جیسے اللہ تعالیٰ فرماتا ہے: "وَرَضُوا عَنْهُ" (سورۃ البیۃ، آیت: ۸) اللہ تعالیٰ اس میں بزرگیاں رکھتا ہے اور اسی میں اللہ کی حقیقی ذات کا پتہ چلتا ہے۔

☆ ساتواں نفسِ صالحہ ہے اور یہ ان رازوں کی جگہ ہے جو اللہ تعالیٰ اور بندے کے درمیان پائے جاتے ہیں۔

ساتوں نفسوں کی پہچان

☆ پہلا نفسِ کافروں، شیطانوں اور سخت گناہگاروں کا ہوتا ہے۔

☆ دوسرا ان مؤمنوں کا جو بڑے گناہگار نہیں ہوتے۔

☆ تیسرا طالب علموں اور عالموں کا ہوتا ہے۔

☆ چوتھا ان معلموں اور تعلیم دینے والوں کا جو اپنے پڑھے پر عمل کرتے ہیں۔

☆ پانچواں اولیاءِ کرام کا ہوتا ہے۔

☆ چھٹا اللہ کی پہچان رکھنے والے عارفوں کا ہوتا ہے۔

☆ ساتواں انبیاءِ کرام اور رسولوں کا ہوتا ہے۔

سمجھدار ناظم رحمہ اللہ کا نفس پانچواں بنتا ہے کیونکہ وہ کامل ولی کرامتوں اور بڑے مرتبوں والے تھے لیکن خود انہوں نے اپنے آپ کو فاسقوں کے نفس والا گناہے اور یہ ان کی انتہائی عاجزی اور نفس کو مارنے والی بات ہے جیسے حضرت یوسف علیہ السلام نے اپنے نفس کو مارتے ہوئے یوں کہا تھا: ”وَمَا أَبْرِي نَفْسِي إِنَّ النَّفْسَ لَأَمَّارَةٌ بِالسُّوءِ“ (سورۃ یوسف آیت: ۵۳) (میں اپنے آپ کو پاک نہیں بناتا کیونکہ نفس بُرائی پر بہت اُکساتا ہے)۔ دوسرے اس لئے گناہے کہ اس میں نوکر بننے کی راہ پائی جاتی ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے اس فرمان میں ہے: ”وَمَا لِي لَا أَعْبُدُ الَّذِي فَطَرَنِي وَإِلَيْهِ تُرْجَعُونَ“ (سورۃ یس آیت: ۲۲) (میری کیا مجال ہے کہ اس ذاتِ کریمہ کی بندگی نہ کروں جس نے مجھے پیدا کیا ہے اور پھر تم سب کو بھی تو اسی کے پاس جانا ہے) اس لئے کہ یہ راہ موقع محل کے مطابق بات کرنے کیلئے بڑی شان رکھتی ہے کیونکہ اس میں عام طور پر بات کو لوگوں کے کانوں میں ڈالنے کا طریقہ ہوتا ہے اور ان کے قبول ہو جانے کی بڑی اُمید ہوتی ہے کیونکہ اس راہ میں انہیں اس طرح مخاطب نہیں کیا جاتا کہ ان کے کانوں کو ناگوار گزرے اور ان کی طبیعتیں اس سے نفرت کرنے لگیں۔

اے اللہ! مجھے ان لوگوں میں شامل کر لے کہ جن کے نفس راضی ہوتے اور دل خوف کھاتے رہتے ہیں اور میرے لئے ایسے موقع پر رحمت فرمانے کا موقع بنا جب روح گلے میں آ پہنچے اور (فرشتے) اسے ”حَيِّ و قَيُّوم“ ذاتِ مبارکہ کی طرف لے چلیں۔



شعر (۱۴)

وَلَا أَعَدَّتْ مِنَ الْفِعْلِ الْجَمِيلِ قِرَى
ضَيْفِ الْمَّ بِرَأْسِي غَيْرَ مُحْتَشِمٍ

(ترجمہ:) ”اور (میرے نفس نے) مہمان کی طرح آنے والے اس (بڑھاپے) کو دیکھتے ہوئے بھی کوئی اچھا کام نہیں کیا جو اچانک میرے سر پر آ گیا ہے۔“

حسرت ناظم رحمہ اللہ نے جب بُرائی پر اُکسانے والے نفس (نفسِ امارہ) کے بارے میں بتا دیا کہ وہ کسی بھی بُرے کام سے نہیں رُکتا اور روکنے کے باوجود ایسے کام کئے جاتا ہے تو اس کے بارے میں یہ بتانے کا ارادہ کیا کہ وہ نیک کاموں اور اچھے اخلاق اپنانے کیلئے سوچتا بھی نہیں چنانچہ فرمایا: ”وَلَا أَعَدَّتْ الْخ“۔

اس صورت میں یہ جملہ ”اتَّعَظْتُ“ پر معطوف ہے کیونکہ ”اتَّعَظْتُ“ کا مقصد بُرے کاموں سے بچنا ہے اور ”اغْتَدَادُ“ اچھے کام کرنے کو کہتے ہیں چنانچہ پہلا شعر اس طرف اشارہ ہے کہ اس کا نفس سمجھانے والی طاقت کے روکنے پر بھی نہیں رُکتا اور دوسرے شعر کا مطلب ہے کہ وہ اس طاقت کا حکم ہی نہیں مانتا اور یہ بھی ہو سکتا ہے کہ یہ ان جملوں میں شامل ہو جن میں خاص کا عام پر عطف ہوتا ہے اور اس بناء پر ”اتَّعَظْتُ“ سے مراد بُرائیوں سے بچنا اور نیک کام کرنا ہوتا ہے جبکہ ”اغْتَدَادُ“ کا مطلب اچھے کام کرنا ہوتا ہے تو یہ ”اتَّعَظْتُ“ کے مقابلے میں خاص ہوا۔

تحقیق الفاظ

”إِلَّا“ کا حرف دوبارہ لانا تاکید کیلئے ہے۔

”أَعَدَّتْ“ کا لفظ ”اغْتَدَادُ“ سے بنا ہے جس کا معنی تیار ہونا ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے اس فرمان میں ہے: ”وَسَارِعُوا إِلَى مَغْفِرَةٍ مِّن رَّبِّكُمْ وَجَنَّةٍ عَرْضُهَا السَّمَوَاتُ وَالْأَرْضُ أُعِدَّتْ لِلْمُتَّقِينَ“ (سورۃ آل عمران، آیت: ۱۳۳) (اپنے اللہ سے بخشش مانگنے اور اس جنت کو حاصل کرنے کیلئے جلدی کرو جس کی چوڑائی آسمانوں اور زمین جتنی ہے، وہ صرف پرہیزگاروں کیلئے تیار کی گئی ہے) یعنی آباد اور تیار کر دی گئی ہے۔

”مِنَ الْفِعْلِ“ کا تعلق ”أَعَدَّتْ“ کے ساتھ ہے اور ہو سکتا ہے کہ ”مِنَ الْفِعْلِ الْجَمِيلِ“ لفظ

”قِرَی“ کا بیان ہو اور ”ضَیْف“ کا لفظ شعر کا وزن پورا کرنے کیلئے اس سے پہلے لایا گیا ہے ”الْفِعْلُ الْجَمِیلُ“ صرف وہی کام اچھا ہوتا ہے جو شرع میں اچھا ہو عام طور پر ہر اچھے کام کو نہیں کہتے کیونکہ کچھ کام ایسے ہوتے ہیں جنہیں عقل تو اچھا جانتی ہے لیکن وہ شرع میں بُرے ہوتے ہیں۔ ”الْفِعْلُ الْجَمِیلُ“ میں استعارہ مکنیہ ہے جسے یوں بیان کیا جاسکتا ہے کہ ذہن میں اچھے کام کو لذت اور خوشی حاصل کرنے کیلئے ”قِرَی“ سے تشبیہ دی جائے اور دعویٰ یہ کیا جائے کہ اچھا کام (”الْفِعْلُ الْجَمِیلُ“) ”قِرَی“ کی جنس ہے اور پھر ”قِرَی“ کو ذہن میں فعلِ جمیل کے مفہوم کیلئے استعارہ کیا جائے پھر ”قِرَی“ کو ذہن میں ذکر کر کے اس سے مراد فعلِ جمیل لیا جائے جبکہ خارج میں فعلِ جمیل ذکر کر کے خود اسی کو مراد لیا جائے اور فعلِ جمیل کے لئے ”اِعْدَادُ“ (تیار کرنا) کو ثابت کرنا استعارہ تخیلیہ بنتا ہے۔

”قِرَی“ (قاف کی زیر اور الف مقصورہ کے ساتھ) مصدر ہے جو اس محاورے سے لی گئی ہے: ”قَرِیْتُ الضَّیْفَ“ یہ اس وقت کہا جاتا ہے جب تم مہمان کیلئے اچھے کھانے کا انتظام کرو چنانچہ ”قِرَی“ کا لفظ لغت میں دو معنوں کیلئے آتا ہے ایک معنی تو مصدری ہے یعنی کھانا کھلانا اور دوسرا حاصل مصدر ہے جو طعام ہے یہاں اس سے مراد توبہ اور نیک کام کرنے ہیں اس کی ”ضَیْف“ کی طرف اضافت لامیہ ہے جبکہ ”ضَیْف“ سے مجازی اور استعارے کے طور پر بڑھا پا مراد ہے جسے یوں بتائیں گے کہ بڑھاپے کو ”ضَیْف“ سے اس بناء پر تشبیہ دیں گے کہ وہ دن بتائے یکا یک آ جاتا ہے اس کیلئے بنیاد اور انتظام کی ضرورت نہیں ہوتی چنانچہ ”ضَیْف“ کو ”شَیْبُ“ کے لئے استعارہ کیا گیا اور ”ضَیْف“ کا ذکر کر کے اس سے ”شَیْبُ“ مراد لیا گیا اور ناظم کا ”اَلْمَ“ کہنا اس استعارے کیلئے قرینہ بنے گا جبکہ ”قِرَی“ اس کیلئے تریخ ہے اور ”قِرَی“ سے مجازی اور استعارے کے طور پر فعلِ جمیل مراد ہوگا جسے یوں بتائیں گے کہ فعلِ جمیل اور نیک عمل کو ”قِرَی“ سے اس بناء پر تشبیہ دیں گے کیونکہ یہ دونوں ہی دوسرے کو فائدہ پہنچاتے ہیں چنانچہ ”قِرَی“ کو فعلِ جمیل کیلئے استعارہ کیا گیا ”قِرَی“ کو ذکر کر کے اس سے فعلِ جمیل اور عملِ صالح مراد لیا گیا۔

یہاں یہ نہ کہا جائے کہ اس مقام پر استعارہ کرنا جائز نہیں کیونکہ یہاں مشبہ اور مشبہ بہ دونوں ہی کا ذکر ہے اور جہاں یہ دونوں اکٹھے آ جائیں وہاں استعارہ جائز نہیں ہوتا کیونکہ ہم کہیں گے کہ اگر تم مشبہ اور مشبہ بہ کو اکٹھا ذکر کر کے دونوں کا ذکر ایسا کرو جس سے تشبیہ کا پتہ چل سکے تو ہم قضیہ صغریٰ

نہیں مانیں گے اور مانیں بھی کیسے جبکہ اس مقام میں ایسی کوئی چیز نہیں جو تشبیہ کا پتہ دے اور اگر تم عام طور پر ان کو ذکر کرنے کا ارادہ کرو تو ہم قضیہ کبریٰ کو نہیں مانتے اور مانیں بھی کیسے جبکہ علم بیان والوں نے صاف لکھا ہے کہ ان دونوں کا ذکر استعارے کو اس وقت نقصان پہنچاتا ہے جب وہ اس طرح سے ہو کہ تشبیہ کا پتہ دے ورنہ نقصان نہیں پہنچاتا جیسے ناظم کا قول ہے:

لَا تَعْجَبُوا مِنْ بَلِي غَلَالِيهِ
قَدْ زُرَّ أَزْرَارُهُ عَلَى الْقَمَرِ

”تم زرہ کے نیچے والے کپڑے کے بوسیدہ ہونے پر تعجب نہ کرو کیونکہ اس کے بٹن تو چاند پر باندھے گئے ہیں“ (تو گویا یہ کپڑا بڑا مضبوط ہے)۔

پھر ناظم کا قول ”الْمَمَّ“، ”الْمَامَ“ سے ماضی کا صیغہ ہے جس کا معنی ”اُتْرْنَا“ ہوتا ہے۔

الْمَمْتُ فَحَيْثُ ثُمَّ قَامَتْ فَوَدَّعَتْ
فَلَمَّا تَوَلَّتْ كَادَتِ النَّفْسُ تَرْهَقُ

”وہ اُتری تو زندہ ہوئی“ پھر کھڑی ہوئی اور الوداع کہا اور مڑی تو روح نکلنے کو تھی“۔

”الْمَمْتُ“ محلاً مجرور اور ”ضیف“ کی صفت ہے اور ناظم کا قول ”بِرَأْسِي“ اس سے متعلق ہے۔

اگر یہ کہا جائے کہ ناظم نے سارے اعضاء میں سے صرف سر ہی کا نام کیوں لیا ہے تو ہم کہیں گے اس بناء پر کہ سفید بال سب سے پہلے اسی میں آتے ہیں۔

”غَيْرَ مُحْتَشَمٍ“ راء پر زبر کے ساتھ مضاف الیہ یعنی ”ضیف“ سے حال ہے کہ مضاف مصدر ہے اور کچھ محققین نے صاف طور پر لکھا ہے کہ مضاف الیہ سے حال کا آنا صرف اس وقت ہوتا ہے جب مضاف مصدر ہو یا پھر مضاف الیہ کی جُزء یا جُزء کے مرتبے میں ہو چنانچہ ابن مالک نے ”الْفِيهِ“ میں لکھا ہے:

”مضاف الیہ سے حال بنانا جائز نہ سمجھو اسے صرف اس وقت بنا سکتے ہو جب مضاف اس پر عمل کرے یا اس کی جُزء بنے جس کی طرف اسے مضاف کیا گیا یا جُزء جیسا ہو لہذا یہ قاعدہ نہ توڑو“۔

اور وہ جو کہا گیا ہے کہ یہ ”غیر محتشم“ اللہ تعالیٰ کے اس فرمان سے ملتا جلتا ہے: ”إِنْ اتَّبَعُ

مِلَّةَ اِبْرَاهِيْمَ حَنِيفًا“ (سورۃ النحل، آیت: ۱۲۳) تو درست نہ ہوگا کیونکہ اس میں یہ شرط ہے کہ حال پر عمل کرنے والا مضاف پر عمل کرے کہ مضاف اور مضاف الیہ میں اتحاد ہوتا ہے اور یہاں یہ ممکن نہیں کہ ”اَعَدَّتْ“ کا لفظ ”غَيْرَ مُحْتَشِمٍ“ پر عمل کر لے اسے ہر ایک جانتا ہے۔

یہ بھی ہو سکتا ہے کہ یہ ”الْمَ“ کے فاعل سے حال ہو نیز یہ بھی ممکن ہے کہ ”رَأْسِي“ کی یائے متکلم سے حال ہو کیونکہ اگر ”مُحْتَشِمٍ“ صیغہ اسم فاعل بنا کر پڑھا جائے تو یہی مناسب ہے اور ممکن ہے کہ ”غَيْرَ“ کا لفظ مجرور ہو اور وہ اس بناء پر کہ ”ضَيْفٍ“ کی صفت ہے لیکن اس پر اعتراض رہ جاتا ہے چنانچہ ”مُحْتَشِمٍ“ یا تو فاعل کا صیغہ ہے ”احتشام“ مصدر سے جس کا معنی احترام کرنا ہے اور یہ پہلے کیلئے مناسب ہے یا پھر اسم مفعول کا صیغہ ہے ”احتشام“ ہی سے جس کا معنی عزت کرنا ہے چنانچہ معنی ہوگا: جس کی عزت نہیں یا اس ”احتشام“ سے ہے جس کا معنی شرم و حیاء اور لشکر ہے، یعنی ”غَيْرَ مُقَارِنٍ بِالْعَسْكَرِ“ یعنی وہ لشکر کے ساتھ نہیں آیا بلکہ اکیلا آیا اور مناسب بھی یہی ہے کیونکہ یہ ”ضَيْفٍ“ سے حال ہے یا ”الْمَ“ کا فاعل ہے۔

اگر یہ کہا جائے کہ تم ”مُحْتَشِمٍ“ کو اسم مفعول کا صیغہ بناتے ہو تو اس پر اعتراض ہوگا کہ باب افتعال سے اسم مفعول کا صیغہ نہیں آ سکتا تو ہم کہیں گے: اگرچہ اس سے مستقل طور پر اسم مفعول نہیں آتا لیکن حرف جر کے ساتھ ملانے سے آ سکتا ہے اور یہاں وہ مقدر ہے اصل یوں ہے: ”غَيْرَ مُحْتَشِمٍ فِيهِ“۔

جو کچھ میں نے تمہیں بتا دیا، اسے لو اور شکر کرنے والوں میں سے بن جاؤ۔



شعر (۱۵)

لَوْ كُنْتُ أَعْلَمُ أَنِّي مَا أُوقِرُهُ

كَتَمْتُ سِرًّا مَبْدَائِي مِنْهُ بِأَلْكَتِمِ

(ترجمہ:) ”اگر مجھے پتہ ہوتا کہ میں اس مہمان (بڑھاپے) کی عزت نہیں کر سکوں گا تو

اس راز (بڑھاپا) کو جو مجھے دکھائی دے رہا ہے، خضاب لگا کر ڈھک دیتا۔“

جب ناظم نے بڑھاپے کی نصیحت نہ مانی (کامل نصیحت کرنے والے کی نہ مانی) اور نہ گویا

عبادت اور توبہ جیسے نیک کام کر کے اس کی مہمانی کی (حیاء کی) بلکہ وہ مہمان عزت گنوا بیٹھا تو اس کے نفس نے ان بُرے کاموں کی وجہ سے اپنی شرمندگی یوں ظاہر کی کہ ”لَوْ كُنْتُ أَلْخ“۔

تحقیق الفاظ

یاد رکھو کہ ”لَوْ“ کا حرف پہلی چیز کے ثابت نہ ہونے کی بناء پر دوسری چیز کا ثابت نہ ہونا بتاتا ہے

اصل میں یوں ہے کہ ”میں نے نہ جانا تو اپنے ظاہر ہونے والے راز کو نہ چھپایا۔“

اور ”كُنْتُ“ اپنی خبر یعنی ”أَعْلَمُ“ کے جملہ کے ساتھ ”لَوْ“ کی وجہ سے فعل شرط ہے اور ”مَا

أُوقِرُهُ“ میں حرف ”مَا“ نافیہ ہے اور ”أُوقِرُ“ ”توقیر“ سے صیغہ متکلم ہے جس کا معنی عزت و

احترام کرنا ہے اس میں مفعول کی ضمیر (ہ) ”ضَيْفُ“ کی طرف لوٹتی ہے جس سے بڑھاپا مراد ہے اور

”كَتَمْتُ“ اس شرط کی جزاء ہے اور ”أَلْكَتِمِ“ کا معنی ”إِخْفَاءُ“ (چھپانا) ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے اس

فرمان میں ہے: ”وَلَا تَكْتُمُوا الشَّهَادَةَ وَمَنْ يَكْتُمْهَا فَإِنَّهُ إِثْمٌ قَلْبُهُ“ (سورۃ البقرہ آیت: ۲۸۳)

(گواہی نہ چھپاؤ کیونکہ جو اسے چھپائے گا تو اس کے دل میں کھوٹ کا گناہ ہوگا)۔

یہاں ”سِرًّا“ سے مراد زبان حال سے بڑھاپے کا ڈر دینا ہے کہ کوچ کرنے کا وقت آچکا ہے۔

”بَدَا“ کا جملہ ”سِرًّا“ کی صفت ہے اور اس کا معنی ہے: ظاہر ہوا جیسے اللہ تعالیٰ کے فرمان میں ہے:

”إِنْ تَبَدُّوا الصَّدَقَاتِ فَنِعِمَّا هِيَ“ (سورۃ البقرہ آیت: ۲۸۱) (اگر تم صدقہ دکھا کر دو گے تو یہ بھی بہتر

ہوگا)۔ ”مِنْهُ“ کا لفظ ”بَدَا“ سے متعلق ہے اس کی ضمیر ”شَيْبُ“ کی طرف جاتی ہے یعنی ”مِنْ

طَرَفِهِ“ (بڑھاپے کی طرف سے)۔ ”كَتَمْتُ“ ایک ایسی بوٹی جو مہندی کی طرح خضاب کے کام آتی ہے۔

اس شعر میں علم بدیع میں سے یہ ہے کہ ”شعر کے آخری حصے کو پہلے حصہ کے ساتھ ملایا گیا ہے“

اور شعر میں یوں ہوتا ہے کہ دو لفظوں میں سے ایک تو شعر کے آخر میں ہو اور دوسرا پہلے مصرعہ کی ابتداء میں ہو یا ان میں سے ایک شعر کے آخر میں اور دوسرا دوسرے مصرعہ کی ابتداء میں جیسے ناظم نے فرما رکھا ہے:

وَقَدْ كَانَتِ الْبَيْضُ الْقَوَاصِبُ فِي الْوَعْيِ

بَوَاتِرُ فَهِيَ الْآنَ مِنْ بَعْدِهَا بَتْرُ

”اور جنگ میں سفید کاٹنے والی تلواریں تھیں چنانچہ اب اس کے بعد وہ ٹوٹ چکی ہیں۔“

شعر کا حاصلِ مطلب یہ ہے کہ اگر مجھے اس بات کا علم ہوتا کہ میں اس مہمان (بڑھاپا) کی اچھے کام جیسے کھانے کھلانے سے تعظیمِ عزت اور قدر نہیں کر سکوں گا جو میرے سامنے ہے تو میں اس مہمان (بڑھاپے) کی طرف سے نظر آ جانے والی چیز کو شروع ہی میں مہندی کے خضاب سے چھپا دیتا کیونکہ یہ اس شخصیت کی سنت ہے جن پر حراء پہاڑ میں وحی اُتری تا کہ میرے اس معاملے کو کوئی دوسرا نہ جانتا اور نہ ہی میرا راز فاش ہوتا اور یوں مجھ سے رسوائی ہٹ جاتی اور طعنے وغیرہ ملنے کا سلسلہ بند ہو جاتا۔

مختصر طور پر اسے یوں کہا جاسکتا ہے کہ اگر میں اس بارے میں جانتا ہوتا کہ اختیار اور بڑھاپے کی وجہ سے کام نہیں کر سکوں گا، برائیاں نہیں چھوڑ سکوں گا تو میں اپنا بڑھاپا مہندی کا خضاب لگا کر چھپا لیتا تا کہ لوگ مجھے یہ طعنے نہ دیتے رہتے کہ یہ ڈاڑھی والا بوڑھا ہے اور اس عمر میں بھی نہ تو کوئی نیک عمل کرتا ہے اور نہ ہی زاہد ہے بلکہ اللہ کے حکموں اور حضور ﷺ کو چھوڑے ہوئے ہے لیکن میں اپنی بے عملی جان نہ سکا چنانچہ میں اسے چھپا نہ سکا جس کی وجہ سے لوگوں نے مجھے طعنے دیئے۔

یہ وہ معنی ہے جو میرے ٹوٹے پھوٹے دل میں آیا اور یہ کسی نے اچھا کہا ہے کہ شعر کا معنی شاعر کے دل میں ہوتا ہے۔



اس مصرعہ میں نفس کو گمراہی سے روکنے کا آلہ حذف کیا گیا ہے، اسے ذکر نہیں کیا گیا جیسے دوسرے مصرعہ میں ہے کیونکہ شعر کی ضرورت ہے اور یہ آلہ مرشد کا وعظ، اس کا نفس اور اس کی ہمت ہے۔

حضرت ناظم کا قول ”کَمَا يَرُدُّ“ محذوف مصدر کی صفت ہے یعنی ”رَدًّا مِثْلَ رَدِّ جِمَاحٍ“ اور ”مَا“ مصدر یہ ہے۔

حضرت ناظم نے ایسی مثال اپنے دل کو تسلی دینے کیلئے دی ہے، انہیں اس کو گناہوں سے روکنے کا طریقہ مشکل لگ رہا تھا چنانچہ انہوں نے اسے اس طرح رد کر دیا کہ طریقہ موجود ہے کیونکہ اس کی نظیر اور مثال ملتی ہے۔

دوسرا ”جِمَاحٍ“ (ج پر زیر) ”جَمَحٍ“، ”جُمُوحًا“ کی مصدر ہے جس کا معنی شدت اور گاڑھا پن ہے اور اس لحاظ سے ”رَدًّا“ کا معنی زائل کرنا ہوگا۔ یہ جمع بھی ہو سکتی ہے، اس صورت میں اس کی اضافت بیانیہ ہو سکتی ہے یا ویسے ہوگی جیسے موصوف کو اس کی صفت کی طرف مضاف کیا جاتا ہے، یعنی ”الْخَيْلُ الْجَمَاحُ“ ہوگا (مضبوط گھوڑے) اسے ذہن نشین کر لو۔

”بِاللُّجْمِ“ کا تعلق ”يُرَدُّ“ سے ہے، یہ ”كُتِبَ“ اور ”كِتَابٌ“ کی طرح ”لِجَامٍ“ کی جمع ہے، ”لِجَامٍ“ کا لفظ فارسی کے لفظ لگام سے عربی بنایا گیا ہے تاہم کچھ اسے عربی ہی کہتے ہیں اور کہتے ہیں کہ یہ فارسی سے عربی بنایا نہیں گیا، علامہ جوالتی نے اسے اپنی کتاب المعرب میں ذکر کیا ہے، وہ فارسی زبان میں مثالیں دیتے ہیں تاکہ اس میں سمجھنے کی طاقت ہو جائے اور وہ اپنے مطلب کی طرف توجہ کر سکے۔

اس شعر میں علم بدیع کی یہ صنعت ہے کہ کئی جگہ ایک صورت کے لفظ استعمال ہوئے ہیں جیسے ”مَنْ“ اور ”مِنْ“، ”بِرَدِّ“ اور ”يُرَدُّ“، ”جِمَاحٍ“ اور ”جَمَاحٍ“ اور پھر ”الْخَيْلُ“ اور ”اللُّجْمِ“ میں باہمی تعلق ہے۔

شعر کا حاصل معنی واضح ہے، اسے دہرانے کی ضرورت نہیں۔

شعر (۱۷)

فَلَا تَرْمُ بِالْمَعَاصِي كَسَرَ شَهْوَتِهَا

إِنَّ الطَّعَامَ يُقْوِي شَهْوَةَ النَّهْمِ

(ترجمہ:) ”تم زیادہ گناہ کر کے نفس کی خواہش ختم کرنے کی کوشش نہ کرو کیونکہ زیادہ کھانا ملنے پر پیٹو شخص کی خواہش اور زیادہ بڑھ جاتی ہے۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب پچھلے شعروں میں نفس کو دیکھا کہ وہ گناہوں اور کوتاہیوں میں گھر چکا ہے اس شخص کی نصیحت نہیں مانتا جو اسے ڈراتا ہے کہ سورج غروب ہونے کی طرح اس کا وقت بھی قریب آچکا ہے شرمندگی کے بعد اسے درست نہ کر سکا، مرشدِ کامل سے راہنمائی کی کوشش کی تو وہ اسے مل نہ سکا تو ایسے میں گویا اسے کہا گیا ہے کہ تمہارے نفس کا مرشد تمہارے پاس ہی ہے لہذا اسے تلاش کرنے کی ضرورت نہیں اور اس کے وجود کو دور کرنے کا مطلب ہے کہ وہ گناہ کرنے پر تلا ہوا ہے کیونکہ نفس نے جب پوری کوشش سے پیٹ بھر کر کھا لیا تو اس سے اکتا جاتا ہے اور اس کے بعد اسے اس میں دلچسپی نہیں رہتی چنانچہ جب تم نے اسے ہر قسم کے گناہوں میں لگا دیکھا تو اس کی خواہش ختم کر دی اور اس کے بعد تم کبھی بھی اس کی طرف توجہ نہیں کر سکو گے چنانچہ ناظم نے اس قائل کا رد کرتے ہوئے کہا: ”فَلَا تَرْمُ بِالْمَعَاصِي الْخ“۔

اس میں ناظم نے گفتگو کا طریقہ بدلا ہے اور تکلم سے خطاب کی طرف آگئے ہیں، اسے عقلمند علماء کی کثیر تعداد ”الْتِفَات“ کہتی ہے، نفس کی ہٹ دھرمی کا رد شروع کرنے اور اس کی کیفیت بتانے کا نکتہ بتاتے ہوئے فرمایا ہے: ”فَلَا تَرْمُ“۔ یہ نہیں حاضر کا صیغہ ہے ”رَامَ“ سے جس کا معنی ”طَلَبَ“ ہے یعنی تلاش کرنا اور نہیں کا صیغہ لانا یہ بتاتا ہے کہ جس کام سے روکا گیا ہے وہ یقیناً بُرا ہوگا جیسے کسی چیز کا حکم دینے سے اس کے اچھے ہونا کا پتہ چلتا ہے اس میں حرف ”فَاء“ جزائیہ ہے یعنی جب تم نے نفس کی عزت کرتے ہوئے اسے گناہوں کی مہمانی سے بھر لیا تو ”فَلَا تَرْمُ“۔

تحقیق الفاظ

”بِالْمَعَاصِي“ میں ”بَاء“ استعانت اور مدد لینے کے معنی میں ہے جیسے ”كَتَبْتُ بِالْقَلَمِ“ (میں نے قلم کی مدد سے لکھا)۔ ”المعاصي“، ”مَعْصِيَةٌ“ کی جمع ہے جس کا معنی چھوٹا یا بڑا گناہ ہوتا ہے۔

”کَسْرَ“ (زبر سے) ”فَلَا تَرْمُ“ کا مفعول ہے جس کا معنی ٹکڑے کرنا اور عاجزی کرنا ہوتا ہے یعنی تم یہ نہ سمجھو کہ گناہوں کی وجہ سے نفس کی خواہشیں اور اس کی عاجزی ختم ہو جائے گی۔

”بِالْمَعَاصِي“ میں استعارہ مکنیہ ہے جسے یوں سمجھو کہ حضرت ناظم نے نفس کیلئے گناہ کرنے کو انسان کیلئے کھانے کے ساتھ تشبیہ دی کیونکہ یہ دونوں چیزیں خواہشیں پیدا کرتی اور لذتیں لاتی ہیں، پھر مشبہ ذکر کیا جیسے کسی نے کہا: ”أَنْشَبَتِ الْمَنِيَّةُ أَظْفَارَهَا“ (موت نے اپنے نیچے گاڑ دیئے)۔

”إِنَّ الطَّعَامَ“ پہلے مصرعہ کی علت اور سبب ہے سبب کا حرف حذف کر دیا گیا ہے اصل میں ”لَآنَ“ ہے کیونکہ ”إِنَّ“ اور ”أَنَّ“ سے حرف جر کا حذف کرنا قیاس (علماء کی سوچ بچار) ہے۔

یہاں قیاس اقترافی بنتا ہے جسے یوں سمجھنا چاہیے: گناہوں کے ذریعے نفس کی خواہش کو ختم نہیں کیا جاسکتا کیونکہ گناہ کھانے کی طرح ہیں اور کھانا ایک پیٹ کی حرص کو ختم نہیں کر سکتا، تو نتیجہ یہ ہوا کہ گناہ ایسے ہوتے ہیں جو پیٹ کی حرص کو ختم نہیں کر سکتے۔ اس کے ساتھ کبریٰ ملانے سے بعینہ دعویٰ نتیجہ بن جائے گا چنانچہ ہم کہیں گے کہ ہر وہ چیز جو اس طرح کی ہو جو پیٹ کی حرص کو طاقت دیتی ہے اس کے ذریعے تم حرص کو ختم نہیں کر سکتے، نتیجہ یہ ہوگا کہ گناہوں کے ذریعے حرص کو ختم نہیں کیا جاسکتا۔ اسے قیاس استثنائی بھی بنایا جاسکتا ہے اور چونکہ وہ آسان ہے لہذا اسے ذکر کرنے کی ضرورت نہیں۔

”يَقْوَى“، ”تَقْوِيَةٌ“ سے ہے جو ”إِنَّ“ کی خبر ہے اور ”شَهْوَةٌ“ (زبر سے) اس کا مفعول ہے ”نَهْمٌ“ (نون پر زبر اور ہاء پر زبر) ”حَذِرٌ“ کے وزن پر صفت مشبہ ہے یعنی ”الْحَرِيصُ عَلَى كَثْرَةِ الْأَكْلِ وَالشَّرْبِ“ (زیادہ کھانے پینے کی حرص کرنے والا) اور جو اسے مصدر بناتا ہے زبردستی کرتا ہے ان دونوں صورتوں میں اس کے اندر استعارہ پایا جاتا ہے کیونکہ اس نے نفس کو ”نَهْمٌ“ (زیادہ کھانے والا) کے ساتھ اس بارے میں تشبیہ دی کہ دونوں کا پیٹ نہیں بھرتا کیونکہ جیسے پیٹ شخص کا زیادہ کھانے سے پیٹ نہیں بھرتا یونہی نفس زیادہ گناہ کرنے سے سیر نہیں ہوتا بلکہ اسے گناہوں میں اور زیادہ دلچسپی ہو جاتی ہے اور وہ اس کے پیچھے پڑا رہتا ہے۔ پھر ”نَهْمٌ“ کو ”نَفْسٌ“ کیلئے استعارہ کیا گیا چنانچہ ”نَهْمٌ“ کا ذکر کر کے اس سے ”نَفْسٌ“ مراد لیا گیا۔

اس طرح طعام بھی مجاز ہوگا اور ”مَعَاصِي“ سے استعارہ بنے گا جیسے اس سے پہلے اس کے اَلٹ کا استعارہ گزرا اسے یاد رکھو۔

حاصل معنی یہ ہوگا کہ اے وہ شخص کہ جس نے اپنے آپ کو عورتوں اور بچوں کے ساتھ محبت کی خواہش میں لگا رکھا ہے، عشق میں رونے اور آہیں بھرنے پر اس کا حال یہ ہے کہ نفس کی حرص کو ختم نہیں کرتا اور نہ ایسے گناہوں کے ذریعے ختم کرتا ہے کیونکہ یہ بات مانی ہوئی ہے اور اسے ہر چھوٹا بڑا جانتا ہے، جانتا ہے کہ گناہ نفس کی حرص کو طاقت دیتے ہیں اور نفس ان سے اُکتاتا اور بھرتا نہیں ہے۔

اے اللہ! ہمیں تھوڑے وقت کیلئے بھی اپنے آپ پر بھروسہ کرنے والا نہ بنا کہ یہ ہمیں جہنم میں پہنچادے، ہمارا ہر کام اپنی رضا کیلئے بنادے، تو ہر مشکل کو دور کرنے والا ہے اور گناہوں میں جکڑے ہر شخص کا مددگار ہے۔ تیری مہربانیاں بندوں پر بہت زیادہ اور عام ہیں۔



شعر (۱۸)

وَالنَّفْسُ كَالطِّفْلِ إِنْ تَهْمِلُهُ شَبَّ عَلَى
حُبِّ الرِّضَاعِ وَإِنْ تَفْطِمُهُ يَنْفَطِمُ

(ترجمہ:) ”نفس تو بچے کی طرح ہوتا ہے کہ اسے روکو گے نہیں تو وہ جوان ہونے تک دودھ پیتا ہی چلا جائے گا لیکن چھوڑنے کو کہو گے تو چھوڑ دے گا۔“

جب پہلے شعروں سے سمجھ لیا کہ نفس اپنے مالک کے قبضے میں ہوتا ہے تو اسے کھول کر یوں بتایا کہ معقول چیز (نفس) کو محسوس چیز (طفل) سے تشبیہ دے کر کہا: ”والنفس كالطفل الخ“۔
تحقیق الفاظ

واو یا تو عاطفہ ہے یا استینافیہ ہے اور ”نفس“ کو ناظم نے ”ضمیر“ کی جگہ ظاہر کر دیا کہ یہ شان والا ہے کیونکہ نفس انسان کیلئے سہارا ہے جیسے حدیث میں آیا ہے کہ ”نَفْسُكَ مَطِيَّتُكَ فَارْفُقْ بِهَا“ (تمہارا نفس تمہارا سہارا ہے تو اس پر نرمی کیا کرو) یا یہ شعر کی ضرورت ہے۔ اس میں الف لام ”عہد“ یا استغراق کیلئے ہے لیکن پہلا بنانا زیادہ اچھا ہے یعنی ذہن میں آنے والا خاص نفس جسے امارہ کہتے ہیں۔

”كَالطِّفْلِ“ میں ”ك“ کا معنی ”مثل“ ہے یہ خبر ہونے کی وجہ سے مرفوع گنا جاتا ہے یعنی ”نفس امارہ جو بچہ کی طرح ہے“۔ ”طِفْل“ اس بچے کو کہتے ہیں جسے پیدائش کے بعد کچھ وقت سانس لینا نصیب ہو۔

بچپن میں بچہ کیا کیا کہلاتا ہے؟

انسان جب تک ماں کے پیٹ میں ہوتا ہے اسے ”جَنِين“ کہتے ہیں پیدائش کے بعد ”وَلِيد“ کہلاتا ہے، تھوڑا وقت گزرنے پر اسے ”طِفْل“ کہتے ہیں اس کے بعد ”صَبِي“ پھر ”مُرَاهِق“ اور انیس سال تک ”غلام“ کہلاتا ہے پھر چونتیس سال کی عمر تک ”شَاب“ پھر اکیاون برس کی عمر تک ”كُهْل“ اور اس کے بعد عمر کے آخری وقت تک ”شَيْخ“ کہلاتا ہے۔

کچھ کہتے ہیں کہ طفل وہ ہوتا ہے جو پیدائش کے بعد پورے دو سال کا ہو۔ اس بارے میں اور بھی بہت کچھ کہا گیا ہے لیکن اس مقام پر وہ دو معنی مناسب ہیں جن کا ذکر کر دیا گیا۔

حضرت ناظم نے ”کَالصَّبِيِّ“ کی بجائے ”کَالطِّفْلِ“ کہا کیونکہ سمجھ والا بچہ پورے عاقل (عقل مند) مرد کی طرح ہوتا ہے اور وہ یوں کہ وہ ایمان و کفر، روزہ و نماز وغیرہ میں اسی طرح ہوتا ہے اور جب عقلمند ہے تو اسے اپنی مرضی کے مطابق کام کرنے کا حق ہوتا ہے اور وہ کسی کام میں کسی کی مرضی پر نہیں چلتا لہذا مثال دے کر سمجھانا مناسب نہیں۔

”إِنْ تُهْمِلُهُ“ حضرت ناظم رحمہ اللہ نے ”اِذَا“ (جس کا معنی یقین ہے) کی جگہ ”إِنْ“ لانا پسند کیا ہے جو شک کا معنی دیتا ہے کیونکہ جس پر داخل ہوا ہے اس میں شک ہے۔ ”تُهْمِلُهُ“ مضارع ہے جس کی مصدر ”أَهْمَالٌ“ ہے یہ خطاب کا صیغہ ہے۔ ”شَبَّ“ جب بچہ بالغ ہو جائے یا معنی ”إِنْ شَبَّابَةٌ“ ہے۔ حرف ”عَلَى“ یا تو ”إِلَى“ کے معنی میں ہے اور ”شَبَّ“ سے متعلق ہے یا اپنے معنی پر محذوف سے متعلق ہے یعنی حریص اور اس پر چمٹ کر رہنے والا یا ”مَعَ“ کے معنی میں ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے فرمان میں ہے: ”وَيُطْعَمُونَ الطَّعَامَ عَلَى حُبِّهِ مِسْكِينًا وَيَتِيمًا وَأَسِيرًا“ (سورۃ الدھر آیت: ۸)۔

”حُبَّ“ کا معنی تو معلوم ہی ہے ”الرِّضَاعُ“ (راء پرز بر اور زیر) بچے کا اپنی ماں کا دودھ پینا پہلے بزرگ فرماتے ہیں کہ زیادہ دودھ پینے سے طبیعتیں خراب ہو جاتی ہیں۔

”إِنْ تَفْطِمُهُ“ کا عطف ”إِنْ تُهْمِلُهُ“ پر ہے یہ ”الفطم“ سے مضارع ہے اور خطاب کا صیغہ ہے، یعنی ”تم اس کا دودھ چھڑا دو“۔ ”يَنْفِطِمُ“ یہ باب انفعال سے مضارع غائب کا صیغہ ہے اور اس کی ضمیر طفل کی طرف ہے۔

شعر کا مطلب یہ ہے کہ بچہ آسانی سے دودھ چھوڑ دیتا ہے۔ اس کا حاصل یہ ہے کہ اگر آدمی انتہائی محبت کی بناء پر بچے کا دودھ نہیں چھڑاتا تو بچہ تین سال تک دودھ پی سکتا ہے جیسے کچھ فقہاء نے بتایا ہے پھر اگر اسے روکا نہ جائے تو بچہ بالغ ہونے تک دودھ میں دلچسپی لیتا رہے گا پھر بڑھاپے تک پیتا چلا جائے گا ماں دودھ نہ دے گی تو ماں کے منہ پر سخت تھپڑ مار دے گا کیونکہ اللہ تعالیٰ نے ماں کے دودھ میں کھانے پینے والی ہر چیز کی لذت رکھی ہے چنانچہ جب وہ اسے نہیں پلائے گی تو وہ ماں کو طمانچہ بھی مار سکتا ہے اور ”نفس“ بھی یونہی ہے کہ اگر تم اسے گناہوں سے نہیں روکو گے تو جوان ہونے تک گناہ کرتا اور ان میں دلچسپی لیتا رہے گا اور گناہ اسے مزہ دیں گے چنانچہ گناہ کرنے میں ان کا مزہ بڑھتا جائے گا اور وہ آدمی کو یوں تباہ کرے گا کہ اس کا ایمان ہی نہ رہے گا۔ (معاذ اللہ)

سب سے گھٹیا تشبیہ کون سی؟

اگر تم کہو کہ اس شعر میں جو تشبیہ ہے، وہ گھٹیا اور کم درجے کی ہے کیونکہ علماء بتاتے ہیں کہ جب تشبیہ ایسی ہو کہ اس میں تشبیہ کا پتہ دینے والی کوئی شے نہ ہو تو یہ استعارہ اور بلاغت و فصاحت میں بہترین تشبیہ ہوگی اور اگر یوں ہو کہ صرف مشبہ اور مشبہ بہ کا ذکر ہو تو یہ تشبیہ بلیغ ہوگی جو استعارہ سے کم درجہ ہوگی، اگر اس میں مشبہ، مشبہ بہ اور حرف تشبیہ ہو اور تشبیہ کا سبب بھی بتایا گیا ہو تو یہ گھٹیا درجے کی تشبیہ ہوگی جو تشبیہ بلیغ سے بھی نکمی ہوگی چنانچہ بلیغ لوگوں کے ہاں یہ تشبیہ ایسی ہوگی جیسے کبوتر کی گنگناہٹ اور دروازہ بجنے کی نرم آواز ہوتی ہے، یہ تشبیہ فصاحت کو فصاحت رہنے نہیں دے گی اور جو تشبیہ یہاں موجود ہے، وہ ایسی ہی ہے کیونکہ حضرت ناظم نے یہاں مشبہ یعنی نفس، مشبہ بہ یعنی طفل، حرف تشبیہ جو "ك" ہے اور وجہ شبہ جو کسی شے کی دلچسپی رکھتے ہوئے جو ان ہوگا لیکن اس شرط پر اسے روکا نہ جائے اور وہ دودھ چھڑانے پر چھوڑ دے اور سمجھدار ناظم رحمہ اللہ سب سے بڑھ کر فصیح ہوتے ہوئے یہی تشبیہ لائے ہیں تو اس کی وجہ کیا ہے؟

ہم جواب میں کہیں گے کہ ان کا یہ طریقہ اپنانا اس بناء پر ہے کہ یہ مقام آسانی سے سمجھ آسکے، انہیں بات سمجھا دینے کی بڑی خواہش ہوتی ہے جسے ہر ایک عالم جانتا ہے۔



شعر (۱۹)

فَاصْرِفْ هَوَاهَا وَحَاذِرْ أَنْ تُؤَلِّيَهُ

إِنَّ الْهَوَىٰ مَا تَوَلَّىٰ يَصِمْ أَوْ يَصِمُ

(ترجمہ:) ”تم نفس کو اپنی مرضی نہ کرنے دو اور اسے اپنے اوپر قابو پانے کا موقع نہ دو کیونکہ نفسانی خواہش بڑھ جانے پر یا تو نفس کو مار ڈالتی ہے یا بے کار کر دیتی ہے۔“
جب انسانی نفس تربیت پانے اور پسند کے کام چھوڑنے میں بچے کی طرح ہے تو حضرت ناظم رحمہ اللہ اب اسے حکم دے کر تربیت کرتے ہیں چنانچہ فرماتے ہیں: ”فاصرف الخ“۔

تحقیق الفاظ

فاء فصیحیہ ہے یعنی جب تم نے نفسِ امارہ کا حال دیکھ لیا ہے کہ اگر تم اسے اپنے حال پر چھوڑتے ہو تو وہ کئی بُرائیاں کرنے پر تیار کر دے گا لیکن اگر اس کی تربیت کرو گے (سنوارو گے) تو بچے کی طرح تربیت کو مان لے گا لہذا اسے روک دو اور اپنی مرضی نہ کرنے دو۔

”إِصْرِفْ“، ”صَرَفَ يَصْرِفُ“ سے ”امر“ ہے معنی: روکو اور کچھ اسکا معنی ”تبدیل کر دو“ کر دیتے ہیں پہلی صورت میں تو یہ ”هَوَى يَهْوَى“ کی مصدر ہے باب ”عَلِمَ“ سے جس کا معنی کسی چیز کی طرف جھکاؤ کرنا اور مرضی کی چیزوں کا مزہ لینا ہے کیونکہ نفس کو جب اپنے حال پر چھوڑ کر مرضی کرنے دی جائے تو وہ نیکی کی بجائے بُرائی کا رخ کرے گا کیونکہ یہ ”امارة بالسوء“ (بُرائی پر اُکسانے والا) ہے اور دوسری صورت میں مصدر ہے جو مفعول کا معنی دیتی ہے یعنی وہ چیز جس کی خواہش ہوتی ہے جیسے شاعر کہتا ہے:

هَوَايَ مَعَ الرَّكْبِ الْيَمَانِيِّنَ مُصْعِدُ

جَنِيْبٌ وَجُثْمَانِيٌّ بِمَكَّةَ مُوْتَقٌ

”میری خواہش یمانی سواروں کے ساتھ چڑھتی ہے پہلو سے ہانگی جاتی ہے بدن سے تعلق ہے لیکن مکہ میں قید کی ہوئی ہے۔“

تو معنی یہ ہوگا کہ نفس کو بُری و ناپسندیدہ شے سے روک کر اس چیز پر لگا دو جسے شرع پسند کرتی ہے۔ اصل میں کلام یہ ہوگی کہ نفس کو اس کی مرضی سے روک دو یا یوں ہوگی کہ مرضی کو اس سے روک

”اَنْ تُوَلِّيَهُ“، ”اَنْ“ مصدر یہ ہے ”تُوَلِّيَهُ“ (یاء پر زبر) ”وَلَّاهُ“ کے لفظ سے مضارع ہے (شد کے ساتھ) یہ اس وقت کہتے ہیں جب کوئی کسی کو والی بنائے یا معنی ہے: ذمہ داری لینا اور کسی کام کو اپنے اوپر لازم کرنا یا غلبہ کا معنی ہے۔ یہ خطاب کے صیغہ سے اسے خطاب ہے جسے ناظم نے پہلے شعر میں اپنے سے الگ فرض کر رکھا ہے اس کی ضمیر ”ہوئی“ کی طرف جاتی ہے کیونکہ یہ مصدر ہے جو مذکر اور مؤنث ہوتی ہے۔

”اِنَّ الْهَوٰى“ ڈرنے کے حکم کا سبب ہے اصل میں ”لَاِنَّ الْهَوٰى“ ہے چنانچہ اس میں قیاس کو ترتیب دیا جاسکتا ہے جو یوں ہوگا: خواہش کو قابو دینے سے پرہیز کرنا تم پر لازم ہے کیونکہ یہ قابو پالے تو مار دیتی یا بیکار کر دیتی ہے نتیجہ یہ ہوگا کہ خواہش کو قابو دینے سے بچنا تم پر لازم ہے۔

”مَا تَوَلَّٰى“ میں ”مَا“ شرطیہ زمانیہ ہے جو ”كَلَّمَا“ یا ”اِنَّ“ شرطیہ کا معنی دیتا ہے۔ ”تَوَلَّٰى“ فعل ماضی ہے ضمیر ”ہوئی“ کی طرف لوٹی ہے یعنی جب بھی تمہاری نفسانی خواہش تم پر قابو پالے گی یا معنی یہ ہوگا کہ اگر تمہاری نفسانی خواہش غالب ہو اور تم پر قابو پالے۔

”يُضْمِ“، ”اَصْمٰى يُضْمِى“ سے ہے عرب ”اَصْمٰى الصَّيْدَ“ اس وقت کہتے ہیں جب کوئی اسے موقع پر قتل کر دے یعنی ہلاک کر دے آخر سے بوجہ جزم یاء حذف ہوئی ہے کیونکہ وہ ”مَا“ شرطیہ کی وجہ سے جزم والا ہو گیا ہے۔

حرف ”اَوْ“ کے معنی

”اَوْ يَصِمُ“ میں حرف ”اَوْ“ عطف کیلئے ہے تاہم یہ کئی معنی دیتا ہے جیسے اصولی علماء بتاتے ہیں۔ عام طور پر یہ شک کے موقع پر آتا ہے یا تشکیک (شک پیدا کرنا) کے معنی میں آتا ہے مرضی کرنے یا اختیار دینے کے معنی میں آتا ہے جیسے ”جَالِسِ الْفُقَهَاءِ اَوْ الْمُحَدِّثِينَ“ (فقہاء یا محدثین میں سے جن کے ساتھ چاہو بیٹھا کرو)۔ کبھی ”بَلْ“ کے معنی میں آتا ہے جیسے فرمان الہی ہے: ”فَهِيَ كَالْحِجَارَةِ اَوْ اَشَدُّ قَسْوَةً“ (سورۃ البقرہ آیت: ۷۴) (یہ پتھر بلکہ اس سے بھی سخت ہے)۔ کبھی ”حَتَّى“ کے معنی میں آتا ہے جیسے فرمان الہی ہے: ”لَيْسَ لَكَ مِنَ الْاَمْرِ شَيْءٌ اَوْ يَتُوبَ عَلَيْهِمْ“ (سورۃ آل عمران آیت: ۱۲۷)۔ کبھی ”الِی“ کے معنی میں آتا ہے جیسے ”لَا لَزِمَنَّكَ اَوْ تُعْطِيَنِي حَقِّي“ (میرا حق دینے تک میں تمہارے پیچھے لگا رہوں گا)۔ کبھی ”اِلَّا اَنْ“ کا معنی دیتا ہے لیکن یہ

اس وقت جب اس کے بعد مضارع منصوب ہو اور اس سے پہلے ایسا مضارع موجود نہ ہو جیسے امر و القیس شاعر کہتا ہے:

فَقُلْتُ لَهُ لَا تُبِكْ عَيْنِكَ إِنَّمَا

تُحَاوِلُ مُلْكًَا أَوْ تَمُوتُ فَتُعْذِرًا

”میں نے اس سے کہا کہ آنکھوں سے آنسو نہ بہاؤ، مرو گے نہیں تو ملک پر قبضہ کر لو گے ایسے میں تم مجبور ہو گے۔“

اور جو یہاں آیا ہے وہ شک کا معنی دیتا ہے اسے ہر ایک جانتا ہے۔

”يَصِمُ“ مضارع ہے ”وَصَمَهُ“ عرب اس وقت کہتے ہیں جب کوئی کسی کو غلط کر دے۔ ان

دونوں فعلوں کے مفعول شعر کی ضرورت سے حذف ہوئے عبارت یوں ہے: ”يُصِمُكَ وَيَجْعَلُكَ ذَا عَيْبٍ فِي النَّاسِ“۔

”يُصِمُ“ اور ”يَصِمُ“ میں دونوں کی شکل پوری طرح ایک جیسی ہے (علم بدیع والے اسے ”جناس تام“ کہتے ہیں) یہ ہر ایک جانتا ہے۔

شعر کا حاصل مطلب یہ ہے کہ ”اے مخاطب! جب تم جانتے ہو کہ نفس ”چھوڑ دینے“ کو قبول کر لیتا ہے تو اسے حرص اور گناہوں کے مزے لینے سے روک دو اور حرص کو عقل کی حکومت پر قابو پانے

سے روک دو، عقل کو خواہش کے قبضے میں نہ دو کیونکہ یہ مولیٰ سے دور ہو جانے کا سبب ہے اس لئے کہ خواہش کے قابو پانے پر تم اسی وقت ہلاک ہو جاؤ گے یا یہ معنی ہے کہ وہ تمہیں گمراہ کر کے عیب دار کر

دے گا جیسے اللہ تعالیٰ نے فرمایا: ”وَلَا تَتَّبِعِ الْهَوَىٰ فَيُضِلَّكَ عَنْ سَبِيلِ اللَّهِ الْآيَةَ“ (سورۃ ص آیت: ۲۶) (خواہش پر نہ چلو ورنہ یہ تمہیں راہِ خدا سے ہٹا دے گی) ایک اور آیت میں ہے: ”وَمَنْ

أَضَلُّ مِمَّنِ اتَّبَعَ هَوَاهُ“ (سورۃ القصص آیت: ۵۰) (جو اپنی خواہش پر چلے تو اس سے بڑھکر گمراہ کون ہو گا؟) اور پھر حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام نے فرمایا ہے کہ ”زمین پر جس کو بھی پوجا گیا تو اللہ کو سب سے

بڑھ کر ناراضگی خواہش و حرص پر ہے“ (تفسیر روح المعانی، تفسیر سورۃ ص آیت: ۸۸، جلد ۲۳، صفحہ ۳۰۵) اور پھر ایک لمبی حدیث کے آخر میں ہے: ”انسان کو تباہ کرنے والی تین چیزیں ہیں، اپنائی جانے والی بخیلی،

اپنائی جانے والی خواہش اور انسان کا اپنے آپ کو بڑا بنانا) (کنز العمال، کتاب المواعظ، الباب الثانی، جلد ۱۶، صفحہ ۲۰، رقم الحدیث: ۲۳۸۶۰)۔

حضرت ابراہیم بن شیبان رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ میں ایک چھت کے نیچے چالیس سال تک رہا، مجھے مسور کی دال کھانے کی خواہش تھی لیکن مل نہ سکی۔ ایک مرتبہ میرے پاس مسور کی دال لائی گئی جسے کھا کر میں نکل پڑا، اسی دوران میں نے بوتل دیکھی تو سمجھا کہ یہ پینے کا پانی ہے لیکن مجھے بتایا گیا کہ یہ شراب ہے اور اس لمبے گھڑے میں بھی شراب ہے جسے میں نے بہا دیا، شراب والے نے سمجھا کہ میرا یہ کام بادشاہ کے حکم سے ہے اور جب اسے میرے حال کا پتہ چلا تو وہ مجھے ابن طولون کے پاس لے گیا جس نے مجھے دو سو ڈنڈے مارے اور پھر قید کر دیا۔ کچھ عرصہ بعد ابو عبد اللہ مغربی نے میری سفارش کی، جب مجھ پر اس کی نظر پڑی تو پوچھا کہ کون سی غلطی کی ہے؟ میں نے کہا کہ پیٹ بھر دال کھانے پر دو سو ڈنڈے لگے ہیں۔ اس پر کہنے لگا: تم مفت میں چھوٹ گئے ہو۔

حضرت سری رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ تیس یا چالیس سال تک میرا نفس یہ چاہتا رہا کہ انگور کے پانی میں بیج ڈال کر کھاؤں لیکن میں کھانا نہ سکا۔

رسالہ قشیرہ میں حضرت ابو تراب نخشی رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ میرے نفس نے ایک مرتبہ کے علاوہ مرضی کی چیز کھانا نہیں چاہی۔ میں سفر میں تھا کہ دل نے روٹی اور انڈا کھانے کی خواہش کی، اسی دوران میں ایک بستی کو گیا جہاں کے لوگوں نے مجھے پکڑ لیا اور چور سمجھا چنانچہ مجھے ستر کوڑے مارے، پھر پہچان کر معذرت کی، ان میں سے ایک شخص مجھے گھر لے گیا اور پھر روٹی کے ساتھ انڈا میرے سامنے لا رکھا جس پر میں نے کہا کہ ستر کوڑے تو کھائے، اب اسے کھا لوں۔ الخادمی علی الطریقہ میں یونہی لکھا ہے۔

ایک روایت یوں ملتی ہے کہ بڑی سلطنت کا ایک بادشاہ تھا۔ رمضان المبارک میں اس کی عادت تھی کہ سراہنے والوں اور بھانڈوں کو حکم دیتا تھا کہ عصر کے بعد مغرب تک روزانہ اس کے سامنے طنبور اور مزامیر جیسے باجے بجاتے رہیں تاکہ یہ وقت خوشی میں گزر جائے اور اسے بھوک پیاس کی تکلیف نہ ہو کیونکہ اس وقت میں روزے کی وجہ سے روزہ دار بھوک پیاس کی بناء پر دل میں تکلیف محسوس کرتا ہے اور اگر یہ وقت خوشی سے گزر جائے تو اسے بھوک پیاس کی تکلیف کا پتہ نہیں چلتا۔

اسی دوران ایک شیخ کامل وہاں سے گزرے اور ان کی حالت دیکھی تو دل میں کہا کہ میں جا کر اس رو کے کام کو بند کرتا ہوں اور بادشاہ کو غفلت سے جگاتا ہوں کیونکہ یہ افطاری کا وقت ہے جو رحمت اور بخشش کا ہوتا ہے اور کسی مسلمان کیلئے مناسب نہیں کہ اس وقت میں حرام کام کرتا رہے اور پھر غلط

کام سے روکنا ہر ایک پر لازم ہے۔

شیخ بادشاہ کے گھر میں پہنچے اور جا کر سر اہنے والوں کو پیٹ کر ان کے مزامیر، طنبور، باجے توڑ ڈالے، بادشاہ محل کے اوپر سے یہ سب کچھ دیکھ رہا تھا۔ وہ شیخ کے اس کام سے ناراض ہوا اور خادموں کو انہیں پکڑنے کا حکم دیا۔ انہوں نے پکڑ کر اس کے سامنے لاکھڑا کیا۔ اس نے پوچھا کہ اے شیخ! آپ نے ایسا غلط کام کیوں کیا؟ انہوں نے کہا کہ یہ کام منع ہے اور ہمیں حکم ہے کہ ایسے غلط کام کو روک دیں۔ اس پر بادشاہ نے کہا کہ آپ کو میرا خوف نہیں تھا؟ شیخ نے کہا کہ میرے ساتھ جو بھی کرو گے، میں اس پر صبر کروں گا جیسے اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے کہ ”وَاصْبِرْ عَلَىٰ مَا أَصَابَكَ“ (سورۃ لقمان، آیت: ۱۷) (تکلیف پہنچنے پر صبر کرو) میں تو تم سے بالکل نہیں ڈروں گا کیونکہ تم میرے بندے کے بندے ہو۔

اس پر بادشاہ یک اردگرد کے بڑے لوگوں نے کہا: افسوس کہ شیخ نے عقل سے کام نہیں لیا۔ شیخ نے کہا کہ میں نے بے عقلی سے کام نہیں لیا بلکہ حقیقت یہ میرے بندے کا بندہ ہے کیونکہ انسان دو طرح کا ہوتا ہے، ایک وہ جو اپنے نفس کو مغلوب کر لیتا ہے کیونکہ وہ اپنے نفس پر قابو رکھنے والا ہوتا ہے، وہ اسے جس عبادت کی طرف موڑنا چاہے موڑ سکتا ہے اور ایک وہ جو اپنے آپ پر اسے غالب رکھتا ہے اور بدن کی بادشاہی کا والی ہوتا ہے تو اے بادشاہ! بتاؤ کہ تم کس قسم کے ہو؟

بادشاہ نے سوچ کر کہا کہ دوسری قسم کا ہوں چنانچہ شیخ نے کہا کہ نفس میرا غلام اور تم نفس کے غلام ہو لہذا تم میرے غلام کے غلام ہوئے۔

بادشاہ نے شیخ کی بات مانی اور توبہ کر کے سیدھی راہ پر آ گیا۔



شعر (۲۰)

وَرَاعِيهَا وَهْيَ فِي الْأَعْمَالِ سَائِمَةٌ

وَأَنَّ هِيَ اسْتَحَلَّتِ الْمَرْغَى فَلَا تُسِمُ

(ترجمہ:) ”جب تمہارا نفس نیک کاموں میں لگا ہوا ہو تو اس پر دھیان دیتے ہی رہو لیکن

اگر وہ ان کاموں میں (تکبر و فخر جیسی) کوتاہیاں کرنے لگے تو اسے کرنے نہ دو۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ جب نفس کو خواہشوں سے روک چکے تو تَخْلِيَةٍ (الگ ہو جانا) کا بیان شروع

کر دیا جسے ”ریاضت“ کہتے ہیں اور یہ بات اپنی جگہ ثابت ہو چکی ہے کہ نفس کی ریاضت کا مطلب

اسے اس کی خواہشوں سے روکنا اور اپنے مولا کی عبادت پر مجبور کرنا ہے چنانچہ فرمایا: ”وراعها الخ“۔

تحقیق الفاظ

”واو“ عاطفہ ہے اس میں انشاء کا انشاء پر عطف ہے، یعنی ”حَاذِرٌ“ کے جملہ پر۔ ”رَاعٍ“ امر

ہے ”رَاعِيٌ مُرَاعَاةً“ سے ”رَعَى“ مصدر ہے جس کا معنی گھوڑے کو گھاس کی طرف بھیجنا

لیکن ذرا دھیان رکھ کر تا کہ کسی غیر کے علاقے میں نہ چلا جائے۔ مَوْنَتِ کی ضمیر ”نفس“ کی طرف لوٹتی

ہے چنانچہ اس میں استعارہ بالکنایہ ہے، گویا نفس کو ذہن میں ”دَابَّةً“ کے ساتھ اس بات میں تشبیہ دی

کہ گھاس چرانے کے وقت اس پر دھیان رکھنے کی ضرورت ہوتی ہے اور پھر اسے عبادت میں استعمال

کرنے کی خاطر تشبیہ دی، پھر ذہن میں ”دَابَّةً“ کو ”نفس“ سے تشبیہ دی اور ذہن میں ”دَابَّةً“ کو ذکر کر

کے نفس مراد لیا اور پھر خارج میں مشبہ کو ذکر کر کے اسی کو مراد لیا۔

یہاں ”رَعَى“ کو نفس کیلئے ثابت کرنے میں تَخْيِيلِيَّةٌ ہے۔

”وَهْيَ“ یعنی نفس، ہاء کو شعر کی ضرورت کیلئے ساکن کیا گیا اور یہ بھی کہتے ہیں کہ ضرورت پڑنے

پر ”ہو“ اور ”ہی“ کو ساکن کرنا جائز ہوتا ہے جیسے امام قالون اور کسائی وغیرہ کرتے ہیں اور ”واو“

حالیہ ہے۔

”فی الاعمال“ کا تعلق ”سَائِمَةٌ“ سے ہے۔ اعمال سے مراد نیک عمل ہیں لیکن چونکہ بُرے

کاموں میں کوئی فائدہ نہیں ہوتا، اس لئے وہ عمل ہی شمار نہیں ہوتے۔

”سَائِمَةٌ“ مبتداء کی خبر ہے اور یہ لفظ ”سَامَتِ الْمَاشِيَةَ“ سے لیا گیا ہے، جب وہ چرتے

ہوئے چراگاہ کی طرف نکلے چنانچہ ”السائمہ“ وہ حیوان ہے جو چراگاہ کی طرف بھیجا جائے تاکہ چلے پھرے خوش ہو اور کھائے پئے چنانچہ ”وہی فی الاعمال سائمۃ“ میں جمہور علماء کے نزدیک تشبیہ بلوغ ہے اور کچھ علماء کے نزدیک استعارہ ہے۔

اس کا معنی یہ ہے کہ نفس نیک عملوں میں ”سائمہ“ کی طرح یوں ہے کہ ان میں کھائے پئے اور اسے مرضی کی عبادتوں میں سکون ملے اور نہ چرے تو اپنی عادت پر رہے۔

”وَإِنْ هِيَ اسْتَحَلَّتِ الْخَ“ میں ”واو“ استیناف کیلئے ہے اور یہ جملہ مقدر سوال کا جواب ہے جو یوں ہے کہ کیا ہم نفس کو اعمالِ صالحہ میں ہر وقت اور ہر حال کے اندر چرنے کیلئے چھوڑ دیں؟ ناظم نے فرمایا کہ نہیں! بلکہ ”ان ہی استحلف الخ“۔

یہ بھی ہو سکتا ہے کہ یہ ”واو“ عاطفہ ہو اور جملہ شرطیہ کا عطف جملہ ”رَاعِيهَا“ پر ہو۔

اگر کہا جائے کہ اس صورت میں جملہ خبریہ کا عطف انشائیہ پر ہوگا اور یہ غلط ہے تو ہم کہیں گے کہ یہ لازم نہیں آتا یہ اس صورت میں لازم آتا ہے جب جزاء انشائیہ نہ ہو کیونکہ علماء نے واضح طور پر لکھا ہے کہ اس شرطیہ کا خبریہ اور انشائیہ ہونا جزاء کے تابع ہوتا ہے اور جزاء یہاں انشائیہ ہے جو سب کو دکھائی دیتی ہے۔

”إِنْ هِيَ اسْتَحَلَّتِ“ کا جملہ طلب میں اللہ تعالیٰ کے اس فرمان سے ملتا جلتا ہے: ”وَإِنْ أَحَدٌ مِّنَ الْمُشْرِكِينَ اسْتَجَارَكَ“ (سورۃ التوبہ آیت ۶) اور ”وَإِنْ اسْتَحَلَّتِ“، ”استحلت“ ہی ہے اور ”اسْتَحَلَّتِ“ کا اصل ”اسْتَحَلَّتِ“ ہے اسے ”اسْتَحَلَّى الشَّيْءَ“ سے لیا گیا ہے جس کے معنی ہیں: اس نے شمار کیا تو دیکھا کہ وہ بیٹھا ہے۔

”الْمَرْعَى“ (میم پر زبر) چرنے کی جگہ اس سے واجب اور مستحب چیزوں کی بجائے نفل مراد ہیں کیونکہ یہ دونوں قسمیں مٹھاس کی وجہ سے چھوڑنا واجب نہیں سمجھتے جیسے ”زبدہ“ کے مصنف نے کہا ہے چنانچہ ”مَرْعَى“ میں مجاز اور استعارہ ہے جسے یوں بیان کر سکتے ہیں کہ ناظم نے نیک عملوں اور نفلی عبادتوں کو اس بارے میں ”مَرْعَى“ سے تشبیہ دی کہ ان سے فائدہ اٹھایا جاتا ہے اور ”مَرْعَى“ کو اعمالِ صالحہ کے مفہوم کیلئے استعارہ کیا گیا پھر ”مَرْعَى“ کو ذکر کر کے اعمالِ صالحہ مراد لئے گئے۔

اور ”لَا تُسِمُ“ نہیں حاضر کا صیغہ ہے ”أَسَامَ“ سے یہ اس وقت کہتے ہیں جب کوئی گھوڑا چراگاہ کی طرف نکلے جزم کی بناء اس سے ”یاء حذف کر دی گئی“ معنی یہ ہوگا کہ تم اپنے نفس کو اس میں باقی نہ

رکھو بلکہ اسے جھڑکو اور روک دو۔

ہو سکتا ہے کہ اس شعر میں استعارہ تمثیلیہ ہو اور وہ یوں کہ نفس میں موجود عقلی امروں میں سے ایک ہیئت کو لیا جائے کہ وہ نفس پر نگاہ رکھتا ہے، وہ اعمال کے درمیان گویا چرتا ہے، عبادت میں لذت پاتا ہے اور اعمال اس کی گویا چراگاہ ہیں تو اس نے اس ہیئت کو اس ہیئت سے تشبیہ دی جو محسوس چیزوں سے چھینی ہوئی ہے یعنی حیوان کا چراگاہ میں چرنا، اس میں اس کا لذت حاصل کرنا، حیوان کے مالک کا اس بات میں اس کی خبر رکھنا کہ ان دونوں میں سے ہر ایک کا دو چیزوں میں پایا جانا جن میں سے ایک حفاظت ہے، اگر نفس حفاظت کرے اور دوسرا حفاظت نہ کرنے کی وجہ حفاظت کا نہ ہونا اور نقصان ہونا ہے، پھر محسوس امور میں سے چھینی ہوئی ہیئت کو امور غیر محسوس سے چھینی ہوئی ہیئت کیلئے استعارہ کیا چنانچہ مشبہ کو ذکر کر کے مشبہ بہ کا ارادہ کیا گیا۔

شعر کا حاصل معنی یہ ہے کہ نفس کی حفاظت کرو اور اس پر دھیان رکھو کہ وہ نفس اعمالِ صالحہ میں چرنے والے کی طرح ہے، اب اگر تم اس کا دھیان رکھ کر اس کی اس بات میں حفاظت کرو گے کہ انہیں چراتے ہوئے تکلیف اور فساد سے بچاؤ گے تو یہ نیک عمل کرے گا اور اگر اسے رہنے دو گے تو اس طرف جائے گا جو اس کی عادت ہے اور اپنے کام سے نفس والے کو بُرا نقصان دے گا اور جب نفس بعض نفلوں سے پیار کرے گا اور انہیں میٹھا سمجھے گا تو اسے ان کی عادت پڑ جائے گی، اس لئے تم اس نفس کو روکو، اسے اپنے حال پر نہ چھوڑو اور ڈانٹتے ہوئے روک دو کیونکہ نفس اگر کسی عبادت میں انتہائی لذت محسوس کرے تو اس میں یہ بے فرمانی ہوگی کہ وہ تکبر دکھلاوے علاوہ اپنوں اور دنیا والوں میں فخر کر رہا ہوگا تو لازم ہوگا کہ تم اسے ایسی عبادت میں لگا رہنے دو جس میں وہ مٹھاس نہ پائے کیونکہ اگر عبادت کو عادت بنا لیا جائے تو اس میں نفع اور فائدہ نہ ہوگا۔

ایک صالح بزرگ کہتے ہیں کہ میں نے بہت سے حج کئے تو مجھ پر یہ بات کھل گئی کہ یہ تو میرے حصے میں لکھی ہیں اور اس کی وجہ یہ تھی کہ میری والدہ نے ایک دن کہا کہ مجھے پانی کا ایک گھونٹ پلاؤ، یہ بات میرے نفس کو بھاری لگی جس سے مجھے پتہ چلا کہ ان تجوں میں میرا نفس کی بات ماننا، میرے نفس کی شان اور حصے کی وجہ سے تھا کیونکہ اگر میرا نفس پر خلوص ہوتا تو مجھے شرع کے حکم پر چلنا مشکل معلوم نہ ہوتا۔ بریقہ کتاب میں یونہی لکھا ہے۔

اس شعر کا صوفیانہ معنی یہ ہے کہ اے اللہ کی معرفت والے! اپنے نفس کو اللہ میں فناء کر دے اور

اللہ کی رضا حاصل کر، اعمال ہی میں نہ لگا رہے کیونکہ عملوں میں لگے رہنا، صالح اور زاہد مردوں کا کام ہے، واجب الوجود کے دھیان میں غرق ہو جا، قعود و سجد کو دیکھنا چھوڑ دے کیونکہ اگر تو ان میں لگا رہے گا تو پردے میں ہو جائے گا اور اگر انہیں چھوڑ کر اوپر پہنچنے کی کوشش کرے گا تو اللہ کو پسند آئے گا کیونکہ ان عملوں اور دلیلوں کے اوپر کمال حاصل کرنے کا اصول موجود ہے اور وہ حقیقی وصال ہے کیونکہ نفس اپنی خباثت کی وجہ سے یہ پسند کرتا ہے کہ تم ذکر و فکر اور سوچ بچار میں لگے رہو، تمہیں پھر جانا لازم ہے اگرچہ تحمل کے ساتھ ہو۔ اسے ذہن میں رکھو۔



شعر (۲۱)

كَمْ حَسَّنْتَ لَذَّةَ لُحْمٍ قَاتِلَةً
مِنْ حَيْثُ لَمْ يَدْرِ أَنَّ السَّمَّ فِي الدَّسَمِ

(ترجمہ:) ”انسانی نفس آدمی کیلئے کئی مار دینے والی مزیدار لذتوں اور خواہشوں کو سجا رکھتا ہے کیونکہ وہ یہ بات جانتا ہی نہیں کہ زیادہ روغن والے کھانے میں زہر بھی مل سکتا ہے۔“

جب حضرت ناظم رحمہ اللہ نے پہلے بتا دیا کہ انسانی نفس وعظ کو قبول کر لیتا ہے، خواہشات سے ہٹ جاتا ہے، عملوں میں لگنے کو کہتا ہے اور اگر لگنے میں لذت پائے تو اسے روکتا ہے اور چونکہ روکنے کی وجہ ظاہر نہیں بلکہ پوشیدہ تھی تو اسے اپنے قول ”كَمْ حَسَّنْتَ لُحْمِ الْخ“ کے ذریعے بیان کیا۔ اس میں قیاس یوں بنے گا: جب یہ ثابت ہوا کہ نفس بندے کے لئے کتنی ہی مار ڈالنے والی لذتیں سجاتا ہے اور وہ اسے ویسے ہی نہیں جانتا جیسے وہ یہ بات نہیں جانتا کہ کئی مرتبہ زیادہ روغن والے کھانے میں زہر بھی ملی ہو سکتی ہے لہذا نفس اگر چراگاہ میں لذت محسوس کرے تو اسے نہ روکے لیکن پہلا جملہ مانا ہوا ہے تو دوسرا بھی ویسا ہی ہوا۔

تحقیق الفاظ

پھر یہ سمجھو کہ ”كَمْ“ خبریہ ہے، استفہامیہ نہیں اور ان دونوں میں فرق یہ ہے کہ ”كَمْ“ خبریہ بولنے والا خبر دینے والا ہوتا ہے جبکہ ”كَمْ“ استفہامیہ بولنے والا کچھ پوچھ رہا ہوتا ہے اور پھر ”كَمْ“ خبریہ کے بعد خبر دی جا رہی ہوتی ہے جبکہ ”كَمْ“ استفہامیہ کے بعد انشاء ہوتی ہے، ”كَمْ“ خبریہ کی تمیز عام طور پر مجرور ہوتی ہے جبکہ ”كَمْ“ استفہامیہ کی تمیز عام طور پر منصوب ہوتی ہے، یہاں یہ ”كَمْ“ مصدر ہونے کی وجہ سے اس مقام پر ہے جہاں کوئی مصدر ہوتی تو اس پر نصب ہوتی، یعنی اصل یوں ہوتا: ”كثيْرًا“ (کئی مرتبہ) یہ ”كَمْ مَرَّةً“ کے معنی میں ہوتا۔

”حَسَّنْتَ“ کا لفظ ”تحسين“ سے ماضی ہے جو مؤنث کا صیغہ ہے جس کی ضمیر ”نفس“ کی طرف جاتی ہے، ”حَسَّنْتَ“ کا معنی ہے کہ نفس نے ظاہری طور پر خوبصورت بنایا تو معنی یہ ہوگا کہ کئی مرتبہ نفس نے ظاہر میں تکبر اور غرور کو سجا دیا ہوتا ہے تو اس بناء پر ”لَذَّةٌ حَسَّنَتْ“ کا مفعول ہوگا اور محذوف موصوف کی صفت بنے گا یعنی ”شَيْنًا لَذِيذًا“ ہوگا جس سے مراد نفل ہیں اور یہ بھی ممکن ہے

کہ لذیذ شے سے مراد اللہ کے کرم اور رحمت پر غرور کرنا چنانچہ قاضی نے اللہ تعالیٰ کے فرمان ”مَا غَرَّكَ بِرَبِّكَ الْكَرِيمِ“ (سورۃ الانفطار آیت ۶) کے بارے میں کہا ہے کہ اللہ کے کرم پر غرور کر کے گناہ کرنے والا ویسے ہوتا ہے جیسے طبیعت کے بھروسے پر زہری لیتا ہے تو اس صورت میں ”السَّمَّ عَذَابِ الْيَمِّ“ سے استعارہ ہوگا اور ”الدَّسَمِ“ اللہ کے کرم کے ساتھ دھوکا اور غرور کرنے سے استعارہ ہوگا چنانچہ ان دونوں سے استعارہ ترتیب دینے میں غفلت نہ کرو یا ”حَسَّنْتَ“ کا معنی ”عَدْتَ حَسَنًا“ ہے (خوبصورت شمار کیا) اور اس کا مفعول محذوف ہوگا یعنی چراگاہ اور اس کا اصل ”لَذَّةً بِلَذَّةٍ“ تھا پھر حرف جار حذف کیا اور مجرور کو نصب دے دی اور اس کی تنوین مضاف الیہ کے بدلے میں ہوئی جو ”العُجْبُ اور الغُرُورُ“ ہے چنانچہ اس بناء پر یہ معنی ہوگا: کئی مرتبہ نفس نے چراگاہ کو عجب اور غرور کی لذت کی خاطر سجایا۔

”لِلْمَرْءِ“ کا تعلق ”قاتلۃ“ کے ساتھ ہے جسے شعر کی ضرورت کیلئے پہلے ذکر کیا گیا، ”لام“ عمل کو طاقت دینے کیلئے ہے یا اس کا تعلق ”حَسَّنْتَ“ سے ہوگا۔
لفظ ”الْمَرْءِ“ کی تحقیق

مولانا عاصم نے قاموس کے ترجمہ اوقیانوس میں ”الْمَرْءِ“ کے لفظ م میں ”م“ کو تینوں حرکتوں (زبر، زیر، پیش) اور ”راء“ کو سکون سے پڑھا ہے اس کا معنی صرف انسان ہوتا ہے خواہ وہ مذکر ہو یا مؤنث، ایک قول کے مطابق صرف مرد کیلئے آتا ہے لیکن یہاں پر کوئی بھی ہو سکتا ہے۔ اس کے لفظ سے اس کی جمع نہیں آتی، جمع ”رِجَالٌ“ لائی جاتی ہے البتہ ایک قول یہ ہے کہ اس کی جمع ”مَرُؤُونَ“ ہے اس کی مؤنث کیلئے ”مَرْءَةٌ“ کا لفظ تاء تانیث کے ساتھ لایا جاتا ہے، کبھی یہ ”مَرَّةٌ“ آتا ہے جس میں ہمزہ نہیں ہوتا اور ”راء“ پر فتح پڑھی جاتی ہے، کبھی اس کی ابتداء میں ہمزۃ الوصل آ جاتا ہے اور یونہی لام تعریف بھی لے آتے ہیں اور یونہی ”الْمَرْءِ“ کی ابتداء میں ہمزۃ الوصل آ جاتا ہے ایسے وقت میں اگر یہ لفظ حرف تعریف کے ساتھ ملا ہوا نہ ہو تو اس میں تین طریقے ہیں، اول یہ کہ رفع، نصب اور جر کی حالت میں ”راء“ پر ہمیشہ فتح ہوتی ہے دوسرے یہ کہ ”راء“ پر ان تینوں حالتوں میں ہمیشہ ضمہ (پیش) ہوتا ہے اور تیسرے یہ کہ یہ لفظ مُعْرَبٌ ہوتا ہے یعنی اعراب میں آخری حرف کے تابع ہوتا ہے اب اگر اس کا آخر مرفوع ہے تو ”راء“ بھی پیش ہوگی، منصوب ہوگا تو ”راء“ بھی زبر والی ہوگی اور آخر مجرور ہونے کی صورت میں ”راء“ بھی زیر والی ہوگی (”اِمْرَأٌ“، ”اِمْرَاءٌ“ اور ”اِمْرِئٌ“)

لیکن اس پر لامِ تعریف ہو تو ”راء“ ضرور ساکن ہوگی (”الْمَرْءُ، الْمَرْءُ“ اور ”الْمَرْءُ“).

”قَاتِلَةٌ“، ”لَذَّةٌ“ سے حال ہونے کی بناء پر منصوب ہے یا پھر اس کی صفت ہونے کی وجہ سے ”قَتَلَ“ سے یہاں مراد ”ہلاک کرنا“ یعنی ”ملزوم“ کا ذکر کر کے ”لازم“ مراد لیا کیونکہ قتل، زخمی کرنے والے آلہ یا بھاری چیز کے بغیر نہیں ہوتا اور یہاں ایسا کوئی آلہ نہیں۔

حیثیت تین طرح کی

”مِنْ حَيْثُ“ کا تعلق ”قَاتِلَةٌ“ سے ہے ”حیثیت“ کی قید لگانا تین معنوں کیلئے ہوتا ہے: اطلاق، تقید اور تعلیل۔ رہا ”اطلاق“ تو جیسے علماء فرماتے ہیں: ”الْمَاهِيَةُ مِنْ حَيْثُ هِيَ هِيَ“۔ ”تقید“ جیسے کہ علماء فرماتے ہیں: ”عِلْمُ الطِّبِّ مَا يُبْحَثُ فِيهِ عَنِ بَدَنِ الْإِنْسَانِ مِنْ حَيْثُ الصِّحَّةِ وَالْمَرَضِ“ یعنی ہر لحاظ سے بحث نہیں ہوتی بلکہ صرف اس حیثیت سے ہوتی ہے اور ”تعلیل“ جیسے صانع نے کہا کہ تازہ پانی انسان کے بدن کو ٹھنڈا کرتا ہے سبب اور تعلیل یہ کہ یہ ٹھنڈا ہوتا ہے۔

اصل میں ”حَيْثُ“، ”مکان“ کے معنی کیلئے ہے لیکن استعارے کے طور پر یہاں جہت (پہلو، طرف) کا معنی دے رہا ہے۔

امام خفیش کہتے ہیں کہ ”حَيْثُ“ کا لفظ زمانہ بتانے کیلئے آتا ہے اور یہ لازمی طور پر جملہ کی طرف مضاف ہوتا ہے خواہ وہ اسمیہ ہو یا فعلیہ ہاں جملہ فعلیہ کی طرف اس کی اضافت زیادہ ہوتی ہے لیکن کبھی مفرد کی طرف بھی ہوتی ہے چنانچہ اسی وجہ سے یہاں جملہ ”لَمْ يَدْرَ“ کی طرف مضاف ہے۔

”لَمْ يَدْرَ“ کا صیغہ یا تو مجہول ہے (مبنی للمفعول) یا معروف (مبنی للفاعل) ہے جس کا معنی ”لَمْ يَعْلَمْ“ ہے (نہ جانا یا نہ جانا گیا)۔

”السَّمُّ“ کی ”سین“ پر تینوں حرکتیں آتی ہیں لیکن یہاں ایک تعلق کی بناء پر زبر بتائی گئی ہے۔ یہ ایک دواء ہے جو انسان کو فوراً مار ڈالتی ہے اسے فارسی میں ”زہر“ کہتے ہیں اور یہاں مجازاً اور استعارۃً مراد ”گناہ“ ہے جو وہ تکبر اور ریاء کی بناء پر ہوتا ہے اور وہ یوں کہ تکبر اور ریاء کو ہلاک کرنے کی بناء پر ”سَمُّ“ سے تشبیہ دی گئی کیونکہ انسان کے لئے جیسے زہر قاتل ہے ویسے ہی ریاء اور تکبر بھی عملوں کو برباد کر دیتے ہیں جیسے حدیث پاک میں آیا ہے: ”إِنَّ أَخْوَفَ مَا أَخَافُ أُمَّتِي الْإِشْرَاقُ بِاللَّهِ أَمَا إِنِّي لَسْتُ أَقُولُ تَعْبُدُونَ شَمْسًا وَلَا قَمَرًا وَلَا وَثْنَا وَلَكِنْ أَعْمَالًا لِغَيْرِ اللَّهِ“

(کنز العمال، کتاب الاخلاق، حرف الراء، جلد ۳ صفحہ ۱۹۰، رقم الحدیث: ۷۲۸۶) (الحدیث) (مجھے اپنی اُمت پر سب سے بڑھ کر خوف اس بات کا ہے کہ کہیں وہ اللہ کا شریک نہ بنا لیں، بہر حال مجھے یہ نہیں کہنا کہ تم (میرے بعد) سورج، چاند اور بت کو پوجنے لگو گے بلکہ صرف یہ خوف ہے کہ کہیں تم اللہ کے سوا اوروں کیلئے عبادت کے کام نہ کرنے لگ جاؤ) پھر ”سَمَّ“ سے تکبر اور ریاء کو استعارہ کیا گیا چنانچہ ”سَمَّ“ کا ذکر کر کے تکبر اور ریاء مراد لئے گئے۔

”فِي الدَّسَمِ“ ظرفِ مُسْتَقَرِّ (جس کا عامل مذکور نہ ہو) اور ”أَنَّ“ کی خبر ہے اور اس کا جملہ ”لَمْ يُدْرَ“ کا نائبِ فاعل ہے یا پھر مفعول ہے۔ یہ وہ کھانا ہوتا ہے جس میں بہت سی چکنائی ہو اس سے مجازاً اور استعارۃً مراد اعمال اور عبادتیں ہیں چنانچہ اسے یوں کہہ سکتے ہیں کہ اعمال اور عبادتوں کو اس کھانے سے تشبیہ دی گئی جس میں روغن ہو، تشبیہ اس بناء پر کہ اس میں لذت ہوتی ہے اور یہ دل کو بھاتا ہے لیکن وہ نہیں جانتا ہوتا کہ اس میں زہر ہے چنانچہ روغن والے کھانے کو عبادتوں اور اعمال کے مفہوم کیلئے استعارہ کیا گیا، اور کھانا بنانے والا روغن ذکر کر کے اس سے اعمال اور عبادتیں مراد لی گئیں۔ یاد رہے کہ اس شعر میں اس طرح بہت اچھا ”ایہام“ ہے کہ جیسے معنی کے لحاظ سے روغن میں زہر مانی ہے ویسے ہی لفظ ”سَمَّ“ کا لفظ ”دَسَمَ“ کے لفظ میں برتا ہے جیسے اسی طرح کی بات حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کے فرمان میں بتائی گئی ہے اور اسے ہر ایک عالم جانتا ہے۔ ”السَّفَرُ قِطْعَةٌ مِّنَ السَّقَرِ“ (موطا امام محمد، باب النوادر، جلد ۳ صفحہ ۵۰۸) ایک شاعر کہتا ہے:

النَّارُ اخِرُ دِينَارٍ نَطَقَتْ بِهِ

وَالْهَمُّ اخِرُ هَذَا الدِّرْهِمِ الْجَارِي

(ایک ترجمہ:) ”دینار کے آخر (لفظِ نار) میں آگ میں جانے کا سامان ہے جسے میں بتا

رہا ہوں اور غم اس درہم کے آخر میں حاصل ہوتا ہے جو چل رہا ہے۔“

(فنی ترجمہ:) ”نار“ کا لفظ ”دینار“ کا آخری حصہ ہے اور ”ہم“ کا لفظ ”درہم“ کے

آخر میں موجود ہے۔“

شعر سے حاصل ہونے والا معنی یوں ہے کہ ”نفس“ حکم دینے والا دھوکے باز، فریبی اور مکر کرنے والا ہے چنانچہ عام طور پر آدمی کو دھوکا دیتا ہے اور اس کے سامنے خفیہ طور پر خراب کرنے والی چیز کو سجاتا ہے کیونکہ یہ دشمنوں جیسا ہوتا ہے جو مزیدار کھانے میں زہر ملا دیتے ہیں اور آدمی کو برباد کرتے ہیں

اس لئے کہ وہ کھانے کے مزے کی وجہ سے اسے نہیں جانتا، یونہی نفس، عبادت میں تکبر اور دکھلاوا ڈالتا ہے اور اسے برباد کر دیتا ہے کیونکہ وہ تکبر اور دکھلاوے کے مزے کی وجہ سے اس خفیہ بُرائی کو نہیں جانتا، تکبر بہر حال نقصان دیتا ہے خواہ وہ عبادت و اعمال کے علاوہ کسی چیز میں کیا جائے۔ کیا تم اس واقعے کو نہیں دیکھتے کہ جب رسول اللہ ﷺ کے صحابہ میں سے کسی نے (کہتے ہیں کہ وہ حضرت صدیق اعظم رضی اللہ عنہ تھے) جنگِ حنین میں لشکر کی بھاری تعداد اور اسلحہ دیکھا تو اس کثرت اور دبدبے کی بناء پر ناز کرتے ہوئے کہا کہ آج کے بعد ہمیں کبھی شکست نہ ہوگی لیکن جب یہ بات رسول اللہ ﷺ کے کانوں میں پڑی تو آپ نے اسے پسند نہیں فرمایا چنانچہ یہ پہلا غزوہ تھا جس میں اللہ تعالیٰ نے مدد اُٹھالی تھی تاکہ صحابہ کو یہ بتا دیا جائے کہ اللہ کی مدد نہ ہو تو ایسی کثرت کسی کام نہیں آیا کرتی، اللہ تعالیٰ فرماتا ہے: ”لَقَدْ نَصَرَكُمُ فِي مَوَاطِنَ كَثِيرَةٍ وَيَوْمَ حُنَيْنٍ إِذْ أَعْجَبَتْكُمْ كَثْرَتُكُمْ الْآيَةَ“ (سورۃ التوبہ، آیت: ۲۵) (اللہ تعالیٰ نے کئی موقعوں پر یقیناً تمہاری مدد فرمائی بلکہ جنگِ حنین میں بھی جہاں تمہیں اپنی کثرت پر ناز ہوا تھا)۔

رہی ”ریاء“ تو اس بارے میں اسرائیلیات (انجیل و تورات کی باتیں) کو دیکھو چنانچہ ایک شخص نے تین سو ساٹھ کتابیں لکھیں جس پر اللہ تعالیٰ نے ان کے نبی کی طرف یہ وحی فرمائی کہ اسے کہہ دو تم نے پوری سرزمین کو منافقت سے بھر دیا ہے کیونکہ اس میں میرا خیال تک نہیں کیا چنانچہ میں اس میں سے کچھ بھی مانوں گا نہیں۔ اس پر اس نے شرمندگی میں یہ کام چھوڑ دیا، عام لوگوں میں گھل مل گیا اور عاجزی اختیار کر لی جس پر اللہ نے اس نبی کی طرف پھر وحی فرمائی کہ اب اسے کہہ دو تم نے میری مرضی کے مطابق کیا ہے۔

نیز اس حدیث کو دیکھو ”إِنَّ أَخْوَفَ مَا أَخَافُ عَلَيْكُمُ الشِّرْكَ الْأَصْفَرُ“ (مجھے تمہارے بارے چھوٹے شرک کے بارے میں زیادہ خوف رہتا ہے)۔ صحابہ کرام نے پوچھا: یا رسول اللہ! یہ چھوٹا شرک کیا ہے؟ فرمایا: ”ریاء“ چنانچہ قیامت کے دن اللہ تعالیٰ فرمائے گا کہ میں لوگوں کو ان کے عملوں کے مطابق جزاء دوں گا لہذا تم ان لوگوں کے پاس پہنچو جن کے لئے دنیا میں دکھلاوا کیا کرتے رہے ہو (مشکوٰۃ المصابیح، کتاب الرقاق، باب الریاء والسمعة، جلد ۳ صفحہ ۱۴۰، رقم الحدیث: ۵۳۳۴)۔

ایک اور لمبی حدیث میں ہے: اللہ تعالیٰ فرشتوں سے فرمائے گا: ”اس شخص نے عمل کر کے میری طرف کچھ نہیں بھیجا تو اسے سچین جہنم میں ڈال دو“ (احیاء علوم الدین، بیان ذم الریاء، جلد ۳ صفحہ ۳۶۱)۔

شعر (۲۲)

وَإِخْشَ الدَّسَائِسِ مِنْ جُوعٍ وَمِنْ شَبَعٍ
فَرُبَّ فَخْمَصَةٍ شَرُّ مِنَ التُّخْمِ

(ترجمہ:) ”بھوک اور پیٹ بھرنے جیسے خفیہ کاموں (مکروں) پر دھیان رکھا کرو کیونکہ کئی بار ایسا ہوتا ہے کہ بھوک، پیٹ بھرنے سے زیادہ نقصان کرتی ہے۔“
جب حضرت ناظم رحمہ اللہ نے یہ بتا دیا کہ عبادتوں میں نفس کی نگرانی اور دیکھ بھال ضروری ہے تاکہ اس میں خرابیاں پیدا نہ ہو جائیں تو اب ان جائز چیزوں کے بارے میں بتاتے ہیں کہ سالک کیلئے ہر موقع پر ان کا خیال رکھنا بھی ضروری ہے چنانچہ فرمایا: ”وَإِخْشَ النِّخِ“۔

تحقیق الفاظ

”واؤ“ عاطفہ ہے لیکن ممکن ہے کہ استینافیہ معانیہ ہو اور چھپے سوال کا جواب ہو گویا کہ کہا گیا: تم اپنے نفس کو کس طرح درست کر سکتے ہو؟ چنانچہ انہوں نے اس کا جواب دیتے ہوئے فرمایا کہ ”وَإِخْشَ الدَّسَائِسِ النِّخِ“ یعنی انہیں بھوک اور پیٹ بھرنے کے درمیان میں رکھو (نہ بھوکے رہو اور نہ زیادہ کھاؤ)۔

”إِخْشَ“ امر ہے ”خَشِيَ يَخْشَى“ چوتھے باب (”سَمِعَ يَسْمَعُ“) سے یہاں امر کا صیغہ یا تو ادب سکھانے کیلئے ہے یا راہنمائی کیلئے۔

فعل امر کے معنی

کیونکہ علماء نے بتایا ہے کہ امر کے سولہ معنی ہوتے ہیں: (۱) کوئی کام لازم کرنے کیلئے جیسے فرمان الہی ہے: ”أَقِيمُوا الصَّلَاةَ“ (سورۃ البقرہ آیت: ۴۳) (نماز کو لازمی طور پر قائم رکھا کرو)۔ (۲) مناسب کام کرنے کیلئے جیسے فرمان الہی ہے: ”فَكَاتِبُوهُمْ“ (سورۃ النور آیت: ۳۳) (ان سے لکھت پڑھت کر لیا کرو)۔ (۳) ادب سکھانے کیلئے جیسے حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کا ارشاد ہے کہ ”كُلْ مِمَّا يَلِيكَ“ (صحیح مسلم، کتاب الاثریۃ، باب آدام الطعام والشراب، جلد ۲ صفحہ ۴۱۶، رقم الحدیث: ۲۰۲۲) (کھانا اپنے آگے سے کھاؤ)۔ (۴) ارشاد (راہنمائی) کے لیے جیسے فرمان باری ہے: ”وَاسْتَشْهِدُوا“ (سورۃ البقرہ آیت: ۲۸۲) (گواہ بنا لو)۔ (۵) اباحت (کسی چیز کو جائز بتانا) جیسے فرمان الہی ہے: ”كُلُوا“

وَاشْرَبُوا“ (سورۃ البقرہ آیت: ۶۰) (کھاؤ پیو سب جائز ہے)۔ (۶) ڈانٹ کیلئے جیسے ”اعْمَلُوا مَا
 سِئْتُمْ“ (سورۃ فصلت آیت: ۴۰) (جو کچھ کرنا ہے کر لو)۔ (۷) احسان جتانے کیلئے جیسے ”كُلُوا مِمَّا
 رَزَقَكُمُ اللّٰهُ“ (سورۃ الانعام آیت: ۱۳۲) (اللہ کے دیئے سے کھاؤ)۔ (۸) عزت کرنے کیلئے
 ”ادْخُلُوْهَا بِسَلَامٍ“ (سورۃ الحجر آیت: ۴۶) (جنت میں سلامتی کیساتھ داخل ہو جاؤ)۔ (۹) تعجیز (کسی
 کو عاجز کرنے کیلئے) جیسے ”فَاتُوا بِسُوْرَةٍ مِّنْ مِّثْلِهِ“ (سورۃ البقرہ آیت: ۲۳) (قرآن جیسی کوئی
 سورت تو لا کر دکھاؤ)۔ (۱۰) تسخیر (کسی کو نیچا دکھانے کیلئے) جیسے ”كُونُوا قِرَدَةً خَاسِئِينَ“ (سورۃ
 البقرہ آیت: ۶۵) (تمہیں ذلیل بندر بننا ہوگا)۔ (۱۱) اہانت (کسی کو ذلیل کرنے کیلئے) جیسے ”ذُقْ
 اِنَّكَ اَنْتَ الْعَزِيْزُ الْكَرِيْمُ“ (سورۃ الدخان آیت: ۴۹) (اب مزہ تو لو کتنے اچھے اور پیارے لگو گے)۔
 (۱۲) تسویہ (کاموں کو ایک جیسا کرنے کیلئے) جیسے ”اصْبِرْ وَاَوْ لَا تَصْبِرْ وَا“ (سورۃ الطور آیت: ۱۶)
 (صبر کرو یا نہ کرو برابر ہے)۔ (۱۳) دعاء کیلئے جیسے ”اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِيْ“ (الہی تو مجھے بخش لے)۔
 (۱۴) تمنی (آرزو) کیلئے جیسے شاعر کہتا ہے: ”اَلَا اَيْهَا اللَّيْلُ الطَّوِيْلُ اِنْجَلِيْ“ (اے لمبی رات!
 سن لے اور نکھر جا)۔ (۱۵) اِحْتِقَار (کسی کو حقیر بنانا) جیسے فرمان الہی ہے: ”اَلْقُوا مَا اَنْتُمْ مُّلقُونَ“
 (جو کچھ ڈالنا چاہتے ہو ڈال تو دیکھو)۔ (۱۶) تکوین (کسی چیز کو بنادینا) جیسے ”كُنْ فَيَكُوْنُ“ (ہو جا
 بس وہ ہو جاتی ہے)۔

”الدَّسَائِسُ“ جمع ”دَسِيْسَه“ ہے جیسے ”كَتَائِبُ“ جمع ”كِتِيْبَه“ ہے ”دَسِيْسَه“ مکر ہوتا
 ہے اور خفیہ حیلہ اس میں الف لام مضاف الیہ کا عوض اور بدلہ ہے جو ”النَّفْسُ“ ہے۔ اس پر نصب
 اس بناء پر ہے کہ یہ ”اِحْشَ“ کا مفعول ہے۔

”مِنْ جُوعٍ“ ظرف مستقر ہے یا تو یہ ”دَسَائِسُ“ سے حال ہے یا اس کی صفت ہے یعنی
 ”دَسَائِسُ“ سے ڈرو اس حال میں کہ بھوک اور پیٹ بھرنے سے پیدا ہوتی اور نکلتی ہے یا معنی ہے:
 ”الدَّسَائِسُ النَّاشِئَةُ وَالْحَاصِلَةُ الْمُتَوَلِّدَةُ مِنْ جُوعٍ وَمِنْ شَبَعٍ“ یعنی وہ مکر جو پیدا ہوتے اور
 حاصل ہوتے ہیں بھوک اور پیٹ ہونے سے۔

بھوک کیا ہوتی ہے

انسانی ”جُوع“ ایسی حالت کو کہتے ہیں کہ جس کے ذریعے انسان سالن کے بغیر بھی روٹی کھا لیتا
 ہے۔ یہ بھی کہتے ہیں کہ انسانی بھوک کی نشانی یہ ہے کہ مکھی اس کی رال چوس لے اور اسے پتہ بھی نہ

چلے جیسے شاعر کہتا ہے:

فِي حَدِّ جُوعِ الْفَتَى قَوْلَانِ قِيلَ بَانَ
يَشْتَهِي الْخُبْزَ فَرْدًا حَالَةَ الْأَكْلِ
وَقِيلَ إِنَّ وَقَعَتْ فِي الْأَرْضِ رِيْقَتُهُ
شَمَّ الذُّبَابُ وَجَدَّ السَّيْرَ مِنْ عَجَلِ

”انسان کی بھوک آخر کہاں تک ہوتی ہے اس میں دو قول ہیں کہتے ہیں اس کی صورت یہ ہے کھانے کے موقع پر وہ ایک روٹی کی خواہش رکھے اور یہ بھی کہتے ہیں کہ اگر زمین پر اس کی رال گر جائے تو مکھی اسے سونگھ کر فوراً اڑ جائے۔“

”الشَّبَع“ بھوک کا اُلٹ اور نقیض ہے اور ”دسائس“ جو بھوک پیاس سے حال ہوتی ہیں وہ ایسی آفتیں ہیں جو ان دونوں سے پیدا ہوتی ہیں۔ رہی بھوک سے پیدا آفتیں تو وہ یہ ہیں: گرمی، سختی، پگھلنا، سستی، کسی کمال کو حاصل کرنے میں تھک جانا اور بُرے خیال آنا، گھائے کی سوچیں کرنا۔ رہی پیٹ بھرنے پر آفتیں تو وہ ایسی نیند جو سستی کا سبب بنے، دل کی سختی اور غفلت اور لمبی اُمیدوں کی وجہ سے مرجانا، یقین کا نور بجھ جانا، خواہشوں کی کثرت اور اس قسم کی کوتاہیاں جیسی ہیں۔

مجازی طور پر بھوک سے فقیری مراد لی جاسکتی ہے کیونکہ یہ بھوک کا لازمی نتیجہ ہے تو اس صورت میں ”دسائس“ سے مراد تباہ کرنے والی چیزیں ہیں کیونکہ یہ فقیر انسان کو تباہیوں کی طرف دھکیل دیتی ہیں چنانچہ اسی بناء پر حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام نے اس سے پناہ کیلئے اپنی حدیث بتائی ہے کہ ”كَادَ الْفَقْرُ أَنْ يَكُونَ كُفْرًا“ (مشکوٰۃ المصابیح، کتاب الآداب، باب ما تنهى عنه من التهاجر، جلد ۳ صفحہ ۸۲، رقم الحدیث: ۵۰۵۰) (فقیری جلد ہی کفر بن سکتی ہے)۔

دوسری حدیث میں ارشاد ہے: ”الْفَقْرَاءُ سُودُ الْوُجُوهِ يَوْمَ الْقِيَامَةِ“ (قیامت کے دن فقیروں کے چہرے سیاہ ہوں گے)۔

یہ چوری کی طرح ہوتی ہے اور اس سے مذہب و ملت تبدیل ہو جاتا ہے جیسے شاعر کہتا ہے:

كَمْ عَالَمٍ عَالِمٍ أَعْيَتْ مَذَاهِبُهُ
وَجَاهِلٌ جَاهِلٌ تَلَقَّاهُ مَرَزُوقًا

هَذَا الَّذِي تَرَكَ الْأَوْهَامَ حَائِرَةً

وَصَيَّرَ الْعَالِمَ النَّحْرِيرَ زَنْدِيقًا

اس ”الشَّبَع“ سے امیری بھی مراد لی جاسکتی ہے جبکہ ”دسائس“ سے امیری کی تباہیاں اور یہ دنیا کی محبت ہوتی ہیں حالانکہ وہ ہر بُرائی کی جڑ ہے پھر لمبی اُمیدیں عبادت سے سستی، آخرت کو بھول جانا، دل کی سختی (سنگدلی)، تکبر و غرور، حرص و لالچ اور بخیلی وغیرہ جیسی چیزیں ہیں۔

”جُوع“ سے جہالت مراد لینا بھی جائز ہے اور ”شَبَع“ سے علم اور یہ بھی ہو سکتا ہے ”جُوع“ سے بے عملی مراد ہو اور ”شَبَع“ سے عمل یہ بھی ممکن ہے کہ ”جُوع“ سے خاموشی اور ”شَبَع“ سے کلام مراد ہو اور یہ بھی کہ ”جُوع“ رات کا جاگنا جبکہ ”شَبَع“ رات کی نیند ہو یہ بھی ہو سکے گا کہ ”جُوع“ سے غیر شادی شدہ رہنا اور ”شَبَع“ سے صرف میل جول ہونا مراد ہو یہ بھی سمجھو کہ ”جُوع“ سے مراد غیر شادی شدہ ہونا اور ”شَبَع“ سے شادی شدہ ہونا مراد ہو۔

ان ساری صورتوں کے ہوتے ہوئے لفظ ”جُوع“ اور ”شَبَع“ میں مجاز اور استعارہ ہوگا اور ان سب میں وجہ شبہ نفس کو غذا نہ ملنا اور ملنا ہے اور ”دسائس“ سے مراد ان سب کی تباہیاں ہوں گی اور اسے سب عقلمند جانتے ہیں۔

”فَرُبَّ مَخْمَصَةٍ الْخ“ میں ”فَاء“ تعلق کیلئے ہے کیونکہ یہ اس چھپے دعویٰ کا سبب ہے جو پہلے مضمون سے سمجھ میں آتا ہے اور ”جُوع“ کے ”دسائس“ سے ڈر رکھنا لازم ہوتا ہے۔

”رُبَّ“ حرف جر ہے جو اسم نکرہ ہی پر داخل ہوتا ہے اور یہ تعلق کیلئے آتا ہے لیکن کچھ اسے تکثیر کیلئے بھی کہتے ہیں۔

”رُبَّ“ کے لفظ کی لغات

”رُبَّ“ کے لفظ میں کئی لغات ہیں کیونکہ کبھی تو یہ شد کے ساتھ ہوتا ہے اور کبھی شد کے بغیر ہوتا ہے اور اس کے آخر میں ”تاء“ اور ”ما“ مل جاتا ہے اور لفظ ”ما“ اور تاء مخفف اور مشدّد ہو کر مل جاتے ہیں۔

حاصل یہ کہ حضرت شیخ الاسلام زکریا انصاری رحمہ اللہ نے ”رُبَّ“ کو پڑھنے کی ستر صورتیں بتائی ہیں جنہیں اپنی اس شرح میں لکھا ہے جو قصیدہ منفرجہ کی ہے دیکھنا چاہو تو وہاں سے دیکھ لو۔

اگر تم کہو کہ حشیت (ڈر) کو صرف ”جُوع“ ہی کا سبب اور علت کیوں بتایا گیا ہے ”شَبَع“ کا

کیوں نہیں بنایا؟ تو میں کہوں گا کہ اس لئے کہ ”شَبَع“ کا نقصان تو لوگوں میں جانا پہچانا ہے جیسے بہت سے علماء نے بتایا ہے جبکہ حضرت ابوسلیمان دارانی رحمہ اللہ نے ”شَبَع“ کے چھ نکتوں کی طرف اشارہ کیا ہے۔

پیٹ بھر کھانے کے چھ نکتے

چنانچہ فرماتے ہیں کہ جو پیٹ بھر کھائے وہ عبادت میں مزہ نہیں پاتا، اسے دانائی سنبھالنی مشکل ہوتی ہے، وہ مخلوق پر مہربانی سے محروم ہو جاتا ہے، اسے عبادت بوجھ لگتی ہے، اس کی خواہشیں بڑھ جاتی ہیں اور سارے مؤمن مسجد کے گرد گھوما کرتے ہیں جبکہ پٹو گندگی کے ڈھیروں کے گرد گھومتا ہے۔

اگر اس سے زیادہ وضاحت کی ضرورت ہو تو بڑی اور تفصیلی کتابوں کو دیکھو۔

تاہم بھوک کا نقصان پوشیدہ ہوتا ہے بلکہ اس کے کئی نتیجے پیدا ہوتے ہیں اور فائدے کی باتیں ملتی ہیں جن میں ایک دل کی صفائی، نیند کا اٹھ جانا، ہمیشہ جاگنا، ہمیشہ کی عبادت میں آسانی پیدا ہونا، بوجھ کا ہلکا ہو جانا، اس کے ذریعے دوسروں کو کچھ پہلے دینا اور صدقہ دینا وغیرہ چیزیں دینے کی ہمت پیدا ہو جاتی ہے اور ایسی ان گنت مثالیں ہیں، چنانچہ اسی بناء پر اسے علت بنایا۔

پھر ”مَخْمَصَة“ کا مطلب سخت اور بہت سی بھوک ہے۔ ”شَرُّ“ کا لفظ ”أَشْرَر“ تھا اسے ہمزہ گرا کر ہلکا کر دیا گیا۔ ابو قلابہ نے اپنی قراءت میں اسے غلط پڑھا ہے: ”سَيَعْلَمُونَ غَدًا مِنَ الْكُذَّابِ الْأَشْرَرِ“ کہ اسے اسم تفصیل بنایا ہے جبکہ کسی بھی قاری نے ان سے موافقت نہیں کی جبکہ امام حریری کہتے ہیں کہ ”شَرُّ“ کے لفظ میں اسم تفصیل کا معنی ہے، اس کا تشبیہ جمع اور مؤنث نہیں آتی، صرف ایک گھٹیا لغت میں اسے ”أَشْرَر“ پڑھا جاتا ہے۔

”التَّخَمُ“ جمع ”تُخَمَة“ کی ہے، یہ مصدر ہے جس کا معنی کھانے کا ہضم نہ ہونا اور کھانے والے کے پیٹ میں بوجھ محسوس ہونا اور معدے میں بدبو کا پیدا ہونا ہے۔ ”مَخْمَصَة“، ”التَّخَمُ“ سے زیادہ نقصان والا ہوتا ہے حالانکہ علماء کا پیٹ زیادہ بھرنے میں نقصان اور بھوک کے بہتر ہونے پر اتفاق ہے کیونکہ سخت اور شدید بھوک انسان کے اندر اتنی کمزوری پیدا کرتی ہے کہ وہ عبادت کرنے کی ہمت نہیں رکھتا چنانچہ نبی کریم ﷺ نے حضرت معاذ رضی اللہ عنہ سے فرمایا تھا: ”تمہارا نفس ایک سواری کی طرح ہے تو اس سے نرمی کیا کرو نرمی یہ نہیں کہ تم اسے بھوکا رکھ کر بہت کمزور ہو جاؤ۔“

(المبسوط للسرہنی، جز ۳۰، صفحہ ۳۰۱)

کھانے کی قسمیں

علمِ فقہ کی کتابوں میں لکھامتا ہے کہ کھانا یا تو فرض ہوتا ہے، یہ اتنی مقدار میں کھائے کہ جس سے وہ ہلاک ہونے سے بچ سکے چنانچہ رسول اللہ ﷺ نے فرمایا: "إِنَّ اللَّهَ لَيُوجِرُ فِي كُلِّ لُقْمَةٍ يَرْفَعُهَا الْعَبْدُ إِلَى فَمِهِ" (احیاء علوم الدین، کتاب الاکل، جلد ۲ صفحہ ۳) (اللہ تعالیٰ بندے کو ہر ایسے لقمہ پر اجر دیتا ہے جسے وہ اٹھا کر منہ میں ڈالتا ہے) یا یہ کھانا بہتر ہوتا ہے جو فرض سے زیادہ ہوتا ہے کہ وہ کھڑا ہو کر نماز پڑھ سکے اور اسے روزہ رکھنا آسان ہو چنانچہ حضور ﷺ فرماتے ہیں کہ "الْمُؤْمِنُ الْقَوِيُّ أَحَبُّ إِلَى اللَّهِ تَعَالَى مِنَ الْمُؤْمِنِ الضَّعِيفِ" (صحیح مسلم، کتاب القدر، باب فی الامر بالقوة، جلد ۲ صفحہ ۱۴۳، رقم الحدیث: ۲۶۶۴) (اللہ کے ہاں طاقتور مؤمن، کمزور مؤمن سے زیادہ پسندیدہ ہوتا ہے) یا مباح ہوتا ہے جس پر نہ اجر ملتا اور نہ بوجھ پڑتا ہے، جب یہ بہتر سے زیادہ ہو اور وہ اس بناء پر کہ اس کے بدن میں طاقت آئے اور اس کا حساب مختصر ہو یا پھر حرام ہوتا ہے، اگر پیٹ بھرنے سے زیادہ کھائے جس کی وجہ مال ضائع کرنا اور فضول خرچی ہے۔



شعر (۲۳)

وَاسْتَفْرِغِ الدَّمْعَ مِنْ عَيْنٍ قَدْ امْتَلَأَتْ
مِنَ الْمَحَارِمِ وَالزَّمَّ حِمِيَةَ النَّدَمِ

(ترجمہ:) ”تم اپنی اس آنکھ سے خوب آنسو بہایا کرو جو گویا حرام کاموں سے بھر چکی ہے اور (گناہوں پر) روز روز کی شرمندگی مول نہ لیا کرو۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب ان حالات اور آئندہ کے حالات میں نفس کو استعمال کرنے کا طریقہ بتا دیا تو اب وہ ان گناہوں سے بچنے کا ذریعہ بتاتے ہیں جو وہ پہلے کر چکا تھا چنانچہ توبہ پر ابھارنے اور اللہ کی طرف توجہ کرانے کیلئے تیار کرنے کی خاطر فرماتے ہیں: ”واستفرغ الخ“۔

تحقیق الفاظ

”واؤ“ عاطفہ ہے یہ بھی ممکن ہے کہ استینافیہ ہو اور یہ مقدّم رسوال کا جواب ہے، گویا یوں کہا گیا ہے کہ کیا کوئی ایسا طریقہ ہے جس سے وہ گناہ بخشے جاسکیں جو میں پہلے کر چکا ہوں، چنانچہ فرمایا: ”وَاسْتَفْرِغْ“ کہ ہاں آنسو بہاتے رہو۔

”اِسْتَفْرِغْ“، ”اِسْتَفْرِغْ“ سے امر کا صیغہ ہے جس کا معنی فارغ ہونے کی خواہش کرنا ہے۔ ”فراغ“ کا معنی ہے: برتن وغیرہ کو اس میں موجود چیز نکال کر خالی کرنا اور اسے بہا دینا، معنی ہوا: آنسو جاری رکھ اور انہیں بہا کر نکال دے۔

”الدَّمْعُ“ وہ نمکین پانی جو آنکھ سے نکلتا ہے، آنکھوں سے پانی نکالنے کے ساتھ آنکھ کا ذکر کرنا اس چیز کو ظاہر کرنے کیلئے ہے جس کا کسی طرح سے پہلے پتہ چل چکا، اس قید کے ذریعے کسی چیز سے بچاؤ کرنا مراد نہیں۔

”قَدْ امْتَلَأَتْ“، ”عَيْنٍ“ کی صفت ہے اور مَوْنَتْ کی ضمیر ”عَيْنٍ“ کی طرف لوٹتی ہے لیکن استخدام کے طریقے پر اور وہ یوں کہ عین مذکورہ سے باصرہ (دیکھنے والی) مراد لیا جائے اور ضمیر سے وہ ”عین“ مراد جس کا معنی ”دل“ ہے کیونکہ حرام کاموں سے بھرا ہوا دل اور معدہ ہی ہوتا ہے لہذا اس صورت میں آنکھ کے بھرنے کو کثرتِ گناہ سے استعارہ کرنے کی ضرورت ہی نہیں، اسے دل والا ہر ایک جانتا ہے۔

”مِنَ الْمَحَارِمِ“، ”اِمْتَلَأَتْ“ سے تعلق رکھتا ہے۔ ”الْمَحَارِمِ“، ”مَحْرَمِ“ کی جمع ہے جس کا معنی حرام ہے جیسے کہا جاتا ہے: ”ذُو رَحِمٍ مَّحْرَمٍ“ یہ اس وقت کہا جاتا ہے جب آدمی کیلئے اس سے نکاح کرنا جائز نہ ہو اور معنی یہ ہے کہ جب تمہارا دل اور معدہ حرام چیزوں اور برے کاموں سے بھر جائے تو اپنی دیکھنے والی آنکھ کو خالی کرو کیونکہ اللہ رحمن سے ڈر کر گناہوں پر رونا بندے کو جہنم میں جانے سے بچاتا ہے جیسے حضور ﷺ نے فرمایا: ”لَا يَدْخُلُ النَّارَ مَنْ بَكَى مِنْ خَشْيَةِ اللَّهِ تَعَالَى حَتَّى يَلِجَ اللَّبْنَ الضَّرْعَ“ (مشکوٰۃ المصابیح، کتاب الجہاد، الفصل الاول، جلد ۲ صفحہ ۳۶۵، رقم الحدیث: ۳۸۲۸) (جو شخص اللہ کے ڈر کی وجہ سے روتا ہے وہ اس وقت تک جہنم میں نہیں جائے گا جب تک گویا دودھ تھنوں میں نہیں چلا جاتا) (اور ایسا ممکن نہیں)۔

قیامت میں امت کے آنسو آگ بجھا دیں گے

کہتے ہیں کہ قیامت آنے پر جہنم سے پہاڑ جیسی بلند آگ نکلے گی اور حضرت محمد ﷺ کی امت کا رخ کرے گی، رسول اکرم ﷺ اسے دور کرنے کی پوری کوشش کریں گے لیکن نہیں ہٹا سکیں گے چنانچہ حضرت جبرائیل علیہ السلام کو بلائیں گے اور فرمائیں گے کہ جلدی پہنچو کیونکہ آگ نے جلانے کے لیے میری امت کا رخ کر لیا ہے، وہ پانی کا ایک پیالہ لے کر آئیں گے اور رسول اکرم ﷺ آواز دے کر عرض کریں گے کہ اسے پکڑ کر اس آگ پر چھڑک دیجئے، وہ چھڑکیں گے تو آگ فوراً بجھ جائے گی۔

آپ جبرائیل علیہ السلام سے فرمائیں گے کہ اے جبرائیل! یہ پانی کیسا ہے؟ میں نے آگ بجھانے کے لئے آج تک ایسا پانی نہیں دیکھا۔ اس پر جبرائیل علیہ السلام عرض کریں گے کہ یہ آپ کی اس امت کے آنسو ہیں جو انہوں نے تنہائی میں اللہ کے ڈر سے بہائے تھے اور میرے پروردگار نے مجھے حکم دیا تھا کہ میں انہیں لے کر اس وقت تک محفوظ رکھوں جب آپ کو ضرورت پڑے اور آپ اس سے وہ آگ بجھا سکیں جس نے آپ کی امت کا رخ کر لیا ہے۔

”وَالزَّمُ“ یہ ایک ایسے سوال کا جواب ہے جو پہلے شعر سے پیدا ہوا تھا اور وہ یہ ہے کہ کیا صرف رونا گناہوں کو دور اور انسان کو پاکیزہ بنا سکتا ہے؟ جواب یہ ہے کہ یہ یعنی نہیں بلکہ یہ لازم ہے کہ تم روزانہ رونے کے ساتھ ساتھ شرمندگی سے بچاؤ کرنے کی بھرپور کوشش جاری رکھو اور اس کی حفاظت کرتے رہو۔

”حَمِيَّة“، ”اِحْتِمَاء“ سے ہے اس پر نصب ہے اور یہ ”الزَّم“ کا مفعول ہے۔ ”نَدْم“ کا معنی پشیمانی اور بے اُمیدی ہے اور فارسی میں اس کا معنی ”پشیمان شدن“ (پریشان ہونا) ہے۔ ”حَمِيَّة“ کی ندم طرف اضافت یا تو بیانیہ ہے یعنی حفاظت جو ندامت ہے جیسے پہلے آچکا یا بمعنی ”مِنْ“ ہے یعنی پشیمانی جو شرمساری سے حاصل ہوتی ہے کیونکہ وہ شرمسار ہوگا تو اپنے آپ کو گناہوں سے بچائے گا یا مشبہ کی اضافت مشبہ بہ کی طرف ہے جیسے ”لُجَيْنُ الْمَاءِ“ میں ہے یعنی اس صورت میں یوں ہوگا: ”ندامة كالا حتماء“ یعنی شرمندگی اس لحاظ سے احتماء کی طرح ہے کہ اس سے گناہوں کی طرف نہیں جاسکتے۔

اگر تم کہو: اس شعر سے معلوم ہو رہا ہے کہ تمام گناہوں کا علاج صرف رونا اور شرمندگی ہے جبکہ ظلم کرنا اور کسی کا حق لینا رونا اور شرمندگی سے نہیں بخشے جاسکتے بلکہ ان کا حق واپس دینا اور اس سے چھٹکارا کرانا ہوگا تو اس کے جواب میں میں کہوں گا کہ اس ظلم اور جھگڑے سے کنارہ بھی تو شرمندگی ہی کہلاتا ہے اور اسے ہر ایک جانتا ہے۔

شعر کا حاصل مطلب یہ بنے گا کہ ”اے وہ شخص جس کی آنکھ حرام کرنے سے بھرچکی ہے اور دل کو غافل رہنے کی بیماری لگی ہوئی ہے تمہیں رو رو کر آنسو نکالنا ہوں گے کیونکہ یہ آنسو ان سب گناہوں کو بہالے جائیں گے جو نفس نے نفسانی خواہشیں پوری کرنے میں کمائے تھے جیسے کہتے ہیں کہ ”صَبَّ الْعَبْرَاتِ يَحُطُّ السَّيِّئَاتِ“ (آنسو بہانا گناہوں کو دور کر دیتا ہے) اور جیسے ایک حدیث میں بھی آیا ہے کہ قیامت کے دن ایک ایسے بندے کو سامنے لایا جائے گا جس کے ہاتھ پاؤں وغیرہ اس کے خلاف گواہیاں دیں گے کہ یہ بہکتا اور گناہ کیا کرتا تھا تو اسے جہنم میں داخل کیا جانا چاہیے۔

ایک بال کی سفارش پر بخشش

اسی دوران اس کی پلکوں سے ایک بال اڑ کر آگے آئے گا اور اللہ تعالیٰ سے اس کے حق میں گواہی دینے کی اجازت مانگے گا جس پر اللہ تعالیٰ فرمائے گا کہ اے بال! جو کچھ کہنا ہے کہو اور میرے بندے کی طرف سے کوئی دلیل پیش کرو چنانچہ وہ بال اس شخص کے بارے میں یہ گواہی دے گا کہ یہ دنیا میں اپنے پروردگار سے ڈر کر آنسو بہایا کرتا تھا لہذا اسے بخش دیا جائے گا اور کوئی اعلان کرنے والا یہ اعلان کرے گا کہ لوگو! سن لو کہ یہ وہ شخص ہے کہ اسے اللہ تعالیٰ نے ایک بال کے بدلے میں جہنم سے آزاد کر دیا ہے۔

یہ ویسے ہی ہے جیسے امام حجۃ الاسلام سے اللہ تعالیٰ کے فرمان ”فِيهِمَا عَيْنَانِ تَجْرِيَانِ“ (سورۃ الرحمن، آیت: ۵۰) میں مذکور دو آنکھوں کے بارے میں پوچھا گیا کہ یہ کس کی ہوں گی؟ تو انہوں نے فرمایا کہ یہ اُس کی ہوں گی جو ان دونوں سے یہاں آنسو بہاتا رہا ہوگا۔ یہ بات تفسیر روح البیان میں ہے۔

شعر نمبر ۲۳: کتاب کا مقام حل نہ ہونے کیلئے

یاد رکھو کہ اگر مطالعہ کے دوران کتاب کا کوئی مقام حل نہ ہوتا ہو اور کوئی راہ دکھائی نہ دیتی ہو تو اس شعر کو ایک سو اُنیس بار پڑھئے وہ مقام انشاء اللہ حل ہو جائے گا۔



شعر (۲۴)

وَخَالِفِ النَّفْسَ وَالشَّيْطَانَ وَأَعْصِبَهَا
وَإِنْ هَبَا فَحَضَّاكَ النَّصْحَ فَأَتَّبِهِمْ

(ترجمہ:) ”تم نفس اور شیطان کی کوئی بات نہ مانا کرو بلکہ ان کے خلاف نیک کام کر دکھاؤ اور اگر وہ تمہیں (طرح طرح سے بہلا کر) کسی غلط کام پر لگائیں تو انہیں غلط سمجھو۔“
حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب نفس کے بارے میں بتا دیا کہ وہ خواہشات میں گھرا ہوتا ہے اور اس کی خواہشات حد سے بڑھ کر اس کا نقصان کر رہی ہوتی ہیں جبکہ یہ نفس بندے کے قبضے ہی میں ہوتا ہے تو اب اس کی پوری مخالفت کرتے ہوئے فرمایا: ”وَخَالِفِ النَّحْ“۔

تحقیق الفاظ

”وَإِذَا“ عاطفہ ہے کہ یہاں انشاء کا انشاء پر عطف ہے۔ ”خَالِفٌ“، ”مُخَالَفَةٌ“ کے لفظ سے امر کا صیغہ ہے، مصنف نے ”مُخَالَفَةٌ“ کا صیغہ لا کر مبالغہ کرنا چاہا ہے۔ ”النَّفْسُ“ نصب کے ساتھ ”خَالِفِ“ کا مفعول ہے الف لام عہد کا ہے، معنی ہوگا: ”وہ نفس جو اتنا رہ اور مکر و فریب کرنے والا ہے۔“ ”الشَّيْطَانُ“ نصب کے ساتھ نفس پر معطوف ہے، حضرت ناظم نے عطف کے حرفوں میں سے ”وَإِذَا“ کو اس لئے لیا ہے تاکہ پتہ چلے کہ دونوں چیزیں اکٹھی ہیں اور دونوں ہی بُرائی کرنے کو کہتی ہیں جیسے اللہ تعالیٰ کے فرمان میں ہے: ”إِنَّ النَّفْسَ لَأَمَّارَةٌ بِالسُّوءِ“ (سورۃ یوسف آیت: ۵۳) (یقیناً یہ نفس برائی کرنے پر اکساتا ہے) اور یہ فرمان ہے: ”الشَّيْطَانُ يَعِدُكُمُ الْفَقْرَ وَيَأْمُرُكُمْ بِالْفَحْشَاءِ“ (سورۃ البقرہ آیت: ۲۶۸) (شیطان تمہیں فقیر بنانے اور بُرائی کرنے پر لگاتا ہے)۔

اگر تم کہو کہ اس بناء پر تو ”شیطن“ کا نفس پر عطف معلوم ہی ہے کیونکہ نفس کی مخالفت کا حکم دینے میں ”شیطن“ کی مخالفت کی ضرورت ہی نہیں رہ جاتی کہ دونوں ہی بُرائی کرانے میں اکٹھے ہیں چنانچہ ایک کی مخالفت کا حکم دینے سے دوسرے کی مخالفت ہو ہی جاتی ہے تو دونوں میں فرق نہ رہا۔ میں کہتا ہوں کہ دونوں میں فرق واضح ہے کیونکہ نفس اگر گناہ پر لگائے تو وہ اس پر زور دیتا ہے اور اگر وہ اس گزرے گناہ کے علاوہ کوئی اور گناہ کرے تو وہ صرف پہلے ہی گناہ پر مطمئن ہو سکتا ہے جو اس نے کہہ دیا ہوتا ہے کیونکہ نفس میں نفسانیت ہوتی ہے جبکہ شیطان ایسا نہیں کرتا۔

لفظ "شَيْطَن" کی تحقیق

"الشَّيْطَن" کا لفظ یا تو "فِيْعَال" کے وزن پر ہے اور وہ اس بناء پر کہ اس کا "ن" اصلی ہو اور وہ "شَطَن" سے ہو یہ اس وقت کہتے ہیں جب کوئی دور ہو جائے کیونکہ یہ بھی خیر اور رحمت سے دور ہے یا اس کا وزن "فَعْلَان" ہے اور وہ اس بناء پر کہ اس کا "نون" زائد ہو اور یہ "شَطَا" سے نکلے جس کو کسی کے ہلاک ہونے کے معنی میں بولتے ہیں یا جب وہ تیزی سے چلے کیونکہ وہ آدمی کے اندر تیزی سے چلتا ہے یا آدمی کو گمراہ کرنے کیلئے یا اس وقت جب وہ جل جائے کیونکہ اصل میں وہ آگ ہے یا اس بناء پر کہ اس کا اول آگ ہے چنانچہ ان دونوں صورتوں میں یہ منصرف اور غیر منصرف بھی ہوتا ہے بشرطیکہ اسے "عَلَم" لیا جائے۔

علامہ جبری لکھتے ہیں کہ "الشَّيْطَن" ابلیس اور اس کے لشکر کو کہتے ہیں اور اس سے مراد جنس شیطان ہے۔ تفسیر خازن والے بھی بتاتے ہیں کہ یہ جنس کا لفظ ہے جو دھتکارے ہوئے شیطانوں کے لئے بولا جاتا ہے۔

شیطان کے بارے میں

پھر شیطان اور جن کے بارے میں اختلاف ہے کہ یہ دونوں موجود ہیں یا نہیں ہیں لیکن پہلی بات صحیح ہے پھر پہلی صورت میں بھی اختلاف ہے کہ یہ دونوں غیر شادی شدہ ہوتے ہیں یا نہیں؟ اکثر متکلمین شادی کے لائق گنتے ہیں اب اس دوسری صورت میں بھی اختلاف ہے کہ آیا یہ دونوں الگ الگ قسم کے ہیں؟ اور وہ یوں کہ شیطان تو ہلکا پھلکا اور آگ کا جسم ہے، کئی شکلوں میں دکھائی دے سکتا ہے جبکہ جن ہوائی چیز ہے اور اسی کی طرح کئی شکلیں بنا سکتا ہے، نیز فرشتہ بھی اسی طرح ہلکا پھلکا نورانی جسم ہوتا ہے یا پھر دونوں کی ایک ہی جنس ہوتی ہے چنانچہ ان میں سے جو بھلا اور نیک بخت ہوتا ہے وہ جن ہوتا ہے لیکن جو شرارتی اور بد بخت ہوتا ہے وہ شیطان ہوتا ہے۔

کیا اس کی اولاد ہے؟

اگر یہ پوچھا جائے کہ کیا شیطان کی نسل بھی ہوتی ہے؟ تو علامہ ابوالمعتین نسفی "بحر الکلام" میں بتاتے ہیں کہ یہ کئی انڈے دیتا ہے اور ہر ایک میں سے ایک بچہ پیدا ہوتا ہے۔

ایک روایت میں آیا ہے کہ اس کی ایک ران میں شرمگاہ اور دوسری میں عضو تناسل ہوتا ہے یہ اپنے آپ ہی سے ہمبستری کرتا ہے جس سے بچہ پیدا ہو جاتا ہے لیکن یہ "تہا" روایت ہے۔ یہ بھی

کہتے ہیں کہ یہ اپنی دُم پاخانہ کی جگہ میں ڈالتا ہے تو اس سے بچہ پیدا ہو جاتا ہے لیکن یہ صحیح نہیں، پہلی بات صحیح ہے۔

یاد رہے کہ یہاں شیطان سے مراد انسان اور جن سے عام ہے کیونکہ جو شیطان انسانوں میں ہے وہ بھی بُرائی کرنے کو کہا کرتا ہے چنانچہ اس کے حکم کی مخالفت لازم ہے بلکہ اس سے تو میل جول کرنا بھی منع ہے کیونکہ اس کی طبیعت ہی شیطانی ہوتی ہے تم دیکھتے نہیں کہ جب علماء نے سستی سے دور ہونے کا حکم دے رکھا ہے تو گنہگاروں سے دوری کا حکم کیوں نہ دیں گے؟

اگر تم کہو کہ حضرت ناظم رحمہ اللہ نفس کو ”شیطن“ سے پہلے کیوں لائے ہیں حالانکہ شیطان کی مخالفت ہر دور میں رہی ہے؟ تو میں کہوں گا کہ نفس تو انسان کے اندر داخل ہے وہ ذکر و عبادت کے دوران بھی کسی حالت میں اس سے الگ نہیں ہوتا چنانچہ اس کی دشمنی شیطان سے بھی بڑھ کر ہے کیونکہ وہ تو باہر کا دشمن ہوتا ہے جس کی شرارت کو تو استعاذہ (اعوذ پڑھنا) ذکرِ ثناء کے ذریعے اور صاحبِ ثناء کی بارگاہ میں شکایت کر کے دور کیا جاسکتا ہے کیونکہ وہ اللہ کا کتا ہے جس کے شر سے بچنے کے لیے انسان اللہ سے شکایت کر سکتا ہے اور اللہ کے حکم کی بناء پر اس سے نجات حاصل کر لیتا ہے جبکہ نفس ایسا نہیں ہوتا یا پہلے ذکر کرنے کی وجہ یہ ہے کہ نفس اگرچہ دشمن ہے لیکن وہ پیارا اور محبوب ہوتا ہے جبکہ انسان اپنے محبوب کے عیب دیکھنے سے اندھا ہوتا ہے جیسے شاعر کہتا ہے:

عَيْنُ الرَّضَاعِنُ كُلِّ عَيْبٍ كَلِيلَةٌ

وَلَكِنْ عَيْنُ السُّخْطِ تُبْدِي الْمَسَاوِيَا

”خوشی والی آنکھ ہر عیب دیکھنے سے رُکی ہوتی ہے جبکہ ناراضگی کی آنکھ عیب بتا دیا کرتی ہے۔“

اور یہ لازم ہے کہ نفس میں کوئی بھی قہر نہ ہو کیونکہ یہ مقصد تک پہنچانے کیلئے انسان کو سواری کا کام دیتا ہے اور جو اس پر قہر کرتا ہے تو یہ اسے راہ میں ذلیل کرتا ہے اور یہ کہ انسان کسی بھی طرح اس کی ہاں میں ہاں نہ ملائے کیونکہ جو ایسا کرتا ہے تو یہ اسے راستے سے بھٹکا دیتا ہے خلاصی اسی صورت میں ممکن ہے کہ دونوں حالتوں کو برابر سمجھے۔ رہا شیطان تو اس کی دشمنی ایسی خالص ہوتی ہے کہ جس میں محبت بالکل نہیں ہوتی کیونکہ وہ ایسا قدیم دشمن ہے کہ اس کی ہمارے باپ آدم علیہ السلام کے ساتھ دشمنی شروع ہو گئی تھی چنانچہ اس نے کہا تھا کہ ”يَا آدَمُ هَلْ أَذُكَ عَلَى شَجَرَةِ الْخُلْدِ“

وَمُلْكٍ لَا يَبْلَى“ (سورۃ طہ آیت: ۱۲۰) (اے آدم! میں تمہیں ہمیشہ کی زندگی دینے والا درخت نہ بتا دوں اور ایسی بادشاہی بھی جو کبھی ختم نہ ہو؟) جبکہ باپ کا دشمن بیٹے سے محبت نہیں کیا کرتا۔
 ”وَاعْصِيهِمَا“ کا ”خَالِف“ پر عطف ہے۔

اگر تم کہو کہ ”وَاعْصِيهِمَا“ وہ قول ہے جو پہلے مضمون سے بھی سمجھ آ رہا ہے کیونکہ دونوں کی مخالفت کا حکم تو بتاتا ہے کہ یہ دونوں بے فرمان ہیں؟ تو میں کہوں گا کہ بے فرمانی مخالفت سے عام لفظ ہے کیونکہ بے فرمانی کا مطلب ہے: فرمانبرداری چھوڑ دینا، خواہ اس نے کام کرنے کا حکم دیا ہو یا اس سے روکا تو اس نے چھوڑ دیا ہو یا نہ ہی حکم دیا اور نہ روکا لیکن اس نے چھوڑ دیا جبکہ مخالفت صرف اس کام کو چھوڑنے کی بناء پر ہوتی ہے جس کا حکم ملا یا وہ ایسا کام کرے جس سے اس نے روکا تھا چنانچہ یہ عطف عام کے خاص پر عطف والوں کی طرح ہے لہذا یہ پہلے سمجھ میں نہیں آیا۔

جواب یوں بھی دیا جا سکتا ہے کہ مخالفت اور بے فرمانی میں سے ہر ایک امر اور نہی کے لحاظ سے ہوں، یعنی ”خَالِف“ تو دونوں کے حکم کی مخالفت کیلئے اور ”وَاعْصِي“ صرف دونوں کی نہی سے بے فرمانی کیلئے ہو تو اس صورت میں عطف ہو سکے گا لیکن اس پر اعتراض کی گنجائش ہے۔

”وَإِنْ هُمَا“ میں ”إِنْ“ شرطیہ ہے، تشبیہ کی ضمیر ”نفس“ اور ”شیطان“ کی طرف جاتی ہے۔
 ”مَحْضًا“، ”تَمَحِيضًا“ یا ”مَحْضًا“ سے بنا ہے جس کا معنی خالص کرنا ہوتا ہے یعنی یہ دونوں (نفس اور شیطان) تمہیں خالص ہو کر کہیں۔

”النُّصْحُ“ نصب کے ساتھ ”مَحْضًا“ کا دوسرا مفعول ہے اور ”نُصْحُ“ کا معنی: کسی کو بھلائی دکھانا ہے۔

”فَاتِهِمْ“ میں فاء جزائیہ ہے ”إِتِهِمْ“، ”تُهُمَةَ“ سے امر کا صیغہ ہے یعنی دونوں کی نصیحت کو جھوٹا سمجھو۔

اگر تم کہو کہ کیا نفس اور شیطان بھی نصیحت کرتے ہیں کہ اسے جھٹلا دیا جائے؟ تو میں کہوں گا کہ ہاں، رہا نفس کی نصیحت تو جیسے اسے خادمی نے منہاج سے نقل کیا ہے کہ ایک شخص (شائد احمد بن ارقم بلخی ہیں) نے بتایا کہ جنگ میں شامل ہونے کیلئے میرے نفس نے مجھ سے جھگڑا کیا جس پر میں نے کہا: سبحان اللہ! اللہ تعالیٰ نے تو فرمایا ہے کہ ”نفس بُرے کاموں پر اُکساتا ہے“ اور یہ مجھے نیک کام کرنے کو کہہ رہا ہے اس پر میں نے سوچا اس کا مقصد یہ ہے کہ میں اکیلا نہ رہوں، میل جول کرتا رہوں

سکون سے آرام کروں اور مخلوق کی عزت کیا کروں چنانچہ میں نے اس سے کہا کہ اگر تمہارا ارادہ یہی ہے تو میں کبھی بھی تجھے سکون نہیں دوں گا اور نہ ہی کسی کی پہچان کراؤں گا۔ اس پر اس نے جواب دیا کہ تم نے بدگمانی کی ہے۔ میں نے کہا کہ اللہ سچا ہے میں نے سوچا کہ میں سب سے پہلے دشمن کو ماروں گا تو تم قتل ہو جاؤ گے۔ اس نے کئی چیزیں گن کر سب کی طرف سے جواب دیا (کہ کس کس کو مارو گے) پھر میں نے کہا کہ اے پروردگار! مجھے اس کے بارے میں خبردار رکھ کیونکہ میں اسے جھٹلاؤں گا لیکن تمہیں سچا کہوں گا۔

پھر مجھے کشف ہوا تو گویا نفس نے کہا: اے احمد! تم روزانہ مجھے کئی مرتبہ قتل کرتے ہو میری خواہشوں کو روکتے اور مخالفت کرتے ہو اگر تم مجھے قتل کر دو تو میں ایک ہی مرتبہ قتل ہوں گا جس کی وجہ سے تم کئی قتلوں سے نجات حاصل کر لو گے اور لوگ میری شہادت سنیں گے جس پر تم میری یاد کرنے والے اور میری عزت بنانے والے ہو جاؤ گے۔

وہ بتاتے ہیں کہ میں گھر بیٹھ گیا اور جنگ پر نہ گیا۔

رہی شیطان کو نصیحت تو وہ وہی ہے جسے مولوی نے اپنی کتاب مثنوی میں لکھا ہے کہ حضرت معاویہ رضی اللہ عنہ صبح کے وقت سوئے ہوئے تھے کہ شیطان نے آ کر کہا: ”حَيَّ عَلَى الْفَلَاحِ“ (آؤ کہ نجات پا جاؤ)۔ حضرت معاویہ رضی اللہ عنہ اس کے سامنے آ کر ایسا کہنے سے سمجھ گئے کہ وہ فریب اور دھوکا کر رہا ہے چنانچہ فرمایا: اے شیطان! تم تو صرف نافرمانی ہی بتاتے ہو تو مجھے عبادت کے بارے کہنے میں تمہارا کیا مقصد ہے اور اس عجیب معاملے کی وجہ کیا ہے؟ کیونکہ یہ بات تو تمہاری طرح عجیب ہے؟

اس پر شیطان نے کہا کہ ایک دن آپ سو جانے کی بناء پر سید الانام (ﷺ) کے ساتھ جماعت میں شامل ہونے سے رہ گئے تھے جس پر آپ کو بہت شرمساری ہوئی اور آپ بہت دیر تک افسوس کرتے رہے جس پر آپ کو دوسری عبادتوں سے دوگنا ثواب مل گیا۔ مجھے فکر ہے کہ اگر آپ نے ایک اور مرتبہ نماز چھوڑ دی تو آپ کو آخرت میں اور زیادہ ثواب ملے گا۔

اے بھائی! ان دونوں کی شرارت سے بچے رہو خصوصاً اس وقت میں جس میں دونوں نے جھگڑا کیا تھا۔



شعر (۲۵)

وَلَا تُطِعْ مِنْهَا خَصْبًا وَلَا حَكَمًا
فَأَنْتَ تَعْرِفُ كَيْدَ الْخَصْمِ وَالْحَكْمِ

(ترجمہ:) ”(یاد رکھو) ان دونوں کی بات نہ مانو خواہ وہ دشمنی کے رُوپ میں ہوں یا انصاف والوں کے کیونکہ آخر تم دشمن اور انصاف کی بات کرنے والوں کی چالوں کو خوب جانتے ہو۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب دیکھا کہ مخاطب دونوں کی نصیحت کو غلط کہنے سے انکار کر رہا ہے کیونکہ نیکی کی ہدایت بُرائی کرنے پر نہیں اُبھارتی تو انہوں نے پہلی بات کو پکا کر دیا کیونکہ یہ ضروری اور مان لینے والا کام تھا چنانچہ فرمایا: ”وَلَا تُطِعْ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”لَا تُطِعْ“، ”إِطَاعَةٌ“ سے ہے جس کا معنی کسی حکم کرنے والے کا حکم ماننا ہے۔ ”مِنْهُمَا“ ظرف مستقر ہے جو ”خَصْمٌ“ اور ”حَكْمٌ“ سے حال ہے اسے ذوالحال سے پہلے اس لئے لایا گیا کہ یہ شعر کی ضرورت ہے جیسے کسی شاعر نے ضرورت کی جگہیں بتاتے ہوئے کہا ہے:

وقد جاء في التركيب بعض تصرف

كفصل وتقديم ومثل زيادة

”الْخَصْمُ“ وہ دشمن جس کی دشمنی ہر ایک جانتا ہو۔ ”حَكْمٌ“ کا معنی حاکم اور جس کے پاس دعویٰ ہو اسے ”قاضی الحکم“ کہتے ہیں۔

معنی یہ ہے کہ تم دشمن اور حاکم کی بات اس صورت میں نہ مانو کیونکہ یہ دونوں نفس اور شیطان سے نکلے ہوئے ہیں یعنی نفس، دشمن ہو یا حاکم، یونہی شیطان اگر دشمن یا حاکم ہو تو دونوں کا کہنا نہ مانو بلکہ ان سے الگ رہو۔

قصیدہ کا مشکل ترین شعر

زرکشی کے شارح فرماتے ہیں کہ یہ شعر قصیدہ کا سب سے مشکل شعر ہے اس لحاظ سے کہ نفس کا دشمن اور حاکم کون ہے چنانچہ یہاں شرح کرنے والوں نے ایسی باتیں کی ہیں جن کا کوئی فائدہ نہیں

بلکہ سب کی سب بے مقصد ہیں۔

رہا میں تو کچھ عرصہ کیلئے اس شعر کے بارے میں حیران تھا پھر میں نے مکاشفہ میں سمجھدار ناظم حضرت محمد بوصیری رحمہ اللہ کو دیکھ کر پوچھا کہ اے امام! اس شعر سے آپ کا مقصد کیا ہے؟ انہوں نے فرمایا کہ اگر تم انسان کو گمراہ کرنے والی چیزیں دیکھتے تو تمہیں مقصد سمجھ میں آ جاتا۔ میں نے عرض کی کہ میں ذرا وضاحت چاہتا ہوں جس پر آپ نے فرمایا کہ انسان میں یہ چیزیں تین ہیں جو دل، نفس اور شیطان ہیں اور جب دل کوئی نیک کام کرنا چاہتا ہے تو نفس اسے روکتا ہے اور چاہتا ہے کہ وہ اس سے رُک جائے اور وہ کام چھوڑ دے دونوں جھگڑا کرتے ہیں اور کسی کو فیصلہ میں ڈالنا چاہتے ہیں جس پر فیصلہ کیلئے شیطان کو حاکم بناتے ہیں جو بُرا کرنے کو کہتا ہے تو اس طرح شیطان فیصلہ کرنے والا اور نفس دشمن بنتا ہے اور اگر شیطان چاہتا ہے کہ کوئی بُرا کام کرے تو اسے دل کہتا ہے کہ نہ کر کیونکہ یہ بُرا ہے، شیطان کہتا ہے: نہیں! یہ تو اچھا ہے، چنانچہ وہ جھگڑتے ہیں اور انہیں حاکم کی ضرورت پڑتی ہے جس پر وہ نفس کو حاکم بناتے ہیں جو بُرا کرنے کو کہتا ہے اور اس بناء پر نفس حاکم اور شیطان مخالف بنتا ہے تو دونوں ہی ایک لحاظ سے دشمن اور ایک لحاظ سے حاکم بنتے ہیں۔

ان کی عبارت اور تفصیل میں کچھ تبدیلی کر کے عبارت ختم ہوئی۔

”فَانَتْ“ میں ”فَاء“ تعلیل کیلئے ہے جو پہلے شعر کا سبب بتاتی ہے چنانچہ یہاں قیاس ترتیب دیا جاسکتا ہے جو یوں ہوگا کہ تمہارے لئے لازم ہے کہ ان دونوں کی فرمانبرداری نہ کرو خواہ حاکم بنے ہو یا مخالف کیونکہ تم مخالف اور حاکم کے مکر جانتے ہو اور جو بھی مخالف اور حاکم کا مکر جانتا ہے تو اسے لازم ہے کہ دونوں کی فرمانبرداری نہ کرے خواہ مخالف بنے ہوں یا حاکم۔

”الْكَیْدُ“ سے مراد مکر اور خیانت ہے اور حیلہ کا معنی بھی دیتا ہے۔

”الْخَصْمُ“ اور ”حَكْمُ“ سے وہ دوسرا مراد ہے جو پہلے گزر چکا کیونکہ دونوں کے الف لام عہد

کیلئے ہیں۔

وسوسہ کیسے ہوتا ہے؟

اگر تم کہو کہ وسوسہ کرنے کی کیا صورت ہوتی ہے حالانکہ ہم شیطان کو کسی مقام پر نہیں دیکھتے تو اس کیلئے مدعی کیسے ہو سکتا ہے اور کیسے حَكْمُ بن سکتا ہے اور وسوسے کیسے ڈال سکتا ہے؟ تو ہم کہیں گے کہ دونوں کی حالت احیاء العلوم میں ملتی ہے کہ دل خیمہ کی طرح ہے جس میں کئی دروازے ہیں اس

میں کئی قسم کے حالات ہر دروازے سے جلدی جلدی اترتے ہیں اور اس نشانے کی طرح ہوتا ہے جس کی طرف ہر پہلو سے تیر پھینکے جاتے ہیں چنانچہ جب وہ اس کے ظاہری اور باطنی پانچ حواس میں سے کسی چیز کو معلوم کرتا ہے اور خیال وغیرہ جیسی چیز باطنی حواس سے معلوم کرتا ہے تو ان کا دل پُراثر ہوتا ہے اور یونہی شہوت اور غضب جیسی چیزوں کے اُبلنے سے بھی ہوتا ہے اور دل میں آنے والی ایسی چیزیں اس کے ارادے کو حرکت دیتی ہیں جو اعضاء کو حرکت دیتی ہیں چنانچہ دل میں آنے والی یہ چیزیں اگر اچھی ہیں تو یہ الہام ہے اور اگر بُری ہیں تو پھر وسوسے ہیں۔ انتہی!

حضرت انس رضی اللہ عنہ کی ایک حدیث ہے کہ شیطان انسان کے دل پر اپنی سونڈھ رکھتا ہے اب اگر وہ ذکرِ الہی کرتا ہے تو پیچھے ہٹ جاتا ہے اور اگر ذکر کو بھلا دیتا ہے تو لقمہ لقمہ کر کے اس کے دل کو کھاتا جاتا ہے۔ (اکامل لابن عدی، الجز الرابع، صفحہ ۱۲۹)

وسوسہ سے بچاؤ کا طریقہ

اگر تم کہو کہ وسوسے سے چھٹکارا کیسے ہو سکتا ہے؟ میں کہوں گا کہ علماء کے مطابق شیطان پر برسانے کیلئے انسان کے پاس چھ ہتھیار ہیں، استعاذہ (اعوذ پڑھنا)، کلمہ شہادت، بسم اللہ شریف، لالچ چھوڑنا، اُمیدیں ختم کرنا اور دنیا سے کنارہ کرنا۔

ایک روایت میں آتا ہے کہ کچھ لوگوں نے حضرت حسن بصری رضی اللہ عنہ سے شیطان کے بارے میں شکایت کی تو انہوں نے بتایا کہ وہ میرے ہاں سے ابھی گیا ہے اور تم لوگوں کی شکایت کر رہا تھا اور کہتا تھا کہ آپ لوگوں سے کہہ دیں کہ یہ لوگ میری دنیا چھوڑ دیں تو میں ان کا دین چھوڑ دوں گا چنانچہ وسوسہ دور کرنے کیلئے کئی چیزیں بہت فائدہ مند ہیں اللہ کی بارگاہ میں شکایت کرنا، اس سے یہ اُمید لگانا کہ اسے ختم کر دے تاکہ وہ اس کے پاس نہ آسکے کیونکہ وہ کھلا ہوا کتا ہے اور کتے کا کام یہ ہوتا ہے کہ اسے تکلیف پہنچے تو اس کی درخواست اپنے مالک سے کیا کرتا ہے۔

نفس و شیطان کو پیدا کرنے کی وجہ

اگر تم کہو کہ اللہ پر تو کوئی چیز لازم نہیں، وہ مرضی کے کام کرتا ہے لیکن اس کا کوئی کام حکمت و دانائی سے خالی نہیں ہوتا اور یہ بات ہر ایک جانتا ہے کہ نفس اور شیطان واضح بُرائی ہیں تو انہیں پیدا کرنے اور انسان پر قابو دینے کا کیا مقصد ہے؟ تو میں کہوں گا: رہا انسان میں نفس کو پیدا کرنے کی حکمت اور اسے اللہ کے فرشتوں کی طرح غیر شادی شدہ نہ رکھنے اور عام فرشتوں سے زیادہ شان والا بنانے کی

وجہ یہ ہے کہ نفس کے سامنے کئی مشکلات اور رکاوٹیں ہوتی ہیں جیسے شہوتیں، غضب اور ایسی ضرورت غرضوں کا پیش آ جانا جو کمالات حاصل کرنے سے رکاوٹ بنتی ہیں اور اس میں شک نہیں کہ عبادت اور مصروفیتوں کے ہوتے ہوئے کمال حاصل ہونا نہایت مشکل ہوتا ہے اور اس سے انسان کا خلوص بگڑتا ہے اور جو چیز بھی ایسی ہو وہ زیادہ مرتبہ والی ہوتی ہے۔

اگر تمہیں اس بحث کی زیادہ وضاحت چاہئے تو بڑی کتابوں میں دیکھئے۔

رہا شیطان کو پیدا کرنا تو اس میں دو مسلک ہیں، رہا پہلا مسلک تو اصل بات یہ ہے کہ ہمیں اللہ کے سارے کاموں کی حکمتوں پر اطلاع نہیں کیونکہ وہ جو کچھ کرتا ہے اس کے بارے میں اس سے پوچھا نہیں جاسکتا لیکن لوگوں سے پوچھ گچھ ہوگی کیونکہ اگر اس حکمت کے بارے میں ہمیں کچھ پتہ نہیں تو پختہ علم والے اسے ضرور جانتے ہیں۔ رہا دوسرا مسلک تو یہ اس کی حکمت کا بیان ہے جیسے کسی عالم نے کہا ہے: مخلوق میں اللہ کی حکمت یہ ہے کہ وہ اپنے اولیاء کو دوسروں سے الگ کر لیتا ہے کیونکہ جو اس کے دشمن شیطان کی پیروی کرتا ہے اللہ اسے ولی نہیں بناتا۔

کچھ حضرات کہتے ہیں کہ حکمت، عبادت گزاروں کا اپنی عبادتوں پر غرور نہ کرنا ہوتا ہے۔

کچھ علماء کہتے ہیں کہ حکمت، بے فرمانی، سرکشی سے رکنے، تکبر اور ایمان والوں پر زیادتی کرنے کا نقصان بتانے کا نام ہے اور اس کی تفصیل بڑی کتابوں میں ملتی ہے۔

شعر ۲۴، ۲۵: گناہوں پر اصرار کرنے والوں کیلئے

ان دونوں شعروں (۲۴، ۲۵) کی خاصیت یہ ہے کہ جو شخص گناہ کرنے پر ڈٹا ہو اور توبہ نہ کرنے کیلئے اپنے نفس کو تیار کرتا ہو تو اسے چاہیے کہ نماز جمعہ کے بعد دونوں شعروں کو کاغذ پر لکھے اور انہیں گلاب کے پانی سے مٹا کر پی لے اور پھر عصر، مغرب اور عشاء کی نمازیں پڑھنے تک قبلہ کی طرف منہ کر کے وہیں بیٹھا رہے اور اس دوران اللہ کے سامنے گڑگڑاتا اور زاری کرتا رہے اور نبی کریم ﷺ پر درود شریف پڑھتا رہے اور اللہ سے توبہ کی دعا کرے تو وہ اپنی جگہ سے اٹھنے بھی نہ پائے گا کہ آپ پر قابو پالے گا اور اللہ تعالیٰ اس کے دل میں توبہ کی راہ ڈال دے گا۔

اے بھائی! میں تجھے نصیحت کرتا ہوں کہ عبادتوں میں اکتانے سے پرہیز کرو اور اکھڑے بغیر انہیں ہمیشہ پڑھنے میں لگے رہو۔



شعر (۲۶)

أَسْتَغْفِرُ اللَّهَ مِنْ قَوْلٍ بِلَا عَمَلٍ
لَقَدْ نَسَبْتُ بِهِ نَسْلًا لِيَذِي عُقْمٍ

(ترجمہ:) ”میں اس بات پر اللہ سے بخشش مانگتا ہوں جس پر میرا اپنا عمل نہیں ہوتا ہے کیونکہ یہ ایسا ہوگا جیسے میں کسی اولاد کو بانجھ عورت کی بنا دوں۔“

جب سچے نصیحت کرنے والے اور عاشق ناظم رحمہ اللہ نے دیکھا کہ ان کا نفس روکے ہوئے کام کرتا چلا جاتا ہے اور کھیل کود میں لگا ہوا ہے حالانکہ اللہ تعالیٰ نے فرما رکھا ہے کہ ”تم لوگوں کو نیکی کرنے پر تیار کرتے ہو لیکن اپنے آپ کو بھلا چکے ہو جبکہ تم کتاب پڑھتے ہو، کیا تم سمجھتے نہیں“ (سورۃ البقرہ آیت: ۴۴) نیز فرمایا ہے کہ ”اے ایمان والو! تم وہ بات کیوں کہتے ہو جس پر تمہارا اپنا عمل نہیں کیونکہ یہ بات اللہ کے ہاں ناراضگی والی گنی جاتی ہے کہ تم لوگوں کو وہ بات کہو جس پر تم خود عمل نہیں کرتے“ (سورۃ الصف آیت ۲-۳) اور نیک کام کرنے کو کہنا اور خود اس پر عمل نہ کرنا، اگرچہ اچھی بات ہے لیکن عام طور پر دیکھا جائے تو یہ بُری بات ہے اسی بناء پر ناظم نے اللہ کی طرف رجوع کیا اور توبہ کرتے ہوئے دوسروں سے کہا: ”أَسْتَغْفِرُ اللَّهَ الْخ“۔

یاد رکھو کہ ”اسْتَغْفَرَ“ کا مطلب بخشش مانگنا اور ان پر پردہ ڈالنا ہوتا ہے اور یہاں اس کا مطلب ہے کہ میں اللہ کی طرف رجوع کرتا ہوں اور اللہ سے پردہ ڈالنے کی درخواست کرتا ہوں اور جو کچھ کر چکا ہوں اس سے اللہ کی طرف لوٹتا ہوں۔

تحقیق الفاظ

”مِنْ قَوْلٍ“، ”أَسْتَغْفِرُ“ سے متعلق ہے۔

اگر یہ کہا جائے کہ اگر اس لفظ سے تعلق کرتے ہو تو اس بناء پر دو حرف جار کا ایک ہی معنی میں ہوتے ہوئے ایک فعل سے تعلق بنے گا کیونکہ یہ اصل میں ”أَسْتَغْفِرُ مِنَ اللَّهِ“ ہے تو میں کہوں گا کہ ہم اس صورت میں روکی چیز کا لازم آجانا نہیں مانتے اور اگر مان بھی لیا جائے تو پھر یہ کیوں نہیں ہو سکتا کہ یہ مطلق اور مقید میں شامل ہو اور اگر یہ بھی مان لیا جائے تو ہم یہ نہیں مانتے کہ یہ دونوں ایک فعل سے متعلق ہیں اور یہ ہو بھی کیسے سکتا ہے جبکہ پہلا ”مِنْ“ ”سین“ سے نکلنے والے طلب کے معنی

سے متعلق ہے اور دوسرا ”من“، ”مَغْفِرَةٌ“ کے مادہ سے تعلق رکھتا ہے اور ”قَوْل“ سے مراد یہی لفظ ہے جو ہم بولتے ہیں ”بِلا عَمَل“ ظرفِ مستقر ہے جو ”قَوْل“ کی صفت ہے، معنی یہ ہوگا: ایسا قول جس کے ساتھ ”عمل“ نہ ہو اور ”قَوْل“ و ”عَمَل“ دونوں کی تنوین مضاف الیہ کی جگہ آئی ہے۔ عبارت یوں بنتی ہے: ”من قول متلبس بترك عملی“۔

”لَقَدْ نَسَبْتُ“ جملہ استینافیہ معانیہ ہے گویا کہ کہا گیا: تم فصیح قول جس میں اچھی باتیں ہیں اور کوئی خرابی نہیں اس سے بخشش کیوں مانگتے ہو تو حضرت ناظم رحمہ اللہ نے اس کا جواب دیتے ہوئے کہا: ”لَقَدْ نَسَبْتُ“۔ اس میں ”ل“ قسم کھانے کی راہ بنائے کیلئے ہے۔ ”نسبت“ کا معنی نسبت کرنا ہے۔ ”بہ“ میں باء سبب کا معنی دیتی ہے اور اس کی ضمیر قول ”بلا“ عمل کی طرف جاتی ہے۔ ”نَسْل“ کا لفظ بچوں کا معنی دیتا ہے جیسے حدیث پاک میں ہے: ”تَنَا كَحُوا تَنَاسَلُوا“ (نکاح کرو کہ اولاد والے ہو جاؤ) اور یہ ”نَسَبْتُ“ کا مفعول ہے اس ”وَلَد“ اور ”نَسْل“ سے مجازی اور استعاراتی طور پر عمل کرنا مراد ہے کیونکہ ناظم نے ”عمل“ کو ”ولد“ سے اس بناء پر تشبیہ دی ہے کہ دونوں فائدہ دینے کی چیزیں ہیں تو جیسے اولاد سے دنیا میں فائدہ لیا جاتا ہے ویسے ہی عمل سے آخرت میں فائدہ لیا جائے گا، ”عمل“ کو ”ولد“ کے مفہوم کیلئے استعارہ کیا گیا چنانچہ اسے ذکر کر کے عمل مراد لیا گیا۔

”لِذِي“ کا تعلق ”نَسَبْتُ“ سے ہے ”عُقْم“ (پیش کے ساتھ) ایسی بیماری جس کا علاج نہ ہو جس کا معنی ہے: رحم یا پشت کا بچے کو قبول نہ کرنا۔ ”لِذِي عُقْم“ سے اپنے آپ کو مراد لیا ہے کیونکہ ناظم نے اپنے بے عمل نفس کو ایسے آدمی سے تشبیہ دی ہے چنانچہ بانجھ کو ذکر کر کے اپنا آپ مراد لیا ہے۔

شعر کا حاصل معنی یوں ہوگا کہ میں اللہ سے اپنے اس قول پر بخشش مانگتا ہوں جو بے عمل ہو کر کام کرنے اور روکنے کیلئے ہے کیونکہ صاف پتہ چل رہا ہے کہ اچھائی کا حکم دینے اور بُرائی سے روکنے والا حکم دینے اور روکنے والا ہے اور جب دیکھنے میں حکم دینے اور روکنے والا نہیں تو یہ ایسے ہوا جیسے فضیلت کا تعلق کسی نااہل سے جوڑ دیا اور جیسے اولاد کا تعلق کسی بے اولاد آدمی سے جوڑ دیا جو بے فرمانی اور گناہ کا کام ہے کیونکہ یہ جھوٹ اور بہتان بنتا ہے اور پھر وہ کلام جس کے ساتھ عمل کا دخل نہ ہو بے مقصد ہوتی ہے جیسے کہتے ہیں کہ وہ قول جو زبان سے نکلتا ہے، کانوں میں نہیں پہنچتا لیکن جو دل سے نکلتا ہے

وہ دل پر جا لگتا ہے۔

چنانچہ حضرت اسامہ بن زید رضی اللہ عنہ ایک حدیث میں فرماتے ہیں: میں نے رسول اللہ ﷺ کو فرماتے سنا کہ جس رات مجھے راتوں رات آسمانوں پر معراج کرائی گئی، میں ایسے لوگوں سے ملا جن کے ہونٹ آگ والی قینچیوں سے کاٹے جا رہے تھے، میں نے جبریل علیہ السلام سے پوچھا کہ یہ کون لوگ ہیں؟ انہوں نے کہا کہ یہ آپ کی امت کے وہ خطیب ہیں جو ایسی باتیں کرتے تھے جس پر خود عمل نہیں کرتے تھے۔

یہاں ایک دلچسپ حکایت بیان کرتا ہوں جسے حضرت اسماعیل حقی رحمہ اللہ نے اپنی تفسیر میں لکھا ہے اور وہ یہ کہ ایک ایسا عالم تھا جس کی گفتگو میں بہت اثر تھا، دلوں پر قابو پالیتا تھا اور اس کے مجمع میں ایک دو آدمی مر بھی جایا کرتے تھے کیونکہ اس کے وعظ میں بہت اثر تھا، اس عالم کے شہر میں ایک بڑھیا رہتی تھی جس کا ایک لڑکا تھا جو نیک، نرم دل اور فوراً اثر قبول کرنے والا تھا، اس کی ماں اس واعظ کی مجلس میں جانے سے ڈراتی اور روکتی تھی، ایک دن ماں کو پتہ بھی نہ چلا اور وہ اس کی محفل میں پہنچ گیا چنانچہ جو اللہ کو منظور تھا، ہو گیا (مر گیا) ایک دن وہ بڑھیا اس واعظ کو راستے میں ملی اور کہنے لگی:

اتَّهْدِي الْأَنَامَ وَلَا تَهْتَدِي
أَلَا إِنَّ ذَلِكَ لَا يَنْفَعُ
فِيَا حَجَرَ الشَّحْدِ حَتَّى مَتِي
تَحُدُّ الْحَدِيدَ وَلَا تَقْطَعُ

”کیا تم لوگوں کو تو ہدایت دیتے رہو گے اور خود ہدایت نہیں پاسکو گے، سن لو کہ یہ بات فائدہ والی نہیں ہے تو اے سان کے پتھر تم لوہے کو کب تک تیز کرو گے اور اس سے کچھ کاٹو گے نہیں؟“

چنانچہ جب واعظ نے اس کی یہ بات سنی تو سسکیاں لیتا ہوا اپنے گھوڑے سے غش کر گر گیا، لوگ اٹھا کر اسے اس کے گھرالائے تو وہ فوراً مر گیا تو اے بھائی! تمہیں اس بڑھیا کی بات پر عمل کرنا چاہیے۔



شعر (۲۷)

أَمْرُكَ الْخَيْرَ لَكِنْ مَّا ائْتَمَرْتُ بِهِ
فَمَا اسْتَقَمْتُ فَمَا قَوْلِي لَكَ اسْتَقِم

(ترجمہ:) ”اور میں تمہیں تو نیکی کرنے کو کہتا ہوں لیکن خود نیک کام نہیں کرتا چنانچہ جب میں خود صحیح کام نہیں کرتا تو میرا حق نہیں بنتا کہ تمہیں سیدھی رات پر چلنے کو کہوں۔“
جب ناظم کے قول میں ان کے عمل نہ کرنے کا پتہ نہیں چل رہا تھا تو انہوں نے اپنے اس قول سے اسے بیان کیا کہ ”أَمْرُكَ الْخَيْرَ الْخ“۔

حضرت شیخ زادہ (شارح قصیدہ) رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ امام بو صیری رحمہ اللہ نے ”أَمْرُكَ“ اور ”نَسَبْتُ“ کے درمیان حرف عطف کو صرف اس لئے چھوڑا ہے کیونکہ دونوں کے درمیان گہرا تعلق ہے کیونکہ یہ اس کا سبب بنتا ہے۔ ”امر“ وہ صیغہ ہے جو شان والا ہو کر کسی سے کام چاہتا ہے۔ اگر یہ کہا جائے کہ ناظم نے صرف ”امر“ ہی کو ذکر کیوں کیا ہے، نہی کو کیوں نہیں کیا جبکہ وہ امر و نہی دونوں کا ذکر کر چکے ہیں؟ تو ہم کہیں گے کہ انہوں نے ”امر“ سے وہ کچھ مراد لیا ہے جو دونوں کو عام ہے جیسے کہا جاتا ہے کہ بادشاہ کا حکم ہے کہ کوئی بھی کسی کو تکلیف نہ دے۔

تحقیق الفاظ

”الْخَيْرَ“ (نصب سے) یہ ان لفظوں میں سے ہے جس سے کچھ حذف کر کے پہلے لفظ کو اس کے ساتھ ملایا گیا ہے یعنی اصل میں ”بِالْخَيْرِ“ تھا۔ ”خبر“ اسے کہتے ہیں جس کا نتیجہ اچھا ہو اور جب حضرت ناظم کے قول ”أَمْرُكَ الْخَيْرَ“ یہ وہم پیدا کرتا تھا کہ انہوں نے یہ نیک کام خود بھی کیا ہے کیونکہ خود کرنا شرع میں حکم کرنے کو لازم ہے تو اس غلطی کو دور کر دیا اور کہہ دیا کہ میں نے خود یہ کام نہیں کیا۔

”اِئْتَمَارٌ“ فعل لازم ہے جس کا معنی حکم قبول کرنا ہے۔

”مَا اسْتَقَمْتُ“ کا ”اِئْتَمَرْتُ“ پر عطف ہے۔ استقامت کا مطلب ہے: علم و عمل کو چھوڑے بغیر ہمیشہ قائم رہنا، انہوں نے استقامت کی نفی صرف اس لئے کی کہ یہ ایک بڑا کام ہے چنانچہ اسی بناء پر حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام نے فرمایا تھا کہ ”مجھے ہود سورت نے بوڑھا کر دیا ہے اور کسی نیک آدمی نے

بتایا کہ میں نے خواب میں رسول اللہ ﷺ کی زیارت کے دوران عرض کی کہ یا رسول اللہ! میں نے آپ کا یہ فرمان سنا ہے کہ ”مجھے سورت ہود نے بوڑھا کر دیا ہے“ (مشکوٰۃ المصابیح، کتاب الرقاق، باب التوکل والصبر، جلد ۳ صفحہ ۱۴۵، رقم الحدیث: ۵۳۵۳) تو آپ نے فرمایا کہ ہاں ٹھیک ہے، میں نے عرض کی کہ آخر بوڑھا کس چیز نے کیا ہے، کیا وہ انبیاء علیہم السلام کے واقعات ہیں یا اُمتوں کے ہلاک ہونے کے؟ تو آپ نے فرمایا: نہیں! بلکہ اللہ کے اس فرمان نے: ”فَاسْتَقِمَّ كَمَا أُمِرْتَ“ (سورۃ ہود، آیت: ۱۱۲) (جیسے آپ کو حکم ملا ہے، اس کے مطابق کرو) اور اس کی وجہ یہ ہے کہ استقامت کی حقیقت، سارے عہدوں کو پورا کرنا ہے اور سیدھی راہ پر یوں چلنے کا نام ہے کہ کھانے، پینے، لباس اور ہر دینی و دنیوی کام میں شوق اور ڈر کو سامنے رکھتے ہوئے درمیانے درجے پر چلنے کا خیال کرو اور یہی چیز آخرت میں صراطِ مستقیم ہوگی اور استقامتِ اعتدالیہ کی اس راہ پر چلنا بہت مشکل کام ہے جیسے بحر العلوم میں فرمایا کہ اللہ کی ساری حدوں پر یوں استقامت کرنا جیسے اللہ کا حکم ہے، انسانی طاقت سے باہر ہے چنانچہ اسی بناء پر حضور ﷺ نے فرمایا کہ مجھے سورۃ ہود نے بوڑھا کر دیا چنانچہ جو پورا واقف ہوتا ہے، وہ پوری استقامت یعنی سیدھی راہ پر ہوتا ہے۔

استقامت کا مقابلہ کرامت سے

اسی سلسلے میں حضرت ابوعلیٰ جر جانی رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ تم کرامت کی بجائے استقامت کی خواہش رکھو اور بڑی کرامت اللہ خالق کی خدمت میں ہے نہ کہ کرامتیں ظاہر کرنے میں چنانچہ ایک ولی سے کسی نے کہا کہ فلاں شخص پانی پر چل لیتا ہے تو انہوں نے فرمایا کہ مینڈک اور مچھلی بھی تو چل لیتے ہیں، پھر کہا گیا کہ فلاں شخص ہوا میں اڑ لیتا ہے تو انہوں نے کہا کہ مکھی بھی تو اڑا کرتی ہے، پھر کہا گیا کہ فلاں شخص لمحہ بھر میں مشرق سے مغرب تک پہنچ جاتا ہے تو انہوں نے فرمایا کہ شیطان کا بھی تو یہی کام ہے، پھر پوچھا گیا کہ آپ کو کیا چیز پسند ہے؟ انہوں نے فرمایا کہ ”دین میں استقامت“۔

”فَمَا قَوْلِي الْخ“ میں فاء عطف کیلئے ہے اور یہ ”أَمْرُكَ“ پر عطف ہے اور یہاں لفظوں میں تو جملہ انشائیہ کا خبریہ پر عطف ہے لیکن اس کے معنی کو دیکھیں تو انشائیہ کا انشائیہ ہی پر عطف بنتا ہے کیونکہ ناظم کا ”أَمْرُكَ“ کہنا دیکھنے میں خبر ہے لیکن معنی کو دیکھیں تو معنی حسرت ظاہر کرنا اور اپنے حال پر افسوس کر دکھانا ہے جیسے ان کا قول ہے:

”هَوَايَ مَعَ الرَّكْبِ الْيَمَانِينَ مُصْعِدٌ“

یا یہاں جملہ خبریہ کا خبریہ پر عطف ہے کیونکہ ناظم کے قول ”فَمَا قَوْلِي لَكَ“ کا معنی ہے کہ ”یہ لائق نہیں کہ میں کہوں“۔

”فَمَا“ میں ”مَا“ استفہامیہ ہے جس سے مقام کے مناسب معنی نکلتا ہے جیسے جھڑکنا، تعجب کرنا، غلطی ماننا اور جیسے انکار کرنا۔

”لَكَ“ کا تعلق ”قَوْل“ کے ساتھ ہے چنانچہ یہاں ”قَوْل“ سے مراد خطاب کرنا ہے کیونکہ یہ لام کے ساتھ استعمال ہوا ہے۔

”اِسْتَفِمْ“، ”اِسْتَفَامَ“ سے امر کا صیغہ ہے اور یہ جملہ ”لِقَوْلِي“ کا مقولہ ہے معنی یہ ہوگا ”میرا تجھے ”اِسْتَفِمْ“ کہہ کر خطاب کرنا“۔

اگر تم کہو کہ یہاں ”اِسْتَفِمْ“ کا لفظ کہاں ہے وہ تو موجود ہی نہیں تو کہنا درست نہ ہوگا کیونکہ پہلے تو کھل کر یہ لفظ آیا ہی نہیں تو ہم کہیں گے کہ اگرچہ یہ لفظ کھل کر پہلے نہیں آیا لیکن اشارے کے طور اندر ہی اندر آچکا ہے کیونکہ پہلے قول کا مقصد نفسِ اتنا رہ کو تابع کرنا اور نفسِ مطمئنہ کو اس کا فرمانبردار بنانا ہے اور وہ یوں کہ یہ اس کے حکم کو مانے اور اس کے روکنے پر رُک جائے اور یہ درست ہونے تک اس کی فرمانبرداری کے بغیر ممکن نہیں کہنے کا مقصد یہ ہے کہ اگرچہ ”اِسْتَفِمْ“ کا لفظ پہلے تو نہیں آیا لیکن اس کا معنی تو آچکا ہے اور یہاں مراد اس کا معنی ہے لفظ نہیں۔

حاصل معنی یہ ہے کہ میں خود گنہگار اور بے فرمان ہوں کیونکہ میں نے تمہیں تو کہا اور نصیحت کی لیکن خود نہیں مانا اور نہ ہی نصیحت قبول کی ہاں تجھے کہہ دیا کہ ”درست ہو جاؤ“ اس پر تعجب ہی کر سکتا ہوں، فائدہ کچھ نہیں کیونکہ وعظ کا اثر لینے والے کسی شخص کو وعظ کرنا، سننے والے پر اثر نہیں کرتا جیسے کہا گیا ہے:

”وَلَا يَسْتَفِيمُ الظِّلُّ وَالْعُودُ اَعْوَجُ“

یعنی جب لکڑی ہی ٹیڑھی ہو تو اس کا سایہ کیسے سیدھا ہوگا! اور ایک شاعر یوں کہتا ہے:

وَعَبْرُ تَقِي النَّاسِ بِأَمْرٍ بِالتَّقِي

طَيْبٌ يُدَاوِي النَّاسَ وَهُوَ مَرِيضٌ

”جو متقی اور پرہیزگار نہ ہوتے ہوئے لوگوں کو پرہیزگار بننے کا کہتا ہے وہ ایسا طیب ہے

جو لوگوں کا علاج تو کرتا ہے لیکن خود مریض ہوتا ہے“۔

اور یہی وجہ ہے کہ ایک واعظ سے کہا گیا تھا کہ ”اپنے آپ کو وعظ کرو“ اگر تم پر اس کا اثر ہو چکا ہو تو دوسروں کو وعظ کرو ورنہ اللہ سے شرم کرو لیکن ایک مؤمن کیلئے لازم ہے کہ وہ واعظ کو دیکھے بغیر اس کا وعظ قبول کرے کیونکہ دانائی کی بات مؤمن ہی ہوتی ہے لیکن وہ اسے بھلا چکا ہوتا ہے اسے وہ جہاں سے ملے لے لے:

”افسوس مجھے اپنے نفس پر ہے کہ میں اس کے ذریعے کوئی سواری حاصل نہیں کر سکا اور نہ ہی اس کے بہانے سے کوئی ساتھی اور قافلہ پاسکا ہوں۔“



شعر (۲۸)

وَلَا تَزَوَّدْتُ قَبْلَ الْمَوْتِ نَافِلَةً
وَلَمْ أَصِلْ سِوَى فَرِيضٍ وَلَمْ أَصِمِّ

(ترجمہ:) ”اور مرنے سے پہلے میں کوئی سفر خرچ جمع نہیں کر سکا چنانچہ نہ تو فرض نماز کے بغیر کسی قسم کی نماز پڑھی اور نہ روزے ہی رکھ سکا ہوں۔“

جب حضرت ناظم رحمہ اللہ کا پہلا فرمان ”مَا أَتَمَرْتُ بِهِ“ واضح نہیں تھا بلکہ خفیہ تھا تو اب اسے کھول کر بتاتے ہوئے فرمایا ہے کہ ”وَلَا تَزَوَّدْتُ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

یہاں واو عاطفہ ہے اور ”لا“ کو دوبارہ لانا نفی کی تاکید ہے ”التَّزَوُّدُ“ بابِ تَفَعُّلٍ سے ہے ”الزَّاد“ سے لیا گیا یہ کھانے کا وہ سامان ہوتا ہے جو سفر کیلئے لیا جائے تاہم یہاں اس سے مراد اللہ کی فرمانبرداری اور عبادتیں ہیں چنانچہ اس میں استعارہ مکنیہ ہے ناظم نے اپنے خیال میں اپنے نفس کو اس آدمی سے تشبیہ دی جو سفر کرنا چاہتا ہے تشبیہ اس بات میں ہے کہ یہ دونوں اس چیز کے محتاج ہوتے ہیں جو سفر میں ان کیلئے ضروری ہو تو جیسے کسی جگہ سے سفر کرنے والے کیلئے کھانے پینے کا سامان اور سواری ضروری ہوتی ہے یونہی وہ نفس جو دنیا سے آخرت کے سفر پر روانہ ہوگا اسے بھی سامان کرنا ہوگا جو اللہ کا ڈر اور نیک کام ہیں پھر ذہن میں سفر پر جانے والے کو اس شخص سے استعارہ کیا گیا اور پھر خارج میں مشبہ یعنی اپنے نفس کو ضمیر متکلم لا کر ذکر کیا اور مشبہ ہی (اپنے نفس کو) مراد لیا گیا جبکہ ذہن میں موجود اس استعارہ کی طرف اشارے کیلئے وہ سامان سفر ثابت کیا جو مشبہ بہ کو مشبہ کیلئے لازم ہے اور یہ ثابت کرنا تخیلیہ بنتا ہے اور یہ بھی ہو سکتا ہے کہ ”تَزَوَّدْتُ“ میں استعارہ مُصَرَّحٌ اور تَبَعِيَّةٌ ہو اور وہ یوں کہ عبادتیں کرنے پر ہیزگاری اور اللہ کی طرف سیر کرنے کو سفری سامان تیار کرنے کے ساتھ اس بناء پر تشبیہ ہو کہ دونوں میں نفع ہوتا ہے پھر ”تَزَوُّدُ“ یعنی سفر خرچ تیار کرنے کو اللہ سے ڈرنے کے ساتھ استعارہ کیا جو آخرت کیلئے سامان ہے چنانچہ پھر سامان سفر تیار کرنے کو ذکر کر کے عبادتیں کرنا اور اللہ سے ڈرنا مراد لیا اور اس استعارہ کو دیکھتے ہوئے ”تَزَوَّدْتُ“ کا صیغہ ”تَزَوُّدُ“ مصدر سے نکالا گیا اور ”اتَّقيت من الله“ کا صیغہ ”اتِّقَاءُ“ مصدر سے لیا اور ”اتَّقيت“ کو ”تَزَوَّدْتُ“ سے تشبیہ

دی پھر ”تزودت“ کی شکل کو ذکر کر کے ”اتقیّت“ مراد لیا گیا۔ اس مجاز یعنی ”اتقیّت“ اور ”تنفلت“ کی جگہ ”تزودت“ کو لینے میں اس طرف اشارہ کرنا ہے کہ یہ دنیا کوچ کر جانے کی جگہ ہے اور سب لوگ مسافر ہیں لہذا نہیں زادِ راہ اور سفری سامان کی ضرورت ہے جیسے حضور نبی کریم ﷺ نے فرمایا ہے کہ: ”دنیا میں پردیسی یا مسافر جیسا بن کر رہو اور اپنے آپ کو قبروں والوں کی طرح جانو“ (سنن ترمذی، کتاب الزہد، باب ماجاء فی قصر الابل، جلد ۲ صفحہ ۱۴۹، رقم الحدیث: ۲۳۴۰) تو جیسے سفری خرچ مقصد کے قریب پہنچانے کا بہانہ ہے اسی طرح عبادت بھی اللہ کے قریب کرنے کا بہانہ ہے جیسے حدیث قدسی میں فرمانِ الہی ہے کہ ”بندہ نفل پڑھ پڑھ کر میرے قریب ہونے کی کوشش کرتا رہتا ہے چنانچہ مجھے اس سے پیار ہو جاتا ہے“ (کنز العمال، حرف الہزۃ، جلد ۱ صفحہ ۱۲۷، رقم الحدیث: ۱۱۵۳)۔

”نَافِلَةٌ“ نصب کے ساتھ ”تزودت“ کا مفعول ہے اور اس ”نافلۃ“ سے مراد ایسی قُرْبَت و عبادت ہے جو واجب اور فرض نہیں۔

”لَمْ أُصَلِّ“ میں عطف ہے جو پہلے کی تفسیر اور وضاحت ہے اور اس وہم کو دور کرنا بنتا ہے کہ انہوں نے نہ تو فرض پڑھے اور نہ روزے رکھے جس کا معنی یہ ہے کہ میں نے فرضوں کے علاوہ کوئی نماز قائم نہ کی۔

”فَرَضٌ“ لغت میں اندازہ لگانا اور کاٹنا کے معنی میں ہے لیکن شریعت میں اسے کہتے ہیں جو بات ٹھوس طریقے پر ثابت ہو اور اس میں کوئی شبہ نہ ہو۔

”لَمْ أَصُمْ“ کا عطف ”لَمْ أُصَلِّ“ پر ہے اور اس کا مفعول محذوف ہے جو پہلے سے پتہ چل رہا ہے یعنی میں نے فرضوں کے علاوہ کوئی نماز نہیں پڑھی۔

”الصَّوْمُ“ کا معنی لغت میں ”رُک جانا“ ہوتا ہے جبکہ شرع میں صبح سے مغرب تک کھانے پینے اور ہمبستری سے خاص طریقے پر رُکنے کو کہتے ہیں۔

”فَرَضٌ“ کا لفظ دونوں جگہ محذوف موصوف کی صفت ہے یعنی نمازِ فرض اور فرضِ روزے۔

اگر تم کہو کہ فرضوں کو قائم کرنا بہتر کام ہے جس میں ثواب ہوتا ہے اور آخرت میں بھی نتیجہ اچھا ہوگا تو کیا پھر یہ ناظم کے قول ”مَا اَنْتَمَرْتُ بِالْخَيْرِ“ کے خلاف نہ ہو جائے گا چنانچہ میں کہوں گا کہ ”فَرَضٌ“ کی تنوین تقلیل کیلئے ہے اور معنی یہ ہے کہ میں نے دنوں اور راتوں میں ڈھیر سارے نفل پڑھ کر بھی اپنے بندہ ہونے کا پورا حق ادا نہیں کیا جبکہ نماز اور روزہ تو دین میں فرض ہیں لیکن لگتا ہے کہ

حضرت ناظم رحمہ اللہ تعالیٰ کے اس فرمان کو سامنے رکھتے ہوئے انہیں گنتی میں نہیں لائے کہ ”وَمَا خَلَقْتُ الْجِنَّ وَالْإِنْسَ إِلَّا لِيَعْبُدُونِ“ (سورۃ الذاریات آیت: ۵۶) (میں نے جنوں اور انسانوں کو صرف اپنی عبادت کیلئے پیدا کیا ہے)۔

حضرت جنید ابو عبد اللہ اور امام ابو حنیفہ کی عبادت کے رنگ

اس شعر کا مطلب یہ ہے کہ میں نے فوت ہونے سے پہلے کچھ نفل پڑھ کر سفر خرچ تیار نہیں کیا اور نہ ہی موت سے پہلے بڑے مرتبوں پر پہنچنے کی تیاری کی ہے اور چونکہ میری ہمت تھوڑی سی ہے اس لئے فرض روزے اور روزے ہی سنبھال سکا چنانچہ میں نے زیادہ نفل پڑھ کر اپنے بندہ ہونے کا وہ حق ادا نہیں کیا جو پرانے بزرگوں کی طرح کرنا چاہیے تھا جیسے کہا جاتا ہے کہ حضرت جنید رحمہ اللہ روزانہ اپنی دکان میں جا کر پردہ لٹکا دیتے اور چار سو نفل پڑھ کر گھر واپس آتے۔

پھر حضرت عبد اللہ بن حنیف رحمہ اللہ بتاتے ہیں کہ میں اپنے ابتدائی دور میں ایک رکعت پڑھنے کے دوران دس ہزار مرتبہ ”قُلْ هُوَ اللَّهُ أَحَدٌ“ (سورۃ الاخلاص آیت: ۱) پڑھا کرتا تھا اور کبھی ایسا بھی ہوتا تھا کہ میں ایک رکعت میں پورا قرآن پڑھ لیتا تھا اور کئی مرتبہ صبح سے عصر تک ایک ہزار رکعتیں نفل پڑھ لیتا تھا۔

ایک کتاب میں حضرت شریک رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ ایک سال میں حضرت امام ابو حنیفہ رحمہ اللہ کے ساتھ رہا لیکن اس دوران انہیں زمین پر پہلو لگاتے نہیں دیکھا اور پھر ان کے شاگرد گواہی دیتے ہیں کہ وہ صبح کی نماز عشاء کے وضو کے ساتھ ہی پڑھتے تھے۔

حضرت شعبہ رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ میں نے حضرت امام ابو حنیفہ کو پرکھا کہ جب سب لوگ سو جایا کرتے تو آپ گھر سے نکلتے اور مسجد میں جا کر نفل نماز پڑھنے لگ جاتے مجھ میں جاگنے کی ہمت نہ تھی چنانچہ میں ان کے جوتے میں چند کنکریاں رکھ کر واپس آ گیا پھر صبح کے وقت واپس آیا تو وہ وہیں کھڑے تھے اور دعائیں کر کے روتے جا رہے تھے میں نے ان کے جوتے دیکھے تو وہ کنکریاں ان میں ویسے ہی پڑی تھیں۔ زیادہ تفصیل بڑی کتابوں میں ملے گی۔

رہا روزہ تو جیسے رسالہ قشیریہ میں ہے کہ حضرت سہل بن عبد اللہ رحمہ اللہ عام طور پر ہر پندرہ دن بعد ایک دن کا روزہ چھوڑتے تھے اور رمضان میں چاند دیکھ کر چھوڑتے تھے ہر رات خالص پانی کے ساتھ افطار کرتے تھے۔

حضرت ابو تراب نخشی رحمہ اللہ بصرہ سے مکہ جانے تک صرف ایک دو لقمے کھایا کرتے اور حضرت ابو عثمان مغربی فرماتے ہیں کہ ایک ربانی آدمی چالیس دن میں صرف ایک مرتبہ کھاتا ہے جبکہ صدانی بزرگ اسی دن میں ایک مرتبہ کھانا کھاتا ہے۔

کہتے ہیں کہ حضرت سہل رحمہ اللہ نے تین سالوں میں صرف تین درہم کی خوراک کھائی تھی۔ شرح الطریقہ میں یونہی لکھا ہے۔

خَالَفْتُ أَمْرَ رَسُولٍ شَانُهُ قَدْ عَلَا

وَلَمْ أُطِعْ قَوْلَهُ فِي كُلِّ أَمْرٍ جَلَا

”میں نے رسول اکرم ﷺ کے حکم کی مخالفت کی جن کی شان بہت بلند ہے اور ہر واضح حکم میں ان کے فرمان کو نہیں مانا۔“



تیسری فصل:

کمالاتِ مصطفیٰ ﷺ

شعر (۲۹)

ظَلَمْتُ سُنَّةَ مَنْ أَحْيَى الظَّلَامَ إِلَى

أَنْ اشْتَكَيْتُ قَدَمَاهُ الضَّرَّ مِنْ وَرَمٍ

(ترجمہ:) ”میں اس شخصیت کی سنت پر ظلم کر بیٹھا ہوں جو اندھیری راتوں میں اس قدر عبادت کر کے انہیں زندہ بناتے تھے کہ سوج کی وجہ سے ان کے دونوں مبارک پاؤں میں تکلیف ہو جاتی تھی۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ دوسری فصل سے فارغ ہوئے جس میں نفس کی پہچان کرادی کہ وہ بُرائی کرنے کو کہتا ہے، نیک عملوں کیلئے تیار نہیں ہوتا، خواہشیں پوری کرنے میں لگا رہتا ہے، چنانچہ اسے بچے کی طرح پرورش کرنے کی ضرورت ہے اور اس کے کئے ہوئے حرام کاموں کی خاطر استغفار کیا تو اب تیسری فصل میں نبی کریم ﷺ کی خوبیاں بتانا شروع کرتے ہوئے فرمایا: ”ظَلَمْتُ سُنَّةَ الخ“۔

یہاں ملانے والی واؤ کو ربط و تعلق اور باریکی کی طرف اشارہ کیلئے رہنے دیا۔

اگر تم یہ کہو کہ ان دونوں فصلوں میں تعلق کیا ہے؟ تو میں کہوں گا کہ جب حضرت ناظم رحمہ اللہ نے پہلی فصل میں نفس کی پہچان کرادی تو اس فصل میں پروردگار کی پہچان کرانے کا ارادہ کیا، یہ اس حدیث پر عمل ہے کہ ”جس نے اپنے نفس کو پہچان لیا، اس نے اپنے رب کو بھی پہچان لیا“ (کشف الخفاء، باب المیم، جلد ۲ صفحہ ۲۳۴، رقم الحدیث: ۲۵۳۰) اور پروردگار کی پہچان نبی کریم ﷺ کی پہچان ہی سے ہوتی ہے تو نبی کریم ﷺ کی مدح و تعریف دراصل اللہ ہی کی تعریف بنتی ہے یہ کیونکہ کسی نقش کی تعریف بنانے والے کی تعریف بنا کرتی ہے جسے ہر ایک جانتا ہے اور حضرت ناظم نے صرف متکلم کا صیغہ استعمال کیا ہے تاکہ نبی کریم ﷺ کی تعریف کے دوران اپنی انتہائی عاجزی بتا سکیں اور یہ بتایا ہے کہ آپ کی تعریف ایسی مستقل ہو کہ اس میں کسی اور کی تعریف کا ذرہ بھر دخل نہ ہو۔

”ظَلَمْتُ“ کا صیغہ ”ظلم“ سے نکلا ہے اور لغت میں اس کا مطلب ”کسی چیز کو اس کی جگہ کی

بجائے کسی اور جگہ رکھ دینا“ ہے لیکن شریعت میں ظلم یہ ہے کہ حق بات کو چھوڑ کر غلط بات تک چلا جائے کسی دوسرے کی ذاتی چیز میں اس کی اجازت کے بغیر دخل دیا جائے اور یہاں مجازاً اس سے مراد اس کے لغت والے معنی کو چھوڑ دینا ہے کیونکہ جب کسی چیز کو دوسری جگہ رکھتے ہیں تو لازمی طور پر اصلی جگہ چھوڑنا ہی ہوتی ہے تو اس طرح یہ ان لفظوں میں شامل ہوا جن میں ملزوم کا ذکر کر کے لازم مراد لیا جاتا ہے۔

”سُنَّةٌ“ نصب کے ساتھ ”ظَلَمْتُ“ کا مفعول ہے اور لغت میں اس کا معنی طریقت اور راستہ ہے جبکہ شرع میں وہ راستہ ہے جس پر دین میں چلتے ہیں جو نہ فرض ہوتا ہے اور نہ ہی واجب چنانچہ اگر نبی کریم ﷺ اپنی کسی سنت پر ہمیشہ عمل کرتے رہے تو وہ مؤکدہ کہلاتی ہے لیکن اگر ہمیشہ نہیں کیا تو اسے سنت الہدیٰ (یا سنت غیر مؤکدہ) کہتے ہیں۔ یہاں اس سے مراد سنت مؤکدہ اور سنت الہدیٰ سے عام ہے چنانچہ اس سے مراد وہ شریف و پاکیزہ طریقہ ہے جو حنیفیہ اور نبی کریم ﷺ سے تعلق رکھتا ہے اور یہ وہ طریقہ ہے کہ جو اس پر چلتا ہے وہ اپنا مقصد پالیتا ہے۔

”مَنْ“ موصولہ ہے اور اس سے مراد نبی کریم ﷺ ہیں جنہیں ناظم نے آپ کی انتہائی بزرگی کی وجہ سے چھپایا ہے مطلب یہ ہوا: اس ذات کا طریقہ جو بڑے مرتبہ والے عظیم کرم فرمانے والے دلیری والے اور وہ نبی جو خلوص والے اور رحم والے ہیں جنہوں نے ”أَحْيَى الْخ“ (یعنی اندھیری راتوں میں عبادت کی)۔

”أَحْيَى“ کا مجازی معنی ہے: عبادت کی خاطر نیند چھوڑ دینا کیونکہ نیند اس لحاظ سے موت کی طرح ہوتی ہے کہ اس کے دوران عقل نہیں رہتی اور فائدہ نہیں اٹھایا جاسکتا اور یونہی بیداری اور جاگنا زندگی کی طرح ہوتا ہے چنانچہ ”أَحْيَى“ میں استعارہ مُصْرَحٌ تبعیہ ہے کیونکہ عبادت کیلئے نیند چھوڑنے کو ”أَحْيَاءُ“ کے ساتھ تشبیہ دی کہ اس میں فائدہ اور خوشی ہوتی ہے چنانچہ ”أَحْيَاءُ“ کو عبادت کی خاطر نیند چھوڑنے کیلئے استعارہ کیا گیا یہاں ”أَحْيَاءُ“ کو ذکر کر کے عبادت کیلئے سونا مراد لیا گیا اور اسی استعارے کو دیکھتے ہوئے ”أَحْيَاءُ“ سے ”أَحْيَى“ کا صیغہ نکالا گیا اور عبادت کیلئے نیند چھوڑنے سے ”تَرَكَ“ یا ”سَهَرَ“ (بیدار ہونا) نکالا اور پھر ”تَرَكَ“ کو ”أَحْيَى“ کے ساتھ اس تعلق کی بناء پر تشبیہ دی جو ان کی مصدروں میں ہے چنانچہ ”أَحْيَى“ ذکر کر کے عبادت کی خاطر نیند چھوڑنا مراد لیا گیا۔

ہم نے نیند چھوڑنے کے ساتھ ”لِلْعِبَادَةِ“ کی قید صرف اس لئے لگائی ہے کیونکہ بُرائی اور گناہوں

کیلئے نیند چھوڑنا ”اَحْيَاء“ شمار نہیں ہوتا بلکہ ”ماروینا اور گھاٹا کھانا“ گنا جاتا ہے۔
 ”الظَّلَام“ زبر کے ساتھ نور کا ختم ہونا ہے اور مجازی طور پر اس سے رات مراد ہے یہ ایسے ہے
 جیسے لازم کا ذکر کر کے ملزوم مراد لے لیا اور ”اَحْيَى“ کو ”ظَّلَام“ پر واقع کرنا مجاز ہے بالکل ایسے ہی
 جیسے دونوں طرفیں مجاز ہیں چنانچہ ”اَحْيَى الظَّلَام“ کا معنی حضور ﷺ کا ان وقتوں میں نیند چھوڑنا
 ہے جو نہایت لطیف شریف اور ایسے مبارک ہیں کہ جن میں خیر الانام ﷺ اندھیری راتوں کے
 دوران وحی اور الہاموں میں مصروف ہوتے تھے اور ان میں رکاوٹ بننے والے غیر اور حفاظت کرنے
 والے ہوتے ہی تھے۔

ناظم رحمہ اللہ کا فرمانا ”الْحَىٰ اِنْ اَشْنَكْتَ“ میں ”الْحَىٰ“ انتہاء کا معنی دیتا ہے جو ”اَحْيَى“ سے
 متعلق ہے۔ ”اَنَّ“ مصدر یہ ہے۔ ”اَشْنَكْتَ“، ”اَشْنِكَاء“ سے ہے جس کا معنی مظلوم کو اس شخص
 کے ظلم کے بارے میں اطلاع دینا ہے جس کے ظلم کو یہ دور نہیں کر سکتا چنانچہ ”اَشْنَكْتَ“ کا معنی اس
 نے شکایت ظاہر کی ہے جیسے کسی شاعر نے کہا ہے:

شَكَوْتُ وَمَا الشُّكْوَى لِمِثْلِي بِعَادَةٍ
 وَلَكِنْ تُفِيضُ الكَأْسُ عِنْدَ امْتِلَائِهَا

”میں نے شکایت کی حالانکہ میرے جیسے کو شکایت کرنے کی عادت نہ تھی لیکن پیالہ اس
 وقت پانی بہاتا ہے جب بھر جاتا ہے۔“

لیکن یہاں اصلی معنی پر نہیں ہے بلکہ وہ اس درد کو ظاہر کرتا اور بتاتا ہے جو بشری لحاظ سے دکھائی
 دینے والے امور لگتے ہیں تو یہ معنی یہ ہوا: ”آپ کے ان دو قدموں یعنی پاؤں نے ظاہر کیا اور بتایا جو
 نہایت عزت و احترام والے اور ایسے تھے جن میں پہنے جانے والے مبارک جوتوں پر لگی خاک پاک
 جہان بھر کے لوگوں کی آنکھوں کا سرمہ تھی۔“

”ضُرُّ“ زبر یا پیش کے ساتھ حال کی سختی کو کہتے ہیں یہ لفظ نصب کے ساتھ ”اَشْنَكْتَ“ کا
 مفعول ہے۔ ”مِنْ وَرَمٍ“، ”ضُرُّ“ حال یا اس کا بیان ہے۔ ”وَرَمٍ“ دوزبروں کے ساتھ سُوج جانے
 کے معنی میں ہے یعنی نبی کریم ﷺ پر جن دنوں وحی اترتی تھی تو آپ انتہائی عبادت کرتے تھے
 چنانچہ ساری ساری رات نفل پڑھتے ایک پاؤں پر کھڑے ہوتے تاکہ دوسرے پر بوجھ ہلکا ہو کیونکہ
 زیادہ دیر تک کھڑا ہونا ہوتا تھا اپنے آپ کو پوری طرح یوں تھکا لیتے کہ نہایت عزت و احترام والے

آپ کے دونوں پاؤں سوچ جاتے اور پہلی حالت سے دوسری حالت میں چلے جاتے چنانچہ اللہ تعالیٰ نے آپ کے دل مبارک کو تسلی دینے اور آپ کے ساتھ آپ کی اُمت کا بوجھ ہلکا کرنے کیلئے یہ فرمان اتارا: ”طه مَا أَنْزَلْنَا عَلَيْكَ الْقُرْآنَ لِتَشْقَى“ (سورۃ طہ، آیت: ۲-۱) یعنی اے محمد (ﷺ)! اپنے دونوں کے دونوں مبارک پاؤں زمین پر رکھا کیجئے اور اپنے آپ کو نہ تھکائیے کیونکہ ان کا بھی آپ پر حق ہے، ہم نے آپ پر قرآن اس لئے نہیں اتارا کہ آپ اپنے نفس کو تھکائیں اور اسے اس حالت تک لے جائیں جو عام لوگوں کے لحاظ سے انسانی زندگی ختم کر دینے والی ہوتی ہے۔ اس آیت کے اترنے کے بعد آپ کی مبارک عادت یہ ہوتی تھی کہ آپ دو تہائی رات گزرنے پر اُٹھ کر تہجد پڑھتے تھے۔

حضور علیہ السلام پر تہجد فرض تھی

یاد رکھو! مفسرین حضرات فرماتے ہیں کہ تہجد کی نماز حضور ﷺ پر تو فرض تھی لیکن آپ کی اُمت پر فرض نہ تھی کیونکہ اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: ”فَتَهَجَّدْ بِهِ نَافِلَةً لَكَ الْآيَةَ“ (سورۃ الاسراء، آیت: ۷۹) چنانچہ یہ چیز آپ کی خصوصیتوں میں شمار ہوتی ہے۔

پھر مفسرین فرماتے ہیں کہ نماز تہجد آپ کی اُمت کیلئے سنت ہے اور کیوں نہ ہو جبکہ حضور ﷺ فرما گئے ہیں کہ ”ایسی دو رکعتیں جنہیں کوئی شخص رات کے آخری حصہ کے درمیان پڑھتا ہے تو وہ اس کیلئے دنیا اور جو کچھ اس میں ہے سے بڑھ کر ہیں اور اگر میں اسے اپنی اُمت پر بوجھ نہ سمجھتا تو انہیں فرض کر دیتا“ (فردوس الاخبار، باب اللام، جلد ۲ صفحہ ۲۲۷، رقم الحدیث: ۵۴۴۴)۔

ایک اور حدیث پاک میں ہے: ”جبریل امین مجھے مسلسل رات کے نفلوں کیلئے کہتے رہے جس پر مجھے خیال آیا کہ میری اُمت کے نیک لوگ تو سو ہی نہ سکیں گے“۔

(کنز العمال، کتاب الصلاة، حرف الصاد، جلد ۷ صفحہ ۳۲۵، رقم الحدیث: ۲۱۴۲۱)

پھر علماء فرماتے ہیں کہ تہجد کی نماز چار سے بارہ رکعتوں تک ہوتی ہے جبکہ کچھ نے کہا ہے کہ دو سے بارہ تک ہوتی ہیں۔

پھر اس بارے میں علماء کا اختلاف ہے کہ کیا تہجد کا لفظ پوری رات میں قیام پر بولا جاسکتا ہے یا نہیں۔ حضرت خادمی رحمہ اللہ کے نزدیک جیسا کہ انہوں نے شرح الطریقہ میں لکھا ہے، وہ وقت ہے جو سونے کے بعد ہوتا ہے۔

اگر کہا جائے کہ حضور ﷺ کی اور بھی بہت سی خوبیاں ہیں تو ان میں سے صرف اسی کو پہلے کیوں لائے ہیں؟ تو میں کہوں گا کہ یہ اس طرف اشارہ ہے کہ آپ کی یہ عادتِ کریمہ سب خصلتوں سے بڑھ کر ہے اور سب کاموں سے زیادہ عزت والی ہے اور پھر آپ کی اس مدح میں اُمت کو شرم دلائی جا رہی ہے کہ نبی کریم ﷺ بہت بلند مرتبہ کے باوجود اپنے رب کی حد درجہ عبادت کرتے اور بہت زیادہ فرمانبرداری کرتے تھے اور اسی دوران جب آپ کے مبارک قدم سوج گئے تو آپ سے عرض کی گئی کہ آپ اس کے باوجود بھی تکلیف اٹھاتے ہیں جبکہ آپ کے بارے میں آچکا ہے کہ آپ کی اُمت کے پہلے اور آخری گناہ بخش دیئے گئے ہیں؟ تو آپ نے فرمایا: کیا میں وہ بندہ نہ بنوں جو شکر کرتا ہے (صحیح مسلم، کتاب صفۃ القیامۃ، باب اکثر الاعمال، جلد ۱ صفحہ ۱۵۱۴، رقم الحدیث: ۲۸۱۹) یعنی ان نعمتوں پر جو اللہ نے مجھ پر بخشش کی شکل میں کی ہیں اور اس کے ساتھ ”عبد“ کا لفظ بول کر آپ اشارہ فرما رہے ہیں کہ خود ان کیلئے عبادت گزاری کے سارے کام کرنے لازم ہیں اور اللہ کی ربوبیت کے حقوق کا زیادہ سے زیادہ شکر ادا کرنا بھی لازم ہے لیکن اے اُمت! تم لوگ کوتاہیوں اور گناہوں بلکہ علام الغیوب کے حکموں کو چھوڑنے میں لت پت ہو اللہ کی عبادت نہیں کرتے اور شام سے صبح تک یوں سوتے رہتے ہو جیسے تمہیں جنت حوضِ کوثر اور نجات کی خوشخبری مل چکی ہے اس پر افسوس ہی کیا جاسکتا ہے تم کیا خیال کر رہے ہو حالانکہ اللہ نے تو تمہیں عبادت کرنے کی خاطر پیدا کیا ہے لیکن تم سمجھتے ہی نہیں۔

عبادتوں میں نماز کو اہمیت کریں؟

اگر تم کہو کہ اللہ تعالیٰ نے حضور ﷺ کی عبادتوں میں سے راتوں کو زندہ رکھنے والی عبادت ہی کو کیوں اول قرار دیا ہے؟ تو میں کہوں گا کہ یہ قرآنِ کریم کی پیروی ہے کیونکہ اللہ تعالیٰ نے قرآنِ کریم میں جہاں بھی روزے کا ذکر فرمایا ہے نماز کو اس سے پہلے ذکر فرمایا ہے کیونکہ راتوں کی عبادت سب عبادتوں سے بڑھ کر ہے کیونکہ رات کے دوران بندے اور اس کے معبود کے درمیان اور کوئی نہیں ہوتا، اس وقت دعا فوراً قبول ہوتی ہے کیونکہ وہ نیک لوگوں کی عبادت کا وقت ہوتا ہے چنانچہ اسی بناء پر کہا گیا ہے کہ راتوں میں عبادت کرنے والا دو اجروں کا حقدار ہوتا ہے، ایک نیند چھوڑنے کا اجر اور دوسرا عبادت کرنے کا جبکہ ڈھیر ساری راتوں میں لگاتار عبادت کرنا، نیند چھوڑ دینا اور انہیں عبادت کر کے زندہ رکھنا رسولِ اکرم ﷺ کے بغیر کوئی کر ہی نہیں سکتا۔

اے میرے اللہ! تو ہمیں گمراہ اور سرپھرے لوگوں میں سے نہ بنا کہ جن کے گناہوں کی وجہ سے
ان پر فتویٰ لگ جائے اور ہمیں اس شخصیت کے گروہ میں اٹھانا جو اپنی مرضی سے بولتے ہی نہیں۔



شعر (۳۰)

وَشَدَّ مِنْ سَغَبٍ أَحْشَاءَهُ وَطَوَى
تَحْتَ الْحِجَارَةِ كَشْحًا مُتْرَفَ الْأَدَمِ

(ترجمہ:) ”اور پھر آپ سخت بھوک لگنے کے دوران پیٹ کو گس کر باندھ دیتے اور مبارک نرم پہلو کو پتھر کے نیچے کر دیتے۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب رسول اکرم ﷺ کی اس عبادت کا بیان کر دیا جو آخرت میں ہر قسم کے مرتبے حاصل کرنے کا ذریعہ ہوگی تو اب دنیا کے اندران کے دنیا سے بے تعلق ہونے اور اللہ کی رضا کیلئے سخت محنت پر لگنے کا بیان شروع کر دیا، چنانچہ فرمایا: ”وَشَدَّ مِنْ سَغَبٍ الْخ“۔
تحقیق الفاظ

واو عاطفہ ہے اور جملہ ”شَدَّ“، ”أَحْيَى“ پر معطوف ہے ”شَدَّ“ کا معنی ”باندھا“ ہے ”مِنْ“ کا لفظ سبب بتانے کیلئے ہے یعنی بھوک کے سبب۔

”سَغَب“ دوزبروں کے ساتھ کسی طرح کی بھوک اور یہ بھی کہتے ہیں کہ ”سَغَب“ اس بھوک کو کہتے ہیں جو تنگ کرے اور ستادے یہاں اس کا معنی بھوک جتانے کیلئے پتھر باندھنا ہے تاکہ آپ کے علاوہ آپ کے صحابہ بھی اسے اپنائیں ورنہ حضور ﷺ کو تو بھوک لگتی ہی نہ تھی کیونکہ آپ کا دل مبارک آپ کے مولا کا نور لے کر بھرا رہتا تھا، انہیں کھانے اور پانی پینے کی ضرورت ہی نہ تھی، انہیں تو ان کا رب کھلاتا پلاتا تھا جیسے آپ کی حدیث مبارک میں آیا ہے کہ: ”أَنَا أَيْتُ عِنْدَ رَبِّي يُطْعِمُنِي رَبِّي وَيَسْقِينِي“ (مسند امام احمد بن حنبل، جلد ۱۲ صفحہ ۴۰۸، رقم الحدیث: ۷۴۳۷) (میں اپنے پروردگار کے ہاں ہوتا ہوں جو مجھے کھلا پلا دیا کرتا ہے)۔

”أَحْشَاءُ“ نصب کے ساتھ ”شَدَّ“ کا مفعول ہے اور اس کی ضمیر اسم موصول کی طرف جاتی ہے ”الاحشاء“، ”حَشَى“ کی جمع ہے جس کا معنی ہے: ”دل“ اسے جمع بنا کر لایا گیا حالانکہ اللہ تعالیٰ نے کسی انسان کے پیٹ میں دو دل نہیں بنائے ہیں یہ دل کی عظمت اور اہمیت ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے فرمان میں ہے: ”فَنِعْمَ الْمُهْدُونَ“ (سورۃ الذاریات، آیت: ۲۸) چنانچہ یہ مجاز اور استعارہ ہوگا اور وہ یوں کہ آپ کے دل مبارک کو عزت و بزرگی کی بناء پر بہت سارے دلوں سے تشبیہ دی گئی، پھر زیادہ

دلوں کو آپ کے دل مبارک کے لئے استعارہ کیا گیا اور دلوں کا ذکر کر کے آپ کا دل مبارک مراد لیا گیا۔

”وَطَوَى“ کا ”شَدَّ“ پر عطف ہے جو تفسیر کرنے کیلئے ہے چنانچہ عطف کا حرف تفسیر کیلئے ہے یا ویسے ہے جیسے علت کا معلول پر عطف ہوتا ہے تو عطف کا حرف ”اذ“ کے معنی میں ہوا۔ ”طَوَى“ کا معنی ”پیٹنا“ ہے۔

حضرت شہاب رحمہ اللہ نے شفاء شریف کی شرح میں حدیث کا معنی بتایا ہے کہ حضرت ابن عباس رضی اللہ عنہما نے بتایا: رسول اللہ ﷺ اور آپ کے اہل خانہ لگا تار کئی کئی راتوں تک پتھر لپیٹتے رہتے کہ رات کو کھانا نہیں ہوتا تھا۔

”الَطَّى“ کا معنی بھوک ہے لیکن یہاں زیادہ مناسب یہ ہے کہ اس کا معنی لپیٹنا ہو اور یہ سب کے سامنے ہی ہے اور جب اس کا معنی لپیٹنا ہوگا تو یہاں اس سے مراد جسم کے ایک حصے کا دوسرے میں داخل ہو جانا ہوگا کیونکہ بھوک انتہاء کو پہنچی ہوتی تھی۔

”تَحْتَ الْحِجَارَةِ“، ”طَوَى“ کی ظرف ہے جس کے اندر وضع (رکھنے) کا معنی موجود ہے۔

”كَشْحًا“ نصب کے ساتھ ”طَوَى“ کا مفعول ہے اور ”الْكَشْحُ“ زبر اور سکون کے ساتھ اس حصے کو کہتے ہیں جو کوکھ اور پسلیوں کے درمیان ہوتا ہے۔

”مُتْرَفٌ“ زبر کے ساتھ ”كَشْحُ“ کا حال ہے یہ ”اِتْرَافٌ“ سے اسم مفعول ہے جس کا معنی ”زناکت“ ہے چنانچہ ”مُتْرَفٌ“ کا معنی انتہائی زناکت اور نرمی ہے۔

”اَدَمٌ“ دوزبروں کے ساتھ ”اَدِيمٌ“ کی جمع ہے جس کا معنی جلد ہے اور ”مُتْرَفٌ“ کی اس کی طرف اضافت صفت کی موصوف کی طرف بنتی ہے یعنی ”وہ جلد جو نرم و نازک ہے“۔

شعر کا حاصل معنی یہ بنتا ہے کہ ”میں نے جاگ کر اس عظیم ذات کی سنت چھوڑ دی جو نبی بردبار مخلص اور خالص ہیں جنہوں نے اپنا نرم پیٹ مبارک صرف اس وجہ سے باندھا کہ اپنی بھوک اپنے صحابہ کو بتا سکیں تاکہ وہ بھی آپ کی یہ سنت اپنائیں اور پھر اپنی نرم و نازک جلد والی کوکھ کو پتھر مبارک کے نیچے کر دیا تاکہ پتھر میں موجود ٹھنڈک حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام سے بھوک کی گرمی کو دور کر سکے۔

شعر کا حاصل مطلب یا تو یہ بتاتا ہے کہ حضور ﷺ سخت محنت سے کام لیتے تھے کیونکہ حضور علیہ

الصلوٰۃ والسلام عام طور پر بھوکے رہا کرتے تھے چنانچہ سیدہ طیہہ طاہرہ عائشہ صدیقہ رضی اللہ عنہا بتاتی ہیں کہ میں اس موقع پر خوب روئی جب میں نے دیکھا کہ آپ سخت بھوکے ہیں جس پر حضور ﷺ نے فرمایا: ”مجھے میرے نفس کو قبضہ میں لینے والے کی قسم! اگر میں اپنے رب سے یہ سوال کروں کہ ”تہامہ“ کے پہاڑ سونے کے بن کر میرے ساتھ ہی چلا کریں تو وہ زمین کے کسی بھی حصے تک انہیں چلا دے گا لیکن میں نے تو دنیا میں پیٹ بھرنے کی جگہ بھوک کو پسند کر رکھا ہے، دنیا کی امیری کی جگہ فقیری کو اور خوشی کی جگہ غمی کو پسند کر رکھا ہے تو اے عائشہ! یہ دنیا محمد اور آل محمد کو نہیں چھتی“ (الحديث) (فیض القدر، حرف الدال، جلد ۳ صفحہ ۳۶، رقم الحدیث: ۴۲۸۴)۔

ایک اور حدیث میں ہے کہ حضرت سیدہ عائشہ صدیقہ رضی اللہ عنہا نے بتایا: رسول اللہ ﷺ نے فرمایا: ”مجھے اطلاع دی گئی کہ اللہ تعالیٰ بطحاء مکہ کو سونے کا کر رہا ہے، جس پر میں نے عرض کی: نہیں یارب! میں ایک دن بھوکا رہنا چاہتا ہوں اور ایک دن سیر ہونا پسند ہے، پھر عرض کی کہ جس دن بھوکا رہوں گا، تیرے سامنے گڑ گڑا کر دعائیں کروں گا اور پیٹ بھر کھانے کے دن تیری حمد و ثناء کیا کروں گا“۔ (سنن ترمذی، کتاب الزهد عن رسول اللہ ﷺ، باب ماجاء فی الکفاف والعبر علیہ، جلد ۴ صفحہ ۱۵۵، رقم الحدیث: ۲۳۵۴)

رسالہ قشیرہ میں لکھا ہے کہ سیدہ فاطمہ الزہراء رضی اللہ عنہا رسول اکرم ﷺ کیلئے خشک روٹی کا ایک ٹکڑا لائیں تو آپ نے پوچھا: اے فاطمہ! یہ ٹکڑا کیا ہے؟ انہوں نے عرض کی: روٹی کا ایک ٹکڑا ہے جسے کھانے کیلئے میرا اپنا دل مطمئن نہ ہو سکا تو میں آپ کی خدمت میں لے آئی ہوں۔ اس پر آپ نے فرمایا: اے فاطمہ! تین دن کے بعد یہ پہلا ٹکڑا ہے جو تمہارے باپ کے پیٹ میں پہنچے گا۔

(الرسالة القشیریہ، باب الجوع، صفحہ ۱۷۷)

شعر کا دوسرا مطلب اس واقعے کی طرف اشارہ کرنا ہے جو جنگِ خندق میں پیش آیا تھا اور وہ یوں ہے کہ رسول اللہ ﷺ نے جب یہودیوں کے قبیلہ بنو نضیر کو مدینہ کے ارد گرد سے نکل جانے کا حکم دیا تو ان میں سے ابو عمر و راہب مکہ کی طرف اس لئے چلا گیا کہ مکہ کے قریشیوں کو نبی کریم ﷺ کے مقابلے میں تیار کرے اور وہ ابوسفیان کے گھر اس وقت پہنچا جب جاہلیت کا دور تھا، اس نے اس کی آؤ بھگت کی اور لشکر جمع کرنے لگا، اس نے دس ہزار کے قریب لشکر اکٹھا کیا اور مدینہ کی طرف روانہ ہوا۔

یہ خبر رسول اللہ ﷺ کو بھی مل گئی چنانچہ آپ نے صحابہ کرام سے مشورہ کیا تو اسی دوران حضرت

سلمان فارسی رضی اللہ عنہ نے عرض کی: یا رسول اللہ! عجم (ایران) کے علاقے میں دشمن کے کسی شہر پر حملہ کر رہے ہوتے ہوں اور وہ ان کا مقابلہ نہ کر سکیں تو شہر کے ارد گرد خندق کھود کر اس کی حفاظت کرتے ہیں۔

رسول اکرم ﷺ نے اس رائے کو پسند فرمایا اور صحابہ کرام پچاس دن تک خندق کھودنے میں لگے رہے۔ اتنے میں دشمن سر پر آ گیا اور انہوں نے انتیس دن تک مدینہ کو گھیرے میں لئے رکھا، مسلمانوں کو اس سخت مشقت کا سامنا کرنا پڑا اور ان پر پانچ مشکلات پڑ گئیں، ایک قحط تھا، دوسرا دشمن کی تعداد بڑی تھی، تیسرا قتل کا خوف تھا، چوتھا بھوک پیاس تھی اور پانچواں سخت سردی تھی۔ نبی کریم ﷺ کو صحابہ کرام کے حال پر رحم آ گیا چنانچہ آواز دی کہ جو مجھے دشمن کے بارے میں بتائے گا، وہ جنت میں میرے ساتھ ہوگا لیکن بھوک اور کمزوری کی وجہ سے کسی صحابی نے بھی آپ کو جواب نہ دیا، پھر آپ نے صاف طور پر چار صحابہ کے نام لئے تو انہوں نے عرض کی: یا رسول اللہ! بھوک اور سردی ہمیں یہاں سے ہلنے نہیں دیتی۔ پھر حضرت حذیفہ بن یمان رضی اللہ عنہ کو بلا کر اطلاع لینے کیلئے بھیجا، وہ گئے اور یہ خبر لے کر آئے کہ ان میں سے کچھ تو بھاگ گئے ہیں اور کچھ سخت سردی کی وجہ سے مر چکے ہیں۔

کہتے ہیں کہ حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام نے بھوک کی تکلیف دور کرنے اور صحابہ کو تعلیم دینے کیلئے پیٹ مبارک پر پتھر باندھ لیا تھا چنانچہ یہ چیز اس شخص کیلئے سنت بن گئی جو بھوکا ہو اور اسے روٹی نہ مل سکے تو وہ اپنے پیٹ پر پتھر باندھ لے تاکہ بھوک کی تکلیف ختم ہو جائے۔ یہ نبی کریم ﷺ کی طرف سے ہدایت ہے۔

اے اللہ! ہمیں اس دنیا کے اندر کسی مصیبت میں مبتلا نہ کر، ہمیں دونوں جہانوں میں اعلیٰ مرتبے عطا فرما نبی کریم ﷺ کے صدقہ میں جو بزرگی میں بہترین نسل کے ہیں۔



شعر (۳۱)

وَرَاوَدَتْهُ الْجِبَالُ الشُّمُّ مِنْ ذَهَبٍ
عَنْ نَفْسِهِ فَأَرَاهَا أَيَّمَا شَمَمٍ

(ترجمہ:)"سونے کے اونچے اونچے پہاڑوں نے آپ کی خدمت میں اپنا آپ پیش کیا لیکن آپ نے انہیں کوئی اہمیت نہ دی۔"

جب عام لوگوں کے ذہن میں آسکتا ہے کہ حضور ﷺ کا اپنے مبارک اور اللہ کی حکمتوں سے بھرے پیٹ پر ظاہری بھوک کی وجہ سے پتھر باندھنا اس وجہ سے تھا کہ آپ کی محنت اور پتھر کی سختی آپ کی ضرورت تھی اور آپ اس کے محتاج تھے تو حضرت ناظم رحمہ اللہ نے اس بات کو اپنے اس فرمان سے دور کر دیا چنانچہ فرمایا: "وَرَاوَدَتْهُ الْجِبَالُ النِّخ"۔

تحقیق الفاظ

واو عاطفہ ہے اور جملہ کا عطف قریب یا بعید فعل پر ہے۔

"الْمُرَاوَدَةُ" کا معنی کوشش اور دلچسپی سے کوئی چیز طلب کرنا ہے اور یہ "مُفَاعَلَةٌ" کا صیغہ اس وقت ہوتا ہے جب مغالبہ کے معنی میں نہ ہو لیکن یہاں مبالغہ ہے اور مفعول کی ضمیر حضور ﷺ کی طرف لوٹتی ہے یہ "الْمُرَاوَدَةُ" "آجانے" کے معنی میں ہے۔

"الْجِبَالُ" پیش کے ساتھ "رَاوَدَتْهُ" کا فاعل ہے اور یہ "جَبَلٌ" کی جمع ہے۔

"الشُّمُّ" شین پر پیش "اشم" کی جمع ہے معنی انتہائی بلند ہے یہ "الجبال" کی صفت ہے یا اس سے حال ہے معنی بنے گا: بلند پہاڑ آئے یا بلند پہاڑوں کو بلا لیا گیا۔

"مِنْ ذَهَبٍ" "الجبال" کی صفت یا اس سے حال ہے۔ "الجبال" میں الف لام عہد کیلئے ہے اور جو پہاڑ حضور ﷺ کی خدمت میں پیش ہوئے وہ پانچ تھے جو مکہ کے اردگرد تھے یعنی جبل ابوقبیس، جبل حراء، جبل ثور، جبل بطنیا اور جبل عرفات۔

"عَنْ نَفْسِهِ" کا تعلق "روادته" کے ساتھ ہے جس میں میلان یعنی جھکاؤ کا معنی بھی ہے یعنی وہ بلند پہاڑ جو سونا بن گئے تھے انہوں نے نبی کریم ﷺ سے درخواست کی تاکہ آپ کی توجہ اپنی طرف کرا سکیں۔

فاء تعقیب (کام کے بعد کام ہونا) کیلئے ہے جس میں دیر نہ ہو۔

”آری“، ”إِرَاءَةٌ“ سے ماضی کا صیغہ ہے جس کا فاعل نبی کریم ﷺ کی طرف لوٹتا ہے جبکہ مفعول کی ضمیر ”جبال“ کی طرف جاتی ہے اس کا دوسرا مفعول محذوف ہے، معنی ہوگا: حضور ﷺ کو پہاڑوں نے پیش ہونے پر اپنی بلندی دکھائی۔

”أَيَّمَا شَمَمٍ“ میں حرف ”ما“ زائدہ ہے اور یہ بھی بتایا گیا ہے کہ یہ تاکید کی خاطر صلہ ہے۔ ”آئی“ محذوف موصوف کی صفت ہے جو ”آری“ کا دوسرا مفعول ہے۔ یہاں یہ ”آئی“ کمال کا معنی دیتا ہے کیونکہ علماء کہتے ہیں کہ ”آئی“ اس کی طرف مضاف ہے جو موصوف کی جنس سے ہے تو یہ کمال کا فائدہ دے گا جیسے تم کہہ دو: ”رَأَيْتُ رَجُلًا آتَى رَجُلًا“ یعنی مرد ہونے میں کامل۔

”شَمَمٍ“ کا معنی انتہائی بے پرواہی ہے اور کمال بلندی۔

حاصل معنی یہ ہوگا کہ رسول اللہ ﷺ نے دنیا سے توجہ ہٹائی اور اپنے مولیٰ کی طرف توجہ کر لی، ظاہری فقیری کی مشکلوں کو اپنایا اور امیری کے مرتبے چھوڑ دیئے تاہم بلند پہاڑوں نے اپنے آپ کو آپ کے سامنے پیش کیا اور آپ کی طرف بڑا جھکاؤ کر لیا کیونکہ انہیں یہ اُمید لگی تھی کہ آپ ان پر نظرِ رحمت فرمائیں گے اور اس سے ان کی شان بلند ہوگی۔

اس شعر میں اس روایت کی طرف اشارہ ہے جس میں آیا ہے کہ حضرت جبریل علیہ السلام آپ کی خدمت میں حاضر ہوئے اور عرض کی: اللہ تعالیٰ آپ کو سلام فرماتا ہے اور پوچھتا ہے کہ اگر میں ان پہاڑوں کو سونا بنا دوں تو کیا آپ کو پسند ہوگا؟ آپ جہاں جائیں گے یہ آپ کے ساتھ ہوں گے۔ آپ نے کچھ سوچ کر فرمایا کہ اے جبریل! یہ دنیا اس کا گھر ہے جس کا کوئی گھر نہیں اور اس کا مال ہے جس کا کوئی مال نہیں، اسے وہی جمع کرے گا جس میں عقل نہیں۔

اس پر جبرائیل علیہ السلام نے عرض کی کہ اے محمد! اللہ تعالیٰ آپ کو اپنے ثابت فرمان کے ذریعے ثابت قدم رکھے۔

صبر والے فقیر کا مرتبہ

اس شعر میں صبر کرنے والے فقیر کی شا کر غنی کے مقابلے میں شان بتانے کیلئے بڑی واضح دلیل موجود ہے جیسے اس پر بزرگ سادات اور صوفی گروہ کا اگٹھ ہے اور ایک کامل شخص نے اسی طرف ہی اشارہ کرتے ہوئے فرمایا ہے: ”هَمَّةُ الرَّجَالِ تَهْدِمُ الْجِبَالَ“ (مردوں کی ہمتیں پہاڑ گرا دیتی

(ہیں)۔

حضور ﷺ کی حضرت یوسف سے برتری

اس شعر میں اللہ تعالیٰ کے اس فرمان کی طرف اشارہ ہے: ”وَرَاوَدَتْهُ الَّتِي هُوَ فِي بَيْتِهَا“ (سورۃ یوسف، آیت: ۲۳) (آپ کا دل اس عورت نے لبھایا جس کے گھر میں آپ موجود تھے) اور نہایت پیارا اشارہ ہے کہ ہمارے نبی ﷺ کا مرتبہ حضرت یوسف علیہ السلام کے مقابلے میں کئی لحاظ سے بڑھ کر ہے کیونکہ حضرت یوسف علیہ السلام سے محبت ان کے اس حسن کی وجہ سے تھی جو ان کے اختیار میں نہ تھا اور اس لئے کہ وہاں یہ محبت اللہ کی حرام کی ہوئی چیز پر تھی اور اس لئے کہ وہاں یہ محبت عقل والوں کی طرف سے تھی جن میں محبت سوچی جاسکتی ہے اور اس لئے بھی کہ حضرت یوسف علیہ السلام نے دنیا میں اس چیز کو پسند کیا جو مزے میں زیادہ ہے رہی ہمارے نبی ﷺ سے محبت تو آپ کے اختیاری خلق کی وجہ سے تھی اور اس پر تھی جسے اللہ تعالیٰ نے جائز بنایا اور ان جامد و بے جان چیزوں کی طرف سے تھی جن میں محبت سوچی بھی نہیں جاسکتی، پھر آپ نے لذتِ دنیا پسند نہیں فرمائی حالانکہ اللہ تعالیٰ نے حضور ﷺ سے فرما رکھا تھا کہ آپ دنیا میں سے جو کچھ لیں، آپ کا حساب نہ ہوگا چنانچہ اس بناء پر اس شعر میں استعارہ تمثیلیہ بنتا ہے اور وہ یوں کہ پہاڑوں سے نکالی گئی ہیئت ان کی حضور ﷺ سے محبت اور آپ کا ان کی طرف میلان اور جھکاؤ کرنے کو حضرت زلیخا اور ان کی حضرت یوسف علیہ السلام سے چھینی گئی محبت، حضرت یوسف علیہ السلام کی ان کی طرف کسی طور سے توجہ نہ کرنے سے تشبیہ دی گئی چنانچہ مشبہ بہ سے نکالی گئی صورت و ہیئت کو اس صورت سے تشبیہ دی گئی جو مشبہ سے نکالی گئی پھر اس محبت کو ذکر کیا گیا جو حضرت زلیخا کی محبت بتاتی ہے اور پہاڑوں کی محبت مراد لی گئی۔

حضرت شبرخیتی شارح قصیدہ فرماتے ہیں کہ ”أَشَمَّ“ کا لفظ ”شَمَمَ“ سے ہے جو ناک کے معنی میں ہے اور شعر کا معنی ہے: ان ناک والے پہاڑوں نے چاہا کہ حضور ﷺ ان پر توجہ فرمائیں یعنی پہاڑ جھکے اور اپنے وہ نوکیلے پہلو آپ کی طرف جھکائے جو انسان میں ناک جیسے ہیں لیکن آپ نے ان کی طرف بالکل توجہ نہ دی بلکہ اپنا اونچا ہونا دکھایا اور بے پرواہی دکھائی۔



شعر (۳۲)

وَآكَدَّتْ زُهْدَهُ فِيهَا ضَرُورَتُهُ
إِنَّ الضَّرُورَةَ لَا تَعْدُو عَلَى الْعِصْمِ

(ترجمہ:) ”آپ کی ہر دنیاوی غرض اور ضرورت نے آپ کے دنیا سے بے تعلق رہنے کو اور واضح اور پکا کر دیا کیونکہ کسی میں ضرورت اور غرض کا پیدا ہو جانا دنیا سے منہ موڑنے والے پر دھبہ نہیں بنتا۔“

جب کسی وہم کرنے والے نے وہم کیا کہ آپ کی ضرورت اور غرض تو آپ کی عبادت اور دنیا سے بے تعلق ہونے میں رکاوٹ بن سکتی تھی تو حضرت ناظم رحمہ اللہ نے اسے دور کرنے کی خاطر فرمایا: ”وَآكَدَّتْ زُهْدَهُ الْخ“

واو یا تو عاطفہ ہے یا ابتدائیہ اور ”آكَدَّتْ“ ”تاکید“ سے ہے اور تاکید تو کید کا معنی پکا اور ثابت رکھنا ہے۔ ”زُهد“ سے مراد کسی چیز کی طرف تھوڑی سی توجہ دینا اور اصطلاح میں دنیا سے منہ پھیرنا اور اس کا سکھ چین چھوڑ دینا ہے۔

زہد نبی اکرم ﷺ

ایک بیان ملتا ہے کہ رسول اللہ ﷺ ایک بچھائے بستر پر لیٹے ہوئے تھے وہ پھلکی چیز کا تر اور سبز تھا، سر انور کے نیچے چمڑے کا تکیہ تھا جو کھجور کی چھال سے بھرا ہوا تھا، اتنے میں حضرت عمر رضی اللہ عنہ حاضر ہوئے، چند صحابہ کرام بھی ہمراہ تھے، نبی کریم ﷺ نے پہلو بدلا تو حضرت عمر رضی اللہ عنہ رو پڑے۔ آپ نے پوچھا: کیوں روئے ہو؟ انہوں نے عرض کی کہ کیوں نہ روؤوں، کسریٰ اور قیصر تو دنیا میں بڑے مزے لے رہے ہیں لیکن آپ کی حالت یہ ہے۔ آپ نے فرمایا: اے عمر! کیا تمہیں یہ بات پسند نہیں کہ انہیں تو یہ سب کچھ دنیا میں ملے اور ہمیں آخرت میں؟ انہوں نے عرض کی کہ یہ تو بہتر ہوگا۔

اسی دوران حضرت جبرئیل علیہ السلام نے اتر کر عرض کی: اللہ تعالیٰ کا طریقہ چلا آ رہا ہے کہ جب کسی کی دنیاوی لذت بڑھ جاتی ہے تو اس کے لیے آخرت کا مزہ گھٹ جاتا ہے چنانچہ جیسے جیسے دنیا کی لذت اور مزہ بڑھتا جاتا ہے تو آخرت کا مزہ گھٹتا چلا جاتا ہے جیسے اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: ”أَذْهَبْتُمْ

طَيِّبَاتِكُمْ فِي حَيَاتِكُمُ الدُّنْيَا“ (سورۃ الاحقاف، آیت: ۲۰) لیکن اللہ تعالیٰ فرماتا ہے: سیدنا محمد ﷺ سے کہہ دو کہ دنیا میں ضرورت کی جو چیزیں چاہو لے لو اور اس کے علاوہ جو مانگنا ہے مانگ لو سب آپ کو دے دی جائیں گی تمہاری آخرت کی لذتوں میں سے دنیاوی لذتوں کی بناء پر کوئی کمی نہیں کی جائے گی جس پر آپ نے عرض کی کہ میرے لئے اللہ بہتر اور باقی رہنے والا ہے۔

تحقیق الفاظ

”زُهْدَةٌ“ زبر سے اور اس بناء پر منصوب ہے کہ ”اَتَّكَدْتُ“ کا مفعول ہے اور ضمیر حضور ﷺ کی طرف جاتی ہے۔ ”فِيهَا“ سے متعلق ہے اور یہ ضمیر ”دنیا“ کے لفظ کی طرف جاتی ہے جو ضمناً مذکور ہے اور بہتر یہ ہے کہ ”الجبال“ کی طرف لوٹی ہو۔

”ضَرُورَتُهُ“ رفع کے ساتھ ”اَتَّكَدْتُ“ کا فاعل ہے اور ”ضرورة“ کا معنی شدید محتاجی ہے اور ”اِضْطِرَّارٌ“ بھی اسی سے ہے جو ”اِخْتِيَارٌ“ کی ضد ہے اور محتاج ہونا، اگرچہ ہمارے نبی کریم ﷺ کی خاطر حقیقت ہے لیکن اس سے مراد ظاہری ضرورت اور محسوس ہونے والی محتاجی ہے۔

”إِنَّ الضَّرُورَةَ الْخ“ استیناف (نئی بات شروع کرنا) ہے گویا کہا گیا: ضرورت اس دنیا میں زہد کو ضرورت ہی کے ساتھ پکا کرتی ہے جو انسان کو تباہیوں میں ڈال دیتی ہے۔ رسول اکرم ﷺ نے ضرورتِ مشقت کی طرف اشارہ فرمایا اور اپنے فرمان میں بتایا کہ اسے ہر ایک برداشت نہیں کر سکتا: ”كَأَدَ الْفَقْرُ أَنْ يَكُونَ كُفْرًا“ (مشکوٰۃ المصابیح، کتاب الآداب، باب ما تنهى عنه عن التهاجر، جلد ۳ صفحہ ۸۳، رقم الحدیث: ۵۰۵۰) (فقر جلد ہی کفر بن سکتا ہے) چنانچہ حضرت ناظم نے اس کا جواب دیتے ہوئے فرمایا کہ ضرورت ہوتے ہوئے بھی انسان بے گناہ رہ سکتا ہے۔

یہاں قیاس کو یوں ترتیب دے لینا بھی ممکن ہے کہ ضرورت نبی کریم ﷺ پر غالب نہیں آ سکتی کیونکہ یہ ضرورت بے گناہی پر غالب نہیں ہو سکتی اور نبی معصوم ہوتا ہے تو انجانی شکلِ ثانی سے نتیجہ یہ نکلے گا کہ ضرورت نبی کریم ﷺ پر غالب نہیں ہو سکتی۔

اگر یہ کہا جائے کہ ضمیر لانے کی جگہ پر اسم ظاہر کیوں لایا گیا کیونکہ مناسب ”انہا“ کہنا تھا تو میں کہوں گا کہ یہ شعر کی ضرورت ہے اور اس لئے بھی کہ ضمیر کے مرجع میں خلل نہ پڑے کیونکہ اگر ناظم کہتے: ”انہا“ تو یہ وہم پڑتا کہ اس کی ضمیر اس میں موجود ضمیر کے مرجع کی طرف لوٹی ہے اور اسے ہر ایک جانتا ہے۔

”تَعْدُو“ کا لفظ ”عَدَا عَلَيْهِ“ سے لیا گیا یعنی جب کوئی کسی پر غالب ہو جائے اور اسے گھیرے میں لے لے چنانچہ ”لَا تَعْدُو“ کا معنی ”لَا تَغْلِبُ وَلَا تَسْتَوْلِي“ بنے گا (یعنی نہ غالب آسکتی ہے اور نہ گھیرے میں لے سکتی ہے)۔

”الْعِصْمَ“ جمع ”عِصْمَةٌ“ ہے جس کا معنی ڈانٹ والی وہ قوت ہے جسے اللہ تعالیٰ اپنے خاص اور بڑے بندوں میں محفوظ کرتا ہے جو اختیار اور قدرت کے باوجود اللہ کی منع کی ہوئی چیزوں کا پیچھا کرنے سے روکتی ہے۔

”الْعِصْمَةُ“ یہاں مصدر ہے جو مفعول کے معنی میں ہے، یعنی ”معصوم“ ہونا۔

حاصل معنی یوں ہے کہ آپ کے زہد اور دنیا سے منہ موڑنے اور پہاڑوں کے سونے کے ہونے کے باوجود بلند پہاڑوں کی طرف توجہ نہ کرنے نے آپ کے ظاہری فقر اور محسوس ہونے والی محتاجی کو مضبوط کر دکھایا چنانچہ آپ نے اپنے نفس کو خوب تھکایا تو پھر آپ کی ضرورت اس پر کیسے غالب ہو سکتی ہے حالانکہ ان کی ضرورت حفاظت والی بے گناہی اور اس کی بڑی تائیدوں کے تابع اور اس کی مغلوب اور جو چیز خود مغلوب ہو وہ غالب کو گھیرے میں کیسے لے سکتی ہے جبکہ باقی لوگوں کی ضرورت ایسی نہیں کیونکہ وہ ان کے تابع نہیں تو جائز ہے کہ ان پر غالب ہو اور ان کی ہمت کو دنیا کے جھوٹ طوفان اور اس کی تازگی کی طرف کھینچ لے۔ اللہ تعالیٰ اس سے ہماری حفاظت فرمائے۔



شعر (۳۳)

وَ كَيْفَ تَدْعُو إِلَى الدُّنْيَا ضَرُورَةً مِّنْ
لَّوْلَاهُ لَمْ تَخْرُجِ الدُّنْيَا مِنَ الْعَدَمِ

(ترجمہ:) ”اور یہ کیسے ممکن ہے کہ اس شخصیت کی ضرورت انہیں دنیا جمع کرنے کی طرف بلائے کیونکہ اگر وہ نہ ہوتے تو دنیا عدم سے وجود میں نہ آتی۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب آپ کی سخت محنت اور صحیح مشقت بتا دی تو اب انہوں نے حضور ﷺ کی افضلیت و اشرفیت بتانا شروع کی ہے لیکن پیارے سے تعلق اور دلچسپ ترتیب کے ساتھ کیونکہ یہ شعر پہلے شعر کی تاکید ہے چنانچہ فرمایا: ”وَ كَيْفَ تَدْعُو الخ“۔

تحقیق الفاظ

واو کا عطف مقدر عبارت پر ہے جو یوں ہے کہ ”حضور ﷺ کا جھکاؤ صرف اللہ کی طرف تھا تو پھر دنیا اور اس کی نعمتیں اور جنت اور اس کی نعمتیں آپ کو کیسے بلا سکتی ہیں؟ اس میں اس حدیث قدسی کی طرف اشارہ ہے: ”یہ دنیا اہل آخرت پر حرام ہے اور آخرت اہل دنیا پر حرام ہے جبکہ اللہ والوں پر یہ دونوں ہی حرام ہیں“ (کنز العمال، کتاب الاخلاق، جلد ۳ صفحہ ۷۶، رقم الحدیث: ۶۰۶۸)۔ اور اس طرف بھی اشارہ ہے کہ یہ دنیا و آخرت پورے طور پر اکٹھی نہیں ہو سکتیں چنانچہ اسی بناء پر کہا گیا ہے کہ یہ دونوں ہی نقصان دینے والی ہیں یا ترازو کے دونوں پلڑوں کی طرح ہیں اور حضور ﷺ فرماتے ہیں کہ ”جو اپنی دنیا کو پسند کرے اپنی آخرت خراب کر لے گا اور جو اپنی آخرت کو پسند کرے وہ اپنی دنیا خراب کر بیٹھے گا تو تم لوگ فناء ہو جانے والی چیز کو چھوڑ کر باقی رہنے والی کو اپنالو“ (مشکوٰۃ المصابیح، کتاب الرقاق، الفصل الاول، جلد ۳ صفحہ ۱۰۹، رقم الحدیث: ۵۱۷۹)۔

”کَيْفَ“ استفہام انکاری ہے اور ”تَدْعُو“، ”دَعْوَةٌ“ سے اور اس کا فاعل ”ضَرُورَةٌ“ ہے اور مفعول محذوف ہے یعنی ”حضور ﷺ کو ”ضرورت“ بلاتی ہے اور ”دنیا“ آخرت کی نقیض ہے اور دنیا سے مراد یا تو زمین پر ہونے والی ہوا اور فضاء ہے یا پھر آخرت سے پہلے ساری مخلوق ہے جس میں جوہر اور عرض سب شامل ہیں۔

لفظِ دنیا کیا ہے؟

”دُنْیَا“ کا اصل ”دُنُوْی“ ہے کیونکہ عرب کہتے ہیں: ”دَنَوْتُ اِلَى الشَّيْءِ دُنُوًّا“ (میں شے کے کچھ قریب ہوا) چنانچہ واؤ کو یاء سے بدل دیا گیا لیکن یہی واؤ ”الْقُصُوْی“ میں اس طرح نہیں بدلتی کیونکہ ”دُنْیَا“ کے لفظ کے ساتھ اسم کا مذہب عربوں کے قول ”الدنیا والآخرۃ“ کے ساتھ جاتا ہے اگرچہ اس کا اصل صفت ہے تو اس میں تخفیف رکھی گئی کیونکہ اسم تخفیف کرنے کا زیادہ حق رکھتا ہے۔

پھر عربوں سے سنا گیا ہے کہ وہ اس کی کسی چیز کی طرف نسبت کرتے وقت ”دُنْی“ اور ”دُنْیُوْی“ کہتے ہیں اور ان میں سے ایسے بھی ہیں جو ”دُنْیَا“ کے الف کو ”بِیضَاء“ کے الف جیسا بناتے ہیں کہ یہ دونوں تانیث کی علامت ہیں چنانچہ اس میں انہوں نے کہا کہ ”دُنْیَاوِی“ ہے تاہم اس کے ساتھ ”ہمزہ“ ملانے کی کوئی وجہ نہیں ہے کیونکہ یہ اسم مقصور اور غیر منصرف ہے جبکہ ہمزہ مدہ والے لفظ کے ساتھ ملایا جاتا ہے جو منصرف ہوتا ہے۔

پھر ”دُنْیَا“ پر نصب کی تنوین پڑھنا غلط ہے کیونکہ دنیا اور اس جیسے دوسرے لفظوں کو تنوین نہیں دی جاتی۔

دنیا کو دنیا کہنے کی وجہ

اگر کہا جائے کہ ”دُنْیَا“ کو ”دُنْیَا“ کیوں کہتے ہیں تو میں کہوں گا: اس بناء پر کہ یہ قریب ہے یعنی آخرت کے قریب ہے یا اس بناء پر کہ اس میں خواہش والی چیزیں دل کے قریب ہوتی ہیں یا اس بناء پر کہ یہ ذلیل اور گندی ہے چنانچہ جو دنیا کے پیچھے لگ جاتا ہے تو وہ گندا شمار ہوتا ہے۔

اگر تم کہو کہ اگر نبی کریم ﷺ دنیا کے مال لے کر انہیں فقیروں پر خرچ کر دیا کرتے تو کیا یہ فقر سے اچھا نہ ہوتا؟ تو ہم کہیں گے کہ یہ اچھا نہیں ہوگا کیونکہ اگر آپ مال لے کر فقیروں پر خرچ کرتے تو یہ صرف بَرّ (نیکی) ہوتا اور اگر نہ لیتے تو ”اَبْرّ“ (زیادہ نیکی) ہوتا جبکہ زیادہ نیکی ہونا سادہ نیکی سے زیادہ بہتر ہے۔

”لَوْلَاہ“ میں ضمیر ”لَوْلَا“ کا اسم ہونے کی وجہ سے محلاً مرفوع ہے جبکہ اس کی خبر لازماً محذوف ہے اصل یوں بنتا ہے: ”لَوْلَاہ موجود“ اور ان کا قول ”لَم تَخْرُجْ“، ”لَوْلَا“ کا جواب ہے اور ”تَخْرُجْ“ یا تو ”خُرُوج“ سے مبنی للفاعل (معروف) ہے یا ”اِخْرَاج“ سے مبنی للمفعول (مجہول)

ہے اور ہر لحاظ سے یہ اس طرف اشارہ کرنے سے خالی نہیں کہ حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام سبب بننے میں ایک بلند مرتبہ رکھتے ہیں تو گویا حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام ہی نے ”دنیا“ کو ”عدم“ سے نکالا تھا چنانچہ اسی بناء پر سمجھدار ناظم رحمہ اللہ نے ”لَمْ تُخْلَقْ“ کی بجائے ”لَمْ تَخْرُجْ“ کا صیغہ لانا زیادہ بہتر سمجھا۔

اس حدیث میں اس حدیث قدسی کی طرف اشارہ ہے: ”لَوْلَا كَ لَمَا خَلَقْتُ الْاَفْلَاكَ“ (کشف الخفاء، حرف اللام، جلد ۲ صفحہ ۱۴۸، رقم الحدیث: ۲۱۲۱) (اگر آپ نہ ہوتے تو میں آسمانوں تک کو پیدا نہ کرتا) اس افلاک سے مراد مطلقاً ساری مخلوق ہے کیونکہ یہاں جزء کو کل پر بولا گیا ہے اور یہ اس واقعہ کی طرف اشارہ ہے جو معراج کی رات حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کے ساتھ واقع ہوا کیونکہ جب حضور ﷺ نے سدرۃ المنتہیٰ پر اللہ کے سامنے سجدہ کیا تو اللہ تعالیٰ نے آپ سے فرمایا تھا کہ میں ہوں اور بس آپ ہیں اور اس کے علاوہ سب کو میں نے آپ ہی کی وجہ سے پیدا کیا ہے جس پر حضور ﷺ نے عرض کی کہ میں ہوں اور بس آپ ہیں اور اس کے علاوہ میں نے آپ کے مقابلے میں سب کو چھوڑ دیا (تفسیر روح البیان، تفسیر سورۃ النجم، آیت: ۱۲، جلد ۶ صفحہ ۲۲۱) اور یہ اشارہ بھی ہے کہ یہ دنیا حضور ﷺ کے تابع ہے اور یہ آپ کے علاوہ آپ کے صحابہ کرام ہی کیلئے پیدا کی گئی ہے تو پھر یہ سارے نیک لوگ دنیا یا اس کی خواہشوں کے تابع کیسے ہو سکتے ہیں۔

شعر کا حاصل مطلب یہ ہے کہ دنیا، حضور ﷺ کی محتاج ہے اور اگر رسول اکرم ﷺ اس کے محتاج ہوتے تو یہ یونہی چلتی چلی جاتی اور یہ دونوں باتیں ہی غلط ہیں جسے عقلمند علماء اور ادب والے خوب جانتے ہیں چنانچہ اس ذات کی ہر تعریف ہے جو دلوں میں بہتر سوچ ڈالتا ہے اور ہمیں اسی کی طرف لوٹ جانا ہے۔



شعر (۳۴)

مُحَمَّدٌ سَيِّدُ الْكُونَيْنِ وَالثَّقَلَيْنِ
وَالْفَرِيقَيْنِ مِنْ عَرَبٍ وَمِنْ عَجَمٍ

(ترجمہ:) ”حضرت محمد ﷺ دونوں جہانوں اور جنوں انسانوں بلکہ عرب و عجم دونوں ہی کے سردار اور سرپرست ہیں۔“

جب حضرت ناظم رحمہ اللہ نے رسول اکرم اور نبی محترم ﷺ کا ذکر کرتے ہوئے اہمیت اور بزرگی کی خاطر آپ کا نام مبارک چھپا کر رکھا تو اب خیال کیا کہ اپنے قصیدہ میں آپ کے نام مبارک سے برکت حاصل کریں اور ہوتا یہ ہے کہ جب چیز کو چھپا کر اس کی وضاحت کی جاتی ہے تو وہ دل میں گھر کر جاتی ہے چنانچہ فرمایا: ”محمد سید الخ“ اس لفظ ”محمد“ پر رفع پڑھنے کی وجہ اس کا محذوف مبتداء کی خبر بنتا ہے اور وہ ”هُوَ“ ہے یا اس پر جڑ ہے اور وہ اس لئے کہ یہ ”مِنْ“ کا بدل ہے تاہم زیادہ تر یہی نظر آ رہا ہے کہ یہ مبتداء ہے اور ”سید“ اس کی خبر ہے۔ یہ مفعول کا صیغہ ہے جس میں مبالغہ ہے کہ آپ کی تعریف ہوتی ہی رہتی ہے پھر صفت کے صیغے سے اسے اسم بنایا گیا اور نبی کریم ﷺ کا نام رکھا گیا کیونکہ آپ محمد ہیں جو اپنی پیدائش اور خلق میں یہی خوبی رکھتے ہیں۔

اسم ”محمد“ کا افضل ہونا

حضرت قاضی عیاض رحمہ اللہ نے ”شفاء شریف“ میں لکھا ہے کہ اسم ”محمد“ کو حفاظت سے رکھا گیا اور یہ عرب و عجم میں سے کسی کا نام نہ ہوا بلکہ یہ آپ کے وجود اور تشریف لانے سے پہلے ہی یوں مشہور تھا کہ ایک نبی آ رہا ہے جس کا نام محمد ہوگا چنانچہ کچھ لوگوں نے اپنے بیٹوں کا یہ نام اس بناء پر رکھا کہ یہ وہی ہو سکیں جبکہ اللہ بہتر جانتا ہے کہ اس نے کسے رسالت دینی ہے۔

(الشفاء جعفر بن عوف المصطفیٰ، فصل فی اسماء، جلد ۱ صفحہ ۲۳۰)

اگر یہ کہا جائے کہ حضرت ناظم رحمہ اللہ نے آپ کے ناموں میں سے اسی نام کو کیوں لیا ہے کیونکہ امام بخاری رحمہ اللہ نے ”شرح الارشاد“ میں لکھا ہے کہ نبی کریم ﷺ کے نام ایک ہزار تین سو یا ننانوے ہیں تو ہم کہیں گے: اس لئے کہ یہ ان میں سے زیادہ مشہور اور زیادہ مرتبہ والا ہے کیونکہ یہ سراہے جانے میں مبالغہ کا فائدہ دیتا ہے جس سے حامدیت (حمد کرنے والا) میں مبالغہ یقیناً ہو جاتا

ہے چنانچہ یہ ان سب ناموں میں سے زیادہ مرتبہ والا ہوا۔

”سید“ کا لفظ ”جید“ کے وزن پر ہے جو اصل میں ”سیود“ تھا یہ اسمِ فاعل کا صیغہ ہے جو ”سیادۃ“ سے نکلا ہے جس کا معنی بلند اور اونچا ہونا ہے جو ان کی تعریف میں کہا گیا ہے یہ وہ شخص ہوتا ہے کہ لوگ اپنی ضرورتیں پوری کرنے کی خاطر اس کی طرف جاتے ہیں۔

سید الکونین کی وضاحت

”گونین“ سے مراد یا تو دنیا و آخرت ہے یا عالم شہادت و عالم غیب ہے اور حضور ﷺ کی دونوں جہانوں میں سرداری کا ذکر اگرچہ بڑی کتابوں میں ملتا ہے لیکن یہ ضروری ہے کہ ہم یہاں بھی اس بارے میں کچھ نہ کچھ ضرور لکھ دیں چنانچہ ہم لکھتے ہیں: رہی دنیا میں آپ کی سرداری تو وہ یوں تھی کہ آپ تمام انبیاء و مرسلین کے سردار ہیں اور معراج شریف دوسرے نبیوں کی بجائے صرف آپ ہی کو ہوا پھر دوسرے انبیاء کی بجائے صرف آپ ہی جنوں اور انسانوں کی طرف بھیجے گئے پھر جنوں اور فرشتوں کی طرف بھیجے گئے اور آپ رحمۃ للعالمین بنا کر بھیجے گئے جن میں کافر بھی اس بناء پر شامل ہیں کہ ان کے عذاب میں دیر کر دی گئی ہے۔ آپ کا شہر سب شہروں سے زیادہ مرتبہ والا ہے۔ آپ کی مسجد سب مسجدوں سے زیادہ مرتبہ والی اور وہ مبارک جگہ جس میں آپ دفن ہیں مرتبہ میں کعبہ سے بھی بڑھ کر ہے جیسے اس کی تفصیل آگے آرہی ہے اور پھر روحی نور کی وجہ سے بھی آپ کی سرداری کو سب پر زیادہ مرتبہ حاصل ہے جو حدیثوں اور بڑی روایتوں میں ہے بلکہ آپ کا نفیس نور سارے انبیاء کے نوروں کی بنیاد ہے۔

صاحب مواہب نے آیہ کریمہ ”وَإِذْ أَخَذْنَا اللَّهُ الْآيَةَ“ (سورۃ آل عمران آیت: ۸۱) کے ماتحت یہ روایت درج کی ہے: حضرت علی اور ابن عباس رضی اللہ عنہم بتاتے ہیں کہ اللہ تعالیٰ نے جس نبی کو بھیجنا ہوتا تھا اس سے یہ پکا وعدہ لے لیا جاتا تھا کہ اگر ان کی زندگی میں حضرت محمد ﷺ کو بھیجا گیا تو انہیں ان کو مان کر لازمی طور پر مدد کرنا ہوگی (تفسیر روح المعانی، سورۃ آل عمران تحت آیت: ۸۱، جلد ۳ صفحہ ۲۷۵)۔

مواہب ہی میں حضرت عبدالرحمن کے ذریعے حضرت جابر رضی اللہ عنہ بتاتے ہیں جو مختصر طور پر یوں ہے:

یاد رہے کہ اللہ تعالیٰ نے ہر شے سے پہلے ہمارے نبی ﷺ کا نور پیدا فرمایا جس سے قلم لوح محفوظ اور عرش کے علاوہ اسے اٹھانے والے کرسی سارے فرشتے آسمان زمین جنت و دوزخ پھر

مومنوں کی آنکھوں، دلوں اور ان کے وجودوں کا نور پیدا فرمایا۔ (المواہب اللدنیۃ المقصد الاول جلد ۱ صفحہ ۶) رہی آپ کی آخرت میں سرداری تو علامہ قرطبی کے مطابق جہنم کے فرشتے قیامت کے دن جہنم کی طرف آئیں گے وہ چار پہیوں پر چلنے والی ہوگی، اسے ستر ہزار لگا میں دی گئی ہوں گی جن میں ہر لگام کے ساتھ ستر ستر ہزار حلقے ہوں گے جن میں سے ہر حلقے پر ستر ستر ہزار فرشتے ہوں گے لیکر جب وہ ان کے ہاتھوں سے کھسکنے لگے گی تو وہ اتنے جھرمٹ کے باوجود اسے روک نہیں پائیں گے جس پر ”موقف“ کے سب لوگ گھٹنوں کے بل ہو جائیں گے جن میں رسول بھی شامل ہوں گے جبکہ حضرت ابراہیم، حضرت موسیٰ اور حضرت عیسیٰ علیہم السلام عرش کے ستونوں کو تھامے ہوں گے، یہ ذرا اللہ کو بھولے ہوں گے، یہ ہارون کو اور یہ حضرت مریم علیہا السلام کو بھول چکے ہوں گے اور ”نَفْسِ نَفْسِی“ میں آپ سے اور کچھ نہیں مانگتا، کہہ رہے ہوں گے جبکہ حضرت محمد ﷺ ”یا اللہ! میری امت میری امت! تو اسے بچالے اور اسے نجات دیدے“ کہہ رہے ہوں گے۔

اسی دوران حضور ﷺ اٹھ کر جہنم کی لگام پکڑتے ہوئے اسے کہیں گے کہ اپنی چھلی طرف واپس چلی جا! وہ عرض کرے گی کہ مجھے راستہ دیجئے کیونکہ اے محمد! آپ مجھ پر حرام ہیں، اسی دوران عرش کے پردوں سے آواز آئے گی کہ آپ کا حکم سن کر مان جاؤ! پھر اسے کھینچ کر عرش کے شمال میں کر دیا جائے گا اور وہ ”موقف“ والوں سے ڈر کی بنا پر ہلکی ہو جائے گی۔

”ثَقَلَيْنِ“ کون ہیں؟

”وَالثَّقَلَيْنِ“ کا عطف ”کَوْنَيْنِ“ پر ہے، یہ خاص کے عام پر عطفوں میں سے ہے جس میں نکتہ یہ ہے کہ اس کے ذریعے ایسے شخص کے قول کو دور کیا جا رہا ہے جس نے کہا کہ رسول اکرم ﷺ انسانوں کے رسول ہیں، جنوں کے نہیں چنانچہ ”ثَقَلَيْنِ“ سے مراد انسان اور جن ہیں کیونکہ یہ دونوں ہی زمین کیلئے بوجھل ہیں۔

اگر یہ کہا جائے کہ جنوں کا بوجھ تو ہوتا ہی نہیں، پھر انہیں ”ثَقَل“ کیسے کہا گیا؟ تو میں کہوں گا کہ انہیں بوجھل انسانوں ہی کی وجہ سے بوجھل کہہ دیا گیا ہے کہ بوجھل کو ہلکے پر غالب کر کے یوں کہہ سکتے ہیں۔

پھر حضرت ناظم نے ”الفریقین“ کو معطوف بنایا حالانکہ یہ ”کَوْنَيْنِ“ اور ”ثَقَلَيْنِ“ میں شامل ہے جس کی وجہ ایسے کسی شخص کا رد کرنا ہے جو حضور ﷺ کی رسالت کو عجم کی نہیں بلکہ عرب ہی کی بنا

سکتا ہے انہوں نے فریقین ہی کا بیان ”من عُرب و من عجم“ کہہ کر کیا ہے ”کونین“ اور ”ثقلین“ کے لفظ بول کر نہیں کیا کیونکہ ”کونین“ اور ”ثقلین“ ہمارے یہاں جانے پہچانے ہیں لہذا ان کے بیان کی ضرورت نہیں جبکہ فریقین معروف نہیں ہیں۔

”عرب“ کا لفظ ”قُفْل“ جیسا ہے جس کا معنی عرب لوگ ہیں یہ ”عجم“ کے مقابلے میں ہے اور ”عرب“ کا لفظ اس لحاظ سے مؤنث ہے کہ یہ چونکہ ”طَائِفَه“ (ٹولاً گروہ) ہے چنانچہ کہا جاتا ہے: ”الْعَرَبُ الْعَارِبَةُ“ اور ”الْعُرْبُ الْعُرَبَاءُ“۔

بعض حضرات نے ”عرب“ کا لفظ صرف ان کیلئے بولا ہے جو ان کے شہروں ہی میں رہتے ہیں جبکہ کچھ نے اسے شہریوں اور دیہاتیوں کو شامل کر کے بولا ہے اور یہاں یہی مراد ہے۔

”البصائر“ میں لکھا ہے کہ ”اعْرَاب“ لفظ ”عرب“ کی جمع نہیں ہے بلکہ یہ کسی کا وہم ہے کیونکہ اس کا مفرد ہوتا ہی نہیں لیکن امام راغب اصفہانی نے اپنی ”مفردات“ میں لکھا ہے کہ یہ ”عرب“ ہی کی جمع ہے اور پھر مصباح اللغۃ میں ہے کہ لفظ ”عرب“ کی جمع ”اعراب“ آتی ہے جیسے ”زَمَن“ کی جمع ”أَزْمَن“ آئی ہے اور ”عُرب“ کے وزن پر بھی آتی ہے جیسے ”أَسَد“ کی جمع ”أُسَد“ ہے (انتہی)۔

”عجم“ سے مراد وہ ہیں جو عرب کے علاوہ ہیں چنانچہ یہ لفظ ”عجم“ ”ترکوں“ ”کردوں“ ”فارسیوں“ ”رومیوں“ اور ”ہندیوں“ وغیرہ پر بولا جاتا ہے۔ حرف جَز کا یہاں دوبارہ لانا وزن برابر کرنے کیلئے ہے۔



شعر (۳۵)

نَبِينَا الْأَمْرُ النَّاهِي فَلَا أَحَدٌ
أَبْرَ فِي قَوْلٍ "لَا" مِنْهُ وَلَا "نَعَمْ"

(ترجمہ:) ”نیکوں پر لگانے اور بُرائیوں سے روکنے میں حکم تو ہمارے ہی نبی (ﷺ) کا چلتا ہے چنانچہ ایسا کوئی نہیں جو ”نہ“ کی جگہ ”نہ“ اور ”ہاں“ کی ”ہاں“ کہنے میں آپ جیسا بہترین سمجھدار ہو۔“

پچھلے شعر میں ”سید“ کا معنی جب واضح معلوم نہیں لگتا تھا تو اسے واضح کرنے کیلئے فرمایا: ”نَبِينَا الْأَمْرُ النَّاهِي الْخ“ کیونکہ ”السید“ سے مراد آقا کرم والے اور بلند مرتبہ ہیں اور ایسا شخص ہی حکم کرتا اور روک سکتا ہے کیونکہ یہ چیز اس کیلئے لازم ہے۔

تحقیق الفاظ

”النَّبِيُّ“، ”النَّبَا“ سے ہے یعنی خبر دینے والا بشرطیکہ یہ آخر میں ہمزہ والا ہو یا بلند ہونے والا بشرطیکہ ایسا نہ ہو اور اصطلاح میں ایک ایسے انسان کو کہتے ہیں جسے اللہ تعالیٰ مخلوق کی طرف سے لے لے بھیجتا ہے تاکہ جو کچھ اسے وحی کے ذریعے بتایا گیا ہے اسے ان تک پہنچا دے۔

نبی اور رسول میں فرق

نبی اور رسول کا معنی ایک ہی ہے جیسے علامہ ابن الہمام نے محققین سے لے کر بتایا ہے۔ کچھ فرماتے ہیں کہ رسول اس حکم کو پہنچانے کا پابند ہوتا ہے جو پہلے نہ ہوا تھا، خواہ وہ کتاب لائے یا نہ لائے جبکہ نبی اس سے عام ہوتا ہے۔ اس بات کی وضاحت اسی سلسلہ کی کتابوں میں ملے گی۔

اگر تم کہو کہ حضرت ناظم رحمہ اللہ نے ”رسول“ کا لفظ چھوڑ کر ”نبی“ کا لفظ کیوں لیا ہے حالانکہ اس کی ضرورت ہی نہ تھی کیونکہ نظم میں وزن تو اس سے بھی پورا ہوتا ہے بلکہ رسالت کا مرتبہ تو نبوت سے بڑھ کر ہوتا ہے؟ تو میں کہوں گا: اس بناء پر کہ حضرت ناظم کے ہاں رسول اور نبی کا مطلب ایک ہی ہے چنانچہ دونوں میں سے کوئی بھی بڑھ کر نہیں یا اس وہم کیلئے کہ اگر بالفرض ان میں رسالت نہیں ہے تو بہر حال افضل ہونے کیلئے نبوت کا پہلو تو ضرور ہے یا اس لئے کہ نبی کے معنی میں بلندی ہے جبکہ رسول کے معنی میں نہیں چنانچہ اس مقام پر نبی ہی کا لفظ زیادہ بہتر ہے کیونکہ یہ موقع ”سید“ کے لفظ کی تفسیر

کا ہے جس کا معنی بلند ہونے والا ہوتا ہے جیسے گزر چکا لہذا اس کی وہ تعریف کرنے کی ضرورت ہے جس کے معنی میں بلند ہونا پایا جائے اسے یاد کر لو۔

”امیر“ اس شخص کو کہتے ہیں جو اپنے سے کم درجہ کو ”افْعَل“ کا لفظ بول کر خطاب کرے جو آخر کار اس کا مفہوم بنتا ہے بلکہ ”ناہی“ وہ ہوتا ہے جو ”لَا تَفْعَل“ (نہ کر) کہہ کر خطاب کرے پھر ”رسول“ پر ”امیر“ اور ”ناہی“ کا لفظ بولنا یا تو حقیقت ہے جیسے کئی آیتوں میں دیکھا جاسکتا ہے جیسے فرمان الہی ہے: ”وَأْمُرْ بِالْمَعْرُوفِ وَانْهَ عَنِ الْمُنْكَرِ“ (سورۃ لقمان آیت: ۱۷) (بھلائی کرنے کا حکم فرماؤ اور بُرائی سے روکو) وغیرہ اور یہ زیادہ درست ہے یا پھر یہ نسبت دینے میں مجاز ہے یعنی ”امیر“ اور ”ناہی“ کے رسول ﷺ کے ساتھ نسبت کرنے میں کیونکہ اصل ”امرو و ناہی“ تو اللہ تعالیٰ ہوتا ہے جبکہ رسول حکم پہنچانے والا ہوتا ہے اور رسول جو کچھ اپنی طرف سے کہتا ہے وہ بھی اللہ تعالیٰ ہی کی طرف سے ہوتا ہے کیونکہ رسول اکرم ﷺ اپنی مرضی سے بولتے ہی نہیں، وہ بولنا تو وہ وحی ہوتی ہے جو ان کی طرف کی جاتی ہے۔

”امرو و ناہی“ کا مفعول محذوف ہے جس کا معنی عام حکم ہے چنانچہ پہلے لفظ میں مراد ہر نیکی کا کام ہے جبکہ دوسرے میں ہر بُرائی ہے تاہم جو یہ کہتا ہے کہ اس کا مفعول حذف کرنا عام کرنے کیلئے ہے وہ غلط کہتا ہے کیونکہ اس کا معنی یہ بنتا ہے کہ آپ ہر کام کا حکم دیتے ہیں چنانچہ یہ روکے کاموں کو بھی شامل ہو جائے گا اور ”نَاہٍ عَنِ كُلِّ شَيْءٍ“ ہوا تو یہ حکموں کو بھی شامل ہو جائے گا۔ یہ شخص ”امرو“ کے مادہ سے غافل ہے اور یونہی ”نہی“ کے مادہ سے کیونکہ ”امرو“ یہ چاہتا ہے کہ اس کا مفعول ہر بھلائی ہونہ کہ ہر چیز کیونکہ امر نہی سے کسی قسم کا تعلق ہی نہیں رکھتا اور یونہی ”نہی“ کا مادہ یہ چاہتا ہے کہ اس کا مفعول ہر بُری چیز ہو کیونکہ ”نہی“ کا ”امرو“ سے کوئی تعلق ہی نہیں جیسے واضح ہے۔

”فَلَا أَحَدٌ“ میں فاء ”جزاء“ کیلئے ہے معنی یوں ہوگا: جب حضرت ”محمد“ ﷺ کو نین کے

سید اور سردار اور ہمارے یہ نبی ”امرو و ناہی“ ہیں ”فَلَا أَحَدٌ“۔

لفظ ”أَحَدٌ“ کی اصل

لفظ ”أَحَدٌ“ کے بارے میں نحو یوں اور اہل لغت کا اتفاق ہے کہ یہ دو معنوں میں سانبھا ہے ایک یہ کہ یہ واحد کے معنی میں ہے جو دو کا آدھا ہوتا ہے اور دوسرا معنی عقل والوں کی جنس جو کم از کم سے لے کر بے انتہاء تک جاتی ہے۔ پہلے معنی کے لحاظ سے اس کا فاء کلمہ ہمزہ ہوگا جو ”واو“ سے بدلا

ہوا ہوگا جبکہ دوسرے معنی کے لحاظ سے ہمزہ اصلی ہے جس میں یہ واؤ سے بدلا ہوا نہیں اور یہ مشرقات ہے جسے ہر ایک جانتا ہے مگر ہاں انہیں یہ اس بناء پر مشکل لگتا ہے کہ دو لفظوں کی شکل اور مادہ ہے اور ”وَحَدَّة“ کا لفظ ”واحدہ“ کو شامل ہے اور واؤ دونوں میں اصلی ہے تو اسے لازماً الف ہوگا اور یہ دونوں ”وَحَدَّة“ سے نکلے ہوں گے رہا ان دونوں میں سے ایک کو ”وَحَدَّة“ سے نکالنا دوسرے کو نہ نکالنا تو اس کی کوئی خاص وجہ نہیں۔

اس کا جواب یہ دیا گیا ہے کہ اس مذکور فرق کی طرف اشارہ سیبویہ وغیرہ نے کیا ہے اور یہ قول مادہ اور صورت کے لحاظ سے تو یہ لفظ ایک ہی ہیں تو ہم اسے مانتے ہیں لیکن ہم یہ بات نہیں مانتے کہ ان لفظوں کے ایک ہونے سے دونوں کا معنی بھی ایک ہی ہو ایسا کیوں نہیں ہو سکتا کہ دونوں کے معنی الگ الگ ہوں اور اس کی بہت سی مثالیں موجود ہیں جیسے ”قلی“ ”تویہ“ ”قال“ کی طرح ہے جس کا معنی ”ابغض“ (اس نے ناراض کیا) اور ”قلا“ ”قال“ کی طرح بھی ہے جس کا معنی ”شور“ ”وَأَنْضَجَ“ ہے (اس نے بھونا اور پکایا) اور پھر یہ بھی ہے کہ جو لفظ ”احد“ ”واحد“ کے معنی میں ہے عام نہیں ہے یہ نفی و اثبات میں ہوتا ہے اور عقل والوں کے علاوہ دوسروں پر بھی بولا جاتا ہے اور ”جماعة“ کے معنی میں نہیں ہوتا جبکہ دوسرا صرف نفی کیلئے ہوتا ہے جسے امام مبرد نہیں مانتے اور یہ عقل والوں ہی کیلئے بولا جاتا ہے اور ”جماعة“ کے معنی میں آتا ہے اور یہ عام ہوتا ہے جبکہ اول عام نہیں ہوتا۔

اس کی وضاحت امام شہاب نے ایک مستقل رسالے میں کی ہے یہ رسالہ لفظ ”احد“ کے بارے میں لکھا گیا ہے چنانچہ چاہو تو اس میں سے دیکھ سکتے ہو۔

”ابْر“ اسم تفضیل ہے لفظ ”بْر“ سے جس کا معنی گفتگو میں سچائی ہے اور اس کلام کا ماحول یہ معنی بتاتا ہے اور ناظم کے قول ”فِي قَوْلٍ لَا“ میں یہ لفظ ”قَوْلٍ“ ”ابْر“ سے تعلق رکھتا ہے یعنی یوں ہے ”فِي قَوْلِهِ لَا“ اور ”لَا“ کا لفظ نفی سے کنایہ ہے اور ان کے قول ”وَلَا نَعَمْ“ کا عطف ”لَا اَبْر“ پر ہے یعنی آپ ”نَعَمْ“ فرمانے میں بھی سب سے سچے ہیں اور ”نَعَمْ“ اثبات سے کنایہ ہے پھر ”لَا“ اور ”نَعَمْ“ حضور ﷺ کے عطاء نہ فرمانے اور عطاء فرمانے سے کنایہ نہیں ہیں کیونکہ حضور ﷺ سے جب بھی کسی شے کا سوال کیا جاتا تو آپ ”ہاں“ ہی فرماتے تھے جیسے کسی کامل شخص نے آپ کی شان میں لکھا ہے:

مَا قَالَ "لَا" قَطُّ إِلَّا فِي تَشْهَدِهِ

وَلَا "نَعَم" قَطُّ إِلَّا جَاءَتْ النِّعَمُ

”یعنی آپ نے تشہد (التحیات) کے علاوہ ”لا“ کبھی نہیں فرمایا اور ”نعم“ بھی اس وقت فرمایا جب نعمتیں سامنے ہوتیں۔“

شعر کا حاصل معنی یہ ہے کہ ہمارے سردار اور نبی حضرت محمد ﷺ اس چیز کا حکم دیتے ہیں جس کا انہیں اللہ کے ہاں سے حکم ملتا ہے جو پسندیدہ عقیدے اور بہترین عمل ہوتے ہیں اور گندی چیزوں اور گندے کاموں سے روکتے ہیں جبکہ آپ اپنی ہر خبر دینے میں سچے اور ناقص لوگوں کو مکمل کرنے کا تجربہ رکھتے ہیں چنانچہ ایسا کوئی نہیں جو ان سے نفی اور اثبات میں بڑھ کر سچا ہو اور نہ ہی وعدے وعید اور باقی حالات میں ان سے کوئی زیادہ حق رکھتا ہے کیونکہ آپ اپنی مرضی سے بولتے ہی نہیں، جو بھی بولتے ہیں وہ وحی ہوتی ہے جو انہیں کی جاتی ہے ان کی سچائی بالکل واضح اور مخالف کفار کے سامنے مانی ہوئی ہوتی ہے جیسے اللہ بادشاہ اور جبار نے فرمایا ہے: ”یقیناً وہ آپ کو جھٹلا نہیں سکتے لیکن ظالم لوگ اللہ کی آیتوں کو مانتے ہی نہیں“ (سورۃ الانعام آیت: ۱۸)۔

اے اللہ! ہمیں سچے لوگوں، شہیدوں اور نیک لوگوں کا ساتھی بنا۔ آمین!



شعر (۳۶)

هُوَ الْحَبِيبُ الَّذِي تُرْجَى شَفَاعَتُهُ
لِكُلِّ هَوٍ مِّنَ الْاَهْوَالِ مُقْتَحِمٍ

(ترجمہ:) ”وہ (اللہ کے) ایسے حبیب ہیں کہ ہم کسی بھی اچانک گھبراہٹ میں ان سے سفارش کی امید رکھ سکتے ہیں۔“

جب کچھ لوگوں کا خیال ہو سکتا تھا کہ آپ سب کے سردار نہیں تو حضرت ناظم رحمہ اللہ نے نہایت پختہ دلیل سے اسے ثابت کرنے کیلئے یوں فرمایا: ”هُوَ الْحَبِيبُ الَّذِي الْخ“ اصل عبارت یوں ہو گی: ”ای لَانَّهُ هُوَ الْحَبِيبُ الَّذِي“ تو یہاں ایک قیاس یوں ترتیب دیا جا سکتا ہے: حضرت محمد ﷺ کو نین اور ثقلین کے سردار ہیں کیونکہ حضرت محمد ﷺ ایسے حبیب ہیں کہ سارے لوگ ان کی سفارش کی امید رکھتے ہیں اور جس کی یہ شان ہو کہ وہ سید الکونین اور سید الثقلین ہوگا، اس کا نتیجہ مرضی کا ملے گا۔

تحقیق الفاظ

پھر یاد رہے کہ جملہ ”هُوَ الْحَبِيبُ“ حضرت محمد ﷺ کی صفت کے بعد صفت ہے۔ حضرت ناظم نے ضمیر منفصل کا ذکر کیا تاکہ ”حصر“ کا معنی پیدا کریں یہ مبتداء ہے اور حضور ﷺ کی طرف لوٹی ہے اور ”الحبیب“ رفع کے ساتھ اس کی خبر ہے اور خبر کو لام کے ساتھ معرفہ کرنے سے پتہ چلتا ہے کہ یہ مبتداء ہی سے تعلق رکھتی ہے۔

اگر تم کہو کہ حبیب ہونا صرف حضور ﷺ ہی کا خاصہ کیوں ہے حالانکہ حضرت ابراہیم علیہ السلام بھی تو اللہ کے خلیل ہیں بلکہ رسول کی پیروی کرنے والا ہر شخص ہی اللہ کا محبوب ہوتا ہے جیسے اللہ تعالیٰ کا یہ فرمان بتا رہا ہے: ”آپ فرمادیں کہ اگر تم اللہ سے محبت کرنا چاہتے ہو تو میری مانو اللہ تم سے محبت کرنے لگے گا“ (سورۃ آل عمران آیت: ۳۱)۔

اس سوال کا جواب یہ دیا گیا ہے کہ یہ حصر اضافی ہے یعنی کچھ انبیاء کے لحاظ سے حبیب ہیں۔ یہ مقام اس جواب کو اس لئے رد کرتا ہے کہ وہ اس موقع کیلئے مناسب نہیں کیونکہ مدح کا موقع ہے اور مدح میں زور لگانا ہوتا ہے لیکن اس کا حق جواب یہ ہے کہ اس سلسلے میں یہ حصر حقیقی ہے اور اس خوبی کو

حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام تک ہی رکھنا ہے اور یہ جو تم نے کہا ہے کہ حضرت ابراہیم علیہ السلام بھی اللہ کے خلیل ہیں تو یہ حصر کو توڑتا نہیں کیونکہ حبیب اور خلیل میں کئی طرح سے کھلم کھلا فرق ہے۔

خلیل اور حبیب میں فرق

خلیل کا لفظ فعیل کے وزن پر ہے جو فاعل کے معنی میں ہے اور اس کا تعلق حضرت ابراہیم علیہ السلام سے ہے چنانچہ اللہ تعالیٰ فرماتا ہے: ”وَاتَّخَذَ اللَّهُ اِبْرَاهِيْمَ خَلِيْلًا“ (سورۃ النساء آیت: ۱۲۵) (اللہ نے حضرت ابراہیم کو خلیل بنایا) رہا حبیب کا لفظ تو یہ فاعل یا مفعول کے معنی میں ہو سکتا ہے اور اس میں شک نہیں کہ مفعول کی نسبت مقصد میں فاعلیت کی نسبت سے زیادہ پوری ہوتی ہے کیونکہ کہا جا سکتا ہے: ”مُحَمَّدٌ حَبِيْبُ اللّٰهِ وَاللّٰهُ حَبِيْبٌ مُحَمَّدٍ“ لیکن یہ نہیں کہا جا سکتا: ”اللّٰهُ خَلِيْلٌ اِبْرَاهِيْمَ“ حالانکہ ابراہیم خلیل اللہ کہنا جائز ہے کیونکہ اس میں یہ وہم موجود ہے کہ یہ لفظ ”خَلَّة“ سے لیا گیا ہو جس کا معنی حاجت اور غرض ہے۔ دوسری یہ کہ خلیل اپنے خلیل بنانے والے تک کسی ذریعے سے پہنچتا ہے جبکہ حبیب اس تک ذاتی طور پر اور کسی ذریعے کے بغیر پہنچتا ہے۔ تیسرے یہ کہ خلیل اسے کہتے ہیں جو اپنی بخشش میں پورا طمع کرتا ہے جیسے حضرت ابراہیم علیہ السلام نے فرمایا تھا: ”وَالَّذِي اَطْمَعُ اَنْ يَغْفِرَ لِيْ خَطِيْئَتِيْ“ (سورۃ الشعراء آیت: ۸۲) اور حبیب وہ ہوتا ہے جس کی بخشش یقین کی حد تک ہوتی ہے جیسے اللہ تعالیٰ نے فرمایا: ”لِيَغْفِرَ لَكَ اللّٰهُ مَا تَقَدَّمَ مِنْ ذَنْبِكَ وَمَا تَاَخَّرَ“ چوتھے یہ کہ خلیل وہ ہوتا ہے جسے سوال کرنے پر کچھ ملے جبکہ حبیب وہ ہوتا ہے جسے مانگے بغیر ملے تو ان معانی کو دیکھتے ہوئے حبیب ہونے کی خوبی صرف حضور ﷺ ہی میں پائی جاتی ہے دوسرے انبیاء میں نہیں ہے تو پھر عام لوگ کس شمار میں ہوں گے۔

یہ جواب بھی دیا جا سکتا ہے کہ حبیب ہونا حقیقی طور پر آپ ہی میں پایا جاتا ہے لیکن بعد والے الفاظ کو ملا کر یعنی ان کے قول ”الَّذِي تَرْجُو شَفَاعَتَهُ“ کیونکہ عام شفاعت صرف ہمارے نبی ﷺ ہی فرمائیں گے کوئی اور نہیں کر سکے گا۔

امام غزالی رحمہ اللہ کا ایک واقعہ

امام غزالی رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ ایک رات میں شہر سے باہر تھا اور مجھے مکاشفہ سے معلوم ہوا کہ شہر کے سارے لوگ اس وقت سوئے ہوئے ہیں اور ان میں سے کوئی بھی اپنے رب اور خالق کی عبادت و فرمانبرداری نہیں کر رہا، چنانچہ میں نے دل ہی دل میں سوچا کہ اگر مجھ میں اس شہر کو جلا سکتا تو

پورے کو جلا دیتا کیونکہ وہ اپنے پروردگار کی عبادت چھوڑے ہوئے ہیں پھر ذہن میں آیا کہ بندوں کو جلا دینا تو صرف اللہ ہی کا کام ہے شرمندہ ہوا اور یہ بات ذہن سے نکال دی پھر سوچا کہ اگر میں ان سب کی سفارش کر سکتا تو سب لوگوں کی سفارش ہی کر دیتا پھر غور کیا تو یہ بات سمجھ میں آئی کہ سب کی سفارش کرنا تو ہمارے نبی و آقا ﷺ کا کام ہے چنانچہ اچانک ایک غائبانہ آواز آئی کہ اے شیخ! اگر تم اس بات سے بھی نہ رُکے تو میں تمہیں زمین کی گہرائی میں اُتار دوں گا اور تمہارا نام اپنے اولیاء کے دفتر ہی سے نکال دوں گا۔

”الذی ترجی شفاعتہ“، ”حَبِيبٌ“ کی صفت ہے اور ”تُرْجَى“، ”رَجَاءٌ“ سے ہے جس کا معنی طلب کرنا ہے۔ ایک فاضل کہتے ہیں کہ ”الرَّجَاءُ“ (مَدَّ سے) کا معنی طمع کرنا ہے اور اس سے ملتا جلتا معنی ”اَمَلٌ“ کا ہے پھر اس کے اور رجاء بمعنی خوف کے درمیان فرق صرف ان کے استعمال میں ہوتا ہے کیونکہ پہلا لفظ ایجاب اور نفی میں استعمال ہوتا ہے جیسے فرمان الہی ہے: ”وَتَرْجُونَ مِنَ اللّٰهِ مَا لَا يَرْجُونَ“ (سورۃ النساء آیت: ۱۰۴) اور دوسرا لفظ صرف نفی ہی میں استعمال ہوا کرتا ہے۔

”رجاء“ اور ”تمنی“ میں فرق

اگر پوچھا جائے کہ ”رَجَاءٌ“ اور ”تَمَنِي“ میں کیا فرق ہے؟ تو میں کہوں گا: ابن جوزی نے لکھا ہے کہ رجاء کا معنی اس چیز کا طمع کرنا ہوتا ہے جو مل سکتی ہو جبکہ ”تمنی“ ایسے نہیں ہوتی اور یہ بھی کہتے ہیں کہ ”رجاء“ کا لفظ ممکن چیز کے لالچ کرنے سے خاص ہے جبکہ ”تمنی“ عام ہے۔

”ترجی“ بنی للمفعول (مجہول) ہے اس کا فاعل اس لئے چھوڑا گیا تا کہ پتہ چل سکے کہ حضور ﷺ کی شفاعت کا اُمیدوار لوگوں میں سے ہر ایک ہو سکتا ہے۔

”الشفاعة“ کا معنی ہے: کسی سے کسی کیلئے معافی اور فضل و کرم مانگنا۔ ہمارے نبی ﷺ کی

شفاعت ان روایتوں اور حدیثوں سے ثابت ہے جو حدیث کی کتابوں میں لکھی ہیں۔

علامہ محقق دوانی رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ نبی کریم ﷺ کی تمام انسانوں اور جنوں کیلئے شفاعت

کا فائدہ یہ ہوگا کہ ان کا فیصلہ جلد کر دیا جائے گا چنانچہ انہیں قیامت کے دن کم سے کم گھبراہٹ ہوگی

جبکہ مومنوں کیلئے شفاعت انہیں معافی دلوانے اور درجے بلند کرانے کی خاطر ہوگی تو حضور ﷺ کی

شفاعت سب کیلئے عام ہوگی کیونکہ اللہ تعالیٰ فرماتا ہے: ”وَمَا أَرْسَلْنَاكَ إِلَّا رَحْمَةً لِّلْعَالَمِينَ“

(سورۃ الانبیاء آیت: ۱۰۷) (میں نے صرف آپ کو دونوں جہانوں کیلئے رحمت بنا کر بھیجا ہے)۔

شفاعت پانچ طرح کی

صاحب مواہب اپنی کتاب ”مواہب“ میں لکھتے ہیں کہ شفاعت پانچ طرح کی ہوگی، پہلی موقف کی گھبراہٹ دور کرنے کیلئے، یہ عظیم اور عام ہوگی، دوسری ایک گروہ کو بلا حساب جنت میں بھجوانے کیلئے، تیسری جہنم کے بنے حقداروں کیلئے، چوتھی دوزخ میں جا چکے لوگوں کیلئے اور پانچویں درجات بلند کرانے کیلئے۔

امام سیوطی رحمہ اللہ نے چھٹی شفاعت ان لوگوں کے عذاب ہلکے کرنے کے بارے میں بتائی ہے جو دوزخ میں ہمیشہ رہنے کے حقدار ہو چکے ہوں گے اور پھر مواہب ہی میں ساتویں بھی لکھی ہے جو صرف اہل مدینہ کیلئے ہوگی۔

”لکل هول من الہوال مقتحم“ کا تعلق ”تُرْجِحِي“ سے ہے یا ”بشفاعته“ سے ”لِكُلِّ“ میں لام ”فی“ کے معنی میں ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے اس فرمان میں ہے: ”يَا لَيْتَنِي قَدَّمْتُ لِحَيَاتِي“ (سورۃ الفجر آیت: ۲۴) یا توقیت یعنی وقت بتانے کیلئے جیسے فرمان الہی ہے: ”اقِمِ الصَّلَاةَ لِدُلُوكِ الشَّمْسِ“ (سورۃ الاسراء آیت: ۷۸) یا اس میں مضاف محذوف ہے، یعنی ”ای لِدْفَعِ كُلِّ هَوْلٍ“۔

”هَوْل“ کا معنی ”شدة“ اور ”مصيبة“ ہوتا ہے اور ”كل“ کی اس کی طرف اضافت عموم کا فائدہ دیتی ہے یعنی ”كُلِّ بَلِيَّةٍ“ جس سے مراد آخرت کی مصیبتیں ہیں کیونکہ یہاں ”شفاعة“ کا لفظ آیا ہے یا دونوں جہانوں کی مصیبتیں ہیں جیسے ”الہوال“ کے لفظ سے پتہ چلتا ہے کیونکہ حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کے وجود مبارک کی برکت سے مسخ ہو جانا، زمین میں دھنسا یا چاند گرہن، جڑ سے اکھاڑنا اور دیر تک عذاب ہونا وغیرہ تکلیفیں نہیں ہوں گی۔

”مُقْتَحِم“، ”اقتحام“ سے ہے، یا تو اسم فاعل کا صیغہ ہے یعنی وہ مصیبت جو لوگوں میں آنے والی ہے یا اسم مفعول ہے یعنی ہر مصیبت میں جو ان میں آ چکی۔

شعر نمبر ۳۶: دنیاوی اور اخروی ضرورتوں کیلئے

یاد رکھو کہ یہ شعر بارگاہ الہی میں گڑ گڑانے اور دعا قبول ہونے کیلئے آئے شعروں میں سے پہلا ہے چنانچہ جسے دنیاوی یا اخروی کوئی ضرورت ہو تو وہ ایک ہی مجلس میں یہ شعر ایک ہزار ایک مرتبہ پڑھے انشاء اللہ! اللہ تعالیٰ اس کی دعا قبول فرما کر اس کی ضرورتیں فوراً پوری فرمائے گا۔

حضرت ابوسعید خادمی رحمہ اللہ بتاتے ہیں کہ یہ میری ہر ضرورت کیلئے تریاق ثابت ہوا ہے۔ پھر ہمارے استاذ (اللہ ان کا سایہ دیر تک قائم رکھے اور انہیں ان کی خواہش کے مطابق عطا فرمائے) بتاتے ہیں کہ ہمارے استاد (الحاج کے نام سے مشہور) عثمان آفندی اقشہری، شہر قیصر میں مفتی تھے ایک دن انہیں اس عہدے سے ہٹا دیا گیا تو پریشان اور تنگدل ہو گئے، وہ چاہتے تھے کہ دوبارہ مفتی بنوں چنانچہ انہوں نے مجھے اور میرے دو ہم جماعت ساتھیوں کو اپنے گھر پر بلایا۔ ہم نے ایک ہی مجلس میں پڑھنے کے دوران بولے بغیر ایک ہزار ایک مرتبہ یہ شعر پڑھا تو تھوڑے ہی عرصہ بعد ان کے مفتی ہونے کا حکم آ گیا۔



شعر (۳۷)

دَعَا إِلَى اللَّهِ فَالْمُسْتَمْسِكُونَ بِهِ
مُسْتَمْسِكُونَ بِحَبْلِ غَيْرِ مُنْفَصِمٍ

(ترجمہ:) ”رسول اللہ ﷺ لوگوں کو اللہ کے حکم ماننے پر لگاتے رہے چنانچہ آپ کے حکم پر چلنے والے ایسے ہیں کہ گویا انہوں نے نہ ٹوٹنے والی رسی پکڑ رکھی ہے۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے حبیب ہونا صرف آپ کیلئے ثابت کر دیا تو یہ پہلے قیاس کا صغریٰ تھا اور وہ صغریٰ ذہن میں واضح نہیں تھا تو اسے اس شعر سے ثابت کر رہے ہیں چنانچہ فرمایا: ”دَعَا إِلَى اللَّهِ الْخ“ اور یہ چونکہ دلیل کی شکل میں نہیں لیکن حقیقۃً دلیل ہی ہے کیونکہ دلیل اور علت یا تو بالکل واضح ہوتی ہے یعنی ایسی ہوتی ہے جو لفظوں میں صورت والی ہوتی ہے یا وہاں ”اِذَا“ لام یا فاء کے مقدر ہونے پر ہوتی ہے یا پھر تلویحی (اس کی طرف اشارہ) ہوتی ہے یعنی صفت اور حال وغیرہ بن کر اور یہاں تلویحی ہی ہے چنانچہ یہاں یوں قیاس ترتیب دیا جا سکتا ہے: یہ محمد ﷺ ہیں جو ایسے حبیب ہیں جن کی شفاعت قبول ہوگی کیونکہ حضرت محمد ﷺ نے اللہ کی طرف بلایا چنانچہ ان کی بات ماننے والے گویا اس رسی کو تھام چکے ہیں جو ٹوٹنے والی نہیں اور جو بھی یوں ہوتا ہے تو وہ ایسا حبیب ہوتا ہے جس کی شفاعت مانی جاتی ہے تو نتیجہ صاف ظاہر ہے۔

تحقیق الفاظ

”دَعَا“، ”دَعْوَةٌ“ سے ہے اور آپ کی یہ ”دَعْوَةٌ“ بولنے والے ہر عربی و عجمی کیلئے بلکہ ہر اہل کتاب، آتش پرست، بت پرست اور جٹوں وغیرہ تک کیلئے تھی اور اس معنی کو عام کرنے کے لئے حضرت ناظم رحمہ اللہ نے ”دَعَا“ کا فاعل حذف کیا اور یونہی ”ہَدَى“ چھوڑ کر ”دَعَا“ کا لفظ لیا۔

ارشاد اور دعوت میں فرق

اگر یہ کہا جائے کہ ”اِرْشَادٌ“ اور ”دَعْوَةٌ“ میں کیا فرق ہے؟ تو میں کہوں گا کہ ”اِرْشَادٌ“ کا لفظ اولیاء کرام کیلئے بولا جاتا ہے اور ”دَعْوَةٌ“ کا لفظ انبیاء کے لئے بولا جاتا ہے۔

”إِلَى اللَّهِ“ میں مضاف حذف ہے اصل یوں ہے: ”إِلَى دِينِ اللَّهِ“ یا ”إِلَى عِبَادَةِ اللَّهِ“ یا ”إِلَى شَرَعِ اللَّهِ“۔

”فالمستمسكون به“ میں فاء تفریح (بات پر بات کرنا) کیلئے ہے یعنی ”جب آپ اللہ کی طرف بلانے والے ہیں تو ان کی بات ماننے والے الخ“۔ یہ ”اسْتَمْسَاك“ سے ہے بمعنی تھا منا او ہاتھ سے پکڑ لینا۔

”به“ کا تعلق ”مُسْتَمْسِكُونَ“ سے ہے اور یہ ضمیر حضور ﷺ کی طرف لوٹتی ہے لیکن یہاں آپ کی شریعت یا جو آپ کی تبلیغ ہے مراد ہے چنانچہ ”به“ کی ضمیر میں ”اسْتِخْدَام“ ہے کیونکہ ضمیر لوٹنے کی جگہ سے ایک معنی مراد لیا جبکہ اس کی طرف لوٹنے والی ضمیر سے دوسرا معنی مراد لیا لیکن پہلی حقیقت ہے جبکہ دوسرا مجاز اور پھر اس کے بعد اس مقام پر استعارہ مکنیہ بنتا ہے اور وہ یوں کہ ”شرع“ کو اس رستی سے تشبیہ دی جو اللہ کی طرف سے مقصد تک پہنچانے کیلئے بندوں تک جاتی ہے جیسے اس رستی کو اگر کوئی پکڑ لے تو وہ اللہ تک پہنچ جاتا ہے شرع بھی ایسی ہی ہے پھر ذہن میں رستی کو شرع کے مفہوم کیلئے استعارہ کیا اور خارج میں تقدیراً شرع کا ذکر کر کے شرع مراد لیا چنانچہ اس صورت میں ”المستمسكون“ اس استعارہ کیلئے ترشح ہے لہذا یہ ایک مذہب کی بناء پر تو اپنی حقیقت پر ہوگا لیکن دوسرے مذہب کی بناء پر مجاز اور استعارہ تبعیہ ہوگا اور وہ یوں کہ ”اطاعة“ کو مقصد تک پہنچانے کیلئے ”استمساک“ سے تشبیہ دی گئی اور پھر ”استمساک“ کو ”اطاعة“ کے مفہوم کیلئے استعارہ کیا گیا چنانچہ ”استمساک“ کو ذکر کر کے ”اطاعة“ مراد لی گئی اور پھر ”استمساک“ سے ”مستمسكون“ اور ”اطاعة“ سے ”مطیعون“ کا لفظ نکالا گیا اور ”مطیعون“ کو ”مستمسكون“ سے تشبیہ دے دی گئی اور ”المستمسكون“ کو ”مطیعون“ کے مفہوم کیلئے استعارہ کے طور پر ”مطیعون“ مراد لیا گیا اور پھر ”غَيْرِ مُنْفَصِمٍ“ ترشح پر ترشح ہے اور جہاں استعارے کی ترشح بڑھ جاتی ہے تو اس کا حسن بھی بڑھ جاتا ہے۔

”منفصم“ اسم فاعل ہے ”انفصام“ سے جس کا معنی رُ کے بغیر کاٹنا ہے۔ رہا ”انقصام“ قاف سے تو وہ وقفہ وقفہ اور فاصلہ دے کر اسے کاٹنا ہوتا ہے۔

پھر یاد رہے کہ اس شعر کے پہلے مصرعہ میں اللہ تعالیٰ کے اس فرمان کی طرف اشارہ ہے: ”يَا أَيُّهَا النَّبِيُّ إِنَّا أَرْسَلْنَاكَ شَاهِدًا وَمُبَشِّرًا وَنَذِيرًا وَدَاعِيًا إِلَى اللَّهِ بِإِذْنِهِ“ (سورة الاحزاب آیت: ۴۵-۴۶) نیز اس فرمان کی طرف ”وَمَنْ أَحْسَنُ قَوْلًا مِّمَّنْ دَعَا إِلَى اللَّهِ الْآيَةَ“ (سورة فصلت آیت: ۳۳) اور مصرعہ میں اس آیت کا حرف لیا گیا ہے: ”وَاعْتَصِمُوا بِحَبْلِ اللَّهِ جَمِيعًا“ (سورة آل عمران آیت: ۱۰۳)

اور پھر اس شعر میں حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کے اس فرمان کی طرف بھی اشارہ ہے کہ ”جب میری اُمت میں بگاڑ ہو چکا ہوگا تو اس موقع پر جو میری سنت کو تھامے گا تو اسے سوشہید کا اجر ملے گا“ (مشکاۃ المصابیح، کتاب الایمان، باب الاعتصام بالکتاب والسنة، جلد ۱ صفحہ ۹۷، رقم الحدیث: ۱۷۶) اور غور کرنے والے کیلئے جو نظر رکھتا ہو یہ بات ڈھکی چھپی نہیں۔



شعر (۳۸)

فَاقَ النَّبِيِّينَ فِي خُلُقٍ وَفِي خُلُقٍ
وَلَمْ يُدَانُوهُ فِي عِلْمٍ وَلَا كَرَمٍ

(ترجمہ:) ”آپ کی پیدائش اور اخلاق کو دیکھیں تو آپ سارے نبیوں سے بڑھ کر تھے وہ انبیاء آپ کے علم اور مہربانی کرنے میں آپ کے مرتبہ تک نہ پہنچ سکے۔“

جب حضرت ناظم رحمہ اللہ کے اس پہلے شعر پر یہ اعتراض نکلا (جس میں بتایا تھا کہ حبیب صرف اور صرف حضور ﷺ ہی ہیں) کہ آپ کی یہ دلیل یعنی ”دعا الی اللہ الخ“ سارے نبیوں کیلئے بھی ہے تو آپ کا یہ دعویٰ پورا ہونے سے رہ گیا جس پر آپ نے اپنا دعویٰ ایک اور مضبوط طریقے سے ثابت کرنا چاہا ہے جس کیلئے فرمایا: ”فَاقَ النَّبِيِّينَ الخ“۔

یہاں اس طرح قیاس ترتیب دیا جاسکے گا کہ محمد ﷺ وہ حبیب ہیں کہ ان کی شفاعت مانی جائے گی کیونکہ محمد ﷺ اپنی پیدائش اور اخلاق میں سب نبیوں سے بڑھ کر ہیں وہ علم اور مہربانی کرنے میں آپ کا مقام ہی نہ پاسکے اور جس کی یہ شان ہو تو وہ ایسا حبیب ہوگا کہ جس کی شفاعت مانی جائے چنانچہ مرضی کے مطابق نتیجہ نکل آئے گا۔

تحقیق الفاظ

”فَاقَ“ کا معنی ”رَبِحَ“ فائدہ اٹھانا اور دوسرے پر بلندی میں بڑھ جانا ہے۔ یہ لفظ ”فَوْقَ“ سے ہے جبکہ ”فوق“ اور ”تفوق“ کے الفاظ حقیقت میں اونچے مکان کیلئے استعمال ہوتے ہیں لیکن یہاں مرتبے کی بلندی کیلئے آئے ہیں جو مجاز اور استعارہ تبعیہ بنتا ہے اور وہ یوں کہ عالی شان اور مرتبہ بلند ہونے کو مکان کے اونچا ہونے سے تشبیہ دی گئی جو عام طور پر بلند ہو اور عظیم الشان ہونا مراد لیا گیا پھر اونچے مکان کو بول کر عظیم الشان مراد لیا گیا چنانچہ اس استعارہ کی بناء پر بلند مرتبہ ہونے کی وجہ سے ”عَلا“ کا لفظ نکالا گیا جبکہ مکان کی بلندی کو دیکھ کر ”فَاقَ“ کا لفظ نکالا چنانچہ اس تعلق کی بناء پر جو ان دونوں کی مصدروں میں ہے ”عَلا“ کو فاق سے تشبیہ دی گئی پھر ”فَاقَ“ کو ”عَلا“ کے مفہوم کے لئے استعارہ کیا گیا چنانچہ ”فَاقَ“ کہہ کر ”عَلا“ مراد لیا گیا۔

یہ بھی ہو سکتا ہے کہ واقعی بلند مکانی مراد لی جائے تو اس پر غور رکھو۔

”وَالنَّبِيِّينَ“ نبی کی جمع ہے، یہ نصب سے ہے اور ”فَاقَ“ کا مفعول ہے۔

”خَلَقَ“ کا لفظ (فاء پر زبر اور لام ساکن) اس کا لغوی معنی اندازہ کرنا اور نئی چیز بنانا ہے اور یہاں مفعول کے معنی میں ہے اور اس سے مراد آپ کے دیکھے جانے والے کمالات ہیں جیسے شکل مبارک، خوبصورتی، جسم کے سارے حصوں کا صورت اور رنگ میں ایسا ہونا جو بہترین ہو اور ہر پہلو کا مناسب ہونا۔

”خُلِقَ“ (فاء اور لام پر پیش) ”خُلِقَ“ کی جمع ہے یعنی اچھی عادت لیکن یہاں مراد اندرونی کمالات اور نفس کی قوتوں کا مناسب ہونا ہے۔

”خَلَقَ“ کو مفرد اور ”خُلِقَ“ کو جمع لانے میں یہ اشارہ ہے کہ اخلاق تو بہت زیادہ تھے جبکہ پیدائش ایک ہی مرتبہ کی ہے۔

عظمتِ رسول پر دلائل

اے اس نبی کریم سے پیار کی بناء پر انہیں خلقِ حسن، کمالات اور جلال و جمال جیسی اچھی خصلتوں میں سارے انبیاء علیہم السلام سے بڑھانے والے! (اللہ تعالیٰ تمہیں اور ہمیں ہر حال میں اس کی توفیق دے) یہ بات ذہن میں رکھو کہ آیتوں اور حدیثوں کی بناء پر ہمارے نبی ﷺ سارے نبیوں سے بڑھ کر مرتبہ والے ہیں۔

رہی آیتیں تو جیسے اللہ تعالیٰ فرماتا ہے: ”تِلْكَ الرُّسُلُ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلَى بَعْضٍ“ (سورخ آل عمران، آیت: ۲۵۳) (ان رسولوں میں سے ہم نے کچھ کو دوسروں سے بڑھ کر مرتبہ دیا ہوا ہے) اس بارے میں تفسیروں والے بتاتے ہیں کہ اللہ کی مراد حضرت محمد ﷺ ہیں جیسے اللہ تعالیٰ نے دوسرے مقام پر فرمایا: ”وَكَانَ فَضْلُ اللَّهِ عَلَيْكَ عَظِيمًا“ (سورۃ النساء، آیت: ۱۱۳) (اللہ کا تم پر بہت بڑا فضل و کرم ہو چکا ہے) اور یہ بھی فرمایا: ”وَرَفَعْنَا بَعْضَهُمْ فَوْقَ بَعْضٍ دَرَجَاتٍ“ (سورۃ الزخرف، آیت: ۳۲) (اور کچھ کو ہم نے دوسروں سے بڑھ کر مرتبہ دے رکھے ہیں) چنانچہ تفسیر والے لکھتے ہیں کہ اللہ نے اس سے حضرت محمد ﷺ مراد لئے ہیں۔

رہی حدیثیں تو جیسے حضور ﷺ کا اپنا فرمان ہے: ”میں پہلوں اور آخر میں آنے والوں کا سردار ہوں لیکن یہ بڑائی اور فخر نہیں“ (سنن ترمذی، رقم الحدیث: ۳۶۳۶) اور آپ کا یہ فرمان ہے: ”میں آدم کی ساری اولاد کا سردار ہوں لیکن یہ فخر نہیں“ (سنن ابن ماجہ، رقم الحدیث: ۴۳۰۲)۔ پھر فرمایا: ”میں آدم کی ساری

اولاد میں سے بڑھ کر اللہ کا خوف رکھنے والا اور اللہ کے ہاں سب سے بڑھ کر عزت والا ہوں، اسے فخر نہ سمجھو“ (کنز العمال، رقم الحدیث: ۳۰۴۷) پھر حضرت سیدہ طیبہ طاہرہ سیدہ عائشہ صدیقہ رضی اللہ عنہا کے مطابق رسول اکرم ﷺ نے فرمایا کہ جبریل نے میرے پاس آ کر بتایا کہ میں زمین کے مشرق و مغرب (ساری) میں گھوما ہوں لیکن حضرت محمد ﷺ جیسا کوئی نہیں دیکھا“ (مجمع الزوائد، رقم الحدیث: ۱۳۸۲۹)۔

رہی پیدائش مبارکہ سے پہلے آپ کی برتری تو اس سلسلے میں تمہیں آپ کا یہ ارشاد کافی ہے ”میں اس وقت نبی تھا جب آدم کے جسم میں روح نہ تھی“ (کنز العمال، رقم الحدیث: ۳۱۹۱۳)۔ پھر یہ ارشاد ہے: ”میں پیدائش میں سارے انبیاء سے پہلے اور نبی بنائے جانے میں آخری ہوں“ (المرجع السابق جلد ۱۱ صفحہ ۲۰۵، رقم الحدیث: ۳۲۱۲۳)۔ اور مفسرین کا اس آیت کی تفسیر میں فرمان ہے: ”وَإِذْ أَخَذَ اللَّهُ مِيثَاقَ النَّبِيِّينَ لَمَا آتَيْتُكُمْ الْإِيه“ (سورۃ آل عمران، آیت: ۸۱) کہ اللہ تعالیٰ نے تمام انبیاء علیہم السلام سے پکا وعدہ اور یہ عہد لیا تھا کہ اگر ان کی زندگی میں حضور ﷺ کو بھیجا گیا تو انہیں لازمی طور پر آپ کو ماننا اور ان کی مدد کرنا ہوگی جیسے پہلے آچکا چنانچہ ہمارے نبی کریم ﷺ ایک لحاظ سے سارے نبیوں کے بھی نبی ہوئے۔

رہی حسن و جمال، شگفتگی اور کمال میں آپ کی سارے انبیاء علیہم السلام پر برتری تو یہ آیت اسی طرف اشارہ کر رہی ہے: ”وَالضُّحَىٰ وَاللَّيْلِ إِذَا سَجَىٰ“ (سورۃ الضحیٰ، آیت: ۲) کہ ”ضُحَىٰ“ کو آپ کے چہرہ مبارک اور رات کو آپ کی مبارک زلفوں سے استعارہ کیا گیا۔ اس سلسلے میں تمہیں حضرت انس رضی اللہ عنہ کی یہ حدیث ہی کافی دلیل رہے گی کہ حضور ﷺ نے فرمایا: ”اللہ تعالیٰ نے ہر نبی کو خوبصورت شکل اور بہترین آواز دے کر بھیجا جبکہ تمہارا نبی سب سے بڑھ کر خوبصورت اور بہترین آواز رکھتا ہے“ (الشمائل الحمدیہ، باب ماجاء فی قرأۃ رسول اللہ ﷺ صفحہ ۱۸۳، رقم الحدیث: ۳۰۳) اور پھر جب آپ سے حضرت یوسف علیہ السلام اور آپ کے حسن کے بارے میں پوچھا گیا تو آپ کا یہ فرمان بھی یہی بتاتا ہے کہ ”میرا حسن دلربا اور دلکش (گندمی) ہے“ (صحیح مسلم، باب کان النبی ابیض، جلد ۱ صفحہ ۱۲۷، رقم الحدیث: ۲۳۴۰)۔

رہی بہترین اخلاق میں آپ کی انبیاء علیہم السلام پر برتری تو آپ کی شان میں تمہیں یہ فرمان الہی ہی کافی رہے گا کہ ”تم عظیم الشان خلق والے ہو“ (سورۃ القلم، آیت: ۴)۔ کیونکہ اللہ تعالیٰ نے صرف آپ ہی کو خلق عظیم دیا ہے، کسی اور کو نہیں۔ پھر وہ فرمان بھی ہے جسے امام احمد و مالک نے مؤطا میں

ذکر کیا ہے کہ ”مجھے اسی وجہ سے بھیجا گیا ہے کہ سارے اچھے طریقے بتا دوں“ (موطاً امام مالک، کتاب حسن الخلق، باب ماجاء فی حسن الخلق، جلد ۲ صفحہ ۲۰۴، رقم الحدیث: ۱۷۲۳)۔ چنانچہ حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے اس شعر میں اشارہ دیا ہے کہ سارے انبیاء علیہم السلام ہی میں بہتر اخلاق موجود تھے لیکن حضور صلی اللہ علیہ وسلم میں سارے اعلیٰ اخلاق جمع تھے اور حالات ایسے عمدہ تھے کہ ان سے بڑھ کر کسی کا کوئی کمال سوچا بھی نہیں جا سکتا۔

نبیوں میں سے کسی کو دوسروں پر برتری دینا منع

اگر تم کہو کہ کسی نبی کو دوسرے پر برتری دینے کے بارے میں روکا گیا ہے اور یونہی حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کو دوسرے نبیوں پر برتری دینے سے روکا گیا ہے چنانچہ آپ نے اس حدیث میں فرمایا کہ ”انبیاء کو آپس میں برتری نہ دیا کرو“ (صحیح مسلم، کتاب الفضائل، باب فی فضائل موسیٰ، جلد ۱ صفحہ ۱۲۹۱، رقم الحدیث: ۲۳۷۳) ایک اور حدیث میں ہے کہ ”تم مجھے یونس بن مثنیٰ پر برتری نہ دیا کرو“ (سبل الہدیٰ والرشاد، کتاب جماع ابواب اسماء، الباب الثالث فی ذکر ما وقعت علیہ جلد ۳ صفحہ ۲۷۲)۔ تو پھر حضرت ناظم رحمہ اللہ کی طرف سے یہ اور اس سے اگلا شعر کہنا کیونکر صحیح ہوا؟

برتری کیلئے صورتیں

میں کہوں گا کہ ان حدیثوں کے مطلب میں علماء نے مناسب راہ نکالی ہے چنانچہ اول یہ کہ آپس میں انہیں ایسی برتری نہ دی جائے جس سے دوسروں میں کوئی خامی پیدا ہو جائے۔ دوسرے یہ برتری نبوت و رسالت میں منع ہے کیونکہ انبیاء علیہم السلام اس برتری میں ایک ہی درجہ پر ہیں، اس میں کسی کو کسی پر برتری نہیں، یہ برتری کئی اور معاملوں میں ہے جو اس برتری سے زائد ہیں، اسی وجہ سے ان میں کچھ رسول اور کچھ اولوالعزم رسول ہیں چنانچہ اللہ تعالیٰ نے فرمایا ہے: ہم نے کچھ نبیوں کو دوسروں پر برتری دی ہے۔ تیسرے یہ کہ حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام نے دوسروں پر اپنی اس برتری کو اس وقت روکا جب آپ کو یہ نہ بتایا گیا تھا کہ آپ حضرت آدم علیہ السلام کی ساری اولاد میں سے مرتبے میں بڑھ کر ہیں۔ چوتھے یہ کہ آپ کا یوں روکنا عاجزی اور تکبر سے بچنے کیلئے تھا۔

اس سے زیادہ وضاحت بڑی کتابوں میں ملے گی۔

”ولم یدانوا فی علم ولا کرم“ یہاں واو استینافیہ ہے گویا کہ کہا گیا: تو پھر کیا آپ علم و کرم جیسے اخلاق میں سب سے بڑھ گئے حالانکہ یہ دونوں سارے اخلاق سے بڑھ کر ہیں؟ چنانچہ علامہ نے

خوب زور سے فرمایا: ”وَلَمْ يَدَانُوهُ“ کہ انبیاء علیہم السلام علم و کرم میں آپ کی حد تک نہیں پہنچ سکے۔ تم یہ نہ سوچو کہ ظاہری طور پر یہ کلام بتا رہا ہے کہ انبیاء علیہم السلام علم نہیں رکھتے تھے تو ان پر جاہل ہونے کا لفظ بولا جاسکے گا کیونکہ اس طرح یہ بات انہیں ناقص بے سمجھ اور غافل کہنے تک چلی جائے گی حالانکہ وہ اس سے پاک ہیں اور اس چیز سے نا سمجھ بنیں گے جو ان کیلئے لازم تھی ہاں یوں کہا جاسکتا ہے کہ آپ کچھ چیزوں میں ان سے زیادہ علم رکھتے تھے جیسے آخرت کا معاملہ، قیامت کی شرطیں، نیکیوں اور بد لوگوں کے حالات اور علمِ ماکان و مایکون۔

پھر یاد رہے کہ آپ کے علم کا بیان اس آیت سے ثابت ہے: ”آپ کو وہ سب کچھ بتا دیا گیا جس کے بارے پہلے واقف نہ کیا گیا“ (سورۃ النساء آیت: ۱۳) پھر اس حدیث سے بھی کہ ”میں گویا علم کا شہر ہوں“ (کنز العمال، کتاب الفضائل، الباب الثالث، جلد ۱۱ صفحہ ۲۷۵، رقم الحدیث: ۳۲۸۸۷) الحدیث وغیرہ۔

پھر آپ کا کرم میں برتر ہونا بھی اللہ تعالیٰ کے اس فرمان سے ثابت ہے جیسے کچھ مفسرین نے بتایا ہے: ”إِنَّهُ لَقَوْلُ رَسُولٍ كَرِيمٍ“ (سنن ترمذی، کتاب المناسبات، باب ماجاء فی فضل النبی، جلد ۵ صفحہ ۳۵۲، رقم الحدیث: ۳۶۳۰) اور آپ کے اس فرمان سے بھی کہ ”میں آدم کی اولاد میں سب سے بڑھ کر کرم والا ہوں“ اسے فخر نہ سمجھو“ (سورۃ الحاقۃ آیت: ۴۰)۔

آپ کے کرم والے کچھ واقعات آگے آرہے ہیں۔

یہ ان شعروں میں سے دوسرا ہے جسے خواب میں حضرت ناظم رحمہ اللہ نے پڑھا تو آپ جھومے تھے تو لازم ہے کہ قصیدہ پڑھنے والا پڑھنے میں اسے دہرائے لیکن یہ دہرانا اگہرا ہو (یعنی ۳، ۵ یا ۷ مرتبہ)۔



شعر (۳۹)

وَكُلُّهُمْ مِّنْ رَّسُولِ اللَّهِ مُلْتَمِسٌ

غَرْفًا مِّنَ الْبَحْرِ أَوْ رَشْفًا مِّنَ الدَّيْمِ

(ترجمہ:) ”سب نبی اور رسول اپنے اپنے مرتبوں کے لئے حضور ﷺ کی بارگاہ میں درخواست کرتے رہے کہ انہیں رحمت کے سمندر میں سے گویا قطرہ سایا بارش کا گویا ایک ہی قطرہ مل جائے۔“

جب اس پہلے شعر میں مجازی معنی وغیرہ کا شبہ پیدا ہو چلا تو حضرت ناظم رحمہ اللہ اسے دور کرنا چاہتے ہیں چنانچہ زور پیدا کرتے ہوئے فرمایا: ”وَكُلُّهُمْ مِّنْ رَّسُولِ اللَّهِ الْخ“۔
تحقیق الفاظ

واو عطف یا ابتداء کیلئے ہے لیکن دوسری صورت زیادہ اچھی ہے جسے ہر ایک سمجھ سکتا ہے۔

لفظ ”کُل“ کی تحقیق

لفظ ”کُل“، ”اِكْمِل“ (تاج) سے ہے جو سر کو پہلوؤں سے گھیر لیتا ہے اس بناء پر اس لفظ ”کُل“ سے گھیراؤ لینے کا معنی نکلتا ہے۔ یہ ان اسموں میں سے ہے جو مضاف ضرور ہوتے ہیں اور اسی لئے یہ اسموں ہی پر داخل ہوتا ہے کیونکہ اضافت کا ہونا صرف اسموں میں پایا جاتا ہے۔ علم اصول والے فرماتے ہیں کہ لفظ ”کُل“ جب معرفہ کی طرف مضاف ہو تو اس کے سارے اجزاء کو گھیرتا ہے، نکرہ کی طرف مضاف ہو تو اس کے سارے افراد کو گھیرتا ہے چنانچہ یوں کہنا جائز ہے کہ ”كُلُّ التَّفَاحِ حَامِضٌ“ (یعنی اس کا ایک ایک ذرہ ترش ہے) لیکن یوں کہنا جائز نہیں کہ ”كُلُّ تَفَاحٍ حَامِضٌ“ کیونکہ ان میں سے بیٹھا بھی ہو سکتا ہے۔

اس کے ساتھ جمع کی ضمیر ”نَبِيَّيْنِ“ کی طرف جاتی ہے۔ ”مِنْ رَّسُولِ اللَّهِ“، ”مُلْتَمِسٌ“ سے متعلق ہے اسے وزن پورا کرنے اور خضر کیلئے پہلے لایا گیا ہے یعنی یوں ہوگا: ”درخواست صرف آپ ہی سے ہے دوسرے نبیوں سے نہیں۔“

اگر تم کہو کہ یہ تو ضمیر کا موقع تھا، اسم ظاہر کیوں لائے تو میں کہوں گا کہ آپ کی بڑی خوبی بتانے کیلئے کیونکہ رسول ہونا ایک بڑی خوبی ہے۔

یوں نہ کہا جائے کہ حضرت ناظم رحمہ اللہ کے فرمان ”مِنْ رَسُوْلِ اللّٰهِ“ سے کیونکر سمجھ آتا ہے کہ انبیاء علیہم السلام ہمارے نبی ﷺ سے درخواست کرتے تھے کیونکہ آپ کے بتانے کے مطابق یہ رسول تین سو تیرہ ہیں؟ اس لئے کہ ہم کہیں گے کہ یہاں سمجھانے کیلئے یہ بات موجود ہے کہ اس سے مراد ہمارے نبی ﷺ ہی ہیں کیونکہ علماء جب بھی ”رَسُوْلِ اللّٰهِ“ کا لفظ اس اُمت کی کتابوں میں بولتے ہیں تو اس سے مراد کوئی دوسرے نہیں ہمارے نبی ہی ہوتے ہیں۔

اس کا ایک اور جواب بھی ہے تو سوچ لو۔

”مُلْتَمِسٌ“ مبتداء یعنی ”كُلُّهُمْ“ کی خبر ہے ضمیر لفظ کے لحاظ ”كُلُّ“ کی طرف جاتی ہے ورنہ لازم ہوتا کہ ”هُمْ“ کو دیکھتے ہوئے ”مُلْتَمِسُونَ“ آتا۔

دعاء التماس اور امر میں فرق کیا ہے

اگر کوئی کم درجہ بڑے سے کچھ طلب کرے تو یہ سوال اور دعاء ہوتی ہے ایک جیسوں میں سے کوئی کسی سے کچھ طلب کرے تو یہ ”التِماس“ ہے اور اگر اعلیٰ کم درجہ سے کم مانگے تو ”امر“ ہوتا ہے اور ناظم نے انبیاء علیہم السلام کے حق میں بطور ادب التماس کا لفظ لیا ہے۔

”غَرَفًا مِنَ الْبَحْرِ“ اور ”رَشْفًا مِنَ الدِّيمِ“ (زبر کے ساتھ) ”مُلْتَمِسٌ“ کا مفعول ہے اور ”غَرَفٌ“ (غین پر زبر اور راء پر سکون) ہاتھ سے ہتھیلی بھر پانی لینے کو کہتے ہیں۔ ”مِنَ الْبَحْرِ، غَرَفًا“ سے متعلق ہے اور ”بَحْرٌ“ سے مراد حضور ﷺ کے اخلاقِ کریمہ ہیں چنانچہ اس میں استعارہ مُصْرَّحٌ ہے کیونکہ آپ کے باطنی اخلاق کو زیادہ وافر اور ان میں تھوڑی سی بھی ملاوٹ نہ ہونے کی وجہ سے ”بَحْرٌ“ سے تشبیہ دی پھر ”بَحْرٌ“ کو آپ کے ”خلق“ سے استعارہ کیا گیا چنانچہ ”بَحْرٌ“ کا ذکر کر کے آپ کے اخلاق مراد لئے گئے جبکہ ”غَرَفٌ“ کو اس کیلئے ثبات کرنا ”ترشح“ ہے اور پھر ترشح میں بھی استعارہ ہے اور وہ یوں کہ انبیاء علیہم السلام کے اخلاق کو ”بَحْرٌ“ کے چلو سے تشبیہ دی گئی کہ وہ حضور ﷺ کے لحاظ سے تھوڑے ہیں چنانچہ ”غَرَفًا“ کا لفظ ان انبیاء علیہم السلام کیلئے استعارہ کیا گیا اور وہ یوں کہ ”غَرَفٌ“ بول کر ان کے اخلاق مراد لئے گئے اور ”رَشْفًا“ کے درمیان ”او“ واؤ ملانے والی کے معنی میں ہے۔

”الرَّشْفُ“ منہ سے پانی لینا یعنی پانی کا گھونٹ۔ ”مِنَ الدِّيمِ“ ”رَشْفًا“ سے متعلق ہے اور یہ جائز ہے کہ ”مِنَ الْبَحْرِ“ اور ”مِنَ الدِّيمِ“ دونوں ہی حال یا صفت ہوں۔

”وَالدِّيمِ“ جمع ”دِيمَة“ ہے یہ اس بارش کو کہتے ہیں جو بالکل سکون سے برسے اس میں کڑک اور چمک نہ ہو اور مسلسل چلے کم سے کم دن یارات کا تیسرا حصہ اور زیادہ سے زیادہ دن اور رات۔ ”دِيمَة“ کے لفظ میں یاء واؤ سے تبدیل ہوئی ہے کیونکہ اس کا اصل ”دَوْمَة“، ”دَوَام“ سے۔

تم کہو گے کہ ”غَرْف“ کو ”بَحْر“ اور ”رَشْف“ کو ”دِيم“ سے خاص کیوں کیا گیا ہے؟ تو میں کہوں گا کہ یہ اس طرف اشارہ ہے کہ سمندر کا پانی پیا نہیں جاتا کیونکہ کڑوا ہوتا ہے اسے وضو اور نہانے وغیرہ کیلئے برتا جاسکتا ہے جبکہ بارش کا پانی ایسا نہیں کیونکہ وہ ہلکا ہونے کی وجہ سے پیا جاتا ہے بلکہ چشموں کے سارے پانی سے لذیذ ہوتا ہے۔

”رَشْف“ اور ”دِيم“ میں ویسے ہی استعارہ ہے جیسے ”بَحْر“ اور ”غَرْف“ میں ہے لیکن ”بَحْر“ سے مراد حضور ﷺ کا علم ہے اور ”الدِيم“ سے مراد آپ کا کرم۔ اسے یاد رکھو۔

”بَحْر“ کو مفرد اور ”دِيم“ کو جمع لانے میں یہ اشارہ ہے کہ ”البحر“ اسم جنس ہے جو چھوٹے اور بڑے پر بولا جاسکتا ہے لیکن ”دِيمَة“ ایسا نہیں۔

شعر کا حاصل معنی یہ ہے کہ تمام انبیاء علیہم السلام اور ان میں سے ہر ایک نے حضور ﷺ سے وہ علم مانگا لیا جو پھیلاؤ میں سمندر جیسا ہے اور آپ ہی کے کرم سے مانگ کر لیا جو ”دِيم“ کی طرح ہے کیونکہ حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام فیض دینے والے ہیں اور وہ حضرات فیض لینے والے ہیں۔ اللہ تعالیٰ نے سب سے پہلے آپ کی روح مبارک کو پیدا فرمایا اور اس میں انبیاء علیہم السلام کے علوم اور علم ما کَانَ وَ يَكُونُ رکھا، پھر انہیں پیدا فرمایا تو انہوں نے اپنے علوم آپ ہی سے لئے یا یہ مراد ہے کہ جب اللہ تعالیٰ نے حضرت محمد ﷺ کے نور کو سب سے پہلے پیدا فرمایا تو لوح محفوظ، قلم، آسمان، زمینیں، عرش، کرسی، فرشتوں، جنت، دوزخ، انبیاء اور اولیاء کی روحوں، ان کے دلوں کو نوروں اور ان کی ذاتوں کے نوروں کو حضور ﷺ کے نور سے پیدا فرمایا چنانچہ انبیاء علیہم السلام کا علم، لوح و قلم کے علوم کے مقابلہ میں نقطہ جیسا ہے اور یہ دونوں آپ کے نور سے پیدا ہوئے ہیں۔ ان کا علم آپ کے علم کے مقابلہ میں نقطہ کی حیثیت رکھتا ہے جیسے سب جانتے ہیں۔

یاد رہے کہ یہ شعر ان شعروں میں سے تیسرا ہے جس میں نبی کریم ﷺ جھوم اٹھے تھے چنانچہ اسے پڑھنے والے کے لئے ضروری ہے کہ اسے دُہرائے لیکن تعداد میں اکیلا پڑھے (دوہرا نہ پڑھے)۔

شعر (۴۰)

وَوَاقِفُونَ لَدَيْهِ عِنْدَ حَدِّهِمْ
مِنْ نُقْطَةِ الْعِلْمِ أَوْ مِنْ شَكْلَةِ الْحِكْمِ

(ترجمہ:) ”سارے انبیاء علیہم السلام اپنے اپنے مرتبوں کے باوجود آپ کے سامنے اس حیثیت سے کھڑے ہیں جیسے علم کا ایک نقطہ اور انہیں اللہ کی طرف سے ملی ہوئی حکمت کی کتاب کی گویا زبر زیر اور پیش ہوتی ہیں۔“

یہ شعر پہلے شعر کی ایک اور تاکید ہے بلکہ پہلے سے بھی بڑھ کر ہے جو حضور ﷺ کی مدح اور آپ کے سب انبیاء سے برتر ہونے کیلئے کی گئی ہے۔

یہاں واو عطف یا حال کیلئے ہے اور ”وَاقِفُونَ“ خبر کے بعد مبتداء کی دوسری خبر ہے جو ”كُلُّهُمْ“ ہے۔ حضرت ناظم رحمہ اللہ نے یہاں دو لغتوں کو جمع کر دیا ہے چنانچہ پہلی خبر مفرد لائے اور دوسری جمع لائے ہیں۔ ”وَاقِفُونَ“ کا معنی اطلاع پانے والے تو اس کا دوسرا مفعول محذوف ہے یعنی ”مُطَّلِعُونَ شَيْئًا“ ہے۔

”لَدَى“ کا معنی نزدیک ہے اور اس کی ضمیر حضور ﷺ کی طرف لوٹتی ہے۔

لفظ ”لَدَى“ پڑھنے کے آٹھ طریقے

پہلا ”لَدَى“ الف مقصورہ کے ساتھ دوسرا ”لَدُنْ“ (لام پرزبر اور دال پر پیش اور نون ساکن) تیسرا ”لَدُنْ“ (لام پرزبر دال ساکن اور نون پرزیر) چوتھا ”لَدَنْ“ (لام اور دال پرزبر نون ساکن) پانچواں ”لُدُنْ“ (لام پر پیش دال ساکن اور نون کی زیر) چھٹا ”لَدْ“ (لام پرزبر اور دال ساکن) ساتواں ”لُدْ“ (لام پر پیش اور دال ساکن) اور آٹھواں ”لَدْ“ (لام پرزبر اور دال پر پیش)۔

”لَدَى“ اور ”عِنْدَ“ میں فرق

یہ سب ”عِنْدَ“ (نزدیک) کے معنی میں ہیں۔ ”لَدَى“ اور ”عِنْدَ“ میں فرق یہ ہے کہ ”لَدَى“ حاضر و موجود ہونے کے معنی میں ہے جبکہ ”عِنْدَ“ نہیں، مثلاً ”الْمَالُ عِنْدَ زَيْدٍ“ اس وقت کہا جاتا ہے جب مال اس کے پاس حاضر ہو اور اگر وہاں سے غائب ہو تو اس کے خزانہ میں ضرور ہو لیکن یوں

نہ کہا جائے گا: "الْمَالُ لَدَى زَيْدٍ" یا "لَدُنْ زَيْدٍ" صرف اس صورت میں کہا جائے گا جب مال پاس ہو۔

"لَدِيهِ"، "واقفون" کی ضمیر سے حال ہے جو محذوف ہے اصل یوں ہے یعنی "کائنین لَدِيهِ"۔

"عند" کا تعلق "واقفون" سے ہے۔

"الْحَدَّ" کے چھ معنی

"الْحَدَّ" (حاء پر زبر) کا لفظ چھ معنوں میں آتا ہے پہلا مرتبہ کے معنی میں دوسرا انتہاء اور نہایت کے معنی میں تیسرا دو چیزوں کے درمیان پردہ اور رکاوٹ کے معنی میں چوتھا تلوار کو تیز کرنے کے معنی میں پانچواں وہ خفیہ سزا جسے امام کے سامنے لے جانا ضروری ہو چھٹا وہ تعریف جس میں ذاتی خوبیاں بھی ہوں لیکن یہاں پہلا معنی مراد ہے جمع کی ضمیر انبیاء علیہم السلام کی طرف جاتی ہے۔

"مِنْ نُّقْطَةِ الْعِلْمِ" میں "مِنْ"، "واقفون" کے دوسرے مفعول کے بیان کیلئے ہے تو پھر یہ زائد ہوگا اور اس بناء پر شعر کا حاصل معنی یوں ہوگا کہ سارے نبی حضور ﷺ کے پاس اپنے اپنے مرتبے پر کسی شے سے واقف ہوتے ہیں جو علم کا نقطہ یا حکمت کا اعراب سا ہے تو اس معنی کے لحاظ سے ہمارے نبی علیہ السلام کا علم اللہ تعالیٰ کے پہلو میں نقطہ جیسا ہے اور آپ کی حکمت اللہ تعالیٰ کی حکمت کے پہلو میں حکمت کے اعراب کی طرح ہے کیونکہ سارے انبیاء علیہم السلام کا علم اس نقطہ کا ایک حصہ ہے اور ان کی حکمت، حکمت کے گویا اعراب کا حصہ ہے اور انہیں یہ واقفیت معراج کی رات ملی تھی جب وہ حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کی مجلس میں حاضر تھے اور ان کے ہاں اپنے مرتبوں پر بیٹھے تھے اور پھر آپ کے علم اور حکمت سے واقف ہوئے تھے یا یہ واقعہ قیامت میں ہوگا اور لواء الحمد کے نیچے ہوگا کیونکہ بتایا جاتا ہے کہ سارے انبیاء علیہم السلام اس لواء الحمد کے نیچے جمع ہوں گے جو نبی کریم ﷺ کا علم ہوگا اور وہاں اپنے مرتبوں پر بیٹھیں گے یا یہ واقعہ جسموں سے پہلے روحوں کو پیدا کرنے کے موقع کا ہے۔

پھر یاد رہے کہ "النُّقْطَةُ"، "فُعْلَةٌ" کے وزن پر ہے اور عربوں کے قول "نُقْطَةُ نَقْطًا" سے لیا گیا ہے جب وہ کسی پر نقطہ لگاتے ہیں تو یوں کہتے ہیں۔

میرے خیال میں "نقطہ" کا لفظ کئی طرح سے بولا جاتا ہے جیسے "صابون" کا لفظ ہے۔

”اَوْ“ واؤ کے معنی میں ہے اور ہم نے اسے واؤ کے معنی میں بتایا ہے تو اس کی وجہ یہ ہے کہ اگر یہ اپنے معنی پر ہو تو یہ بات لازم آئے گی کہ کچھ انبیاء علیہم السلام میں علم تو ہے مگر حکمت نہیں ہے اور کچھ میں اس کا اُلٹ ہوگا اور یہ چیز اس بات کے خلاف ہے جو ثابت ہو چکی ہے کہ اللہ تعالیٰ نے انبیاء علیہم السلام کو علم اور حکمت دونوں ہی عطا فرمائے تھے جیسے اللہ تعالیٰ نے فرمایا: ”وَلَمَّا بَلَغَ أَشُدَّهُ آتَيْنَاهُ حُكْمًا وَعِلْمًا“ (سورۃ یوسف آیت: ۲۲) اور یہ بھی فرمایا: ”وَكُلًّا آتَيْنَاهُ حُكْمًا وَعِلْمًا“ (سورۃ الانبیاء آیت: ۷۹) تو اسے ذہن نشین رکھو۔

”الشَّكْلَةُ“ (زبر سے) ”شَكَلْتُ الْكِتَابَ“ سے لیا گیا ہے اور یہ اس وقت کہا جاتا ہے جب تم اس پر اعراب لگا دو یعنی رفع، نصب اور جر۔

”الْحِكْمُ“ حکمت کی جمع ہے اور ”حِكْمَةٌ“ دنیا میں موجود چیز کے ان احوال کے علم کا نام ہے جو واقعہ میں جس شکل پر ہیں اور ”نقطہ“ کو ”عِلْمُ“ کے ساتھ اور ”شَكْلُهُ“ کو ”حِكْمَةٌ“ کے ساتھ صرف اس لئے خاص کیا ہے کیونکہ ”نقطہ“ ظاہر ہونے کے مرتبہ کیلئے زیادہ بہتر ہے چنانچہ اسی بناء پر اسے علم کی طرف منسوب کیا گیا جبکہ ”شَكْلُهُ“ ایک زائد چیز ہے جو اس مفہوم کی ماہیت سے خارج ہے جو اس نقطے پر موقوف ہے کہ کسی دائرے کا دار و مدار اسی پر ہوتا ہے چنانچہ اسے ”حِكْمَةٌ“ کی طرف منسوب کیا گیا اور یہ ”حِكْمَةٌ“ شرعی علوم میں سے باریک علموں کو کہتے ہیں۔

پھر یاد رہے کہ ”وَاقِفُونَ“ کو اس معنی میں بھی لے سکتے ہیں کہ انبیاء علیہم السلام چپ چاپ رسول اللہ ﷺ کی خدمت میں اپنے اپنے مرتبوں پر حاضر ہوں اور ”مِنْ“ کا تعلق ”وَاقِفُونَ“ سے ہو جس کے اندر ”پکڑنے والوں“ کا معنی پوشیدہ ہو اور ”نقطہ“ کی علم کی طرف اضافت مشبہ بہ کی مشبہ کی طرف اضافت والوں کی طرح ہو یعنی ”علم“ نقطہ کی طرح ہے، تو اس بناء پر شعر کا حاصل معنی یہ ہوگا کہ ”انبیاء علیہم السلام نبی کریم ﷺ کی بارگاہ میں اپنے اپنے مرتبوں میں حاضر اور خاموش ہیں اور حضور ﷺ کے علم کے مقابلہ میں نقطہ جیسے علم اور اعراب جیسے حکم کو لے رہے ہیں اور یہ بھی ممکن ہے کہ یہ استعارہ تمثیلیہ ہو اور وہ یوں کہ اس ہیئت کو چھینا جائے جو حضور ﷺ کے رئیس ہونے سارے انبیاء علیہم السلام کا متبوع (جس کا کوئی تابع ہو) حضور ﷺ کی خدمت میں کھڑے ہونے اور ان سے علم لینے اور آپ کے حکم پر چلنے میں سے نکلتی ہے اور پھر اس ہیئت کو اس حیثیت سے تشبیہ دی جائے جو ہمارے محسوس امور میں سے نکلتی ہو جیسے کوئی بادشاہ مجلس میں بیٹھا ہو اور اس کے پیروکار اپنے اپنے

مرتبوں پر کھڑی بادشاہ کی بات سننے کے منتظر ہوں، اس سے فائدہ لینا چاہتے ہوں اور اس کے حکم پر چلتے ہوں، پھر مشبہ بہ بننے والی ہیئت کو مشبہ بننے والی ہیئت سے تشبیہ دی جائے چنانچہ ہیئت محسوسہ بتانے والے الفاظ بول کر اس سے وہ ہیئت مراد لی جائے جو ہمیں محسوس ہونے والی نہیں۔

پھر یہ بات یاد رہے کہ اس شعر میں اللہ تعالیٰ کے اس فرمان کی طرف اشارہ ہے: ”وَمَا أُوتِيتُمْ مِّنَ الْعِلْمِ إِلَّا قَلِيلًا“ (سورۃ الاسراء آیت: ۸۵) (تمہیں تھوڑا سا علم دیا گیا ہے) اور حضرت خضر علیہ السلام کے اس قول میں بھی اشارہ ہے جو انہوں نے حضرت موسیٰ علیہ السلام کے بارے میں اس وقت کہا تھا جب وہ علم کی خاطر ان کے پیچھے چلے تھے کہ ”آپ کا میرا اور پوری مخلوق کا علم اللہ کے علم کے مقابلہ میں صرف اتنا ہی ہے جتنا یہ چڑیا اپنی چونچ کے ذریعے سمندر سے کچھ لے لے“ اور اس طرف بھی اشارہ ہے کہ سارے انبیاء علیہم السلام میں طرح طرح کے علوم موجود ہیں جبکہ حضور ﷺ نے کئی قسم کے ایسے علوم جمع کر رکھے ہیں جو انبیاء کرام علیہم السلام اور مخلوق میں موجود ہیں۔

شفاء شریف میں ہے کہ اللہ تعالیٰ نے صرف نبی کریم علیہ الصلوٰۃ والسلام کو دنیا و دین کی بہتریوں، اپنی امت کی بھلائیوں اور جو کچھ اُمتوں میں ہو چکا اور جلد ہونے کو ہے، جوتے کی نوک اور کھجور کی گٹھلی جیسا بھی ہے اور تمام فنونِ معارف جیسے دل، فرائض، عبادت اور حساب سے واقف کر رکھا ہے اور حدیثوں میں یہ بھی آیا ہے کہ آپ خط کے حرفوں اور ان کی خوبصورت شکلوں سے بھی واقف تھے اور حضرت معاویہ رضی اللہ عنہ بتاتے ہیں کہ وہ حضور ﷺ کے سامنے کچھ لکھ رہے تھے کہ اسی دوران آپ نے فرمایا کہ ”دوات رکھ دو، قلم چلاؤ اور باء لکھو، سین کے دندانے الگ الگ کرو، میم کو کانانہ کرو (بلکہ بند کرو) لفظ اللہ کو خوبصورت بناؤ، الرحمن پر مدّ ڈالو اور الرحیم کو خوب صورت لکھو“ (کنز العمال کتاب العلم، باب فی آداب العلم، حرف العین، جلد ۱۰ صفحہ ۱۳۹، رقم الحدیث: ۲۹۵۵۲) حالانکہ حضور ﷺ لکھا نہیں کرتے تھے اور نہ ہی پہلی کتابوں میں سے کچھ پڑھتے تھے جیسے اللہ تعالیٰ فرماتا ہے: ”وَمَا كُنْتَ تَتْلُو مِنْ قَبْلِهِ مِنْ كِتَابٍ وَلَا تَخُطُّهُ بِيَمِينِكَ الْآيَةَ“ (سورۃ العنکبوت، آیت: ۲۸) جبکہ باقی لوگ لکھا کرتے تھے۔

شعر (۴۱)

فَهُوَ الَّذِي تَمَّ مَعْنَاهُ وَصُورَتُهُ
ثُمَّ اصْطَفَاهُ حَبِيبًا بَارِئًا النَّسَمِ

(ترجمہ:) ”تو پھر وہ وہی تو ہیں جن کے اخلاق اور حلیہ مبارکہ ویسا ہے جیسے ہونا چاہئے اور پھر مخلوق پیدا فرمانے والے نے انہیں اپنا حبیب قرار دے دیا۔“

جب پہلے شعر حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کے پورے حبیب ہونے پر دلیل بنتے تھے اور یہ بات ثابت اور بتادی گئی تو نتیجہ صاف ظاہر ہے چنانچہ امام بوصیری رحمہ اللہ نے اسی وجہ سے فرمایا: ”فَهُوَ الَّذِي تَمَّ مَعْنَاهُ“۔

تحقیق الفاظ

”فَهُوَ“ میں فاء نتیجہ کیلئے ہے یہاں ”فَهُوَ“ کی ہاء پر سکون ہے اور یہ ضمیر ہمارے نبی کریم ﷺ کی طرف جاتی ہے ”تَمَّ“ کا معنی مکمل ہوا، یہ ”تَمَّامُ الشَّيْءِ“ سے لیا گیا جس کا معنی کسی شے کا کامل ہونا ہے۔ ”المعنى“ کا لفظ اسم مکان ہے یا یہ مصدر میمی ہے جو مفعول کے معنی میں ہے یا ”مَعْنَى“ اسم مفعول کے لفظ سے تخفیف کیا گیا ہے، یہ لفظ ”عَنْيْتُ بِكَلَامِي كَذَا“ سے لیا گیا ہے جس کا معنی ”میں نے اپنی کلام سے فلاں ارادہ کیا“ ہے چنانچہ کسی شے کے ”مَعْنَى“ کا مطلب اس سے مراد ہوتا ہے اور ”مَعْنَى الرَّجُلِ“ کا مقصد بنے گا، اس کا کامل ہونا جس کے ذریعے وہ مکمل ہوا۔

”الصورة“ سے شکل اور ہیئت مراد ہے اور معنی کے لفظ کو ”صورة“ سے پہلے لانے کا مقصد یہ ہے کہ اصل مقصد تو معنی ہی ہوتا ہے۔ یہاں ”معنى“ اور ”صورة“ سے مراد آپ کا باطنی اور ظاہری کمال ہے یعنی آدم کی بہترین پیدائش اور عظیم خلق یا باطنی وحی اور ظاہری طور پر آپ کا دنیا میں نبی بننا مراد ہے یا آپ کا طریقہ اور شریعت مراد ہے یا آپ کی روحانیت اور جسمانیت یا آپ کا علم و عمل یا آپ کی اللہ کے لئے عبادت اور مخلوق سے معاملہ کرنا مراد ہے۔

”ثُمَّ“ کا لفظ یا تو اپنی اصل پر ہے یعنی دوسرا کام کچھ دیر بعد کرنا اور وہ اس بناء پر کہ اصل مراد ان کے نبی بننے کے بعد انہیں حبیب بنانا ہے اور اس میں شک نہیں کہ آپ کا نبی بننا آپ کے کامل ہونے کے بعد کا معاملہ ہے اور اس بناء پر بھی کہ آپ کو حبیب بنانا معراج کے دوران کا واقعہ ہے کیونکہ یوں

لکھا ملتا ہے کہ اللہ تعالیٰ نے آپ کو اس رات میں فرمایا تھا کہ ”اے محمد! بادشاہ جب کسی بندے کو چن کر ملک دے دیتے ہیں اور اسے اپنا بھروسے والا بنا لیتے ہیں تو فوراً اس کا اعلان کر دیتے ہیں تو پھر آپ بتائیں کہ کب کچھ لینا چاہیں گے؟ جس پر آپ نے عرض کی کہ اے پروردگار! مجھے اپنی عبادت کیلئے چن لے چنانچہ اللہ تعالیٰ نے آپ کے بارے میں فرمایا: ”سُبْحٰنَ الَّذِیْ اَسْرٰی بِعَبْدِہِ الْاٰیۃ“ (سورۃ الاسراء آیت: ۱) اور فرمایا کہ یہ تو وہ ہے جو آپ نے مانگا ہے تاہم میں اس سے بھی زیادہ دے رہا ہوں اور وہ یہ کہ آپ کو اپنا حبیب بنا رہا ہوں چنانچہ آج سے آپ ”حبیب اللہ“ ہیں اور اس میں شک نہیں کہ معراج آپ کے نبی اور کامل بننے کے بعد ہوئی۔

”امّا“ مرتبہ کے دیر سے ملنے کیلئے ہے تو پھر ”ثُمَّ“ میں مجاز استعارہ تبعیہ ہوگا کیونکہ اس میں حقیقت یہ ہے کہ یہ کچھ دیر بعد دوسرا کام ہونے کیلئے ہے اور اس میں رتبے کے لحاظ سے دور ہونے کو زمانہ میں دیر سے تشبیہ ہے جو مطلقاً دوری کو شامل ہے۔

یہاں مجاز کا مقصد اور نکتہ اس طرف اشارہ کرنا ہے کہ آپ کو چن لینے کا مرتبہ کامل ہونے کے مرتبہ سے اعلیٰ ہے۔

”اِصْطِفَآءُ“ کا مطلب اختیار کرنا اور چن لینا ہے اور ”حَبِیْبًا“، ”اِصْطِفَآءُ“ کی ضمیر سے حال ہے یا یہ اس کا دوسرا مفعول ہے کہ ”اِصْطَفِیْ“ میں ”جَعَلَ“ اور ”بَارِئِ“ کا معنی لیا گیا جس کا معنی خالق ہے جیسے شاعر کہتا ہے:

يَا بَارِئِ الْبَرَاءِ بَرْنِي بِمُسْتَمِلِ

”اے مخلوق کو پیدا فرمانے والے! مجھے اکتاہٹ سے بچائے رکھ۔“

”النَّسَمُ“ (دوزبروں سے) ”نَسَمَةٌ“ کی جمع ہے جس کا معنی نفس یا روح والی ہر چیز ہے۔ یہ بھی کہا گیا ہے کہ اس کا معنی آدمی ہے۔

یاد رہے کہ اس شعر میں آپ کو چن لینے میں چالیس سالہ عمر کی انتظار کی وجہ موجود ہے اور آپ کو حضرت عیسیٰ و یحییٰ علیہما السلام سے اولیت حاصل ہے جنہیں بچپن میں نبوت دے دی گئی اگرچہ سوچیں تو اس قضیہ کا الٹ دکھائی دیتا ہے اور پھر یہ شعر اللہ کے اس فرمان کی طرف توجہ دلاتا ہے: ”اَللّٰهُ يَصْطَفِیْ مِنْ الْمَلٰٓئِكَةِ رُسُلًا الْاٰیۃ“ (سورۃ الحج آیت: ۷۵) (اللہ فرشتوں میں سے بھی رسول چنتا ہے) اور اس حدیث کی طرف بھی اشارہ ہے جسے حضرت واثلہ بن اسقع رضی اللہ عنہ نے بتایا ہے کہ رسول

اکرم اللہ علیہ وسلم نے فرمایا: ”اللہ تعالیٰ نے حضرت ابراہیم علیہ السلام کی اولاد میں حضرت اسماعیل علیہ السلام کو چنا، حضرت اسماعیل علیہ السلام کی اولاد میں سے بنی کنانہ کو چنا، بنی کنانہ سے قریش کو چنا، قریش میں سے بنو ہاشم کو چنا اور بنو ہاشم کی اولاد میں سے مجھے چنا ہے (سنن ترمذی، کتاب المناقب عن رسول اللہ، فصل فی فضل النبی، جلد ۵ صفحہ ۳۵۰، رقم الحدیث: ۳۶۲۵)

اگر تم شعر کے معنی کی طرف غور کرو گے تو تمہیں بہت سی چیزوں کی طرف اشارے ملیں گے اور اسے ہر ایک جانتا ہے۔



شعر (۴۲)

مُنَزَّةٌ عَنْ شَرِيكَ فِي مَحَاسِنِهِ
فَجَوْهَرُ الْحُسْنِ فِيهِ غَيْرُ مُنْقَسِمٍ

(ترجمہ:) ”انہی مرتبوں کی بناء پر آپ ایسے سترے ہیں کہ آپ کے برابر خوبیاں کسی اور کو ملی ہی نہیں چنانچہ یہ ماننا پڑے گا کہ آپ میں حسن اور خوبیوں کا جوہر صرف آپ ہی میں ہے اور وہ تقسیم نہیں ہو سکتا۔“

حضرت امام بوسیری رحمہ اللہ نے جب آپ کی وہ خوبیاں بتا دیں جو ثبوتی تھیں (آپ میں موجود تھیں) تو اب وہ خوبیاں بتانے لگے ہیں جو سلبی (آپ میں موجود نہ تھیں) ہیں پھر جب پہلے شعروں سے پتہ چل چکا کہ ہمارے نبی ﷺ تمام انبیاء و اولیاء سے مرتبے میں بڑھ کر ہیں کیونکہ وہ آپ کے باطنی اور ظاہری خلق تک نہیں پہنچ سکے تو مناسب یہ ہے کہ آپ کے ایسے شریک کونہ مانا جائے جو آپ کی خوبیوں والا ہو سکتا ہے تو اسی وجہ سے فرمایا: ”مُنَزَّةٌ عَنْ شَرِيكَ فِي مَحَاسِنِهِ الخ“۔

تحقیق الفاظ

”مُنَزَّةٌ“ محذوف مبتداء کی خبر ہے اور یہ اسم مفعول کا صیغہ ہے جو ”تَنْزِيَةٌ“ سے لیا گیا ہے جس کا معنی کسی چیز کو برائیوں سے پاک کرنا اور انہیں دور کرنا ہے۔ ”شَرِيكَ“ نکرہ ہے جو نفی کے ماحول میں آیا ہے لہذا یہ نکرہ عام ہونے کا فائدہ دے گا۔

اگر یہ کہا جائے کہ یہاں تو نفی موجود ہی نہیں کہ یہ عام ہونے کا فائدہ دے سکے تو ہم کہیں گے کہ اگرچہ یہاں دیکھنے میں نفی نظر نہیں آتی لیکن اس میں ”تنزیہ“ کا معنی موجود ہے کیونکہ یہ اس معنی میں ہے: ”لَمْ يَكُنْ لَهُ شَرِيكَ“ یہ فاعل کے وزن پر ہے لیکن معنی فاعل کا ہوگا یعنی برابری کرنے والا۔

”مَحَاسِنِ“، ”حَسَنِ“ کی جمع ہے لیکن خلاف قیاس اس کا تعلق ”شَرِيكَ“ سے ہے۔ حضرت ناظم نے ”شَمَائِلِهِ“ نہیں کہا تا کہ یہ لفظ حسن اور جمال کو شامل ہو سکے اور صرف خلق اور مبارک عادتوں تک محدود نہ رہے۔

کوئی یہ اعتراض کر سکتا ہے کہ یہ حکم جس میں حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کی خوبیوں والا کوئی نہ ہو

ٹھیک نہیں کیونکہ تمام انبیاء علیہم السلام نبوت رسالت اللہ کے علاوہ کسی کی عبادت نہ کرنے میں آپ ہی جیسے تھے تو اس کا جواب صرف یہ ہے کہ یہ میرا دعویٰ ہے جس پر غور کی ضرورت ہے۔

”فجوهر الحسن فیہ الخ“ فاء نتیجہ کیلئے ہے یعنی جب آپ جیسا حسن کسی اور کا تھا ہی نہیں تو نتیجہ یہ نکلا کہ آپ کے اس حسن کے جوہر میں سے کچھ بھی کسی کو نہیں ملا ورنہ اگر آپ کا حسن تقسیم ہونے والا ہوتا تو پھر کوئی دوسرا بھی اس میں سے کچھ حصہ لے لیتا کیونکہ تقسیم ہونا اسی طرح ہوتا ہے کہ کچھ چیز اس کے پاس رہے اور کچھ دوسرے کو ملے لیکن دوسری بات غلط ہے تو پہلی بھی ویسی ہی ہوئی چنانچہ اس کی نقیض ثابت ہو گئی اور وہ یہ ہے کہ آپ کے حسن کا جوہر تقسیم ہونے والا نہیں۔

”الجوهر“ کے لفظ میں اختلاف ہے کہ یہ مُعَرَّب (عربی بنایا گیا) ہے یا نہیں چنانچہ کچھ علماء کہتے ہیں کہ یہ فارس کے لفظ ”گوہر“ سے بنا ہے لیکن دوسرے کہتے ہیں کہ یہ ”جہر“ یا ”جہارہ“ سے نکلا ہے جس کا معنی وہ پتھر ہے جو پتھر سے نکلتا اور فائدہ دیتا ہے ویسے ہی جیسے یاقوت زبرجد اور زمرہ ہوتے ہیں اور اس کا معنی چیز کی بنیاد اور وہ پیدائشی سن ہوتا ہے جو انسان کی طبیعت میں رچا ہوتا ہے۔

علماء و متکلمین کے ہاں جوہر کی قسمیں

پہلی: ہیولی، دوسری: صورت، تیسری: جسم، چوتھی: عقل اور پانچویں: نفس ہے جبکہ متکلمین کے ہاں دو قسمیں ہیں، پہلی وہ اکیلی چیز جو ٹکڑے ٹکڑے نہ ہو سکے اور دوسری نفس ہے۔ باقی گفتگو علم حکمت و کلام میں ملے گی تاہم یہاں اس سے مراد دوسری ہے یعنی اصل حسن اور اس کا وہ مادہ جس کی وجہ سے وہ حسن بنا تو اس لحاظ سے اسے فائدہ مند پتھر بنانے کی ضرورت ہی نہیں، نہ اضافت بیانہ بنانے کی ضرورت ہے اور نہ ہی اسے اب جوہر فرد بنانے کی ضرورت ہے جو حصے نہیں بنتا کیونکہ یہ سب کچھ بے مقصد بات ہے لیکن قصیدہ کی شرح کرنے والے اس مقام پر بحثوں میں خواہ مخواہ اُلجھتے رہے ہیں۔

”فِیہ“ ظرف مستقر ہے، یہ ”حُسن“ کی صفت ہے، اصل یوں ہوگا: ”الکائن فیہ“ یا ”حسن“ کی خبر یا اس سے حال اور جس نے اسے ”غیر منقسم“ کا متعلق بنایا ہے وہ خواہ مخواہ اُلجھا ہے۔

”غیر منقسم“ خبر یا خبر کے بعد دوسری خبر ہے جس کا معنی یہ ہے کہ اُن کا کوئی شریک نہیں بلکہ وہ اس جوہر میں تنہا ہیں اور یہ کمال کی کان اور خیر کے منبع سے نکلا ہے۔

یاد رہے کہ اس شعر میں ایک باریکی ہے کہ ناظم نے ”جوہر“ کو اس حسن کیلئے ثابت کیا ہے جو

عرض ہے اور اس کے بارے میں فرما دیا ہے کہ وہ تقسیم ہونے والا نہیں۔ یہ ایک لمبی بحث ہے جو حکمت اور کلام کے علماء کے ہاں ملتی ہے۔ تعریفیں اللہ ہی کیلئے ہیں جو بادشاہ اور نعمتیں دینے والا ہے۔



شعر (۴۳)

دَعُ مَا ادَّعَتْهُ النَّصَارَىٰ فِي نَبِيِّهِمْ
وَاحْكُمْ بِمَا شِئْتَ مَدْحًا فِيهِ وَاحْتِكُمْ

(ترجمہ:) ”تم ان بے مقصد (بیٹا بنانا) باتوں کو چھوڑ دو جو عیسائیوں نے اپنے نبی کے بارے میں گھڑ رکھی ہیں اور آپ کی مدح میں جو چاہو کہو بلکہ مسلسل کہتے جاؤ۔“

جب نبی کریم ﷺ کو آپ کی ہر صفت اور خوبی میں کسی کو شریک اور سانجھا ہونے سے بچا لیا گیا تو اس سے کسی عام شخص کے وہم میں آسکتا تھا کہ آپ کی وہی خوبی بیان کی جائے جو عیسائیوں نے اپنے نبی حضرت عیسیٰ علیہ السلام کی گنی تھی کیونکہ یہ خوبی تو خوبیوں اور مدحوں میں انتہائی گنی جائے گی چنانچہ حضرت ناظم رحمہ اللہ نے اس وہم کو دور کرنے کیلئے فرمایا: ”دَعُ مَا ادَّعَتْهُ النَّصَارَىٰ فِي نَبِيِّهِمْ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”دَعُ“ و ”دَعَّ“ و ”دَعَّ“ سے امر ہے یعنی چھوڑ دے اور جو کسی صر فی نے کہا ہے کہ عرب لوگ ”دَعَّ“ کی ماضی اور مصدر کا ذکر ہی نہیں کرتے تو اس کا مطلب ہے کہ اسے کم استعمال کرتے ہیں ورنہ نبی کریم ﷺ سارے عربوں میں سب سے بڑھ کر فصیح تھے پھر حضرت ابن عباس رضی اللہ عنہما کے مطابق حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام نے فرمایا ہے: ”لَيْسَتْ هِيَ أَقْوَامٌ عَنْ وَدَعِهِمُ الْجَمَاعَاتِ أَوْ لِيُخْتَمَنَ عَلَىٰ قُلُوبِهِمْ“ (سنن ابن ماجہ، کتاب المساجد والجماعات، باب التغلیظ فی التحلف عن الجماعة، جلد ۱ صفحہ ۴۳۶) رقم الحدیث: ۷۹۴) (کچھ لوگ لازمی طور پر جماعتوں کو چھوڑ دیں گے یا پھر ان کے دلوں پر مہریں لگا دی جائیں گی) اور ایک شاعر نے کہا ہے:

لَيْتَ شَعْرِي عَنْ خَلِيلِي مَا الَّذِي
غَالَهُ فِي الْحُبِّ حَتَّىٰ وَدَعَهُ

”مجھے اپنے دوست کے بارے میں اس چیز پر افسوس ہے کہ جس نے اسے محبت میں انتہاء تک پہنچا دیا اور پھر اس نے اسے چھوڑ دیا۔“

پھر حضرت عروہ اور حضرت مجاہد رضی اللہ عنہما کے بارے میں آتا ہے کہ وہ ”مَا وَدَعَكَ“ (سورۃ

الضحیٰ، آیت: ۳) (شُدّ کے بغیر) پڑھتے تھے چنانچہ علامہ حسن چلپی نے یہ بات مطوّل کے حاشیے میں لکھی ہے۔

”دَعَّ“ کا خطاب ہر ایسے شخص کیلئے ہے جسے توفیق ہے کہ ان لوگوں کا مخاطب ہو جو نبی کریم ﷺ کی مدح کرتے ہیں۔

”ادّعتہ“ حضرت ناظم رحمہ اللہ نے یہاں ”ادّعاء“ کا لفظ بولا ہے کیونکہ ان عیسائیوں کا یہ دعویٰ غلط تھا کیونکہ ”ادعاء“ کا لفظ عام طور پر باطل کیلئے ویسے ہی استعمال ہوتا ہے جیسے ”دَعْوٰی“ کا لفظ حق بات میں استعمال ہوتا ہے۔

”النّصارى“، ”نصران“ کی جمع ویسے ہی ہے جیسے ”نَدَامِی“، ”نَدَمَان“ کی جمع ہے ”نصرانی“ میں یاء مبالغہ کیلئے ہے جیسے ”الاحمری“ میں ان کا نام نصرانی اس لیے پڑا کیونکہ انہوں نے حضرت عیسیٰ علیہ السلام کی مدد کی یا وہ ان کے ساتھ اس بستی میں تھے جسے نصران یا ناصرہ کہا جاتا تھا جس پر ان کا یہی نام رکھا گیا۔ ”نَبِيهِمْ“ سے ان کے نبی حضرت عیسیٰ علیہ السلام روح اللہ بن مریم علیہا السلام مراد ہیں۔ ”ادّعتہ النصارى“ سے مراد ان کا ایسا عقیدہ تھا جس کے مطابق اللہ کے اولاد جننے اور کسی میں داخل ہو کر اس چیز کا حصہ بننے کا معنی بنتا تھا کیونکہ حضرت عیسیٰ علیہ السلام کے بعد نصاریٰ کے بہتر فرقے بن گئے تھے جن میں سے بڑے فرقے تین ہیں۔

عیسائیوں کے تین اہم فرقے

ان کے سب سے بڑے فرقے تین ہیں: ”مَلْكَائِيَّة“، ”نَسْطُورِيَّة“ اور ”يَعْقُوبِيَّة“۔ ”مَلْكَائِيَّة“، ”ملکان“ کے ساتھی تھے جو روم میں ظاہر ہوا تھا جو ان پر قابو پا گیا، روم کا عظیم فرقہ ملکائیہ ہے، ان کا عقیدہ یہ ہے کہ ”کَلِمَه“ حضرت عیسیٰ علیہ السلام کے جسم کے ساتھ متحد ہوا اور ناسوت سے آنے کی وجہ سے ان کے رنگ میں رنگا گیا، یہ ”کلمہ“ سے مراد ”اَقْنُومِ عِلْم“ لیتے ہیں اور کہتے ہیں کہ مسیح قدیم اور ازلی ہیں، چنانچہ مریم نے ازلی خدا جنا اور پھر اللہ کیلئے باپ ہونے اور بیٹا ہونے کے لفظ بنائے (اللہ ان عیبوں سے پاک ہے) اور مسیح کو ابن کہنے لگے کیونکہ انہوں نے انجیل میں پڑھا تھا، جہاں لکھا تھا: بلاشبہ تو تنہا میرا بیٹا ہے۔

”نسطوریہ“ حکیم نسطور کے ساتھی تھے جو مامون رشید کے دور میں ظاہر ہوا، اس نے انجیل میں تبدیلی کی اور کہا کہ اللہ تعالیٰ واحد ہے جو وجود علم اور حیوۃ جیسے تین اقنوم رکھتا ہے اور یہ اقنوم ذات

سے الگ چیز نہیں ہیں اور پھر یہ حضرت عیسیٰ علیہ السلام کے بدن میں سما گئے جس کی وجہ سے وہ مردے زندہ کرتے تھے اندھے اور کوڑھی کو شفا یاب کرتے تھے۔

”یعقوبیہ“ یہ نصاریٰ کے ایک شخص یعقوب کے ساتھی تھے یہ بھی تین اقنوم مانتے تھے جیسے ہم پہلے بتا چکے یہ کہتے تھے کہ جو ”کلمہ“ بدل کر گوشت اور خون بن گیا اور اللہ بن گیا، وہ مسیح ہے اور وہ جسم میں دکھائی دیتا ہے۔

تفصیلی طور پر ان کا بیان کتاب المملل والنخل میں ملتا ہے۔

”وَاحْكُم بِمَا شِئْتُمْ مَدْحًا لَخ“ یہ اس سوال کا رد ہے جو پہلے پیدا ہو سکتا ہے کہ کیا حضور ﷺ کی وہ مدح جائز ہے جو ہم کرنا چاہتے ہیں؟ جس پر ناظم نے کہا: ”واحکم“ یہ خطاب کا صیغہ ہے۔ ”بما شئت“ یعنی ان کی جو مدح بھی کرنے کا ارادہ ہو، کرتے جاؤ۔ ”مدحًا“ حال ہے اس محذوف ضمیر سے جو موصول کی طرف جاتی ہے، یہ لفظ فاعل سے بھی حال بن سکتا ہے، معنی ہوگا: ”جب تم مدح کرنے والے ہو، چنانچہ اس صورت میں مصدر اسم فاعل کے معنی میں ہوگی۔“

”وَاحْتَكِم“ کا لفظ یا تو ”أَحْكُم“ کے معنی میں ہے تو اس صورت میں پہلے کی تاکید بنے گا یا اس کا معنی ”اتَّقِن“ یعنی مدح کرنے میں مضبوطی دکھاؤ لیکن انسانی حد سے نکل کر صمدانی حد تک نہ پہنچاؤ کیونکہ قدیم ذات کی صفتیں وہ نہیں جو مخلوق کی ہیں چنانچہ جیسے اس کی ذات کسی سے نہیں ملتی، اس کی صفتیں بھی مخلوق سے نہیں ملتیں کیونکہ ان کی صفتوں میں غرضیں اور اعراض ہوتی ہیں اور اللہ ان عیبوں سے پاک ہے چنانچہ اس کیلئے اللہ کا یہی فرمان کافی ہے: ”لَيْسَ كَمِثْلِهِ شَيْءٌ“ (سورۃ الشوریٰ آیت: ۱۱) (اس جیسا کوئی نہیں) اور یہ فرمان: ”يَا أَهْلَ الْكِتَابِ لَا تَغْلُوا فِي دِينِكُمْ وَلَا تَقُولُوا عَلَى اللَّهِ إِلَّا الْحَقَّ“ (سورۃ النساء آیت: ۱۷۱) (اے کتاب والو! اپنے دین میں حد سے نہ بڑھو اور اللہ کے بارے میں صرف حق بات کہو) اور حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کی اگرچہ ایسی بہت سی صفتیں ہیں جو اللہ تعالیٰ نے اپنی بتائی ہیں لیکن آپ کی صفتیں حادث ہیں جبکہ اللہ تعالیٰ کی قدیم ہیں۔



شعر (۴۴)

فَانْسُبْ اِلَى ذَاتِهِ مَا شِئْتَ مِنْ شَرَفٍ
وَّانْسُبْ اِلَى قَدْرِهِ مَا شِئْتَ مِنْ عِظَمٍ

(ترجمہ:) ”تو تم حضور ﷺ کی ذات میں جس بھی بزرگی کا دعویٰ چاہو کر دو اور ان کی خوبیوں کو جتنا چاہو بڑھا چڑھا کر بتاتے جاؤ۔“

جب حضرت ناظم رحمہ اللہ کے قول ”وَاحْكُم“ میں چونکہ پوری وضاحت نہ تھی کیونکہ رسول اللہ ﷺ پر ہر شے بولی نہیں جاسکتی تو انہوں نے اس کی وضاحت کر دی اور فرمایا: ”وَانْسُبْ اِلَى ذَاتِهِ مَا شِئْتَ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

فاء تفسیر کیلئے ہے ”نِسْبَةٌ“ کا مطلب ”اضافہ“ یعنی چیز کو دوسری چیز کی طرف منسوب کرنا۔ ”الذات“ کے بارے میں صاحب کشف لکھتے ہیں کہ اس میں تاء ایسی نہیں جیسے ”بنت“ میں ہے بلکہ یہ ایسے آجاتی ہے جیسے ”لات“ میں آگئی ہے چنانچہ علماء نے اللہ کیلئے اسے بولنا جائز جانا ہے باوجودیکہ وہ اللہ کے بارے میں مؤنث کی علامت لگانے سے گریز کرتے ہیں۔ (انتہی)

ابن سیدہ نے لکھا ہے کہ ”ذات“ اور ”شاة“ میں تاء تانیث کی نہیں کیونکہ وقف کے موقع پر اسے ہاء نہیں پڑھا جاتا اور تاء تانیث وہی ہوتی ہے جس پر وقف ممکن ہو۔ (انتہی)

لفظ ”ذات“ کی تحقیق

علامہ جار بردی فرماتے ہیں کہ ”ذات“ اصل میں ”ذوی“ تھا یاء حذف کی گئی تو ”ذو“ رہ گیا چنانچہ اس کے بدلے میں تاء لگ گئی تو ”ذوت“ ہو اور چونکہ یہ متحرک اور اس سے پہلے فتح تھی تو اسے الف سے بدل دیا گیا اور ”شاة“ بھی یوں ہی ہے۔

بہر حال سورہ آل عمران میں علامہ تفتازانی نے تحقیق بتائی ہے کہ ”ذات“ کا لفظ اصل میں اگرچہ ”ذو“ کی مؤنث ہے لیکن اس کی تاء اس کا مؤنث ہونا نہیں بتاتی اور اسے اصلی تاء کی جگہ لایا گیا پھر نفس اور حقیقت کا معنی بتانے کیلئے اسے اس شکل میں لایا گیا چنانچہ اسی وجہ سے نسبت کرتے ہوئے تاء کو باقی رکھتے ہوئے ”ذاتی“ کہہ دیتے ہیں اور پھر اللہ تعالیٰ کیلئے اسے بولنا جائز قرار دیتے

ہیں حالانکہ وہ اللہ تعالیٰ پر ”عَلَّامُه“ کا لفظ نہیں بولتے کہ اس میں تاء ہے اور کبھی ذات بول کر اس سے وہ چیز مراد لیتے ہیں جو اپنی ذات کے ساتھ قائم ہو اور کبھی اسے بول کر اس سے وہ چیز مراد لیتے ہیں جو مستقل طور پر سمجھ آ جائے اور یہ صفت کے مقابلے میں ہوتی ہے، کبھی بول کر اس سے ”رِضَى“ مراد لیتے ہیں اور کبھی بول کر شئی کا مفہوم مراد لے لیتے ہیں۔

ابوالبقاء کی ”کلیات“ میں یونہی لکھا ہے۔

”شرف“ میں تنوین تعظیم و تعظیم کیلئے ہے، عبارت یوں ہوگی: ”مِنْ شَرِيفٍ عَظِيمٍ“ اور ”كَرَمٍ كَثِيرٍ“ کہ آپ کے سارے اعضاء درست، خلق اچھا، ہاتھ کا کرم، پسینہ کی خوشبو، عقل کی تیزی، دل کی صفائی، بلوغ کلام، زبان میں فصاحت اور آپ میں یہ سارے کمالات موجود تھے کیونکہ آپ احسان کا مرکز اور رحمن کی طرف سے عجیب شخصیت تھے۔

”وَ اَنْسَبَ اِلَى قَدْرِهِ“، ”قَدْر“ مقدار کو کہتے ہیں، یہاں مراد مرتبہ کی مقدار ہے۔ ”عِظَم“ ”كِبَر“ کے وزن پر ہے جو ”عظمة“ کی جمع ہے جس کا معنی عظیم مرتبہ ہے۔

شرف اور عظمت میں فرق

اگر یہ پوچھا جائے کہ ”شرف“ اور ”عظمة“ میں فرق کیا ہے؟ تو میں کہوں گا کہ ”شرف“ ذات کی طرف منسوب ہوتا ہے اور ”عظمة“ صفات میں بولی جاتی ہے جیسے نبی کریم ﷺ نے ہر قل روم کی طرف خط لکھتے وقت یوں لکھا تھا: ”مَنْ مُحَمَّدٌ رَّسُولَ اللَّهِ عَظِيمِ مَلِكِ الرُّومِ“ (صحیح البخاری، کتاب تفسیر القرآن، باب قل یا اهل الکتاب تعالوا، جلد ۳ صفحہ ۱۹۲، رقم الحدیث: ۴۵۵۳) تو آپ کے اس خط میں ”عظیم“ کا لفظ اس کے مرتبے کی بناء پر لکھا گیا، ذات کے لحاظ سے نہیں تو ”بِمَا شئت من عظم“ سے مراد ان کے مرتبے کی بلندی ہے، آپ کے طور طریقے اچھے ہیں اور آپ کا مرتبہ بڑا ہے، معجزات اور بنیادی کمالات ہیں، معراج ہے، مناجات ہے، انبیاء علیہم السلام کی امامت ہے، اللہ کا قرب ہے، جہنڈا اور وسیلہ دے کر افضل کیا جانا ہے اور بڑی شفاعت کرنا ہے۔

یہ شعر حضور ﷺ کی مدح میں آنے والی اگلی آیات کا اختصار ہے۔

شعر (۴۵)

فَإِنَّ فَضْلَ رَسُولِ اللَّهِ لَيْسَ لَهُ
حَدٌّ فَيُعْرَبُ عَنْهُ نَاطِقٌ بِفَمِّ

(ترجمہ:) ”کیونکہ رسول اکرم ﷺ کے فضل و کرم کی ایسی کوئی حد نہیں کہ جسے کوئی بولنے والا زبان سے بتا سکے۔“

جب پہلے شعر پر کسی شبہ ڈالنے والے کی طرف سے یہ شبہ ڈالا گیا کہ کمالات کی ساری صفتوں کا آپ کے بارے میں بولنا جائز نہیں، آپ کی صفت اتنی ہی کرنی چاہیے جتنی حدیث شریف میں آپ نے اپنے بارے میں فرمائی ہے چنانچہ امام بوصیری رحمہ اللہ نے اسے ثابت کرتے اور اس کی وجہ بتاتے ہوئے فرمایا ہے: ”فإن فضل رسول الله الخ“۔

تحقیق الفاظ

یہاں فاء سبب بتانے کیلئے ہے تو یہاں تھوڑی سی تبدیلی سے قیاسِ اقترانی ترتیب دیا جاسکتا ہے اور وہ یوں: یہ جائز ہے کہ تم رسول اکرم ﷺ کی ذات کیلئے جو چاہو شرف و بزرگی بتاؤ اور ان کی خوبیوں کو جتنا چاہو بڑی بنا لو کیونکہ رسول اللہ ﷺ کے فضل و کرم کی کوئی ایسی حد نہیں جسے کوئی بولنے والا زبان سے بتا دے اس سے مرضی کا نتیجہ نکلے گا۔

ہاں قیاسِ استثنائی کیلئے اسے بیان کرنا ضروری ہے اور وہ یوں: یہ جائز ہے کہ تم رسول اکرم ﷺ کی ذات کیلئے جو بزرگی چاہو بتا دو کیونکہ جب رسول اللہ ﷺ کے فضل و کرم کی حد ہی نہیں جسے کوئی بولنے والا زبان سے بتا سکے تو یہ جائز ہے کہ تم ان کی ذات کیلئے جو بزرگی چاہو بتا دو یہاں پہلا مقدمہ سچا ہے تو دوسرا بھی سچا ہوگا۔

”الْفَضْلُ“ کا معنی زیادہ اور بلند ہونا ہے یہ وہ مصدر ہے جو اپنے فاعل کی طرف مضاف ہے۔
”حَدٌّ“ کا یہاں معنی کسی کام کی انتہاء ہے اور معنی ہے: گھیرا ڈالنے والی خوبی۔

”فَيُعْرَبُ“ میں فاء نفی کا جواب ہے اور ”يُعْرَبُ“ ”مَقْدَرٌ“ ”أَنَّ“ کی وجہ سے منصوب ہے یہ ”اِعْرَابُ“ سے نکلا ہے جو ظاہر کرنے اور کھول دینے کے معنی میں آتا ہے کسی کو اچھا کہنے کیلئے بھی آتا ہے کہتے ہیں: ”جَارِيَةٌ عَرُوبٌ“ یعنی خوبصورت لونڈی تبدیل ہونے کا معنی دیتا ہے جیسے

”عَرَبْتُ مَعْدَةَ الْفَصِيلِ“ اس وقت کہو گے جب تم بدل دو یہاں مراد پہلا ہے۔ ”عَنْهُ“ کا تعلق ”یَعْرَبُ“ سے ہے۔ ”نَاطِقٌ“ کا معنی بولنے والا ہے۔ ”بِفَمٍ“ میں باء استعانة کیلئے ہے اور یہ ناطق سے متعلق ہے اور بولنا زبان ہی کے ساتھ ہوتا ہے تو زبان کی بجائے منہ کا لفظ بولنا یوں ہے کہ ”مَحَلٌّ“ کا ذکر کر کے حال مراد لے لیا اور ”فَمٍ“ کے ساتھ نطق کی پابندی لگا دینا یا تو ویسے ہی تاکید ہے جیسے اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: ”يَطِيرُ بِجَنَاحَيْهِ“ (سورة الانعام آیت: ۳۸) (وہ دونوں پروں سے اڑتا ہے) یا یہ کہ ”نُطِقٌ“ اس چیز پر بھی بولا جاتا ہے جو دل میں آئے جیسے بعض علماء کہتے ہیں: پھر ”حَدٌّ“ کے ساتھ ”فِيَعْرَبُ عَنْهُ الْخ“ کی قید لگانا اس حد سے گریز ہے جو حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کو معلوم تھی کہ وہ اپنے رب کے ہاں کیسے ہیں کیونکہ اللہ تعالیٰ آپ کی فضیلت جانتا ہے اور اس کے نہ جاننے کی صورت میں اس کی جہالت ماننا پڑے گی دوسرا قضیہ باطل ہے۔

ہمارے اس بیان سے شیخ زادہ کا اعتراض دور ہو جاتا ہے اسے ذہن میں رکھو۔

اس شعر میں اللہ تعالیٰ کے اس فرمان کی طرف اشارہ ہے: ”وَإِنَّ الْفَضْلَ بِيَدِ اللَّهِ يُؤْتِيهِ مَنْ يَشَاءُ وَاللَّهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِيمِ“ (سورة الحديد آیت: ۲۹)۔



شعر (۴۶)

لَوْ نَأْسَبْتُ قَدْرَهُ آيَاتِهِ عِظْمًا

أَحْيَى اسْمُهُ حِينَ يُدْعَى دَارِسَ الرَّمَمِ

(ترجمہ:) ”اگر بڑائی میں آپ کے معجزے لگ بھگ آپ کی عزت کے مطابق ہوتے تو

آپ کا اسم گرامی لیتے ہی وہ گلی سڑی ہڈیوں تک کو زندہ کر دیتے۔“

جب حضرت ناظم رحمہ اللہ نے حضور ﷺ کی خوبیاں بتادیں تو اس سے وہم پیدا ہوا کہ کیا آپ نے ان کی ساری خوبیاں مدحیں بتادی ہیں تو انہوں نے اسے دور کیا اور ان کی مناسب خوبیاں بیان کرنے سے اپنی عاجزی ظاہر کرتے ہوئے فرمایا: ”لَوْ نَأْسَبْتُ قَدْرَهُ“۔

کلمہ ”لَوْ“ شرط کیلئے ہے اور وہ دوسرے کی نفی کی وجہ سے پہلے قول کی نفی بتاتا ہے، یعنی اگر ان کی قدر و قیمت کے مطابق بڑائی میں ان کے معجزے مناسب ہو جاتے تو آپ کا نام مبارک گلی سڑی ہڈیوں تک کو زندہ کر دیتا لیکن آپ کے نام مبارک نے بلائے جانے پر گلی سڑی ہڈیوں کو زندہ نہیں کیا تو پھر آپ کے معجزات آپ کی عزت کے مطابق نہ ہوئے، مطلب یہ کہ آپ کے معجزے آپ کی قدر و شان اور مرتبے میں بڑائی کے لئے مناسب نہ تھے بلکہ آپ کی قدر کے مطابق مناسب تو یہ تھا کہ انہیں اس سے زیادہ دیا جاتا جو ان میں موجود تھے جو آپ کو دیئے گئے معجزات سے بہتر ہوتا۔

اگر تم کہو کہ ”آیات“ جمع کا صیغہ اور عام معنی دینے والے صیغوں میں شامل ہوتا ہے تو پھر یہ سارے معجزات بتائے گا اور یہ یقیناً غلط ہے کیونکہ آپ کے معجزوں کے افراد میں سے قرآن اور معراج (بشرطیکہ آپ نے زیارت کی) بھی تو ہیں اور اگر معجزات سے تمام افراد مراد ہوتے تو لازم آتا کہ قرآن اور معراج (بشرطیکہ زیارت پائی جائے) آپ کی شان کے لائق نہ ہوتے اور یہ یقیناً باطل ہے کیونکہ قرآن اللہ کی قدیم کتاب ہے اور معراج بھی یونہی ہے، اس صورت میں ایسی عظیم الشان چیز ہے جو آپ کی شان کے لائق ہے کیونکہ آپ اس سے فائدہ اٹھاتے ہیں۔

میں کہوں گا کہ اس کا جواب کئی طرح سے دیا گیا ہے۔ پہلا یہ ہے: ہم نہیں جانتے کہ جمع کا صیغہ یہاں عام کا معنی دینے میں باقی ہے اور یہ کیسے ہوگا، وہ تو ایسا عام ہے جس میں کچھ کو خاص کر لیا گیا ہے چنانچہ معجزات سے مراد قرآن اور معراج کے علاوہ کوئی چیز ہے۔ دوسرا یہ ہے: اگر ہم مان لیں کہ یہ

اپنے عموم پر ہے تو ہم یہ نہیں مانتے کہ قرآن اور معراج معجزات میں داخل ہیں کیونکہ ان معجزات سے مراد قرآن اور معراج کے علاوہ ہیں، نشانی یہ ہے کہ ان کی اضافت عہد کیلئے ہے یعنی وہ معجزات جو آپ کی مرضی سے واقع ہوئے جبکہ یہ دونوں مجبوراً حاصل ہیں۔ تیسرا یہ کہ آیات سے مراد پہلے والے آلات ہیں اور اس کی نشانی یہ ہے کہ اس پر الف لام عہد کا ہے اور دونوں پہلے میں داخل ہیں۔ اس پر غور کر لو اور چوتھا یوں کہ کہا جائے: آیات سے مراد وہ آیتیں ہوں جو آپ کی شان بتاتی ہیں یعنی وہ آپ کی عظمت بتانے میں ارادہ کے اندر ہوں، شرافت میں نہ ہوں جبکہ قرآن اور معراج آپ کی عظمت بتاتے ہیں، ظاہر نہیں لیکن یہاں اعتراض کی گنجائش ہے۔

”نَاسَبَتْ“، ”مَنَاسِبَةٌ“ سے ہے یہ دو یا زیادہ چیزوں میں سانبھا ہونا ہے۔

”قَدْرَةٌ“ (زبر سے) ”نَاسَبَتْ“ کا مفعول ہے اور شے کی قدر کا مطلب ہے اس کا کمال یا

نقصان میں پہنچنا، تاہم اس کا زیادہ استعمال خصوصاً کمال میں ہے جبکہ عام موقع پر بولا جائے۔

”آيَاتُهُ“ (پیش سے) ”نَاسَبَتْ“ کا فاعل ہے یہ ”آيَةٌ“ کی جمع ہے جس کا معنی علامت ہے۔

”عِظْمًا“ (زبر سے) ”نَاسَبَتْ“ کے اسناد سے تمیز ہے اور اس کا معنی عظمت و بڑائی ہے اور

”أَحْيَى“ کا جملہ ”لَوْ“ کا جواب ہے اور ”أَحْيَى“، ”أَحْيَاءُ“ سے ہے جس کا معنی زندگی پیدا کرنا

اور زندگی دینا ہے۔ ”إِسْمُهُ“ (پیش سے) ”أَحْيَى“ کا فاعل ہے اور اسم سے مراد وہ ہے جو ”العلم“

کا ہم معنی ہے یا ”تَسْمِيَهُ“ کے معنی میں ہے یعنی اسم کا ذکر کرنا اور ”أَحْيَى“ کا اس کی طرف مضاف

ہونا مجاز ہے کیونکہ زندہ کرنے والا صرف اللہ ہے۔

”يُدْعَى“، ”دَعَا“ سے مجہول کا صیغہ ہے یعنی جب وہ طلب کرے ”دَعَا اللَّهَ“ کا معنی

ہے: اس نے اس سے سوال کیا۔ ”يُدْعَى“ کی ضمیر اللہ تعالیٰ کی طرف جاتی ہے۔

”دَارِسَ الرَّمَمِ“ (زبر سے) ”أَحْيَى“ کا مفعول ہے۔ ”الرَّمَمَ“ جمع ”رَمَّةٌ“ ایسے ہے جیسے

”قَطَعَ“ جمع ”قَطْعُهُ“ ہے اور یہ گلی ہوئی ہڈیاں ہوتی ہیں، کہتے ہیں: ”دَارِسَ الرَّمَمِ“ جب کوئی

معاف کر دے اور اس کی ”دراسست“ زیادہ گل جانا ہے ”دَارِسَ“ کی اس کی طرف نسبت ایسے

ہے جیسے صفت کی موصوف کی طرف ہوتی ہے، یعنی گلی ہوئی ہڈیاں۔

شعر کا حاصل مطلب ہے کہ اگر اللہ کی عظیم آیات آپ کے کمال کے مناسب ہوتیں تو اللہ تعالیٰ

آپ کے وصال کے بعد آپ کے اسم شریف کی برکت سے بوسیدہ ہڈیوں اور فناء ہونے والے

جسموں کو زندہ کر دیتا لیکن اللہ تعالیٰ نے آپ کے وصال کے بعد ان بوسیدہ ہڈیوں کو زندہ نہ کیا تا کہ آپ کے انتہائی کمالات لوگوں سے چھپے رہیں۔

کیا حضور علیہ السلام کو مردے زندہ کرنے کا معجزہ ملا تھا؟

اگر تم کہو کہ رسول اللہ ﷺ کو دوسرے معجزات کی طرح مردے زندہ کرنے کا معجزہ کیوں نہیں دیا گیا (آپ کے وصال کے بعد آپ کے نام کی برکت سے اللہ کو آواز دینے پر) تو میں کہوں گا کہ اگر وہ بھی دے دیتا تو سعادت کو آپ میں بند کرنے کے بعد مؤمنوں کا ایمان مشاہدہ کے ذریعے ہوتا جبکہ غیب پر ایمان مشاہدہ کے ایمان سے بہتر ہوتا ہے اور جو شخص ناظم کے اس شعر سے یہ مقصد سمجھا ہے کہ آپ کو مردے زندہ کرنے کا معجزہ بالکل نہیں دیا گیا تو اس نے ناظم پر اعتراض کر دیا کہ یہ شعر اگلے شعر ”وکل ای اتی الرسل الخ“ کا مخالف ہے کیونکہ اس شعر سے تو پتہ چل رہا ہے کہ آپ کو مردہ زندہ کرنے کا معجزہ دیا گیا تھا کیونکہ یہ حضرت عیسیٰ علیہ السلام کو حاصل تھا جنہیں ہمارے نبی کریم ﷺ کے نور کی برکت سے ملا۔ (انتہی)

تو یہ شخص خواہ مخواہ الجھن میں پھنسا ہوا ہے اسے اپنی آخرت کی خبر نہیں کیونکہ ناظم یہ بتانا نہیں چاہتے ہیں کہ آپ کو یہ معجزہ بالکل ہی نہیں ملا تھا بلکہ ان کا مقصد صرف یہ بتانا ہے کہ آپ کے پاس یہ معجزہ آپ کے وصال مبارک کے بعد قیامت تک نہیں ہے ورنہ حضور ﷺ کو تو وہ سارے معجزات حاصل ہیں جو سارے انبیاء علیہم السلام کو حاصل تھے بلکہ کچھ ایسے معجزات بھی ہیں جو صرف آپ ہی کے پاس ہیں۔

اگر تمہیں ہمارے بتائے ہوئے میں شک ہے تو پھر تم دلائل النبوہ میں یہ لکھا دیکھو کہ حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کے دور میں ایک انصاری نوجوان فوت ہوا تو اردگرد والوں نے اس پر چادر ڈال دی اسی دوران اس کی بوڑھی اندھی والدہ نظر آئی تو لوگوں نے اسے اس کے فوت ہونے کی اطلاع دی تو اس نے یوں دعا کی کہ ”اے اللہ! اگر تو جانتا ہے کہ میں نے تیری اور تیرے محبوب کی طرف ہجرت صرف اس لئے کی ہے کہ تو ہر پریشانی میں میری مدد فرمائے گا تو مجھے اپنے نبی ﷺ کے صدقے اس پریشانی میں رہنے نہ دے چنانچہ اس دعاء کے بعد اس کا مردہ بچہ زندہ ہو گیا وہ چہرے سے کپڑا ہٹا کر کھڑا ہوا اور وہاں کے لوگوں کے ساتھ مل کر کھانا بھی کھایا۔

یونہی حضرت جابر بن عبد اللہ رضی اللہ عنہ نے حضور ﷺ کی دعوت کرتے ہوئے ایک بکری ذبح

کی۔ اتنے میں ان کا بڑا بیٹا آیا اور چھوٹے سے پوچھنے لگا کہ ہمارے والد نے بکری کس طرح ذبح کی تھی تو اس نے کہا کہ آؤ! میں تمہیں طریقہ بتاتا ہوں، بڑا بیٹا اس کی بات مان کر چلا چنانچہ چھوٹے نے اس کے ہاتھ پاؤں باندھ دیئے اور چھری لے کر اسے ذبح کر دیا اور پھر اس کا سر لے کر اپنی ماں کے پاس پہنچا۔ وہ رونے لگی تو وہ ڈر کر بھاگا اور چھت پر چڑھ گیا۔ اس کی ماں پیچھے سے آئی تو اس نے اپنے آپ کو چھت سے گرالیا اور اسی وقت مر گیا۔

ماں نے دونوں کی موت پر صبر کرتے ہوئے انہیں کپڑے میں لپیٹ کر گھر کے کونے میں رکھ دیا اور پھر کھانا تیار کرنا شروع کر دیا چنانچہ رسول اللہ ﷺ کے تشریف لانے پر انہوں نے کھانا لگا دیا۔ اتنے میں حضرت جبریل علیہ السلام نے حاضر ہو کر آپ سے عرض کی کہ اللہ تعالیٰ آپ کو حضرت جابر رضی اللہ عنہ کے دونوں بیٹوں کے ساتھ کھانا کھانے کا حکم دے رہا ہے۔ اس پر آپ نے حضرت جابر سے یہ بات کی تو وہ اپنی بیوی کے پاس آئے اور پوچھا جس پر اس نے کہا کہ وہ تو یہاں نہیں ہیں، حضرت جابر آپ کی خدمت میں حاضر ہوئے اور عرض کی کہ یا رسول اللہ! وہ تو وہاں نہیں ہیں جس پر رسول اللہ ﷺ نے انہیں لانے پر زور دیا چنانچہ وہ دوبارہ بیوی کے پاس پہنچے تو اس نے مجبور ہو کر اصل راز بتا دیا، وہ روتے ہوئے حضور ﷺ کی خدمت میں حاضر ہوئے اور پورا واقعہ سنا دیا۔

حضور ﷺ ابھی سوچ ہی رہے تھے کہ حضرت جبریل علیہ السلام حاضر ہوئے اور عرض کی کہ اللہ تعالیٰ آپ کو ان دونوں کیلئے دعا کرنے کو فرما رہا ہے اور یہ فرماتا ہے کہ دعاء آپ کریں، قبول کرنا میرا کام ہے چنانچہ رسول اللہ ﷺ نے دونوں کے زندہ ہونے کی دعاء فرمادی تو اللہ تعالیٰ نے دونوں کو زندہ کر دیا چنانچہ وہ دونوں اٹھے اور حضور ﷺ کے ساتھ مل کر کھانا کھایا۔

ایسے بہت سے واقعات ملتے ہیں جنہیں وہ لوگ خوب جانتے ہیں جو حدیث کی کتابیں دیکھتے ہیں۔

شعر نمبر ۴۶: موت کی سختی سے بچاؤ

یاد رکھو کہ اس شعر کو اگر اس شخص کے پاس پڑھا جائے جو فوت ہو رہا ہے اور فوت ہونے میں اسے موت کی سختی ہو رہی ہے تو پھر اس کی زندگی پورے ہونے پر وہ مر جائے گا ورنہ سختی سے خلاصی ہوگی اور اس وقت کی تکلیف اور سختی سے نجات پا جائے گا۔ میرے شیخ نے یہی بتایا ہے۔



شعر (۴۷)

لَمْ يَمْتَحِنَا بِمَا تَعَى الْعُقُولُ بِهِ
حِرْصًا عَلَيْنَا فَلَمْ نَرْتَبْ وَلَمْ نَهَمْ

(ترجمہ:) ”سروردو عالم ﷺ نے ہم پر نہایت مہربانی فرماتے ہوئے ہمیں ایسی آزمائش میں نہیں ڈالا جو لوگوں کی سمجھ ہی میں نہ آسکیں تو ہمیں آپ کے بارے میں شک کرنے اور بات ماننے پر حیران ہونے کی ضرورت ہی نہیں۔“

جب پہلے معلوم ہو چکا کہ حضور ﷺ بڑی شان والے اور بہت رعب والے ہیں تو اس پر یہ وہم پیدا ہو سکتا ہے کہ اہل زمانہ کے بادشاہوں کی طرح آپ بھی اُمت کی پرواہ نہیں کریں گے وہ تو مرتبہ ملتے ہی اپنی رعایا سے سختی کرتے اور ان سے ایسے کام لیتے ہیں جن کی ان میں ہمت ہی نہیں ہوتی اور وہ انہیں جواب دینے کی طاقت بھی نہیں رکھتے چنانچہ وہم دور کرتے ہوئے فرماتے ہیں: ”لَمْ يَمْتَحِنَا بِمَا تَعَى الْعُقُولُ بِهِ الخ“۔

تحقیق الفاظ

”لَمْ يَمْتَحِنَا“، ”امتحان“ سے ہے جس کا معنی پرکھنا اور آزمائش کرنا ہے یا یہ لفظ ”مِحْنَة“ سے نکلا ہے یعنی آپ نے ہمیں محنت پر نہیں لگایا۔ ”بِمَا“ میں باء ”يَمْتَحِنَا“ سے متعلق ہے اور ”مَا“ سے مراد شرع شریف ہے ”تَعَى“ سے فعل مضارع ہے ”أَعْيَى“ سے نہیں۔

”عَى“ اور ”أَعْيَاء“ میں فرق یہ ہے کہ عاجزی کا جو کام کسی حرکت اور سکون کے ذریعے ہوتا ہے وہ ”أَعْيَاء“ کہلاتا ہے اور جو عاجزی رائے اور عقل میں ہوتی ہے وہ ”عَى“ کہلاتی ہے۔

امام کسائی اور علم نحو

یہاں ایک حکایت سن لیجئے کہ امام کسائی (۳۱۱ھ) نے بڑھاپے میں علم نحو پڑھا جس کا سبب یہ بنا کہ ایک دن اتنا چلے کہ تھک گئے تو ایک قوم کے پاس ذرا آرام کیلئے بیٹھ گئے اور وجہ یہ بتائی کہ میں تھک گیا ہوں اور اس کیلئے یہ لفظ ”عَيْيْتُ“ (شد کے ساتھ ہمزہ کے بغیر) بولا تو انہوں نے کہا کہ تم نے غلط بولا ہے لہذا ہمارے پاس نہ بیٹھو امام کسائی نے پوچھا کہ پھر کیسے کہوں؟ انہوں نے کہا کہ اگر تم اپنی تھکاوٹ اور مشقت بتانا چاہتے ہو تو کہو: ”أَعْيَيْتُ“ اور اگر کسی معاملے میں پریشانی

بتانے کا ارادہ ہو تو پھر ”عَیِّتٌ“ کہو (شد کے بغیر)۔

امام کسائی وہاں سے فوراً اٹھے اور نحو کے کسی عالم کا پتہ پوچھا، لوگوں نے انہیں امام معاذ کے بارے میں بتایا، وہ ان کے پاس پہنچے اور پڑھنا شروع کر دیا، ان کے پاس سارا علم ختم ہو گیا تو وہ خلیل بن احمد (۷۱۲-۷۷۸) کے ہاں بصرہ پہنچے۔ (امام حقی، تعریفات)

عقل کو عقل کہنے کی وجہ

”عُقُول“ جمع ”عَقْل“ ہے، اصل معنی روکنا ہے پھر اسے انسانی سوجھ بوجھ کیلئے استعمال کیا گیا کیونکہ وہ بھی بُرائیوں سے روکتی اور نامناسب کاموں سے منع کرتی ہے جبکہ ”الدرر“ میں ہے کہ عَقْل اصل میں ”دِیْت“ (تاوان دینا) کو کہتے ہیں، اسے اس وجہ سے عقل کہتے ہیں کہ یہ خون بہانے سے روکتی ہے چنانچہ عقل کا لفظ ”تَعْقِلُ“ سے نکلتا ہے۔

عقل، نفس اور ذہن

عقل، نفس اور ذہن حقیقت میں ایک ہی چیز ہیں، ہاں اگر یہ چیزوں کو معلوم کرنے والی ہو تو اسے ”عقل“ کہتے ہیں، اگر کاموں میں دخل دے تو اسے ”نفس“ کہتے ہیں اور اگر چیزوں کو معلوم کرنے کی تیاری رکھتی ہو تو اسے ”ذہن“ کہہ دیتے ہیں۔

عقل کے کئی معنی

”عقل“ کے کئی معنی ہوتے ہیں جن میں سے ایک یہ کہ یہ ایک جوہر ہے جو الگ تھلگ ہے، اس کا بدن سے یہ تعلق ہے کہ اسے سوچنے اور کام کرنے پر لگاتا ہے۔ امام تفتازانی فرماتے ہیں کہ جو کہ گیا وہ یہ ہے کہ یہ ایسا جوہر ہے کہ جو نہ تو خود جسم ہے اور نہ کسی جسم سے تعلق رکھتا ہے۔

ایک رائے یہ ہے کہ یہ نفسِ انسانی میں وہ طاقت ہے جس کی وجہ سے یہ چیزوں کی حقیقت کا پتہ لگا لیتی ہے اور شاید علماء نے یہی کہا ہے کہ یہ نفس میں ایک ایسی طاقت ہے جو علوم اور چیزوں کو معلوم کرنے کیلئے تیار رہتی ہے۔

ایک یہ کہ یہ قوتِ غریزیہ (پیدائشی طاقت) ہے جس کی وجہ سے ضروری چیزوں کا اور خود علم ضرور آجاتا ہے۔

ایک یہ کہ یہ ایسی قوت ہے جو اچھے بُرے کاموں کو چھانٹ دیتی ہے۔

ایک یہ کہ یہ انسان کی اچھی ہیئت ہے۔

ایک یہ کہ یہ نفس میں ایسی قوت ہے کہ جس کے ذریعے انسان سمجھی جانے والی چیزوں کے ذریعے ان چیزوں کا پتہ لگا لیتا ہے جو معلوم نہ تھیں۔

ایک یہ کہ یہ ایک ایسا جوہر جو ذاتی طور پر مادہ سے الگ ہوتا ہے لیکن مادہ کام پر لگے تو یہ اس کے ساتھ ہوتا ہے اور وہ مادہ ”نفسِ ناطقہ“ ہے جسے بتانے کیلئے سب لوگ ”اَنَا“ (میں) کہتے ہیں۔
عقل کہاں ہوتی ہے؟

عقل کی جگہ کے بارے میں اختلاف پایا جاتا ہے چنانچہ کچھ کہتے ہیں کہ یہ آدمی کے پورے جسم میں ایک نور ہوتا ہے کچھ سر میں مانتے ہیں جہاں سے اس کا نور دل میں آتا ہے کچھ دل میں بتاتے ہیں اور کہتے ہیں کہ اس کی روشنی دماغ میں آتی ہے۔

پھر یہ بات ذہن میں رکھو کہ حکماء نے دس عقلیں (عقولِ عشرہ) ثابت کر رکھی ہیں، وہ جبریل علیہ السلام کو دسویں عقل اور عقلِ فَعَّال کا نام دیتے ہیں اور کہتے ہیں کہ اس نے چار عناصر (آگ، پانی، مٹی، ہوا) سے بنے چاند والے آسمان کی گہری سطح سے چھوٹا جہان اور موالیدِ ثلاثہ (حیوانات، نباتات اور جمادات) پیدا کئے اور ان کا خیال ہے کہ ایک چیز سے ایک ہی نکلتی ہے لیکن یہ سب غلط ہے۔ ان کے قاعدوں کو علمِ حکمت میں کھول کر بیان کیا گیا ہے۔

”بِه“ کا تعلق ”تَعَى“ سے ہے، ضمیر اسمِ مفعول کی طرف جاتی ہے۔

”حِرْصًا“ (زبر سے) مفعول لہ یا حال ہے، معنی ہوگا: حرص کرتے ہوئے۔ ”عَلَى“ کا تعلق حرص سے ہے جس کا معنی کسی شے میں بہت دلچسپی لینا، اس کی طرف جھکاؤ رکھنا اور اس کیلئے کوشش بھی کرنا۔

”فَلَمْ نَرْتَبْ“ میں فاءِ نتیجہ کی ہے چنانچہ جو ابتدائی باتیں پہلے ہو چکیں تو ان کا نتیجہ یہ ہے چنانچہ یہاں قیاس کو یوں ترتیب دیا جائے گا: ہم اپنے نبی کریم ﷺ کے بارے میں نہ تو شک کرتے ہیں اور نہ پریشان ہیں کیونکہ انہوں نے ایسی آزمائش نہیں فرمائی جس میں لوگوں کی عقلیں حیران ہی ہو جائیں اور جو ہمیں ایسے امتحان میں ڈالے جس میں عقلیں پریشان ہو جائیں تو ہم اس پر شک کرتے ہوئے حیران ہوں گے، اس کا نتیجہ دوسری شکل سے صاف نکلے گا جبکہ پہلی شکل سے اسے ترتیب دینا آسان ہے لیکن اگر کوئی ترتیب دے سکے۔

”نَرْتَبْ، اِرْتَابَ“ سے ہے جس کا معنی ”ہمیں شک نہیں“ ہے۔

”نہم“، ”ہام“ سے مضارع ہے اس وقت کہتے ہیں جب کوئی حیران ہو جائے جیسے شاعر کہتے ہیں:

كُلُّ الْبَلَابِلِ فِي أَفْصَاحِ خَصَلْتِهِ
سُحْبَانُ هَامٍ بِهِ مَا فَازَ بِالزَّمَلِ

”تمام بلبلیں اپنی خصلتیں بتانے میں سحبان شاعر جیسی ہیں اس پر وہ حیران ہوتا ہے جو بچوں والا ہو جاتا ہے۔“

شعر کا حاصل ہونے والا مطلب یہ ہے کہ ہمارے نبی ﷺ نے ہمیں آزمائشوں میں نہیں ڈالا نہ پرکھا اور نہ ہی ایسی شریعت لا کر (جس کو عقلیں سوچ نہ سکیں) ہمیں تھکایا اور کسی مشکل میں ڈالا اور نہ ہی ہمیں کوئی ایسی سخت تکلیف دی جیسے پہلی اُمتوں کو دی جاتی رہیں کہ جان بوجھ کر یا غلطی سے قتل کرنے میں ان پر خون بہانے کا جرمانہ دینا لازم ہوتا تھا، دیت حرام تھی، جس عضو سے کوئی غلط کام کرتے تو اسے کاٹا جاتا، پلیدی لگنے کی جگہ کو چھری سے گھر چا جاتا، توبہ یہ تھی کہ آدمی کو مار دیا جاتا، پلیدی کپڑا قینچی سے کاٹا جاتا، ہفتہ کے دن کام کرنا بند تھا، گر جا گھروں سے باہر نماز جائز نہ تھی، رات دن میں پچاس نمازیں پڑھنے کا حکم تھا اور زکوٰۃ میں مال کا چوتھا حصہ دینا ضروری تھا، وغیرہ وغیرہ بلکہ درمیانے درجے کی آسان اور سادہ شریعت لائے چنانچہ ہمیں ان کی پیروی کرنے پر حیرانی نہیں اور نہ ہی ہمیں ان کے رسول ہونے میں کوئی شک ہے۔

حضرت حسن رضی اللہ عنہ نے اللہ کے فرمان ”عَزِيزٌ عَلَيْهِ“ (سورۃ التوبہ، آیت: ۱۲۸) کے بارے میں فرمایا کہ انہیں تمہارا دوزخ میں جانا تکلیف دیتا ہے ”حَرِيصٌ عَلَيْكُمْ“ (سورۃ التوبہ، آیت: ۱۲۸) یعنی وہ یہ خواہش رکھتے ہیں کہ تم جنت میں جاؤ۔

تفسیر کبیر میں لکھا ہے کہ اس سے مراد آپ کی یہ حرص ہے کہ دنیا و آخرت میں تمہیں بہتریاں مل سکیں۔

امام فراء کہتے ہیں کہ ”حَرِيصٌ“ کا معنی بخیلی کرنے والا ہوتا ہے یعنی آپ کی کوشش یہ ہوتی ہے کہ کس صورت میں تم جہنم میں نہ جا سکو۔ (انتہی)

مواہب میں لکھتے ہیں کہ اللہ تعالیٰ نے آپ کی شان میں فرمایا ہے: ”وَمَا أَرْسَلْنَاكَ إِلَّا رَحْمَةً لِّلْعَالَمِينَ“ (سورۃ الانبیاء، آیت: ۱۰۷) آپ وہ رحمت نہیں کہ جس کے ساتھ سمجھ نہ آنے والی تکلیف موجود

بہر حال اس شعر میں اللہ تعالیٰ کے اس فرمان کی طرف اشارہ ہے: ”لَقَدْ جَاءَكُمْ رَسُولٌ مِّنْ أَنْفُسِكُمْ عَزِيزٌ عَلَيْهِ الْآيَةُ“ (سورۃ التوبہ، آیت: ۱۲۸) اور اس آیت کی طرف بھی اشارہ ہے: ”وَمَا أَرْسَلْنَاكَ إِلَّا رَحْمَةً لِّلْعَالَمِينَ“ (سورۃ الانبیاء، آیت: ۱۰۷) نیز اس فرمان کی طرف بھی: ”وَيَضَعُ عَنْهُمْ إِصْرَهُمْ وَالْأَغْلَالَ الَّتِي كَانَتْ عَلَيْهِمْ“ (سورۃ الاعراف، آیت: ۱۵۸) پھر حضور ﷺ کی اس حدیث کی طرف اشارہ ہے: ”میں تمہارے لئے درمیانے طریقے کی آسان اور سادہ شریعت لایا ہوں“ (احیاء علوم الدین، جلد ۴ صفحہ ۱۸۶)۔ اور اس فرمان کی طرف بھی کہ ”بس وہ شریعت لایا ہوں جو بالکل سفید اور صاف ستھری ہے“ (مشکوٰۃ المصابیح، جلد ۵ صفحہ ۵۵، رقم الحدیث: ۱۷۰۷)۔

اے مخلوق کو پیدا فرمانے والے! اس نبی پاک کے صدقے میں ہمیں بخشش والوں اور ڈرنے والوں میں داخل فرما جو بہترین صورت میں تشریف لائے۔



شعر (۴۸)

أَعْيَى الْوَرَى فَهَمْ مَعْنَاهُ فَلَيْسَ يُرَى
لِلْقُرْبِ وَالْبُعْدِ مِنْهُ غَيْرُ مُنْفَجِمٍ

(ترجمہ:) ”آج تک پوری مخلوق یہ سمجھنے میں حیران ہے کہ آپ کی حقیقت اور کمالات کیسے تھے؟ چنانچہ دور و نزدیک کے وقت یا جگہ میں انہیں سمجھنے والا کوئی نظر نہیں آیا، انہیں جاننے کا دعویٰ وہی کرے گا جو بے سمجھ ہے۔“

جب ”فَلَمْ نَرْتَبْ“ اور ”لَمْ نَهْم“ میں یہ وہم کرنے کی صورت بن سکتی تھی کہ ہم اس معنی کی حقیقت سمجھتے ہیں تو حضرت ناظم رحمہ اللہ نے یہ وہم دور کرتے ہوئے فرمایا: ”أَعْيَى الْوَرَى فَهَمْ مَعْنَاهُ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”الْإِعْيَاءُ“ کسی کو عاجز کر دینا۔ ”الْوَرَى“ بمعنی مخلوق اس میں الف لام استغراقی ہے یعنی آپ نے ساری مخلوق کو عاجز کر دیا کیونکہ مفرد پر آئے تو ہر ایک فرد کو اپنے اندر لے لیتا ہے۔ یہ نصب کے ساتھ ”أَعْيَى“ کا مفعول ہے اور ”فَهَمْ“ (پیش کے ساتھ) اس کا فاعل ہے اور وہ اپنے مفعول کی طرف مضاف ہے یعنی ”فَهْمُهُمْ مَعْنَاهُ“ ہے اور آدمی کے معنی کا مطلب اس کا وہ کمال ہوتا ہے جو صرف اسی میں موجود ہو۔ ”فَلَيْسَ“ میں فاء فصیحیہ ہے یعنی ”جب پوری مخلوقات آپ کے معنی کو سمجھنے سے عاجز آگئی تو کوئی دیکھا نہیں گیا الخ“۔

لفظ ”لَيْسَ“ کیا ہے؟

”لَيْسَ“ کے بارے میں کہتے ہیں کہ ”لَيْسَ“ کا اصل ”لَا أَيْسَ“ ہے اور ”ایس“ موجود چیز کا نام ہے چنانچہ جب ”لَا ایس“ کہا جائے تو معنی ہوگا کہ ”کوئی موجود نہیں اور نہ ہی کسی چیز کا وجود ہے۔“ پھر جب اس کا استعمال عام ہوا تو الف حذف کر دیا گیا چنانچہ ”لَيْسَ“ ہو گیا۔ یہ یاد رہے: ”لَيْسَ“ میں قاعدہ یہ ہے کہ جب یہ فعل پر آئے تو اس کا اسم ضمیر شان ہوتا ہے اور یہاں بھی یونہی ہے۔

”یُرَى“ مجہول کا صیغہ ہے یا تو یہ آنکھ سے دیکھنے کا نام ہے یا دل سے دیکھنے کا، اگر پہلی صورت

ہے تو ناظم کا آنے والا قول وہ مفعول ہوگا جو فاعل کی جگہ پر آ گیا اور اگر دوسری صورت ہے تو پھر دوسرا مفعول مجرور کو جڑ دینے والے دو میں سے ایک ہوگا۔

”لِلْقُرْبِ“ بعض نسخوں میں ”قُرْبِ“ پر ”فِی“ ہے اور کچھ میں لام ہے چنانچہ یہ لام بھی ”فی“ کے معنی میں ہوگا۔

یہ قُرب و بعد یا تو زمانی ہیں یا مکانی۔ بعض نسخوں میں ”مِنْهُ“ کی جگہ ”مِنْهُمْ“ آیا ہے چنانچہ پہلی صورت میں یہ ضمیر ”معناہ“ کی طرف لوٹے گی اور دوسری صورت میں ”الْوَرْدِی“ کی طرف لوٹے گی۔

”انْفِخَامِ“ کا معنی ہے: الزام مان لینا جس کا معنی ہے: معنی کے کمال لانے سے عاجز ہو جانا۔ شعر کا حاصل معنی یوں ہے کہ آپ کے پوشیدہ اور واضح معنی اور بلند شان کمالات نے پوری کائنات اور مخلوقات کو عاجز کر رکھا ہے کہ وہ انہیں دیکھ نہیں سکتے بلکہ دور و نزدیک اس چیز سے عاجزی نظر آتی ہے کہ کوئی آپ کے معنی کی حقیقت جان سکے اور پھر اس کی بنیاد پر خاموش رہنے کے علاوہ چارہ نہیں چنانچہ رسول انور ﷺ کی اس صفت کو سمجھنا لوگوں کیلئے ہر لحاظ سے نہایت ہی مشکل ہے۔

اسی بناء پر علامہ بدرالدین زرکشی رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ ابو تمام سحری اور ابن رومی جیسے نامور قدیم شاعر حضور ﷺ کی تعریف کرنے سے کتر گئے حالانکہ وہ لوگوں میں فصیح و بلیغ مانے گئے تھے کیونکہ حضور ﷺ کی مدح اس سے بہت مشکل ہے جس کے گرد وہ گھومتے رہے کیونکہ یہ معنی ان کے مرتبوں کے مقابلے میں کم درجہ ہیں اور سارے اوصاف ان کی وصف سے کم ہیں ہر علمی بلندی ان کے مقابلے میں کم درجہ رکھتی ہے چنانچہ ایک بلیغ شخص کیلئے ان کی مدح کرنا بڑی تنگی ہے۔

تذکرہ قرطبی میں لکھا ہے کہ رسول انور ﷺ کا کامل حسن دکھائی نہ دے سکا ورنہ صحابہ کرام کی نظروں میں ان کی زیارت کی ہمت نہ ہوتی۔ (انتہی)



شعر (۴۹)

كَالشَّمْسِ تَطْهَرُ لِلْعَيْنَيْنِ مِنْ بُعْدِ
صَغِيرَةً وَتُكَلُّ الظَّرْفَ مِنْ أَمَمٍ

(ترجمہ:) ”آپ دونوں آنکھوں کے سامنے دور سے دیکھنے پر سورج کی طرح چھوٹے لگتے ہیں لیکن نزدیک سے دیکھیں تو آنکھوں میں دیکھنے کی ہمت نہیں رہنے دیتے۔“

جب پہلے شعر میں زیادہ وضاحت نہیں تھی تو اس سے ملتا جلتا اور شعر لے آئے ہیں چنانچہ فرمایا:

”كَالشَّمْسِ تَطْهَرُ الخ“۔

تحقیق الفاظ

”الشَّمْسُ“ دن کا ستارہ ہے جو پورے جہان کو روشنی دیتا جاتا ہے۔ ”تَطْهَرُ“، ”ظُهور“ سے ہے اور مَوْنُثُ کا صیغہ ہے کیونکہ ”الشَّمْسُ“ مَوْنُثُ ہے اور ”تَطْهَرُ“ اپنے بعد سے مل کر ”شَمْسُ“ کے ساتھ تشبیہ دینے کی وجہ بتاتا ہے لیکن ہر لحاظ سے نہیں چنانچہ شاعر ابونواس نے سورج کے ساتھ ہر لحاظ سے تشبیہ دینے کا نقص بتایا ہے:

يَتِيهِ الشَّمْسُ وَالْقَمَرُ الْمُنِيرُ
إِذَا قُلْنَا كَانَهُمَا الْأَمِيرُ
لَأَنَّ الشَّمْسَ تَغْرُبُ حِينَ تُمْسِي
وَأَنَّ الْبَدْرَ يَنْقُصُهُ الْمَسِيرُ

”سورج اور چمکتے چاند اس وقت حیرانی میں آجاتے ہیں جب ہم (”كَانَ“ تشبیہ والا لگا

کر) کہتے ہیں ”گویا کہ یہ دونوں امیر ہیں“ کیونکہ سورج تو شام ہوتے ہی ڈوب جاتا

ہے جبکہ چودھویں رات کے چاند کو اس کا سیر کرنا چھوٹا سا بنا دیتا ہے۔“

تاہم یہ اور اس جیسی وہ تشبیہیں جو آپ کے بارے میں آئی ہیں آپ کا مرتبہ سمجھنے کیلئے ذہن کو

قریب لاتی ہیں اور یہ صرف مثالیں ہیں ورنہ آپ کی ذات مبارکہ بہت زیادہ بلند مرتبہ اور بزرگ

ہے۔

اگر تم یوں کہو: مناسب تو یہ تھا کہ آپ کے حسن و جمال کو چاند اور چودھویں کے بدر کے ساتھ

تشبیہ دیتے کیونکہ چاند اپنے نور سے پوری زمین کو روشن کر دیتا ہے، جو بھی اسے دیکھتا ہے اسے بھلا لگتا ہے اور اس کے نور میں ڈرانے والی گرمی نہیں ہوتی اور نہ ایسا مدھم ہوتا ہے کہ آنکھیں اسے دیکھنے سے اکتا جائیں تو میں کہوں گا کہ بات تو درست ہے لیکن حضرت ناظم رحمہ اللہ نے آپ کے پاکیزہ چہرے کو سورج سے اس عاجزی کی بناء پر تشبیہ دی ہے کہ آنکھیں اسے پوری طرح سے دیکھ نہیں سکتیں جبکہ آپ کے چہرہ انور کو دیکھ سکتی ہیں اور دوسری تشبیہ روشنی کے مکمل ہونے سے ہے کیونکہ سورج کی روشنی چاند سے بڑھ کر ہوتی ہے اور یہ ہر ایک کو معلوم ہے۔

”لِّلْعَيْنَيْنِ“ تشبیہ کا صیغہ اور ”تَظْهَرُ“ سے متعلق ہے اس میں الف لام استغراق کیلئے ہے یعنی ہر آنکھ کیلئے اگرچہ وہ اولیاء و صالحین ہی کیوں نہ ہوں۔

”مِنْ بَعْدُ“ کا تعلق بھی اسی سے ہے اور ”بَعْدُ“ (دوپیش کے ساتھ) میں ”بَعْدُ“ بھی ایک لغت ہے اور ”بَعْدُ“، ”قُرْبُ“ کی ضد ہے جس کا معنی کھینچی جانے والی لمبائی جو جسم تک پہنچے یا خلاء کا وجود ماننے والوں کے نزدیک جو اپنے اندر رہے۔

”صَغِيرَةً“ (نصب سے) ”تَظْهَرُ“ کے فاعل سے حال ہے۔

”تُكِلُّ“، ”اِكْتَالُ“ سے ہے جس کا معنی کسی کو جاننے سے عاجز کر دینا۔

”طَرَفُ“ سے مراد آنکھ ”مِنْ اَمَمٍ“ کا تعلق ”تُكِلُّ“ سے ہے یا یہ ظرف سے حال ہے

”اَمَمٍ“ (زبر سے) قریب ہونا۔

شعر کا حاصل معنی یہ ہے کہ حضور ﷺ اپنی اس گذشتہ خوبی میں (کہ ہر ایک ان کی بنیاد اور ان کے معنی کو سمجھنے سے عاجز ہے) سورج جیسے ہیں یعنی جو دور سے آنکھوں کے ساتھ چھوٹا دکھائی دینے کے دوران آنکھ کو دیکھنے سے عاجز کر دیتا ہے اور اسے قریب سے دیکھا نہیں جا سکتا جبکہ دیکھنے والا ہاتھ ملتارہ جاتا ہے۔

زمین کے مقابلے سورج ایک سوساٹھ گنا سے زیادہ

حاصل یہ کہ سورج (جیسے بتاتے ہیں) زمین کے گزہ (گولائی) کے مقابلے میں ایک سوساٹھ حصے سے زیادہ ہے تو جیسے وہ دور سے چھوٹا دکھائی دیتا ہے، لیکن جب کوئی قریب ہو کر اسے حقیقی طور پر دیکھنا چاہے تو اپنے آپ کو عاجز اور حقیر پائے گا یونہی حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام بظاہر دیکھنے سے بندوں میں سے ایک فرد دکھائی دیتے ہیں اور جب ان کے ذاتی حسن اور کامل صفتوں کے بارے میں سوچا

جائے تو انسان عاجز اور حیران ہو جاتا ہے۔

اس شعر میں حضور ﷺ کے فرمان کے بارے میں ایک باریک اشارہ ہے: ”اللَّهُمَّ اجْعَلْنِي فِي عَيْنِي صَغِيرًا وَفِي عَيْنِ النَّاسِ كَبِيرًا“ (مجمع الزوائد رقم الحدیث: ۱۷۴۱۲) (الہی! مجھے میری آنکھوں کے سامنے چھوٹا لیکن لوگوں کے سامنے بڑا کر دکھا) تاکہ تیری قدرتوں کو دیکھ سکوں۔



شعر (۵۰)

وَ كَيْفَ يُدْرِكُ فِي الدُّنْيَا حَقِيقَتَهُ
قَوْمٌ نِيَامٌ تَسَلُّوا عَنْهُ بِالْحُلْمِ

(ترجمہ:) ”بھلا یہ کیسے ممکن ہوگا کہ دنیا میں سوئے ہوئے وہ لوگ آپ کی حقیقت کا پتہ لگا لیں جو آپ کے بارے میں خوابوں ہی سے تسلی پاتے رہتے ہیں۔“
حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب آپ کے کمالات جاننے سے عاجزی دکھادی تو اس پر زور دیتے ہوئے ساتھ ساتھ اس عاجزی کا سبب بھی بتانے لگے چنانچہ فرمایا: ”و کيف يدرك في الدنيا حقيقته الخ“ کچھ نسخوں میں فاء آئی ہے اس صورت میں یہ پہلے پر تفریح ہوگی اور کچھ میں واؤ ہے جو عاطفہ ہے۔ ”كَيْفَ“ ”يُدْرِكُ“ کی طرف ہے اسے پہلے لایا گیا کہ شعر اسی سے شروع ہونا تھا کیونکہ وہ استفہام کا کلمہ ہے اور استفہام کام واقع ہونے سے انکار ہوتا ہے۔
”يُدْرِكُ“ مضارع معلوم ہے ”ادراك“ سے اور ”ادراك“ صرف تصور کرنا یا دیکھی جانے والی چیز کو ہر طرف سے دیکھنا ہوتا ہے۔

علم کے بارہ مرتبے

کچھ علماء بتاتے ہیں کہ پہلا مرتبہ جس سے علم نفس میں آتا ہے ”شعور“ ہے پھر ”ادراك“ پھر ”حفظ“ عقل میں آنے والی چیزوں کا اس میں پختہ ہو جانا پھر ”تذکر“ یعنی ذہن سے اترنے والی چیزوں کی واپسی کیلئے نفس کا کوشش کرنا پھر ”ذکر“ یعنی من پسند چیز کا ذہن میں واپس آنا پھر ”فہم“ یعنی سمجھ لینا پھر ”فقہ“ یعنی مخاطب کی غرض کو جاننا پھر ”درایۃ“ مقدمات کو ترتیب دینے کے نتیجے میں آئی ہوئی پہچان پھر ”یقین“ پھر ”ذہن“ یعنی ان علوم کو حاصل کرنے کی تیاری جو حاصل نہ تھے پھر ”فکر“ اور پھر ”حدس“۔

”فِي الدُّنْيَا“ ”يُدْرِكُ“ سے متعلق ہے اور حضرت ناظم نے ”لا علمی“ کا تعلق صرف ”دنیا“ ہی بنایا ہے کیونکہ صرف دنیا ہی میں آپ کی حقیقت اور کمالات نظر نہ آنے والے ہیں جبکہ آخرت میں ہر ایک کے مرتبے ظاہر ہو جائیں گے اور اسی بناء پر مؤمن آخرت میں کسی کیفیت اور جگہ کے بغیر اپنے پروردگار کی زیارت کریں گے چنانچہ اسی وجہ سے صاحب الامالی نے فرمایا ہے کہ ”مؤمن اللہ کو کسی

کیفیت و حالت کے بغیر دیکھیں گے“ کیونکہ آخرت میں نظر آنے والی دنیاوی چیزیں کسی اور حالت میں ہوں گی۔ اسی لئے کسی عارف نے کہا ہے کہ ”دنیاۓ فانی میں اللہ تعالیٰ کو صرف اس وجہ سے دیکھا نہیں جاسکتا کیونکہ باقی ذات صرف باقی آنکھ ہی سے دیکھی جاسکتی ہے۔“

”حَقِيقَتَهُ“ (نصب سے) ”يُذْرِكُ“ کا مفعول ہے اور اس کی ضمیر حضور ﷺ کی طرف لوٹی ہے کسی شے کی حقیقت اس کا وہ کمال ہوتا ہے جو اسی میں ہوتا ہے یہ تو کہا جاتا ہے: ”حَقِيقَةُ اللَّهِ“ لیکن ”مَا هِيَ اللَّهُ“ نہیں کہا جاسکتا اس وہم کی بناء پر کہ دونوں ہم جنس نہ سمجھے جائیں۔

”قَوْمٌ“ (رفع سے) ”يُذْرِكُ“ کا فاعل ہے اور یہ ”قَوْمٌ“ صرف مردوں کی جماعت کو کہتے ہیں کیونکہ یہ عورتوں کے معاملات کو سنبھالتے ہیں چنانچہ یہ لفظ مفرد ہے کیونکہ اس کا تثنیہ اور جمع آتے ہیں چنانچہ قوم کا صرف مرد ہونا عورتیں نہ ہونا اللہ تعالیٰ کے اس فرمان سے ظاہر ہے: ”لَا يَسْخَرُ قَوْمٌ مِّنْ قَوْمٍ عَسَىٰ أَنْ يَكُونُوا خَيْرًا مِنْهُمْ وَلَا نِسَاءٌ مِّنْ نِّسَاءٍ“ (سورۃ الحجرات آیت: ۱۱) (کوئی قوم دوسری قسم سے ٹھٹھانہ کرے کیونکہ ہو سکتا ہے کہ دوسرے ان سے بہتر ہوں اور نہ ہی عورتیں عورتوں سے) اور زہیر کا یہ قول بھی یہی بتاتا ہے:

أَقْوَمُ آلُ حِصْنٍ أُمَّ نِسَاءٍ

”کیا یہ قوم حصن آل ہے یا عورتیں؟“

تاہم اس جیسے مقام پر کہ مردوں کا ذکر کرنا اور عورتوں کو اس بناء پر چھوڑنا کہ وہ ان ہی کے تابع ہیں تو یہ ”تغلیب“ ہوگی۔
لفظ ”قوم“ میں تین قول

یاد رہے کہ قوم کے لفظ میں تین قول ہیں ایک یہ کہ یہ اسم جمع ہے دوسرا یہ کہ یہ ایسی جمع ہے جس کے لفظ کا واحد نہیں اور تیسرا یہ کہ یہ جمع ہے اور اس کا اس کے لفظ سے واحد بھی ہے جیسے صاحب کشف نے سورۃ حجرات میں کہا ہے کہ ”یہ دراصل ”قائم“ کی جمع ہے۔“

نیند کیا ہے؟

”نِیَامٌ“ (رفع سے) ”قَوْمٌ“ کی صفت ہے اور یہ ”نَائِمٌ“ کی جمع ہے اور ”نَوْمٌ“ وہ ہوا ہے جو دماغ کے پردوں سے اٹھتی ہے اور جب آنکھ تک پہنچتی ہے تو رُک جاتی ہے اور جب دل تک پہنچتی ہے تو دماغ سو جاتا ہے۔

”نیام“ سے مراد غفلت ہے یہ یا تو استعارے کے طور پر ہے یا مجاز کے طور پر۔ رہا استعارہ تو وہ یوں کہ ”غفلت“ کو ”نوم“ سے اس لئے تشبیہ دی کہ یہ کوئی بھی فائدہ نہیں جان سکتی، پھر ”نوم“ کو غفلة“ کیلئے استعارہ کیا گیا اور ”نیند“ کا ذکر کر کے ”غفلت“ مراد لی، پھر غفلت سے ”غفل“ نکالا گیا جو غافل کی جمع ہے اور ”نوم“ سے ”نیام“ کا لفظ بنایا اور پھر ”غفل“ کو ”نیام“ سے تشبیہ دی چنانچہ ”قیام“ کو ”غفل“ کیلئے استعارہ کیا گیا پھر ”نیام“ کا ذکر کر کے ”غفل“ مراد لیا گیا۔ اس بناء پر ناظم کا قول ”تَسَلُّوا عَنْهُ بِالْحُلْمِ“ اس استعارے کیلئے تشریح ہوگی۔

رہا دوسرا تو وہ یوں کہ یہ مجازِ مرسلِ تبعی ہوگا اور وہ یوں ہوگا کہ ”غفلت“، ”نیند“ کو لازم ہے چنانچہ ملزوم ذکر کر کے لازم مراد لیا گیا، پھر ”غفلت“ سے ”غفل“ اور ”نوم“ سے ”نیام“ نکالا گیا چنانچہ ”نیام“ کا ذکر کر کے ”غفل“ مراد لیا گیا۔

”تَسَلُّوا“، ”تَسْلِيَهُ“ سے ہے جس کا معنی ہے: انہوں نے صبر سے کام لیا اور کافی سمجھا۔ ”عَنْهُ“ کا تعلق ”تَسَلُّوا“ سے ہے اور ضمیر یا تو حضور ﷺ کی طرف لوٹی ہے یا ”حقیقۃ“ کی طرف۔

”الْحُلْمُ“ (دونوں پر پیش) وہ چیز جسے سویا ہوا خواب میں دیکھتا ہے یعنی خیالات۔ شعر کا حاصل معنی یہ ہے: اس گندی اور گھٹیا دنیا میں ذاتِ محمدیہ اور حقیقتِ احمدیہ کی حقیقت کو وہ جماعت کیسے جان سکتی ہے جو ان سونے والی کی طرح ہے جو خیالات اور وہموں میں گم ہو کر آپ کی پہچان سے مطمئن اور بے فکر ہو چکے ہیں۔

اس شعر میں حضور ﷺ کے اس فرمان پر توجہ دلائی گئی ہے کہ ”النَّاسُ نِيَامٌ فَإِذَا مَاتُوا انْتَبَهُوا“ (کشف الخفاء للعجلونی، جلد ۲ صفحہ ۲۸۰، رقم الحدیث: ۲۷۹۴) (لوگ سوئے ہوئے ہیں، یہ مرنے ہی پر ہوش سنبھالیں گے) والحمد للہ العلام۔



شعر (۵۱)

فَمَبْلَغُ الْعِلْمِ فِيهِ أَنَّهُ بَشَرٌ
وَأَنَّهُ خَيْرُ خَلْقِ اللَّهِ كُلِّهِمْ

(ترجمہ:) ”چنانچہ ان کے بارے میں لوگوں کا علم تو صرف یہی کچھ بتاتا ہے کہ وہ صرف ایک بشر ہیں حالانکہ اللہ کی ساری مخلوق میں سب سے بڑا مرتبہ رکھتے ہیں۔“

جب لوگوں کا خوابوں پر صبر سے بیٹھ رہنا ایک پوشیدہ چیز تھی تو اسے کھول کر بیان کرتے ہوئے

فرمایا: ”فَمَبْلَغُ الْعِلْمِ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

یہاں فاء تفصیل و تفسیر کیلئے ہے۔ ”الْمَبْلَغُ“ سے مراد انتہاء اور سفر کی حد ہے۔ ”الْعِلْمُ“ میں الف لام مضاف الیہ کے بدلے میں ہے اصل یوں تھا: ”مُنْتَهَى عِلْمِ النَّاسِ“۔ ”فِيهِ“ کا تعلق ”فمبلغ“ سے ہے یا یہ ظرف مستقر ہے جو ”العلم“ کی صفت ہے اور اس میں مضاف محذوف ہے اصل یوں تھا: ”فِي شَانِهِ عَلَيْهِ الصَّلَاةُ وَالسَّلَامُ“ (آپ کی شان میں)۔ ”أَنَّ“ اپنے اسم اور خبر سے مل کر مبتداء کی خبر ہے ضمیر حضور ﷺ کیلئے ہے۔

بشر کیا ہوتا ہے؟

”بَشَرٌ“ یہ نفس حقیقت کا علم ہوتا ہے جس میں نفس حقیقت کے بارے میں اس بات کا اعتبار نہیں کیا جاتا کہ وہ کوئی الگ وجود رکھتی ہے یا اس کی کوئی صورت ہے رہا ”الرَّجُلُ“ تو یہ اس اعتبار والی حقیقت کا نام ہے جس کا تعین (اشارہ ممکن ہو) ہو سکے اور اس کی واقعی صورتیں ہوں چنانچہ پہلی صورت میں فوری طور پر نفس حقیقت سمجھ میں آتی ہے جبکہ دوسری میں صورت۔

قاموس میں ہے کہ ”بَشَرٌ“ (دوزبر سے) سے مراد انسان ہے مذکر ہو یا مؤنث واحد ہو یا جمع جیسے اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: ”بَشَرًا سَوِيًّا“ (سورۃ مریم آیت: ۱۷) اور اسی کا فرمان ہے: ”أَمَّا تَرَيْنَ مِنَ الْبَشَرِ أَحَدًا“ (سورۃ مریم آیت: ۲۶) یہ تشبیہ بھی آتا ہے اور اس کی جمع ”بِشَارٌ“ ہے۔

اگر تم کہو کہ حضور ﷺ کے بشر ہونے کا علم صفت ایمان میں شرط ہے یا وہ ان میں سے ہے جو فرض کفایہ کہلاتے ہیں؟ تو میں کہوں گا کہ اس کا جواب شیخ ولی الدین عراقی رحمہ اللہ نے یہ دیا ہے کہ یہ

ایمان کے شرط ہونے کیلئے شرط ہے کیونکہ وہ کہتے ہیں کہ اگر کوئی شخص یوں کہے کہ ”میں حضرت محمد ﷺ کے پوری مخلوق کی طرف بھیجے جانے پر تو ایمان لاتا ہوں لیکن ان کے بارے میں یہ نہیں جانتا کہ وہ بشر ہیں ملائکہ سے ہیں یا جنوں سے یا یوں کہے کہ مجھے معلوم نہیں کہ وہ عرب سے ہیں یا عجم سے تو اس کے کافر ہونے میں شک نہیں کیونکہ وہ قرآن کو جھٹلا رہا ہوگا اور پھر اس کا انکار کر رہا ہوگا جو اسلامی دور سے نسل در نسل سیکھا ہے اور وہ یقیناً خاص و عام کے علم میں ہے، میں نہیں سمجھتا کہ اس میں کوئی اختلاف ہو لیکن اگر وہ قرآن کے بارے میں لاعلم ہے یا ایسا گم تھا کہ علماء کے اس اتفاق کو نہیں جانتا تو اسے اس قرآن کے بارے میں پہچان کرانا ضروری ہے اب اگر وہ پھر بھی انکار کرتا ہے تو ہم اسے کافر کہیں گے۔ (انتہی)

”وانہ خیر خلق اللہ کلہم“ کا عطف ”انہ بشر“ پر ہے اور ”خیر“ کے بارے میں تفصیلاً بتایا جا چکا ہے۔

”خَلْق“ کا معنی مخلوق ہے اور ”کُلُّہم“ کی ضمیر ”خلق“ کی طرف جاتی ہے اس کا جمع ہونا، معنی کے لحاظ سے ہے یا اس بات پر یہ جمع ہے جو قاضی نے ذکر کی ہے کہ جمع کی ضمیر کبھی مفرد کی طرف لوٹ سکتی ہے اور اس کا اُلٹ بھی ہو جاتا ہے۔ ”کُلُّ“ کا لفظ لا کر اس کی تاکید کرنا بعض کے خلاف کارڈ ہے۔

شعر کا حاصل معنی یہ ہے کہ حضور ﷺ کی بنیادی ذات میں ہمارے علم کے پہنچنے کی انتہاء اور ہماری سمجھ کے پہنچنے کی آخری حد یہ ہے کہ وہ عظیم بشر ہیں، جسم والے جوہر ہیں، انسانوں کے افراد سے ہیں اور بہتر لوگوں میں سے ہیں اور خوبیوں کا لحاظ کریں تو تمام مخلوقات سے بڑھ کر مرتبہ رکھتے ہیں اور ساری کائنات کے سردار ہیں۔



شعر (۵۲)

وَكُلُّ أَيْ اتَى الرَّسُلَ الْكِرَامَ بِهَا
فَإِنَّمَا اتَّصَلَتْ مِنْ نُورِهِ بِهِمْ

(ترجمہ:) ”ایسے سارے معجزے جو رسول لے کر آئے تھے تو وہ سارے کے سارے حضور صلی اللہ علیہ وسلم کے نور ہی کے ذریعے انہیں ملے تھے۔“

جب دوسرے مصرعہ ”وَأَنَّهُ خَلَقَ اللَّهُ الْخ“ میں ناظم کا قول نظری تھا (سمجھ میں نہ آتا تھا) تو انہوں نے اسے ثابت اور پکا کرنے کیلئے فرمایا: ”وَكُلُّ أَيْ اتَى الرَّسُلَ الْخ“۔
تحقیق الفاظ

یہاں واو عاطفہ ہے اور یہ عطف اس طرح کا ہے جو ”عَلَّتْ“ کا اپنے ”معلول“ پر ہوتا ہے اصل یوں ہے: ”إِذْ كُتِبَ“ تو یہاں تھوڑی سی تبدیلی سے شکلِ اول میں قیاس ترتیب دیا جاسکتا ہے جو یوں ہوگا: ہمارے نبی صلی اللہ علیہ وسلم سارے انبیاء علیہم السلام میں سب سے افضل ہیں کیونکہ ان کی شان یوں ہے کہ ”وَكُلُّ أَيْ اتَى الرَّسُلَ الْكِرَامَ بِهَا ☆ فَإِنَّمَا اتَّصَلَتْ مِنْ نُورِهِ بِهِمْ“ اور جس کی یہ شان ہو وہ سب نبیوں سے افضل ہوگا جس کا نتیجہ ظاہر ہے۔

اسے استثنائی ترتیب دینا آسان ہے مگر اس کیلئے جو یہ قیاس بنا سکتا ہو۔

”وَكُلُّ“ (رفع سے) مبتداء ہے جو نکرہ کی طرف مضاف ہے چنانچہ افراد کے عام ہونے کا فائدہ دے گا جو اس مقام کیلئے مناسب ہے۔

”اِی“ ”ایۃ“ کی جمع ہے جس کا معنی ظاہری علامت ہے اسے ”اِی“ سے نکالا گیا کیونکہ یہ بتاتا ہے: ”اِیَّ مَنْ اِیَّ“ اور یہ محسوس اور عقل میں آنے والی چیزوں کیلئے بولا جاتا ہے تاہم یہاں مراد معجزات ہیں۔

لفظ ”اِی“ کے کئی معنی

”اِی“ کئی معنوں کیلئے آتا ہے جیسے بمعنی ”فَعَلَ“ بمعنی ”حَضَرَ“ چنانچہ کہا جاتا ہے: ”اِیَّ الْمَكَانَ“ یعنی مکان پر حاضر ہوا، بمعنی ”جَامَعَ“ چنانچہ کہا جاتا ہے: ”اِیَّ الْمَرْأَةَ اِیَّانَا“ یعنی اس نے عورت سے خوب ہمبستری کی، بمعنی ”اَنْفَدَ“ چنانچہ کہا جاتا ہے: ”اِیَّ عَلٰی شَیْءٍ“ یعنی اسے

نافذ کر دیا، بمعنی ”بَلَّغَ“ اور بمعنی ”أَهْلَكَ“ کہا جاتا ہے: ”أَتَى عَلَيْهِمُ الدَّهْرُ“ یعنی زمانے نے اسے ہلاک اور فناء کر دیا، بمعنی ”لَامَرَ“ جیسے اللہ کا فرمان ”مَا آتَاكُمُ الرَّسُولُ“ (سورۃ الحشر آیت: ۷) یعنی جو وہ حکم فرمائیں، بمعنی ”انْتَسَبَ“ کہا جاتا ہے: ”أَتَى الرَّجُلُ الْقَوْمَ“ یعنی ان کی طرف منسوب ہوا حالانکہ ان میں نہ تھا۔ کبھی یہ باء کے ذریعے دوسرے کی طرف متعدی ہو جاتا ہے جیسے ”أَتَيْتُهُ بِالْبَلِيَّةِ“۔

علامہ زخشری بتاتے ہیں کہ یہ ”صَارَ“ کے معنی میں آ جاتا ہے جیسے ”أَتَى الْبِنَاءُ مُحْكَمًا“ (یعنی بناء مضبوط ہوگئی) بمعنی ”كَانَ“ جیسے فرمان الہی ہے: ”وَلَا يُفْلِحُ السَّاحِرُ حَيْثُ أَتَى“ (سورۃ طہ آیت: ۶۹) (جادوگر جہاں بھی ہوگا نجات نہیں پائے گا) تاہم یہاں یا تو ”حَضَرَ“ کے معنی میں ہے یا ”جَاءَ“ کے معنی میں۔

”الرُّسُلُ“ سین کی سکون ضرورتِ وزن کیلئے ہے، جمع رسول ہے۔ یہاں یہ نہ کہا جائے کہ یہاں یوں کہا جاتا: ”كُلُّ النَّبِيِّ بَهَا“ تاکہ سب کو عام اور شامل ہو جاتا کیونکہ ہم کہیں گے کہ حضرتِ ناظم نے اس قول کی بناء اس بات پر رکھی ہے کہ نبی اور رسول ایک دوسرے کے ہم معنی ہیں یا نبی کا لفظ دلالت کے طریقے پر سمجھ میں آ جاتا ہے باوجودیکہ ”فِي الرُّسُلِ“ میں ملائکہ کے رسول جبریل، عزرائیل، میکائیل اور اسرافیل بھی شامل ہیں چنانچہ رسولِ اکرم ﷺ کا ان پر افضل ہونا بھی ثابت ہو گیا اور کیوں نہ ہو، جمہور اہل سنت والجماعت فرماتے ہیں: بنو آدم میں سے خاص لوگ (انبیاء) خاص فرشتوں سے افضل ہیں جو مذکورہ چار عرش اٹھانے والے، مقربین، کروہین اور روحانیین ہیں اور خاص فرشتے، بنو آدم کے عام لوگوں سے افضل ہیں۔

علامہ تفتازانی فرماتے ہیں: اس پر اجماع ہے اور اس کی ضرورت بھی ہے کہ بنو آدم کے عام مؤمن، عام فرشتوں سے افضل ہیں کیونکہ جسے سجدہ کیا گیا، وہ سجدہ کرنے والے سے افضل ہونا چاہیے۔ اس میں تفصیلی بحث ہے جو علمِ کلام کی کتابوں میں موجود ہے۔

”الْكَرَامُ“، ”كَرِيمُ“ کی جمع ہے یہ لفظ یا تو ”كَرْمُ“ سے ہے کیونکہ یہ لوگ اپنی اُمتوں پر شریعت کا انعام کرتے ہیں، ہدایت کا راستہ دکھاتے ہیں نیز کفر اور گمراہی سے خلاصی کا طریقہ بتاتے ہیں یا یہ لفظ اللہ کے ہاں ”كَرَامَةُ“ (بزرگی) سے نکلا ہے، اسی لئے اللہ نے انہیں رسول اور انبیاء بنایا۔ ”بَهَا“ میں باء ملا بست کیلئے ہے، یہ ”أَتَى“ سے متعلق ہے، ضمیر ”أَيِّ“ کی طرف جاتی ہے۔

”مِنْ نُورِهِ، اِتَّصَلَتْ“ سے متعلق ہے اور ”نورہ“ کی ضمیر حضور ﷺ کی طرف جاتی ہے۔ نور ایک روشنی والا جوہر ہے اور نار بھی ایسے ہی ہے البتہ آگ کی روشنی دھوئیں سے بھری ہوتی ہے اور ساد آگ نرم ہونے میں نفس جیسی ہوتی ہے اور اس کا ہلنا لازمی ہوتا ہے، ہاں آگ کا کرہ گولائی میں حرکت کرتا ہے جو آسمان کے ماتحت ہوتا ہے جبکہ نفس کی حرکتیں مختلف اور ارادہ پر ہوتی ہیں۔ علماء یہی کہتے ہیں۔

”بِهِمْ“ کا تعلق بھی ”اِتَّصَلَتْ“ سے ہے، ضمیر ”رسل“ کی طرف جاتی ہے۔

شعر کا حاصل معنی یوں ہے کہ عام عادت کے خلاف ایسے سارے کام جنہیں رسول اور نبی کھلی نشانیوں اور واضح معجزات کی شکل میں لائے تو وہ حضور ﷺ کے اصلی نور مبارک ہی کی وجہ سے ان تک پہنچے اور انہیں ملے چنانچہ پہلے والے حضرات کے سارے معجزات آپ ہی کے معجزے بنے جیسے آپ کے پیچھے چلنے والے حضرات کی کرامتیں آپ ہی کی کرامتیں شمار ہوتی ہیں چنانچہ پہلے والے حضرات اور آپ کے پیچھے چلنے والے اولیاء دراصل حضور ﷺ ہی کے ایسے نائب ہوئے جیسے امیر اور سربراہ حکومت کا سامنے والا اور درمیان میں ہونے والا لڑاکا لشکر ہوتا ہے۔

حدیث نور

اس شعر کا معنی اس وقت تک مکمل نہ ہو سکے گا جب تک وہ روایت نقل نہ کر دی جائے جسے حضرت عبدالرزاق نے اپنی سند کے ذریعے حضرت جابر بن عبداللہ انصاری رضی اللہ عنہ سے روایت کیا ہے، وہ بتاتے ہیں: میں نے عرض کی: یا رسول اللہ! میرے ماں باپ آپ پر قربان! ذرا بتائیے نہ سہی کہ اللہ تعالیٰ نے ہر چیز سے پہلے کون سی چیز پیدا فرمائی؟ آپ نے فرمایا: اے جابر! اللہ تعالیٰ نے سب چیزوں سے پہلے اپنے نور سے تمہارے نبی کا نور پیدا فرمایا، وہ نور اللہ کی قدرت اور مرضی سے عرصہ تک ادھر ادھر گھومتا رہا، یہ وہ وقت تھا جب لوح، قلم، جنت، دوزخ، فرشتے، آسمان، زمین، سورج چاند اور جن و انسان جیسی چیزوں میں سے کچھ بھی پیدا نہ ہوا تھا اور جب اللہ نے اس مخلوق کو پیدا کرنا چاہا تو اس نور کے چار حصے بنا دیئے، پہلے حصے سے عرش اٹھانے والے فرشتے، دوسرے سے کرسی تیسرے سے باقی فرشتے پیدا فرمادیئے، پھر چوتھے حصے کے بھی چار حصے کر دیئے، پہلے حصے سے سات آسمان، دوسرے سے سات زمینیں، تیسرے سے جنت و دوزخ پیدا فرمائے۔ یونہی چوتھے حصے کے بھی چار حصے بنا دیئے، پہلے حصے سے مؤمنوں کی آنکھوں کے نور، دوسرے سے ان کے دلوں کے نور (جو

اللہ کی پہچان کرنے کا ذریعہ ہیں) تیسرے سے ان کی ذاتوں کے نور بنائے جو توحید کہلاتے ہیں جو
 ”لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ مُحَمَّدٌ رَّسُولُ اللَّهِ“ ہے چنانچہ عرش و کرسی میرے نور سے بنے، گزروبی اور
 روحانی فرشتے میرے نور سے نکلے، ساتوں آسمانوں میں رہنے والے فرشتے میرے نور سے پیدا
 ہوئے، جنت اور اس میں موجود ساری نعمتیں میرے نور سے بنیں، سورج، چاند اور سب ستارے میرے
 نور سے نکلے، عقل، قلم، توحید میرے نور سے ہوئے، نبیوں اور رسولوں کی روحوں میرے نور سے پیدا
 ہوئیں پھر شہید اور نیک بخت لوگ بھی میرے ہی نور سے پیدا ہوئے، پھر چوتھے حصے والے نور کو ہر
 پردے میں ایک ایک ہزار سال تک ٹھہرایا جو عبودیت کا مقام ہے، جسے کرامت، سعادت و نیک
 بختی، ہیبت و رعب، رحمت، شفقت، علم، حلم و حوصلہ، عزت و وقار، اطمینان، صبر، سچائی، صدق اور یقین
 کہتے ہیں اور جب وہ مبارک نور ان پردوں سے نکل آیا تو اسے زمین کے گزے پر لے آیا چنانچہ اس
 سے مشرق و مغرب کا درمیانی حصہ یوں روشن ہوا جیسے اندھیری رات میں چراغ ہوتا ہے، پھر جب
 زمین سے حضرت آدم علیہ السلام کو پیدا فرمایا تو اس میں وہ نور فوراً ان کی پیشانی کے اوپر آ گیا، پھر
 حضرت شیث علیہ السلام کی طرف چلا آیا“ (الحدیث) (مصنف عبدالرزاق، کتاب الایمان، باب فی تخلیق نور محمد،
 صفحہ ۶۳ تا ۶۵، رقم الحدیث: ۱۸۰)۔ تو اس حدیث پاک سے معلوم ہوا کہ ہر وہ معجزہ جو ہر نبی کو ملا تو وہ آپ
 ہی کے نور ہی سے تھا کیونکہ دونوں جہان میں جو کچھ بھی ہے وہ حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام ہی کے نور سے
 بنا ہے۔



شعر (۵۳)

فَإِنَّهُ شَمْسٌ فَضِلُّ هُمْ كَوَاكِبَهَا
يُظْهِرُنْ أَنْوَارَهَا لِلنَّاسِ فِي الظُّلَمِ

(ترجمہ:) ”یہ فیصلہ ہو گیا کہ وہ مرتبے میں سورج کی طرح ہیں جبکہ سارے انبیاء علیہم السلام ان کے گویا ایسے ستارے ہیں جو اندھیروں میں لوگوں کیلئے روشنی کر رہے ہیں۔“
جب پہلا شعر جو قیاس کا صغریٰ ہے واضح نہ تھا تو ناظم نے اسے پوری طرح واضح اور ثابت کرتے ہوئے فرمایا: ”فانہ شمس الخ“۔

یہاں اس قیاس کی ترتیب یوں ہوگی کہ ہمارے نبی ﷺ وہ ہیں کہ ایسے سارے معجزے جو باقی رسول لائے آپ ہی کے نور سے ان تک پہنچے تھے کیونکہ ہمارے نبی مرتبوں میں گویا سورج کا مقام رکھتے ہیں جبکہ وہ ان کے سامنے ستاروں کی صورت میں دکھائی دیتے ہیں اور جو ایسی شان رکھتا ہے تو اسی کے نور مبارک سے وہ معجزات جو رسول حضرات لیکر آئے ان تک پہنچے ہیں، نتیجہ صاف ظاہر ہے۔
”يُظْهِرُنْ“ اس قیاس صغریٰ کی علت اور سبب ہے تو اس قیاس کی ترتیب یوں ہوگی کہ ہمارے پیارے نبی ﷺ مرتبوں کا گویا سورج ہیں جبکہ دوسرے نبی اس کے ستارے بنے کیونکہ ہمارے نبی وہ ہیں کہ سارے انبیاء علیہم السلام ان کے نور کو ان کے نہ ہونے کے دور سے لے کر ان کے تشریف لانے تک لوگوں کو پہنچاتے رہے اور جو ایسی شان والا ہو وہ یقیناً مرتبوں کا گویا سورج ہوتا ہے تو نتیجہ مرضی کے مطابق نکلے گا۔

تحقیق الفاظ

اس سے پتہ چلا کہ ”فَإِنَّهُ“ کی فاء تعلیل اور سبب بتاتی ہے، ضمیر حضور ﷺ کی طرف لوٹی ہے۔
”شَمْسٌ فَضِلُّ“ دراصل ”كشَمْسٍ فَضِلُّ“ ہے کیونکہ یہ بڑی بہترین تشبیہ ہے کہ اس کے دونوں طرف مذکور ہیں۔

کچھ حضرات نے اسے استعارہ مُصَرَّحاً بنا لیا ہے اور وہ یوں کہ نبی کریم ﷺ کو ظاہر ہونے اور تاریکی دور کرنے میں سورج سے تشبیہ دی جائے چنانچہ سورج کو حضور ﷺ کیلئے استعارہ کیا جائے اور سورج کو ذکر کر کے حضور ﷺ مراد لئے جائیں۔ یہ استعارہ دو طرفوں کے ذکر کیلئے نقصان دہ نہیں

کیونکہ یہ اس وقت نقصان دہ ہوتا ہے جب یہ تشبیہ کی خبر دے رہا ہو اور یہاں یوں نہیں ہے۔
 ”شمس“ کی ”فضل“ کی طرف اضافت ”مِنْ“ کے معنی میں ہے یعنی اصل یوں ہے: ”شَمْسٌ
 مِّنْ فَضْلِ اللَّهِ“۔

یاد رہے کہ حضرت امام قسطلانی رحمہ اللہ نے مواہب لدنیہ میں ”شَمْسٌ“ کو حضور ﷺ کے
 مبارک ناموں میں ذکر کیا ہے۔ چنانچہ فرمایا ہے:

”رہا سورج تو یہ اسم مبارک حضور ﷺ کا رکھا گیا ہے کیونکہ آپ کے فائدے ہی
 فائدے ہیں کہ آپ کا مرتبہ بڑا ہے شریعت واضح ہے قدر و قیمت زیادہ ہے کیونکہ آپ
 کے کمالات گنتی میں نہیں آتے اور دیکھنے والا آپ کی بزرگی کی وجہ سے آپ کو نظر جما کر
 دیکھ نہیں سکتا جیسے سورج مرتبہ میں کئی طرح کے ستاروں سے اعلیٰ ہے کیونکہ وہ چوتھے
 آسمان پر ہے اور اس کا فائدہ دوسرے سب ستاروں سے بڑھ کر ہے جسے ہر ایک جانتا
 ہے اور پھر جب سارے ستارے سورج سے روشنی کی مدد لیتے ہیں تو حضور ﷺ کا بھی یہ
 نام رکھنا مناسب ہوگا کیونکہ انبیاء علیہم السلام کے نور بھی آپ ہی سے روشنی کی مدد لیتے
 ہیں“۔ (انتہی)

”ہُمْ“ کی ضمیر انبیاء علیہم السلام کی طرف جاتی ہے لیکن اسے نبی کریم ﷺ کے صحابہ کی طرف
 لوٹانا واضح نہیں ہے۔

”الکواکب“، ”کوکب“ کی جمع ہے جس سے مراد چاند یا ستارے ہیں۔ ضمیر ”شمس“
 کی طرف جاتی ہے چنانچہ یہ اضافت ہلکے سے تعلق کی وجہ سے ہے کیونکہ سورج ہی تو ان کے روشن
 ستارے بننے کا سبب ہے اور پھر ستارے کہہ کر انبیاء علیہم السلام مراد لینا یا تو بہترین تشبیہ اور استعارہ
 کے طریقے پر ہے جیسے پہلے آیا لہذا اسے ذہن میں رکھو اور جب ان دونوں استعاروں میں وجہ شبہ
 (تشبیہ دینے کی وجہ) پوشیدہ تھی تو حضرت ناظم رحمہ اللہ نے اسے ”يُظْهِرَنَّ“ کہہ کر ظاہر کر دیا ہے یعنی
 وہ ستارے اپنے انوار ظاہر کرتے ہیں یعنی اس سورج کے انوار کو لوگوں کیلئے ظاہر کرتے ہیں۔

”الظُّلَمُ“ جمع ”ظُلْمَةٌ“ ہے یعنی اس سورج کے غائب ہونے کے دوران چنانچہ وہ ستارے
 ذاتی طور پر روشنی نہیں پھیلاتے بلکہ ایک قول کے مطابق سورج سے مدد لیتے ہیں چنانچہ جب سورج
 غائب ہوتا ہے تو ان ستاروں میں سورج ہی کا نور ہوتا ہے یونہی حضور ﷺ کے تشریف لانے سے

پہلے یہ انبیاء علیہم السلام آپ ہی کے مرتبے بتایا کرتے تھے چنانچہ انبیاء علیہم السلام سے جو انوار بھی دکھائی دیئے وہ آپ کے فیض دینے والے نور اور وسیع مدد سے دکھائی دیئے اور اس نور کی روشنی گھٹ بھی نہ سکی دیکھتے سب سے پہلے ظاہر ہونے والا وہ نور حضرت آدم علیہ السلام میں نظر آیا کیونکہ اللہ نے انہیں اپنا خلیفہ بنایا اور انہیں ان سارے ناموں سے مدد دی جو حضرت محمد ﷺ کے مرتبہ جو امع الکلم کے مقام میں موجود ہیں انہوں نے سارے نام ظاہر کئے تو ان فرشتوں کو آپ کا پتہ چلا جو یوں کہہ رہے تھے: "أَتَجْعَلُ فِيهَا مَنْ يُفْسِدُ فِيهَا وَيَسْفِكُ الدِّمَاءَ" (سورۃ البقرہ آیت: ۳۰) (کیا تو زمین پر ایسا شخص بنا رہا ہے جو اس زمین میں فساد پیدا کرے گا اور خون بہاتا رہے گا؟) الآیہ۔

عظمت حبیب اور دیگر انبیاء

پھر مخلوق پوری سر زمین میں پھیل گئی تو لوگوں کا یہ سلسلہ ہمارے نبی ﷺ کے وجود مبارک کی تشریف آوری کے دور تک پہنچ گیا، اسی دوران حضور ﷺ اپنا مرتبہ بتانے کیلئے ظاہر ہوئے اور جب سورج کی طرح ظاہر ہو گئے تو ہر نور آپ کے نور میں درج ہوا اور آپ کے معجزات میں سارے انبیاء علیہم السلام کے معجزات لپٹ گئے اور ساری رسالتیں آپ کی پشتِ نبوت میں آ گئیں اور ساری نبوتیں آپ کی رسالت کے جھنڈے کے ماتحت ہو گئیں چنانچہ سارے انبیاء میں سے جسے جو بھی عزت اور مرتبہ ملا تو اسی جیسا حضور ﷺ کو مل گیا چنانچہ حضرت آدم علیہ السلام کو یہ مرتبہ ملا کہ اللہ نے انہیں اپنے قدرتی ہاتھ سے پیدا فرمایا تو ہمارے سردار حضرت محمد ﷺ کو یہ مرتبہ ملا کہ ان کا سینہ مبارک کھولا گیا اور اس کا دھیان اللہ تعالیٰ نے خود رکھا، اس میں ایمان و حکمت بھردی جو نبی کریم ﷺ کے اخلاق مبارکہ ہیں جبکہ جیسے پہلے آپ کا حضرت آدم علیہ السلام کو پیدا کرنے کا اصل مقصد ہمارے نبی ﷺ کو پیدا کرنا تھا، رہا فرشتوں کا حضور ﷺ کو سجدہ کرنا تو وہ اس وجہ سے تھا کہ ہمارے نبی ﷺ کا نور ان کی پیشانی میں موجود تھا۔ رہا حضرت آدم علیہ السلام کو ہر چیز کا نام سکھانا تو یوں ہی ہمارے نبی ﷺ کو سارے علموں کے نام اور ان کی حقیقتیں بتائی گئیں اور اس میں شک نہیں کہ نام رکھی چیزوں کا مرتبہ ناموں سے بڑھ کر عزت رکھتا ہے کیونکہ ناموں کو اس لئے لیا جاتا ہے کہ ان سے نام رکھی گئی چیزوں کا علم آسکے اور اصل مقصد تو یہی ہوتا ہے۔

حضرت ادریس علیہ السلام

رہے حضرت ادریس علیہ السلام اللہ نے انہیں بلند مقام تک پہنچایا تو ہمارے سردار حضرت

محمد ﷺ کو معراج کا مرتبہ دیا گیا اور انہیں ایسے مکان کی وہ بلندی دی گئی جہاں تک کسی کو بھی پہنچایا نہ گیا۔

حضرت نوح علیہ السلام

رہے حضرت نوح علیہ السلام کہ اللہ نے انہیں اور ان کے مؤمن ساتھیوں کو غرق ہونے اور زمین میں دھنسنے سے بچایا جبکہ ہمارے سردار حضرت محمد ﷺ کو یہ مرتبہ ملا کہ ان کی امت آسمانی عذاب سے ہلاک نہ ہوگی چنانچہ فرمان الہی ہے کہ ”مَا كَانَ اللَّهُ لِيُعَذِّبَهُمْ وَأَنْتَ فِيهِمْ“ (سورۃ الانفال آیت: ۳۳) (ایسا نہ ہوگا کہ آپ کے ہوتے ہوئے اللہ انہیں عذاب دے)۔

حضرت ابراہیم علیہ السلام

رہے حضرت ابراہیم علیہ السلام تو ان پر نمرود کی آگ ٹھنڈک اور سلامتی بن گئی جبکہ ہمارے سردار حضرت محمد ﷺ کو ویسا ہی مرتبہ ملا کہ ان کے ذریعے جنگوں کی آگ بجھا دی گئی دیکھئے فرمان الہی ہے کہ ”كُلَّمَا أَوْقَدُوا نَارًا لِّلْحَرْبِ أَطْفَأَهَا اللَّهُ“ (سورۃ المائدہ آیت: ۶۴) (وہ کافر جب بھی جنگ کی آگ بھڑکاتے تو اللہ اسے بجھا دیا کرتا) یونہی حضور ﷺ معراج کی رات جہنم کی آگ کے سمندر سے گزرے تو صحیح سلامت گزر گئے۔

رہا حضرت ابراہیم علیہ السلام کو خلیل ہونے کا مرتبہ ملنا تو یہی مرتبہ ہمارے آقا علیہ الصلوٰۃ والسلام کو دیا گیا اور پھر حبیب ہونے کا مرتبہ بھی دے دیا گیا۔

رہا حضرت ابراہیم علیہ السلام کو بت توڑنے اور پانسہ توڑنے سے روکنے کا مرتبہ ملنا تو ہمارے سردار حضرت محمد ﷺ کو بھی یہ مرتبہ ملا کہ آپ نے مکہ میں پورے کے پورے بت توڑ دے جبکہ ان کی مدد کرنے والے سارے موجود تھے آپ کو کوئی لگتی بات نہ کی گئی اور نہ ہی آپ کے حملہ کرنے میں کمزوری دکھائی دی بلکہ آپ نے رعب دار آواز میں فرمایا: ”قُلْ جَاءَ الْحَقُّ وَزَهَقَ الْبَاطِلُ“ (سورۃ الاسراء آیت: ۸۱) (حق سچ کا دور شروع ہو گیا جبکہ باطل کا دور ختم ہوا)۔

حضرت موسیٰ علیہ السلام

رہا حضرت موسیٰ علیہ السلام کے عصا کا سانپ بن جانے کا معجزہ تو یہ ہمارے سردار حضرت محمد ﷺ کو اس وقت حاصل ہوا کہ جب ابو جہل نے آپ کو پتھر مارنے کا ارادہ کیا تو اس نے آپ کے دونوں مونڈھوں پر دو اثر دھا دیکھے تو آپ کے ڈر سے واپس چلا گیا۔ رہا حضرت موسیٰ علیہ السلام کو

روشنی والا ہاتھ ملنا تو ہمارے سردار حضرت محمد ﷺ کو بھی یہ مرتبہ ملا کہ آپ کا نور مبارک پشتوں اور پیٹوں میں دکھائی دیتا رہا چنانچہ آپ کے نور کی بناء پر اندھیری رات میں زمین پر گری سُوئی بھی نظر گئی اور پھر حضرت موسیٰ علیہ السلام کو دریا کے پھٹ جانے کا مرتبہ ملا تو ہمارے سردار حضرت محمد ﷺ کو چاند کے ٹکڑے ہو جانے کا مرتبہ ملا جیسے انشاء اللہ آگے آ رہا ہے۔ حضرت موسیٰ علیہ السلام نے تو کارنامہ زمین پر دکھایا جبکہ ہمارے سردار حضرت محمد ﷺ نے آسمان پر دکھا دیا جن میں صاف فرق دکھائی دے رہا ہے۔

حضرت ابن حبیب رحمہ اللہ بتاتے ہیں کہ آسمان اور زمین کے درمیان ”مَكْفُوف“ نام کا ایک دریا بہتا ہے کہ زمین کے دریا کو اس کے مقابلے میں یوں سمجھتے ہیں جیسے ہر طرف سے گھیرا ڈالے والے دریا میں ایک قطرہ ہوتا ہے وہ ابن حبیب بتاتے ہیں کہ اسی معراج کی وجہ سے وہ دریا معراج کی رات ہمارے نبی کریم ﷺ کیلئے پھٹ گیا تھا۔

رہی یہ بات کہ حضرت موسیٰ علیہ السلام کی دعا قبول ہوئی تو ہمارے سردار حضرت محمد ﷺ کی بھی بے شمار دعائیں قبول ہوئیں جن میں سے کچھ کا بیان آگے آ رہا ہے۔

رہا حضرت موسیٰ علیہ السلام کیلئے پتھر سے پانی بہہ نکلنا تو ہمارے سردار حضرت محمد ﷺ کو بھی یہ مرتبہ ملا کہ آپ کی مبارک انگلیوں کے درمیان سے پانی بہا تھا جبکہ اس میں زیادہ کمال ہے۔

رہا حضرت موسیٰ علیہ السلام کا یہ مرتبہ کہ انہوں نے طور پہاڑ پر اللہ سے کلام کی تو ہمارے سردار حضرت محمد ﷺ کو بھی معراج کی رات یہ مرتبہ حاصل ہوا تھا، آپ بہت قریب بھی ہوئے اور پھر آپ کا مقام بلند آسمانوں اور سدرۃ المنتہیٰ سے اوپر تھا جبکہ حضرت موسیٰ علیہ السلام کا مقام طور سینا تھا۔

حضرت ہارون علیہ السلام

رہا یہ کہ حضرت ہارون علیہ السلام کو فصاحت سے بات کرنے کا مرتبہ ملا تو یہ مرتبہ ہمارے نبی ﷺ کو یوں ملا کہ آپ سارے بنو آدم میں سب سے بڑے فصیح تھے۔

حضرت یوسف علیہ السلام

رہے حضرت یوسف علیہ السلام کہ انہیں آدھا حسن ملا تو ہمارے سردار محمد ﷺ کو پورا حسن عطا ہوا۔ یہ پہلے بھی بتایا جا چکا ہے اور کچھ آگے بھی آئے گا۔

رہا حضرت یوسف علیہ السلام کا خوابوں کی تعبیر بتانا تو یہ مقام حضرت محمد ﷺ کو بھی اتنا ملا کہ کوئی

شمار کرنے والا اسے شمار ہی نہیں کر سکتا۔

حضرت داؤد علیہ السلام

رہا حضرت داؤد علیہ السلام کو لوہا نرم کرنے کا مقام ملنا تو ایسا مقام ہمارے نبی ﷺ کو بھی ملا بلکہ اس سے بڑھ کر یہ کہ آپ نے کسی صحابی کو لکڑی عطا فرمائی اور وہ مضبوط تلوار بن گئی۔

حضرت سلیمان علیہ السلام

رہا حضرت سلیمان علیہ السلام کے لشکر میں جنوں کی بھاری تعداد تو اس سے بڑھ کر فرشتوں کی وہ تعداد ہے جو حضرت جبریل علیہ السلام کے ساتھ تھی اور یہ سب حضور ﷺ کا لشکر تھے (جو بے حساب تھا)۔

پھر جو انہیں بادشاہی ملی تو ہمارے نبی ﷺ ان سے اس بناء پر بڑھ کر تھے کہ انہیں بادشاہ نبی بننے یا عبد نبی بننے میں مرضی فرمانے کا حکم ہوا تو آپ نے عبد نبی ہونا (بندہ رہ کر نبی ہونا) پسند فرمایا۔

حضرت عیسیٰ علیہ السلام

رہا حضرت عیسیٰ علیہ السلام کا اندھوں اور کوڑھیوں کو شفاء دینا اور مردے زندہ کرنا تو ہمارے سردار حضرت محمد ﷺ کو بھی یہ سب مرتبے ملے کیونکہ آپ نے نکلی ہوئی آنکھ کو اپنی جگہ پر رکھ کر ٹھیک کر دیا اور وہ پہلے سے زیادہ اچھی ہو گئی۔

اسی طرح کا واقعہ ہے کہ حضرت معاذ بن عفرأ رضی اللہ عنہ کی بیوی کو پھلہری کی بیماری تھی جس نے رسول اللہ ﷺ کی بارگاہ میں شکایت کی۔ آپ نے اس پر تھوڑا سا ہاتھ پھیرا تو انہیں پھلہری کی بیماری نہ رہی۔ اسے امام رازی نے نقل کیا ہے۔

رہا حضور ﷺ کا مردوں کو زندہ کرنا تو یہ بتایا جا چکا ہے اسے یاد رکھو اس سلسلے میں جو کچھ ہم نے اب تک بتایا ہے وہ اس کا دسواں حصہ ہے جو اس سلسلے میں حدیثوں میں آیا ہے۔



شعر (۵۴)

اَكْرَمَ بِخَلْقِ نَبِيِّ زَانَهُ خُلُقُ
بِالْحُسْنِ مُشْتَبِلٍ بِالْبِشْرِ مُتَّسِمٍ

(ترجمہ:) ”ہمارے نبی ﷺ کی اللہ کی طرف سے پیدائش کتنی پیاری لگتی ہے جس نے آپ کے اخلاق کو خوبصورت بنا کر سجا دیا ہے چنانچہ ان میں ہنس مکھ ہونے کی ایسی خوبی ہے کہ جس کی مثال ہی نہیں ملے گی۔“

جب حضرت ناظم رحمہ اللہ نے حضور ﷺ کو سورج سے تشبیہ دے کر مختصر طور پر آپ کے اچھے اخلاق اور حلیہ مبارکہ کا ذکر کر دیا تو اب ان کا ارادہ یہ ہے کہ ان میں سے کچھ کی وضاحت کریں جس کے ساتھ ساتھ آپ کے کچھ اخلاق اور سیرت کا ذکر بھی ہو جائے گا چنانچہ فرمایا: ”اَكْرَمَ بِخَلْقِ نَبِيِّ زَانَهُ خُلُقِ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”اَكْرَمَ“ فعل تعجب اور امر حاضر کا صیغہ ہے اس میں چھپا فاعل اللہ کی طرف جاتا ہے یعنی اللہ نے نبی کو پیدا کر کے کتنا کرم فرمایا ہے یعنی ناظم نبی کریم ﷺ کی پیدائش پر اللہ کی دی ہوئی عزت کو تعجب سے دیکھتے ہیں۔

باء زائدہ ہے جسے امام خفش (م ۹۳ء) نے بیان کیا ہے: اس کا تعلق ”اَكْرَمَ“ سے ہے۔ ”خَلُقَ“ کا معنی ذات اور صورت ہے اور ”نَبِيِّ“ میں تنوین تعظیم کیلئے ہے یعنی بڑے مرتبہ والے نبی اور مراد حضرت محمد ﷺ ہیں کیوں کہ مقام بتا رہا ہے۔ جملہ ”زَانَهُ“، ”نَبِيِّ“ کی صفت ہے یہ ”زَيْنَةٌ“ سے لیا گیا ہے۔ ”زَانَ“ کا لفظ خود متعدی ہوتا ہے جیسے امرؤ القیس اپنے قصیدہ ”المعلقہ“ میں کہتا ہے:

وَفَرَعٌ يَزِينُ الْمَتْنَ اسْوَدَ فَاحِمٍ
اَيْتٌ كَقِنُو النَّخْلَةِ الْمُتَعَثِكِلِ

”خُلُقُ“ (پیش سے) ”زَانَ“ کا فاعل ہے اور یہ دو ضمّوں کے ساتھ ”خُلُقُ“ کی جمع ہے جس کا معنی صفت اور سیرت ہے اور اس سے مراد حضور ﷺ کی اچھی عادتیں ہیں۔ ناظم نے اس مصرعہ

میں یہ اشارہ کیا ہے کہ صورت کا اچھا ہونا اس وقت بہتر ہوتا ہے جب اخلاق اچھے ہوں۔
 ”بِالْحُسْنِ“ دوسرے ”مُشْتَمِلٍ“ سے متعلق ہے اسے پہلے لانے کا مقصد حُضْر کرنا ہے۔
 الف لام استغراق کیلئے ہے یعنی حسن کی تمام قسمیں صرف حضور ﷺ ہی میں پائی جاتی ہیں کسی اور میں نہیں ہیں۔

”مُشْتَمِلٍ“ (زیر سے) صفت کے بعد نبی کی صفت ہے اور یہ اسمِ فاعل کے صیغے پر ہے
 ”اشتمال“ مصدر سے جس کا معنی گھیرا ڈالنا اور جمع ہونا ہوتا ہے کیونکہ ”شَمَل“ سے ہے جس کا معنی
 ”جَمَعَ“ (اس نے جمع کیا) اور ”أَحَاطَ“ (گھیرا ڈالا) ہے یہ ”شَمَل“ بمعنی ”تَفَرَّقَ“ (بکھر گیا)
 نہیں ہے۔

اشتمال اور شمول میں فرق

”اشتمال“ اور ”شُمُول“ میں فرق یہ ہے کہ ”اشتمال“ کا لفظ گلی کے تمام افراد کو اپنے اندر
 لینے کیلئے ہوتا ہے جبکہ ”شمول“ کا لفظ گلی کے اپنی جزئیات کو اپنے اندر لینے کیلئے ہوتا ہے۔
 ”بِالْبِشْرِ“ کا تعلق آخر میں آنے والے ”مُتَسِّمٍ“ سے ہے اور ”بِشْرِ“ (باء پرزیر) خوشی کے
 موقع پر چہرے کی جلد کا ہلنا ہوتا ہے چنانچہ کہا جاتا ہے کہ ”لَقِينِي فَأَظْهَرَ الْبِشْرَ“ (وہ مجھ سے ملا تو
 خندہ پیشانی سے پیش آیا) البتہ کچھ نسخوں میں ”بِالْبِشْرِ“ کی بجائے ”بِالْبَرِّ“ بمعنی سچائی ہے لیکن
 پہلا لفظ بہتر ہے کیونکہ دوسرا لانے میں تکرار پایا جاتا ہے جبکہ حضور ﷺ کی سچائی کے بارے میں
 ”نَبِينَا الْأَمْرَ النَّاهِي“ کا مصرعہ بتا چکا ہے۔

”مُتَسِّمٍ“ لفظ نبی کی صفت کے بعد صفت ہے یہ ”اتِّسَامٍ“ سے اسمِ فاعل ہے بمعنی موصوف
 ہونا یہ ”وَسْمٍ“ بمعنی علامت سے لیا گیا ہے چنانچہ ایک شاعر کے اس قول میں یہی کچھ ہے:

أَوْ كَلَّمَا وَرَدَتْ عُكَازُ قَبِيلَةٍ

بَعَثُوا إِلَيَّ عَرِيْفِهِمْ يَتَوَسَّمُ

”کیا جب بھی عکاظ والے کسی قبیلہ کے ہاں جاتے ہیں تو وہ کسی کو اپنے واقف کار کی

طرف بھیجتے ہیں تاکہ پتہ لگائے۔“

شعر کا حاصل معنی یہ ہے کہ حضور ﷺ کا خلق اور ظاہری صورت کتنی اچھی ہے جس نے آپ
 کے خلق اور باطنی سیرت کو سجایا اور خوبصورت کر دیا ہے تو یہ اسی طرح ہے جیسے فرمانِ الہی ہے: ”نُورٌ“

عَلَى نُورٍ“ (سورة النور آیت: ۳۵) اور جیسے یہ فرمان ”مَثَلُ نُورِهِ كَمِشْكُوَةٍ فِيهَا مِصْبَاحٌ“ (سورة النور آیت: ۳۵) آپ میں وہ خوبی ہے جس میں حُسن موجود ہے اور اس میں آپ کے تمام حالات و مقالات و سکناات شامل ہیں اور آپ کی خوبصورت خوبیوں کی تفصیل کے بیان میں کئی مشہور حدیثیں موجود ہیں جیسے حضرت ابو ہریرہ رضی اللہ عنہ فرماتے ہیں کہ میں نے رسول اکرم ﷺ سے بڑھ کر کوئی اور خوبصورت نہیں دیکھا، ایسا لگتا تھا کہ گویا سورج آپ کے مبارک چہرے پر چل رہا ہے (سنن ترمذی، کتاب المناقب عن رسول اللہ باب فی صفة النبی علیہ السلام جلد ۵ صفحہ ۳۶۹، رقم الحدیث: ۳۶۶۸) اور آپ کے ہنسنے پر دیواریں روشن ہو جاتیں (مصنف عبد الرزاق، کتاب العلم، باب فی صفة النبی علیہ السلام جلد ۱۰ صفحہ ۲۳۲، رقم الحدیث: ۲۰۶۵۷)۔

پھر حضرت اُمّ معبد رضی اللہ عنہا کا وہ قول ملتا ہے جس میں آپ کی یوں مدح سرائی کی گئی ہے کہ حضور ﷺ کو دور سے دیکھا جاتا تو سب سے خوبصورت لگتے اور قریب سے دیکھنے پر میٹھی اور پیاری گفتگو فرماتے دیکھے جاتے۔ (الشفاء بتعریف حقوق المصطفیٰ، فعل واما نظافة جسمه وطیب ریحہ جلد ۱ صفحہ ۶۱)

پھر حضرت علی رضی اللہ عنہ کا وہ قول ہے جس میں آپ کی خوبیاں بتاتے ہوئے آخر میں بتایا کہ جو آپ کو صاف طور پر دیکھتا تو رعب میں آ جاتا اور جو آپ کو پوری طرح جان لیتا تو آپ سے پیار کرنے لگتا۔ (الشفاء بتعریف حقوق المصطفیٰ، فصل واما نظافة جسمه وطیب ریحہ جلد ۱ صفحہ ۶۱)

آپ کی مدح کرنے والا ایک شخص بتاتا ہے کہ میں نے آپ جیسا نہ پہلے دیکھا اور نہ بعد میں اس کے علاوہ اور بھی بہت کچھ ملتا ہے جس کی اس مختصر کتاب میں گنجائش نہیں۔

یونہی آپ خندہ پیشانی کی خوبی میں مشہور تھے اور یہ سلسلہ ہر وقت جاری رہتا۔ اس میں کئی مشہور حدیثیں ملتی ہیں جن کا ذکر کرنا لمبی بات ہوگی۔

ان حدیثوں میں سے حضرت عبداللہ بن حارث رضی اللہ عنہ کا بیان ہے کہ میں نے رسول اللہ ﷺ سے بڑھ کر مسکراتے کسی کو نہیں دیکھا۔

کیا آقا ہنستے بھی تھے؟

حضرت ابو ہریرہ رضی اللہ عنہ فرماتے ہیں کہ رسول اللہ ﷺ ہنستے تو دیواروں پر روشنی ہو جاتی۔

(مصنف عبد الرزاق، کتاب العلم، باب فی صفة النبی علیہ السلام جلد ۱۰ صفحہ ۲۳۲، رقم الحدیث: ۲۰۶۵۷)

اگر تم کہو کہ اس حدیث سے حضور ﷺ کا ہنسنے ثابت ہوتا ہے حالانکہ اسے حضرت عائشہ صدیقہ

رضی اللہ عنہا کی یہ حدیث رد کرتی ہے، فرماتی ہیں کہ میں نے رسول اللہ ﷺ کو اپنی مرضی سے ہنستے ہوئے کبھی نہ دیکھا (صحیح البخاری، کتاب الادب، باب التبسم والضحک، جلد ۴ صفحہ ۱۲۵، رقم الحدیث: ۶۰۹۲)۔ میں کہوں گا کہ حضرت سیدہ عائشہ صدیقہ رضی اللہ عنہا آپ کو دیکھنے سے انکار کر رہی ہیں لیکن حضرت ابو ہریرہ رضی اللہ عنہ وہ کچھ بتا رہے ہیں جو انہوں نے خود دیکھا اور جو کسی چیز کو ثابت کر رہا ہوتا ہے وہ انکار کرنے والے سے پہلے ہوتا ہے۔

اسی سلسلے میں حضرت ابن حجر رحمہ اللہ کا فیصلہ سنئے، فرماتے ہیں کہ ایسی کئی حدیثوں سے پتہ چلتا ہے کہ حضور ﷺ عام طور پر تبسم سے آگے نہ جاتے اور کبھی کبھار آگے بڑھتے اور ہنس لیتے۔ اب بھی اگر تمہیں میری بتائی ہوئی روایتیں کافی نہیں لگتیں تو پھر مواہب اور شفاء دیکھو شاید تمہارے لئے کافی ہوں۔

یاد رہے کہ یہ شعراں شعروں میں سے چوتھا ہے جس پر رسول اللہ ﷺ جھومے تھے چنانچہ قصیدہ پڑھنے والے پر لازم ہے کہ اسے تین پانچ یا مثلاً سات دفعہ دہرائے۔



شعر (۵۵)

كَالزَّهْرِ فِي تَرْفٍ وَالْبَحْرِ فِي شَرْفٍ
وَالْبَحْرِ فِي كَرَمٍ وَالذَّهْرِ فِي هِمَمٍ

(ترجمہ:) ”کیونکہ یہ نبی مکرم ﷺ خوشحالی میں گلاب کے پھول کی طرح ہوتے، شان و شوکت میں گویا چودھویں رات کا چاند ہوتے، عطائیں فرماتے تو سمندر لگتے اور ان کی دینی و اخلاقی ہمتوں کا اثر زمانے بھر میں تھا (تو گویا زمانہ تھے)۔“

گذشتہ شعر کے بعد حضرت ناظم رحمہ اللہ ترقی کرتے ہوئے آپ کی پیدائش اور اخلاق کی تفصیل بتاتے ہوئے فرماتے ہیں: ”كَالزَّهْرِ فِي تَرْفٍ الْخ“۔

پہلے مصرعہ میں آپ کی پیدائش اور صورت مبارکہ کا ذکر ہے تو دوسرے میں آپ کے بہتر اخلاق اور سیرت کا ذکر ہے۔

تحقیق الفاظ

”كَالزَّهْرِ“ ظرف مستقر ہے اور اس بناء پر مجرور ہے کہ ”نبی“ کی صفت کے بعد صفت ہے یا اس وجہ سے مرفوع ہے کہ یہ محذوف مبتداء کی خبر ہے، اصل یوں ہے: ”هُوَ كَالزَّهْرِ“ کاف تشبیہ کا ہے اور ”زَّهْر“ (زاء پر زبر) سبز پودے کی کلی ہوتا ہے کہتے ہیں کہ اس سے مراد صرف زرد رنگ ہے لیکن صحیح یہ ہے کہ یہ عام ہے، اس کی جمع ”أَزْهَار“ اور ”أَزَاهِر“ ہے اور ”زَّهْر“ انتہائی روشنی والی چیز کو کہتے ہیں جو چراغ کی طرح چمکتی ہو لیکن یہاں پہلا معنی مراد ہے کیونکہ عبادت کا ماحول ایسا ہے۔

”فِي تَرْفٍ“ کا تعلق اس تشبیہ سے ہے جو ”کاف“ سے سمجھ آ رہی ہے چنانچہ یہ تشبیہ دینے کی وجہ اور سبب ہے۔ ”تَرْف“ جلد کی نرمی اور ملائم ہونے کو کہتے ہیں۔ بہتر تو یہ تھا کہ ”زَّهْر“ سے مراد گلاب کا پھول ہوتا کیونکہ یہ پھولوں کا سردار گنا جاتا ہے جس کے ساتھ خوشبو بھی ہوتی ہے اور جلدی نرمی کی نزاکت مجاز کے طریقے پر ہے اور یہاں لفظ عام کو ذکر کر کے خاص معنی مراد لیا گیا ہے اور دونوں صورتوں میں تشبیہ مقلوب یعنی الٹی ہے ورنہ کوئی شے رسول اکرم ﷺ سے بڑھ کر زیادہ میٹھی، نرم، پاکیزہ اور پاک نہیں ہو سکتی اور اگر تشبیہ حقیقی ہو تو لازم آئے گا کہ حضور ﷺ کی نزاکت گلاب سے کم درجہ ہو کیونکہ تشبیہ کا یہ قاعدہ ہے کہ جس چیز کو تشبیہ دی جاتی ہے وہ کم درجہ ہوتا ہے اور یہاں وہ صحیح

نہیں اور صحیح ہو بھی کیسے سکتی ہے؟

پھول کے سفید سرخ اور زرد ہونے کی وجہ

جیسا کہ مواہب لدنیہ میں ابن عساکر کی روایت ملتی ہے کہ حضور ﷺ نے فرمایا: سفید پھول معراج کی رات میرے پسینے سے پیدا ہوا، سرخ حضرت جبریل علیہ السلام کے پسینے سے اور زرد براق کے پسینے سے پیدا ہوا۔ (تاریخ مدینہ دمشق، حرف العین، الحسن بن عبدالواحد القزوی، جلد ۱۳ صفحہ ۱۳۱)

”الْبَدْرِ“ (زیر سے) کاف کے مدخول پر معطوف ہے ”الْبَدْرِ“ چودھویں رات کا چاند ہوتا

ہے۔ ”فِي شَرَفٍ“ کا ”فِي تَرَفٍ“ پر عطف ہے۔

یہاں یہ نہ کہا جائے یوں تو پھر یہ عطف ویسا ہوگا جو ایک حرف کے ساتھ دو چیزوں کا عطف، دو مختلف عمل کرنے والوں کا دو معمولوں پر ہوتا ہے اور یہ غلط ہوتا ہے کیونکہ ہم کہتے ہیں کہ ہم یہاں عامل مختلف نہیں مانتے اور پھر مجرور بھی تو مقدم جیسے نظر آ رہا ہے اور ”الشَّرَفِ“ بمعنی بلندی ہے لیکن مراد مرتبہ کی بلندی ہے، جگہ کی بلندی نہیں تو اس پر غور کر لو۔ پھر یہ بھی دیکھو کہ ”بدر“ حضور ﷺ کے مبارک ناموں میں سے ہے اور آپ کی تشبیہ کا ”بدر“ سے واسطہ پڑا ہے کیونکہ عربوں کے ہاں چاند اور سورج کے ساتھ تشبیہ دینا، ”بدر“ کے ساتھ تشبیہ دینے سے زیادہ بہتر گنا جاتا ہے۔ رہی پہلی تشبیہ تو وہ اس وجہ سے کہ بدر جب پورا ہوتا ہے تو قمر سے الگ طرح کا ہوتا ہے، رہی دوسری تشبیہ تو جیسے پہلے بتایا جا چکا ہے کہ ”بدر“ پوری زمین پر اپنی روشنی پھیلا دیتا ہے، دیکھنے والے کو بھلا لگتا ہے اور اسے دیکھنا ممکن ہوتا ہے جبکہ سورج ایسا نہیں ہوتا کیونکہ وہ آنکھوں کو چندھیا دیتا ہے اور اس کی طرف دیکھنا ممکن نہیں ہوتا، کسی نے کیا اچھا کہا ہے:

كَالْبَدْرِ وَالْكَافِ اِنْ اَنْصَفَتْ زَائِدَةً

فَاَلَا تَظُنُّنَ فِيهِ الْكَافَ لِلشَّبهِ

”وہ بدر جیسا ہے اور کاف کو اگر زائدہ بناؤ تو پھر اس میں کاف کو تشبیہ کیلئے نہ سمجھو۔“

حاصل کلام یہ ہے کہ حضور ﷺ کے بارے میں علماء کہتے ہیں کہ ان کے حق میں آنے والی تشبیہیں صرف عربوں کی عادت کے مطابق ہیں ورنہ یہ نئی نئی تشبیہیں آپ کی پیدائش اور خلق کے بارے میں خوبیوں کے برابر نہیں ہیں۔

”وَالْبَحْرِ“ (زیر کے ساتھ) کا عطف قریبی لفظ ”الْبَدْرِ“ پر ہے یاد دہانہ لفظ ”الزهر“

پر ہے، یعنی رسول اللہ ﷺ فائدہ مند چیزیں دینے میں سمندر جیسے ہیں کیونکہ جس طرح نمکین سمندر انسان کو موتی، مرجان اور کئی قسم کے جواہرات دیتا ہے ویسے ہی رسول اللہ ﷺ ہیں اور اسی بناء پر ناظم نے تشبیہ کی وجہ سے ”کرم“ فرمایا ہے۔

کرم، جو د اور سخا میں فرق

کرم، جو د اور سخا میں فرق یہ ہے کہ جو کوئی چیز دے، وہ سخی ہوتا ہے، جو زیادہ دیدے جو د ہوتا ہے اور جو سارا کچھ دیدے وہ کریم ہوتا ہے اور حضور ﷺ کا کرم بہت سی حدیثوں اور روایتوں سے ثابت ہوتا ہے جن میں سے حضرت انس رضی اللہ عنہ کی مرفوع حدیث میں ہے کہ ”میں بنو آدم میں سب سے زیادہ سخی ہوں“ (مشکوٰۃ المصابیح، کتاب العلم، الفصل الثالث، جلد ۱ صفحہ ۶۸، رقم الحدیث: ۲۵۹)۔

مسلم کی ایک روایت میں ہے کہ رسول اللہ ﷺ سے جو چیز بھی مانگی گئی تو آپ نے عطا فرمادی چنانچہ ایک آدمی حاضر ہوا تو آپ نے دو پہاڑوں کے درمیان سے اسے ایک بکری عطا فرمادی، اسی دوران وہ اپنی قوم کے پاس جا کر کہنے لگا کہ اے قوم! اسلام لے آؤ کیونکہ محمد ﷺ اتنی زیادہ عطا فرماتے ہیں کہ محتاجی نہیں رہتی۔

(صحیح مسلم، کتاب الفصائل، باب مسائل رسول اللہ ﷺ، صفحہ ۱۲۶۵، رقم الحدیث: ۲۳۱۲)

ایک روایت ملتی ہے کہ حضور ﷺ نے حنین کے دن حضرت صفوان رضی اللہ عنہ کو اونٹوں اور چوپایوں سے بھری وادی دے دی (بل الہدیٰ والرشاد، کتاب فی غزوة الطائف، باب اعطاء ﷺ المؤمنة، جلد ۵ صفحہ ۳۹۸) ابن جابر کا بھلا ہوا کیا خوب کہہ گئے:

هَذَا الَّذِي لَا يَتَّقِي فَقْرًا إِذَا
يُعْطَىٰ وَلَوْ كَفَرَ الْأَنَامُ وَدَامُوا
وَأَدِمَّنَ الْأَنْعَامِ أَعْطَىٰ أَمَلًا
فَتَحَيَّرَتْ لِعَطَائِهِ الْأَوْهَامُ

”یہ شخص اپنی محتاجی کی فکر نہیں کرتا، عطا کرتا جاتا ہے، خواہ لوگ انکار کرتے چلے جائیں،

اونٹوں سے بھری وادی ایک امید رکھنے والے کو دی تو آپ کی اس عطاء پر خیال بھی حیران

رہ گئے۔“

بخاری شریف کی ایک روایت ہے کہ حضرت انس رضی اللہ عنہ نے بتایا: رسول اللہ ﷺ نے

حضرت عباس رضی اللہ عنہ کو اتنا سونا اور چاندی دیئے کہ وہ اٹھانہ سکے۔ (الشفاء بتعریف حقوق المصطفیٰ، فعل واما الجود الکرم والسخاء، جلد ۱ صفحہ ۱۱۲) زیادہ تفصیل بڑی کتابوں میں ہے۔

”دَہْر“ کی تحقیق

”وَالدَّهْر“ (زیر کے ساتھ) کا عطف قریب یا دور والے لفظ پر ہے اور ”دَہْر“ زمانے کو کہتے ہیں اور ایک قول کی بناء پر اس کا معنی ”اَبَد“ ہے اور یہ بھی کہتے ہیں کہ اس کا معنی دنیا کی مدت ہے اور یہ لمبے وقت کو بھی کہتے ہیں، یہ بھی کہتے ہیں کہ یہ مدت ہزار سال ہے۔ ”دَہْر“ سے متعلق چیزوں کا بیان آگے آ رہا ہے تو اس پر غور کر لو۔

”وَالهِمَم“ ہمت کو کہتے ہیں جس کا معنی پوری توجہ کا ارادہ کرنا ہے یعنی جیسے لمبا دور اور زمانہ آدمی کو متوجہ کر کے اسے اس کی مرضی کے مطابق دیتا اور پورا سنبھالتا ہے یونہی نبی کریم ﷺ ہیں۔ اس شعر میں حضرت حسان بن ثابت رضی اللہ عنہ کے اس قول کو درج کیا گیا ہے جو انہوں نے آپ کی مدح میں لکھا ہے:

لَهُ هَمٌّ لَا مُنْتَهَى لِكِبَارِهَا

وَهَمَّتْهُ الصُّغْرَىٰ أَجَلٌ مِنَ الدَّهْرِ

”ان کی ہمت کے کام اتنے ہیں کہ بڑی ہمتوں کا شمار ہی نہیں، ان کی چھوٹی ہمت پوری دنیا سے بڑھ کر ہے۔“



شعر (۵۶)

كَأَنَّهُ وَهُوَ فَرْدٌ فِي جَلَالَتِهِ
فِي عَسْكَرٍ حِينَ تَلْقَاهُ وَفِي حَشَمٍ

(ترجمہ:) ”جب بھی تم ان سے بات چیت کرو گے تو جنگی لشکر اور جانثار غلاموں میں یوں دکھائی دیں گے جیسے اپنے دبدبے میں بے مثال ہیں۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب حضور ﷺ کی خندہ پیشانی اور بے تحاشا کرم بتا دیا تو گھٹیا لوگوں کے دل میں خیال آیا کہ یہ ان کے اپنی قوم کے ڈر کی وجہ سے ہوا ہوگا تو ناظم نے اس کا رد کرتے ہوئے فرمایا: ”كَأَنَّهُ وَهُوَ فَرْدٌ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”كَأَنَّ“ کا حرف تشبیہ کیلئے ہے، ظن کیلئے نہیں اور دونوں ضمیریں حضور ﷺ کی طرف لوٹتی ہیں، ”وَهُوَ“ میں واو حال کیلئے ہے، ”الْفَرْدُ“ سے مراد مفرد ہے، معنی یہ بنا کہ ”جب وہ مفرد کی حالت میں ہوں اور کوئی دوسرا ساتھ شامل نہ ہو“۔

”فِي جَلَالَتِهِ“ اس تشبیہ سے متعلق ہے جو ”كَأَنَّ“ سے سمجھ آ رہی ہے اور یہ تشبیہ کے سبب کا بیان ہے۔ ”الْجَلَالَةُ“ کا معنی دبدبہ اور بڑائی ہے۔

کبیر، جلیل اور عظیم بولنے میں فرق

کہتے ہیں کہ ”الکبیر“ کا لفظ ذات کے بارے میں ”جلیل“ کا لفظ صفات کے بارے میں اور ”عظیم“ کا لفظ دونوں کے لئے بولا جاتا ہے۔

”فِي عَسْكَرٍ“ ظرف مستقر ہے جو ”كَأَنَّ“ کی خبر ہے یعنی نبی کریم ﷺ اپنے مکمل ٹھوس پن اور بہادری میں یوں ہیں جیسے لشکر میں تنہا ہوں کیونکہ جس کا لشکر ہو اور وہ ان کے درمیان کھڑا ہو تو اس کے لئے بہادر ہونا اور عام طور پر مضبوط ہونا بہت ضروری ہے۔

”حِينَ تَلْقَاهُ“ یہ تشبیہ کی ظرف ہے اور ”تَلْقَاهُ“، ”مَلَاقَاةُ“ سے ہے جس کا معنی پہنچنا ہے، یہ ہر ایسے شخص سے خطاب کا نام ہے جو خطاب کے لائق ہو۔

یہاں یہ نہ کہا جائے کہ یہ معاملہ تو بڑا کمزور سا بنے گا کیونکہ اس سے یہ لازم آتا ہے کہ آپ بہادر

ہوں گے اور مؤمن لوگوں میں گھبرا پیدا کر دینے والے ہوں گے حالانکہ آپ مؤمنوں پر رحمت کا برتاؤ فرمانے والے ہیں کیونکہ ہم کہیں گے کہ یہ تشبیہ اس موقع کی ہے جب آپ کسی اور کے لشکر میں ہوں اور دوسری بات یہ ہے کہ آپ کے بات چیت کے دوران بہادر ہونے کا یہ مطلب نہیں کہ آپ مؤمنوں ہی کے سامنے بہادری دکھاتے ہوں گے اور ”تَلْقَاهُ“ کے لفظ کو مؤنث شمار کر کے اس کی ضمیر ”جماعۃ الاعداء“ (دشمنوں کی جماعت) کی طرف لوٹانا کمزوری بات ہے جسے ہر ایک جانتا ہے۔

”وَفِي حَشَمٍ“ عطف تفسیر اور بیان ہے اور لشکر کی تاکید ہے البتہ کچھ نسخوں میں یہ لفظ ”فِي بُهْمٍ“ (باء پر پیش) ہے جو ”بُهْمَهُ“ کی جمع ہے یہ اس گھوڑ سوار کو کہتے ہیں جس کا یہ پتہ نہ چل سکے کہ وہ کدھر سے آیا ہے اور ”عَسْكَرٍ“ کے مقابلہ میں ”عَسْكَرٍ“ سے مراد پیدل لشکر لیا جائے گا۔ یہ نسخہ پہلے نسخہ کے مقابلے میں زیادہ اچھا ہے کیونکہ بنیاد رکھ دینا تاکید سے بہتر ہے۔

شعر کا حاصل معنی یہ ہوگا: گویا کہ جب آپ تن تنہا ہوں اور اپنی صفتوں کی عظمت میں ثابت ہوں اور آپ اپنی پوری ہیبت و رعب اور شاندار شان و شوکت میں بڑے اور گھنے لشکر کے درمیان میں ہوں تو اے مخاطب! اگر تو ان سے عین اس وقت بات چیت کرے تو تو انہیں اس لشکر میں بہادر دیکھے گا۔

آقا کے سامنے ابو جہل کا خوف

آپ کی یہ بھی ایک دلیری اور بہادری تھی کہ ایک یتیم بچے کے بارے میں ابو جہل کو وصیت کی گئی تھی چنانچہ وہ یتیم ننگے جسم اس کے پاس گیا اور اپنا مال مانگا لیکن اس نے اسے جھڑک دیا اور مال نہ دیا جس پر وہ یتیم مایوس ہو گیا چنانچہ قریش کے بڑوں نے اسے ٹھٹھے کے طور پر کہا کہ محمد سے جا کر سفارش کیلئے کہو! لیکن یتیم کو اس بات کا پتہ نہ چل سکا چنانچہ وہ حضور ﷺ کی خدمت میں حاضر ہوا اور سفارش کی درخواست کی۔ آپ کی مبارک عادت تھی کہ کسی ضرورت مند کو ٹالا نہیں کرتے تھے چنانچہ آپ اس کے ساتھ ابو جہل کے پاس پہنچے وہ اٹھا اور آپ کو مرحبا کہا اور اس یتیم کو اس کا مال واپس کر دیا جس پر قریش نے اسے یہ طعنہ دیا کہ تم صابی ہو گئے ہو (اپنا دین چھوڑ بیٹھے ہو) ابو جہل نے کہا: اللہ کی قسم! میں نے اپنا دین نہیں چھوڑا لیکن میں نے ان کی دہنی اور بائیں طرف ایک ایک نیزہ دیکھا تو میں اس بات سے خوف زدہ ہو گیا کہ اگر میں نے اس کی بات نہ مانی تو یہ مجھے نیزہ مار دے گا۔ شیخ زادہ نے یہ واقعہ سورہ ماعون میں لکھا ہے۔

یونہی حدیث کی کتابوں میں آتا ہے کہ مکہ میں ایک طاقتور پہلوان تھا جو بہترین کشتی میں مشہور

تھا اُسے رکانہ کہا جاتا تھا، لوگ دور کے شہروں سے اس کے ہاں کشتی لڑنے آتے تو وہ انہیں پچھاڑ دیتا تھا۔ اسی دوران ایک دن وہ مکہ کی کسی گھاٹی میں تھا کہ یکا یک حضور ﷺ اسے ملے اور فرمایا کہ اے رکانہ! کیا تم اللہ سے ڈرتے ہوئے وہ بات نہیں مانو گے جس کی طرف میں تجھے بلا رہا ہوں؟ اس پر اس نے کہا کہ اے محمد! کیا تمہارے پاس کوئی ایسا گواہ ہے جو یہ بتا دے کہ تم سچے ہو؟ اس پر آپ نے فرمایا: دیکھو! اگر میں تمہیں کشتی میں پچھاڑ دوں تو کیا اللہ اور رسول پر ایمان لے آؤ گے؟ اس نے کہا کہ ہاں لے آؤں گا۔ آپ نے فرمایا: تو پھر کشتی کیلئے تیار ہو جاؤ، اس نے کہا کہ میں تیار ہوں۔

حضور ﷺ نے اس کے قریب ہو کر اسے پکڑا اور پچھاڑ کر رکھ دیا۔ اس پر رکانہ حیران رہ گیا اور اس نے دوبارہ کشتی لڑنے کو کہا تو آپ نے اسے دوسری بلکہ تیسری بار بھی پچھاڑ دیا جس پر رکانہ حیرانی میں اٹھ کر کہنے لگا کہ آپ نے تو مجھے حیران کر دیا ہے۔
یہ واقعہ امام حاکم نے اپنی مستدرک میں بتایا ہے۔



شعر (۵۷)

كَأَنَّمَا اللُّوْلُو الْمَكْنُونُ فِي صَدْفٍ

مِّنْ مَّعْدِنِي مَنْطِقٍ مِّنْهُ وَمُبْتَسِمٍ

(ترجمہ:) ”جب آپ گفتگو کے دوران تبسم فرماتے تو دانت مبارک یوں چمکتے تھے جیسے

سیپ میں محفوظ موتی ہوتا ہے۔“

جب پہلے شعر سے گھٹیا جاہل اور ہارمانے والے لوگوں کو یہ وہم ہو سکتا ہے کہ حضور صلی اللہ علیہ وسلم (معاذ اللہ) سخت دل تیوری چڑھانے والے اور کرخت آواز سے بولنے والے ہیں تو حضرت ناظم رحمہ اللہ اسے رد کرتے ہوئے یوں فرما رہے ہیں: ”كَأَنَّمَا اللُّوْلُو الْمَكْنُونُ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”كَأَنَّ“ حرف تشبیہ ہے اور ”مَا“ اس کا عمل روک رہا ہے۔ ”اللؤلؤ“ سے مراد سفید موتی ہے اسے سفید موتی اس بناء پر کہا جاتا ہے کہ یہ چمکتا ہے۔ یہ لفظ مبتداء ہے اور اس کی خبر ”مِنْ مَّعْدِنِي مَنْطِقٍ“ ہے یعنی نکلنے والا اور بولنے کی کان سے حاصل ہونے والا موتی۔

”المکنون“ (پیش سے) ”لؤلؤ“ کی صفت ہے جس کا معنی چھپا ہوا ہے اور ”المصون“ کا معنی محفوظ ہے۔ ”فِي صَدْفٍ“ ”مکنون“ سے متعلق ہے تاہم اسے مبتداء بنانا بہت دور کی بات ہوگی جیسے معلوم ہی ہے البتہ ”اللؤلؤ“ کو مبتداء محذوف کی خبر بنانا اور ”مِنْ مَّعْدِنِي“ کو ”صَدْفٍ“ کی یوں صفت بنانا کہ کوئی یوں کہے: ”گویا آپ کا کلام ایسا موتی ہے جو سیپ میں بند ہے جو دو طرح کی کانوں سے نکلتا ہے“ تو یہ مانا جاسکتا ہے اور ظاہر ہے جو معلوم ہی ہے تو اس پر غور کر لو۔

سپی کیا ہوتی ہے؟

”الصدف“، ”اللؤلؤ“ کا گویا برتن ہوتا ہے چنانچہ حیاتی نے شرح التحفہ میں لکھا ہے کہ ”صدف“ سمندری جانور ہے جو عام طور پر ہند اور چین کے علاقے میں پایا جاتا ہے اور جب بارشوں کا مہینہ آتا ہے تو سمندر کی تہہ پر آ جاتا ہے اپنا منہ کھول کر آسمان کی طرف کر لیتا ہے اور جب اس کے منہ میں اس وقت بارش کا ایک قطرہ گرتا ہے تو وہ اس کے پیٹ میں جا کر بہت قیمتی موتی بن جاتا ہے جسے ”دُرّ یتیم“ اور ”دُرّ فرید“ کہتے ہیں اور جب اس کے منہ میں دو قطرے گرتے ہیں تو

وہ اس کے پیٹ میں دو موتی بنے ہوتے ہیں جنہیں ”اخوان“ کہتے ہیں، یہ زیادہ قیمتی نہیں ہوتے بلکہ کم قیمت ہوتے ہیں اور جب اس کے منہ میں تین قطرے گرتے ہیں تو تین موتی بنے ہوتے ہیں، چار ہوں تو چار اور یونہی زیادہ ہوں تو زیادہ لیکن جوں جوں قطرے بڑھتے جاتے ہیں، زیادہ قیمتی نہیں رہتے۔

پھر یاد رکھو کہ پہلے پہل تو یہ صدف جانور ہوتا ہے اور جب اس کے منہ میں موتی بن جاتا ہے تو سمندر کی گہرائی میں جا کر یوں جڑ پکڑ لیتا ہے جیسے درخت جڑ پکڑتا ہے اور پھر کسی طرف ہلتا نہیں۔ (انتہی) اس مصرعہ میں استعارہ ہے کہ حضور ﷺ کے بہت معنوں والے لفظوں اور قطار در قطار دانتوں کو سیپ میں پڑے موتی سے یوں تشبیہ دی کہ یہ بے عیب اور خوش کرنے والا ہوتا ہے، پھر لؤلؤ کو آپ کے کلام اور پروئے ہوئے مبارک دانتوں سے تشبیہ دی چنانچہ موتی کا ذکر کر کے آپ کی کلام اور اگلے دانت مراد لئے گئے۔

”الْمَعْدِن“ (دال پر زیر کہ یہی فصیح ہے) سے مراد عدن کی جگہ جس کا معنی ٹھہرنا ہوتا ہے۔
”مَعْدِنِي“ تشبیہ کا صیغہ ہے ”ن“ اضافت کی وجہ سے گر گیا۔

”المنطق“ اور ”المبتسم“ یا تو دونوں مصدریں ہیں تو اضافت لازمی ہوگی اور ”معدن للمنطق“ یعنی بولنے کی جگہ یہ دل ہوتا ہے کیونکہ اس سے مقصد کی بات ظاہر ہوتی ہے۔
یہ نہ کہا جائے کہ کلام تو زبان سے ہوتی ہے نہ کہ دل سے کیونکہ ہم کہتے ہیں کہ درحقیقت کلام دل میں ہوتی ہے، زبان میں نہیں ہوتی، زبان تو دل کا پتہ بتاتی اور اس سے نکلی بات ظاہر کرتی ہے جیسے انھل کے اس قول سے پتہ چلتا ہے:

إِنَّ الْكَلَامَ لَفِي الْفُؤَادِ وَإِنَّمَا

جُعِلَ اللِّسَانُ عَلَى الْفُؤَادِ دَلِيلًا

”کلام تو یقیناً دل ہی میں ہوتی ہے لیکن زبان کو دل کا صرف پتہ دینے کیلئے بنایا گیا ہے۔“

خوشی کا مقام منہ ہی ہے کیونکہ اس سے سارے اور اگلے دانت دکھائی دیتے ہیں۔“

یا ”مَعْدِن“ اور ”مُبْتَسِم“ دونوں اسم مکان ہیں تو پھر واضح ہے کہ یہاں اضافت بیانیہ ہوگی۔

حاصل معنی یہ ہے کہ حضور ﷺ انتہائی ہنس مکھ اور نازک مزاج تھے، سخت دل نہ تھے جیسے سچے گواہ قرآن سے پتہ چلتا ہے۔ پھر آپ کی کلام اور دانت مبارک ایسے خوبصورت تھے جیسے بند موتی

اور آپ کا منہ محفوظ کلام کرنے میں ایسا سچا تھا جیسے لوگوں میں سچائی مانی ہوئی ہے۔
 صاحب "زبدہ" نے زبدہ میں لکھا ہے کہ علامہ محلّی کے مطابق ایک شخص نے بتایا کہ کسی نے خواب
 میں حضرت صدیق رضی اللہ عنہ کو دیکھا کہ وہ نبی کریم ﷺ کی مدح سرائی میں یہ اور اس سے پہلا شعر
 پڑھ رہے ہیں۔



شعر (۵۸)

لَا طِيبَ يَعْدِلُ تُرْبًا ضَمَّ أَعْظَمَهُ
طُوبَى لِمُنْتَشِقٍ مِّنْهُ وَمُلْتَمِمْ

(ترجمہ:) ”دونوں جہان میں ایسی کوئی خوشبو نہیں جو اس پاک مٹی میں ہے جو حضور ﷺ کے جسمِ انور سے لگی ہوئی ہے اس کا مزہ وہی جانتا ہے جو اسے سونگھے اور چومے۔“

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ جب حضور ﷺ کی زندگی میں پائے جانے والے پیدائش، اخلاص اور مرتبہ میں بلندی جیسے ظاہری اور باطنی کمالات کی طرف اشارہ فرما چکے تو اب یہ اشارہ کرنا چاہتے ہیں کہ آپ وصال مبارک کے بعد بھی ساری مخلوق سے مرتبوں میں بڑھ کر ہیں چنانچہ فرمایا: ”طِيبَ يَعْدِلُ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

حرف ”لا“ جنس سے حکم کی نفی کیلئے ہے۔ ”الطيب“ اس چیز کا نام ہے جس سے خوشبو لگا جاتی ہے۔

”يَعْدِلُ“ یعنی برابر چنانچہ کہا جاتا ہے: ”فلانٌ عدیل فلان“ یعنی اس کے برابر ہے۔ ”يعدل“ کا جملہ ”لا“ کی خبر ہے اور اس کا اسم ”طِيبٌ“ ہے۔ معنی یہ ہے کہ کوئی خوشبو برابری نہیں کر سکتی۔

”تُرب“ (تاء پر پیش اور راء پر جزم) ”تُرَاب“ کے لفظ میں ایک لغت ہے یا ”تُربت“ (قبر) کے معنی میں ہے۔

”ضَمَّ“ کا معنی ہے: چمٹ گیا اور چھو لیا۔ یہ جملہ ”تُرْبًا“ کی صفت ہے۔

”الْأَعْظَمُ“، ”عِظَامُ“ کی جمع ہے جس سے مراد آپ کے سارے اعضاءِ مبارکہ ہیں۔ صرف انہیں ذکر کرنے کا مقصد یہ بتانا ہے کہ سارے اعضاء کا دار و مدار انہی پر ہے۔ اس کی ضمیر حضور ﷺ کی طرف جاتی ہے۔

حضرت ناظم رحمہ اللہ کنایہ کے طور پر حضور ﷺ کے بدن مبارک کی خوشبو بتانا چاہتے ہیں کیونکہ صاف طریقے سے کہنے کی بجائے پردے میں بات زیادہ اچھی لگتی ہے چنانچہ انہوں نے آپ کے

روضہ پاک کی مٹی کو یوں سراہا کہ وہ بہت پیاری ہے اور اس جیسی کوئی خوشبو نہیں۔

آپ نے حضور ﷺ کی ذات پاک کو کنائے کے طور پر سراہا ہے چنانچہ اس خاک پاک نے آپ کے قریب ہونے ہی سے وہ خوشبولی ہے کیونکہ آپ کا جسم انور خوشبودار تھا جیسے حضرت انس رضی اللہ عنہ بتاتے ہیں کہ میں نے رسول اکرم ﷺ سے آنے والی خوشبو سے بڑھ کر کستوری اور عنبر کی

خوشبو بھی نہیں سونگھی۔ (صحیح مسلم، کتاب الفضائل، باب طیب رائحة النبی ﷺ، صفحہ ۱۲۷۲، رقم الحدیث: ۲۳۳۰)

”طوبی“ خوشبو کے معنی میں ہے اس کا معنی نیکی اور بھلائی بھی ہے جیسے قاموس میں ہے جبکہ اوروں نے کہا ہے کہ اس کا معنی ”خوشی“ اور ”آنکھوں کی ٹھنڈک“ ہے۔ ضحاک اس کا معنی ”عطیہ“ اور عکرمہ ”نعمت“ بتاتے ہیں پھر جنت میں ایک درخت ہے اسے بھی طوبی کہتے ہیں اور کبھی جنت مراد لی جاتی ہے۔ ایک حدیث میں آیا ہے کہ ”شام کیلئے خوشی کی بات ہے کہ فرشتے اس پر اپنے پر پھیلانے رہتے ہیں“ (سنن ترمذی، کتاب المناقب عن رسول اللہ، باب فی فضل الشام والیسین، جلد ۵ صفحہ ۲۹۷، رقم الحدیث: ۳۹۸۰) لیکن یہاں پر ”طوبی“ یا تو ”تربا“ کی صفت ہے یعنی وہ مٹی جسے طوبی کہا گیا ہے یا مبتداء ہے جس کی خبر ”منتشق“ ہے اس پر غور کرنا چاہیے۔

”مُنْتَشِقٌ“، ”انتشاق“ سے اسمِ فاعل ہے جس کا معنی سونگھنا ہے، مطلب یہ کہ خوشی اسے ہوگی جو اس خاک مبارک کو سونگھ لے۔

”مِنْهُ“ کا تعلق ”منتشق“ سے ہے۔ ”مُلْتَمِّمٌ“ کا ”منتشق“ پر عطف ہے جو ”التثام“ سے

ہے جس کا معنی چومنا ہے۔

یہ شعر سیدہ طیبہ طاہرہ فاطمہ رضی اللہ عنہا کے مبارک مرثیہ سے لیا گیا ہے، فرماتی ہیں:

مَاذَا عَلِيٌّ مَنْ شَمَّ تُرْبَةَ أَحْمَدِ

أَنْ لَا يَشُمَّ مَدَى الزَّمَانِ غَوَالِيَا

صَبَّتْ عَلَيَّ مَصَائِبُ لَوْ أَنَّهَا

صَبَّتْ عَلَيَّ الْآيَامِ صِرْنَ لِيَالِيَا

”ایسے شخص کو کیا ہے جو سیدنا احمد مجتبیٰ ﷺ کی خاک مزار شریف کو سونگھ لیتا ہے تو وہ عرصہ

تک مہنگی خوشبو بھی نہیں سونگھتا۔

مجھ پر اس قدر مصیبتیں ٹوٹ پڑیں کہ اگر وہ دنوں پر ٹوٹ پڑیں تو وہ راتیں بن جائیں۔“

حضرتِ ناظمِ رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ مصنف نے اس شعر میں ان دو قسم کی خوشبوؤں کا ذکر کر دیا ہے جن میں ایک تو سونگھنے میں آتی ہے جس کی طرف انہوں نے ”منتشق“ کہہ کر اشارہ کیا ہے اور دوسری چونے سے تعلق رکھتی ہے جس کی طرف ”مُلْتِثِم“ کہہ کر اشارہ کیا ہے اور اس کی بنیاد یہ بتانا ہے کہ آپ کی پاکیزہ تربت حقیقۃً خوشبو کی تمام محسوس ہونے والی خوشبوؤں سے افضل ہے اور ایسا اس وجہ سے ہے کہ یا تو واقعہ یوں ہی ہے اسے وہی جان سکتا ہے جسے اس کا پتہ چل سکے یا مؤمن کے اعتقاد کے لحاظ سے ہے کیونکہ مؤمن آپ کی تربت کی خوشبو سونگھ کر کسی بھی خوشبو کو اس کے برابر نہیں سمجھتا۔

اگر تم کہو کہ اگر واقعی مراد یہ ہے کہ وہ خوشبو حقیقۃً واقعی ایسی ہی ہے تو پھر ہر ایک کو اس کا پتہ لگنا چاہیے تو اس کا جواب یہ ہے کہ اگر کسی مقام پر خوشبو موجود ہے تو یہ ضروری نہیں کہ اس معنوی چیز کو ہر ایک معلوم کر لے بلکہ اس کیلئے تو کچھ شرطیں ہیں اور رکاوٹیں دور کرنے کی ضرورت ہے پھر کسی کے معلوم نہ کرنے سے یہ لازم نہیں آتا کہ معلوم چیز کا وجود ہی نہیں دیکھئے کسی دلیل کے نہ ہونے سے مدلول کی نفی نہیں ہوتی، دیکھو زکام والا کستوری کی خوشبو کو معلوم نہیں کر سکتا جبکہ کستوری میں تو خوشبو ہوتی ہی ہے جو ختم نہیں ہوتی اور جب قبر کے حالات کا تعلق آخرت سے ہے تو پھر لازمی بات ہے کہ اسے اللہ کے وہی اولیاء کشف کے ذریعے معلوم کر سکتے ہیں جو اس کے قریبی ہیں اور جن سے پردے ہٹائے ہوتے ہیں کیونکہ آخرت کا سودا تو باقی ہے جبکہ دنیا کا سودا ختم ہونے والا ہے اور فانی باقی سے فائدہ نہیں اٹھا سکتا کیونکہ دونوں میں مقابلہ ہے اور جو شریعت کی تھوڑی بہت تصدیق کرتا ہے اسے معلوم ہے کہ آپ کی مبارک قبر شریف جنت کی کیاریوں میں ایک کیاری ہے اور جنت سے افضل ہے اور وہ یہ بھی جانتا ہے کہ آپ کی قبر انور کی خاک پاک کی خوشبو کے برابر کوئی بھی خوشبو نہیں کیونکہ وہ ایسے نازک و خوشبودار جسم مبارک سے لگی ہوئی ہے جو سب خوشبوؤں سے بڑھ کر ہے چنانچہ اسی بناء پر علماء نے فرمایا ہے کہ آپ کی تربت پاک بیت اللہ، مسجد اقصیٰ، عرش اور کرسی سے بھی افضل ہے۔

قبر انور کی زیارت کا شرعی مقام

یاد رہے کہ حضور ﷺ کی قبر انور کے بارے میں علماء کا اختلاف ہے کہ اس کی زیارت واجب ہے یا سنت چنانچہ کچھ مالکی حضرات فرماتے ہیں کہ واجب ہے اور اس پر عقلی اور نقلی دلیلیں بتاتے ہیں چنانچہ پہلی یہ کہ زیارت تعظیم کا نام ہے اور حضور ﷺ کی تعظیم واجب ہے تو پھر یہ زیارت بھی واجب

ہوئی۔ دوسری کیلئے حضور ﷺ کا یہ فرمان ملتا ہے کہ ”جو گنجائش ہونے پر بھی میری طرف نہیں آتا تو وہ مجھ پر ظلم کرتا ہے“ (احیاء علوم الدین، کتاب اسرار الحج، الباب الثانی فی ترتیب الاعمال الظاہرۃ، جلد ۱ صفحہ ۳۵۴)۔ ایک اور حدیث میں ہے کہ ”جو حج کر کے میری زیارت نہ کرے تو یقیناً وہ مجھ پر ظلم کر رہا ہوتا ہے“ (کنز العمال، کتاب الحج، باب زیارۃ قبر النبی من الکمال، جلد ۵ صفحہ ۵۲، رقم الحدیث: ۱۲۳۶۴)۔ یہ دلیل زیارت چھوڑنے کے حرام ہونے پر واضح ہے کیونکہ ظلم و جفاء ایک تکلیف ہے اور تکلیف کے حرام ہونے پر علماء کا اجماع ہے تو پھر زیارت واجب ہوگی کیونکہ ظلم و جفاء کو دور کرنا واجب ہے اور یہ زیارت ہی سے دور ہو سکتا ہے تو پھر یوں یہ واجب ہوگی جبکہ شافعی اور حنفی حضرات میں اکثر اسے سنت کہتے ہیں جیسے قاضی عیاض نے فرمایا ہے کہ یہ مسلمانوں کی سنتوں میں سے ایک سنت ہے جس پر علماء کا اجماع ہے جبکہ پہلے حدیثوں کی تاویل کی جاتی ہے۔ کتابوں میں اس کی تفصیل ملتی ہے۔



شعر (۵۹)

أَبَانَ مَوْلِدُهُ عَنِ طَيْبِ عُنْصُرِهِ
يَا طَيْبِ مُبْتَدَاءٍ مِّنْهُ وَهُخْتَمِ

(ترجمہ:) ”حضور طیبی ﷺ کے میلاد شریف نے تو آپ کے وجود مبارک کی پاکیزگی بتا دی

ہے لہذا لوگو! تم ان کی ولادت مبارکہ اور وصال شریف کی پاکیزگی کا ملاحظہ کر لو۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے پہلے شعر میں جب آپ کی آخرت، انتہاء کی شرافت اور نازک پن بتا

دیا تو گویا کسی نے پوچھا کہ آپ کی ابتداء کیسے ہوئی؟ جس پر آپ نے فرمایا: ”ابان مولدہ عن

طیب عنصرہ الخ۔“

تحقیق الفاظ

”أَبَانَ“ کا معنی ہے: ”اس نے ظاہر کیا اور واضح کیا۔“

”الْمَوْلِدُ“ (لام پر زیر) اسمِ زماں ہے اور یہ ”ابان“ کا فاعل ہے، مفعول محذوف ہے یعنی

”عَجَائِبَ كَثِيرَةً“ (بہت سے عجائبات)۔ ”ابان“ کا اسناد مجازی ہے۔ ”عن طیب“، ”أَبَانَ“

سے متعلق ہے۔

لفظ ”عَنْ“ کے کئی معنی

”عَنْ“ کا لفظ کبھی تو بدل کیلئے ہوتا ہے جیسے کسی شاعر نے کہا ہے:

جَزَى رَبُّهُ عَنِّي عَدِيَّ بَنِ حَاتِمِ .

”عدی کا پروردگار میری طرف سے عدی بن حاتم کو جزاء دے۔“

کبھی یہ بتاتا ہے کہ اس کا پچھلا لفظ پہلے کا سبب ہے جیسے تم کہو کہ ”فَعَلْتُ هَذَا عَنْ أَمْرِكَ“ یہ

کام میں نے تمہارے حکم کی وجہ سے کیا ہے، اور کبھی ”بَعْدُ“ کا معنی دیتا ہے جیسے فرمانِ الہی ہے:

”لَتَرْكَبَنَّ طَبَقًا عَنْ طَبَقٍ“ (سورۃ الانشاق، آیت: ۱۹) ”تم یقیناً ایک حال کے بعد دوسرے کی طرف

چڑھو گے“ اور یہاں اس کا معنی دوسرا ہے کیونکہ آپ کے وجود کی پاکیزگی آپ کے زمانے کے

عجائبات ظاہر کرنے کا سبب ہے جیسے ظاہر ہے چنانچہ معنی یہ ہو گا کہ اللہ تعالیٰ نے آپ کے میلاد

مبارک کے زمانہ میں آپ کے وجود مبارک کے سبب بہت سے عجائبات ظاہر فرمائے۔ ہم آگے چل

کر انشاء اللہ ان میں سے کچھ بتائیں گے۔

”طیب“ کا معنی معلوم ہی ہے اور ”الْعُنْصُر“ لغت عربیہ میں ”اصل“ کا معنی ویسے ہی دیتا ہے جیسے یونانی لغت میں ”اَسْطُقْس“ ہے اور ”طیب عنصرہ“ سے مراد حضور ﷺ کی پاکیزگی اور ان کا نامناسب چیزوں سے الگ تھلگ رہنا ہے جو عام طور پر بچوں کے ساتھ واقع ہوتی ہیں۔

یاء کا لفظ نداء کیلئے ہے جبکہ جسے آواز دی گئی وہ محذوف ہے یعنی اے عقلمندو! تعجب کی نظر سے آپ کی ابتدائی اور آخری پاکیزگی کو دیکھو۔ اس لئے ”مبتداً“ ہے اور ”مختتم“ مصدر کے معنی میں ہے اور یہ بھی ممکن ہے کہ دونوں اسم زمان ہوں۔

اگر تم پوچھو کہ ناظم نے آپ کی ابتدائی پاکیزگی کا ذکر اس شعر میں اور انتہائی کا ذکر اس سے پہلے والے شعر میں کر دیا ہے تو درمیانی پاکیزگی کا ذکر کیوں نہیں کیا تو میں کہوں گا کہ ناظم نے درمیانی پاکیزگی کا ذکر بھی پہلے شعروں میں کر دیا ہے جہاں آپ کی خَلْق اور خُلُق کی بزرگی کا ذکر کیا ہے اور پھر عربوں کا طریقہ ہے کہ چیز کے دو کنارے بتا دیتے ہیں لیکن وہ پوری کی پوری مراد ہوتی ہے جیسے اللہ کے اس فرمان میں ہے: ”وَسَبِّحُوْهُ بُكْرَةً وَّاَصِيْلًا“ (سورۃ الاحزاب آیت: ۴۲) اور ایسا کئی بار ہوتا ہے۔

عجائباتِ ولادت

یاد رہے کہ آپ کی ولادت مبارکہ اور آپ کی ابتدائی حالت کے دور کی بزرگیاں اور عجائبات جو لکھے ملتے ہیں، بہت زیادہ ہیں جن کا شمار ممکن نہیں چنانچہ حدیث کی کتابوں میں ملتا ہے کہ آپ کا پاکیزہ اور محمدی موتی جب سیدہ آمنہ قریشیہ رضی اللہ عنہا کے صدف شریف میں آ رہا تو عالم ملکوت اور جبروت میں آواز دے دی گئی کہ عالم قدس کی ہر طرف کو خوشبودار کرو اور اللہ کے قریبی فرشتوں (جو سچے اور صاف ستھرے ہیں) عبادتوں کے سجادے صاف ستھری جگہ پر بچھا دو کیونکہ چھپایا گیا نور سیدہ آمنہ رضی اللہ عنہا کے شکمِ اطہر میں جا چکا ہے جو بہت عقلمند اور محفوظ فخر والی ہیں۔

حضرت سہل بن عبد اللہ تستری رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ جب اللہ تعالیٰ نے رجب کے جمعہ کی رات سیدنا محمد ﷺ کو پیدا فرمانے کا ارادہ فرمایا تو اللہ تعالیٰ نے جنتوں کے خزانچی کو حکم فرمایا کہ جنتِ فردوس کو کھول دے اسی دوران کسی نے آسمانوں اور زمینوں میں اعلان کر دیا کہ وہ نور جو اب تک خزانے میں تھا اور جس سے ہادی نبی پیدا ہوں گے آج رات اپنی والدہ کے شکمِ اطہر میں آ ٹھہریں

گے اور وہیں ان کی تربیت ہوگی۔

کہتے ہیں کہ قریش ان دنوں قحط اور سخت تنگی میں تھے چنانچہ زمین سرسبز ہوگئی اور درختوں پر پھل لگ گئے اور جس سال آپ حمل شریف میں تشریف لائے تو اس کا نام ”عام الفتح والا بہتاج“ رکھ دیا گیا۔

ایک روایت یوں ہے: سیدہ آمنہ رضی اللہ عنہا فرماتی ہیں کہ پھر مجھے وہ تکلیف شروع ہوئی جو عام طور پر عورتوں کو ہوتی ہے اور معلوم نہیں تھا، مجھ میں لڑکا ہے یا لڑکی، میں گھر میں تنہا تھی جبکہ حضرت عبدالمطلب رضی اللہ عنہ طواف کر رہے تھے میں نے شور سنا اور ایک عظیم معاملہ دیکھا جس نے مجھ پر گھبراہٹ ڈال دی، پھر دیکھا کہ پرندے کا ایک سفید پر میرے دل کی جگہ پر لگا تو اس سے مجھ پر رعب ختم ہو گیا اور ساری تکلیفیں دور ہو گئیں۔ پھر غور سے دیکھا تو سفید رنگ کا شربت دیکھا جسے میں نے پی لیا، اس پر میں نور و نور ہو گئی۔

آپ فرماتی ہیں کہ میں نے ہوا میں کافی آدمی دیکھے جن کے ہاتھوں میں چاندی کی سوئیاں تھیں چنانچہ اللہ تعالیٰ نے میری آنکھوں کے آگے سے پردے دور کر دیئے اور میں نے ساری زمین پر نظر ڈالی، پھر تین تیار جھنڈے دیکھے جن میں سے ایک مشرق میں، دوسرا مغرب میں اور تیسرا کعبہ کی چھت پر گاڑ دیا گیا چنانچہ پھر مجھے دردِ زہ ہوئی تو میں نے محمد ﷺ کو جنم دے دیا، دیکھا تو آپ سجدہ میں تھے اور انگلی مبارک آسمان کی طرف یوں اٹھا رکھی تھی جیسے عاجزی و زاری والا اور گڑ گڑانے والا کرتا ہے۔ پھر دیکھا تو سفید رنگ کا ایک بادل نظر آیا جو آسمان سے اُتر آیا اور میری نظروں سے غائب ہو گیا۔

اسی دوران میں نے کوئی آواز سنی جو اعلان کر رہا تھا کہ اسے مشرقوں اور مغربوں میں پھرا سمندروں میں لے جاؤ کہ وہ خود ان کی زیارت کر لیں۔

یہ ایسا عجیب و غریب واقعہ ہے جو سمجھوں میں آنے کا نہیں۔ ایک عالم نے اس واقعے پر مستقل کتاب ”حسن النظام“ لکھی ہے تو جو دیکھنا چاہے اسے دیکھ لے۔

چوتھی فصل:

میلا دمطفے صلی علیہ وسلم

شعر (۶۰)

يَوْمَ تَفَرَّسَ فِيهِ الْفُرْسُ أَنَّهُمْ
قَدْ أُنذِرُوا بِمُحْلُولِ الْبُؤْسِ وَالنِّقَمِ

(ترجمہ:) ”ولادت مبارکہ کا دن ایسا تھا کہ جس میں فارسیوں (ایرانیوں) نے سمجھ لیا کہ

اب انہیں آنے والی تنکیوں اور سختیوں سے ڈرایا جا رہا ہے۔“

جب حضرت ناظم رحمہ اللہ نے پہلے شعر میں مفعول کو مقدر کیا (عجیب واقعات اور کئی نشانیاں) اور چونکہ یہ بات پوری طرح واضح نہ تھی تو اب ارادہ کیا ہے کہ ان میں سے کچھ کو پوری طرح کھول کر بتا دیا جائے چنانچہ فرمایا: ”یوم تفرس فیہ الفرس الخ“۔

تحقیق الفاظ

”یوم“، ”مَوْلِد“ سے بدل ہے، یوم سے مراد دن ہے اور کبھی کسی بھی وقت کیلئے بولا جاتا ہے

لیکن یہاں مراد دن ہی ہے کہ یہی مشہور ہے۔

یوم ولادت کا صحیح وقت

سب سے زیادہ صحیح روایت یہی ہے کہ آپ پیر کے دن پیدا ہوئے چنانچہ حضرت قتادہ رضی اللہ عنہ فرماتے ہیں کہ رسول اکرم صلی اللہ علیہ وسلم سے پیر کے دن کے بارے میں پوچھا گیا تو فرمایا: یہ وہ دن ہے کہ جس میں میں پیدا ہوا۔ (صحیح مسلم، کتاب الصیام، باب استحباب صیام ثلاثہ ایام، صفحہ ۵۹۰، رقم الحدیث: ۱۱۶۲)

پیر کے دن کی اہمیت

حضرت ابن عباس رضی اللہ عنہما بتاتے ہیں کہ رسول انور صلی اللہ علیہ وسلم پیر کے دن پیدا ہوئے، پیر ہی کے دن انہیں نبوت ملی، پیر ہی کو ہجرت فرمائی، پیر ہی کو مدینہ طیبہ میں داخل ہوئے، پیر ہی کے دن قبر انور میں سجائے گئے، پیر ہی کے دن مکہ فتح کیا اور پیر ہی کے دن ان پر سورہ مائدہ اتری۔

جس نے یہ کہا ہے کہ یہاں اس یوم سے مراد کوئی بھی وقت ہے تو اسے حدیث کی کتابوں کا پتہ

نہیں۔

”تَفَرَّسَ“ یعنی اس نے سوچا اور فراست سے جانا۔ ”فِرَاسَةٌ“ ایک ایسی قوت کا نام ہے جس کے ذریعے انسان نظر آنے والی نشانیوں کے ذریعے چھپی باتوں اور چیزوں کو جان لیتا ہے۔

”فِيهِ“ کا اسی سے تعلق ہے اور اس کی ضمیر ”یوم“ کی طرف جاتی ہے۔ ”الْفُرْسُ“ (رفع سے) اس کا فاعل ہے ”فُرس“ کا لفظ فارس والوں کیلئے اسم جمع ہے اور فارس کی عربی لفظ پارس سے ہے اور یہ پارس بن ناسور بن سام بن نوح کا نام ہے اس میں کئی شہر ہیں اسے اسی نے بنایا تھا۔ اس کے مشہور شہر شیراز اور اصفہان ہیں۔

اہل فارس کی خوبی میں حدیث

اہل فارس کے بارے میں رسول اللہ ﷺ کی حدیث پاک ملتی ہے آپ نے فرمایا تھا: ”اللہ تعالیٰ نے عرب مخلوق میں سے قریش کو پسند کیا اور عجم سے فارس کو“ (کنز العمال، کتاب الفضائل، جلد ۱۲ صفحہ ۴۲، رقم الحدیث: ۳۴۱۳۱)۔ ایک اور حدیث میں ہے کہ ”اسلام سے بہت دوری والے رومی لوگ ہیں (المطالب العالیہ، کتاب المناقب، باب ذم العباد، جلد ۸ صفحہ ۲۸۱، رقم الحدیث: ۴۱۵۳) اور اگر اسلام تریا ستاروں پر بھی لٹکا ہوتا تو فارس کے لوگ اسے لے لیتے“ (سنن ترمذی، کتاب تفسیر القرآن، باب من سورۃ محمد ﷺ، جلد ۵ صفحہ ۱۷۵، رقم الحدیث: ۳۲۷۲)۔

”انھم“ اپنے اسم اور خبر کے ساتھ ”تفرس“ کا مفعول ہے، ضمیر ”فرس“ کی طرف جاتی ہے۔ ”قَدْ“ تحقیق کیلئے ہے۔ ”انذروا“ ماضی مجہول ہے ”انذار“ سے جس کا معنی زوردار خوف دلانا ہے۔ ”بِحُلُولِ“، ”انذار“ سے متعلق ہے۔ اس کا معنی اُترنا ہوتا ہے۔ ”البؤس“ سختی اور تنگی کو کہتے ہیں، الف لام استغراق، جنس یا عہد کا ہے۔

”وَالنَّعْمِ“ کا عطف تفسیر ”بؤس“ پر ہے۔ ”نَعْم“ (دوزبروں کے ساتھ) ”نِقْمہ“ (نون پرزیر) کی جمع ہے، جس کا معنی سختی اور سزا ہے۔

ولادت مبارکہ پر نوشیروان کی خواب

ایک روایت یہ ہے کہ جس رات کی دن کے وقت فجر میں رسول اللہ ﷺ کی پیدائش مبارک ہوئی تو فارس (ایران) کے بادشاہ نوشیروان نے ایک خواب دیکھی جس پر وہ حیران ہو گیا اس نے اپنے ملک کے کاہنوں، جادوگروں اور نجومیوں سے سب کو اکٹھا کیا بلکہ یہودی راہبوں کو بھی بلا لیا اور

ان سے کہا کہ میں نے ایک خواب دیکھی ہے جس نے مجھے پریشان کر دیا ہے تو تم اس کے بارے مجھے بتاؤ! انہوں نے کہا کہ خواب سناؤ ہم اس کی تعبیر بتا دیں گے۔ اس نے کہا کہ خواب بتانے کے بعد میں تمہاری تعبیر پر مطمئن نہیں ہوں گا! میں چاہتا ہوں کہ میرے بتانے کی بجائے تم خود ہی مجھے میری خواب اور اس کی تعبیر کے بارے میں بھی بتاؤ۔ وہ پریشان ہو گئے اور اسے بتانا نہ سکے۔

اسی دوران ان میں سے ایک آدمی نے کہا کہ اگر تم یہ چاہتے ہو تو کسی کو سطح (راہب) کے پاس بھیجنا کہ وہ تمہیں سب کچھ بتا دے۔

سطح راہب کی تعبیر اور قتل

بادشاہ نے عبدالمسیح نامی شخص کو وہاں بھیج دیا، وہ بحرین پہنچا۔ سطح سال بھر میں ایک مرتبہ باہر نکلا کرتا تھا اور لوگ اسے سونے کے تخت پر بٹھا دیتے تھے چنانچہ وہ آنے والے سال کے سارے واقعات بتاتا جاتا اور لوگ لکھتے جاتے۔ عبدالمسیح اس کے باہر نکلنے کا انتظار کرنے لگا۔ وہ نکلا تو نکلتے ہی اس نے بادشاہ کی خواب بتانا شروع کرتے ہوئے کہا کہ اس نے ایک خواب دیکھی ہے جس سے وہ پریشان ہو گیا ہے۔ اس نے دیکھا ہے کہ عربی گھوڑوں نے مدائن کو بھر دیا ہے جو عراقی اونٹوں کو ہانک کر نکال رہے ہیں، یہ سن کر سطح نے کہا کہ یہ نشانی اس امی عربی ہاشمی نبی محمد ﷺ کی پیدائش کیلئے ہے جو حضرت خلیل علیہ السلام کی اولاد میں سب سے افضل ہے، تورات اور انجیل میں اس کی تعریف لکھی ہے۔

اس کی تعبیر یہ ہے کہ عرب کے گھوڑے اسی نبی کے صحابہ کرام ہیں جو فارس کے شہروں میں داخل ہو جائیں گے اور وہ جلد ہی ان کے ہاتھوں فتح بھی ہو جائے گا پھر وہ آل ساسان سے مدائن کو چھین لیں گے۔

یہ تعبیر بتانے کے بعد وہ رونے لگا۔ اس سے پوچھا گیا کہ کس وجہ سے روئے ہو؟ اس نے کہا کہ رونا کیسے روکوں، عمر بھی تو بہت تھوڑی رہ گئی ہے اور پتہ نہیں کہ وہ نبی کب مبعوث ہوگا؟ عبدالمسیح نے واپس آ کر ساسان کو سب کچھ بتا دیا تو اس نے سطح کو قتل کرنے کا حکم دیا چنانچہ اسے قتل کر کے سر پھاڑ دیا۔

شعر (۶۱)

وَبَاتَ اِيْوَانُ كِسْرَى وَهُوَ مُنْصَدِعٌ

كُشْمَلِ اصْحَابِ كِسْرَى غَيْرَ مُلْتَمِعِمْ

(ترجمہ:) ”اور کسریٰ (ساسان بادشاہ) کے محل کی اینٹ سے اینٹ یوں بجی جیسے نوشیروان کا لشکر ایسے بکھرا کہ دوبارہ اکٹھا نہ ہو سکا۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے دوسری نشانی بتانا شروع کی اور آپ کی ولادت کے دن واقع ہونے والی علامت بتاتے ہوئے فرمایا: ”وَبَاتَ اِيْوَانُ كِسْرَى الخ“۔

تحقیق الفاظ

”بَات“ دو معنوں کیلئے آتا ہے پہلا: رات میں کام کرنا کہا جاتا ہے: ”بَاتَ فِي الْيَلِّ“ یعنی ”ایسا اس نے رات کو کیا“ اور دوسرا ”صَارَ“ کے معنی میں خواہ وہ کام رات میں ہو یا دن میں اور یہ عام ہے جیسے پہلا خاص ہے اور یہاں دونوں معنی ہو سکتے ہیں۔

یہ جملہ معطوفہ ہے جس کا ”تَفَرَّسَ“ پر عطف ہے اور لوٹنے والی ضمیر محذوف ہے یعنی ”بَاتَ فِيهِ“ ہے تو اس پر غور کر لو۔

”اِيْوَانُ“ (ہمزہ پر زیر) یہ اسم معرب ہے جو ایسی چھت کیلئے بولا جاتا ہے جس کی اگلی طرف دیوار نہیں ہوتی۔ اس کا ہمزہ اصلی ہے کیونکہ زائد ہوتا تو واو یا ء بن جاتی جیسے ”اِيَامُ“ میں ہوئی، اس سے معلوم ہوا کہ ”اِيْوَانُ“ کا لفظ ”دِيْوَانُ“ کی طرح ہے اور دونوں کا وزن ”فَوْعَالُ“ اور اصل ان دونوں میں ”اَوَّ اور ان“ اور ”دَوَّ اور ان“ ہے چنانچہ پہلی واو یا ء بن گئی کہ اس سے پہلے زیر ہے اور دو واو کو پسند نہیں کیا جاتا۔

بادشاہوں کے لقب

”کسریٰ“ خسرو سے عربی بنایا گیا، یہ اسم جنس ہے بادشاہ عجم کا، اس کی جمع ”اِكْسِرَةَ“ ہے جیسے ”قَيْصَرَ“ اس شخص کا نام ہوتا تھا جو روم کا بادشاہ ہوتا، ”نَجَاشِي“ اس کا نام ہوتا جو حبشہ کا بادشاہ ہوتا تھا، ”خَاقَانَ“ اس کا نام ہوتا تھا جو ترک کا بادشاہ ہوتا تھا، ”فِرْعَوْنَ“ اس کا جو مصر کا بادشاہ ہوتا اور ”تَبَعَ“ اس کا ہوتا جو یمن کا بادشاہ ہوتا۔

”وَهُوَ“ میں واؤِ حالیہ ہے اور یہ ضمیر ایوان کی طرف جاتی ہے۔
 ”مُنْصَدِعٌ“، ”انْصَدَاعٌ“ سے اسمِ فاعل ہے جس کا معنی گرنا یا بکھیر دینا ہے۔
”ایوان“ پر تبصرہ

اس ایوان کے بارے میں آتا ہے کہ اسے بنو ساسان نے بنایا تھا اور اس پر نوے سال لگے تھے۔ اس نے اس پر سونے کا پانی چڑھایا، قیمتی زبرجد اور موتیوں سے اس کے نقش و نگار بنائے چنانچہ جب رسولِ انور ﷺ کی ولادت کی رات آئی تو وہ کانپتا ہوا پھٹ گیا جس کی وجہ سے اس کے کنگروں میں سے چودہ گر گئے اور صرف آٹھ باقی رہ گئے۔ ان چودہ کے گرنے میں اشارہ تھا کہ ان میں سے اس کے بعد باقی رہ جانے والے کنگروں کی تعداد میں بادشاہ بنیں گے۔

”كَشْمَلٍ اصْحَابِ كَسْرِي“ یہ اس وہم کا رد ہے جو کہا جاسکتا ہے کہ اس بادشاہ نے محل کے پھٹنے پر اسے پہلے کی طرح بنایا تھا یا پھٹا ہی رہ گیا؟ تو فرمایا: ”كَشْمَلِ الْخ“ یعنی جس طرح اس کے لشکری بکھرے اور پھر پہلے کی طرح جمع نہ ہو سکے، یونہی وہ ایوان ٹوٹا اور بکھر گیا، جمع نہ ہو سکا اور نہ ہی اس کے بعد اسے بنایا گیا۔

”كَشْمَلٍ“ کا لفظ ترکیب میں ظرفِ مستقر حال ہے اور چاہو تو مصدر محذوف کی صفت بنا لو، یہ یوں ہوگا: ”وَهُوَ مُنْصَدِعٌ انْصَدَاعًا كَشْمَلِ الْخ“ اور دونوں صورتوں میں ناظم کا قول ”كَشْمَلِ اصْحَابِ كَسْرِي“ بات کو مکمل کرتا ہوگا اور اس میں احتیاط ہوگی، یہ اس کیلئے ظاہر ہے جس نے علمِ معانی کے ساتھ تھوڑا بہت تعلق رکھا ہوگا۔

”شَمْلٍ“ کا لفظ ایسے معنی دینے والوں میں ہے جو ایک دوسرے کی ضد ہوتے ہیں تاہم اس کا معنی بکھر جانا ہے۔

”اصْحَابِ كَسْرِي“ اگر تم کہو کہ اس کی جگہ ”اصْحَابِيہ“ کہنا ضروری تھا تو پھر ضمیر کی جگہ اسمِ ظاہر لانے میں فائدہ کیا ہے؟ تو میں کہوں گا: اس کا فائدہ یہ ہے کہ یہ ذہن میں پختہ ہو جائے گا اور ضمیر کو ”ایوان“ کی طرف لوٹانے کا وہم ختم ہو جائے گا۔

یہ جواب پہلے اور دوسرے کسریٰ میں تبدیلی سے بھی ہو سکتا ہے چنانچہ یہ ان لفظوں میں سے نکل جائے گا جہاں ضمیر کی جگہ اسمِ ظاہر رکھا جاتا ہے، اس سلسلے میں وہ قول تائید کرتا ہے جو کسی نے کہا ہے کہ یہ شعر دو واقعات کی طرف اشارہ کرتا ہے کیونکہ پہلے مصرعہ میں کسریٰ کے محل ٹوٹ جانے کی طرف

اشارہ ہے یعنی ساسانیوں کی بادشاہت تباہ و برباد ہو گئی اور دوسرے میں اس روایت کی طرف اشارہ ہے جس میں بتایا گیا ہے کہ یزدجرد بن شہریار نے (آخری کسریٰ جو سارے فارس کا بادشاہ تھا) ارمین قوم میں سے رستم (یہ وہ رستم نہیں جو ملک عجم میں مشہور ہے) کو سپہ سالار اور امیر لشکر بنا دیا، اپنے تمام خزانے اس کے سپرد کر دیئے اور اس سے کہہ دیا کہ تم اسلحہ سونا اور چاندی میں سے جتنا چاہو لے لو اور مجھے عربوں کی سازشوں سے بچاؤ چنانچہ رستم خراسان کے علاقے سے دو لاکھ فوج لے کر عراق کے علاقے کی طرف روانہ ہوا اور سارے ذمی بھی اپنے عہد توڑ کر اس کے ساتھ شامل ہو گئے۔

یہ حضرت عمر فاروق رضی اللہ عنہ کا عہد تھا، انہوں نے بھی بہت سارا لشکر جمع کیا اور حضرت سعد بن ابی وقاص رضی اللہ عنہ کو سپہ سالار مقرر کیا اور عراق میں موجود لشکر کو حکم دیا کہ پہلی فرصت میں وہ حضرت سعد کی بیعت کریں چنانچہ حضرت سعد سارا لشکر لے کر رستم کے مقابلے میں پہنچے اور جب دونوں لشکر آمنے سامنے ہو گئے تو حضرت ہلال بن علقمہ یشمی نے رستم کو دیکھ کر اس طرف رخ کیا اور حملہ کر کے اسے قتل کر دیا۔ اس پر حضرت سعد رضی اللہ عنہ نے ہلال کو اس کا سارا مال دے دیا جس کی قیمت تاج کے علاوہ ستر ہزار درہم تھی، تاج ایک لاکھ کا تھا۔

اب اہل فارس شکست کھا چکے تھے۔ حضرت سعد نے ان کا پیچھا کر کے انہیں بھگا دیا اور ان کے ہاتھوں کو قتل کرتے چلے گئے چنانچہ اس کے بعد وہ اتنا لشکر اکٹھا نہ کر سکے۔ اس فتح سے مسلمانوں کے ہاتھ بے شمار مال آ گیا۔

کہتے ہیں کہ مسلمانوں کے لشکر نے ان کا جھنڈا اٹھایا اور اس کے ساتھ غنیمت کا مال لے کر حضرت عمر رضی اللہ عنہ کے پاس پہنچے جسے انہوں نے مسلمانوں کے درمیان تقسیم کر دیا۔ اس میں سے حضرت علی رضی اللہ عنہ کو ایک بالشت بھر حصہ ملا جسے انہوں نے دس ہزار درہم میں بیچ دیا۔



شعر (۶۲)

وَالنَّارُ خَامِدَةٌ الْأَنْفَاسِ مِنْ أَسْفِ
عَلَيْهِ وَالنَّهْرُ سَاهِي الْعَيْنِ مِنْ سَدَمِ

(ترجمہ:) ”اور (ہزاروں سالوں سے بھڑکتی) آگ کے شعلے اس پر افسوس کی وجہ سے بجھ گئے اور نہر (ساوہ ندی) سخت پریشانی کی وجہ سے اپنا راستہ تبدیل کر بیٹھی۔“
حضرت ناظم رحمہ اللہ اب تیسری اور چوتھی نشانی بیان فرما رہے ہیں چنانچہ فرماتے ہیں: ”وَالنَّارُ خَامِدَةٌ الْأَنْفَاسِ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

واو عاطفہ ہے اور اس جملے کا پہلے جملہ پر عطف ہے اس میں بھی ”فِيهِ“ کا لفظ ضروری ہے یہاں یہ اعتراض نہیں کیا جا سکتا کہ یہ جملہ تو اسمیہ ہے جبکہ پہلا فعلیہ ہے تو اس کا اس پر عطف صحیح نہیں کیونکہ یہ دونوں جملے تقدیری طور پر مفرد مان لئے گئے ہیں اور اس صورت میں عطف کرنے میں حرج نہیں ہوتا اور یہ ظاہر ہے۔

”خَامِدَةٌ“، ”خُمُودٌ“ سے ہے جس کا معنی ہے: آگ کا شعلہ بجھ جانا اور کونکہ باقی رہنا۔
”أَنْفَاسٌ“، ”نَفَسٌ“ کی جمع ہے (زبر کے ساتھ) جس کا معنی وہ چیز ہے جس کی وجہ سے حیوان باقی رہتا ہے۔

تاہم یہاں استعارہ کے طور پر اس سے مراد آگ کا شعلہ ہے اور وہ یوں کہ آگ کے شعلہ کو ”نَفَسِ حَيَوَانَ“ سے اس بناء پر تشبیہ دی گئی کہ دونوں دوام کا سبب ہیں پھر ”انفاس“ کو آگ کے شعلہ سے تشبیہ دی گئی چنانچہ ”انفاس“ کا ذکر کر کے آگ کا شعلہ منرا دلایا گیا اس استعارہ کا قرینہ یہ ہے کہ ”خامدہ“ کو ”انفاس“ پر واقع کیا گیا۔ یہ اس صورت میں ممکن ہے کہ آگ کا معنی حقیقی ہو۔

یہ بھی ہو سکتا ہے کہ مجاز اور استعارے کے طور پر آگ سے مراد کافر ہوں اور کافروں کو ہلال میں اس کے قریب ہونے میں تشبیہ دی گئی چنانچہ آگ کو کافروں کیلئے استعارہ کیا گیا اور آگ کا ذکر کر کے کافر مراد لئے گئے اور اس بناء پر ”خُمُودٌ“ میں تجرید ”انفاس“ میں تخیل اور ”اسف“ میں ترشح ہوئی۔

یہ بھی ہو سکتا ہے کہ آگ میں استعارہ مکذیبہ ہو کہ اسے نقصان کرنے والے حیوان سے تشبیہ دی جائے چنانچہ ”انفاس“ اس کی تمثیل ہے اور ”اسف“ ترشح۔

”من اسف“ کا تعلق ”خامدہ“ سے ہے اور ”اسف“ کا معنی غم ہے جیسے فرمانِ الہی میں کسی کا قول ہے: ”يَا سَفِي عَلِيُّ يُوْسُفَ“ (سورۃ یوسف آیت: ۸۴)۔

”علیہ“ کا تعلق ”اسفا“ سے ہے اور ضمیر یا تو آگ کی طرف جاتی ہے جس کا معنی ہوگا کہ آپ کی ولادت کے دن آتش پرستوں کی آگ اس لئے بجھ گئی کہ اسے اپنے آپ پر کافروں میں عرصہ تک ان کا معبود بنا رہنے پر افسوس ہوا تھا یا یہ ضمیر میلاد کے دن کی طرف لوٹی ہے تو اس صورت میں معنی ہوگا کہ آتش پرستوں کی آگ رسولِ اکرم ﷺ کے دیدار کا شوق رکھتی تھی جس کی وجہ سے اس کے شعلے بجھ گئے یا یہ ضمیر اہل فارس کی طرف لوٹی ہے جنہوں نے ہمیشہ کیلئے اسے جلانے رکھنے میں مدد دی تھی تاکہ وہ کبھی بجھ نہ سکے۔ اس صورت میں معنی یہ ہوگا کہ آتش پرستوں کی آگ اس بناء پر بجھی کہ اسے اپنے مدد کرنے والوں پر افسوس اور غم ہوا کیونکہ وہ اسے چھوڑ گئے تھے پھر کبھی بھی جمع نہ ہو سکے۔

”وَالنَّهْيُ“ کا عطف نار پر ہے اور ”نہی“ سے مراد ساوہ ندی کا پانی ہے چنانچہ ناظم نے ”مَحَلًّا“ کا ذکر کر کے ”حَالًّا“ مراد لیا۔

”سَاهِي الْعَيْنُ“ کا لفظ مبتداء یعنی ”نہر“ کی خبر ہونے پر مرفوع ہے ”ساہی“ کا معنی غافل ہے۔

”عَيْنُ“ کا لفظ ان مشترک الفاظ میں سے ہے جن کے کئی معنی ہوتے ہیں تاہم یہاں اس سے مراد پانی جاری ہونے کی جگہ ہے۔

”مِنْ سَدَمٍ“ کا تعلق ”ساہی“ کے ساتھ ہے اور یہ ”أَجْلِيَّةُ“ (سبب کا معنی دینے والا) ہے ”سَدَمٍ“ غم اور شرمندگی کو کہتے ہیں۔ بعض نسخوں میں ”مِنْ نَدَمٍ“ ہے (نون سے) یہاں اس جملہ میں لازمی طور پر لفظ مقدر ماننا ہوگا کہ یہ بات عبارت کا ماحول بتاتا ہے چنانچہ ”مَقْدَرٌ عَلَيْهِ“ کی ضمیر میں بھی تین احتمال ہیں کہ اس کی ضمیر ”النہی“ کی طرف لوٹے جس کا معنی ہو کہ ”ساوہ“ نہر اپنے پہلے راستہ کو بھول چکی اور زیادہ پانی بہانے لگی تو میلاد کے دن اپنی جگہ چھوڑ گئی کیونکہ اپنے آپ پر افسوس میں تھی کہ وہ حضور ﷺ کے علاقے سے دور ہو گئی تھی اور دور چلنے لگی تھی یا یہ ضمیر میلاد کے

دن کی طرف لوٹتی ہے تو معنی یہ ہوگا کہ یہ نہر حضور ﷺ کے حسن اور زیارت کی شوقین تھی اور اس نے وہاں تک نہ پہنچ سکنے کی وجہ سے افسوس کیا اور رو پڑی، اس کا پانی خشک ہو گیا جس کی وجہ سے اپنا پہلا راستہ بھول بیٹھی یا یہ ضمیر ”فُرس“ کی طرف لوٹتی ہے کیونکہ اس کے پانی کو سنبھالا کرتے تھے کیونکہ وہ ان کے علاقے سے گزرتی تھی۔ اب معنی یہ ہوگا کہ ساوہ نہر کے پانی نے اپنے خدمت کرنے والوں اور مددگاروں پر افسوس کیا جس کی وجہ سے وہ اپنا راستہ ہی بھول بیٹھی اور اس کا پانی بڑھ گیا کہ مددگار اور سنبھالنے والے وہاں سے اس بناء پر جا چکے تھے کیونکہ حضور ﷺ پیدا ہو چکے تھے۔

یاد رہے کہ ”نہر“ میں استعارہ کے کئی طریقے ہیں جن کا ذکر ہو چکا ہے تو انہیں یاد کر لو اور ترتیب دے لو۔



شعر (۶۳)

وَسَاءٌ سَاوَةٌ أَنْ غَاضَتْ بُحَيْرَتُهَا

وَرُدُّ وَارِدُهَا بِالْغَيْظِ حِينَ ظَمَى

(ترجمہ:) ”اور ساوہ ندی والوں نے اس بات پر غم کیا کہ ان کی بحیرہ نامی نہر کا پانی سوکھ گیا اور جب وہ سوکھ گئی تو وہاں پر آنے والوں کو غصے سے خالی ہاتھ واپس ہونا پڑا۔“

اب حضرت ناظم رحمہ اللہ پانچویں نشانی بتاتے ہوئے فرماتے ہیں کہ ”وَسَاءٌ سَاوَةٌ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

وَأَوْ عَطْفِ كِي هِي اور جملہ کا عطف قریبی یا دور والے جملہ پر ہے تو یہاں بھی تم ”فیہ“ کو مقدر ماننا نہ بھولو ”سَاءٌ“ کا فعل یا تو لازم ہے جس کا معنی غمگین ہونا ہے یا پھر متعدی ہے جس کا معنی غمگین کرنا ہے لیکن زیادہ مناسب دوسرا معنی ہے۔ ساوہ ایک بڑے شہر کا نام ہے یہاں اس سے مراد وہاں کے رہنے والے ہیں یا تو مجاز مرسل کے طور پر کہ یہاں محل کا ذکر کر کے حال مراد لیا گیا یا مجاز حذنی کے طور پر جیسے اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: ”وَاسْتَلِ الْقَرْيَةَ“ (سورۃ یوسف آیت: ۸۲) ساوہ غیر منصرف ہے کہ مؤنث اور علم ہے۔

پھر ”سَاءٌ“ اگر لازم ہے تو یہ رفع کے ساتھ اس کا فاعل بنے گا اور متعدی ہے تو نصب کے ساتھ اس کا مفعول ہوگا اور فاعل ”أَنْ غَاضَتْ“ ہوگا۔ ”غَاضٌ“ کا معنی غائب ہوا ہے جیسے کہتے ہیں: ”غَاضَ الْمَاءُ“ جب وہ غائب ہو جائے۔ ”بَحَيْرَتُهَا“ رفع کے ساتھ ”غَاضَتْ“ کا فاعل ہے اور ضمیر ساوہ کی طرف جاتی ہے۔ ”بَحَيْرَةُ“ عراق عجم کے علاقے میں ہمدان اور قم کے درمیان کافی پانی کا نام ہے جس میں کشتیاں چلتی ہیں اور لوگ ان میں سفر کر کے اردگرد کے شہروں کو جاتے ہیں جو اذرعہ اور رے سے آگے ہیں اور یہ بحرہ چھ فرسخ تک کے علاقے میں پھیلا ہوا ہے اور اس کا پانی اتنا اچھا ہے کہ دوسرے دریاؤں سے نہیں ملتا۔ اس کے اردگرد بہت سے گرجے ہیں، بڑے بڑے بازار ہیں اور کافر لوگ اس کے پاس کفر بڑھانے کیلئے کام کرتے تھے بلکہ کہتے ہیں کہ وہ اسے پوجتے تھے اور جب رسول اکرم ﷺ کی ولادت ہوئی جو کفر کی ساری راہیں ختم کرنے والے تھے تو اس بحیرہ کا پانی ختم ہو گیا۔

پھر یاد رہے کہ ”بَحِيرَه“ میں بھی مجاز ہے کہ یہاں محل کا ذکر کر کے حال مراد ہے اور اس ساوہ کی طرف لوٹنے والی اس کی ضمیر مضاف کرنے میں بحیرہ طبریہ سے گریز کیا گیا ہے کیونکہ اس کے ارد گرد بھی بہت سے گرجے ہیں جو گنتی میں آتے ہیں اور ان پر سونے کا کام کیا گیا ہے اور حضور ﷺ کی ولادت مبارکہ کے موقع پر اس کا پانی خشک ہو گیا تھا جس کی وجہ سے وہ برباد ہو گیا لیکن ساوہ برباد نہ ہوا بلکہ وہاں کے رہنے والوں نے بحیرہ کی جگہ ایک بڑا شہر بنا دیا جو اب تک موجود ہے۔ یہ بات میں نے میلاد مبارک کے ایک رسالے میں دیکھی ہے۔

”وَرْدٌ“ مجہول ہے جس کی واو یا تو حالیہ ہے یا عطف کیلئے ہے چنانچہ یہ جملہ ”غاضت“ پر معطوف ہوا اور معنی یہ ہوا کہ اہل ساوہ اس کے رد ہونے پر غمگین ہو گئے۔ اسے ”ساء“ پر معطوف کرنا جائز نہیں، ورنہ لازم آئے گا کہ ”رَدٌ“ آپ کی ولادت کے موقع کو بیان کرنے کی مستقل علامت بن جائے اور پہلی بات کو پورا نہ کرے اور یہ باطل ہے اور جو کہتا ہے کہ یہ جملہ ”سَاءٌ“ پر معطوف ہے تو وہ غلطی پر ہے اس پر غور کر لو۔

”رَدٌ“ بمعنی ”رَجْعٌ“ یعنی لوٹا اور پھر گیا کے معنی میں ہے۔ ”وَارِدٌ“ رفع کے ساتھ ”رَدٌ“ کا نائب فاعل ہے اور ضمیر ”بَحِيرَه“ کی طرف جاتی ہے اور ”وَارِدٌ“ کا معنی پانی کیلئے جانے والا ہے۔ ”الغیظ“ کا تعلق ”رَدٌ“ سے ہے یعنی ناراضگی سے واپس ہوا۔

کہتے ہیں کہ ایک شخص پانی لے جانے کیلئے بحیرہ کی طرف گیا کہ پانی لے کر گھر واپس جائے چنانچہ وہ بحیرہ کی طرف آیا تو دیکھا کہ اس کا پانی ختم ہو چکا ہے وہ وہاں سے مڑا اور ناراضگی میں واپس ہوا کیونکہ اس کے دونوں ہاتھوں میں دو کٹورے تھے اور جب اس نے پانی ختم ہوا دیکھا تو ایک کو دوسرے پر مار کر دونوں توڑ دیئے۔

”حِينَ ظَمِي، وَاِرِدٌ“ یا ”رَدٌ“ کی طرف ہے۔ ”ظَمِي“ کا اصل ”ضَمِي“ ہے یعنی پیاسا ہوا، چنانچہ اس کا ہمزہ شعر کی خاطر حذف ہو گیا۔



شعر (۶۴)

كَأَنَّ بِالنَّارِ مَا بِالنِّمَاءِ مِنْ مَبْلَلٍ
حُزْنًا وَبِالنِّمَاءِ مَا بِالنَّارِ مِنْ ضَرَمٍ

(ترجمہ:) ”یوں لگتا تھا کہ آگ میں پانی کا اثر (طراوت) اور پانی میں آگ کا اثر (سوزش اور ساڑ) پیدا ہو گیا تھا۔“

جب حضرت ناظم رحمہ اللہ نے دو پہلے شعروں کا مضمون پورا کرنا چاہا ہے تو فرماتے ہیں: ”كَأَنَّ بِالنَّارِ الخ“ چنانچہ مصرعہ آخری شعر کو مکمل کرتا ہے اور دوسرا پہلے کو۔
تحقیق الفاظ

”كَأَنَّ“ حرف مشبہ بالفعل ہے اور ”بِالنَّارِ“ ظرف مستقر ہے جو ”كَأَنَّ“ کی خبر ہے جو مقدر ”حَصَلَ بِالنَّارِ“ سے متعلق ہے یعنی گویا کہ آگ سے حاصل ہوا۔ آگ سے مراد آتش پرستوں کی آگ ہے۔ ”مَا“ موصولہ ہے اور ”بِالنِّمَاءِ“ مقدر فعل سے متعلق ہے یعنی جو پانی سے حاصل ہوتا ہے۔ ”مِنْ مَبْلَلٍ“، ”مَا“ کا بیان ہے اور پانی سے مراد بحیرہ ساوہ ہے، معنی یہ بنا ساوہ والوں نے گمان کیا کہ جس پانی کی وہ عبادت کرتے تھے وہ ختم ہو چکا اور خشک ہو گیا ہے اور یوں لگتا ہے کہ اس پانی کی جگہ آگ جلائی گئی ہے اور جو تری پانی سے حاصل ہوتی تھی آگ کی وجہ سے سوکھ چکی ہے اور جب یہ خیال یقین کی حد تک نہیں پہنچتا تھا تو ”حُزْنٌ“ کہہ کر اس کا سبب بیان کیا یعنی ایسا غم کی وجہ سے ہو اجوا نہیں اُن کے اس گمان کی وجہ سے ہوا۔

”وَبِالنِّمَاءِ“ میں واو عاطفہ ہے اور ”مَاءِ“ کا ”بِالنَّارِ“ پر عطف اور ”بِالنَّارِ“ کا ”بِالنِّمَاءِ“ پر عطف ہے جو ایسا ہے کہ ایک حرف کے ذریعے دو چیزوں کا عطف ایک عامل کے دو معمولوں پر ہوتا ہے اور وہ عامل ”كَأَنَّ“ ہے۔

”مِنْ ضَرَمٍ“، ”مَا“ کا بیان ہے ”ضَرَمٌ“ آگ کے شعلے کو کہتے ہیں جو بھڑکتا ہے اور ”بِالنَّارِ“ میں الف لام عہد کیلئے ہے یعنی مجوسیوں کی وہ خاص آگ جو ہزار سال سے بجھی نہ تھی۔ اس مصرعہ کا مطلب یہ ہے کہ آگ پوجنے والے اس حد تک غمگین تھے کہ ان کے خیال میں ان کی آگ کی جگہ پانی سے حاصل ہونے والے تری آگ ہے۔

فائدہ: تفسیر روح البیان میں فرماتے ہیں کہ آگ کی پوجا کرنے والا شخص قابیل تھا کیونکہ اس نے اپنے بھائی ہابیل کو قتل کیا تھا جسے حضرت آدم علیہ السلام نے اللہ کے حکم سے سرزمین یمین کی طرف نکال دیا تھا چنانچہ وہ اپنی بہن کو لے کر وہاں چلا گیا، یکا یک شیطان نے آ کر اسے کہا کہ ہابیل کی قربانی کو آگ نے جلایا ہے کیونکہ وہ آگ کی پوجا کرتا تھا لہذا تم بھی آگ تیار کر کے اسے پوجا کرو جس پر اس نے آگ تیار کر کے اس کی پوجا شروع کر دی۔ اب اس کے پیچھے چلنے والی اولاد اور اولاد کی اولاد قیامت تک اس کی پوجا کرتی رہے گی۔



شعر (۶۵)

وَالْجِنُّ تَهْتَفُ وَالْأَنْوَارُ سَاطِعَةٌ
وَالْحَقُّ يَظْهَرُ مِنْ مَعْنَى وَمِنْ كَلِمٍ

(ترجمہ:) ”جن آپ کی نبوت کو غائبانہ آواز سے مان رہے ہیں، اس کے انوار ہر طرف بکھر رہے ہیں اور اس کی سچائی دلوں اور زبانوں سے مانی جا رہی ہے۔“
حضرت ناظم رحمہ اللہ چھٹی اور ساتویں نشانی بتاتے ہوئے فرماتے ہیں: ”وَالْجِنُّ تَهْتَفُ

الخ“ -
تحقیق الفاظ

واو عاطفہ ہے اور جملہ کا تعلق پہلے جملہ پر ہے یا واو حالیہ ہے۔

”والجن“ انسانوں کے مقابلے میں ہیں، یہ ایک ایسا جوہر آگ ہے جو کئی قسم کی شکلیں بنا سکتا ہے، اسے جن کہنے کی وجہ یہ ہے کہ یہ لوگوں کی نظروں سے اوجھل ہوتے ہیں اور لغت میں جن کا معنی پوشیدہ کرنا ہوتا ہے۔

جنوں اور فرشتوں کا نظر نہ آنا رحمت ہے

علماء فرماتے ہیں کہ جنوں کا آنکھوں سے اوجھل ہونا اللہ تعالیٰ کی ہم پر رحمت ہے اور یونہی فرشتوں کا چھپا ہونا بھی رحمت الہیہ ہے، جنوں کا اس لئے کہ ان کی شکلیں بہت زیادہ بُری ہوتی ہیں، اگر لوگوں میں سے انہیں کوئی دیکھ لے تو مر جائے اور پاگل ہو جائے۔ رہے فرشتے تو وہ یوں کہ بہت ہی خوبصورت ہوتے ہیں کہ اگر کوئی ان کی اصل شکل میں دیکھ لے تو وہ پاگل ہو جائے یا مر جائے۔ تم ایسا کوئی نہیں سنو گے جو انہیں دیکھنے کا حوصلہ رکھتا ہو۔

جنوں کی تین قسمیں

یاد رہے، ایک روایت میں آیا ہے کہ جن تین قسم کے ہوتے ہیں، ایک وہ جن کے پر ہوتے ہیں جن سے ہوا میں اڑتے ہیں، ایک وہ جو سانپوں کی شکل میں ہوتے ہیں اور ایک وہ جو ہر وقت چلتے پھرتے اور سیر کرتے رہتے ہیں۔

جنوں کے بھی مذہب ہیں

علماء یہ بھی بتاتے ہیں کہ جنوں میں انسانوں کی طرح کئی فرقے ہوتے ہیں چنانچہ ان میں یہودی، نصاریٰ، مجوسی اور بت پرست ہوتے ہیں اور ان کے مسلمانوں میں بدعتی اور خواہش پرست ہوتے ہیں اور سب شرعی کام کرنے کے پابند ہیں۔

”تَهْتَفُ“ یعنی چلاتے، آوازیں نکالتے اور حضور ﷺ کی ولادت پر گفتگو کرتے ہیں چنانچہ ایک روایت ملتی ہے کہ ہوا اور مکہ کے اردگرد جنوں کی آوازیں سنی گئی ہیں، وہ حضور ﷺ کی ولادت پر خوشیاں مناتے تھے۔

مواہب میں آیا ہے کہ حضور ﷺ ولادت مبارکہ پر مشرق والے جن مغرب کی طرف اور مغرب والے مشرق کی طرف جا کر خوشیاں مناتے رہے۔

جو شخص یہ بتانا چاہتا ہے کہ جن اپنی خبریں کاہنوں کو کانوں کان بتاتے ہیں تو وہ مقصد سے دور ہے کیونکہ اس کی طرف ناظم کے اس قول میں اشارہ کیا گیا ہے: ”وَبَعْدَمَا عَايَنُوا فِي الْأُفُقِ“ اور اگر اس سے مراد وہ لیا جائے جو آگے آئے گا تو استدراک (پہلے والی میں رہی بات بتانا) لازم آئے گا اس پر غور کر لو۔

اگر یہ کہا جائے کہ ناظم کا قول ”الجن تَهْتَفُ“ جملہ اسمیہ ہے جو دائمی وقت بتاتا ہے تو یہ چاہے گا کہ جنوں کی دائمی آواز کا ثبوت ہو اور یہ ثابت نہیں ہوتا۔ جواب یہ دیا گیا ہے کہ یہ جملہ اپنا دوام بتاتا ہے کیونکہ اس کی خبر جملہ فعلیہ ہے اور جس کا اسمیت میں منصرف ہونا ہوتا ہے اس کا پتہ نہیں بتاتا اور یہ سب کو معلوم ہے۔

”والانوار ساطعة“ یہ آخری علامت کا بیان ہے واو عاطفہ ہے اور جملہ کا پہلے جملہ پر عطف ہے۔ ”الانوار“، ”نور“ کی جمع ہے جو روشنی والا جوہر ہوتا ہے جیسے گزر چکا اور ”ساطعہ“، ”سطوع“ سے ہے جس کا معنی ظاہر ہونا ہوتا ہے یہ جملہ اسمیہ دوام اور ثبوت بتاتا ہے تو اس میں اشارہ ہے کہ حضور ﷺ کا نور قیامت تک باقی رہنے والا ہے اور یہ صرف اسے دکھائی دیتا ہے جس کے اپنے دل میں نور ہو۔

یہ جملہ مواہب اور شفاء میں آئی روایت کی طرف اشارہ کرتا ہے جس میں رسول اللہ ﷺ کی والدہ مطہرہ خود بتاتی ہیں کہ جب میں نے حضور ﷺ کو جنم دیا تو میرے اندر سے ایک ایسا نور نکلا

جس سے شام کے محل نظر آنے لگے۔

لطائف میں لکھتے ہیں کہ اس نور کا نکلنا اس آنے والے نور کی طرف اشارہ تھا جس سے زمین کے لوگ ہدایت حاصل کریں گے اور شرک کے اندھیرے ختم ہو جائیں گے اللہ تعالیٰ فرماتا ہے: "قَدْ جَاءَكُمْ مِنَ اللَّهِ نُورٌ وَكِتَابٌ مُبِينٌ الْآيَةُ" (سورۃ المائدہ آیت: ۱۵)۔

رہا اس نور کا شام کے محلوں کو روشن کرنا تو یہ اس طرف اشارہ ہے کہ شام کو حضور ﷺ کی نبوت کا نور حاصل ہے کیونکہ وہ آپ کا دار السلطنت رہا ہے۔ (انتہی)

یہ بھی جائز ہے کہ انوار سے مراد حضور ﷺ کی شریعت ہو اور یہ استعارہ کے طور پر ہوگا کہ آپ کی شریعت کو انوار سے تشبیہ دی جائے کہ یہ بھی تو تاریکی دور کرتی ہے۔

"وَالْحَقُّ" میں واو یا عاطفہ ہے یا حالیہ "الحق" باطل کی ضد ہے۔ یہ بھی ہو سکتا ہے کہ اس سے مراد آپ کی شان ہو بایں طور کہ آپ کی شان کو حق سے تشبیہ دی جائے کہ یہ بھی بلند ہے کیونکہ حق کو بلندی حاصل ہوتی ہے جبکہ اس سے کوئی اور بلند نہیں ہوتا۔

"يُظْهِرُ" "ظہور" سے ہے یعنی روشن ہوا۔

"مِنْ مَعْنَى" "مِنْ" کا معنی کسی مسافت کی ابتداء ہوتا ہے۔ یہ "يُظْهِرُ" سے متعلق ہے اور اس کی تنوین "كَلِمٍ" کی طرح تعظیم کیلئے ہے۔ معنی سے مراد قرآن کے معانی ہیں اور "كَلِمٍ" سے مراد اس کے الفاظ ہیں۔ معنی یہ ہوگا کہ حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کی ایک نشانی یہ ہے کہ ان کی شریعت آپ کے وجود کی وجہ سے ہے جو قرآن کے معانی اور الفاظ ہیں کیونکہ اس کا معنی شریعت کے احکام بتاتا ہے اور اس کے الفاظ نبوت کی سچائی بتاتے اور پوری طرح عاجز کر دیتے ہیں۔

یہ معنی اس صورت میں ہے کہ واو عطف کیلئے ہو اور "حق" اپنے اصلی معنی پر ہو لیکن اگر یہ واو حال کیلئے ہو اور "حق" کا معنی آپ کی شان ہو تو یہ مصرعہ پہلے مصرعہ کا بیان اور تفسیر بنے گا اور اس میں االثالف و نشر ہوگا اور وہ یوں کہ "معنی" سے مراد حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کا نور اور "کلم" سے جنوں کا کلمہ۔

یہ بھی جائز ہے کہ "معنی" سے مراد عقلی امور اور "کلم" سے مراد محسوس امور ہوں۔

یہ لمبی گفتگو ہے جسے اس مختصر کتاب میں لایا نہیں جاسکتا۔



شعر (۶۶)

عَمُوا وَصَمُّوا فَاِعْلَانُ الْبَشَائِرِ لَمْ
يُسْمَعْ وَبَارِقَةُ الْاِنْذَارِ لَمْ تُشْمَ

(ترجمہ:) ”کافر انوارِ حبیب سے اندھے اور بہرے بھی ہو گئے کہ جنوں کی بشارتیں نہ سن

سکے اور اللہ کا ڈر سنانے والی چیزوں میں سے انہیں گویا کوئی چمک دکھائی نہ دی۔“

جب پہلے شعر سے یہ وہم پیدا ہوا کہ یہ سوال کیا جائے گا: جن جنوں نے نبوتِ محبوب کی خبر دے دی اور انوار نے آپ کی حقیقت بتا دی تو کیا ان کی قوم بھی ان پر ایمان لائی تھی یا نہیں؟ تو اس وہم کو انہوں نے یہ کہہ کر دور کیا: ”عَمُوا وَصَمُّوا الخ“ یعنی ان کی قوم ایمان نہیں لائی کیونکہ ان کی قوم اندھی اور بہری ہو چکی تھی۔

تحقیق الفاظ

”عَمُوا“، ”عَمَى“ سے فعلِ ماضی ہے نہ دیکھنا یعنی ”کافروں نے ہر ایک کو نظر آنے والے اور ہر کام میں شریعت کے مسئلے نہ دیکھے کہ وہ اندھے ہو چکے تھے اور آنکھوں والے ہونے کے باوجود انہیں اندھا صرف اس لئے کہا گیا کہ وہ دیکھنے کے مطابق وہ کام نہ کر سکے جو کرنا چاہیے تھے اور ”صَمُّوا“ بھی ”عَمُوا“ ہی کی طرح ہے یعنی کافروں نے جنوں کی گفتگو اور بشارتیں نہ سنیں کہ ان کے کان بہرے تھے چنانچہ ناظم کا قول ”عموا“ ان کے اس قول کی طرف اشارہ کرتا ہے جو پہلے آچکا ہے: ”والانوار ساطعه الخ“ اور ان کا قول ”صموا“ ان کے قول ”والجن تہتف“ کی طرف اشارہ ہے لیکن ان میں الثالث وشر ہے۔

یہ بھی ہو سکتا ہے کہ یہ شعر پہلے شعر کے دوسرے مصرعہ کی طرف اشارہ کر رہا ہو اور اس طرح ”عموا“، ”کَلِم“ کی طرف اشارہ ہوگا جبکہ ”صموا“ پہلے کی طرح معنی کی طرف اشارہ ہوگا اس پر نظر رکھو۔

”فاعلان البشائر“ میں فاء وضاحت کرنے کیلئے ہے کیونکہ یہ ”عموا“ کی ویسے ہی وضاحت ہے جیسے ”بارقة الانذار“، ”صموا“ کی وضاحت ہے اور یہ اُلٹے لٹے وشر کے طریقے پر ہے جیسے اللہ کا فرمان ہے: ”يَوْمَ تَبْيَضُّ وُجُوهٌُ وَتَسْوَدُّ وُجُوهٌُ فَاَمَّا الَّذِينَ اسْوَدَّتْ

الایہ“ (سورۃ آل عمران آیت: ۱۰۶)۔

”اعلان“ کا مطلب ظاہر کرنا ہے ”البشائر“، ”بشیر“ کی جمع ہے یعنی پوشیدہ باتوں کی خبر دینے والا چنانچہ اس عبارت میں مضاف حذف ہوگا جو ”اعلان اخبار البشائر“ ہے۔

”لَمْ تَسْمِعْ“ تانیث کا صیغہ ہے اور اس کی ضمیر ”اعلان“ کی طرف جاتی ہے اور یہاں یہ نہ کہا جائے کہ ”اعلان“ کا لفظ مذکر ہے تو اس کی طرف ضمیر لوٹانا جائز نہیں کیونکہ ہم کہیں گے کہ اس لفظ نے یہ تانیث اپنے مضاف الیہ سے لی ہے اور یہ اس شعر کے مطابق ہوگا:

”وَمَا حُبُّ الدِّيَارِ شَغَفْنَ قَلْبِي“ (یہاں ”حب“ کے لفظ نے تانیث ”الدیار“ سے لی ہے جیسی تو ”شَغَفْنَ“ مؤنث کا صیغہ لایا گیا ہے)۔

”بارقۃ الانذار“ کا لفظ ”اعلان البشائر“ پر معطوف ہے اور ”بارقۃ“، ”بَرَق“ سے لیا گیا ہے جس کا معنی ہے: ”چمکا“ اور اس کی تاء تانیث کیلئے ہے یا مبالغہ کیلئے۔

”انذار“ کا معنی ہے: ”ڈراتے ہوئے بات پہنچانا“ اس میں استعارہ مکنیہ ہے کیونکہ ناظم نے ذہن میں ”انذار“ کو ”چیرنے“ کی بناء پر ”سیف“ (تلوار) سے تشبیہ دی ہے اور اس ”سیف“ کیلئے دو افراد کا دعویٰ کیا ہے ایک تو جانا پہچانا اور دوسرا انجانا جو ”انذار“ ہے پھر ”سیف“ کو انجانے فرد یعنی ”انذار“ کیلئے استعارہ کیا اور پھر خارج میں مشبہ یعنی ”انذار“ کو ذکر کر کے وہ ”انذار“ مراد لیا جو ”سیف“ کیلئے انجانا تھا چنانچہ یوں ناظم کا قول ”بارقۃ“ اس استعارے کی ”تخیل“ ہوگی۔

”لَمْ تَسْمِعْ“ یعنی نہ نظر پڑی اور نہ دیکھنے میں آئی اور یہ ضمیر ”بارقہ“ کی طرف لوٹی ہے۔



شعر (۶۷)

مِنْ مَبْعَدٍ مَا أَخْبَرَ الْأَقْوَامَ كَاهِنُهُمْ
بِأَنَّ دِينَهُمُ الْمَعْوَجَّ لَمْ يَقُمْ

(ترجمہ:) ”وہ اس وقت اندھے بہرے ہوئے جب ان کا کاہن (غیبی خبریں دینے والا)

انہیں یہ بات بتا چکا تھا کہ غلط راستے پر چلانے والا ان کا یہ دین اب رہے گا نہیں۔“

یہاں حضرت ناظم رحمہ اللہ نے ”عَمُوا“ اور ”صَمُوا“ کی دوسری وضاحت کی ہے چنانچہ انہوں نے اس شعر سے ”صَمُوا“ کی وضاحت کرتے ہوئے فرمایا ہے: ”من بعد ما اخبر الاقوام كاهنهم الخ“ اور یہ اشارہ بھی کر دیا ہے کہ ان کا رسول ﷺ کی پیروی نہ کرنا ان کی ہٹ دھرمی اور کفر کی وجہ سے تھا نہ کہ جہالت کی وجہ سے کیونکہ وہ کاہن ان کے ہاں سچا اور بھروسے والا تھا ان کا اسے سچا نہ جاننا ہٹ دھرمی ہی کی وجہ سے تھا چنانچہ ان کا ”من بعد“ فرمانا یا تو ”صَمُوا“ یا ”لم تسم“ کے ساتھ ”لم تسم“ یا دونوں میں سے کسی کے بھی ساتھ ہوگا اور جس نے اس کا تعلق ”عَمُوا“ یا ”لم تسم“ کے ساتھ جائز رکھا ہے تو وہ سمجھ ہی نہیں سکا کہ یہ شعر تو ان کے بہرے ہونے کی وضاحت ہے ہاں! البتہ یوں کہا جاسکتا ہے کہ اس نے یہ بات دوسرے شعر کو سامنے رکھ کر کہی ہے جو واضح ہے۔

”مَا“ مصدریہ ہے ”اقوام“، ”قوم“ کی جمع ہے اور اس کے بارے میں پہلے بتایا جا چکا ہے۔ یہ نصب کے ساتھ ”أَخْبَرَ“ کا مفعول ہے اور ”كَاهِنُهُمْ“ (رفع سے) اس کا فاعل ہے اور ”كَاهِنُ“ وہ ہوتا ہے جو نئی سی بات کرتا اور وحی کے بغیر آگے ہونے والے کام کی خبر دیتا ہے۔

کاہن کون ہوتا ہے؟

امام اصفہانی کی مفردات میں ہے کہ کاہن وہ شخص ہوتا ہے جو گمان کی بناء پر گذشتہ زمانے کی پوشیدہ باتوں کی خبر دیتا ہے جیسے وہ نجومی جو یونہی آئندہ زمانے کی خبریں دیتا ہے اور چونکہ ان دونوں باتوں کی بنیاد اس گمان پر ہوتی ہے جو غلط بھی ہوتا ہے اور کبھی صحیح بھی اس لئے رسول انور ﷺ نے فرمایا کہ ”جو نجومی اور کاہن کے پاس آ کر اس کی بتائی ہوئی بات کو سچ سمجھ لے تو اس نے اس چیز کا انکار کیا جو اللہ نے محمد (ﷺ) پر اتاری ہے“ (کنز العمال، کتاب السحر، حرف السین، جلد ۶ صفحہ ۳۱۹، رقم

الحديث: (۱۷۶۸۰)۔

علماء فرماتے ہیں کہ فتویٰ ایسے شخص کے بارے میں ہے جو نجومی اور کاہن کے سچا ہونے کا اعتقاد کرے لیکن جو ٹھٹھے یا جھٹلانے کی بناء پر ان سے کچھ پوچھے تو اس پر حدیث کا یہ فتویٰ نہیں لگے گا کیونکہ ایک اور حدیث میں آتا ہے کہ جو شخص کاہن کی بات کو سچا جانے تو اس کی چالیس دن رات کی نمازیں قبول نہ ہوں گی (مجمع الزوائد، کتاب الطب، باب فین اُتی کاہنا، جلد ۵ صفحہ ۲۰۲، رقم الحدیث: ۸۴۸۵)۔

ابن مالک فرماتے ہیں کہ مجھے ان دونوں باتوں کو ملانے کے بارے میں یہ سمجھ آتا ہے کہ یوں کہہ لیا جائے: کاہن کو سچا سمجھنے والا اس صورت میں کافر ہوگا جب وہ یہ یقین کر لے کہ وہ عالم الغیب ہے لیکن اگر وہ یہ یقین رکھے کہ اس کے دل میں اللہ نے یہ باتیں ڈالی ہیں یا یہ کہ جن فرشتوں سے سنی باتیں اسے بتاتے ہیں اور اسے سچا سمجھے تو کافر نہیں ہوگا۔ (انتہی)

چنانچہ ہماری بتائی بات سے کہی گئی بات کا غلط ہونا ظاہر ہو گیا اور کاہن کو اس کی غیبی باتیں بتانے پر اسے سچا سمجھنا ہر لحاظ سے کفر بنتا ہے اسے ذہن میں رکھو۔

”بَانَ دِينَهُمْ“ کا تعلق ”اخبر“ سے ہے۔ لغت میں ”دین“ فرمانبرداری اور جزاء کو کہتے ہیں اور یہاں اس کا معنی طریقہ ہے۔

”الْمُعَوَّج“ (نصب سے) ”دینہم“ کی صفت ہے یہ ”اعْوَجَّاج“ سے اسم مفعول ہے اس کا استعمال محسوس اور معقول چیزوں میں ہوتا ہے چنانچہ اگر اسے محسوس چیزوں میں استعمال کیا جائے تو اس کا معنی سیدھے راستے پر نہ چلنا ہے اور اگر معقول چیزوں میں استعمال ہو تو اس کا معنی ”جو چیز لائق نہیں“ ہے۔

”لم یقم“ کا معنی ”دائم نہیں“ ہے۔

یہودی کا ولادت محبوب پر بیان

سیدہ طیبہ طاہرہ عائشہ رضی اللہ عنہا بتاتی ہیں کہ ”ایک یہودی مکہ میں آٹھرا اور جب رسول انور صلی اللہ علیہ وسلم کے پیدا ہونے کی رات تھی تو اس نے کہا: اے قریشیو! کیا آج تمہارے یہاں کوئی بچہ پیدا ہوا ہے؟ انہوں نے کہا کہ ہمیں تو پتہ نہیں اس نے کہا کہ پتہ تو کرو کیونکہ اس رات اس امت کا نبی پیدا ہو چکا ہے جس کے دونوں کندھوں کے درمیان ایک نشان ہے۔ وہ واپس گئے اور لوگوں سے پوچھا تو انہیں بتلایا گیا کہ عبداللہ بن عبدالمطلب کے گھر ایک لڑکا پیدا ہوا ہے جس پر یہودی ان کے

ساتھ ان کی والدہ محترمہ کی خدمت میں پہنچا جنہوں نے آپ کو نکال کر ان لوگوں کے سامنے کر دیا۔ یہودی نے جب وہ نشانی دیکھی تو غش کھا کر گر گیا اور کہنے لگا کہ اے قریشیو! آج نبوت بنی اسرائیل کے ہاں سے نکل چکی ہے اللہ کی قسم! یہ اور ان کے ساتھی تم پر غالب آ جائیں گے اور اس نبوت کی خبر مشرق سے مغرب تک پھیل جائے گی۔ (انتہی) (فتح الباری، قولہ باب علامات النبوة فی الاسلام، جلد ۵ صفحہ ۵۸۳) ایسی خبریں بے شمار ہیں جنہیں بہت سے لوگ جانتے ہیں ان کی وضاحت یہاں بتانا ممکن نہیں۔



شعر (۶۸)

وَبَعْدِ مَا عَايَنُوا فِي الْأُفُقِ مِنْ شُهَبٍ
مُنْقِضَةٍ وَفَقَّ مَا فِي الْأَرْضِ مِنْ صَنَمٍ

(ترجمہ:) ”اور اس کے بعد یہ بھی دیکھا کہ آسمان سے ستارے یوں گر رہے ہیں جیسے زمین پر بت اوندھے ہو کر گرتے ہیں“ (لیکن آپ کو پھر بھی نہ مانا)۔

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے ”عَمُوا“ کی دوسری تفصیل بتاتے ہوئے فرماتے ہیں: ”وَبَعْدِ مَا عَايَنُوا الْخ“ اور ساتھ ہی دوسرے مصرعہ میں اس طرف بھی اشارہ ہے کہ ایک اور نشانی بھی تھی جو آپ کی ولادت مبارکہ کے دن دیکھی گئی۔

تحقیق الفاظ

واو عاطفہ ہے اور ”بَعْد“ کا عطف ”من بعد“ کے محل پر ہے۔ ”ما“ مصدر یہ ہے۔ ”عَايَنُوا“ معائنہ سے ہے جس کا معنی ”بات کا پوری طرح پتا لگانا“۔ ”فِي الْأُفُقِ“ کا تعلق ”عَايَنُوا“ سے ہے اور ”افق“ کی فاء پر سکون لفظ کو ہلکا کرنے کیلئے ہے جس کا معنی ہے: ”آسمان کے کنارے“۔ ”شہب“ ”ما“ کا بیان ہے۔

”شہب“ (دو ضمے) ”شہاب“ کی جمع ہے جو ”آگ کے شعلہ“ کا معنی دیتا ہے یا ”ستاروں“ کے معنی میں ہے کیونکہ ناظم نے اللہ کے فرمان ”فَاتَّبِعْ شُهَابِ ثَابِقٍ“ کی تفسیر آگ اور ستارے کے شعلہ سے کی ہے جو ظاہر ہے اور ”مُنْقِضَةٍ“ میں تین صورتیں ہیں: ”بَر“ اس وجہ سے کہ یہ ”شہب“ کی صفت ہے اور یہ بہت واضح ہے اور نصب کا آنا اس کے حال ہونے کی وجہ سے ہے اور رفع اس بناء پر کہ یہ مبتداء محذوف کی خبر ہے۔ یہ ”انْقِضَ“ سے اسم مفعول ہے جس کا معنی ”گرا ہوا“ ہے۔

آسمانی فیصلے زمین پر کیسے؟

ایک روایت ملتی ہے کہ اللہ تعالیٰ کوئی فیصلہ فرماتا ہے تو اسے عرش اٹھانے والے فرشتے سنتے ہیں چنانچہ وہ اللہ کو پاک کہتے ہیں اور پھر پہلے آسمان تک ان کے نیچے والے فرشتے بھی اللہ کو ہر ایک عیب سے پاک کہتے ہیں وہ ان سے پوچھتے ہیں کہ تم یہ تسبیح کیوں کر رہے ہو تو وہ وجہ بتاتے ہیں اور یہ خبر دنیا کے آسمان تک پہنچتی ہے جہاں سے شیطان جھپٹ کر اسے چوری کرتے ہوئے زمین پر موجود کائناتوں

کو آسناتے ہیں چنانچہ جس بات کو ویسی کی ویسی لے کر وہ آتے ہیں، وہ تو سچی ہوتی ہے لیکن وہ اسے بڑھا کر جھوٹ بولتے ہیں۔ ایسا جاہلیت کے دور میں ہوتا رہا لیکن جب حضور ﷺ کی ولادت مبارکہ ہو چکی تو شیطانوں کو شعلے مارے جاتے ہیں اور انہیں آسمانوں پر چڑھنے سے روک دیا گیا، فرشتے انہیں ستارے اور شعلے مارتے ہیں۔

اگر یہ کہا جائے کہ اللہ تعالیٰ کا فرمان ”فَمَنْ يَسْتَمِعُ الْآنَ يَجِدْ لَهُ شِهَابًا رَّصَدًا“ (سورۃ الجن، آیت: ۹) (پھر اب جو اسے سننا چاہے تو اسے دیکھنا ہوگا کہ اسے ستارے کا شعلہ ملتا ہے) یہ بتاتا ہے کہ شعلوں کا پھینکا جانا حضور ﷺ کے نبی بننے سے پہلے نہ تھا اور یونہی یہ شعر بھی یونہی بتا رہا ہے، پھر اللہ تعالیٰ کا فرمان ”وَجَعَلْنَاهَا رُجُومًا لِلشَّيْطَانِ“ (سورۃ الملک، آیت: ۵) (ہم نے ستاروں کو شیطانوں کیلئے برسنے والے آگ کے شعلے بنایا ہے) بھی یہ بتاتا ہے کہ یہ کام آپ سے پہلے ہوتا تھا کیونکہ ستاروں کے پیدا کرنے کے بارے میں آتا ہے کہ انہیں پیدا کرنے کے دو فائدے ہیں، خوبصورتی کرنا اور شیطان کو شعلہ بنا کر مارنا، خوبصورت کرنے کا فائدہ تو آپ کے نبی بننے سے پہلے ہی تھا تو پھر لازمی بات ہے کہ دوسرا فائدہ بھی پہلے ہی ہوگا؟ تو اس کا جواب یہ دیا گیا ہے کہ دونوں فائدوں کے ذکر میں یہ ضروری نہیں کہ یہ دونوں مل کر ایک ہی وقت میں ہوں، ایسا کیوں نہیں ہو سکتا کہ معنی یوں ہوں، ہم نے انہیں اس حیثیت میں بنایا کہ ان کے ذریعے شعلے مارے جائیں کیونکہ ”رَجْمٌ“ ایسی مصدر ہے کہ اس کا نام اس چیز کو دیا گیا ہے جس سے شعلے مارے جائیں۔

اس کی تائید اس بات سے ہوتی ہے جس میں مفسرین کا ایک گروہ بتاتا ہے کہ حضرت عیسیٰ علیہ السلام اور حضرت محمد ﷺ کے درمیان نبوت سے خالی پانچ سو سال کے دور میں آسمان کی حفاظت نہ تھی اور جب حضور ﷺ کو نبوت ملی تو شیطانوں کو روک دیا گیا اور آسمان کی حفاظت فرشتوں اور ستاروں کے شعلوں کے ذریعے کر دی گئی۔

”وَفَقَّ مَا“ (نصب سے) ”منقضہ“ مصدر کی صفت ہے تو معنی ہوگا: ”جو اس ٹوٹنے کی طرح

تھا جیسے زمین کی چیزیں ٹوٹیں“۔

”مِنْ صَنَمٍ“، ”مَا“ کا بیان ہے۔

”صَنَمٍ“ اور ”وَثْنٍ“ میں فرق

”صَنَمٍ“ اور ”وَثْنٍ“ میں فرق یہ ہے کہ ”وَثْنٍ“ اس چیز کو کہتے ہیں جس کا جُثْمہ اور جسم لکڑی، پتھر

اور چاندی وغیرہ سے بنا ہوا اور ”صنم“ صرف صورت ہوتی ہے جس کا جُتہ نہیں ہوتا۔ کچھ ایسے علماء بھی ہیں جنہوں نے ”وثن“ کو بھی ”صنم“ بنا دیا ہے۔

یہ قول اس طرف اشارہ کرتا ہے کہ جب حضور ﷺ کے ولادت مبارکہ کے موقع عرب کے بت اس وقت اوندھے گرے تھے جب وہ بیت اللہ شریف میں تھے اور جب حضور ﷺ کی ولادت مبارکہ ہوئی تو ان میں سے ہر بت اوندھا گر گیا۔ زیادہ تفصیل بڑی کتابوں میں ہے۔



شعر (۶۹)

حَتَّىٰ غَدَا عَنْ طَرِيقِ الْوَحْيِ مُنْهَزِمٌ
مِّنَ الشَّيَاطِينِ يَقْفُوا أَثَرَ مُنْهَزِمٍ

(ترجمہ:) ”چنانچہ وہ وقت آ گیا کہ وحی کے راستے (آسمان) سے شکست کھانے والے

شیطان واپس ہوتے ہوئے ایک دوسرے کے پیچھے بھاگ رہے تھے۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے پہلے شعر میں جب ستاروں کا گرنا بتا دیا تو اس کی تفصیل کی اور ان کے

گرنے کا فائدہ بیان کیا چنانچہ فرمایا: ”حَتَّىٰ غَدَا الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”حَتَّىٰ“ کا لفظ کسی کام یا جگہ کی انتہاء بتاتا ہے۔ ”غَدَا“ کا معنی ”منہ پھیرا“ کیونکہ یہ ”عَنْ“

کے ساتھ استعمال ہوا ہے اور جب یہ ”عَنْ“ کے ساتھ استعمال ہو تو منہ پھیرنے کا معنی دیتا ہے جیسے ”صَارَ“

ذَهَبَ“ اور ”رَغِبَ“ یہ معنی دیتے ہیں۔

”طَرِيقِ الْوَحْيِ“ سے مراد آسمان ہے کیونکہ حضرت جبریل علیہ السلام یہیں سے وحی لاتے

تھے۔

”منهزم“ (رفع سے) ”غَدَا“ کا فاعل ہے یہ اسم فاعل ہے ”انہزام“ سے جس کا معنی دشمن

سے تیزی کے ساتھ بھاگنا ہے۔

”مِنَ الشَّيَاطِينِ“، ”منهزم“ کی صفت ہے یہ شیطان کی جمع ہے۔ جملہ ”يَقْفُوا“ اس کا

حال ہے اس میں چھپی ضمیر ”منهزم“ کی طرف جاتی ہے۔ ”يَقْفُوا“، ”يَنْمُو“ کی طرح ”قْفُوا“

سے جس کا معنی پیچھے چلنا ہے جیسے شاعر کہتا ہے:

وَمَنْ يَقْفُ اَثَرَ الْهَزْبِ رَيْنَلِ بِهِ

طَرَائِحَ حُمْرِ الْوَحْشِ اِذْ هُوَ رَاتِعٌ

”جو درندہ شیر کے پاؤں کا نشان دیکھ اس کے پیچھے پیچھے چلا جائے تو چرتے ہوئے وحشی

گدھے کے لوٹھڑوں تک پہنچ جائے گا۔“

”اثر“ (نصب سے) ”يَقْفُوا“ کا مفعول ہے ”اثر“ ایڑی اور پیچھے کو کہتے ہیں چنانچہ عرب

کہتے ہیں کہ ”اثر“ سیر کرنا بتاتا ہے جبکہ مینگی اونٹ کا پتہ بتاتی ہے۔ یعنی شیطان ایک دوسرے پر سوار ہو کر آسمان پر چڑھتے ہیں اور ابھی آسمان پر پہنچتے بھی نہیں کہ ستارے ان پر ٹوٹتے ہیں، شعلے ان کا نشانہ ایسا لیتے ہیں کہ کبھی خطا نہیں کرتے چنانچہ کچھ کو تو جلا کر رکھ کر دیتے ہیں اور کچھ کے تھوڑے حصے جلاتے ہیں اور کچھ پاگل ہو جاتے ہیں۔

یوں نہ کہا جائے کہ شیطان تو آگ سے پیدا ہوا تو پھر بھلا جل کیسے سکتا ہے کیونکہ ہم کہیں گے کہ یہ خالص آگ سے پیدا نہیں ہوا جیسے انسان بھی خالص مٹی سے پیدا نہیں ہوا اور پھر یہ بھی ہے کہ طاقتور آگ کمزور آگ پر گھیرا ڈالتی ہے تو اسے جلا دیتی ہے جیسے سب جانتے ہیں۔



شعر (۷۰)

كَانَهُمْ هَرَبًا أَبْطَالُ أَبْرَهَةَ

أَوْ عَسْكَرٌ بِالْحَضَى مِنْ رَاحَتَيْهِ رُمَى

(ترجمہ:) ”وہ بھاگتے ہوئے یوں لگتے تھے کہ ابرہہ کے بہادر سپاہی (مکہ سے) بھاگے تھے یا اس لشکر کی طرح لگتے تھے جیسے آپ کے ہاتھوں کے ساتھ (جنگ حنین) میں کنکر مارے گئے تھے۔“

جب شیطانوں کا بھاگنا اور شکست کھانا خیالی سی بات تھی تو حضرت ناظم رحمہ اللہ اسے سننے والوں کے ذہنوں میں پختہ کرتے ہیں اور اس کیلئے اس بات کو دکھائی دینے والی چیز سے تشبیہ دیتے ہیں اور ساتھ ایک ایسی نشانی کی طرف اشارہ فرماتے ہیں جو رسول اللہ ﷺ کی وجہ سے ہوئی چنانچہ فرماتے ہیں: ”كَانَهُمْ هَرَبًا أَبْطَالُ اِبْرَهَةَ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”كَانَ“ تشبیہ کیلئے ہے اور اس کی ضمیر شیطین کی طرف جاتی ہے۔ ”هَرَبًا“، ”كَانَ“ کے اسم سے حال ہے اور یہ دوزبر کے ساتھ ڈر کر بھاگنے کے معنی دیتا ہے۔ ”أبطال“ (رفع سے) ”كَانَ“ کی خبر ہے جو ”بطل“ کی جمع ہے جس کا معنی ”بہادر“ ہوتا ہے۔

”ابرهہ“ یمن کا بادشاہ تھا جو حبشی تھا اور اصحاب فیل کا امیر تھا۔ حضرت ناظم رحمہ اللہ نے شیطانوں کے آسمانوں سے ایک دوسرے کے پیچھے بھاگنے کو ابرہہ کے لشکری بہادروں کے شکست کھا کر بھاگنے کے ساتھ تشبیہ دی اور اس کے حضور ﷺ کی وجہ سے ہونا بتایا ہے۔

اس واقعہ میں اختلاف ہے چنانچہ ہم بعض مفسرین کا ذکر کیا ہوا واقعہ بتاتے ہیں۔

ابرهہ بادشاہ کا واقعہ

ابرهہ حبشی یمن کا بادشاہ تھا بہت سے لوگ اس کے پیروکار تھے۔ ایک دن وہ ساتھیوں کو لے کر شکار کیلئے نکلا تو اس نے ایک قافلہ دیکھ کر پوچھا کہ یہ کون لوگ ہیں؟ ساتھیوں نے بتایا کہ ان کا مکہ میں ایک گھر ہے جس کی یہ ہر سال زیارت کرنے جاتے ہیں اس پر اسے غصہ آ گیا چنانچہ ان کی طرف

اس کام سے روکنے کیلئے کچھ آدمی بھیجے اور پھر اپنے وزیر سے پوچھا کہ یہ کیسے ہو سکتا ہے کہ ہمارا کوئی بھی گھرنہ ہو جس کی لوگ زیارت کر سکیں؟ جبکہ عرب تو مکہ میں اپنے گھر کی زیارت کرتے ہیں اور وہاں دروازے سے آتے ہیں۔ میں بھی چاہتا ہوں کہ ایسا گر جا بنا دوں کہ اس جیسا دنیا بھر میں نہ ہو۔ چنانچہ وہ نقشہ بنانے والوں کو لے کر جنگل کی طرف چل پڑا اور شہر صنعاء یمن سے تین گھنٹوں کے سفر پر ایک کھلے میدان میں پہنچا اور حکم دیا کہ اس مقام پر گر جا بنا دیا جائے چنانچہ انہوں نے بناتے ہوئے اسے مکمل کیا جس میں سونے، قیمتی جوہروں، فانوس لٹکا دیئے، اس میں ایسی کرسیاں رکھیں جن پر موتی اور کئی قسم کے قیمتی پتھر جڑے ہوئے تھے، اس کا نام ”قلیس“ رکھا اور اس گر جا کی حفاظت کیلئے خدمت گار آدمی مقرر کئے، اس کی دیواروں پر ایسے پردے لٹکائے جن پر سونے اور موتیوں سے نقشے بنائے اور پہرہ داروں سے کہہ دیا کہ اگر حجاز والوں میں کوئی ادھر آئیں تو انہیں اس کے اندر جانے کی اجازت دو کہ شاید اسے دیکھ کر وہ اپنا گھر بھول کر یہاں آنے لگیں۔

اسی دوران حجاز والوں کے چھ لوگ تجارت کی غرض سے سرزمین یمن میں پہنچے اور آپس میں کہنے لگے کہ شاہ یمن کا گر جا بہت مشہور ہو چکا ہے تو اسے دیکھے بغیر ہمیں جانا نہیں چاہیے، وہ اس کے دروازے پر آئے تو خادموں نے پوچھا کہ تم کون ہو؟ انہوں نے کہا کہ ہم مکہ کے رہنے والے ہیں چنانچہ انہوں نے انہیں اندر جانے کی اجازت دے دی، انہوں نے دیکھا تو حیران رہ گئے۔ اس پر ایک خادم نے پوچھا: کیا یہ اچھا ہے کہ تمہارا گھر؟ انہوں نے کہا کہ ہمارا گھر اچھا اور اعلیٰ ہے کیونکہ تم موتیوں اور سونے پر خوش ہوتے ہو لیکن ہم ایسی چیزیں نہیں دیکھتے، کعبہ تو وہ گھر ہے جسے اللہ کے نبی حضرت ابراہیم علیہ السلام اور ان کے لڑکے اسماعیل علیہ السلام نے بنایا ہے۔ اس کی کئی خصوصیتیں ہیں جن میں سے ایک یہ کہ جو بھی اس کے پردوں یا دروازے کے حلقے کو پکڑ کر اپنے پروردگار سے کچھ مانگتا ہے تو اس کی دعاء قبول کر لی جاتی ہے۔

چنانچہ ان کے درمیان جھگڑا پیدا ہو گیا جس پر ان چھ میں سے ایک نے گرجے کا دروازہ بند کر کے تلواریں کھینچیں اور سارے خادموں کو قتل کر دیا، پھر اندر پاخانہ کر کے دیواروں پر مل دیا اور انہیں لت پت کر دیا اور وہاں سے نکل کر حجاز واپس آ گئے۔

اب رہے کو پتہ چلا تو غصے میں پاگل سا ہو گیا اور وزیر سے کہنے لگا کہ جنگ کے ہتھیار مہیا کرو چنانچہ اس نے بہت سے ہتھیار جمع کئے اور بڑا لشکر اور بڑی ٹولیاں تیار کر لیں۔ اب اپنے وزیر کو چالیس ہاتھی

دے کر روانہ کر دیا، پھر ابرہہ بھی اہل مکہ کو قتل کرنے اور بیت اللہ جلانے کیلئے سوار ہو کر روانہ ہو گیا۔ جب وہ مکہ کے قریب پہنچے تو وہیں اترے اور قریش کے اونٹ بمع بکریاں ہانک لائے جن میں نبی کریم ﷺ کے دادا حضرت عبدالمطلب رضی اللہ عنہ کی بھی چار سو اونٹنیاں تھیں۔ حضرت عبدالمطلب کو اطلاع ملی تو انہوں نے ستر الباس پہنا، اچھی پگڑی باندھی اور اونٹنی پر سوار ہو کر ابرہہ کا رخ کیا اور جب سب سے بڑے ہاتھی محمود نامی کے پاس پہنچے تو فرمایا کہ میں محمد ﷺ کا دادا ہوں جو آخری زمانے کے نبی ہیں۔ اسے سن کر وہ ہاتھی پیچھے ہٹا اور اپنا سر زمین پر رکھ دیا اور چالپوسی کرنے لگا۔

حضرت عبدالمطلب وہاں سے چل کر ابرہہ کے بستر کے قریب پہنچے اور یوں دعا کی:

”اے اللہ! یا سمیع، یا بصیر، یا علیم، یا خبیر! تو نے اپنے حبیب کا نور ساٹھ سال میں بنایا ہے

چنانچہ اس نور والے کے صدقہ میں مجھے ان ظالموں کے سامنے گھٹیا اور شرمندہ نہ کر۔“

یہ سن کر ان پر رعب اور دبدبہ پڑ گیا چنانچہ ابرہہ اٹھ کر بستر سے نیچے آ کر کہنے لگا: اے شاہ مکہ اور شیخ حرم! میں آپ کو مر جا کہتا ہوں، آپ کیسے آئے؟ انہوں نے فرمایا: میں اس لئے آیا ہوں کہ تمہارے لشکری لوگوں نے میرے چار سو اونٹ پکڑ لئے ہیں، میں انہیں لینے آیا ہوں۔

یہ سن کر ابرہہ ہنس کر بولا: میں سمجھتا تھا کہ آپ مجھ سے کعبہ کے بارے بات کریں گے۔ حضرت عبدالمطلب نے فرمایا کہ کعبہ کا مالک میں نہیں، اس کا مالک موجود ہے جو اس کی خود حفاظت کرتا ہے، رہے اونٹ تو وہ میرا مال ہے۔

ابرہہ نے لشکریوں سے کہا کہ انہیں ان کے اونٹ واپس دے دو اور پھر چڑھ کر مکہ میں آئے اور اہل مکہ کو واقعہ سنایا اور اس کے ڈھیر سارے لشکر کے بارے میں بتایا تو وہ کہنے لگے کہ ہم تو اس کا مقابلہ نہیں کر سکیں گے چنانچہ وہ وہاں سے نکل کر بھاگ گئے اور مکہ خالی ہو گیا۔

اتنے میں حضرت عبدالمطلب رضی اللہ عنہ نے آ کر کعبہ کے دروازہ کا کنڈا پکڑ کر دعا کی اور گڑ گڑائے، اسی دوران آپ کی پیشانی سے نور نکل کر کعبہ میں گیا اور سیدھا آسمان کی طرف کھڑا ہو گیا۔ حضرت عبدالمطلب رضی اللہ عنہ نے یہ ماجرا دیکھا تو قوم سے فرمایا کہ واپس آ جاؤ! تمہیں مدد ملے گی تو خوف کی ضرورت نہیں اور نہ ہی غم کرو۔ انہوں نے آسمان کی طرف دیکھا تو بہت سے پرندے سمندر کی طرف سے آ پہنچے اور ابرہہ کے لشکر پر جمع ہو گئے، ہر پرندے کے پاس تین تین کنکر تھے، ایک ایک چونچوں میں اور دو دو پاؤں میں تھے اور ہر کنکر مسر کے برابر تھا اور ان میں سے ہر ایک

پر اس شخص کا نام تھا جسے وہ لگنا تھا چنانچہ جانوروں نے کنکر مارنے شروع کر دیئے، کنکر جسے بھی لگتا، اسے ہلاک کر دیتا چنانچہ ابرہہ کے علاوہ سارے کے سارے ہلاک ہو گئے۔

ابرہہ اپنے ملک کو بھاگا تو پرندہ اس کے سر پر بھی تھا، اس نے لوگوں کو واقعہ سنایا تو پرندے نے کنکر پھینک دیا جو اسے لگا تو وہ موقع ہی پر ہلاک ہو گیا۔

حضرت عبدالمطلب رضی اللہ عنہ نے یہ حال دیکھا تو ابو قیس پہاڑ سے نیچے اتر آئے اور ان کا سارا مال قبضے میں لے لیا۔ یہ سب کچھ حضور ﷺ کے مبارک نور کی وجہ سے ہوا تھا چنانچہ اسی وجہ سے اللہ تعالیٰ نے فرمایا: ”أَلَمْ تَرَ كَيْفَ فَعَلَ رَبُّكَ بِأَصْحَابِ الْفِيلِ الْآيَةَ“ (سورۃ الفیل، آیت: ۱) (آپ نے نہ دیکھا کہ آپ کے پروردگار نے ہاتھی والوں سے کیا سلوک کیا؟)

جسے اس سے زیادہ تفصیل کی ضرورت ہو تو اسے ”قصص الانبیاء“ کو دیکھنا ہوگا۔

”او عسکر بالحصی الخ“ ایک اور تشبیہ ہے جس کے ساتھ آپ کے ایک اور معجزے کا ذکر ہے۔ ”عسکر“ کا ابطال پر عطف ہے، مطلب یہ ہوگا کہ شیطان بھاگنے میں کافروں کے لشکر کی طرح تھے۔

”بالحصی“ کا تعلق آخر میں ”رُمی“ کے ساتھ ہے۔ ”حصی“ سے مراد چھوٹے کنکر ہیں اور ”من راحتیہ“ کا تعلق بھی آخر والے ”رُمی“ ہی سے ہے، ”راحتیہ“ کا مطلب دو ہتھیلیاں ہے اور اس کی ضمیر حضور ﷺ کی طرف جاتی ہے یعنی شیطان بھاگنے میں کفار کے اس لشکر جیسے ہیں جنہیں حضور ﷺ نے کنکر مارے تو وہ بے چین ہو کر بھاگ کھڑے ہوئے چنانچہ ایک روایت ملتی ہے کہ جب دو لشکر آمنے سامنے آ گئے تو رسول اللہ ﷺ نے مٹھی بھر کنکر لے کر پڑھا: ”شَاهَتِ الْوُجُوهُ“ (ان کے چہرے بھدے ہو جائیں) اور انہیں ان کی طرف پھینک دیا چنانچہ ہر ایک کی آنکھیں غبار اور کنکروں سے بھر گئیں اور وہ شکست کھا کر بھاگ کھڑے ہوئے۔

اگر تم کہو کہ مشہور اور حدیثوں سے ثابت تو یہ ہے کہ وہ کنکر ہتھیلی بھر تھے جیسے آنے والا شعر بتا رہا ہے تو پھر یہ کیسے صحیح ہوگا جو انہوں نے اس شعر میں دو ہتھیلیوں کا تشبیہ کے صیغہ سے ذکر کیا ہے؟ تو جواب میں آخر یہی کہا جاسکتا ہے کہ دو ہتھیلیوں کا ذکر دو موقعوں پر دو جنگوں کی بناء پر ہے یعنی ایک بدر میں جیسے امام بخاری نے ذکر کیا ہے اور دوسرا احد میں جیسے امام مسلم نے بتایا ہے اور دونوں جنگوں کی تفصیل جہاد کی فصل میں آرہی ہے۔

شعر (۷۱)

نَبَدًا مِیْہِ بَعْدَ تَسْبِیْحٍ مِیْبَطْنِہِمَا
نَبَدَ الْمَسْبِیْحِ مِنْ أَحْشَاءِ مُلْتَقِمِ

(ترجمہ:) ”(آپ نے) وہ کنکریاں دونوں ہتھیلیوں سے تسبیح کے بعد ایسے نکال پھینکیں جیسے تسبیح کہنے والے کو (اللہ تعالیٰ نے) مچھلی کے پیٹ سے باہر نکال پھینکا تھا۔“
حضرت ناظم رحمہ اللہ نے حضور ﷺ کے نبی ہونے سے پہلے عجیب طرح کی نشانیاں بیان فرما دیں تو ارادہ کیا کہ نبوت ملنے کے بعد والے کچھ معجزات کا ذکر بھی کر دیں چنانچہ فرمایا: ”نبد ابہ بعد تسبیح بطنہما الخ۔“

تحقیق الفاظ

”نَبَدًا“ مصدر ہے جو یا تو مقدر ”نَبَدَ“ کے ساتھ متعلق ہے یا ”رُمِی“ کے ساتھ اصل یوں ہے: ”نَبَدَ نَبَدًا“، ”نَبَدَ“ کا معنی ہاتھ سے پھینکنا ہے۔ ”بہ“ کی باء زائدہ ہے اور عمل کو طاقت دینے کیلئے ہے ضمیر ”حَصٰی“ کی طرف جاتی ہے۔

اگر یہ کہا جائے کہ یہ باء تو زائدہ ہے اس کا فائدہ نہیں کیونکہ پہلے شعر میں یہی چیز آ چکی ہے تو اسے دہرانے میں پہلے کی تلافی ہوگی تو میں کہوں گا: ہم یہ بات نہیں مانتے کہ اس میں کوئی فائدہ نہیں کیوں نہ ہوگا اسے دہرانا تو تاکید بنتا ہے سنئے کہ پہلی تو مطلق ہے اور اس میں قید ہے لہذا یہ بعینہ پہلی نہ ہوئی اور یہ معلوم ہے۔

”بعد تسبیح“، ”نَبَدًا“ کی طرف ہے یا ”رُمِی“ کی اور یہ تسبیح کنکروں سے نکلی تھی اور یہ تشبیہ کیسے ہوئی اس میں اختلاف ہے۔

”بطنہما“، ”تسبیح“ سے متعلق ہے۔ باء بمعنی ”فی“ ہے یا ظرف مستقر ہے چنانچہ یہ تسبیح کی صفت بنی اصل یہ ہے: ”کائن بطنہما“ تشبیہ کی ضمیر ”راحتین“ کی طرف جاتی ہے۔

اگر تم کہو کہ ”راحة“ کا معنی ہاتھ کا اندرونی حصہ ہوتا ہے اور اگر یہ ضمیر ان دونوں کی طرف لوٹے تو ناظم کے قول ”بطن“ کا استدراک ہوگا جو معلوم ہی ہے تو میں کہوں گا کہ ہم یہ بات نہیں مانتے کہ ”راحة“ کا معنی ہاتھ کا صرف اندرونی حصہ ہے مطلقاً ہاتھ نہیں اور اگر مان بھی لیا جائے تو یہ

کیوں ممکن نہیں کہ ”بطنہما“ کی ضمیر میں استخدا م ہو اور وہ یوں کہ اس کے مرجع یعنی ”راحتین“ سے ہاتھ کے اندرونی حصہ کا معنی لیا جائے اور اس کی طرف لوٹنے والی ضمیر سے مجازاً عام ہاتھ مراد لیا جائے جیسے لازم کا ذکر کر کے ملزوم مراد لیا جاتا ہے یا جیسے جزء کا ذکر کر کے کل مراد لیا جاتا ہے اور اگر تسلیم کر لیا جائے تو یہ کیوں ممکن نہیں کہ ”بطن“ کی اضافت ضمیر کی طرف اضافتِ بیانیہ ہو تو اس پر ذرا غور کر لو۔

اس مصرعہ کا حاصل معنی یہ ہوگا کہ رسول اللہ ﷺ نے ان کنکروں کو اس وقت پھینکا جب انہوں نے آپ کی دونوں ہتھیلیوں میں تسبیح پڑھ لی تھی چنانچہ ایک روایت ملتی ہے کہ حضور ﷺ نے وحی آنے کے بعد جب کنکریوں کی مٹھی لی تو آپ کے سنتے ہوئے انہوں نے تسبیح پڑھی پھر آپ نے حضرت ابو بکر رضی اللہ عنہ کو دیں تو ان کے ہتھیلی میں بھی ان کے سنتے ہوئے تسبیح پڑھی پھر حضرت عمر رضی اللہ عنہ کو دیں تو ان کے سنتے ہوئے انہوں نے ان کی ہتھیلی میں تسبیح پڑھی پھر حضرت عثمان اور حضرت علی رضی اللہ عنہما کو دیں تو ان کے سنتے ہوئے ان کی ہتھیلیوں میں بھی انہوں نے تسبیح پڑھی اور حضور ﷺ کے ساتھ بھی کئی وقتوں میں یوں ہوا جیسے علماء نے اسے تفصیلی کتابوں میں بیان کیا ہے۔

حضرت ناظم رحمہ اللہ اس حکم کی تشبیہ لائے ہیں جس کے ساتھ ایک دلچسپ واقعہ کی طرف اشارہ ہے چنانچہ فرماتے ہیں: ”نبذ المسبح الخ“ یہ نصب کے ساتھ ”رُمی“ کا مفعول ہے اور اداۃ (حرف جار کاف) محذوف ہے اصل یوں ہے: ”کنبذ المسبح“ اور ”نبذ“ اپنے مفعول کی طرف مضاف ہے اور اس کا فاعل محذوف ہے اصل یوں ہے: ”نبذ اللہ المسبح“۔ ”المسبح“ میں الف لام عہد کیلئے ہے یعنی ذہن میں موجود ”مُسَبِّح“ اور وہ حضرت یونس نبی علیہ السلام ہیں۔

”من“ کا تعلق ”نبذ“ کے ساتھ ہے۔

”احشاء“، ”حشی“ کی جمع ہے جو پیٹ کے معنی دیتا ہے اور جمع لانا یا تو حقیقت ہے کیونکہ حضرت یونس علیہ السلام تین پیٹوں میں تھے ایک پہلی مچھلی کا پیٹ، دوسرا دوسری مچھلی کا پیٹ اور تیسرا سمندر کا پیٹ یا پھر جمع کا لانا ایسے ہے جیسے ”فَقَدْ صَغَتْ قُلُوبُكُمْ“ (سورۃ التحریم آیت: ۴)۔

”والملتقم“ کا معنی ”نگلنے والا“ ہے لیکن یہاں مچھلی مراد ہے۔ پھر یاد رہے کہ تشبیہ عام پھینکنے میں ہے پھینکی ہوئی چیز میں نہیں اور یہ معلوم ہی ہے۔

اس مصرعہ کا حاصل مطلب یہ ہے کہ ”جیسے اللہ تعالیٰ نے اپنے نبی حضرت یونس علیہ السلام کو مچھلی

کے پیٹ سے سمندر کے ساحل پر آسانی اور سہولت سے پھینکا تھا، انہیں سختی سے نہیں پھینکا۔

حضرت یونس علیہ السلام کا واقعہ

حضرت یونس علیہ السلام کا واقعہ یوں ہے کہ اللہ تعالیٰ نے انہیں ایک لاکھ ستر ہزار افراد والی قوم میں بھیجا تھا لیکن ان میں سے کسی نے ان کی بات نہ مانی بلکہ دشمنی کرنے لگے جس پر انہوں نے شہر سے باہر نکل کر ان کے خلاف دعا کی کہ اے اللہ! انہیں سزا اور عذاب دے! چنانچہ حضرت جبریل علیہ السلام حاضر ہوئے اور بتایا: اللہ تعالیٰ کا حکم ہے کہ آپ ان کی طرف جا کر انہیں چالیس دن اور اسلام کی دعوت دیں، اگر وہ مان لیں تو بہتر ورنہ میں ان کی طرف عذاب بھیجنے والا ہوں۔

حضرت یونس علیہ السلام ان کے پاس گئے اور سینتیس دن تک اللہ کی طرف بلایا لیکن انہوں نے نہیں مانا جس پر انہوں نے انہیں تین دن بعد عذاب کی اطلاع دے دی اور جب چالیسویں دن کی رات آئی تو حضرت یونس علیہ السلام اللہ کی طرف سے اجازت لئے بغیر ان کے ہاں سے نکل آئے۔ صبح ہوئی تو ایک بڑا بادل ان کے سروں پر آ گیا جس پر انہوں نے سمجھا کہ یہ بارش ہے چنانچہ بادل کی طرف دیکھا تو اس کے کناروں سے آگ کے چنگارے نکل رہے تھے وہ ڈر گئے، شرمندہ ہوئے اور حضرت یونس علیہ السلام کی تلاش کرنے لگے وہ نہ مل سکے چنانچہ انہوں نے اپنے سربراہ سے کہا کہ اگر یونس غائب ہیں تو کیا ہوا، ان کا خدا تو غائب نہیں اور پھر سارے لوگ ایک نرم زمین پر جمع ہوئے، چنانچہ توبہ کی گڑ گڑاتے ہوئے اپنے بتوں کو توڑ دیا اور اللہ کا دین مانتے ہوئے سجدے میں گر گئے، جس اللہ نے ان کی دعا قبول فرمائی اور وہ عذاب ہٹا لیا۔

حضرت یونس علیہ السلام شہر سے دور ایک پہاڑ پر تھے اور اس حال سے واقف نہ تھے اسی دوران شیطان ان کے پاس ایک بوڑھے کی شکل میں آیا۔ حضرت یونس علیہ السلام نے اس سے پوچھا کہ تم کہاں سے آئے ہو؟ اس نے کہا کہ اسی شہر سے آیا ہوں، آپ نے فرمایا کہ شہر والوں کو کس حال میں چھوڑ آئے ہو؟ اس پر ابلیس نے کہا: جب میں وہاں سے آیا ہوں تو وہ ایک جھوٹے شخص کی تلاش کرتے پھرتے ہیں جس کا نام یونس ہے کیونکہ اس نے کہا تھا کہ تم پر عذاب آئے گا لیکن نہیں آسکا چنانچہ وہ اسے تلاش کرتے پھرتے ہیں اور اسے قتل کرنے کا ارادہ رکھتے ہیں۔

حضرت یونس علیہ السلام نے سوچا کہ میں ان کے پاس کیسے جاؤں جنہوں نے مجھے جھٹلا دیا ہے چنانچہ اللہ کی طرف سے وحی آئے بغیر غصے میں اپنی قوم کے پاس واپس جاتے ہوئے بحر روم پہنچے

یہ ایک سواریوں سے بھری ایک کشتی دیکھی تو اس پر سوار ہونے لگے اور سوار ہوتے ہی کشتی ڈمگانے لگی، قریب تھا کہ ڈوب ہی جاتی۔ اتنے میں ملا حوں نے کہا کہ یہاں ایک گنہگار اور بھاگا ہوا غلام ہوگا اور اس کشتی کا یہ طریقہ ہے کہ جب اپنے مالک سے بھاگا ہوا غلام اس میں سوار ہوتا ہے تو یہ چلتی ہی نہیں اور یہ بھی اس کی رسم ہے کہ ایسے موقع پر وہ قرعہ ڈالا کرتے ہیں اور جس کے نام کا قرعہ نکلے، اسے دریا میں ڈال دیتے ہیں چنانچہ کشتی میں بیٹھے لوگوں نے تین بار قرعہ ڈالا جس میں سے ہر مرتبہ حضرت یونس علیہ السلام ہی کے نام کا قرعہ نکلا، حضرت یونس علیہ السلام قرعہ ڈالے جانے والوں میں سے ہو گئے۔ اسی دوران حضرت یونس علیہ السلام اٹھے اور فرمایا کہ میں ہی گنہگار اور بھاگا ہوا غلام ہوں تو انہوں نے یا خود اپنے آپ کو دریا میں ڈال دیا جنہیں مچھلی نے نگل لیا، پھر اس سے بڑی مچھلی آئی اور اس نے اس مچھلی کو بھی نگل لیا اور اسے دریا کی گہرائی میں لے گئی چنانچہ آپ اس میں چالیس دن تک رہے، پھر تین تاریکیوں میں بولے اور اللہ کی تسبیح کہتے ہوئے عرض کی: "لَا إِلَهَ إِلَّا أَنْتَ سُبْحَانَكَ إِنِّي كُنْتُ مِنَ الظَّالِمِينَ" (سورۃ الانبیاء آیت: ۸۷) اللہ نے ان کی دعا قبول فرمائی جس کا سبب ان کی تسبیح بنی اور مچھلی کو نکال کر ساحل پر پہنچا دیا، اللہ نے ان پر کدو کا پودا لگا دیا تاکہ اس کا سایہ لے سکیں۔ کچھ دن بعد بستی کی طرف گئے، آگے سے بستی والے ملے اور ان کی عزت اور تعظیم کی۔ باقی پورا واقعہ امام تغلبی کی کتاب قصص الانبیاء میں موجود ہے۔



پانچویں فصل:

معجزاتِ مصطفیٰ ﷺ

شعر (۷۲)

جَاءَتْ لِذَعْوَتِهِ الْأَشْجَارُ سَاجِدَةً

تَمْتَثِيهِ عَلَى سَاقٍ مِثْلًا قَدَمِ

(ترجمہ:) ”پھر آپ کے بلانے پر سجدہ کرتے اور پاؤں کی بجائے تنوں پر چلتے ہوئے

درخت تک بھی خدمت میں حاضر ہوئے۔“

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے جب پہلے شعر میں اس معجزے کا ذکر کیا کہ کنکریوں نے آپ کی ہتھیلی میں تسبیح پڑھی تو ایک اور معجزہ بتانے لگے جبکہ ان دونوں معجزوں میں ایک تعلق پایا جاتا ہے کہ دونوں ہی بے جان تھے اور دونوں نے آپ کی نبوت پر شہادت دی وغیرہ کہ اگر تم اس میں غور کرو تو یہ عجیب و غریب نظر آئیں گے چنانچہ اسی وجہ سے فرمایا: ”جاءت لدعوتہ الاشجار الخ“۔

تحقیق الفاظ

”جاءت“ یعنی آپ کے بلانے پر حاضر ہوئے یعنی جب آپ نے حکم دیا وہ آپ کی نبوت پر شہادت دے رہے تھے جیسے اس کا واقعہ آگے آ رہا ہے۔

”الاشجار“ (رفع سے) ”جاءت“ کا فاعل ہے اور یہ ”شجر“ کی جمع ہے۔

شجر، نبات اور نجم میں فرق

اخوان الصفاء میں شجر، نبات اور نجم کا فرق بتاتے ہوئے فرمایا کہ شجر وہ ہوتا ہے جو اپنے تنے پر کھڑا ہوتا ہے، ہوا میں بلند ہوتا، گرمیوں میں پتوں والا اور سردیوں میں اس کے پتے جھڑ جاتے ہیں، پھل نکالتا ہے اگرچہ کھایا نہ جائے۔

”نبات“ وہ ہے جو دانے اور بیج سے نکلتا ہے۔

نجم وہ جو بیج کے بغیر اگتا ہے اور زمین پر پھیل جاتا ہے جیسے خشک و تر گھاس، ان سب میں مزہ اور رنگ بُو بھی ہوتے ہیں۔ (انتہی) تاہم یہاں شجر سے مراد کھجور کا درخت ہے، کچھ اور بھی کہتے ہیں۔

”ساجدة“ (نصب سے) ”اشجار“ سے حال ہے اور ”سجدہ“ یہاں یا تو حقیقی معنی میں ہے یا اس سے مراد عاجزی اور جھک جانا ہے جیسے ”رکوع“ کا لفظ اللہ کے اس فرمان میں عاجزی کیلئے آیا ہے: ”يَمْرِيْمُ افْتِي لِرَبِّكَ وَاسْجُدِي وَارْكَعِي مَعَ الرَّاكِعِيْنَ ۝“ (سورۃ آل عمران، آیت: ۴۳) اور جب درختوں کے آنے کی حالت کے بارے میں یہ وہم پیدا ہوا کہ کیا ان کا قدم پیدا کیا گیا تھا یا وہ قدموں کے بغیر آئے تھے تو اسے دور کرتے ہوئے فرمایا: ”تَمْشِيْ اِلَيْهِ“ اور یہ جملہ یا تو استیناف ہے یا حال ہے۔ ”اِلَيْهِ“ اسی سے متعلق ہے اور ضمیر حضور ﷺ کی طرف جاتی ہے۔ ”علی ساق“، ”تَمْشِي“ سے متعلق ہے اور ناظم کا قول ”بلا قدم“ یا تو ”تمشی“ سے متعلق ہے یا ظرف مستقر ہے جو ”ساق“ کی صفت یا اس سے حال ہے اور معنی کے لحاظ سے تاکید ہے جو ظاہر ہے۔

اس شعر میں عام عادت کے خلاف کام ہیں جیسے نباتات کا خطاب سمجھنا حالانکہ ان میں سوجھ بوجھ نہیں ہوتی، پھر ان کا آنا، حرکت کرنا، آپ کا ارادہ کرنا، آپ کے سامنے عاجزی کرنا اور تنے پر قدموں کے بغیر چلنا۔

علامہ عصام فرماتے ہیں کہ روایتوں کے مطابق آنا صرف ایک درخت کا کام تھا تو پھر اشجار جمع کا لفظ لانا یہ معنی دیتا ہے کہ اس کی حرکت بار بار تھی حالانکہ تنہا تھا لیکن عصام اس سے غافل ہیں جو مواہب اور شفاء شریف میں ہے کیونکہ مواہب میں یہ ذکر کیا گیا ہے جسے امام احمد نے حضرت ابوسفیان رضی اللہ عنہ سے روایت کیا ہے کہ ایک دن حضرت جبریل علیہ السلام رسول اکرم ﷺ کی خدمت میں حاضر ہوئے، آپ غمگین تھے اور جسم پر خون لگا تھا کیونکہ مکہ والوں میں سے بعض نے آپ کو مارا تھا۔ اسی دوران حضرت جبریل علیہ السلام نے عرض کی کہ آپ پسند کریں تو میں ایک نشانی بتا دوں؟ آپ نے فرمایا: ہاں! بتاؤ۔ اس نے عرض کی کہ اس درخت کو آواز دیجئے جو وادی کی پچھلی طرف ہے۔ آپ نے آواز دی تو وہ چلتے ہوئے حاضر ہوا اور آپ کے سامنے کھڑا ہو گیا۔ پھر عرض کی کہ اسے حکم فرمائیے کہ واپس اپنی جگہ پر چلا جائے، آپ نے حکم دیا تو واپس اپنی جگہ پر چلا گیا۔ اس پر رسول اللہ ﷺ نے فرمایا کہ بس اتنا ہی کافی ہے۔

(سنن ابن ماجہ، کتاب الفتن، باب الصبر علی البلاء، جلد ۴، صفحہ ۳۷۲، رقم الحدیث: ۴۰۲۸)

حضرت بریرہ رضی اللہ عنہ فرماتے ہیں کہ ایک دیہاتی آپ کی خدمت میں حاضر ہوا اور کوئی نشانی مانگی۔ آپ نے فرمایا: اس درخت سے کہو کہ تمہیں رسول اللہ ﷺ بلا تے ہیں چنانچہ وہ درخت

دائیں بائیں اور آگے پیچھے جھکا تو اس کی جڑیں اُکھڑ گئیں، وہ حاضر ہو کر آپ کے سامنے کھڑا ہو گیا اور عرض کی کہ ”السلام علیک یا رسول اللہ“۔ دیہاتی نے عرض کی: اسے حکم فرمائیے کہ واپس اپنی اُگنے کی جگہ پر چلا جائے۔ آپ نے حکم فرمایا تو وہ واپس ہوا اور اس کی جڑیں لٹکی ہوئیں اپنی جگہ پر جا لگیں اور وہ ٹھہر گیا۔ (الحديث) (مسند البز از مسند بریدہ بن الحصیب، جلد ۲ صفحہ ۱۴۳، رقم الحدیث: ۴۴۵۰)

حضرت جابر رضی اللہ عنہ کی ایک حدیث میں ہے کہ رسول اکرم ﷺ قضاء حاجت کیلئے تشریف لے گئے تو پردہ کیلئے کوئی چیز نہ دیکھی، یکا یک دو درخت دیکھے جو وادی کے کنارے پر تھے، آپ چلے اور ان میں سے ایک کی ٹہنیاں پکڑ لیں اور فرمایا کہ اللہ کے حکم سے جھکتے ہوئے میرے ساتھ چلو، وہ حکم مان گیا اور آپ کے ساتھ چل کر ایک اور درخت کے پاس آ گیا، آپ نے اس کی بھی ایک ٹہنی پکڑ کر فرمایا کہ آؤ میرے ساتھ چلو! چنانچہ جب دونوں کے درمیان آدھے راستے تک آیا تو فرمایا: دونوں اللہ کے حکم سے مل کر میرے گرد ہو جاؤ، چنانچہ وہ مل گئے اور جب اپنی حاجت فرمائی تو اپنی اپنی جگہ پر چلے گئے۔ (صحیح مسلم، کتاب الزهد والرقائق، حدیث جابر الطویل، صفحہ ۱۶۰۵، رقم الحدیث: ۳۰۱۲) اس طرح کی مثالیں شفاء شریف میں موجود ہیں۔



شعر (۷۳)

كَأَنَّمَا سَطَرَتْ سَطْرًا لِّمَا كَتَبَتْ
فُرُوعُهَا مِنْ بَدِيعِ الْخَطِّ فِي اللَّقْمِ

(ترجمہ:) ”یوں لگتا تھا کہ جیسے ان درختوں نے راستے کے درمیان خوبصورت خط میں لکھتے وقت لکیریں لگا دی تھیں۔“

جب یہ وہم پیدا ہوا کہ ناظم سے درختوں کے پاؤں کے بغیر پنڈلیوں (تنوں) پر چلنے کی حالت کے بارے میں پوچھا جائے گا تو انہوں نے بڑی اچھی تشبیہ دیتے ہوئے کہا: ”كَأَنَّمَا سَطَرَتْ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”كَأَنَّ“ تشبیہ کیلئے ہے اور ”مَا“ کافہ ہے یعنی گویا کہ آنے کے دوران درختوں نے لکھا اور نشان لگائے۔ ضمیر ”اشجار“ یا ”فروعها“ کی طرف جاتی ہے اور ”سَطْرًا“ اس کا مفعول مطلق ہے ”لما“ میں ”مَا“ وقت یا سبب بتانے کیلئے ہے۔ ”مَا“ موصولہ ہے اور ”کتبت“ اس کا صلہ ہے اور موصول کی ضمیر محذوف ہے اصل یوں ہے: ”كَتَبَتْهُ“ یا ”مَا“ کا لفظ مصدر یہ ہے اصل یوں ہوگا: ”لكتابة الفروع“ اور ہر تقدیر پر ”فروعها“ (رفع سے) ”كَتَبَتْ“ کا فاعل ہے اور ”فروع“ بمعنی ٹہنیاں اور شاخیں، ضمیر ”اشجار“ کی طرف جاتی ہے۔

”من بدیع الخط“، ”مَا“ کا بیان ہے اور اس کی ”خط“ کی طرف ان جیسی اضافت ہے جہاں صفت کی موصوف کی طرف اضافت ہوتی ہے یہ یوں ہوگا: ”الخط البدیع“ یعنی خوبصورت خط۔

”فی اللقم“ کا تعلق ”کتبت“ سے ہے اور یہ لفظ دوزبروں کے ساتھ ”وَسَطُ الطَّرِيقِ“ (راستہ کا درمیان) کے معنی میں ہے اب معنی یہ ہوگا: درخت، ٹہنیوں اور شاخوں کی خوبصورت سطریں لکھنے کیلئے راستہ میں جمع ہوئے جو بہت سارے معنی دیتی ہیں۔

اس شعر میں استعارہ تمثیلیہ ہے اور وہ یوں کہ درختوں اور ان کی ٹہنیوں سے نکالی ہوئی ہیئت ان کے سطریں بنانے اور ان کی شاخوں کے راستے کے درمیان لکیریں کھینچنے کو اس ہیئت سے تشبیہ دی جائے جو حقیقی کاتب ہے اس کے سطروں کے ساتھ سطروں کا انتظام کرنے اور اسے کاغذ پر خوبصورت

لکھنے کیلئے نکالی گئی ہے۔

ان دونوں شعروں میں یہ اشارہ ہے کہ حضور ﷺ کے فوری حکم ماننے میں مسلمانوں کو تیزی دکھاتے ہوئے فرمانبرداری کا حق ادا کرنا چاہیے اور جب درخت حضور ﷺ کی اطاعت اور فرمانبرداری کے لیے تیار ہو سکتے ہیں تو آپ کی امت کا حق اس سے بڑھ کر ہے۔



شعر (۷۴)

مِثْلُ الْغَمَامَةِ اَنْى سَارَ سَائِرَةٌ

تَقِيَهُ حَرًّا وَطَيْسٍ لِلْهَجِيرِ حَمِي

(ترجمہ:) ”وہ درخت آپ کیلئے اس بادل کی طرح تھے جو آپ کے کسی بھی جگہ تشریف لے جاتے ہوئے آپ پر سایہ کرتا اور آپ کو دوپہر کی سخت گرمی سے بچاتا تھا۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ پہلے معجزہ کو بیان کر کے ایک اور معجزہ بیان کرنے لگے ہیں اور ساتھ ہی ان دونوں معجزوں کا آپس میں تعلق بتاتے ہیں اور یہ تعلق کئی طرح سے ہے کیونکہ حضور ﷺ جہاں بھی تشریف لے جاتے وہ بادل آپ کے ساتھ ہوتا اور فرمانبرداری کرتا، یونہی درخت آپ کے اطاعت گزار اور فرمانبردار تھے اور آپ کے حکم پر کسی بھی جگہ چلے جاتے دوسرے یہ کہ بادل حضور ﷺ پر سایہ کر کے سورج کی سخت دھوپ سے بچایا کرتا اور یونہی درخت بھی حضور ﷺ پر سایہ کر دیتے جیسے صحیح روایتیں ملتی ہیں کہ حضور ﷺ جب جنگل میں سوئے ہوتے تو درخت آ کر آپ پر سایہ کر دیتے تیسرے یہ کہ وہ بادل نباتات اور درختوں وغیرہ کے اُگنے کا سبب تھا، چنانچہ فرمایا: ”مثل الغمامة الخ“۔

تحقیق الفاظ

”مثل“ اس بناء پر منصوب ہے کہ یہ محذوف مصدر کی صفت ہے یعنی یوں تھا: ”بادل کی طرح آنا“ یا اس پر اس لحاظ سے رفع ہے کہ محذوف مبتداء کی خبر ہے یعنی عبارت یوں ہے: ”یہی درخت بادل کی طرح ہیں۔“

”غمامة“ (غ پر زبر) کا معنی بادل ہے۔

یہاں علامہ عصام نے ہلکی بات کی ہے کہ ”غمامہ“، ”عمامہ“ کی طرح ہے کیونکہ یہ عین کی زیر کے ساتھ ہے، قاموس میں یونہی ہے۔

”انسى“ (ہمزہ پر زبر) ”اَیْسَنَ“ کے معنی میں ہے یعنی آپ جہاں تشریف لے جاتے یا یہ ”کیف“ کے معنی میں ہے تو معنی ہوگا: جیسے بھی آپ جاتے سوار ہو کر یا پیدل، جلدی یا ست رفتار سے اور ان دونوں صورتوں میں یہ آخر والے لفظ ”سائرہ“ کی ظرف ہے اور یہ یا تو رفع سے ہے کہ

یہ محذوف مبتداء کی خبر ہے یعنی ”ہی سائرة“ ہے اس صورت میں یہ جملہ بادل کے حال کا بیان ہوگا یا اس بناء پر منصوب ہے کہ یہ ”غمامہ“ سے حال ہے۔

”تَقِيهِ“ کا معنی ”انہیں بچاتا ہے“ ہے اس میں فاعل کی ضمیر ”غمامہ“ کی طرف جاتی ہے اور مفعول والی حضور ﷺ کی طرف یہ جملہ یا تو حال ہے یا سیر کرنے کے سبب بیان کرنے کیلئے استیناف ہے (نئی بات شروع ہوتی ہے) تو یہاں ایک قیاس ترتیب دیا جاسکتا ہے اور وہ یوں کہ ”بادل وہاں چلتا تھا جہاں نبی کریم ﷺ تشریف لے جاتے کیونکہ بادل نبی کریم ﷺ پر سایہ کرتا اور آپ کو دوپہر کی سخت گرمی سے بچاتا تھا اور جس شے کی یہ شان ہو وہ نبی کریم ﷺ کے ساتھ ساتھ چلے گی تو نتیجہ مرضی کے مطابق نکلے گا۔

”حَرًّا وَطَيْسٍ“ (نصب سے) ”تَقِي“ کا دوسرا مفعول ہے لیکن حذف اور ملانے کے طور پر یعنی یوں: ”مِنْ حَرِّ وَطَيْسٍ“، ”الوطيس“ تنور کو کہتے ہیں لیکن اسے سورج کے معنی کیلئے استعارہ کیا گیا کیونکہ زوال کے وقت والے سورج کو سخت گرمی کی وجہ سے تنور کے ساتھ تشبیہ دی گئی چنانچہ تنور کو سورج کیلئے استعارہ کیا گیا اور تنور بول کر سورج مراد لیا گیا۔

”للہجیر“ میں لام وقت بتانے کیلئے ہے یہ ظرف مستقر اور ”وطيس“ کی صفت ہے یا اس کیلئے ظرف ہے یا ”حَرًّا“ کیلئے ظرف ہے۔ ”ہجیر“ کا معنی آدھا دن یعنی دوپہر ہوتا ہے جب گرمی سخت ہوتی ہے چنانچہ عرب کہتے ہیں: ”الْهَجِيرُ يَبَسُ النَّبْتُ وَالْحَوْضُ“ (دوپہر نے بوٹی اور حوض کو خشک کر دیا)۔

”حَمِي“ فعل ماضی ہے اور آخر میں سکون عارضی ہے کیونکہ یہاں وقف ہے یہ ”وطيس“ کی صفت ہے ”الحمي“ کا معنی سخت گرمی ہے چنانچہ کہتے ہیں: ”حَمِي النَّهَارُ“ (مینیم پرزیر) جب اس کی گرمی سخت ہو۔

حاصل معنی یہ ہے کہ ”درخت آپ کے سامنے آ کر سجدہ کرتے ہیں بادل کی طرح جو ادھر چلتا تھا جدھر نبی کریم ﷺ چلتے تھے کیونکہ وہ اللہ کی قدرت سے آپ کا دھوپ سے بچاؤ کرتا تھا جو زوال کے وقت سخت ہوتی ہے۔

واقعہ بکیرہ راہب

اس شعر میں بکیرہ راہب کے واقعہ کا ذکر ہے اور وہ یوں کہ جب حضور ﷺ حضرت سیدہ خدیجہ

رضی اللہ عنہا کے فائدہ کی خاطر شام کی طرف روانہ ہوئے تو اللہ تعالیٰ نے آپ کو دھوپ کی گرمی سے بچانے کیلئے آپ کے لیے بادل بھیجا، یہ قافلہ بحیرہ راہب کے عبادت خانہ پر پہنچا تو وہاں درخت کے نیچے اتر پڑا چنانچہ وہ درخت خشک ہونے کے باوجود آپ کے قریب ہوا، یہ دیکھ کر بحیرہ راہب باہر نکلا قافلہ دیکھا اور وہ بادل بھی دیکھا جو آپ پر سایہ کر رہا تھا چنانچہ اسی وجہ سے آپ کو پہچان لیا اور سوچا کہ اس کے نیچے نبی ہی ہو سکتا ہے۔ اس نے دعوت کا انتظام کیا اور قافلے کو اس لئے بلایا کہ اس کرامت والی شخصیت کا پتہ لگائے چنانچہ وہ حضور ﷺ کو سامان کی حفاظت کیلئے چھوڑ کر سارے کے سارے چلے آئے کہ انہیں آپ پر بھروسہ تھا۔ اتنے میں راہب نے دیکھا کہ بادل اپنی جگہ سے نہ ہٹا چنانچہ قافلہ والوں سے پوچھا کہ کیا تمہارے ٹھہرنے کی جگہ پر کوئی شخص باقی ہے؟ انہوں نے کہا کہ حفاظت والے کے علاوہ کوئی نہیں، وہ سامان کی حفاظت کر رہے ہیں۔ راہب نے انہیں لانے کو کہا چنانچہ انہیں بھی لایا گیا اور جب آپ اس عبادت خانہ کے پاس آئے تو راہب نے بادل کو دیکھا کہ وہ دروازے پر کھڑا ہے، اس نے اندر جا کر کہا: اے جوان! کس شہر کے ہو؟ فرمایا: میں مکہ سے ہوں، اس نے پوچھا کہ کس قبیلے سے ہو؟ آپ نے بتایا کہ قریش سے۔ پھر پوچھا: تمہارا نام کیا ہے؟ آپ نے فرمایا کہ میرا نام محمد ہے۔

یہ سن کر راہب آگے بڑھا اور آپ کی دونوں آنکھوں کے درمیان بوسہ دیا اور ”لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ مُحَمَّدٌ رَسُولُ اللَّهِ“ پڑھ کر مسلمان ہو گیا اور اس پر اچھی طرح سے قائم رہا۔ پورا واقعہ سیرت کی کتابوں میں مذکور ہے۔



شعر (۷۵)

أَقْسَمْتُ بِالْقَمَرِ الْمُنَشَقِّ إِنَّ لَهُ
مِنْ قَلْبِهِ نِسْبَةً مَبْرُورَةً الْقَسَمِ

(ترجمہ:) ”میں دو ٹکڑے ہونے والے چاند کی سچی قسم کھا کر کہتا ہوں کہ ”اسے آپ کے دل کے ساتھ گہرا تعلق ہے۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ ایک اور معجزہ کی طرف مڑے ہیں جسے پہلے معجزے سے کئی طرح کا تعلق ہے وہ آسمانی تھا تو یہ بھی آسمانی، وہ نبی کریم ﷺ کا خاصہ تھا تو یہ بھی ویسا ہی ہے اور جیسے وہ حضور ﷺ کے سامنے جھکا اور حکم مانا تھا تو یہ بھی ویسا ہی ہے چنانچہ فرمایا: ”اقسمت بالقمر الخ“۔

”اقسمت“ متکلم کا صیغہ ہے ”قسم“ سے جس کا معنی قسم کھانا ہے ”اقسام“ سے نہیں کہ وہ یوں نہیں آیا کرتا۔ ”بالقمر“ کا تعلق ”اقسمت“ سے ہے چنانچہ ”قمر“ وہ چیز ہوئی جس کی قسم کھائی گئی۔

اللہ کے علاوہ قسم کا حکم

اگر تم کہو کہ بندوں کی طرف سے اللہ کے نام کے علاوہ کسی چیز کی قسم کھانا جائز نہیں بلکہ ہمارے مشائخ تو یہاں تک کہتے ہیں کہ یہ اس وقت کفر ہے جب پکے اعتقاد کے ساتھ کسی چیز کی قسم کھائے اس سے بچنا چاہیے اور اس شرط پر حرام ہے اگر اس کے علاوہ کھائے چنانچہ رسول اللہ ﷺ نے فرمایا ہے کہ ”جس نے اللہ کے نام کے علاوہ کسی اور چیز کی قسم کھائی تو وہ مشرک ہوا“ (سنن ترمذی، کتاب النذور والایمان، باب ما جاء فی کراہیۃ الحلف لغير اللہ جلد ۳ صفحہ ۱۸۵، رقم الحدیث: ۱۵۴۰) (ترمذی شریف اور حاکم نے سند صحیح کے ساتھ یہ روایت حضرت ابن عمر رضی اللہ عنہما سے کی ہے) اور حضرت ابن عباس رضی اللہ عنہما فرماتے ہیں کہ اللہ کی قسم کھا کر گنہگار ہونے سے بہتر ہے کہ اللہ کے بغیر قسم کھائے اور بری ہو جائے (مرقات الفاتح، کتاب النذور والایمان، الفصل الاول، جلد ۶ صفحہ ۵۷۹، رقم الحدیث: ۳۴۰۷) تو پھر حضرت ناظم رحمہ اللہ کا چاند کی قسم کھانا کیسے جائز ہوگا؟ تو میں کہتا ہوں کہ اس کا جواب کئی طرح سے ہے، اول یہ کہ عبارت میں مضاف کا حذف مانا جائے گا اور وہ یوں: ”اقسمت برب القمر“ یا ”خالق القمر“ جیسے بہت سے مفسرین نے اللہ کے اس فرمان میں مقدر مانا ہے ”والشمس“ (سورۃ الشمس، آیت: ۱)

والضحیٰ“ اور ”وَاللَّيْلِ“ (سورۃ الضحیٰ، آیت: ۲-۱) وغیرہ میں۔

دوسری صورت یہ ہے کہ یہ قول اگرچہ قسم کی شکل میں ہے لیکن اس سے مراد اللہ کے بغیر قسم نہیں ہے کیونکہ عرب لوگ جب کلام کے مضمون کی تاکید کرتے، اسے رواج دیتے اور اسے سچ ہونا بتانا چاہتے ہیں تو اسے قسم کی شکل میں ذکر کرتے ہیں کیونکہ یہ تاکید کرنے والی چیزوں میں زیادہ طاقت والی ہے اور اس میں بچاؤ ہے اور اس کا مقصد شرعی قسم نہیں ہے۔

تیسری صورت یہ ہے کہ کہا جائے: اللہ کے نام کے بغیر قسم کھانا حنفی مذہب میں جائز نہیں جبکہ حضرت ناظم رحمہ اللہ شافعی ہیں جیسے گزرا تو ان کے مذہب میں اللہ کے بغیر قسم جائز ہے۔

”قمر“ کا لفظ رات کے وقت روشن ہونے والے ستارے پر بولا جاتا ہے جو تین راتوں کا ہو اور اس سے پہلے اسے ”ہلال“ کہتے ہیں۔

”المنشِق“ (زیر سے) ”قمر“ کی صفت ہے یہ ”انشقاق“ سے اسمِ مفعول ہے جس کا معنی پھٹنا ہوتا ہے اور چاند کا پھٹنا قرآن و احادیث سے ثابت ہے چنانچہ مشکوٰۃ شریف میں ہے کہ لعنتی ابو جہل اور اس کے پیروکار جب آپ کا مقابلہ کرنے سے عاجز آگئے اور آپ کی شریعت کا سورج دن بدن بلند ہونے لگا اور لوگ ایمان لانے لگے تو انہوں نے شام کے امیر حبیب بن مالک کو خط لکھا جس میں ابا بعد کے بعد لکھا کہ ہمارے ہاں ایک آدمی ہے جو جادوگر اور جھوٹا ہے، وہ ایک رب کو ماننے کا دعویٰ کرتا ہے اور نیا دین لایا ہے، وہ ہمارے خداؤں کو گالیاں دیتا ہے اور جب بھی ہم دلیل سے اس کا سامنا کرتے ہیں تو وہ آجاتا ہے آج تمہارا اور تمہارے بڑوں کا دین کمزور ہو رہا ہے تو اس دین کے پھیلنے سے پہلے پہلے اس سے ملو۔

حبیب بارہ گھوڑ سواروں کو لے کر روانہ ہوا اور ”بطح“ وادی میں اُترا تو ابو جہل اور مکہ کے عظیم لوگ تحفے لے کر اس کا استقبال کرنے آئے، حبیب نے ابو جہل کو بٹھا کر محمد (ﷺ) کے حالات پوچھے تو اس نے کہا: میرے آقا تم قریش ہی سے پوچھ لو۔ اس نے قریش سے پوچھا تو انہوں نے کہا کہ ہم اسے بچپن سے سچا جانتے ہیں لیکن جب وہ چالیس سال کی عمر کو پہنچا ہے تو ہمارے خداؤں کو گالیاں دینے لگا ہے اور اس نے ہمارے بڑوں کے علاوہ ایک اور دین نکالا ہے۔

یہ سن کر حبیب نے کہا کہ اسے میرے پاس لاؤ، انہوں نے دربان کو ان کی طرف بھیجا تو حضرت ابو بکر صدیق رضی اللہ عنہ آپ کیلئے سرخ جوڑا اور سیاہ پگڑی لے کر حاضر ہوئے جنہیں رسول

اللہ صلی علیہ وسلم نے پہنا اور حبیب کے پاس جانے کیلئے چل پڑے، حضرت ابو بکر رضی اللہ عنہ ان کی دائیں اور سیدہ خدیجہ رضی اللہ عنہا پیچھے تھیں، حبیب نے آپ کو دیکھا تو آپ کے احترام میں اٹھ کھڑا ہوا اور جب آپ بیٹھ گئے تو آپ کے چہرے پر نور برس رہا تھا، سب خاموش تھے اور لوگوں پر رعب تھا۔ کچھ دیر بعد حبیب نے کہا: اے محمد! آپ جانتے ہی ہیں کہ سب انبیاء کرام معجزے دکھاتے رہے ہیں، اگر آپ کے پاس کوئی معجزہ ہے تو بتائیے۔ آپ نے پوچھا کہ کون سا دیکھنا چاہتے ہو؟ اس پر حبیب نے کہا: میں چاہتا ہوں کہ سورج ڈوب کر چاند نکل آئے، اسے دو ٹکڑے کر کے زمین پر لاؤ اور دوبارہ آسمان پر جا کر وہی چمکتا پورا چاند بن جائے۔

حضور صلی علیہ وسلم نے پوچھا کہ اگر یہ کر دوں تو تم مجھے نبی مان لو گے؟ اس نے کہا کہ ایک دلی بات بتانے کی شرط پر ایمان لے آؤں گا۔

رسول اللہ صلی علیہ وسلم پہاڑ پر چڑھے، دو رکعتیں پڑھیں اور اللہ سے دعا کی چنانچہ حضرت جبریل علیہ السلام نے حاضر ہو کر عرض کی کہ اللہ تعالیٰ نے سورج، چاند دن اور رات کو حکم دیا ہے کہ آپ کا کہا مانیں، پھر سنئے کہ حبیب کی ایک لڑکی ہے جو کمر کے بل پڑی ہے، اس کے نہ ہاتھ ہیں، نہ پاؤں اور نہ ہی آنکھیں تو آپ اسے بتادیں کہ اللہ تعالیٰ نے اس کے سارے اعضاء اسے واپس کر دیئے ہیں (اور اب وہ پوری تندرست ہے)۔

رسول اکرم صلی علیہ وسلم پہاڑ سے نیچے تشریف لے آئے، جبریل علیہ السلام ہوا ہی میں رہے، فرشتوں نے قطاریں بنالیں چنانچہ حضور صلی علیہ وسلم نے انگلی سے سورج کی طرف اشارہ فرمایا، سورج دوڑتا ہوا غائب ہو گیا، ہر طرف اندھیرا چھا گیا اور چاند چودھویں رات کا بن کر چمکنے لگا۔ آپ نے اس کی طرف انگلی سے اشارہ فرمایا تو وہ دوڑتا ہوا زمین کے قریب پہنچا اور دو ٹکڑے ہو گیا، پھر واپس ہوا اور چمکتا چاند بن گیا، اسی دوران سورج واپس آیا جو پہلے ہی کی طرح تھا۔

حبیب نے عرض کی کہ اب آپ کے ذمے ایک شرط باقی ہے۔ اس پر حضور صلی علیہ وسلم نے فرمایا:

تمہاری ایک بیٹی ہے جو گری پڑی ہے، اللہ تعالیٰ نے اسے سارے اعضاء دے دیئے ہیں۔

اس پر حبیب نے کھڑے ہو کر کہا کہ اے اہل مکہ! میں ایمان لا کر کافر نہیں بنوں گا، سن لو! میں یہ

گواہی دے رہا ہوں: "أَشْهَدُ أَنْ لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ وَأَنَّ مُحَمَّدًا رَسُولُ اللَّهِ" ابو جہل صرف یہی

کہہ سکا کہ "کیا اس جادوگر پر ایمان لے آئے ہو؟"

حبیب بن مالک مسلمان ہو کر شام کو روانہ ہو گئے اور جب محل میں داخل ہوئے تو اس کی وہی بیٹی ”اشہد ان لا الہ الا اللہ واشہد ان محمدا عبده ورسوله“ پڑھتی ہوئی آگے سے آ کر ملی۔ حبیب نے پوچھا کہ بیٹی! یہ کلمہ تم نے کس سے سیکھا ہے؟ اس نے کہا کہ سونے کے دوران میرے پاس کوئی آنے والا آیا اور کہنے لگا کہ تمہارا باپ تو اسلام لا چکا ہے اور اگر تم بھی مسلمان ہو جاؤ تو میں تمہارے سارے اعضاء تمہیں صحیح سلامت واپس کر دیتا ہوں، میں خواب ہی میں ایمان لے آئی اور صبح ہوئی تو میں اس حالت میں تھی جیسے آپ دیکھ رہے ہیں۔ یہ سارا واقعہ اپنے مقام پر موجود ہے۔

”ان لہ“ ہمزہ کی زیر سے کیونکہ یہ قسم کے جواب میں آیا ہے۔ ”لہ“ ظرف ہے مستقر اور ”ان“ کی خبر ہے اور ضمیر حضور ﷺ کی طرف لوٹتی ہے۔

”من قلبہ“ کا تعلق ”نسبہ“ سے ہے جو حضر کیلئے پہلے لائی گئی ہے۔ ”من“ باء کے معنی میں ہے۔ ”نسبہ“ کا مطلب ہم شکل ہونا ہے یعنی پھٹنے والا چاند کو پھٹنے میں حضور ﷺ کے دل سے مشابہت ہے۔

”مبرورۃ القسم“ زبر سے کہ یہ ”اقسمت“ کے فاعل کا حال ہے تو پھر الف لام مضاف الیہ کے بدلے میں ہوگا یوں: ”انا مصدوق فی قسمی“ یا ”نسبہ“ کی صفت ہے یا اس سے حال ہے چنانچہ اس صورت میں معنی یہ ہوگا کہ: پھٹنے یا ٹوٹنے والے چاند کو آپ کے دل سے گہرا تعلق ہے چنانچہ جب کوئی اس نسبت کے موجود ہونے پر قسم کھالے تو اپنی قسم میں صحیح ہوگا۔ ”دل کا باہر نکل آنا“ آپ کے شق صدر کی طرف اشارہ ہے جیسے ایک روایت ملتی ہے، حضرت انس رضی اللہ عنہ بتاتے ہیں کہ حضرت جبریل علیہ السلام حضور ﷺ کی خدمت میں حاضر ہوئے تو آپ لڑکوں کے ساتھ کھیل رہے تھے انہوں نے آپ کو پکڑ کر سینہ چیرا، دل نکال لیا اور اس میں سے سیاہ رنگ کا لوتھڑا سا نکال کر عرض کیا کہ یہ وہ حصہ ہوا کرتا ہے جس پر شیطان کا اثر ہو سکتا ہے۔ پھر اسے سونے کے طشت میں ڈال کر دھویا اور حکمت سے بھر کر وہیں رکھ دیا۔ (صحیح مسلم، کتاب الایمان، باب الاسراء برسول اللہ ﷺ، صفحہ ۱۹۹، رقم الحدیث: ۱۶۲) آپ کے ساتھ شرح صدر کا واقعہ دو مرتبہ پیش آیا۔

شعر (۷۶)

وَمَا حَوَى الْغَارُ مِنْ خَيْرٍ وَمِنْ كَرِيمٍ
وَكُلُّ ظَرْفٍ مِنَ الْكُفَّارِ عَنَّهُ عَمِي

(ترجمہ:) ”اور ایک معجزہ وہ بھی ہے کہ غار نے نری بھلائی اور کرم کو اس وقت اپنے اندر سما رکھا تھا جبکہ کفار ہر طرف سے آپ کو دیکھ نہ سکے“ (گویا نابینا ہو گئے)۔
حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب پہلے والے ان معجزات کا ذکر کر دیا جو ہجرت سے پہلے واقع ہو چکے تھے تو اب ان کا ارادہ ان معجزات کے ذکر کا ہے جو ہجرت کے دوران واقع ہوئے چنانچہ فرمایا:
”وما حوی الخ“۔

تحقیق الفاظ

واو عاطفہ ہے ”وما حوی“ محذوف مبتداء کی خبر ہے یعنی آپ کے معجزات میں سے ایک یہ بھی ہے ”ما حوی“ یعنی جمع ہوا اور گھیرا ڈالا چنانچہ ”ما“ اسم موصول ہے جس سے مراد حضور صلی اللہ علیہ وسلم کی ذات مبارکہ ہے یا اس سے مراد آپ اور حضرت ابو بکر صدیق رضی اللہ عنہ ہیں۔
اگر تم کہو کہ یہاں ”ما“ کی بجائے ”من“ کہنا زیادہ مناسب تھا کیونکہ علماء کہتے ہیں کہ ”من“ کا لفظ صرف عقل والوں ہی کیلئے بولا جاتا ہے اور ”ما“ اس کے علاوہ ہے بلکہ رسول اکرم صلی اللہ علیہ وسلم نے عبد اللہ بن زبیری سے جھگڑے میں صاف طور پر فرمایا تھا تو میں کہوں گا کہ ناظم نے ”من“ سے کم مرتبہ لفظ اس لئے استعمال کیا کہ یہاں اس سے ”خیر“ اور ”کرم“ دو خوبیاں مراد ہیں اور وہ دونوں ہی عقل والی نہیں تو اس مقام کیلئے مناسب ”من“ سے کم درجہ لفظ ہی ٹھیک تھا یا ہم کہیں گے کہ یہاں ”ما“ سے مجازی طور پر ”من“ ہی مراد ہے جیسے مفسرین کا بڑا ٹولہ کہتا ہے کہ ”ما“ کا لفظ کبھی مجازی طور پر اہل علم کیلئے بولا جاتا ہے جیسے فرمان الہی ہے: ”وَالسَّمَاءِ وَمَا بَنَاهَا“۔

”ما حوی“ جمع اور ”احاط الغار“ اس میں الف لام عہد کیلئے ہے ”الغار“ کا معنی کہف یعنی چھپنے کی جگہ ہے معنی یہ بنا: وہ خاص غار جو ثور پہاڑ میں ہے جو مکہ کے قریب ہے۔

”خیر“ سے مراد فضائل ہیں اور ”کرم“ سے مراد نعمتیں بلند مرتبہ کام اور اچھے اخلاق ہیں۔

اس عبارت میں یا تو مضاف حذف ہے یعنی یوں ہے: ”ذی خیر“ اور ”ذی کرم“ یا اس

میں ایسے مبالغہ ہے جیسے ”رَجُلٌ عَدْلٌ“ میں ہے۔ ان دونوں لفظوں سے مراد وہ ہیں جن میں یہ دونوں چیزیں ہوں جیسے نبی اور ولی اور ان میں لَفْتٌ وَنَشْرٌ مُرْتَبٌ ہے چنانچہ عام ”خیر“ سے مراد مخلوق کی بھلائی جبکہ کرم سے مراد اُمت میں سے افضل شخص ہیں، جیسے رسول اکرم ﷺ نے فرمایا ہے: مجھے کسی کے مال سے وہ فائدہ نہیں ملا جو صدیق کے مال سے ہے۔ (سنن ترمذی، کتاب المناقب، باب فی مناقب ابی بکر و عمر کلھما، جلد ۵ صفحہ ۳۷۴، رقم الحدیث: ۳۶۸۱) پھر فرمایا کہ اگر ابو بکر کے ایمان کو سارے جہان کے مقابلے میں تو لا جائے تو ابو بکر کا ایمان ان سب سے بڑھ جائے گا۔

(شعب الایمان، باب القول فی زیادة الایمان و نقصانہ و تفاضل اهل الایمان فی ایمانہم، جلد ۱ صفحہ ۶۹، رقم الحدیث: ۳۶)

”و کَلَّ طَرَفٌ“ واو حال یا استیناف کیلئے ہے۔ ”الطرف“ سے مراد آنکھ ہے اور تنوین کسی چیز کو حقیر دکھانے کیلئے ہے۔ ”من الکفار“ ظرف سے حال ہے یا اس کی صفت اور ”کفار“ سے مراد وہ لوگ ہیں جو حضور ﷺ کی تلاش کرتے رہے۔

”عَنہ“ آخری لفظ ”عَمِی“ سے متعلق ہے جسے وزن پورا کرنے کیلئے پہلے لایا گیا، اس کی ضمیر حضور ﷺ کی طرف لوٹی ہے، اسے مفرد لائے ہیں کہ یہ وہ اصل ہے جسے اپنایا جاتا ہے۔

”عمی“ یا تو فعل ماضی ہے اور ظاہر یہی ہے یا یہ صفت ہے۔

حاصل معنی یوں ہے کہ جب دارالندوہ میں مشورہ کیلئے بڑے بڑے کافر قریش جمع ہوئے کہ آپ کو ذلیل کریں تو ابلیس بوڑھے کی شکل بنا کر ان میں آیا اور ان میں بیٹھ گیا تو قریش کے بڑوں نے کہا کہ تمہیں پاس آنے کی اجازت کس نے دی؟ تو اس لعین نے کہا کہ میں نجد کا رہنے والا ہوں۔ تمہاری اچھی نیت اور نیک کام کیلئے اکٹھا ہونے پر مجھے تمہارے ساتھ بیٹھنا اچھا لگا۔ اس پر انہوں نے کہا کہ یہ شخص اگر اہل تہامہ سے نہیں تو فکر کی بات نہیں چنانچہ انہوں نے بات چیت شروع کر دی چنانچہ کچھ نے کہا کہ اسے گھر میں قید کر لو اور کھانے پینے کو کچھ نہ دو اور یہیں مرنے دو، اس پر لعنتی بولا کہ یہ رائے اچھی نہیں ہے کیونکہ اس کے رشتہ دار اور قریبی لوگ موجود ہیں، وہ اکٹھے ہو کر تمہارے قبضے سے اسے چھڑالیں گے۔ دوسرے نے کہا کہ اسے یہاں سے نکال کر جلاوطن کر دو۔ لعنتی بولا کہ یہ رائے بھی اچھی نہیں کیونکہ اس کی زبان میں بلاء کا اثر ہے اور یہ خوبصورت بھی ہے تو اللہ کی قسم! لوگ بڑی تعداد میں اس کے گرد جمع ہوں گے اور یہ وہاں سے آ کر تمہیں تمہارے شہروں سے نکال دے گا۔ وہ بولے کہ اس بوڑھے کی بات ٹھیک ہے۔ ابو جہل بولا کہ ہر قبیلہ سے ایک ایک جوان لے لو جن کے

ہاتھوں میں تیز تلواریں ہوں اور انہیں کہہ دو کہ اس کے پاس جا کر اسے قتل کر دو چنانچہ اس کا خون بہا سارے قبیلے بانٹ کر دے دیں گے۔ اس پر لعنتی بولا کہ درست رائے یہی ہے۔ چنانچہ انہوں نے آپ کو پکڑ لانے کیلئے رات کو اکتھ کیا لیکن حضرت جبریل علیہ السلام نے نبی کریم ﷺ کو سارا واقعہ بتا دیا اور مکہ سے چلے جانے کا کہا۔ آپ نے حضرت علی رضی اللہ عنہ کو اپنے بستر پر سونے کا حکم دیا اور خود حضرت ابو بکر صدیق رضی اللہ عنہ کے گھر تشریف لے گئے اور سارا واقعہ بتا کر پوچھا: کیا آپ میرے ساتھ جانے کو تیار ہیں؟ انہوں نے عرض کی کہ میں ہر طرح تیار ہوں جس پر دونوں وہاں سے نکل کر غار کے دروازے پر پہنچے۔

غار میں حضرت ابو بکر رضی اللہ عنہ پہلے گئے تو ایک سوراخ دیکھا اور اپنی چادر نکال کر اس کے ٹکڑے کئے اور اس سوراخ کو بند کر دیا، آخر ایک سوراخ رہ گیا تو اسے اپنی ایڑی رکھ کر بند کر دیا اور عرض کی: یا رسول اللہ! اندر تشریف لے آئیے! آپ اندر چلے گئے۔ ادھر آپ کو تلاش کرتے ہوئے کفار آپ کے گھر پہنچے تو آپ کو وہاں نہ دیکھا اور پھر حضرت علی رضی اللہ عنہ سے پوچھا تو انہوں نے کہا کہ مجھے معلوم نہیں۔ انہوں نے مکہ کا ہر گوشہ چھان مارا اور پھرتے پھرتے غار کے منہ پر پہنچ گئے لیکن دونوں ہی دکھائی نہ دیئے۔

آئندہ شعروں میں اس واقعہ کی تفصیل آ رہی ہے۔



شعر (۷۷)

فَالصِّدْقُ فِي الْغَارِ وَالصِّدِّيقُ لَمْ يَرِمَا
وَهُمْ يَقُولُونَ مَا بِالْغَارِ مِنْ أَرِمِ

(ترجمہ:) ”چنانچہ زری سچائی (حضور ﷺ) اور حضرت صدیق رضی اللہ عنہ غار ہی میں رہتے وہاں سے بے نہیں جبکہ کفار آپس میں کہہ رہے تھے کہ غار میں تو کوئی ہے ہی نہیں۔“

اب حضرت ناظم رحمہ اللہ ”وما حوى الغار“ کی تفصیل بتانے لگے ہیں چنانچہ فرمایا:
”فالصدق فى الغار الخ“۔

تحقیق الفاظ

فاء تفصیل بتانے کیلئے ہے ”صِدْق“ مصدر بمعنی صادق ہے یا بمعنی مصدق ہے جس میں سچائی ہی سچائی ہو یا مراد ”ذوالصدق“ (سچائی والا) یا یہ مصدر مبالغہ کا معنی دیتی ہے۔
”فِى الْغَارِ“ مبتداء کی خبر ہے۔

اگر تم کہو: ظاہر یہ ہے کہ یہاں صرف ”فیہ“ کہنا کافی تھا کیونکہ غار کا ذکر پہلے آچکا ہے تو اس طرف کیوں مڑے جو ظاہر نہیں؟ تو میں کہوں گا کہ انہوں نے لذت کی خاطر اسے دہرایا ہے اور ساتھ یہ وہم بھی تھا کہ وہ ضمیر ”کرم“ کی طرف نہ لوٹ سکے اور نہ ہی ”الخیر“ کی طرف جاسکے۔
یہ نہ کہا جائے کہ اسے دوبارہ لانے میں وزن پورا رکھنے کی ضرورت تھی کیونکہ ہم کہیں گے کہ اس لفظ کو ضمیر کے ساتھ لانا بھی وزن میں خرابی پیدا نہیں کرتا کیونکہ یوں کہہ سکتے ہیں: ”فالصدق فیہ“ اور اس کے ساتھ ”والصدق لم یرما“ مل جاتا اور پھر اس طرح یہ شعر لفظوں کے لحاظ سے زیادہ محفوظ اور معنی کے لحاظ سے زیادہ بہتر ہو جاتا۔ اس پر غور کر لو۔

”الصِّدِّيقُ“ مبالغہ کا صیغہ ہے جس کا معنی بہت سچ بولنے والا ہے۔

اس مصرعہ میں اللہ تعالیٰ کے اس فرمان کی طرف اشارہ ہے: ”وَالَّذِیْ جَاءَ بِالصِّدْقِ وَصَدَّقَ بِهِ الْآیَہ“ (سورۃ الزمر آیت: ۳۳) ”الصِّدْقُ“ کی خبر محذوف ہے جو ”کَذَلِکَ“ ہے۔

”لَمْ یَرِمَا“ (یاء پرزبر اور راء پرزیر) ”وَرِمَ اَنْفُه“ سے ہے جب کوئی ناراض ہو تو کہتے ہیں:

کیونکہ غصے والے کی ناک پھول جایا کرتی ہے۔ یہ جملہ حال ہے تو معنی یہ ہوگا کہ دونوں قضاء و قدر پر ناراض نہ ہوئے بلکہ ان کے دل مطمئن رہے۔

ایک روایت میں اسے ”لَمْ یَرْمَا“ پڑھا گیا ہے، یا پر پیش کہ مجہول ہے۔ ”یَرْمُوْمُ“، ”رَوْمُ“ سے ہے جس کا معنی طلب کرنا ہے اور یہ ایک لطفی کی بات ہے کہ دونوں حضرات تلاش کئے جا رہے تھے اور دونوں ہی مطلوب نہ ہوئے بلکہ دونوں ہی محبوب تھے لیکن دشمنوں کی نظروں سے چھپے ہوئے تھے۔

یہ بھی کہتے کہ اصل میں یہ ”لَمْ یَرِمُ“ ہے پھر اسے نون خفیفہ لگا کر تا کیدی بنایا گیا ”ورم“ سے جس کا معنی سو جنا ہے چنانچہ نون کو وقف کرتے ہوئے الف سے بدل دیا گیا جیسے امرؤ القیس کے قول میں ہے: ”قِفَانَبْکِ مِنْ ذِکْرِی حَبِیْبٍ وَ مَنَزِلٍ“ یوں اس کی ضمیر ”صدق“ کی طرف لوٹے گی اور یہ جملہ اس سے خبر ہوگا۔ معنی یہ ہوگا: اس حال میں کہ سانپ کے ڈسنے سے حضرت صدیق رضی اللہ عنہ کا پاؤں سو جانا تھا۔

لعاب مبارک لگانے سے زہر کا اثر ختم

ایک روایت ملتی ہے کہ حضرت صدیق رضی اللہ عنہ نے غار میں جب اپنے پاؤں مبارک سے سوراخ بند کرنا چاہا تو وہاں سانپ تھا جس نے آپ کے پاؤں پر ڈنگ مار دیا، انہوں نے حضور صلی اللہ علیہ وسلم سے سانپ ڈس جانے کی شکایت کی تو آپ نے اپنا لعاب مبارک لے کر وہاں لگا دیا اور وہ اللہ کے حکم سے تندرست ہو گئے اور سوج بھی نہ رہی۔

کچھ حضرت نے اسے ”لَمْ یُرِیَا“ پڑھا ہے اور وہ اس بناء پر کہ یہ ”رَوِیَّةُ“ مصدر سے مضارع کا تشبیہ ہے لیکن اسے شیخ زادہ نے رد کر دیا ہے اور میں بھی انہی میں شامل ہوں جنہوں نے ایسا ہی کہا ہے۔

”یقولون“ میں واؤ حالیہ ہے اور ضمیر ”کفار“ کی طرف جاتی ہے اور ”یقولون“ والا جملہ مبتداء کی خبر ہے اور ”قول“ کا لفظ حکم کرنے کا معنی دیتا ہے یعنی ”کافر حکم کرتے ہیں“۔

”ما بالغار من ارم“ یہ کافروں نے کہا تھا۔ ”مَا“ مشبہ بہ ”لَیْسَ“ ہے اور ”بالغار“ میں باء ”فی“ کے معنی میں ہے اور یہ ”ما“ کی خبر ہے اور ”من“ زائد ہے ”ارم“ (زبر سے) ”ما“ کا اسم ہے جس کا معنی ”اَحَدٌ“ ہے کہتے ہیں: ”ما فی الدار ارم“ یعنی گھر میں ایک بھی نہیں۔

حاصل معنی یہ ہے کہ رسول اللہ ﷺ اور حضرت ابو بکر رضی اللہ عنہ غار میں داخل ہوئے اور اس میں اللہ کی تقدیر اور حکم پر راضی رہتے ہوئے ٹھہرے ناراض نہ ہوئے اور کافر غار کے دروازے پر آئے کہ ان کے قدموں کے نشانوں کا پتہ لگا سکیں لیکن اللہ جبار کے حکم سے دونوں ہی کے نشان نہ دیکھ سکے بلکہ یہ بھی ملتا ہے کہ ان میں سے کچھ نے دونوں کے قدموں کے نشانوں کو غار کے منہ تک دیکھا اور اس سے آگے نشان نہیں تھے چنانچہ وہ غار کے اوپر پہاڑ پر چڑھے تو حضرت صدیق اکبر رضی اللہ عنہ نے عرض کی: یا رسول اللہ! اگر ان میں سے کسی نے اپنے قدموں پر نظر ڈالی تو ہمیں دیکھ لے گا آپ نے فرمایا: تمہارا ان دونوں کے بارے میں کیا خیال ہے جن میں اللہ تیسرا ہے؟



شعر (۷۸)

ظَنُّوا الْحَمَامَ وَظَنُّوا الْعَنْكَبُوتَ عَلَى
خَيْرِ الْبَرِيَّةِ لَمْ تَنْسُجْ وَلَمْ تَحْمِ

(ترجمہ:) ”ان کے ذہن نے اتنا ہی کام کیا کہ کبوتری اور مکڑی نے مخلوق میں سب سے بہتر کے آس پاس نہ تو جالاتا اور نہ ہی انڈے دیئے ہیں۔“

جب وہم میں آیا کہ ان سے ان کے نہ دیکھنے کی وجہ کے بارے میں یہ سوال کیا جا سکتا ہے کہ انہیں دیکھنے سے کس نے روکا تو ناظم نے جواب دیتے ہوئے فرمایا: ”ظَنُّوا الْحَمَامِ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”ظن“ سے کبھی تو حقیقی علم مراد لیا جاتا ہے، کبھی غالب رائے جبکہ اس سے مرجوح (جسے اولیت حاصل نہ ہو) مراد بھی لیا جاتا ہے یعنی وہم اور یہاں یہی مراد ہے۔

کبوتر کے کمالات

”الحمام“ وہ پرندہ جو گھروں سے پیار رکھتا ہے چنانچہ ”اخوان الصفاء“ میں لکھا ہے: کبوتر میں یہ خاصیت ہے کہ وہ خط لے کر دور دراز شہروں تک لے جاتا تھا اور اڑتے اور کہیں جاتے ہوئے کہا کرتا تھا: ”اے پروردگار! مجھے بھائیوں کی جدائی پر تنہائی محسوس نہ ہو، اے رب! مجھے دوستوں کا شوق دیر تک رہے اور اے پروردگار! ہمیں اپنے اپنے وطن کی راہ پر ڈال دے۔“

حلبۃ الکمیت میں ہے کہ علماء اس کبوتر کی آواز کے بارے میں کئی باتیں کرتے ہیں کہ کیا یہ روتا ہے یا کچھ اور کرتا ہے چنانچہ کچھ نے تو اسے رونا کہا ہے اور بتایا ہے کہ اپنے اس چوزے کی یاد میں روتا ہے جسے حضرت نوح علیہ السلام کے دور میں ایک ظالم نے شکار کر لیا تھا چنانچہ ہر کبوتری اس پر روتی ہے اور یہ سلسلہ قیامت تک یونہی رہے گا۔

میں کہتا ہوں کہ اس سلسلے میں جو کچھ فقیر کو پتہ چل سکا ہے یہ ہے کہ یہ آواز کانوں کے بدلنے سے کئی طرح کی لگتی ہے چنانچہ جب اسے ہر کام سے فارغ شخص سنتا ہے تو جھومتا ہے اور اسے غناء (گانا وغیرہ) کہہ دیتا ہے اور جب اسے کوئی عاشق سنتا ہے تو غمگین ہو کر اسے رونا کہہ دیتا ہے۔ (انتہی)

عنکبوت کی حقیقت

”العنکبوت“ چھوٹا سا جانور ہے جو ہوا میں جالا بنتا ہے۔ اس کی جمع ”عناکب“ ہے جبکہ مذکر کو ”عَنكَب“ کہتے ہیں یہ مکڑی سب سے بڑھ کر بے گھر ہوتی ہے اور اپنے شکار پر بڑا لالچ کرتی ہے یہ انڈے بھی دیتی ہے اسے ماہواری بھی آتی ہے پہلے پہل یہ چھوٹے چھوٹے یہ کیڑے جنتی ہے پھر وہ تبدیل ہو کر مکڑی بن جاتے ہیں اور تین دن میں ان کی شکل پوری ہو جاتی ہے، گھڑی بھر میں جالا بننے کی طاقت حاصل کر لیتی ہے اور وہ جالا انہیں سکھائے بغیر پیدا ہوتا ہے اور جالا بنتی ہے اسے اپنے پیٹ کی بجائے جلد کے باہر سے نکالتی ہے۔

”حیوة الحیوان“ میں ہے کہ جب مکڑی کا جالا بدن کے ظاہری حصے پر تر زخم کے اوپر لگا دیا جائے تو وہ اس کو سوجنے نہیں دیتا اور خون کا چلنا بند کر دیتا ہے جب اسے چاندی پر ملو تو وہ چمکنے لگتی ہے مکڑی جو جالا ہوا میں بنتی ہے بخوار والا اسے گلے میں لٹکائے تو اللہ کے حکم سے اسے شفاء ہو جاتی ہے اور چوتھیا بخار والا اسے کپڑے میں باندھ کر لٹکائے تو اسے فائدہ ہوتا ہے۔ (انتہی)

جامع صغیر میں آیا ہے کہ حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام نے فرمایا کہ مکڑی شیطان ہو جاتا ہے جسے اللہ نے مسخ کر دیا ہے تو اسے مار دیا کرو۔

(الجامع الصغیر باب حرف العین، فصل فی المحلی، جلد ۲ صفحہ ۳۵۳، رقم الحدیث: ۵۷۳۹)

حضرت ثعلبی کے مطابق حضرت علی بن ابوطالب رضی اللہ عنہ نے فرمایا کہ اپنے گھروں کو مکڑی کے جالے سے صاف رکھو کیونکہ اسے چھوڑ دینا گھر میں محتاجی پیدا کرتا ہے۔

(فیض القدر للمناوی، حرف العین، جلد ۴ صفحہ ۵۱۹، تحت رقم الحدیث: ۵۷۳۹)

حلیہ میں ہے کہ مکڑی نے دو نبیوں پر جالا بنا تھا، ایک مرتبہ حضرت داؤد علیہ السلام پر جب طاوت انہیں تلاش کر رہا تھا اور دوسری مرتبہ نبی کریم ﷺ پر غار میں بنا۔

دیلمی نے مسند الفردوس میں لکھا ہے کہ حضرت علی رضی اللہ عنہ کے مطابق حضور ﷺ سے شکلیں بدل جانے والوں کے بارے میں پوچھا گیا تو آپ نے فرمایا کہ وہ تیرہ ہیں: ہاتھی، ریچھ، خنزیر، بندر، بام، مچھلی، گوہ، چمگادڑ، بچھو، پانی میں پیدا ہونے والا ایک سیاہ کیڑا، مکڑی، خرگوش، سہیل ستارہ اور زہرہ ستارہ۔ (الحدیث)

زبدہ میں ہے کہ رسول اللہ ﷺ نے اس مکڑی اور کبوتر کو مارنے سے منع فرمایا جو حرم شریف میں

رہتے ہوں۔

”علیٰ خیر البریۃ“ کا تعلق ان آنے والے دو فعلوں سے ہے لیکن اُلٹ پلٹ کر کے ”بریۃ“ مخلوق کو کہتے ہیں اس میں الف لام استغراق کیلئے ہے یعنی ساری مخلوق۔

”لم تنسج“ اور ”لم تحم“ دونوں میں لف نشر غیر مرتب یعنی مشوش ہے کیونکہ دوسرا لفظ پہلے سے اور پہلا دوسرے سے تعلق رکھتا ہے۔ ”لم تحم“ کا مطلب ہے: اس نے انڈے نہ دیئے۔

حاصل معنی یہ ہے کہ کافروں کو چونکہ نبی مختار ﷺ کے غار میں ہونے کا یقین نہ تھا تو انہوں نے سمجھا کہ مکڑی نے غار کے دروازے پر جالا نہیں بنا اور کبوتری نے غار کے ارد گرد انڈے نہیں دیئے تو انہوں نے گمان کیا کہ اس غار میں کوئی رہنے والا نہیں اور پاؤں کے نشان تلاش کرنے سے رُک گئے اور کہا: اگر کوئی غار میں ہوتا تو یہ نشان نہ ہوتے اور پھر ایک شخص نے تو اُمیہ بن خلف سے یہاں تک کہہ دیا کہ ہم غار میں داخل ہو جائیں جس پر اُمیہ نے کہا: اس میں کیا کرو گے اس پر تو مکڑی نیکوں کے سردار محمد ﷺ کی ولادت مبارکہ سے پہلے سے موجود ہے۔



شعر (۷۹)

وَقَايَةُ اللَّهِ أَغْنَتْ عَنْ مُضَاعَفَةٍ
مِّنَ الدُّرُوعِ وَعَنْ عَالٍ مِّنَ الْأَطْمِ

(ترجمہ:) ”چونکہ اللہ تعالیٰ آپ کی حفاظت فرما رہا تھا تو اس حفاظت نے ان کیلئے کئی گنا زرہوں اور بڑے قلعوں کی ضرورت ہی نہ رہنے دی۔“

جب اس مقام میں اس وہم کا گمان پیدا ہوتا تھا کہ ہجرت اور غار میں چھپنا نبی مختار ﷺ کی شان کے لائق نہ تھے بلکہ لائق یہ تھا کہ آپ زرہ پہنتے، قلعہ کی حفاظت لیتے اور کافروں کے ساتھ جنگ کرتے تو حضرت ناظم رحمہ اللہ نے اسے یوں کہہ کر رد کر دیا: ”وقایۃ اللہ اغنت الخ“ اور ساتھ یہ اشارہ بھی ہے کہ یہ معاملہ اس کی بجائے زیادہ اثر رکھتا ہے کہ ان سے مقابلہ کر کے انہیں عاجز کیا جائے کیونکہ اس طریقے میں ان کے انتہائی کمزور ہونے اور ہلاکت کی انتہاء تک پہنچنے پر تنبیہ ہے کیونکہ سب سے کمزور گھر ان کے سامنے تھا جسے وہ تلاش کر رہے تھے اس سے رکاوٹ تھا جبکہ وہ انتہائی بے وقوف اور کند ذہن تھے کہ نشانیوں میں سے انہیں پتہ نہ چل سکا کہ آپ دونوں حضرات غار میں ہیں۔

”وقایۃ“ کا معنی حفاظت کرنا ہے یہ اپنے فاعل کی طرف مضاف ہے اور مفعول محذوف ہے یعنی یوں ہے: ”وقایۃ اللہ ایاه“ یعنی رسول اللہ ﷺ کو بچانا۔
”اغنت“ کی ضمیر ”وقایہ“ کی طرف جاتی ہے یعنی اس بچاؤ نے رسول اللہ ﷺ کو کئی گنا زرہوں سے بے نیاز کر دیا ہے۔

”المضاعفہ“ اسم مفعول ہے ”ضاعف“، ”یضاعف“ سے اور ”تضعیف“ کا معنی ایک شے کو دوسری سے ملانا ہے۔

اگر تم کہو کہ اللہ تعالیٰ نے تو آپ کو حفاظت میں رکھا تھا اور زرہ کی محتاجی سے بے نیاز کر دیا تھا تو اس ”مضاعفۃ“ کا لفظ لانے کا کیا فائدہ ہوا؟ تو میں کہوں گا کہ اس لفظ کو لانے میں یہ اشارہ ہے کہ کفار بہت سخت اور زیادہ بھی تھے یعنی یہ اشارہ ہے کہ اگر ان سے مقابلہ کیا جائے اور ان سے جنگ کرائی جاتی تو پھر بہت سی زرہوں کی ضرورت پڑتی اور اونچا قلعہ بھی چاہئے ہوتا یا ہم کہیں گے کہ اس

شعر میں مسلکِ برہانی کی طرف چلنا پایا جاتا ہے اور وہ یہ ہے کہ ایسا دعویٰ کیا جائے جس میں دلیل بھی موجود ہو اور یہاں بھی یونہی ہے کیونکہ یہ شعر اصل میں یوں ہے: اللہ کی حفاظت نے انہیں کئی گنا زرہوں سے بے نیاز کر دیا کیونکہ اللہ تعالیٰ نے انہیں ایک زرہ سے بھی بے نیاز کر رکھا تھا اور جسے وہ ایک زرہ سے بے نیاز کر دیتا ہے تو اسے کئی گنا زرہوں سے بے نیاز کر دیتا ہے۔ یوں یہ نتیجہ مرضی کا نکل آئے گا۔

”من الدروع“، ”المضاعفہ“ سے حال ہے یہ ”درع“ کی جمع ہے جو اسے کہتے ہیں کہ جنگ میں پہنی جاتی ہے۔

”عن عال“ کا ”مضاعفہ“ پر عطف ہے یعنی یوں ہوگا: ”بلند مکان سے“ ”عال“ اصل میں ”عالی“ ہے پھر ضرورت کی خاطر یاء حذف کر دی گئی۔

پہلا قیاس یہاں بھی جاری ہو سکے گا۔

”الاطم“ (دو پیش سے) جمع ”اطمہ“ سے ہے جس کا معنی محفوظ قلعہ ہے معنی یوں ہوگا: ملکِ جبار کا اپنے مختار نبی کی حفاظت کرنا یہ ہے کہ اس نے انہیں زرہوں اور کئی طرح کے اسلحہ اور اونچے بلند قلعوں سے بے نیاز کر دیا، ان کیلئے غار کو اپنی قدرت سے مضبوط قلعے کے مرتبہ پر کر دیا اور مکڑی کے جالائے کو مضبوط زرہ کے قائم مقام بنا دیا۔

ہجرتِ مدینہ کا مقصد

اگر تم کہو کہ حضور ﷺ کی مدینہ کو ہجرت اور وہاں آخری دم تک ٹھہرے رہنے میں اللہ تعالیٰ کی کیا حکمت تھی؟ تو میں کہوں گا: اللہ کی حکمت یہ تھی کہ بہت ساری چیزیں آپ سے عزت حاصل کر سکیں اور اگر آپ اپنے پروردگار کے ہاں جانے تک مکہ ہی میں رہتے تو یہ وہم ہوتا کہ آپ کو مکہ میں رہنے کی وجہ سے عزت ملی ہے کیونکہ مکہ کو حضرت خلیل اور اسماعیل علیہما السلام کی وجہ سے عزت ملی ہوئی ہے تو اللہ تعالیٰ نے چاہا کہ آپ کی اپنی بزرگی دکھائی دے چنانچہ آپ کو مدینہ کی طرف ہجرت کا حکم فرمایا اور جب آپ نے ہجرت فرمائی تو مدینہ کو بزرگی مل گئی۔ علماء کا اس بات پر اجماع ہے کہ جس جگہ سے آپ کے اعضاء مبارک لگے ہوئے ہیں وہ دنیا کے ہر مقام سے افضل ہے۔

شعر نمبر ۷۹: جنگلی درندوں سے ڈروالی جگہ پر حفاظت

اس شعر کی خصوصیت یہ ہے کہ جو شخص ایسی جگہ پر ہو جہاں جنگلی درندوں کا ڈر ہو تو اسے سات یا

نو مرتبہ پڑھ کر اپنے گرد دائرہ کھینچ لے، یوں کوئی جنگلی درندہ اس دائرے میں نہ آسکے گا۔ میرے استاذ
(اللہ ان کی عمر دراز کرے اور ان کی آخری گھڑی، پہلی سے بہتر ہو) فرماتے ہیں کہ ہم نے کئی مرتبہ
اس کا تجربہ کیا تو یہ بات سچی نکلی ہے۔



شعر (۸۰)

مَا سَامِنِي الدَّهْرُ ضَيْمًا وَاسْتَجَرْتُ بِهِ
إِلَّا وَنِلْتُ جَوَارًا مِّنْهُ لَمْ يُضْمِ

(ترجمہ:) ”جب سے میں ان کی حفاظت میں آ گیا ہوں، دنیا والے مجھے نقصان نہیں پہنچا سکے بلکہ میں ان سے ایسی پناہ میں آ گیا ہوں جو ختم ہی نہ ہو سکے گی۔“
حضرت ناظم رحمہ اللہ نے اس سے پہلے جب آپ کا محفوظ ہو جانا بتا دیا تو آگے بڑھتے ہوئے اس دنیا میں خود اپنی حفاظت کا بیان کرتے ہوئے فرماتے ہیں: ”ما سامنی الدهر الخ“۔

تحقیق الفاظ

”سَامِنِي“، ”سَوَم“ سے ہے جس کا معنی ہے: تکلیف اور مشقت کا مزہ چکھانا، اللہ تعالیٰ کے فرمان میں یہی بات فرمائی گئی ہے: ”يُسْؤِمُونَكُمْ سُوءَ الْعَذَابِ“ (سورۃ البقرہ آیت: ۴۹)۔
کچھ نسخوں میں لفظ ”ضَامِنِي“ آیا ہے جو ”ضِيم“ سے ہے جس کا معنی ظلم کرنا ہے اور دونوں صورتوں میں معنی یہ ہوگا کہ ”دنیا والوں نے مجھ پر ظلم نہیں کیا“۔

زمانہ کی بُرائی منع ہے

اگر تم کہو کہ ناظم نے زمانے پر ظلم کیوں کہہ دیا ہے حالانکہ رسول اللہ ﷺ نے تو اس سے منع فرمایا ہے آپ فرماتے ہیں: ”لَا تَسُبُّوا الدَّهْرَ فَإِنَّ الدَّهْرَ هُوَ اللَّهُ“ (صحیح مسلم، کتاب الالفاظ من الادب وغیرہا، باب لنھی عن سب الدهر، صفحہ ۱۲۳۴، رقم الحدیث: ۲۲۳۶) (زمانے کو بُرا بھلا نہ کہو کہ زمانہ خود اللہ ہی ہے) اور حضرت ابو ہریرہ رضی اللہ عنہ کی بتائی حدیث میں یوں ہے کہ ”یوں نہ کہا کرو کہ فلاں کو زمانے نے پریشان کیا“ (صحیح البخاری، کتاب الادب، باب لا تسبو الدهر، جلد ۴ صفحہ ۱۵۰، رقم الحدیث: ۶۱۸۲)۔ ایک اور حدیث میں ہے: ”تم میں سے کوئی بھی زمانے کو بُرا بھلا نہ کہا کرے“ (صحیح مسلم، کتاب الالفاظ من الادب وغیرہا، باب کراہۃ تسمیۃ، صفحہ ۱۲۳۴، رقم الحدیث: ۲۲۳۷) تو میں کہوں گا کہ زمانے کو اللہ کہنے میں تین قول ملتے ہیں، پہلا یہ اس قول سے مراد یہ ہے کہ ”وہ سارے کاموں کی تدبیر فرماتا ہے“ دوسرا یہ کہ یہاں مضاف محذوف ہے، اصل یوں ہے: ”زمانے والے کو“ اور تیسرا یہ کہ اصل میں یوں ہے: ”زمانہ کو تبدیل کرنے والے کو بُرا بھلا نہ کہا کرو“۔

کچھ حضرات فرماتے ہیں کہ ”دَہْر“ کا لفظ اللہ کے پاک ناموں میں سے ایک نام ہے جو قرآن کریم میں آیا ہے اور یہ کسی کا بیان ہے فرمایا: ”وَمَا يُهْلِكُنَا إِلَّا الدَّهْرُ“ (سورۃ الجاثیہ آیت: ۲۴) (ہمیں زمانہ ہی ہلاک کرتا ہے) تو اصل بات یہ ہوئی کہ بُرا بھلا کہنے سے روکنا اس کے کرنے اور بنانے والے اور خالق کی بُرائی بنتی ہے۔ جو اس بحث کو پورے طور پر سمجھنا چاہتا ہے تو اسے شیخ ابن عربی رحمہ اللہ کی کتاب فتوحاتِ مکیہ کا تہتر واں باب دیکھنا چاہئے۔ بُرائی کا زمانے سے تعلق جوڑنا مجاز ہے معنی یہ ہوگا کہ ”زمانہ کو پیدا کرنے والے نے مجھے تکلیف میں نہیں ڈالا“۔

”ضِيْمًا“ مفعول مطلق ہے اپنے فعل سے یہ اس صورت میں جب وہ نسخہ لیا جائے جس میں ”ما ضامنی“ کا لفظ ہے اور اگر ”ما سامنی“ والا نسخہ لیا جائے تو فعل کا لفظ چھوڑ کر مفعول مطلق بنتا ہے (یعنی ”مِنْ غَيْرِ لَفْظِهِ“) کچھ نسخوں میں (”ضِيْمًا“ کی جگہ) ”يَوْمًا“ کا لفظ آیا ہے جو ظرف ہونے کی وجہ سے منصوب ہے۔

”وَاسْتَجَرْتُ“ میں واو حال کا معنی دینے کیلئے ہے یہ لفظ ”اسْتَجَارَهُ“ سے ہے چنانچہ عرب کہتے ہیں: ”اسْتَجَارَ فُلَانٌ عَنْ فُلَانٍ“ یعنی اس نے فلاں سے پناہ لی جیسے اللہ تعالیٰ کے اس فرمان میں ہے: ”وَإِنَّ مِنَ الْمُشْرِكِينَ اسْتَجَارَكَ“ (سورۃ التوبہ آیت: ۶) یہ بھی کہتے ہیں کہ اس کا معنی التجاء کرنا اور پناہ مانگنا ہے۔

یہ بھی ہو سکتا ہے کہ یہ واو عطف کیلئے ہو لیکن پہلی صورت بہتر ہے۔ اس پر یہ اعتراض نہیں ہو سکتا کہ ماضی حال بن رہی ہو تو اس پر حرف ”قَدْ“ آنا ضروری ہوتا ہے کیونکہ وہ تو یہاں موجود ہے کیونکہ ”قَدْ“ کا لکھا جانا اور مقدر ہونا ایک ہی بات ہوتی ہے اور یہاں مقدر ہے۔

”بِسْ“ میں باء یا تو سبب بتانے کیلئے ہے یا مدد مانگنے کیلئے اور ضمیر حضور ﷺ کی طرف لوٹی ہے یہاں ایک لفظ محذوف ہے یعنی ”بسبب مدحہ علیہ السلام“ ہے۔ یہاں استثناء مُفْرَغٌ ہے مستثنیٰ منہ حذف کیا گیا ہے اصل عبارت یوں ہوگی: ”مجھ کو زمانے نے پریشان نہیں کیا باوجودیکہ میں حضور ﷺ کی مدح کے طفیل جو ان تک پہنچ جانے کے علاوہ کسی بھی حالت میں کی گئی ہے ایک خاص مطالبے کے ساتھ تعلق رکھتا ہوں“۔

”وَنَلْتُ“ میں واو ملاقات میں زور بھرنے کیلئے ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے اس فرمان میں ہے: ”وَمَا أَهْلَكْنَا مِنْ قَرْيَةٍ إِلَّا وَلَهَا كِتَابٌ مَّعْلُومٌ“ (سورۃ الحجر آیت: ۴)۔ ”نَلْتُ“ کا معنی ”میں پہنچا“

ہے۔

”الجوار“ (پناہ لینا) سے مراد یا تو واقعہ ہے اور وہ یوں کہ اس دنیا میں حضور ﷺ سے اُلفت کی بناء پر پناہ ملی ہو اور آپ کے ساتھ مل بیٹھنے کا موقع ملا ہو یا ”جوار“ سے مراد آرام حاصل کرنا اور دنیا کی آزمائشوں سے بچنا ہو اور یہ مناسب بھی ہے کیونکہ ”منہ“ کا تعلق ”بہ“ کے ساتھ ہے یہ ضمیر ”ضیم“ کی طرف لوٹتی ہے۔

”لَمْ يُضْمِ“، ”جوار“ کی صفت ہے اور اسے لانے کا مقصد استثناء سے پیدا ہونے والے وہم کو دور کرنا ہے جب ”جوار“ کو ظلم کی جنس بنایا جائے چنانچہ اس وہم کو دور کرنے کے لئے فرمایا: ”لَمْ يُضْمِ“۔

یاد رہے کہ ناظم کا قول ”إِلَّا وَنَلْتُ“ ہو سکتا ہے کہ ان تاکیدوں جیسا ہو جن میں مدح کی تاکید ”ذم“ جیسی ہوا کرتی ہے اور قصیدہ کے شارح حضرات نے اس کا خیال تک نہیں کیا حالانکہ اسے یوں جاننا زیادہ بہتر ہے کیونکہ یہ ایسے ہے کہ جیسے دعویٰ کے ساتھ گواہ بھی موجود ہوں اور یہ سمجھداروں پر واضح ہے۔

یہاں یہ اعتراض نہ کیا جائے کہ اس مقام پر استثناء سے پہلے کسی قسم کا حکم نہیں ہے کہ اس سے پہلے مدح جیسی کوئی چیز ہو جس کی تاکید کی جائے کیونکہ ہم کہیں گے کہ یہ کلام شافعی حضرات کے مطابق ہے جو کہتے ہیں کہ استثناء سے پہلے بھی حکم ہو سکتا کیونکہ ناظم شافعی ہیں جیسے پہلے کئی مرتبہ بتایا جا چکا ہے۔

شعر کا حاصل مطلب یوں ہے کہ ”اللہ تعالیٰ نے مجھے کسی بھی زمانے میں دنیا کے کسی غم کا مزہ نہیں چکھایا حالانکہ میں اس سے التجاء کر کے خلاصی حاصل کر چکا ہوں اور اس میں مجھے وہ خلاصی ملی ہے جو ختم نہ ہوگی اور نہ ہی ظلم ہوگا۔“

شعر نمبر ۸۰: سفر سے واپسی تک حفاظت کیلئے

اس شعر میں یہ خصوصیت ہے کہ سفر پر جانے والا اسے پورا لکھ کر پہلا مصرعہ گھر والوں کے پاس رکھ کر دوسرا مصرعہ ساتھ لے کر سفر پر چلا جائے تو انشاء اللہ وہ حفاظت کے ساتھ سفر سے واپس آئے گا۔



شعر (۸۱)

وَلَا التَّمَسُّتُ غِنَى الدَّارَيْنِ مِنْ يَدَيْهِ
إِلَّا اسْتَلَمْتُ النَّدَى مِنْ خَيْرِ مُسْتَلِمٍ

(ترجمہ:) ”اور پھر میں نے جب بھی آپ کے مبارک ہاتھوں سے دنیا و آخرت کیلئے کچھ مانگا تو ان مبارک (اور چومے جانے والے) ہاتھوں سے مجھے سب کچھ مل گیا ہے۔“
حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب پہلے شعر میں دنیا کے اندر حضور ﷺ کی حفاظت کا ذکر کر دیا تو اب اس سے آگے بڑھ کر دونوں جہانوں میں اپنی حفاظت کا ذکر فرماتے ہوئے لکھتے ہیں: ”ولا التمسست الخ“۔

تحقیق الفاظ

واو عاطفہ ہے اور یہ جملہ ”سامنی“ کے جملہ پر معطوف ہے اور نفی کو دوبارہ لانا زور دینے کیلئے ہے۔

”ولا التمسست“ متکلم کا صیغہ ہے جس کی مصدر ”التماس“ ہے اس کا معنی کسی برابر کا کسی برابر شخص سے مانگنا ہوتا ہے لیکن یہاں عام طور پر ”طلب“ کے معنی میں ہے یا تجرید (معنی کا کچھ حصہ لینا) کے طور پر یا حقیقت ہے۔ دنیا میں ”غنی“ گنجائش ہونا اور ہر چیز کافی ہونا“ کے معنی میں ہوتا ہے چنانچہ حدیث پاک میں ہے: ”لَيْسَ الْغِنَى مِنْ كَثْرَةِ الْعَرَضِ إِنَّمَا الْغِنَى غِنَى الْقَلْبِ“ (المسند للامام احمد بن حنبل، مسند ابی ہریرہ، جلد ۳ صفحہ ۳۷، رقم الحدیث: ۷۳۲) (غنی ہونا زیادہ مال و اسباب ہونے کا نام نہیں بلکہ دل کے غنی ہونے کا نام ہے) اور پھر دنیا کا غناء اور امیری بدن کے تندرست ہونے اور دنیا کی مشکلات سے محفوظ ہونے کا نام ہے جبکہ آخرت کا غناء کامیاب ہونے، دوزخ سے نجات پانے اور جنت میں جانے کا نام ہے اور اسی بناء پر حدیث پاک میں آتا ہے کہ ”جنت میں عام طور پر احمق لوگ ہوں گے (مسند امام احمد بن حنبل، مسند ابی حمزہ انس بن مالک، رقم الحدیث: ۶۳۳۹) کیونکہ وہ آخرت یعنی صرف جنت ہی کو پسند کریں گے (لینا چاہیں گے) مگر اللہ کے حسن و جمال کی خواہش نہیں رکھیں گے حالانکہ اللہ تعالیٰ نے نازل شدہ کتاب میں فرما رکھا ہے: ”وَاللَّهُ خَيْرٌ وَأَبْقَى“ (سورۃ طہ، آیت: ۷۳) (کہ باقی رہنے والا تو صرف اللہ ہی ہے)۔

”مِنْ يَدِهِ“ کا تعلق ”التمست“ سے ہے اور اس ہاتھ سے مراد سرورِ کونین ﷺ کی ذاتِ کریمہ ہے یہ اس طرح مجاز ہے کہ جزء کو ذکر کر کے کل مراد لے لیا۔ یہاں اس ”يَدِ“ سے مراد جانب اور پہلو ہے چنانچہ عرب کہتے ہیں: ”حَصَلْتُ الْمَصْلِحَةَ مِنْ يَدِ فُلَانٍ“، ”یعنی اس کی طرف اور جانب سے ملا ہے“ اور حدیثِ پاک میں آتا ہے: ”وَهُمْ يَدٌ وَاحِدَةٌ عَلَى مَنْ سِوَاهُمْ“ (سنن ابوداؤد کتاب الجہاد باب فی السریۃ جلد ۳ صفحہ ۱۰۶ رقم الحدیث: ۲۷۵۱) (وہ دوسروں کے مقابلے میں ایک طرف اکٹھے ہیں) یا اس کا معنی احسان اور حضور علیہ السلام کی نعمتیں ہیں چنانچہ یہ بھی ایسا مجاز بنے گا کہ علتِ فاعلیہ صورت یہ کا نام معلول پر بولا گیا۔

”اِسْتِلاَمٌ“ کا معنی پکڑنا اور ”النّدى“ کا معنی کچھ دینا ہے جیسا کہ اس مصرعہ میں ہے:

وَلَا فَضْلَ فِيهَا لِلشُّجَاعَةِ وَالنّدى

”اور اس میں بہادری اور کچھ دینے کی کچھ حیثیت نہیں ہے۔“

”النّدى“ نصب کے ساتھ ”استلمت“ کا مفعول ہے اور ”خَيْرٌ مُسْتَلَمٌ“ سے مراد

حضور ﷺ ہیں ”مستلم“ فاعل کا صیغہ بھی ہو سکتا ہے یا پھر مفعول کا ہے۔

شعر کا حاصل معنی یہ ہے: میں نے جب بھی دنیا کا کافی سامان اور آپ کا احسان و انعام یا آپ

کی ذات سے آخرت کی سلامتی مانگی ہے تو مجھے اپنا مقصد حضور ﷺ کی طرف سے مل ہی گیا ہے

چنانچہ میں ان کی وجہ سے دنیا کی آفتوں اور آخرت کی بلاؤں سے صبح و شام محفوظ ہو گیا ہوں۔



شعر (۸۲)

لَا تُنْكِرِ الْوَحْيَ مِنْ رُؤْيَاہُ إِنَّ لَہُ
قَلْبًا إِذَا نَامَتِ الْعَيْنَانِ لَمْ يَنَمْ

(ترجمہ:) ”تم حضور ﷺ کی خواب میں اُترنے والی وحی کا انکار نہ کیا کرو کیونکہ اس وقت اگرچہ دونوں آنکھیں سو رہی ہوتی تھیں مگر آپ کا دل مبارک سویا نہیں ہوتا تھا۔“

جب حضرت امام رحمہ اللہ نے حضور ﷺ کی بڑی بڑی خوبیاں بتا دیں تو اب اس ذاتِ کریمہ کی طرف اشارہ کرتے ہیں کہ جن میں یہ خوبیاں پائی جاتی ہیں ان کے بارے میں یہ سمجھنا کوئی مشکل نہیں کہ ان کا دل مبارک اللہ سے گہرا تعلق رکھتا تھا اور رات دن میں اس طرف سے توجہ نہ ہٹاتا تھا اگرچہ ان کی آنکھیں سوتی تھیں چنانچہ فرمایا: ”لا تنکر الوحی الخ“ چنانچہ مذکورہ خوبیاں اس شعر کیلئے سبب اور دلیل ہوئیں تو اس میں قیاس کی ترتیب یوں ہوگی کہ ”جب ہمارے نبی کریم ﷺ میں ایسی خوبیاں پائی جاتی ہیں تو پھر تمہارے لئے ان کی طرف خواب میں آنے والی وحی کا انکار مناسب نہیں لیکن پہلا قضیہ سچا ہے تو دوسرا بھی ایسا ہی ہوگا تو ”إِنَّ لَہُ“ کا قول دوسرے قضیہ کیلئے یوں علت اور سبب بنا کہ ”تمہارے لئے یہ مناسب نہیں کہ تم ان کی طرف خواب میں آنے والی وحی سے انکار کر دو لیکن پہلا قضیہ سچ تو دوسرا بھی ویسا ہی ہوا۔“

تحقیق الفاظ

”لا تنکر“، ”انکار“ مصدر سے نہی حاضر کا صیغہ ہے اور یہ خطاب ہر اس شخص کو ہے جو یہ خطاب سن سکتا ہے۔ ”الوحی“، ”لا تنکر“ کا مفعول ہونے کی وجہ سے منصوب ہے۔
وحی کے معنی اور طریقے

”وَحْي“ کا لفظ کئی معنوں کیلئے آتا ہے جیسے اشارہ، رسالت، الہام اور پوشیدہ کلام اور عام طور پر مشہور ”اللہ کا اپنے انبیاء علیہم السلام کو علم دینا“ کے معنی میں ہوتا ہے۔ یہ علم یا تو ظاہری طور پر ہوتا ہے یا خفیہ طور پر ظاہر ہو تو وہ تین طرح ہوتا ہے: پہلا وہ جو فرشتے کی زبانی ہوتا ہے اور آپ کے کانوں تک پہنچتا کہ آپ علم پہنچانے والے کو جانتے ہوتے ہیں تو یہ قطعی اور ٹھوس ہوتا ہے اور قرآنِ کریم اسی طرح کا علم ہے دوسرا وہ جو فرشتے کے اشارہ سے دیا جاتا ہے اور اس میں بات کرنے کا دخل نہیں ہوتا جیسے

حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام فرماتے ہیں کہ روح القدس (جبریل) نے میرے دل میں یہ بات ڈالی ہے کہ ”کوئی شخص اس وقت تک نہیں مرتا جب تک پوری وہ روزی نہیں کھا لیتا جو اللہ نے اس کیلئے مقرر کر دی ہے لہذا تم اللہ سے ڈرتے رہو اور اللہ سے خوب مانگو“ (مشکاۃ المصابیح، کتاب الرقاق، باب التوکل والصبر، الفصل الثانی، جلد ۲ صفحہ ۲۶۴، رقم الحدیث: ۵۳۰۰) تیسرا وہ جسے خود اللہ تعالیٰ خواب کے دوران آپ کے دل میں ڈال دیتا ہے اور ظاہر میں بھی کسی شبہ کے بغیر وہ الہام یوں فرما دیتا ہے کہ انہیں اپنی طرف سے نور دکھا دیتا ہے اور سب علم حجت اور دلیل کا کام دیتے ہیں لیکن اولیاء کا الہام ایسا نہیں ہوتا کیونکہ وہ ان کی ذات کے علاوہ کسی اور کیلئے دلیل نہیں بنتا۔

”مِنْ رُؤْيَاهُ“، ”وَحْيٍ“ کی صفت ہے، اسے اس لئے ذکر کیا ہے تاکہ اس وحی سے گریز ہو سکے جو ظاہری طور پر حضرت جبریل علیہ السلام کے ذریعے آتی تھی کیونکہ وہ بالکل واضح اور لوگوں تک مسلسل طریقے سے پہنچی ہوتی تھی تو اسے یہاں ذکر کرنے کی ضرورت نہیں۔

”رُؤْيَا“ کیا ہے؟

”الرؤیا“ اسے کہتے ہیں جو انسان خواب میں دیکھتا ہے چنانچہ قاضی ابوبکر فرماتے ہیں کہ رؤیا سے مراد وہ معلومات ہیں جنہیں اللہ تعالیٰ سوتے ہوئے انسان کے دل میں فرشتے یا شیطان کے ذریعے ڈالتا ہے۔ پھر حدیث پاک میں آتا ہے کہ مؤمن کا رؤیا (خواب) وہ کلام ہوتی ہے جو اللہ تعالیٰ اپنے بندے سے خواب میں کرتا ہے (کنز العمال، کتاب المعیشتہ والاعادات، جلد ۱۵ صفحہ ۱۶۰، رقم الحدیث: ۴۱۴۴۴)۔ یہ تین قسم کا ہوتا ہے: ”تبشیر“ اس میں خواب پر مقرر فرشتہ بشارت دیتا ہے اور وہ اس سے خوش ہو جاتا ہے، یہ دنیاوی یا اخروی ہوتا ہے۔ ”تحذیر“ یہ وہ خواب ہے جس میں وہ بندے کو اس چیز سے ڈراتا ہے جس کی وجہ سے وہ عبادت سے دور ہو کر گناہ کے قریب چلا جائے اور ”الہام“ جسے اللہ اس کے دل میں ڈالتا ہے اور یہ فائدے کیلئے ہوتا ہے جیسے حج کرنا اور تہجد پڑھنا۔

یا یہ خواب جھوٹا ہوتا ہے اور اس کی بھی تین قسمیں ہیں: پہلا: ”رؤیا ہمّۃ“ یہ جاگتے ہوئے کسی چیز کا خیال کرنا چنانچہ اس کا اعتبار نہیں ہوتا۔ دوسرا: ”رؤیا علّۃ“ (بیمار ہونے کا خواب) جو بیماری میں دکھائی دیتا ہے تو اس کا بھی اعتبار نہیں ہوتا۔ تیسرا: ”رؤیا شیطان“ یہ پریشان خواب ہوتے ہیں۔ یہ سب خوابیں انبیاء علیہم السلام کے علاوہ لوگوں کی ہوتی ہیں لیکن رہی نبیوں کی خوابیں تو وہ سچی ہوتی ہیں بلکہ وحی ہوتی ہیں اور ان پر عمل کرنا لازمی ہوتا ہے۔

”ان لہ“ نہی کی علت ہے اور ”لہ“ کی ضمیر حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کی طرف جاتی ہے اور ”قلبا“ (نصب سے) ”ان“ کا اسم ہونے کی وجہ سے منصوب ہے اور اس کی تنوین تعظیم کیلئے ہے اور ”اذانامت“ والا جملہ ”قلبا“ کی صفت ہے ”لم ینم“ میں فاعل کی ضمیر ”قلبا“ کی طرف جاتی ہے۔

شعر کا حاصل معنی یہ ہے کہ ”اے انکار کرنے والے! تم انکار نہ کرو اور اے ماننے والے! تم اس بات کو عجیب و غریب نہ سمجھو جو وحی ربانی اور الہامِ صمدانی کے ذریعے ہوتی ہے اور انہیں خواب میں آتی ہے کیونکہ حضور ﷺ کے پاس ایسا عظیم اور کرم کرنے والا دل ہے کہ جب آنکھیں سو جاتی ہیں تو خواب میں ان کا دل نہیں سوتا۔“

اس شعر میں حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کے اس فرمان کی طرف اشارہ ہے: ”إِنَّ عَيْنَيَّ تَنَامُ وَلَا يَنَامُ قَلْبِي“ (صحیح بخاری، کتاب التہجد، باب قیام النبی باللیل فی رمضان وغیرہ، جلد ۱ صفحہ ۳۸۹، رقم الحدیث: ۱۱۴۷) اور اس فرمان کی طرف ”الرُّؤْيَا الْحَسَنَةُ مِنَ الرَّجُلِ الصَّالِحِ جُزْءٌ مِّنْ سِتَّةٍ وَأَرْبَعِينَ جُزْءًا مِّنَ النَّبُوَّةِ“ (صحیح البخاری، کتاب التعمیر، باب رؤیا الصالحین، جلد ۴ صفحہ ۴۰۲، رقم الحدیث: ۶۹۸۳) (نیک شخص کی اچھی خواب نبوت کے چھیالیس حصوں میں سے ایک حصہ ہوتی ہے، ایک روایت ابو ہریرہ رضی اللہ عنہ میں پینتالیس حصوں میں سے ایک حصہ) (کنز العمال، کتاب المعیشتہ والعادات، جلد ۱۵ صفحہ ۱۵۸، رقم الحدیث: ۴۱۴۲۰) حضرت عمر رضی اللہ عنہ کی روایت میں ستر حصوں میں سے ایک حصہ (صحیح مسلم، کتاب الرؤیا، صفحہ ۱۲۴، رقم الحدیث: ۲۲۶۵) حضرت انس رضی اللہ عنہ کی روایت میں چھبیس حصوں میں سے ایک حصہ (تحفۃ الاحوذی، کتاب الرؤیا، باب أن رؤیا المؤمن جز..... الخ، جلد ۶ صفحہ ۵۴۷، رقم الحدیث: ۲۲۷۰) ایک اور روایت میں چوبیس حصوں میں سے ایک حصہ ہوتی ہے۔ (مرقات المفاتیح، کتاب الرؤیا، الفصل الاول، جلد ۱۳ صفحہ ۳۶۴)

پہلی روایت کا مطلب کچھ علماء نے یہ نکالا ہے کہ اللہ تعالیٰ نے اپنے نبی کی طرف خواب میں چھ ماہ تک وحی فرمائی، پھر اس کے بعد جاگنے کے دوران پوری زندگی تک وحی فرماتا رہا اور اس پوری مدت کو خواب کی وحی کے مقابلے لایا جائے تو یہ چھیالیس حصے بنتے ہیں اور یہ چھ حصے چھیالیس حصوں میں سے ایک حصہ بنتا ہے کیونکہ آپ نبوت کے بعد تیس سال تک دنیا میں رہے، جیسے آگے آ رہا ہے تو اسے ذہن نشین کر لو۔

یاد رہے کہ پہلی حدیث (کہ پہری آنکھیں سوتی ہیں) پر یہ اعتراض ہے کہ اس واقعہ کے مخالف

ہے جو وادی میں ہوا کہ آپ کے سونے پر سورج نکلا اور فجر کی نماز فوت ہو گئی کیونکہ اگر آپ کا دل مبارک نہ سویا ہوتا تو آپ سے نماز کا وقت فوت نہ ہوتا تو اس کا پہلا جواب یہ ہے کہ حدیث میں زیادہ تر وقت کو دیکھا گیا ہے تو یہ بات اس کے خلاف نہیں جو حکمت و مصلحت کی بناء پر کبھی کبھار ہو جائے: وہ سنت بنے گی یا شریعت دکھائی جائے گی جیسے حضور ﷺ نے فرمایا ہے کہ ”اگر اللہ کی مرضی ہوتی تو وہ ہمیں بیدار نہ کرتا لیکن اس نے اسے بعد والوں کیلئے سنت بنانے کا ارادہ فرمایا ہے“۔

(السنن الکبریٰ للنسائی، کتاب السیر، جلد ۵ صفحہ ۲۶۸، رقم الحدیث: ۸۸۵۴ (مفہوماً))

دوسری یہ کہ آپ کا دل اس وجہ سے نہیں سوتا کہ انہیں خواب میں وحی آنی ہوتی ہے اور وادی والے واقعہ میں آپ کی آنکھیں سورج دیکھنے سے سوئی تھیں اور یہ سو جانا دل کا کام نہیں۔

اس کے اور بھی کئی جواب ہیں جنہیں ہم چھوڑ رہے ہیں۔

دوسری حدیث (اچھی خوابیں) پر یہ اعتراض ہے کہ نبوت تو آپ کے وصال ہی پر ختم ہو گئی تو پھر خواب کے نبوت کا جزء ہونے کا کوئی مقصد نہیں تو اس کا پہلا جواب یہ ہے کہ اگر یہ حضور ﷺ سے واقع ہو تو وہ یقیناً واقعی نبوت کے حصوں میں سے ایک حصہ ہے اور اگر آپ کے علاوہ کسی اور کو آئے تو اسے مجازی طور پر کہیں گے۔

دوسرا یہ کہ حدیث کا معنی علم نبوت کا حصہ ہونا ہے اور نبوت اگرچہ ختم ہو چکی لیکن اس کا علم تو باقی

ہے۔

تیسرا یہ کہ حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کا مقصد یہ نہیں ہے کہ نبوت باقی ہے بلکہ آپ نے یہ بتانا چاہا ہے کہ خواب اس لحاظ سے نبوت جیسی ہوتی ہے کہ اس سے غیب کی کچھ خبر مل جاتی ہے اور کسی شے کو کسی سے تشبیہ دینے پر یہ لازم نہیں ہوتا کہ اس کی خوبی بھی اس میں ثابت ہو۔

جو کچھ ہم تمہیں بتا چکے ہیں اسے اچھی طرح یاد رکھو کیونکہ یہ ایسے بہت سارے موقعوں پر کام

دے گا جہاں لوگوں کے قدم پھسل جاتے ہیں۔ والحمد لله المفضل المنعام۔



شعر (۸۳)

فَذَاكَ حِينَ بُلُوغٍ مِّنْ نُبُوَّتِهِ
فَلَيْسَ يُنْكَرُ فِيهِ حَالٌ مُحْتَلِمٌ

(ترجمہ:) ”چنانچہ خوابوں میں وحی کا آنا اس موقع پر تھا جب آپ کو نبوت ملنے والی تھی اور اب جبکہ انہیں نبوت مل ہی چکی تھی تو ایسے سمجھدار کا انکار نہیں کیا جاسکے گا۔“

جب اس وہم کی گنجائش ہے کہ اگر حضور ﷺ کی خواب وحی ہوتی تو جو خوابیں آپ نے نبوت سے پہلے دیکھیں، وہ بھی وحی ہوں حالانکہ ایسا نہیں کیونکہ وحی تو صرف اسے کہا جاتا ہے جو نبوت اور بعثت کے بعد ہو تو اسے دور کرنے کیلئے فرمایا: ”فَذَاكَ حِينَ بُلُوغِ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

فاء تفصیل کیلئے ہے اور ”ذا“ آپ کی خوابوں کے وحی ہونے کا اشارہ ہے۔

”فَذَاكَ“ مبتداء ہے جس کی خبر محذوف ہے یعنی یہ واقع ہوا۔ ”حین“ اس محذوف لفظ کی خبر

ہے۔

”بلوغ“ کا معنی پہنچنا ہے اس کی تنوین مضاف الیہ کے بدلے میں ہے جو ”حین بلوغہ“

ہے۔

”نبوۃ“، ”نبا“ سے ہے، یعنی خبر دینا لیکن یہاں اس سے مراد اللہ اور عقلمندوں کے درمیان ایسا واسطہ ہے جو ان کی ہر قسم کی بیماریاں وغیرہ دور کر سکے۔ آپ نے یہاں ”من رسالتہ“ نہیں کہا، یہ اس وقت اشارہ ہے کہ خواب کا وحی ہونا صرف رسول ہی کیلئے نہیں بلکہ ہر نبی اور دوسروں کے لئے بھی ہے اسے ذہن میں رکھو۔

”فَلَيْسَ“ میں فاء جزائیہ ہے ”لَيْسَ“، ”لا“ کے معنی میں ہے ”ینکر“ مجہول کا صیغہ ہے

”انکار“ سے۔ ”فیہ“، ”ینکر“ سے متعلق ہے، ضمیر ”بلوغ“ کی طرف جاتی ہے جس سے نبوت

میں بالغ ہونا مراد ہے۔ ”حال محتلم“ (رفع سے) ”ینکر“ کا نائب فاعل ہے۔ ”المحتلم“

(لام پر زبر) جس خواب میں خیال معلوم ہو سکے اور اس سے مراد رسول اللہ ﷺ ہیں یا اس کی لام پر

زیر ہے تو یہ اسم فاعل ہوگا یعنی بالغ شخص۔

شعر کا حاصل معنی یہ ہے کہ وہ وحی جو نبوت کی ابتداء میں رسالت ملنے سے ذرا پہلے آپ کو خواب میں آیا کرتی تو اس زمانے میں اور اس وقت کے پہنچنے میں جب آپ مردوں کی عمر کو پہنچ چکے، آپ میں کمال حاصل کرنے کی خوبیاں پیدا ہو گئیں کہ آپ نے خواب میں وحی کا دعویٰ کر دیا کیونکہ اس وقت حقیقی وحی شروع ہونے کو تھی تو ان وحیوں کا انکار نہیں کیا جاسکتا۔

اگر تم کہو کہ حضور ﷺ کیلئے خواب میں وحی کا سلسلہ کیوں شروع ہوا، وحی ظاہری پہلے کیوں شروع نہ ہوئی؟ تو میں کہوں گا کہ اگر فرشتہ اچانک ظاہری وحی لے آتا تو یہ احتمال تھا کہ آپ کی بشری طاقتیں اسے برداشت نہ کر سکتیں چنانچہ نبوت سے پہلے کاموں اور بزرگی کی بشارتیں بتانے کیلئے ان سے شروع کیا گیا جبکہ دوسرے انبیاء علیہم السلام کے ساتھ ایسا نہیں ہوا کیونکہ انہیں پہلے نبیوں کی کتابوں سے وحی اُترنے کا پتہ چلا ہوا تھا اور ہمارے نبی کریم ﷺ نے دوسرے ان نبیوں کی کتابوں میں سے کچھ نہیں پڑھا تھا جو بڑی خوبیوں کے مالک تھے۔



شعر (۸۴)

تَبَارَكَ اللهُ مَا وَحَى بِمُكْتَسَبٍ
وَلَا نَبِيٍّ عَلَى غَيْبٍ بِمُتَّهِمٍ

(ترجمہ:) ”اللہ کتنی عظیم ذات ہے (میں اسی کے یقین پر بات کرتا ہوں کہ) کسی وحی کا اُترنا کسی محنت کے نتیجے میں نہیں ہوتا اور نہ ہی کوئی ایسا نبی ہوا جسے غیب کی خبریں دینے پر غلط کہا گیا۔“

جب پہلے شعر سے یہ وہم پیدا ہو سکتا تھا: یہ پوچھا جا سکتا ہے کہ نبی کریم ﷺ کی سارے وقتوں میں آنے والی خوابیں وحی کیوں نہیں بنتیں، وحی کا شمار کرنا چالیس سال کی عمر میں کیوں شروع ہوا اور آپ نے اپنے پہلے حال میں خود ہی رسالت کا مقام کیوں نہ لے لیا؟ تو آپ نے اس خیال کو یہ اشارہ کرتے ہوئے دور کیا کہ وحی اور نبوت کا ملنا صرف اللہ تعالیٰ کی مہربانی سے ممکن ہے، اسے اپنی محنت سے حاصل نہیں کیا جا سکتا اور نہ ہی یہ غیب کی خبریں دینے سے ملتی ہے، اس کا علم تو اللہ ہی دیتا ہے چنانچہ فرمایا: ”تبارك الله ما وحى الخ“۔

تحقیق الفاظ

”تبارك الله“ کہنا تعجب اور حیرانی ظاہر کرنے کیلئے ہوتا ہے۔ ”تبارك“، ”بركة“ سے ہے جس کا مطلب ”بہت ساری بھلائیاں“ ہے اور معنی ہر شے سے بڑھ جانا ہے، اللہ اپنی خوبیوں اور کاموں میں بلند مرتبہ اور عظیم ہے۔

مولانا فناری سورہ فاتحہ کی تفسیر میں بتاتے ہیں: کہتے ہیں کہ صاحب بن عباد ”الرقیم“ تبارك اور ”المتاع“ کے معنی سمجھنے کیلئے پریشان ہو کر عرب کے کئی قبیلوں کا چکر لگاتا رہا آخر کار اس نے ایک عورت کو دیکھا جو اپنے بیٹے سے پوچھ رہی تھی کہ ”أَيْنَ الْمَتَاعُ“ جس کا جواب اس کے چھوٹے سے بچے نے یوں دیا کہ ”جَاءَ الرَّقِيمُ وَأَخَذَ الْمَتَاعَ وَتَبَارَكَ الْجَبَلُ“ اس نے ان سے پوچھا تو پتہ چلا کہ ”رقیم“ کتا ہوتا ہے، ”متاع“ وہ چیز جسے پانی سے تر کر کے پیالے دھوئے جاتے ہیں اور ”تبارك“ کا معنی ”چڑھا“ ہے۔

یہ بھی کہتے ہیں کہ ”تبارك“ کا معنی ہے: ”ہمیشہ ایک حال پر قائم رہا اور اس میں تبدیلی نہ آئی“

اور اسی وجہ سے ”یَتَبَارَكُ“ مضارع کا صیغہ نہیں بولا جاتا کیونکہ اس میں تبدیلی اور انتقال ہوتا ہے۔
برہان میں لکھا ہے کہ یہ لفظ اللہ تعالیٰ کے علاوہ کسی اور کیلئے بولا نہیں جاتا اور اسے ماضی ہی کے
لفظ سے بولا جاتا ہے۔ (انتہی)

یہاں صرف یہی لفظ لانے کی وجہ یہ ہے کہ اس کے بعد ایک عظیم کام آ رہا ہے۔
”ما وحيٰ بمكتسب الخ“ یعنی کسی بھی زمانے میں وحی کا آنا کسی محنت سے نہیں ہوتا کیونکہ
فضل و کرم کرنا صرف اللہ ہی کا کام ہے وہ جس پر چاہے اور جس وقت چاہے کر سکتا ہے۔
اگر تم کہو کہ وحی اور نبوت محنت سے حاصل نہیں ہوتی بلکہ اللہ کے فضل سے ملتی ہے تو پھر یہ انسان
کی جبلت اور طبیعت میں رچی ہوتی ہوگی، اختیاری نہیں ہوگی اور اگر یہ اختیاری اور مرضی کی خوبیوں
میں سے نہیں تو پھر یہ مدح نہیں بن سکے گی تو پھر ناظم کا کام نہیں کہ اسے ان خوبیوں اور مدحوں میں
شمار کریں۔ میں کہوں گا کہ مدح، کبھی تو غیر اختیاری سے تعلق رکھتی ہے اس لئے کہ حمد اور مدح صاحب
کشف اور سید کے مطابق ایک ہی معنی دیتے ہیں اس پر غور کر لو۔

”ولا نبی“ کا عطف ”وحی“ پر ہے اور نفی کو دوبارہ لانا زور پیدا کرنے کیلئے ہے اور یہ قول
ان کم علموں کا وہم دور کرنے کیلئے لائے ہیں جو یہ کہتے ہیں کہ اللہ کے علاوہ کوئی دوسرا غیب نہیں جانتا
تو پھر انبیاء علیہم السلام کا خبریں دینا غیب کیسے کہا جاسکتا ہے؟

”علیٰ غیب“ کا تعلق ”متہم“ سے ہے۔ اس پر یہ اعتراض نہیں کیا جاسکتا کہ اس کا اس سے
تعلق نہیں کیا جاسکتا کیونکہ جو لفظ حرف جار کے ماتحت ہوتا ہے اسے اس سے پہلے نہیں کیا جاسکتا تو ہم
کہیں گے کہ یہ اصول ظرف کے علاوہ لفظوں میں ہوتا ہے اور ظرف میں وہ کچھ معاف ہوتا ہے جو کسی
اور لفظ میں ممکن نہیں اور پھر یہ بھی تو ہو سکتا ہے کہ اسے ضرورت شعر کی وجہ سے پہلے لایا گیا۔

”متہم“ اسم مفعول کا صیغہ ہے جس کا معنی ایسی چیز جس پر عیب لگایا جائے اور اسے جھوٹا جانا

جائے۔

اس شعر کا حاصل معنی یہ ہے: اللہ اپنی ذات و صفات میں بلند مرتبہ اور عظیم ہے تو پھر میں اللہ کو
عیبوں سے پاک جانتے ہوئے کہتا ہوں کہ اپنی محنت اور اچھی باتیں کرنے اور خطاب کرنے سے وحی
نہیں ہوا کرتی بلکہ یہ اللہ تعالیٰ کی طرف سے عطاء اور تحفہ ہوتی ہے چنانچہ نبوت والے نبی اور اسکے
معجزوں الخ کو آئندہ کی خبریں دینے اور کائنات کی خبریں پہنچانے پر تہمت نہیں لگائی جاسکتی کیونکہ جو

بھی نبی ہوتا ہے وہ اپنی مرضی سے نہیں بولتا بلکہ اس کی ہر بات وہ وحی ہوتی ہے جو اس کی طرف کی جاتی ہے۔

اس شعر میں اللہ تعالیٰ کے اس فرمان کی طرف اشارہ ہے کہ ”فَلَا يُظْهِرُ عَلٰی غَيْبِهِ اَحَدًا اِلَّا مَنْ ارْتَضٰی مِنْ رَسُوْلٍ الْاٰیةِ“ (سورۃ البجن، آیت: ۲۶-۲۷) (وہ اپنے غیب کا پتہ کسی کو نہیں بتاتا، صرف اس رسول کو بتاتا ہے جسے بتانے کی ضرورت سمجھتا ہے) اور اس فرمان کی طرف بھی: ”وَمَا هُوَ عَلٰی الْغَيْبِ بِضَنِيْنٍ“ (سورۃ التکویر، آیت: ۲۴) طاء کی قراءت کے مطابق، اہل تفسیر کے ہاں یہی مشہور ہے جو کان دھر کر سننے والے پر پوشیدہ نہیں جبکہ وہ دیکھ بھی سکتا ہو۔



شعر (۸۵)

كَمْ اَبْرَاتٍ وَصَبًا بِاللَّمْسِ رَاحْتُهُ
وَاطْلَقْتُ اَرَبًا مِّنْ رَّبْقَةِ اللَّيْمِ

(ترجمہ:) ”ایسے کتنے ہی بیمار تھے جنہیں آپ کا ہاتھ مبارک لگتے ہی شفاء ہو گئی اور کتنے ہی ضرورت مند تھے جنہیں آپ نے بے سمجھی سے بچا لیا۔“

جب پہلے شعر سے سمجھ آ گیا کہ وحی اترنا اور نبی بن جانا صرف اللہ کا فضل ہوتا ہے وہ جس پر چاہے کر دے اور وہ جانتا ہے کہ اسے کس کو رسول بنانا ہے تو کسی سوال کرنے والے کی طرف سے وہم کیا جاسکتا تھا کہ پھر نبی بنا کر بھیجنے اور وحی کا فائدہ کیا ہے تو حضرت ناظم نے اس کے فائدے کی طرف اشارہ کرتے ہوئے فرمایا: ”کم ابرأت و صبًا باللمس راحته الخ“ یعنی حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کو بھیجنے کی حکمت اور مصلحت مریضوں کو ان کی ایسی باطنی بیماریوں سے بچاتا ہے جن کا علاج صرف حضور ﷺ ہی فرما سکتے تھے اور اسے انہی سے حاصل کیا جاسکتا ہے کیونکہ دلوں کو درست کرنا صرف اسی طبیب کے ہاتھ میں ہوتا ہے جو اپنے پروردگار کی پہچان رکھتا ہو اس کے نام صفات احکام اور کاموں کو سمجھتا ہو اس کی مرضی پر چلتا ہو اس کی محبت کو چاہتا ہو اس کے روکے کاموں سے پریشان ہوتا ہو اور اس کے حکموں پر چلتا ہو اور یہ سب کچھ اس وقت ممکن ہے جب ہمارے سردار حضرت محمد ﷺ سے یہ سب کچھ لے اور یونہی ان کا کام ایسے بیماروں کو ان کی ظاہری بیماریوں سے شفاء دینا ہے جو جسم کے ظاہری اور باطنی حصوں میں ہوتی ہیں جیسے انشاء اللہ آگے چل کر ان کا ذکر آئے گا۔

تحقیق الفاظ

یہاں ”کم“ خبر یہ ہے کیونکہ اسے بولنے والا خبر دینے والا ہوتا ہے اور جس پر یہ داخل ہوتا ہے وہ خبر ہوتی ہے جبکہ استفہامیہ یوں نہیں ہوتا کیونکہ وہ اس کے الٹ ہوتا ہے چنانچہ اس شخص کی کمزوری کا پتہ چل گیا جو اسے استفہامیہ بناتا ہے معنی یہ ہوگا: بہت مرتبہ تندرست کر دیا۔ یہ لفظ ”ابراء“ سے ہے جس کا معنی دور کر دینا ہے۔

”و صبًا“ ایک روایت میں صاد کی زبر اور زیر سے ہے چنانچہ زبر ہو تو معنی ”کوئی بھی بیماری“ ہو گا یوں معنی یہ ہوگا کہ بہت مرتبہ ایسا ہوا کہ آپ کے مبارک ہاتھوں نے بیماروں کی بیماریاں دور کر دیں

اور زیر کی صورت میں ”بیماری والا“ ہے تو اس صورت میں معنی ہوگا کہ کئی مرتبہ آپ کے مبارک ہاتھوں نے بیماروں کو ان کی بیماریوں سے بچایا۔

”باللمس“ میں بقاء سبب ہے جس کا تعلق ”ابرات“ سے ہے ”راحتہ“ (رفع سے) اس کا فاعل ہے اور ضمیر حضور ﷺ کی طرف جاتی ہے ”راحة“ سے مراد ہتھیلی کا اندر والا حصہ ہے تو حاصل معنی یہ ہے: کئی مرتبہ آپ کی اس ہتھیلی مبارک کی وجہ سے بیمار اپنی بیماریوں سے بچ گئے جس میں شفاء موجود تھی۔

یاد رہے کہ چھونے سے مراد حقیقی چھونا ہو سکتا ہے جیسے آیا ہے کہ بدر کے دن ابو جہل نے حضرت معوذ بن عفران رضی اللہ عنہ کا ہاتھ کاٹ دیا، وہ اپنا کٹا ہوا ہاتھ اٹھالائے تو رسول اللہ ﷺ نے اسے لے کر چپکا دیا جس پر وہ پہلے کی طرح جو گیا۔

پھر حضرت ابن عباس رضی اللہ عنہما بتاتے ہیں کہ ایک عورت آپ کی خدمت میں اپنا دیوانہ بچہ لے کر حاضر ہوئی تو آپ نے اپنا سینہ مبارک لگاتے ہوئے فرمایا کہ ”نکل جاؤ“ چنانچہ اس کے پیٹ سے گتے کا چھوٹا سا سیاہ بچہ یا کوئی سیاہ چیز نکلی جس پر وہ تندرست ہو گیا۔

پھر حضرت علی رضی اللہ عنہ کی بہت دکھتی آنکھ میں اپنی تھوک مبارک ڈالی تو وہ تندرست ہو گئے۔ ایسی بہت سی مثالیں ملتی ہیں جن میں سے مشہور حدیثوں کا ذکر ہم پر لازم نہیں۔

پھر یہ بھی ہو سکتا ہے کہ جس ہتھیلی سے مراد ہاتھ مبارک لیا گیا ہے اس سے حضور ﷺ کی ذات مبارک مراد ہو اور چھونے سے مراد معنوی چھونا ہو، معنوی چھو لینا ان کا بیماروں کی دواء کا وسیلہ ہونا ہے اور آپ کا ان کیلئے ایسی شفاء ہونا ہے جیسے بد بختوں کی بیمار کیلئے دواء ہوتی ہے اور یہ چیز حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کے زمانہ ہی سے تعلق نہیں رکھتی بلکہ یہ سلسلہ قیامت تک جاری رہے گا کیونکہ اگر کوئی شخص اپنے دل کا تعلق حضور ﷺ سے بنا لیتا ہے اور ان پر درود شریف پڑھتا ہے اور اللہ سے دعا کرتا ہے کہ انہیں اس کیلئے وسیلہ بنا دے تو اللہ کے حکم سے اس کی بیماری کا علاج ہو جاتا ہے چنانچہ بڑے بڑے علماء اور اولیاء کو اس کا تجربہ ہو چکا ہے۔

مواہب میں امام قشیری رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ میرا لڑکا سخت بیمار ہوا اور فوت ہونے کو تھا، سخت پریشانی تھی۔ وہ بتاتے ہیں کہ میں نے خواب میں رسول اکرم ﷺ کی زیارت کی اور اپنے بیٹے کی تکلیف کا ذکر کیا تو آپ نے فرمایا کہ تم شفاء کی آیتوں کو کیوں بھول گئے ہو۔

میں بیدار ہوا تو سوچنے لگا، یکا یک دیکھا تو وہ قرآنِ کریم میں چھ جگہوں پر نظر آ گئیں۔

آیاتِ شفاء

(۱) ”وَيَشْفِي صُدُورَ قَوْمٍ مُّؤْمِنِينَ“ (سورۃ التوبہ، آیت: ۱۳) (۲) ”وَشِفَاءٌ لِّمَا فِي الصُّدُورِ“ (سورۃ یونس، آیت: ۵۷) (۳) ”يَخْرُجُ مِنْ بُطُونِهَا شَرَابٌ مُّخْتَلِفٌ أَلْوَانُهُ فِيهِ شِفَاءٌ لِّلنَّاسِ“ (سورۃ النحل، آیت: ۶۹) (۴) ”وَنُنَزِّلُ مِنَ الْقُرْآنِ مَا هُوَ شِفَاءٌ وَرَحْمَةٌ لِّلْمُؤْمِنِينَ“ (سورۃ الاسراء، آیت: ۸۲) (۵) ”وَإِذَا مَرِضْتُ فَهُوَ يَشْفِينِ“ (سورۃ الشعراء، آیت: ۸۰) (۶) ”قُلْ هُوَ الَّذِي آمَنُوا هُدًى وَشِفَاءً“ (سورۃ فصلت، آیت: ۴۴)۔

وہ فرماتے ہیں کہ میں نے انہیں لکھا اور پانی سے مٹا کر وہ پانی بچے کو پلا دیا تو وہ یوں ہو گیا جیسے بندھن سے چھوٹ کر ہشاش تھا۔

حضرت ابو بکر رازی بتاتے ہیں کہ میں اصفہان میں ابو نعیم کے پاس تھا، ایک بوڑھے نے ان سے کہا کہ ابو بکر بن علی کو بادشاہ کے پاس لے جا کر قید کر دیا گیا ہے، چنانچہ میں نے خواب میں رسول اللہ ﷺ کی زیارت کی تو حضرت جبریل علیہ السلام آپ کی دائیں طرف تسبیح پڑھتے ہوئے ہونٹ ہلا رہے تھے اس پر نبی کریم ﷺ نے مجھ سے فرمایا: ابو بکر سے کہہ دو کہ وہ ”دعاء کرب“ پڑھیں جو صحیح بخاری میں ہے تاکہ اللہ تعالیٰ انہیں رہائی دیدے۔

وہ فرماتے ہیں کہ صبح ہونے پر میں نے انہیں بتایا تو انہوں نے دعا کی چنانچہ کچھ ہی دیر میں اللہ تعالیٰ نے انہیں رہائی دیدی۔

دعاء کرب ہر مشکل کیلئے

دعاء کرب جسے امام بخاری و مسلم نے لکھا ہے، حضور ﷺ کی زبان مبارک سے نکلی ہوئی یوں

ہے:

”لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ الْعَظِيمُ الْحَلِيمُ لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ رَبُّ الْعَرْشِ الْعَظِيمِ لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ رَبُّ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ وَرَبُّ الْعَرْشِ الْكَرِيمِ“۔

(صحیح البخاری، کتاب الدعوات، باب الدعاء عند الكرب، جلد ۴ صفحہ ۲۰۲، رقم الحدیث: ۶۳۳۶)

علامہ خرپوتی کے استاذ کی بیوی کو دعاء کرب سے شفاء

یہ فقیر کہتا ہے کہ جسے اپنی عاجزی اور کوتاہیوں کا اقرار ہے کہ اسی مذکور واقعہ جیسا ایک واقعہ

ہمارے زمانے میں بھی ہوا ہے کہ ہمارے استاذ علامہ کی بیوی دل کے مرض میں گھر گئی، انہیں دن رات میں سکون نہ تھا، وہ بلند آواز سے اتنی چیخیں مارتی تھی کہ ہمسائے بھی اس کی زندگی سے بے امید ہو گئے، انہوں نے اس کیلئے بہت سارے طبیبوں سے دعائیں لے کر دیں لیکن ان سے فائدہ نہ ہوا۔ ایک دن استاذ صاحب نے مجھ سے فرمایا کہ ہماری طرف سے روضہ مصطفیٰ ﷺ کی طرف درخواست لکھو کہ آپ اس بیماری کیلئے سفارش فرمادیں چنانچہ میں نے ایک خط لکھا جس کی ابتداء میں صلوة و سلام لکھا اور آپ کی یہ خوبی لکھی کہ آپ بے حساب بیماریوں کیلئے سفارش فرما چکے ہیں اور آخر میں میں نے آپ سے دواء کی امید باندھی اور اس دعاء کے صدقے شفاء مانگی، چنانچہ استاذ صاحب نے وہ دعا حاجیوں کے ہاتھ روضہ شریف کی طرف روانہ کر دی، پھر ہم نے حاجیوں کے مدینہ منورہ پہنچنے تک دنوں کو گنا تو ان کی بیوی کی چیخیں رُک گئیں اور گھر ہی میں بیماری بھی ختم ہو گئی۔ ہم نے اللہ تعالیٰ کا بہت شکر ادا کیا۔

”أَطْلَقْتُ“ کا عطف ”ابرات“ پر ہے یعنی کئی مرتبہ چھڑایا، ”اطلاق“ کا معنی خالی کرنا، معاف کرنا اور قید سے چھڑانا ہوتا ہے۔ ”اِرب“ (راء پرزیر) محتاجی والا۔ ”من ربقة“ کا تعلق ”اطلقت“ سے ہے، ”ربقه“ (زیر سے) وہ رسی جس پر گانٹھ ہوتی ہے جس سے مویشی باندھے جاتے ہیں۔ ”لَمَم“ (دوز بروں سے) چھوٹے گناہ لیکن یہاں اس سے مراد کسی بھی طرح کا گناہ ہے کیونکہ یہ مبالغے کا مقام ہے۔ پھر یہ ممکن ہے کہ ”ربقه“ کی ”لمم“ کی طرف اضافت لام کے معنی میں ہو تو یوں معنی ہوگا کہ بہت مرتبہ آپ کی مبارک ہتھیلی نے ضرورت مندوں کو اس قید سے آزاد کیا جس میں اپنے ظاہری گناہوں میں گرفتار تھے یا انہیں گناہگار بنایا گیا تو یوں یہ رسول اکرم ﷺ کے ان کافروں کو چھوڑنے کی طرف اشارہ ہوگا جنہیں مؤمنوں نے جنگوں میں قید کیا تھا یا اس سے مراد وہ گناہ جو گناہ شمار کر لئے گئے تو اس صورت میں یہ حضرت ام سلمہ رضی اللہ عنہا کی اس روایت کی طرف اشارہ ہوگا جس میں آپ بتاتی ہیں کہ:

ہرنی کا واقعہ

رسول اللہ ﷺ ایک جنگل میں تھے ایک ہرنی نے آپ کو آواز دی کہ یا رسول اللہ! آپ نے فرمایا: کیا کہنا چاہتی ہو؟ اس نے عرض کی کہ مجھے اس خانہ بدوش نے شکار کر لیا ہے، میرے دو بچے ہیں جو اسی پہاڑ پر ہیں، آپ مجھے چھڑادیں تو میں انہیں دودھ پلاؤں، میں واپس آ جاؤں گی۔ آپ نے

فرمایا: کیا واقعی واپس آ جاؤ گی؟ اس نے عرض کی کہ ہاں! یا رسول اللہ! آپ نے اسے چھوڑ دیا، وہ گئی اور پھر واپس آ گئی۔ آپ نے اسے باندھ دیا۔ اتنے میں اس خانہ بدوش کو پتہ چلا تو اس نے عرض کی کہ یا رسول اللہ! کیا آپ کچھ فرمانا چاہتے ہیں؟ فرمایا: اس ہرنی کو چھوڑ دو، اس نے چھوڑ دیا، تو وہ دوڑتی ہوئی جنگل میں چلی گئی اور جاتے جاتے پڑھ رہی تھی کہ ”أَشْهَدُ أَنْ لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ وَ أَنَّكَ رَسُولُ اللَّهِ“ وغیرہ وغیرہ۔

یہ بھی جائز ہے کہ اسے مشبہ بہ کی مشبہ کی طرف اضافت سمجھا جائے یعنی وہ بے سمجھی یا دیوانگی جو بند کی طرح تھی یعنی حضور ﷺ نے ضرورت مندوں کو ان کی اس دیوانگی سے بچایا جو قید کی طرح تھی جیسے وہ بند جو جانور کو اس کے مقصد تک پہنچنے سے روکے رکھتا ہے، یونہی بند انسان کو اپنے مقصد تک پہنچنے سے روکتا ہے تو اس سے چھوڑ دینا لازم آ رہا ہے کیونکہ مقصد تک پہنچنا ارادے سے نہیں ہوتا تو گناہ ختم کرنا اور مٹا دینا صرف حضور ﷺ ہی کا کام ہے۔



شعر (۸۶)

وَأَحْيَتِ السَّنَةَ الشَّهْبَاءَ دَعْوَتُهُ
حَتَّى حَكَّتْ غُرَّةً فِي الْأَعْصِرِ الدُّهُمِ

(ترجمہ:) ”آپ کی دعاء نے سخت ترین قحط سالی کو ایسا خوشگوار بنا دیا کہ وہ موسم کفر کی اندھیروں میں اسلام کی روشنی دے گیا۔“

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے جب زمین پر رسول اکرم ﷺ کی دعاء کا اثر بتا دیا تو اب آسمان پر آپ کی دعا کا اثر بتاتے ہوئے فرماتے ہیں: ”واحييت السنة الشهباء الخ“۔
تحقیق الفاظ

واو عاطفہ ہے یہ جملہ ”اطلقت“ پر معطوف ہے۔ ”احیت“، ”احیاء“ سے ہے جو مار دینے کی ضد ہے۔ ”السنة“ (نصب سے) ”احیت“ کا مفعول ہے ”سنة“ کا معنی سال اور حجت ہے۔ ”الشهباء“ (نصب سے) ”السنة“ کی صفت ہے یہ ”اشهب“ سے مؤنث ہے یہ اس گھوڑے کو کہتے ہیں جو زیادہ تر سفید ہو اور ”السنة الشهباء“ عربوں کے ہاں اس سال کو کہتے ہیں جس میں نہ تو مینہ برسے اور نہ ہی گھاس پیدا ہو سکے۔ سال کو زندہ کرنے سے مراد یہ ہے کہ اس میں جڑی بوٹیاں اُگیں اور تروتازگی ہو جائے تو اس مقام پر مجاز اور استعارہ ہوگا اور وہ ایسے کہ ”احیت“ میں یوں استعارہ تبعیہ ہوگا کہ زمین کو نباتات اُگانے اور اس میں تروتازگی کو فائدہ مند ہونے کی وجہ سے کسی طرح کے ”زندہ کرنے“ سے تشبیہ دی جائے پھر زندہ کرنے کو زمین کے سجانے اور اس کی تروتازگی کیلئے استعارہ کیا جائے پھر ”احیاء“ سے ”احیت“ نکالیں ”تزیین“ (سجانا) سے ”زَيَّنَتْ“ نکالیں اور ”انبات“ (اُگانا) سے ”انبتت“ نکال لیں چنانچہ ”أَحْيَتْ“ ذکر کر کے ”زَيَّنَتْ“ یا ”أَنْبَتَتْ“ مراد لیں یا ”السنة الشهباء“ میں استعارہ بالکنایہ ہوگا اور وہ یوں کہ ”السنة الشهباء“ کو ذہن میں ”مردہ“ سے یوں تشبیہ دیں کہ اس سے فائدہ نہیں اُٹھایا جاسکتا پھر ”مردہ“ کو ذہن میں ”السنة الشهباء“ کے مفہوم کیلئے استعارہ کیا جائے اور باہر ”السنة الشهباء“ ذکر کر کے اسی کو مراد لیا جائے پھر اس ”زندہ کرنے“ کو جو مشبہ کے ساتھ تعلق رکھتا ہے قحط والے سال کیلئے ثابت کیا جائے تو یہ استعارہ مکئیہ ہوگا اور تخیلیہ بھی ہوگا اور دونوں صورتوں میں ”احیت“ کا آپ کی

دعاء سے تعلق پیدا کرنا تو وہ مجاز بنے گا جس میں کسی شے کا اپنے سبب سے رابطہ ہوتا ہے کیونکہ زندہ کرنا اور لے جانا حقیقۃً اللہ ہی کا کام ہے اور ضمیر ”دعوتہ“ کی حضور ﷺ کی طرف لوٹی ہے۔

”حکت“، ”شَابَهَتْ“ کے معنی میں ہے جیسے ایک شاعر کہتا ہے:

ظَلَمْنَاكَ فِي تَشْبِيهِ صَدَغِيكَ بِالْمِسْكِ

وَقَاعِدَةُ الشَّبِيهِ نُقْصَانُ مَا يُحْكِي

”ہم نے تم پر ظلم کر دیا کہ تیری کنپٹی کی زلفوں کو کستوری سے تشبیہ دے دی جبکہ تشبیہ دینے کا

قاعدہ یہ ہے کہ جسے بیان کیا جائے (مشبہ) وہ کم مرتبہ ہوتا ہے۔“

اور اس میں چھپی ضمیر ”السنہ“ کی طرف لوٹی ہے لیکن اس ضمیر کو ”دعوة“ کی طرف لوٹانا بلا

دلیل دعویٰ ہوگا جو صاف نظر آ رہا ہے مگر اسے جس میں تھوڑی سی بھی عقل ہو۔

”الغرة“ (نصب سے) ”حکت“ کا مفعول ہے اور ”غرة“ گھوڑے کی پیشانی میں درہم

جتنی سفیدی کو کہتے ہیں۔ ”فی الاعصر“، ”حکت“ سے تعلق رکھتا ہے اور یہ ”عصر“ کی جمع ہے

جس کا معنی زمانہ ہے۔

”الذہم“ (دوپیشوں سے) ”اذہم“ کی جمع ہے جس کا معنی سیاہ رنگ ہے جیسے قبضری شاعر کا

قول ہے:

”مَثَلُ الْأَمِيرِ يُحْمَلُ عَلَى الْأَذْهِمِ وَالْأَشْهَبِ“

”امیر کا رنگ بتانا ہو تو یوں بتائیں گے کہ وہ بالکل سیاہ اور سفیدی ملا ہوا سیاہ ہے۔“

یہ بات حجاج نے اس وقت کہی تھی جب اس نے قبضری کو سیاہ رنگ کے گھوڑے پر بٹھانے کو کہا

تھا۔ پھر ”السنہ“ (سال) کو ”غرة“ (سفیدی) کے ساتھ تشبیہ دینے میں تشبیہ کا سبب تھوڑی سی

سفیدی ہوگی یعنی جیسے سرخ و سیاہ گھوڑے میں تھوڑی سی سفیدی ہوتی ہے یونہی وہ سال تھوڑی سفیدی

والا تھا، یعنی اس لئے کہ اس میں جڑی بوٹیاں پیدا نہ ہوں اور نہ خوبصورتی اور چمک دمک دکھائی دی

یعنی تروتازگی دکھائی دے اور اسے سب عقلمند جانتے ہیں۔

”الاعصر الذہم“ میں استعارہ مکنیہ، تخیلیہ اور تشبیہیہ ہے اور وہ یوں کہ ذہن میں قحط والے

سالوں کو گھوڑے سے اس بناء پر تشبیہ دی کہ دونوں پسندیدہ نہیں، پھر اس گھوڑے کو ان سالوں کے

مفہوم کی خاطر استعارہ کیا گیا چنانچہ خارج میں وہ لفظ لایا گیا جو ایسے سالوں کا پتہ بتاتا ہے اور اسی ہی

کو مراد لیا گیا، پھر اس میں ماتھے کی سفیدی کا ثابت کرنا تخیل اور ”دھم“ کا ذکر کرنا ترشح ہوگا۔ اس شعر میں حضرت انس رضی اللہ عنہ کے اس بیان کی طرف اشارہ ہے جس میں انہوں نے بتایا تھا کہ حضور ﷺ کے دور میں ایک سال لوگوں کو قحط سے واسطہ پڑا چنانچہ جب جمعہ کے دن آپ خطبہ دے رہے تھے تو ایک خانہ بدوش اٹھ کھڑا ہوا اور عرض کی: یا رسول اللہ! مویشی مر رہے ہیں اور بال بچے بھوکے ہیں، آپ ہمارے لئے اللہ سے دعا فرمادیتے۔

یہ سن کر حضور ﷺ نے ہاتھ تو اٹھا دیئے لیکن ہم دیکھ رہے تھے کہ آسمان پر چھوٹے بڑے بادل موجود نہ تھے، خیر! اللہ کی قسم! ابھی آپ نے ہاتھوں کو نیچے بھی نہ کیا تھا کہ پہاڑوں جیسے بادل آگئے، پھر آپ ابھی منبر سے نیچے بھی تشریف نہ لائے تھے کہ بارش کے قطرے آپ کی ڈاڑھی مبارک سے ٹپکتے نظر آئے چنانچہ ہم پر اس دن اس سے اگلے دن اور اس کے بعد اگلے جمعہ تک بارش ہوتی رہی، اسی دوران ایک آدمی اٹھا اور اس نے عرض کی: یا رسول اللہ! مکان گر رہے ہیں اور مویشی غرق ہو رہے ہیں تو اللہ سے ہمارے لئے دعا کیجئے۔

یہ سن کے آپ نے دونوں ہاتھ اٹھا کر یوں دعا کی کہ ”اللَّهُمَّ حَوَالَيْنَا وَلَا عَلَيْنَا“ (صحیح البخاری کتاب الاستسقاء باب الدعاء اذا كثر المطر حوالينا ولا علينا، جلد ۳۵۰ صفحہ ۳۵۰، رقم الحدیث: ۱۰۲۱) (الہی! یہ بارش ہمارے ارد گرد ہو اور ہم پر نہ ہو) چنانچہ آپ بادل کی طرف جدھر جدھر انگلی اٹھاتے جاتے تھے جگہ خالی ہوتی جاتی تھی اور بادل مدینہ منورہ کے اوپر سے ہٹ گیا تھا، وادی ایک ماہ تک نہر بن کر بہتی رہی اور ارد گرد سے جو لوگ آتے تھے وہ اس بارش کی باتیں سناتے تھے۔ یہ واقعہ بہت مشہور ہے اور دنیا میں ہر ایک اسے جانتا ہے۔



شعر (۸۷)

بِعَارِضٍ جَادٍ أَوْ خِلْتِ الْبِطَاحِ بِهَا
سَيْبًا مِّنَ الْيَمِّ أَوْ سَيْلًا مِّنَ الْعَرَمِ

(ترجمہ:) ”آپ ہی کی دعا نے اس قحط کو تیز بارش کے ذریعے سرسبزی میں بدل دیا تو وادیوں کو یوں خیال کر لے کہ وہ دریا کی طرح بہ رہی تھیں یا ایسے لگتا تھا کہ جیسے عرم نامی وادی کے گھنے پانی کا بند ٹوٹ گیا ہے۔“

جب حضور ﷺ کی دعا سے خشک سالی کو ختم کرنے سے یہ خیال پیدا ہوتا تھا کہ آیا آپ نے اسے بارش کے ذریعہ زندہ کیا تھا یا اس کا کوئی دوسرا سبب نہ تھا بلکہ آپ کا ایک اور معجزہ تھا تو امام بوسیری رحمہ اللہ نے اس کا جواب دیتے ہوئے فرمایا: ”بعارض جاد الخ“۔

تحقیق الفاظ

”بعارض“ کی باء کا تعلق ”أَحْيَتْ“ یا ”حَكَتْ“ سے ہے (انہیں پہچان کر دونوں میں سے جس سے چاہو اس باء کو متعلق کر لو)۔

”العارض“ کا معنی بادل ہے۔ ”جاد“، ”جَوْد“ سے ہے (جیم پر زبر) یعنی وہ سخت بارش جس سے بڑھ کر بارش نہ ہو۔ اس کی ضمیر ”عارض“ کی طرف لوٹتی ہے تو معنی ہوگا: اس بادل کے سبب جو شدید بارش برساتا ہے۔ جو لغت کی کتابوں سے واقف نہیں وہ اسے ”جود“ (جیم پر پیش) پڑھتا ہے اور ”عارض“ میں استعارہ بالکنایہ بناتا ہے یا ”جاد“ میں استعارہ تبعیہ بناتا ہے جبکہ علماء فرماتے ہیں کہ جس مقام پر حقیقی معنی بن سکتا ہو مجاز نہیں بنایا جاسکتا۔ اس میں غور کر لو کہ یہ کچھ فہموں میں مجاز ہے۔

”أَوْ خِلْتِ“ میں حرف ”او“، ”الی“ کے معنی میں ہے اور ”خلت“، ”خیال“ سے ہے جس کا معنی خیال کرنا یا سمجھ لینا ہے یہ خطاب کا صیغہ ہے اور یہ ہر ایک سے خطاب ہے۔

”الْبِطَاحِ“، ”أَبْطَحِ“ کی جمع ہے یا ”بَطْحَاءِ“ کی یہ پانی بہنے کیلئے کھلی جگہ کو کہتے ہیں اس سے مراد مدینہ اور مکہ کے علاوہ اردگرد کی وادیاں ہیں۔ ”بِهَا“ میں باء سیبہ ہے جس کا تعلق ”خلت“ سے ہے اور اس کی ضمیر ”عارض“ کی طرف جاتی ہے اس کا مؤنث ہونا اس بناء پر ہے کہ ”سحاب“

مؤنث سماعی ہے۔

”سَيِّبَا“ (نصب سے) ”خِلَّتْ“ کا دوسرا مفعول ہے ”سَيِّب“، ”عَيْب“ کے وزن پر چلنے کے معنی میں ہے۔

”من اليم“ ظرف مستقر ہے جو ”سَيِّب“ کی صفت ہے اور ”يَم“ (یاء پر زبر) سُریانی زبان میں دریا کو کہتے ہیں عربوں نے اسے عربی میں لے لیا ہے۔ یہ بھی ہو سکتا ہے کہ ”سَيِّب“ کے معنی عطاء کرنے کے ہوں چنانچہ قاموس میں ہے کہ ”فاض سيبه على الناس“ (اس نے لوگوں کو خوب عطا کیا) اس بناء پر ”يَم“ میں استعارہ مصرحہ ہوگا ذرا غور کر لو۔

کچھ نسخوں میں ”سَيِّب“ رفع سے آیا ہے وہ اس بناء پر کہ یہ مبتداء ہے اور خبر ”من اليم“ ہے اور ”سَيِّبَا“ بھی یونہی ہے جس کا معنی وہ پانی جو بارش کی وجہ سے اکٹھا ہو کر اچانک بہنے لگتا ہے چنانچہ ایک حدیث پاک میں ہے کہ ”الہی میں سیلاب اور کاٹنے والے اونٹ سے تیری پناہ مانگتا ہوں“ (المعجم الکبیر للطبرانی، مسند النساء، باب العین، جلد ۲۲ صفحہ ۳۳۴، رقم الحدیث: ۸۵۸)۔

وادیِ عرم کیسی تھی؟

”العِرم“ (عین پر زبر اور اء پر زبر) کا معنی تیز بارش یا یہ شہر سبأ میں ایک وادی کا نام ہے کیونکہ ان پر اس وادی سے بڑا سیلاب آیا کرتا تھا اور ہر صورت میں اس شعر سے مراد اس سال کی زیادہ بارشیں ہیں۔ پھر اس شعر میں سبأ کے شہر عرم سے سیلاب کے واقعہ کی طرف اشارہ ہے۔ سبأ ایک قبیلے کا نام ہے یہ نام ان کے بڑے باپ کے نام پر پڑا تھا کیونکہ وہ لوگ سبأ بن یشجب بن یعرب بن قحطان کی اولاد میں سے تھے ان کا شہر یمن کے علاقے میں مآرب کے نام سے مشہور تھا، وہاں ایک بڑی وادی تھی چنانچہ ایک دن وہ اُبل پڑی اور ان کے سارے مکان گرا دیئے اور جب بلقیس اس علاقے کی ملکہ بنی تو اس نے مزدور لوہا اور بڑے بڑے پتھر اکٹھے کرا کر اس وادی کے آگے بڑا بند باندھ دیا اور اس کے اوپر درمیان اور نخلی طرف سوراخ اور پرنا لے بنوادیئے چنانچہ وہاں کے شہریوں نے شہر کی دائیں بائیں نخلی طرف بہت سارے باغ لگائے جو نعمتوں اور پھلوں کے لحاظ سے اللہ کی نشانیوں میں بڑی نشانی تھی، پھر یہ سلسلہ اس حد تک پہنچا کہ ایک عورت اپنے سر پر ٹوکری اٹھا کر درختوں کے درمیان سے گزری، کسی درخت کو بھی نہ ہلاتی اور پھل توڑے بغیر ٹوکری بھر جاتی کہ پھل اتنے زیادہ تھے ان کا وہ علاقہ آب و ہوا کے لحاظ سے نہایت خوشگوار ہو گیا اور وہاں شورہ بھی نہ رہا، نہ

مچھر رہا نہ مکھی، نہ پتو نہ سانپ اور بچھو اور نہ کسی و باء کا حملہ ہوتا، جب کوئی مسافر وہاں آتا تو اس پر پتو اور جوئیں مرجاتیں، چنانچہ ملکہ سباً کے دور میں پہلی بار انہیں یہ خوشگواری نصیب ہوئی مگر انہوں نے اللہ کا شکر ادا نہ کیا بلکہ کہنے لگے کہ ہم پر اللہ کا کوئی انعام نہیں ہے۔ اس دوران اللہ نے ان کے ہاں تیرہ رسول یا نبی بھیجے جنہوں نے ان کو اللہ کے انعام جتلا کر سمجھایا کہ اللہ کا شکر کیا کرو لیکن انہوں نے ان کے وعظ کو کچھ نہ سمجھا اور ان پر ایمان نہ لائے تو پھر اللہ تعالیٰ نے ان کے اس بند پر ایک چوہا مقرر کر دیا جس نے اس بند کے پتھروں میں سوراخ کر دیئے ان دنوں وہ وادی دریا کی طرح بھری ہوئی تھی، یوں وہ بند ٹوٹ گیا اور پانی پورے طور پر ان کے گھروں کو بہا لے گیا، وہ گھرتباہ ہوئے اور وہ لوگ اپنے مال مویشیوں اور اولادوں سمیت غرق ہو گئے۔



چھٹی فصل:

قرآن کریم کی اہمیت اور عظمت

شعر (۸۸)

دَعْنِي وَوَصْفِي آيَاتٍ لَّهُ ظَهَرَتْ
ظُهُورَ نَارِ الْقُرْآنِ لَيْلًا عَلَيَّ عِلْمَ

(ترجمہ:)" (اے سمجھانے والے!) مجھے رہنے دو کہ رسول اللہ ﷺ کی خوبیاں یوں ظاہر

کروں جیسے کوئی پہاڑ کی چوٹی پر مہمانوں کی خدمت کیلئے آگ روشن کر کے دکھاتا ہے۔"

جب حضرت ناظم رحمہ اللہ پر ان کی طرف سے بتائی گئی خوبیوں اور معجزوں کی وجہ سے ان پر یہ

اعتراض پیدا ہوتا تھا کہ آپ کو ایسی خوبیاں بتانے کی ضرورت ہی نہیں کیونکہ وہ تو سورج کی طرح ہر

ایک کو دکھائی دیتی ہیں اور سورج کی پہچان کرانے کی ضرورت ہی نہیں تو انہوں نے اس کا جواب دیتے

ہوئے فرمایا کہ "دعنی ووصفی الخ"۔

تحقیق الفاظ

"دعنی" "وَدَعَّ يَدَعُّ" سے امر کا صیغہ ہے جس کا معنی ہے: "مجھے رہنے دو"۔ "وَوَصْفِي" "وَدَعَّ"

کا مفعول معہ ہے معنی ہوگا کہ "ساتھ ہی میں مدح کروں" وصف اصل مصدر کا معنی دیتا ہے

حاصل مصدر نہیں یہ اپنے فاعل کی طرف مضاف ہے اور مفعول "آیات" ہے یہ "آیۃ" کی جمع ہے

جس کا معنی نشانیاں اور معجزے ہیں۔

"لَهُ" کا تعلق یا تو "ظہرت" کے ساتھ ہے یا یہ طرف مستقر ہے جو "آیات" کی صفت ہوگی

یا اس کا تعلق "ووصفی" سے ہے اور ضمیر حضور ﷺ کی طرف لوٹتی ہے معنی ہوگا: "حضرت محمد ﷺ

کی حقیقی بزرگی ثابت کرنے کیلئے۔" "ظہرت" میں موجود ضمیر "آیات" کی طرف لوٹتی ہے۔

"ظہور" (نصب سے) "ظہرت" کی نوعی مصدر ہے۔

"قری" قاف پر زبر اور الف مقصورہ ہے جس کا معنی مہمان نوازی ہوتا ہے۔ "عَلَمَ" (دونوں

حرفوں پر زبر) کا معنی پہاڑ ہے جیسے کسی نے کہا ہے:

”وَإِنَّ صَخْرًا لَّتَاتِمُ الْهُدَاةُ بِهِ كَأَنَّهُ عَلِمَ فِي رَأْسِهِ نَارًا“

”اور پتھر ایسا ہے کہ راہ تلاش کرنے والے اس کی طرف آتے ہیں تو وہ ایسا ہے جیسے وہ پہاڑ جس کی چوٹی پر آگ ہو۔“

”لیلاً“، ”ظہور“ کی طرف ہے اور ”علی“ بھی اسی سے متعلق ہے۔ عرب کے مہمان نواز لوگوں کی عادت تھی کہ پہاڑ کی چوٹی پر آگ جلا دیتے تھے تاکہ خشکی کے راستے میں مسافر اسے دیکھ کر اس کی طرف آئیں اور وہاں آ کر کھانے پینے وغیرہ کی ضرورتیں پوری کر سکیں، ”ایات“ کو اس کے ساتھ تشبیہ اس کے ظاہر ہونے اور کھلے ہونے میں ہے جو واضح ہے اور ہر ذہن اسے جانتا ہے۔ شعر کا حاصل مطلب یہ ہے کہ اے نصیحت کرنے والے! مجھے رہنے دو تاکہ مختصر بات کر سکوں جس سے کسی کو اکتاہٹ نہ ہو نہ ہی پریشانی ہو کیونکہ محبوب کے ذکر کے دوران محبت کرنے والے کا دل نہیں بھرا کرتا چنانچہ تم مجھے اس کے ساتھ اس محبوب علیہ الصلوٰۃ والسلام کی وہ خوبیاں اور کمالات بتانے دو جو اتنی ظاہر ہیں کہ ساری دنیا ان سے ایسے واقف ہے جیسے جہالت کی تاریکی میں بہترین اخلاق مہمان نوازوں کی آگ کے شعلوں جیسے ہیں جو تاریک ترین رات میں پہاڑوں کی چوٹیوں پر نشانی کیلئے ہوتے ہیں تاکہ وہاں ضرورت مند مسافر آ کر اپنے کھانے پینے کی ضرورتیں پوری کر سکیں۔



شعر (۸۹)

فَاللُّدُّ يَزْدَادُ حُسْنًا وَهُوَ مُنْتَضِمٌ
وَأَلَيْسَ يَنْقُصُ قَدْرًا غَيْرَ مُنْتَضِمٍ

(ترجمہ:) ”کیونکہ موتی ہار میں پرویا ہو تو وہ بہت خوبصورت لگتا ہے لیکن اگر نہ بھی پرویا ہو تو اس کی خوبصورتی میں کمی نہیں آتی۔“

جب پچھلے شعر کے لفظ ”دَعْنِي“ سے نکلنے والا یہ دعویٰ صرف دعویٰ تھا کہ مجھے چھوڑ دو اور اس کے ساتھ میں ان کی خوبیاں اور نشانیاں بتاتا ہوں، تم مجھ سے سوال نہ کرو، تو اب حضرت ناظم رحمہ اللہ اس دعویٰ کی دلیل دیتے اور اسے ثبات کرتے ہوئے فرماتے ہیں کہ ”فَالدَّرُ الخ“۔

تحقیق الفاظ

فاء تعلیل یعنی سبب بتانے کیلئے ہے تو یہاں ایک قیاس ترتیب دیا جا سکتا ہے اور وہ یوں کہ ”تمہارے لئے ضروری ہے کہ تم مجھے ان کی نشانیاں بتانے کیلئے چھوڑ دو کیونکہ ان کا حسن و بزرگی بیان کرنے کے دوران اسے چھوڑنا لازم ہے کیونکہ میں ان کا حسن اور نشانیاں بتا رہا ہوں۔“ اس کا نتیجہ یہ ہوگا کہ تمہیں مجھے ان کی نشانیاں بتانے کیلئے چھوڑ دینا چاہیے، یہاں کبریٰ ایک خیالی چیز ہے تو اسے ثابت کرنے کیلئے ناظم نے فرمایا: ”فَالدَّرُ“ یعنی میں کہتا ہوں کہ میں ان نشانیوں کو خوبصورت اور اچھے طریقے سے بیان کرتا ہوں کیونکہ جب ان کی وہ نشانیاں ان پر وئے ہوئے موتیوں جیسی ہیں جن کا حسن کم نہیں ہوتا تو پھر پر وئے نہ ہونے کی صورت میں بھی ان کا حسن کم نہیں ہوتا، میں ان نشانیوں کو پرورہا ہوں تو انہیں اچھے طریقے سے بیان کروں گا لیکن چونکہ پہلا قضیہ سچا ہے تو دوسرا بھی اسی طرح کا ہوگا۔

پھر یاد رہے کہ ”فالدّر“ مبتداء ہے ”دّر“ وہ موتی ہے جو اپنی پیلی سے نکالا جاتا ہے اور ”یزداد“ والا جملہ اس کی خبر ہے اور ”حسناً“ ”یزداد“ کے اندر والی نسبت سے تمیز ہے۔ ”وَهُوَ“ میں واو حالیہ ہے چنانچہ مبتداء اپنی خبر سے مل کر جملہ ہے اور یہ جملہ ”یزداد“ کے فاعل سے حال ہے۔

”منتظم“ صیغہ اسم فاعل ”نظم“ سے نکلا ہے جس کا معنی دھاگے میں پرویا موتی ہوتا ہے چنانچہ اس میں تجرید (پورا معنی لینے کی بجائے تھوڑا لیا) ہے جو واضح ہے۔

حاصل معنی یہ ہے کہ ان کی نشانیاں ان موتیوں کی طرح ہیں جن کا حسن پرودینے سے بڑھ جاتا ہے اور یونہی ان کے معجزے پر و کر شعروں میں بیان کرنے سے زیادہ خوبصورت لگتے ہیں کیونکہ نظم کرنا کلام کا گویا لباس ہوتا ہے تو جیسے محبوب لباس پہننے سے زیادہ خوبصورت لگتا ہے، یونہی کلام کو شعروں میں لانے سے اور زیادہ خوبصورت ہو جاتی ہے اور پھر شعر میں حکمت بھری ہوتی ہے جیسے حدیث میں آتا ہے اور یہ وجہ بھی ہے کہ نظم یاد کرنے میں آسان ہوتی ہے اور پھر اسے پڑھنے میں دل کو خوشی اور سرور ملتا ہے۔

”ولیس ینقص قدرًا الخ“ اس سے ایک وہم دور کر رہے ہیں جو کچھلی کلام سے پیدا ہوا کہ شاید شعر کے بغیر ان کے اوصاف بیان کرنے میں کوئی خوبصورتی نہیں ہوتی ہوگی، یہاں واو حالیہ ہے اور اس کی ضمیر اس ”دُرّ“ کی طرف لوٹتی ہے جس سے آیات مراد ہیں اور ”حسنًا“، ”ینقص“ کے فاعل سے تمیز ہے، معنی یوں ہے: حال یہ ہے کہ حضور ﷺ کا حسن ان آیات کو نظم میں لائے بغیر نہیں گھٹتا کیونکہ شرافت اور بزرگی اصل چیز میں ہوتی ہے تاہم نظم میں لانے سے اس کا حسن اور زیادہ بڑھ جاتا ہے اور نظم نہ بھی ہو تو اس کی اصل خوبصورتی ہمیشہ دکھائی دیتی رہتی ہے۔



شعر (۹۰)

فَمَا تَطَاوَلَ أَمَالُ الْمَدِيحِ إِلَى
مَا فِيهِ مِنْ كَرَمِ الْأَخْلَاقِ وَالشِّيمِ

(ترجمہ:) ”اس تعریف والے کے بارے میں اُمیدیں کتنی زیادہ ہیں، ذرا ان کے بہترین اخلاق اور پیاری پیاری عادتیں تو دیکھو۔“

جب پہلے شعر میں مدح نظم کی صورت میں ہے اور اس میں ناظم کا اپنے آپ کو ستھرا بنانا بنتا ہے اور یہ وہم پیدا ہوتا ہے کہ انہوں نے آپ کی تمام تعریفیں اور مدحیں ذکر کر دی ہیں حالانکہ وہ بے حد و بے شمار ہیں جو دو اتوں اور قلموں سے لکھی نہیں جاسکتیں تو حضرت ناظم رحمہ اللہ نے اس وہم کو دور کرتے ہوئے فرمایا: ”فما تطاول امال الخ“۔

تحقیق الفاظ

”مَا“ کا لفظ استفہامِ انکاری یا استفہامِ تعجبی کیلئے ہے۔

”تَطَاوَلَ“ کا معنی ہے: اس نے پتہ لگانے کیلئے گردن اونچی کی۔ ”امال“، ”اَمَل“ کی جمع ہے جس کا معنی اُمید لگانا ہے۔ ”المديح“ یا تو ”مادح“ (مدح کرنے والا) کے معنی میں ہے، معنی یہ ہوگا: بڑے تعجب کی بات ہے یا ”مادح“ کی اُمید حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کے اوصاف تک چلی گئی ہے یا یہ ”ممدوح“ کے معنی میں ہے چنانچہ ”امال“ کی اس ”مدیح“ کی اضافت مضاف حذف کر کے ہے اصل یوں ہے: ”امال اصحاب الممدوح“ یعنی جو مدح کرنے والے ہیں تو اب معنی یہ ہوگا کہ: تعجب کی بات ہے یا ممدوح کی مدح کرنے والے کی اُمیدوں کا حضور ﷺ کے اوصاف تک پہنچنا دور کی بات ہے۔

”الِی“ کا تعلق ”تطاول“ کے ساتھ ہے اور ”مَا“ موصولہ ہے ”فیه“ ظرف ہے مستقر ہے جو اس موصولہ کا صلہ ہے۔ ”مِنْ“ بیانیہ ہے اور ”کَرَمِ“ کی اخلاق کی طرف اضافت ان اضافتوں میں سے ہے جن میں صفت کی اضافت اپنے موصوف کی طرف ہوتی ہے یعنی بہترین اخلاق، اخلاق سے مراد وہ خصلتیں جو کام کرنے سے پیدا ہوتی ہیں۔

”الشِّيمِ“ (شین کی زیر اور یاء کی زبر) ”شِيمَة“ کی جمع ہے جس کا معنی خلق اور عادت ہے

اس سے مراد وہ ضروری اخلاق ہیں جو اللہ کی طرف سے عطاء ہوتے ہیں۔
 شعر کا نتیجہ یہ ہے کہ ناظم حضور ﷺ کے اخلاق بیان کرنے پر اپنی بے بسی دکھاتے ہیں، جس
 سے پتہ چلتا ہے کہ آپ کے اوصاف بے شمار ہیں۔



شعر (۹۱)

آيَاتُ حَقِّ مِّنَ الرَّحْمَنِ مُحَدَّثَةٌ
قَدِيمَةٌ صِفَةُ الْمُوصُوفِ بِالْقَدَمِ

(ترجمہ:) ”یہ اخلاق اور نشانیاں (معجزے) سچی ہیں اور یہ رحمن کی طرف سے اترنے میں حادث (نئی اتری) ہیں لیکن چونکہ ان کا تعلق ذات سے ہے تو اس تعلق کے لحاظ سے قدیم بھی ہیں۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب پہلے شعروں میں بتا دیا کہ وہ حضور ﷺ کی خوبیوں کی تعریف کرتے ہیں اور انہیں اچھی طرح نظم میں بیان کرتے ہیں اور سننے والے سے اُمید لگاتے ہیں کہ وہ ان کے حق میں بُرا بھلا کہنے سے رُک جائے تو ایسے کوئی کہہ سکتا ہے کہ ان آیات میں سے مشہور اور واضح قسم کی بتا تو دو اور وہ قرآن ہے جو قیامت تک باقی رہے گا تو ناظم نے اس قول پر توجہ دے کر اسے یوں بیان کرنا شروع کیا: ”آیات حق الخ“۔

تحقیق الفاظ

”آیات“ (رفع سے) مبتداء محذوف کی خبر ہے اصل یوں ہے: ”أَبْهَرُ الْمُعْجَزَاتِ آيَاتُ حَقِّ“ یا کوئی اور چیزیں یا یہ مبتداء ہے جس کی خبر محذوف ہے اصل یوں ہوگا: ”آيَاتُ حَقِّ مُنَزَّلَةٌ“ یا یہ منصوب ہے کہ ”آیات“ کا عطف بیان ہے جس کا بیان ”دعنی ووصفی آیات“ ہے یا مدح کی وجہ سے منصوب ہے۔

”آیات“، ”آیة“ کی جمع ہے یہ قرآن کا وہ حصہ ہوتا ہے جو آگے پیچھے سے الگ ہوتا ہے اور ”آیات“ کہنے کی وجہ یہ کہ یہ لانے والے کی سچائی بتاتی ہیں اور یہ بھی وجہ ہو سکتی ہے کہ ان سے پہلی آیت کا ان کے بعد والی آیت سے جوڑ نہیں ہوتا۔ اس کی ”حَقِّ“ کی طرف اضافت بیانہ ہے بشرطیکہ ”حق“ کا لفظ ”حَقِّ“ بمعنی ”ثَبَّتَ“ سے صفت مشبہ بنے اور اضافت لامیہ ہوگی اگر یہ مصدر ہو اور یہ بھی ممکن ہے کہ ”حَقِّ“ سے مراد واجب الوجود اللہ ہو جو بڑی شان والا ہے تو اس صورت میں یہ اللہ تعالیٰ کا مبارک نام ہو اور اس وقت یہ اضافت بھی لامیہ ہوگی اصل یوں ہوگا: ”وہ آیتیں جن کا تعلق صرف اللہ سے ہے تو اس صورت میں لفظ ”الرحمن“ کا ذکر اس نام سے تبرک کے طور پر ہوگا۔“

اگر تم کہو کہ ناظم رحمہ اللہ نے اللہ کے ”غفار“ ”رزاق“ ”علام“ اور ”ستار“ نام چھوڑ کر ”الرحمن“ نام مبارک کیوں لیا ہے؟ تو میں کہوں گا کہ قرآن اُتارنے میں پوری مخلوق کیلئے عام طور پر رحمت پائی جاتی ہے بلکہ کفار پر بھی ہے کہ ان کا عذاب دیر سے ہوگا جو واضح ہے۔

”مُحَدَّثَةٌ“ (رفع سے) خبر کے بعد دوسری خبر ہے اصل یوں ہے: ”آیات اللہ الحَقَّةِ مُنَزَّلَةٌ مُحَدَّثَةٌ“ (اللہ کی سچی آیتیں اُتاری ہوئی اور حادث) ”محدثہ“ اسم مفعول ہے ”أَحَدَتْ“ سے اور اس کی ضمیر ”آیات“ کی طرف جاتی ہے لیکن لفظوں کا لحاظ رکھ کر اور یہ وہی ہیں جو قرآن میں لکھی ہوئی اور زبانوں سے پڑھی جاتی ہیں اور سینوں میں محفوظ ہیں۔

”قدیمہ“ بھی خبر کے بعد خبر ہے یعنی عبارت ”الآیات محدثہ قدیمہ“ ہوگی۔ اس پر یہ اعتراض نہ کیا جائے کہ اس میں تو دو نقیضیں ہی جمع ہو گئی ہیں کیونکہ ہم کہیں گے کہ حادث تو قرآن کے لفظ ہیں جبکہ ان کا معنی قدیم ہے کیونکہ کلام کی دو قسمیں ہیں: کلام لفظی اور کلام نفسی جیسے اھطل شاعر نے کہا ہے:

إِنَّ الْكَلَامَ لَفِي الْفُؤَادِ وَإِنَّمَا
جُعِلَ اللِّسَانُ عَلَى الْفُؤَادِ دَلِيلًا

”اصل کلام تو دلوں میں ہے اور زبان کو دل کی باتیں بتانے کیلئے بنایا گیا ہے۔“
چنانچہ کلام لفظی حادث اور نفسی قدیم ہے جو صرف اللہ کی ذات مبارکہ میں ہے۔

کلام اللہ کے بارے میں سات مذہب

یاد رہے کہ اللہ کی کلام میں سات مذہب ہیں:

(۱) جو اشاعرہ کا ہے کہ اللہ تعالیٰ کی کلام دو طرح کی ہے لفظی جو قرآن کے ورقوں میں لکھی ہے یہ حادث ہے اور نفسی جو اللہ کی ذات کے ساتھ قائم ہے یہ قدیم ہے یہ نہ تو حرف ہیں اور نہ آواز بلکہ یہ صرف معنی ہیں ہاں ان کے مذہب میں اس معنی کو سنا جاسکتا ہے جو کلام نفسی کہلاتا ہے۔

(۲) ابو منصور ماتری کا ہے یہ بھی دو قسم بتاتے ہیں ایک لفظی جو قرآنوں میں لکھا ہوا ہے اور حادث ہے اور دوسری نفسی جو ذات الہیہ سے قائم اور قدیم ہے نہ حرف ہے اور نہ آواز بلکہ صرف معنی ہے۔ پہلے اور اس مذہب میں صرف یہ فرق ہے کہ اس میں کلام نفسی کے سنے جانے کو بالکل جائز نہیں سمجھتے بلکہ جو سنا جاتا ہے وہ کلام لفظی ہے۔ بدایہ میں یونہی لکھا ملتا ہے۔

(۳) یہ کچھ آخری علماء کا ہے، یہ صاحبِ مواقف اور ان کے پیروکاروں کا ہے، وہ یہ کہ کلامِ الہی دو قسم کی ہے، لفظی جو مصاحف میں لکھی اور دلوں میں محفوظ ہے، یہ حادث ہے اور کلامِ نفسی جو قدیم ہے، اس سے مراد لفظ اور معنی ہیں لیکن اس میں ترتیب نہیں (کہ پہلے لفظ ہیں یا معنی)۔

(۴) جلالِ دوّانی کا ہے، وہ بھی دو ہی قسمیں بتاتے ہیں، لفظی جو مصاحف اور دلوں کے ساتھ تعلق رکھتی ہے، یہ حادث ہے اور نفسی جو اللہ کے ساتھ قائم ہے، قدیم ہے، اس سے مراد لفظ اور معنی دونوں ہیں، ہاں اس میں علم کی ترتیب ہوتی ہے۔

(۵) حنبلیوں کا ہے اور وہ یہ کہ اللہ تعالیٰ کی کلام درحقیقت ایک ہی ہے جو حرفوں اور آواز سے مرکب ہے، قدیم ہے بلکہ کچھ تو اتنی زیادتی کرتے ہیں کہ قرآنِ جلد اور غلاف کو بھی قدیم بناتے ہیں اور اس طرح وہ کلامِ نفسی کا انکار ہی کر دیتے ہیں۔

(۶) معتزلہ کا ہے جو کہتے ہیں کہ اس کی کلام واحد اور اکیلی ہے جو حادث حرفوں اور آوازوں سے مرکب ہے لیکن یہ اللہ کے ساتھ قائم نہیں بلکہ لوحِ محفوظ، جبریل کے دل، نبی اور حضرت موسیٰ علیہ السلام کے درخت جیسی دوسری چیزوں سے قائم ہے۔

(۷) گرامیہ کا ہے، وہ کہتے ہیں کہ یہ ایک ہی کلام ہے جو حرفوں اور آوازوں سے مرکب اور حادث ہے لیکن اللہ کے ساتھ قائم ہے۔

اس سے ان میں فرق کا یہ پتہ چلا کہ تین مذہب کلامِ نفسی کا انکار کرتے ہیں۔

زیادہ تفصیل بدایہ تمہید فی التوحید، بحر الکلام، ابانہ، کفایہ اور احکام وغیرہ کے مصنف حضرات کے ہاں ملتی ہے چنانچہ حضرت امام بوسیری رحمہ اللہ کے فرمان ”مُحَدَّثَةٌ“ میں حنبلیوں کا ردّ ہے ”قَدِيمَةٌ“ میں گرامیہ کا ردّ ہے اور ”قَدِيمَةٌ“ کے ساتھ ”صِفَةُ الْمَوْصُوفِ بِالْقَدَمِ“ ملا لیں تو یہ معتزلہ کا ردّ ہے جو معلوم ہو رہا ہے چنانچہ ناظم کا قول ”صِفَةُ الْمَوْصُوفِ“ خبر کے بعد خبر ہے اور یہ معنی کے لحاظ سے آیات یعنی ان کے معانی کے قدیم ہونے کا سبب ہے تو یہاں ایک قیاس ترتیب دیا جاسکتا ہے اور وہ یوں کہ آیات یعنی ان کے معنی قدیم ہیں کیونکہ یہ موصوف بالقدم کی صفت ہے اور جو ایسی شان رکھتی ہو تو وہ قدیم ہوگی اور نتیجہ واضح ہے اور تمہیں یہ وہم کرنے کی کوئی ضرورت نہیں کہ جو اللہ تعالیٰ کی صفت بنتی ہے وہ حادث نہیں ہو سکتی کیونکہ یہ بات اس مشہور بات کے خلاف ہے جو اشعری اور ابو منصور کے درمیان ہے۔

شعر (۹۲)

لَمْ تَقْتَرِنِ مَبْزَمَانٍ وَهَى تُخْبِرُنَا

عَنِ الْمَعَادِ وَعَنْ عَادٍ وَعَنْ إِرَمٍ

(ترجمہ:) ”ان آیتوں کا کسی زمانے اور وقت سے کوئی تعلق نہیں، ہاں یہ آخرت، قومِ عاد

اور ارم کے قبیلہ کے بارے میں ضرور بتاتی ہیں۔“

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے جب خود آیتوں کو بیان فرمادیا تو اب ان آیتوں کے معجزے اور

خوبیاں بتاتے ہوئے فرماتے ہیں: ”لم تقترن بزمان الخ“ اور اس کے ساتھ دونوں میں پوری

مناسبت کا بیان کرتے ہیں کیونکہ انہوں نے اپنے قول ”لم تقترن“ کو آیات یعنی ان کے معنوں کو

قدیم ہونے کا سبب بنایا ہے یا موصوف بالقدم کی صفت بننے کا سبب بنایا ہے جو ظاہر ہے چنانچہ یہاں

ایک قیاس ترتیب دیا جا سکتا ہے اور وہ یوں کہ آیات قدیم ہیں یا یوں کہا جائے گا کہ آیات اس کی

صفت ہیں جو موصوف بالقدم ہیں کیونکہ ان کا کسی زمانے سے تعلق نہیں اور جو ایسی چیز ہو تو پھر یا تو وہ

قدیم ہے یا اس کی صفت ہے جس میں قدیم ہونے کی خوبی ہے۔ اس سے واضح نتیجہ نکلے گا۔

”لم تقترن“، ”ایات“ کے لفظ کی صفت کے بعد صفت ہے یا ”قدیمۃ“ کے فاعل سے حال

ہے یہ لفظ ”من المقارنۃ“ سے ہے۔

”بزمان“، ”لم تقترن“ سے تعلق رکھتا ہے۔

متکلمین اور حکماء کے ہاں زمان کیا ہے؟

”زمان“ متکلمین کے نزدیک ایک نئی معلوم چیز کے ذریعے دوسری نئی معلوم چیز کا اندازہ ہوتا

ہے جو وہم میں ہو جبکہ حکماء فلکِ اعظم کی حرکت کے اندازے کو کہتے ہیں۔

یاد رہے کہ جو آیتیں کسی بھی زمانے سے تعلق نہیں رکھتیں تو ان آیات کے معنی ان کے الفاظ کے

ہوتے ہیں کیونکہ ان کے الفاظ حادث ہوتے ہیں جو کسی زمانے کے ساتھ ملے ہوتے ہیں بخلاف ان

آیتوں کے معنوں کے جو کلامِ نفسی ہیں کیونکہ یہ اللہ تعالیٰ کی صفت ہوتے ہیں اور اللہ تعالیٰ کے ساتھ

زمانہ ہوتا ہی نہیں جیسے اپنے مقام پر تحقیق ہو چکی ہے۔

”وہی“ میں واوِ حالیہ ہے اور یہ مبتداء ہے جو آیات کی طرف لوٹتی ہے ”تخبرنا“ اس کی خبر

ہے اور جملہ مبتداء اور خبر اس دلیل کی طرف اشارہ ہے کہ آیات بڑے واضح معجزات ہیں۔

”عن المعاد“ کا تعلق ”تخبر“ سے ہے ”المعاد“ مصدر میمی یا اسم مکان ہے اور یہاں اس سے مراد فناء ہونے کے بعد واپس آنا ہے اور اس کی قرآن میں مثالیں بہت ملتی ہیں جیسے فرمان الہی ہے: ”أَوَلَمْ يَرَ الْإِنْسَانُ أَنَّا خَلَقْنَاهُ مِنْ نُطْفَةٍ فَإِذَا هُوَ خَصِيمٌ مُبِينٌ“ (سورۃ یس، آیت: ۷۷) وَضَرَبَ لَنَا مَثَلًا وَنَسِيَ خَلْقَهُ قَالَ مَنْ يُحْيِي الْعِظَامَ وَهِيَ رَمِيمٌ“ (سورۃ یس، آیت: ۷۸) قُلْ يُحْيِيهَا قُلْ يُحْيِيهَا الَّذِي أَنْشَأَهَا أَوَّلَ مَرَّةٍ“ (سورۃ یس، آیت: ۷۹)۔

مفسرین بتاتے ہیں کہ یہ آیت اُبی بن خلف کے بارے میں نازل ہوئی جو نبی کریم ﷺ سے جھگڑا تھا، وہ آپ کے پاس ایک بوسیدہ اور پرانی ہڈی لے کر آیا اور اسے اپنے ہاتھ سے ریزہ ریزہ کر دیا اور کہنے لگا کہ اے محمد! کیا اللہ تعالیٰ اسے بوسیدہ ہونے کے بعد زندہ کر سکتا ہے؟ فرمایا: ہاں! وہ تجھے دوبارہ اٹھا کر جہنم میں داخل کر دے گا۔

اسی طرح یہ قول بھی ہے: ”ثُمَّ إِنَّكُمْ يَوْمَ الْقِيَامَةِ تُبْعَثُونَ“ (سورۃ المؤمن، آیت: ۱۶) اور یہ فرمان بھی ہے: ”أَيَحْسَبُ الْإِنْسَانُ أَنْ نَجْمَعَ عِظَامَهُ بَلَىٰ قَادِرِينَ عَلَىٰ أَنْ نُسَوِّيَ بَنَانَهُ“ (سورۃ القيامة، آیت: ۳-۴) اور یہ قول بھی ہے: ”أَفَلَا يَعْلَمُ إِذَا بُعْثَرَا فِي الْقُبُورِ“ (سورۃ العاديات، آیت: ۹) وغیرہ۔

”وعن عاد“ کا عطف ”المعاد“ پر ہے زبردینے والاحرف نظم کی خاطر دوبارہ لوٹا دیا، اصل عبارت یوں ہے: ”تخبر الایات ایضا عن قصة عاد“۔

”عاد“ یمن کی طرف ایک عرب قبیلہ ہے جیسے اللہ کے فرمان سورۃ اعراف میں ہے: ”وَالَّذِي نَزَّلْنَا فِي الْقُرْآنِ مَعَهُ الْقُرْآنُ“ اور ایسے ہی اور سورتوں میں ہے۔

قصہ قوم عاد

قوم عاد کا قصہ یہ ہے کہ یہ عمان اور حضرموت کے درمیان پھیلے ہوئے تھے ان کے کچھ بت تھے جنہیں وہ پوجا کرتے تھے وہ صداء، صمود اور ہباء تھے چنانچہ اللہ تعالیٰ نے ان کی طرف حضرت ہود علیہ السلام کو نبی بنا کر بھیجا۔ وہ ان میں درمیانے بہتر اور نسب کے لحاظ سے افضل تھے انہوں نے انہیں جھٹلا دیا اور سرکشی میں آگے نکل گئے اللہ تعالیٰ نے تین سال تک ان پر بارش نہ کی تو وہ بھوکے مرنے لگے اور تنگ آ گئے۔

اس دور میں لوگوں کا طریقہ یہ تھا کہ کوئی بلاء اُترتی تو وہ کافر و مسلمان بیت اللہ کا رخ کرتے اور اللہ سے خوشحالی کی دعا کرتے چنانچہ قومِ عاد نے اپنے بڑوں میں سے ستر آدمی مکہ کی طرف بھیجے وہ مکہ میں داخل ہوئے ان کا رئیس قیل بن عتر تھا چنانچہ اس نے یوں دعا کی: ”اے اللہ! عاد پر ویسے ہی بارش کر جیسے کیا کرتا تھا۔ اسی دوران اللہ تعالیٰ نے تین بادل اُتارے: سفید، سرخ اور سیاہ پھر آسمان سے اسے آواز دی کہ اے قیل! اپنے اور اپنی قوم کیلئے جو نسا چاہو پسند کر لو۔ اس نے کہا کہ میں سیاہ بادل پسند کرتا ہوں کیونکہ اس میں سب سے زیادہ پانی ہے۔ اس پر وہ بادل ان کے شہر پہنچا اور انہیں ڈھانپ لیا وہ اس پر بہت خوش ہوئے اور کہا کہ یہ وہ بادل ہے جو ہم پر بارش کرے گا لیکن اس میں سے تند اور شدید ہوا چلی جس نے انہیں ہلاک کر دیا جبکہ حضرت ہود علیہ السلام اور ان کے ساتھ والے بچ گئے۔

”عن ارم“ کا عطف قریبی یا دور والے لفظ پر ہے اور ”ارم“ سے مراد ”ارم ذات العماد“ ہے یہ دوسری عاد قوم تھی کیونکہ قرآن سورہ فجر میں ان کا واقعہ بھی بتاتا ہے: ”اَلَمْ تَرَ كَيْفَ فَعَلَ رَبُّكَ بِعَادِ اِرَمَ ذَاتِ الْعِمَادِ الَّتِي لَمْ يُخْلَقْ مِثْلُهَا فِي الْبِلَادِ“ (سورہ الفجر آیت: ۸۲۶)۔

عاد کی اولاد

علامہ نیشاپوری نے قومِ عاد کا مختصر واقعہ اسی آیت کی تفسیر میں بتایا ہے کہ عاد کے دو بیٹے تھے شہداد اور شدید جو ساری دنیا کے بادشاہ تھے پھر شدید تو مر گیا مگر شہداد باقی رہ گیا، اس وقت اس کی عمر نو سو سال کی ہو چکی تھی لیکن پھر بھی وہ کتابیں پڑھنے کا بہت شوقین تھا، ایک دن اس نے جنت کے بارے پڑھا تو اس کے دل میں بھی ایسی ہی جنت بنانے کا ولولہ اور شوق پیدا ہو گیا چنانچہ اس نے اس کام کیلئے اپنے لشکر کے کچھ آدمی بھیجے جو اس بات کا پتہ لگا سکیں کہ جنگل میں اچھی آب و ہوا والا کوئی ایسا قطعہ زمین تلاش کریں جس میں پتھر نہ ہوں مگر پانی اور درخت عام ہوں۔ وہ ساری زمین پر پھر گئے اور آخر کار انہیں زمین کا اس طرح کا ٹکڑا مل ہی گیا، یہ عدن میں تھا چنانچہ انہوں نے بادشاہ کو بتا دیا۔ اس نے اپنے وزیروں سے کہا کہ کئی قسم کے جواہرات سونا اور چاندی وغیرہ اکٹھا کرو۔ انہوں نے یہ سب کچھ بے حساب جمع کر دیا چنانچہ شہداد نے یہ سب کچھ ایک لاکھ معماروں اور کاریگروں کے ساتھ اس سرزمین میں بھیجا چنانچہ وہ وہاں پہنچے اور اس جنت کی بنیاد میں سونے اور چاندی کی ایک ایک اینٹ لگاتے ہوئے بنیاد رکھ دی اور جب دیواریں بنا چکے تو اس میں سبز زبرجد اور سرخ یا قوت کے

ستون کھڑے کر دیئے پھر اس پر چاندی سونے کے بہت سے محل اور ایک دوسرے کے اوپر بالا خانے تیار کرائے اور ایسی بہت سی بیٹھکیں بنائیں کہ جن کے دروازے ایک دوسرے کے سامنے تھے پھر اس کے قلعے میں بادشاہ کیلئے سونے کا محل تیار کیا۔

بادشاہ کے ایک ہزار وزیر تھے جن میں سے ہر ایک کیلئے قلعے کے گرداگرد ایک ایک محل بنا دیا گیا پھر اس میں اس نے چاندی سے نہریں تیار کرائیں جن میں دودھ، شراب اور شہد بہتا تھا۔ آخر کار جب تین سو سال لگا کر فارغ ہو گئے تو انہوں نے بادشاہ کو اطلاع کر دی کہ وہ تیار کر چکے ہیں چنانچہ وہ اپنے وزیروں، پیروکاروں اور مددگاروں کو لے کر اس کی طرف روانہ ہوا اور جب یہ سب اس جنت سے ایک دن رات کے سفر کی مسافت پر پہنچے تو اللہ تعالیٰ نے سخت آندھی بھیجی جس نے ان سب کو تباہ و برباد کر دیا اور ان میں سے ایک بھی نہ بچا۔ کہتے ہیں کہ اس جنت میں صرف ایک مسلمان ہی داخل ہو سکا تھا۔



شعر (۹۳)

دَامَتْ لَدَيْنَا فَفَاقَتْ كُلَّ مُعْجَزَةٍ
مِّنَ النَّبِيِّينَ إِذْ جَاءَتْ وَلَمْ تَدْمِ

(ترجمہ:) ”یہ آیتیں ہمارے پاس مسلسل رہیں گی، یہ سارے نبیوں کے معجزوں سے اس بناء پر بڑھ کر ہیں کہ وہ انہیں ملے اور ختم ہوتے چلے گئے۔“
حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ اب یہ بیان کر رہے ہیں کہ آیتوں کے یہ معجزے باقی نبیوں اور رسولوں کے معجزوں سے بڑھ کر ہیں چنانچہ فرمایا: ”دامت لدینا الخ“۔

تحقیق الفاظ

”دامت“ کی ضمیر ”ایات“ کی طرف جاتی ہے اور اس کے ساتھ ”لدینا“ صرف اس لئے لگایا کہ وہ آیات شامل نہ ہو سکیں جو اللہ کے ہاں موجود ہیں اور اسی کے ساتھ قائم ہیں کیونکہ وہ ختم نہ ہونے والے دور تک باقی رہیں گی بلکہ ان کے بارے میں یہ بھی نہیں کہا جاسکتا کہ وہ فلاں زمانہ میں ہوں گی۔

”ففاقت“ میں فاء نتیجہ بتانے کی ہے اور اس سے پہلا حصہ اس کا سبب ہے چنانچہ یہاں ایک قیاس ترتیب دیا جاسکتا ہے جسے ہم یوں بیان کر سکتے ہیں کہ ”قرآن ہر معجزہ سے بڑھ کر ہے کیونکہ قرآن آیا اور ہمیشہ رہے گا اور دوسرے نبیوں کے معجزے آ کر ہمیشہ نہ رہ سکے اور جو ہمیشہ رہے گا وہ اس آنے والے معجزہ سے بڑھ کر ہوگا جو آیا اور ہمیشہ نہ رہ سکا۔ اس کا نتیجہ یہ ہوگا کہ قرآن ہر معجزہ سے بڑھ کر ہے۔“

”فاقت“ کا معنی ہے: اوپر ہونا اور بلند ہونا۔ ”کل معجزة“ (نصب سے) ”فاقت“ کا مفعول ہے۔

معجزہ کیا ہوتا ہے؟

”معجزہ“ وہ کام جو عام عادت کے خلاف ہو اور جب منکر لوگ انکار کر رہے ہوں تو وہ ایسے شخص کے ہاتھوں سے ظاہر ہو جو نبوت کا دعویٰ کر چکا ہو اور وہ ایسا ہو کہ کوئی بھی اس کے مقابلے کا کام نہ کر سکے۔

عادت کے خلاف کام آٹھ ہوتے ہیں

یاد رکھو کہ جیسے کام ہمیشہ ہوتے ہیں ان کے خلاف ہونے والے کام آٹھ قسم کے ہیں کیونکہ ایسے کام یا تو مؤمن کرے گا یا کافر پھر پہلا یا تو نبی سے ہوگا اور اس کے نبی بننے سے پہلے ہوگا تو وہ ”ارہاص“ کہلائے گا جیسے حضور ﷺ کی پیدائش کے وقت ہوئے یا نبی بننے کے بعد ہوگا جو ”معجزہ“ کہلائے گا یا پھر ولی سے ہوگا تو وہ ”کرامت“ کہلائے گا یا کسی نیک شخص سے ہوگا تو یہ خفیہ اور ”معنوی“ ہوگا یا کسی گنہگار سے ہوگا جو ”استدراج“ کہلائے گا اور دوسرا (کافر سے) یا تو پڑھے پڑھانے سے ہوگا جو ”جادو“ کہلائے گا یا اس میں پڑھنے پڑھانے کا دخل نہ ہوگا۔ اب اگر وہ اس کے مطابق ہے جو وہ کرنا چاہتا ہے تو اسے ”ابتلاء“ کہیں گے جیسے فرعون سے ہوا اور دجال کرے گا اور اگر اس کی مرضی کے خلاف ہوگا تو یہ ”اہانۃ“ کہلائے گا جیسے مسیلمہ کذاب سے ہوا کہ اس نے کسی اندھے کی آنکھ ٹھیک کرنے کی دعاء کی تو اس کی اپنی صحیح آنکھ بھی نہ رہی۔

”النَّبیین“ کا معنی عام ہے جس میں رسول بھی شامل ہو جاتے ہیں جیسے حضرت ناظم رحمہ اللہ کے انداز سے سمجھ میں آ رہا ہے۔

اگر تم کہو کہ اگر نبیوں میں تو ہمارے نبی کریم ﷺ بھی داخل ہو جاتے ہیں تو یوں ان کا اپنا معجزہ ان سے بڑھ جائے گا اور یہ غلط ہوگا تو میں کہوں گا کہ نبیوں سے مراد ہمارے نبی کریم ﷺ کے علاوہ دوسرے انبیاء علیہم السلام ہیں کیونکہ آپ کا ان میں شامل نہ ہونا عقل ہی مانتی ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے اس فرمان میں ہے: ”إِنَّ اللَّهَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ“ (سورۃ البقرہ آیت: ۲۰) (کہ اللہ ہر پسندیدہ چیز پر قدرت رکھتا ہے)۔

”اذ“ سبب بتانے کیلئے ہے۔ ”لَمْ تَدْمُ“ کا عطف ”جاءت“ پر ہے یعنی دوسرے انبیاء علیہم السلام کے معجزے ان کے وصال ہی کے ساتھ پورے اور ختم ہو گئے جبکہ ہمارے نبی ﷺ کے معجزے قیامت تک باقی رہیں گے۔

یوں نہ کہا جائے: ہم یہ بات نہیں مانتے کہ سارے نبیوں کے معجزے آ کر ختم ہو گئے اور مسلسل نہ رہے یہ کیسے ہو سکتا ہے دیکھو انجیل، نصاریٰ کے پاس ویسے ہی باقی ہے جیسے توراہ یہودی لوگوں کے پاس موجود ہے کیونکہ ہم کہیں گے کہ ہمیشہ ہونے کا مطلب یہ ہے کہ تبدیلی کے بغیر ہمیشہ رہیں ان میں لفظ نہ بدلیں اور نہ ہی کوئی حرف ختم ہو اور ان دونوں گروہوں نے تو ان دونوں ہی کو بدل کر رکھ دیا

اور اسی تبدیلی کی وجہ سے وہ کافر ہو گئے اور اگر ان کا باقی ہونا مان بھی لیا جائے تو مطلب یہ ہے کہ ان کے حکم یعنی شریعت مسلسل باقی رہی جبکہ ہماری کتاب کی وجہ سے سارے نبیوں کی کتابیں منسوخ ہو چکی ہیں اور جو شریعت سب کے پاس اب تک باقی ہے، وہ صرف قرآن ہے جس کے بغیر کسی نبی پر اتری کتاب باقی نہیں۔



شعر (۹۴)

مُحَكَّمَاتٌ فَمَا يُبْقِينَ مِنْ شُبَّهِ
لِذِي شِقَاقٍ وَلَا يَبْغِينَ مِنْ حَكْمٍ

(ترجمہ:) ”وہ آیتیں ایسے فیصلے کرنے والی ہیں کہ جن جھگڑنے والوں کے دلوں میں کوئی شبہ ہو تو یہ رہنے نہیں دیتیں اور نہ ہی انہیں فیصلہ کرنے میں کسی اور آیت کی ضرورت ہوتی ہے۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب ان آیتوں کے قیامت تک بلکہ اگلے نہ ختم ہونے والے وقت تک رہنا بیان کر دیا تو اب یہ بتا رہے ہیں کہ ان میں دیئے گئے حکم بھی کسی تبدیلی اور رد و بدل کے بغیر باقی رہیں گے چنانچہ فرمایا: ”مُحَكَّمَاتُ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

محکمات کا یہ لفظ مرفوع ہے اور ”ایات“ کی خبر کے بعد دوسری خبر ہے یا صفت کے بعد اس کی دوسری صفت ہے۔ ”محکمات“، ”محکم“ کی جمع ہے لغت میں اس کا معنی ایسا ٹھوس اور مضبوط کام جو خراب نہ ہو سکے جبکہ علم اصول کے علماء کے نزدیک یہ وہ آیتیں ہیں جن میں پایا جانے والا مقصد بالکل صاف معلوم ہو جائے وہ نہ تو روکا جاسکے اور نہ ہی اس میں کوئی تبدیلی ہو سکے۔ اس معنی کے لحاظ سے اس لفظ پر شد صرف شعر کو وزن میں پورا کرنے کیلئے ہے۔

اگر تم کہو کہ ”محکمات“ سے مراد آیات کیسے لی جاسکتی ہیں کیونکہ ان سے تو پتہ چلے گا کہ ساری کی ساری آیتیں ”محکم“ ہیں جبکہ علم اصول کے عالموں نے بتایا ہے کہ قرآن کا کچھ حصہ محکم ہے کچھ ”مفسر“ کہلاتا ہے کچھ ”نص“ کہلاتا ہے کچھ ”ظاہر“ کچھ ”نہی“ کچھ ”مشکل“ کچھ ”مُجْمَل“ اور کچھ ”مُتَشَابِه“ کہلاتا ہے؟ تو میں کہوں گا کہ یہ معنی لینا لغت کے معنی کا لحاظ کرنے پر ہے جبکہ عالموں کی بولی یعنی اصطلاح میں یوں نہیں ہے اور پھر یہ بھی ہو سکتا ہے کہ ”محکمات“ کی ضمیر میں یوں استخدا م بنے کہ یہ ضمیر ”ایات“ کی طرف لوٹے اور ان میں سے صرف کچھ مراد ہوں تو اسے سوچ لو۔

احکام قرآن کی دس قسمیں

حضرت علی کرم اللہ وجہہ بتاتے ہیں کہ حضور ﷺ نے فرمایا: ”قرآن کریم دس طریقوں پر اُترا ہے چنانچہ ”بشیر“ ہے ”نذیر“ ہے ”ناسخ“ ہے ”منسوخ“ ہے ”مُحکَم“ ہے ”مُتَشَابِه“ ہے ”مَوْعِظَتْ“ ہے ”مَثَل“ ہے ”حلال“ ہے اور ”حرام“ ہے چنانچہ جو ان کی بشارت یعنی خوشخبری پر خوش ہو اس کے ڈرانے پر ڈرے اس کی ناسخ آیتوں پر عمل کرنے، منسوخ ہوئی آیتوں پر ایمان رکھے، محکم کو کام میں لائے اور متشابہ کو عالموں سے جا کر پوچھے، اس کی نصیحتوں کا اثر قبول کرے، اس کی کہاوتوں پر اعتبار کرے، حلال کو حلال جانے اور حرام کو حرام سمجھے تو ایسے لوگ یقیناً سچے ہوں گے، انہیں نبیوں، شہیدوں اور صالحین کے ساتھ رہنے کا بڑا بلند مرتبہ ملے گا اور ان کے ساتھ ہونا بہت اچھا گنا جائے گا، وہ میرا اور مجھ سے نبیوں کا وارث بنے گا، وہ ہر وقت اللہ کی حفاظت میں ہوگا اور جہاں جب بھی قرآن پڑھے گا تو اسے اللہ کی رحمت اپنے گھیرے میں لے لے گی اور پرسکون ہو جائے گا اور وہ محشر میں میرے گروہ کے ساتھ ہوگا اور میرے جھنڈے کے نیچے ہوگا۔“

(نوادر الاصول فی احادیث الرسول الرتل الرابع والاربعون والماتان فی بیان اقسام القرآن، جلد ۳ صفحہ ۲۰۳)

”فما یقین“ میں فاء تفریع (پہلی بات کی بنیاد پر دوسری بات کرنا) کیلئے ہے یعنی جب آیتیں فیصلے کرنے والی ہیں تو شبہ نہیں رہنے دیتیں، الخ۔

”یُیقِن“ جمع مؤنث کا صیغہ ہے ”اِبْقَاء“ سے جس کا معنی ہمیشہ کا کام ہے۔ ”مِنْ“ کا حرف زائد ہے ”شُبَّهِ“، ”شُبَّهَةٌ“ کی جمع ہے ”لذی“ طرف مستقر ہے اور ”شُبَّه“ کی صفت ہے ”شقاق“ کا معنی خلاف کرنا ہے اور خلاف والوں سے مراد وہ ہیں جو ہماری شریعت کے خلاف ہیں۔

”لا یبغین“ کا عطف ”یقین“ پر ہے اور ”یبغین“ (یاء پر زبر) ”یقین“ (یاء پر پیش) ہی کی طرح ہے ”یبغین“، ”بَغَى“ سے ہے جس کا معنی طلب و تلاش کرنا ہے۔ ”مِنْ“ زائد ہے ”حَکَم“ (دونوں زبروں سے) کا معنی فیصلہ کرنے والا یعنی قرآن کو کسی اور کے فیصلے کی ضرورت نہیں جو اس سے بڑھ سکے جبکہ حدیث ایسے نہیں کیونکہ اسے کتاب ہی کی طرف آنا ہوتا ہے، یونہی اجماع اور قیاس کو بھی آنا پڑتا ہے کیونکہ یہ دونوں قرآن و حدیث کے محتاج ہیں۔

”حکم“ کو حاء کی زبر اور زیر سے پڑھا گیا ہے کہ یہ ”حِکْمَةٌ“ کی جمع ہے تو معنی یہ ہوگا کہ قرآن کو اپنے قانونوں کی وضاحت کیلئے کسی فیصلہ کرنے والے کی ضرورت نہیں بلکہ سارے حکم اور

قاعدے اسی سے نکلے ہیں چنانچہ قرآن جیسی اور کوئی ایسی چیز نہیں جس میں قرآن کی طرح چیزیں سمائی ہوں۔

اس شعر میں اللہ تعالیٰ کے اس فرمان کی طرف تلمیح اور اشارہ ہے: ”هُوَ الَّذِي أَنْزَلَ الْكِتَابَ مِنْهُ آيَاتٌ مُحْكَمَاتٌ هُنَّ أُمُّ الْكِتَابِ الْآيَةَ“ (سورۃ آل عمران، آیت: ۷) جسے علم بدیع والے جانتے ہیں۔



شعر (۹۵)

مَا حُورِبْتُ قَطُّ إِلَّا عَادَ مِنْ حَرْبٍ
أَعْدَى الْأَعَادِي إِلَيْهَا مُلْقَى السَّلْمِ

(ترجمہ:) ”ان آیتوں کے مقابلے میں جب بھی کوئی بڑے سے بڑا مخالف آیا ہے تو اپنی مخالفت چھوڑ کر ان کے سامنے اپنی ہار ہی مانی ہے۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے پچھلے شعر میں قرآن کا مقابلہ کرنے والے امرؤ القیس جیسے فصیح و بلیغ شاعروں کے ہوتے ہوئے بھی ان آیتوں پر شبہ کرنے والوں کا شبہ یوں دور کر دیا تو وہم تھا کہ کیا آیتوں نے یہ کام کیا ہے؟ تو اسے دور کرتے ہوئے فرمایا: ”مَا حُورِبْتُ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”مَا“ نفی کا معنی دیتا ہے۔ ”حوربت“ ماضی مجہول ہے ”مُحَارَبَةٌ“ سے جس کا استعارہ کے طور پر معنی مقابلہ کرنا ہے اور وہ یوں کہ ”مُعَارَضَه“ کو ”مُحَارَبَه“ سے اس بناء پر تشبیہ دی گئی کہ یہ مخالف اور اس کے نقصان کو دور کرتے اور اس کیلئے تیاری کرتے ہیں پھر ”مُحَارَبَه“ کو ”مُعَارَضَه“ کے مفہوم کیلئے استعارہ کیا گیا پھر ”مُعَارَضَه“ سے ”عورضت“ اور ”مُحَارَبَه“ سے ”حوربت“ نکالے گئے چنانچہ ”حوربت“ کو ذکر کر کے ”عورضت“ مراد لیا گیا۔

قرآن کے ”مُعَارَضَه“ سے مراد یہ ہے کہ اس کے مقابلے میں بلاغت و فصاحت والا کلام ہی

لایا جائے۔

”قَطُّ“ ماضی کیلئے ظرفِ زماں ہے جس میں استغراق (سب کو اپنے اندر لینا) کا معنی پایا جاتا ہے اور صرف نفی آنے کے موقع پر ہی استعمال ہوتا ہے۔

”إِلَّا“ استثناء (کچھ چیزوں کو نکال دینا) کیلئے ہے اور مستثنیٰ منہ (جنہیں نکالا گیا) کا یہاں ذکر نہیں ہے اصل یوں ہے: ”مخالفوں کے لوٹنے کے حال کو چھوڑ کر کسی بھی حال میں“۔ ”عَادَ“ یا تو ”عَوْدَ“ سے ہے جس کا معنی لوٹنا ہے یا ”صَارَ اور انتقل“ کے معنی میں ہے (ہو گیا اور منتقل ہوا)۔

”مِنْ حَرْبٍ“ کا تعلق ”عَادَ“ سے ہے اور یہ ”مِنْ“ کسی چیز کے انتہاء کی ابتداء بتاتا ہے اور

”حَرْبٍ“ (دوڑ بڑوں کے ساتھ) کا معنی ناراضگی اور غصہ ہے۔ یہ بھی کہتے ہیں کہ عرب اس ”حَرْبٍ“

ہی کو ”حَرَب“ بھی پڑھ لیتے ہیں تو یہ آپس میں مقابلہ کا معنی دے گا اور ”محاربہ“ کا معنی باہم مقابلہ کرنا ہے۔

”اعدای“ رفع سے ہے جو لفظ پر لکھا نہیں جا سکتا، یہ ”عَادَ“ کا فاعل ہے اور یہ ”عداوة“ سے اسم تفضیل ہے۔ ”اعادی“، ”اعداء“ کی جمع ہے جو ”عدو“ کی جمع ہے ”اعدای“ کی اس کی طرف اضافت مبالغہ کیلئے ہے تو یہ اشارہ بنے گا کہ قرآن کا مقابلہ وہی کرنا چاہے گا جس میں سخت دشمنی اور ناراضگی ہو۔

”الیہا“، ”عَادَ“ سے متعلق ہے، ضمیر ”ایات“ کی طرف لوٹتی ہے، یہاں مضاف حذف ہوا ہے، اصل یوں ہے: ”فِي حَقِّئِهَا“ (ان آیتوں کے سچ ہونے میں)۔

”مُلْقِيَ السَّلَامِ“ (نصب سے) ”عاد“ کے فاعل سے حال ہے جس کا معنی ”لوٹا“ ہے یا ”عَادَ“ کا معنی ”صَارَ“ کریں تو یہ اس کی خبر بننے پر منصوب ہے۔ ”مُلْقِيَ“ اسم فاعل ہے ”الْقَى“ سے جس کا معنی ہے: ”آیتوں سے سیکھتے اور ان کی طرف توجہ کرتے ہوئے“۔

”بِالسَّلَامِ“ یعنی سلامتی کے ساتھ۔ اب معنی یہ ہو گا کہ: ”جب بھی ان آیتوں کا مقابلہ فصیح لوگوں کی کلام نے کیا اور جب بھی ان کا مقابلہ خالص عربوں نے کیا تو ان میں فصاحت و بلاغت دیکھ کر وہ شخص ان کی مخالفت کرنے اور مقابلہ کرنے سے ٹل گیا جو ان کا سب سے بڑا دشمن تھا اور سب سے زیادہ مقابلہ کرتا تھا اور وہ اس حالت میں ہٹا کہ ان سے سلامتی سیکھی اور بُرا بھلا کہنے سے باز آیا“۔

ولید بن مغیرہ خاموش ہو گیا

کہتے ہیں کہ ولید بن مغیرہ قریش میں اعلیٰ درجے کا فصیح مانا ہوا تھا چنانچہ ایک دن وہ بلاغت کے مقابلہ کرنے کیلئے حضور ﷺ کی خدمت میں آیا اور کہنے لگا کہ میرے سامنے کچھ پڑھ کر سناؤ جس پر آپ نے اسے یہ آیت پڑھ سنائی: ”إِنَّ اللَّهَ بِالْعَدْلِ وَالْإِحْسَانِ وَإِيتَاءِ ذِي الْقُرْبَىٰ“ (سورۃ النحل، آیت ۹۰)۔ یہ سن کر کہنے لگا کہ اسے دوبارہ پڑھیں۔ آپ نے دوبارہ پڑھی تو کہنے لگا کہ اللہ کی قسم! اس کلام میں کتنی مٹھاس ہے، کتنی تروتازگی ہے، اسے اوپر جا کر دیکھیں تو فائدہ مند ہے اور نیچے اتر کر دیکھیں تو بہت معنی رکھتی ہے، ایسی کلام کوئی بشر بول ہی نہیں سکتا اور پھر خاموشی سے اٹھ کر مجلس سے چلتا بنا اور اس کے علاوہ کچھ کہہ نہ سکا۔

یحییٰ بن حکیم کہتے ہیں کہ انہوں نے قرآن کا مقابلہ کرنے کا ارادہ کر کے سورۃ اخلاص کے بارے میں سوچا کہ اس جیسی سورت بناتا ہوں یا اپنے خیال میں اس کی طرز پر چلتا ہوں یہ خیال آتے ہی اس کے دل میں اللہ کی طرف سے گھبراہٹ اور ہیبت پیدا ہوگئی چنانچہ تو بہ کر کے اس کام سے باز آیا۔

کہتے ہیں کہ کفار نے سورۃ القارعہ کے مقابلے میں اپنے خیال کے مطابق یہ سورۃ تیار کی:

”الْفَيْلُ مَا الْفَيْلُ وَمَا أَدْرَاكَ مَا الْفَيْلُ لَهُ ذَنْبٌ قَصِيرٌ وَخُرُطُومٌ طَوِيلٌ إِنَّ ذَلِكَ مِنْ خَلْقِ اللَّهِ لَقَلِيلٌ“ (ہاتھی یہ ہاتھی کیا چیز ہے تم کو کون بتائے کہ ہاتھی کیا ہوتا ہے تو سنو کہ اس کی دم چھوٹی ہوتی ہے اور سونڈھ لمبی اللہ کی ایسی مخلوق اور کم ہی ملے گی) اور اس فرمان ”وَلَكُمْ فِي الْقِصَاصِ حَيَوةٌ“ (سورۃ البقرہ آیت: ۱۷۹) کے مقابلہ میں یہ تیار کی: ”الْقَتْلُ انْفِیْ لِلْقَتْلِ“ (قتل کے مقابلہ میں قتل ہی ہوتا ہے)۔

پھر جب اپنی کلام میں غور کیا تو انہیں بہت ساری خامیاں سمجھ آئیں اور سوچ بچار کے بعد نہایت پریشان ہوئے اور لوگ ان پر ٹھٹھا کرتے ہوئے خوب ہنسے۔ اللہ کی شان ان ظالموں کے مقابلے میں بہت بلند ہے۔



شعر (۹۶)

رَدَّتْ بَلَاغَتَهَا دَعْوَى مُعَارِضِهَا
رَدَّ الْغَيُورِ يَدَ الْجَانِي عَنِ الْحَرَمِ

(ترجمہ:) ”آیتوں میں اتنی زبردست بلاغت ہے کہ انہوں نے مقابلے کا ارادہ کرنے والوں کو یوں دھتکار دیا جیسے کوئی غیرت مند اپنے محرم یعنی بیوی بہن وغیرہ کی طرف بڑھنے والے ہاتھ کو سختی سے روکتا ہے۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب بتا دیا کہ یہ آیتیں اپنے مقابلہ کو دور کرتی ہیں بلکہ اپنے مخالفوں کو بھی اپنی طرف واپس لاتی ہیں تو اب اس چیز کا بیان کرتے ہیں جس کے ذریعے بلاغت اور علم والے مخالف کو ہٹایا جاتا ہے چنانچہ فرماتے ہیں: ”رَدَّتْ بَلَاغَتَهَا الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”رَدَّتْ“ کا معنی ہے: روکا اور دور کر دیا۔

”بلاغة“ کا لغت میں معنی ہے: وہ چیز جو آخری حد تک پہنچنے کا پتہ بتائے اور علماء کی بولی یعنی اصطلاح میں کلام کی بلاغت کا مطلب ہوتا ہے کہ کلام حالات کے مطابق کی جائے اور پھر وہ فصاحت (نکھراپن) بھی رکھتی ہو جبکہ بولنے والے میں بلاغت کا مطلب ہوتا ہے کہ اس میں ایسی پختہ عادت ہو جس کے ذریعے وہ بلاغت والی کلام کر سکے۔

”بلاغتھا“ کی ضمیر ”ایات“ کی طرف لوٹتی ہے چنانچہ یہ مصدر ہے جو اپنے فاعل کی طرف مضاف ہے۔

”دعویٰ“ (نصب سے) ”رَدَّتْ“ کا مفعول ہے ”دعویٰ“ سے مراد اس جیسی چیز لا کر مقابلہ کرنا ہے چنانچہ ”مُعَارِضُ“ کا معنی ہوگا: ویسی چیز لانے کیلئے پیچھے پڑ جانے والا۔ ضمیر ”ایات“ کی طرف جاتی ہے۔ ”رَدَّ“ (نصب سے) مصدر محذوف کی صفت ہے یعنی یوں ہے: ”رَدًّا مِثْلَ رَدِّ الْغَيُورِ“ تو یہ ”رَدَّ“ کی ”رَدَّ“ ہی سے تشبیہ بنی اور یہ اپنے فاعل کی طرف مضاف ہے۔ ”الْغَيُورُ“ مبالغہ کا صیغہ ہے ”غَيْرَةُ“ سے معنی ہے بہت غیرت کھانے والا۔ یہ ایسی صفت ہے کہ جس کا موصوف محذوف ہے اصل یوں ہے: ”رَدَّ الرَّجُلِ الْغَيُورِ“۔

حضرت ابو ہریرہ رضی اللہ عنہ کے مطابق رسول اللہ ﷺ نے فرمایا ہے کہ ”اللہ غیرت کھاتا ہے تو اسے دیکھ کر ایک مؤمن بھی غیرت کھاتا ہے“ (صحیح مسلم، کتاب التوبۃ، باب غیرۃ اللہ تعالیٰ و تحريم الفواحش، صفحہ ۱۴۷۲، رقم الحدیث: ۲۷۶۱)۔ پھر ایک حدیث میں ہے کہ ”اللہ غیرت کھاتا ہے اور غیرت کھانے والے

ہی کو اچھا جانتا ہے“ (کنز العمال، کتاب الفضائل، باب فضل عمر بن الخطاب، جلد ۱۱ صفحہ ۲۶۵، رقم الحدیث: ۳۲۷۴۳)۔

”غیرۃ“ اصل میں یہ ہوتی ہے کہ کسی غیر کا اپنے کسی بھی حق میں ہونا پسند نہ کرے جبکہ اللہ کی غیرت کا مطلب یہ ہوتا ہے کہ وہ اپنے بندے کو گندے کاموں پر تیار ہونے سے روکے اور مؤمن کی غیرت دل میں اُبال اور وہ نفرت جو اسے حرام کاموں میں پڑنے سے روکتی ہے اور اگر وہ گھر میں ہو تو اسے حرام کاموں میں پڑنے سے پہلے ان پر اُبھارنے والے کاموں سے روکتی ہے۔

”يَدَ الْجَانِي“ (نصب سے) ”رَدَّ“ کا مفعول ہے۔ اس ”يَدَ“ سے مراد کام کر دیکھانا ہے چنانچہ یہاں سبب کا ذکر کر کے اسے مراد لیا جس کا یہ سبب ہے کیونکہ کام کرنے کا سبب ہاتھ ہی تو ہوا کرتا ہے اور گنہ گار (”جَانِي“) کا کام کرنا عام معنی میں ہے جس میں زنا، لونڈے بازی اور اس پر اُبھارنے والے بوسہ لینے، چھونے اور نظر بھر کر دیکھنے جیسے ابتدائی کام آجاتے ہیں اور ”جَانِي“ وہ ہوتا ہے جو غیر محرم کے ساتھ گناہ کا کام کرتا ہے۔

”عَنِ الْحَرَمِ“ کا تعلق ”رَدَّ“ سے ہے اور ”حَرَمِ“ (دونوں حرفوں پر زبر) آدمی کے محرم۔ اسے حاء کے پیش اور راء کے زبر سے بھی پڑھا جاتا ہے اس بناء پر کہ یہ ”حُرْمَةٌ“ کی جمع ہے اور یہ وہ ہیں جو آدمی کے حریم میں داخل ہوں (یعنی جنہیں حرام ہونے کی وجہ سے چھوئے نہ جاسکے)۔

شعر سے حاصل معنی یوں ہے کہ ان آیتوں کی فصاحت و بلاغت نے اپنے مخالف اور مقابلہ پر آنے والے کے دعویٰ کو یوں رد کر دیا ہے جیسے بہت غیرت والا دیرینہ گنہگار اور خیانت کرنے والے اس باغی کو رد کیا جاتا ہے جو اس کے اس حرم کی طرف آئے جسے حرام کیا گیا ہے اور پھر اسے جو اس کے حرم کو حاصل کرنے تک پہنچتا ہے۔

کہتے ہیں کہ اپنے وقت کے زبردست فصیح ابن مقلع شاعر نے قرآن کا مقابلہ کرنے کا ارادہ کیا اور شعروں میں کلام لکھا اور اسے حصوں میں بانٹا اور ان کا نام سورتیں رکھ دیا چنانچہ ایک دن وہ کسی مدرسے سے گزر رہا تھا کہ ایک بچے کو اللہ کا یہ فرمان پڑھتے سنا: ”يَا رَضُّ اَبْلَعِي مَائِكَ وَيَا سَمَاءُ اَقْلِعِي“ (سورۃ ہود آیت: ۴۴) تو کہنے لگا کہ اس کا مقابلہ کبھی بھی نہ کیا جاسکے گا، یہ کسی بشر کا کلام نہیں۔

جو شخص علماء کی وہ کتابیں دیکھے جن میں حدیثیں بھری ہیں تو اسے اس موقع کے مطابق بہت سی باتیں مل جائیں گی۔



شعر (۹۷)

لَهَا مَعَانٍ كَمَوْجِ الْبَحْرِ فِي مَدَدٍ
وَفَوْقِ جَوْهَرِهِ فِي الْحُسْنِ وَالْقِيَمِ

(ترجمہ:) ”ان آیتوں میں فائدہ مند معنی اتنے زیادہ ہیں جیسے سمندر کی موجیں اونچا اٹھنے کیلئے ایک دوسرے کا ساتھ دیتی ہیں بلکہ ان کے حسن اور قیمت کو دیکھا جائے تو یہ سمندر کے موتی سے بھی بڑھ کر حسین اور قیمتی ہیں۔“

حضرت ناظم رضی اللہ عنہ نے جب قرآن کا بلاغت و فصاحت میں اعلیٰ درجے کا ہونا بتا دیا تو کسی کی طرف سے یہ وہم ہو سکتا تھا کہ کیا ایسے بلاغت و فصاحت والے الفاظ کے معنی بھی یونہی ہوں گے تو فرمایا: ”لها معان الخ“۔

تحقیق الفاظ

”لها“ پہلے آئی ہوئی خبر ہے جس کا مبتداء ”معان“ بعد میں ہے تنوین زیادتی اور عظیم ہونے کا معنی دیتی ہے اور ”معان“ سے مراد مقصد والی چیزیں اور اس کے ساتھ وہ چیزیں جو ان کے اندر حقیقتوں اور فائدوں کی صورت میں موجود ہیں۔

”کَمَوْجِ الْبَحْرِ“ طرف مستقر اور ”معان“ کی صفت ہے۔ ”الموج“ مصدر ہے ”ماج البحر“ سے لی گئی یعنی اس میں لہریں پیدا ہوئیں اور پھر پانی کے ہر اس حصے کو کہتے ہیں جس سے موجیں اٹھتی ہیں اور یہاں اس سے مراد پانی کی وہ بہتات ہے جس کا اندازہ نہ ہو سکے۔

”فی مدد“، ”کموج“ کے کاف سے تعلق رکھتا ہے اور یہ ”مدد“ (دونوں حرفوں پر زبر) مدد اور تعاون کے معنی میں ہے کیونکہ سمندر میں ہر موج دوسری موج کی مدد کرتی ہے اور یونہی قرآن کا کچھ حصہ دوسرے حصے کی وضاحت اور مدد کرتا ہے۔

”فَوْقِ“ رفع کے موقع میں ہے اور اس کا عطف ”کاف“ پر ہے چنانچہ یہ صفت کے بعد صفت ہوگا اور اصل یوں ہوگا کہ: ”آیتوں کے ایسے کئی معنی ہیں جو موجود ہیں اور سمندر کے جوہر سے بڑھ کر ثابت ہیں۔“ اور ”جوہر“ کا معنی کئی مرتبہ بتایا جا چکا ہے۔ اس کی ”ہ“ ضمیر ”بحر“ کی طرف لوٹی ہے اور سمندر کا جوہر موتی اور مرجان جیسی چیزیں ہیں۔

”فی الحسن“ کا لفظ اس زیادتی سے تعلق رکھتا ہے جو لفظ ”فوق“ کے اندر موجود ہے۔
 ”قِیم“ (قاف پرزیر اور یاء پرزبر) ”قِیمَة“ کی جمع ہے۔

شعر کا حاصل معنی یہ ہے کہ ”واضح آیات کے معنی اتنے زیادہ ہیں جیسے زیادہ ہونے اور ختم نہ ہونے میں سمندر کی موجیں ہوتی ہیں اور یہ ایسے خوبصورت حکم ہیں کہ موتیوں اور مرجان جیسے سمندری جوہروں سے بھی بڑھ کر خوبصورت اور قیمتی ہیں اور اسے پہچان والے خوب جانتے ہیں کیونکہ یہ جوہرات اگرچہ ایسی اچھی خوبیاں رکھتے ہیں کہ قیمتی بن گئے اور بہت زیادہ قیمت والے لیکن آیات ان کے معنوں اور عجیب کاموں کے مقابلے میں کچھ نہیں چنانچہ اسی بناء پر صوفیہ کہتے ہیں کہ اگر ان آیتوں کے معنی معلوم ہو سکتے تو ان کے نور کا وزن آسمان وزمین اٹھانہ سکتے اور اسی وجہ سے اللہ تعالیٰ نے فرمایا ہے: ”لَوْ أَنزَلْنَا هَذَا الْقُرْآنَ عَلَىٰ جَبَلٍ لَّرَأَيْتَهُ خَاشِعًا مُّتَصَدِّعًا ۗ اَلَا يَتَذَكَّرُ ۗ اَلَا يَرَىٰ اَلَّذِينَ يُخْرِجُونَ مِنَ الْبُيُوتِ اَلْحِجَابَ ۗ اَلَا يُرَىٰ اَلَّذِينَ يُخْرِجُونَ مِنَ الْبُيُوتِ اَلْحِجَابَ ۗ اَلَا يُرَىٰ اَلَّذِينَ يُخْرِجُونَ مِنَ الْبُيُوتِ اَلْحِجَابَ“ (سورۃ الحشر آیت: ۲۱) (اگر ہم اس قرآن کو پہاڑ پر اتار دیتے تو تم اسے دیکھتے کہ جھکتا ہوا نظر آتا) لیکن اللہ تعالیٰ نے آیتوں کے نور کو حرفوں کے لباس سے چھپا دیا ہے تاکہ انہیں مؤمنوں کے دل اور زبانیں سنبھال سکیں تو جیسے بدنوں کی عزت روحوں سے ہوتی ہے، یونہی حرفوں کی عزت ان کے معنوں کی وجہ سے ہوتی ہے۔

رسول اللہ ﷺ نے فرمایا کہ قرآن سے مؤمنوں کے دل نہیں بھرتے اور اس کی وجہ یہ بتائی جاتی ہے کہ اس میں بڑی لذت ہوتی ہے، بہت مٹھاس ہوتی ہے، اس میں حیران کرنے والے راز اور انوکھی بہترین باتیں ہیں، اس کے طور طریقے بہترین ہیں اور زبردست عجیب چیزیں ہیں۔



شعر (۹۸)

فَلَا تُعَدُّ وَلَا تُحْصَىٰ عَجَائِبُهَا
وَلَا تُسَامُ عَلَى الْإِكْثَارِ بِالسَّامِ

(ترجمہ:) ”چنانچہ ان آیتوں کے عجیب معنی نہ گنتی میں آسکتے ہیں اور نہ ہی شمار کئے جاسکتے ہیں اور انہیں بار بار پڑھنے سے تکلیف بھی نہیں ہوا کرتی۔“

جب ناظم رحمہ اللہ نے دیکھا کہ آیتوں کے معنوں کے سمندری موجوں کی طرح زیادہ ہونے پر وہم ہوتا ہے کہ یہ گنتی میں آسکتے ہیں کیونکہ سمندر کی موج ایک حد تک ہی ہوتی ہے جبکہ آیتوں کے معنی بالاتفاق شمار میں نہیں آسکتے بلکہ ان گنت ہیں تو اس وہم کو دور کرنے کیلئے پہلے شعر کی تفصیل کرتے ہوئے فرمایا: ”فَلَا تُعَدُّ وَلَا تُحْصَىٰ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”تُعَدُّ“ اور ”تُحْصَىٰ“ دونوں مجہول کے صیغے ہیں چنانچہ پہلا ”عَدُّ“ سے اور دوسرا ”اِحْصَاءُ“ سے ہے اور دونوں میں فرق یہ ہے کہ پہلا تو ایک ایک کر کے گننا ہوتا ہے جبکہ دوسرا اکٹھی اکٹھی چیزوں کو۔

”عجائبہا“ (باء پر پیش) ”عجیبہ“ کی جمع ہے یہ اسے کہتے ہیں جس چیز سے حیرانی ہو اور ”عجاب“ بھی یونہی ہے، جیم پر شد اور بغیر شد کے اور جمع ”اعجوبہ“ بھی ہے۔ ضمیر ”ایات“ کی طرف لوٹتی ہے یعنی وہ آیات جن کی عجیب چیزیں گنتی میں نہیں آسکتیں اور نہ ہی ان کے یکتا اور انوکھے علوم شمار ہو سکتے ہیں، نہ کسی وقت اور گھڑی حد و حساب میں ان کے چھپے راز اور بہترین باریکیاں آسکتی ہیں۔

”لا تسام“ خیال میں آنے والے ایک وہم کا جواب ہے اور وہ یہ کہ اگر قرآن میں اتنے بہت سے معنی ہیں جو اکیلے اکیلے اور جمع کر کے گنے نہیں جاسکتے تو انہیں اس وجہ سے چھوڑ دینا چاہیے کہ یہ اپنے دیکھنے والوں کو پریشان کریں گے، جواب واضح ہے۔

”ولا تسام“ مضارع مجہول ہے اور مؤنث کا صیغہ ہے جس کا معنی ”انہیں چھوڑ انہیں جاسکتا“ کیونکہ یہ لفظ ”سَامَتِ السَّائِمَةُ“ سے لیا گیا ہے جب تم اسے اپنے حال پر چھوڑ دو یا اس کا معنی ہے:

”اندازہ نہیں کیا جا سکتا اور نہ تھکا جا سکتا ہے۔“ چنانچہ دونوں صورتوں میں ضمیر ”ایات“ کی طرف لوٹتی ہے۔

”علی“ بمعنی ”مَعَ“

”علی الاکثار“ ”تسام“ سے متعلق ہے۔ ”علی“ ”مَعَ“ یعنی ساتھ کے معنی میں ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے فرمان میں ہے: ”وَيُطْعَمُونَ الطَّعَامَ عَلٰى حُبِّهِ الْاِيَةِ“ (سورۃ الدھر آیت: ۸)۔ ”الاکثار“ بہت سالانا اس کا الف لام مضاف الیہ کے بدلے میں ہے اصل میں ”اکثارھا“ ہے۔

”بالسَام“ کی باء سببیہ ہے اور یہ ”تسام“ سے متعلق ہے۔ ”سَام“ (دوزبروں سے) کا معنی تھکنا اکتانا ہے۔ یعنی یہ آیتیں چونکہ معجزات میں بڑا مقام رکھتی ہیں تو زیادہ ہونے کی وجہ سے انہیں ان سے اُکتانے کی بناء پر چھوڑا نہیں جا سکتا بلکہ جیسے جیسے زیادہ پڑھی جاتی ہیں ویسے ہی انہیں پڑھنے والے کی خواہش بڑھتی جاتی ہے۔

اس شعر میں حضور ﷺ کے اس فرمان مبارک کی طرف اشارہ ہے: ”اِنَّ هٰذَا الْقُرْآنَ لَا تَنْقُضِيْ عَجَابُهُ وَلَا يُخْلَقُ مِنْ كَثْرَةِ التَّرْدَادِ“ (سنن الدارمی، من کتاب فضائل القرآن، باب فضل من قرأ القرآن، جلد ۲ صفحہ ۵۲۳، رقم الحدیث: ۳۳۱۵) (یہ قرآن وہ ہے کہ جس کے عجائب ختم نہیں ہوتے اور نہ ہی بار بار پڑھنے سے یہ پرانا ہوتا ہے) یعنی اس قرآن کی عجیب و غریب چیزیں تمام علماء کیلئے ہر زمانے میں ختم نہیں ہو سکیں گی۔ اللہ تعالیٰ نے فرمایا: ”لَنْفِدَ الْبَحْرُ قَبْلَ اَنْ تَنْفَدَ كَلِمَاتُ رَبِّيْ وَلَوْ جِئْنَا بِمِثْلِهِ مَدَدًا“ (سورۃ الکہف، آیت: ۱۰۹) (میرے رب کے کلمات ختم ہونے سے دریا خشک ہو جائیں گے اگرچہ اس کی مدد کیلئے ہم ایسا اور لے آئیں گے) اور فرمایا: ”وَلَوْ اَنَّ مَافِي الْاَرْضِ مِنْ شَجَرَةٍ اَقْلَامٌ وَالْبَحْرُ يَمُدُّهُ مِنْ بَعْدِهِ سَبْعَةَ اَبْحُرٍ مَا نَفِدَتْ كَلِمَاتُ اللّٰهِ“ (سورۃ لقمان، آیت: ۲۷)۔

حکماء میں سے ایک کہتے ہیں کہ ہر آیت کے ستر معنی ہوتے ہیں اور حضرت ابن عباس رضی اللہ عنہما فرماتے ہیں کہ یہ قرآن کئی راہیں رکھتا ہے اس میں فن ہیں، کچھ ظاہری اور کچھ باطنی چیزیں ایسی ہیں کہ اس کی عجیب چیزیں ختم نہیں ہو سکتیں اور نہ ان کے آخر تک پہنچا جا سکتا ہے (الاتقان فی علوم القرآن، فصل فی معرفۃ شروط المفسر، جلد ۲ صفحہ ۵۶۱) اور یہ قرآن پڑھنے والا اکتاتا نہیں اور نہ اسے بار بار پڑھنے سے پریشانی ہوتی ہے اور نہ ہی اس کی رونق اور تروتازگی جاتی ہے جیسے دوسری مخلوق کی چلی

جاتی ہے بلکہ اسے جتنی دفعہ بار بار پڑھا جائے اس کی دلچسپی بڑھتی چلی جاتی ہے بار بار تلاوت کرنے اور علماء عربیوں اور عجمیوں کے ہاں سے پڑھنے میں اس کے حرف نہیں بدلتے بلکہ کوتاہی درستگی کی راہ دکھاتی ہے جیسے جامع صغیر کی ایک حدیث میں ہے کہ ”جب قرآن پڑھنے والا تلاوت میں خطا اور غلطی کرتا ہے یا وہ عجمی ہو تو فرشتہ اسے ویسے ہی لکھتا ہے جیسے یہ اُترا ہے“ (الجامع الصغیر، حرف الہمزۃ، صفحہ ۵۵، رقم الحدیث: ۷۹۲)۔

اس شعر کا مفہوم شیخ ابوالقاسم شاطبی نے قرآن کی مدح کرتے ہوئے لکھا ہے:

وَخَيْرُ جَلِيْسٍ لَا يَمَلُّ حَدِيْثَهٗ

وَتَرْدَادُهٗ يَزْدَادُ فِيْهِ تَجَمُّلا

”یہ قرآن ایسا ساتھی ہے کہ اسے پڑھنے اور دُہرانے والا اُکتاتا نہیں بلکہ یہ اس میں اور حسن پیدا کر دیتا ہے“۔



شعر (۹۹)

قَرَّتْ بِهَا عَيْنٌ قَارِيَهَا فَقُلْتُ لَهُ
لَقَدْ ظَفِرْتُ بِمَجَلِّ اللَّهِ فَاَعْتَصِمْ

(ترجمہ:) ”جب اسے پڑھنے والے کی آنکھوں کو ایک سکون ساملا تو میں نے اس سے کہا کہ تم اللہ تک رسائی حاصل کر چکے ہو تو اس کام پر جتنے رہو۔“

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے جب پہلے شعروں میں آیتوں کے مرتبے بیان کر دیئے تو اب ارادہ یہ ہے کہ ان کے کچھ وہ فضائل بیان کریں جو اوروں تک پہنچتے ہیں چنانچہ فرمایا: ”قَرَّتْ بِهَا عَيْنٌ“

تحقیق الفاظ

”قَرَّتْ“ فعل ماضی ہے ”قَرَّ-ة“ سے جس کا معنی ٹھنڈک ہے چنانچہ بولتے ہیں: ”قَرَّتْ عَيْنُهُ“ (اس کی آنکھ ٹھنڈی ہوئی)۔ ”تَقَرَّ“ (قاف پرزبر اور زیر) کہتے ہیں کہ یہ لفظ عربوں کے ہاں سکون کیلئے بولا جاتا ہے کیونکہ ان کے علاقے بہت گرم تھے تو انہیں ٹھنڈک سے سکون ملتا تھا اور بات ڈھکی چھپی نہیں کہ اس بناء پر ”قَرَّتْ“ کا ”عین“ سے تعلق کرنے میں بہت ٹھنڈک ہوگی لیکن زیادہ ظاہر یہ ہے کہ اس سے مراد خوشی اور سرور ہے کیونکہ خوشی کے آنسو ٹھنڈے جبکہ غم کے آنسو گرم ہوتے ہیں اسی وجہ سے محبوب کو ”قَرَّةُ الْعَيْنِ“ کہا جاتا ہے اور ناپسند شخص کو ”آنکھ کی گرمی“ کہا جاتا ہے۔ یہ بات قاضی وغیرہ اہل تفسیر نے لکھی ہے جسے ”قَرَّى عَيْنًا“ (سورۃ مریم آیت: ۲۶) کے ماتحت درج کیا ہے۔

یہ بھی ہو سکتا ہے کہ ”قَرَّتْ“ کا معنی ثابت ہوئی اور اس کی آنکھ کو سکون ملا یعنی وہ ٹھہری ہوئی ہے اور ادھر ادھر نہیں پھرتی کیونکہ نظر میں آنے والی چیز میں خوبصورتی ہوتی ہے۔

”بِهَا“ میں باء سببیہ ہے ضمیر ”ایات“ کی طرف جاتی ہے اور یہاں مضاف حذف ہوا ہے اصل یوں تھا: ”انہیں پڑھنے یاد دیکھنے سے“۔

”عین“ (رفع سے) ”قَرَّتْ“ کا فاعل ہے اور اس سے اس کے دونوں معنوں میں ظاہری آنکھ مراد ہے اور جس نے دوسرے معنی کو دیکھ کر اس کا معنی نفس لیا ہے تو اس نے خواہ مخواہ نیا معنی نکالا

ہے۔ پھر ”قَرَّت“ اپنے گزشتہ اصلی معنی میں بھی ہو سکتا ہے اور معنی ہوگا: ”آیات کو پڑھنے والا خوش ہوا انہیں پڑھنے کی وجہ سے“ اور یہ بھی ہو سکتا ہے کہ یہ لفظ کو دیکھیں تو خبر دیتا ہو اور معنی دیکھیں تو انشاء ہو اور معنی ہو ”لِتُقَرَّ“ (اس کی آنکھ کو ٹھنڈا ہونا چاہیے) اسے ذہن نشین رکھو۔

”قَارِيهَا“ اس کا ہمزہ شعر کی ضرورت کیلئے ساکن کیا اور پھر اسے یاء سے بدل دیا گیا اور ضمیر ”ایات“ کی طرف جاتی ہے۔

”فَقَلْتُ“ میں فاء فصیحیہ ہے اور ”قَلْتُ“ متکلم کا صیغہ ہے۔ معنی یوں ہوگا کہ ”جب آیتوں کو پڑھنے کی وجہ سے قاری خوش ہو گیا تو لازم ہے کہ میں دلچسپی لیتے یا رشک کرتے ہوئے اس قاری کو یوں کہوں کہ اللہ کی قسم! تم تو کامیاب ہو گئے ہو تو لام لانا قسم کھانے کی تیاری کیلئے ہے۔

”ظفرت“ خطاب کا صیغہ ہے جس میں آیتیں پڑھنے والے کو مخاطب کیا ہے یعنی تم سب ناپسند چیزوں اور خرابیوں کے مقابلے میں کامیاب ہو گئے ہو اور ان سے نجات حاصل کر چکے ہو اور پھر سارے مطلب اور مقصد پا چکے ہو۔

”بِحَبْلِ اللَّهِ“ میں باء ”اعتصم“ سے متعلق ہے۔ ”حَبْل“ سے مجاز اور استعارہ کی بناء آیتیں اور شریعت کے کام مراد ہیں اور وہ یوں کہ: ”ایات“ کو اس طاقتور رسی سے تشبیہ دی جو اللہ کی طرف سے بندوں تک ان کے مقصد پورے کرنے کیلئے آتی ہے پھر اس رسی کو ”ایات“ کے مفہوم کیلئے استعارہ کیا گیا اور رسی کا ذکر کر کے اس سے ”ایات“ مراد لی گئیں اور ”حبل“ کا اللہ کی مضاف کرنا استعارے کو ذہن کے قریب کرتا ہے۔

”فَاعْتَصِم“ میں فاء محذوف شرط کا جواب ہے۔ ”اِعْتَصِم“، ”اِعْتَصِمَ“ سے امر حاضر ہے اور یہاں ”اعتصام“ سے مراد استعارے کے طور پر آیتوں کے مطابق کام کرنا ہے یہاں غور کی ضرورت ہے۔

اس شعر میں سرور کونین ﷺ کے اس فرمان کی طرف اشارہ ہے: ”میں تمہارے لیے وہ چیزیں چھوڑے جا رہا ہوں کہ اگر مضبوطی سے ان پر عمل کرو گے تو کبھی گمراہ نہ ہو گے وہ اللہ کی کتاب اور اس کے رسول کی سنت ہے“ (السنن الکبریٰ للبیہقی، کتاب آداب القاضی، باب ما یقتضی بہ..... الخ، جلد ۱۰، صفحہ ۱۹۴، رقم الحدیث: ۲۰۳۳۶) اور اس فرمان کی طرف کہ ”اور وہ یعنی قرآن کریم اللہ کی مضبوط رسی اور دانائی کا ذکر ہے اور پھر وہی سیدھا راستہ ہے“۔ (الحدیث) (سنن ترمذی، کتاب فضائل القرآن، باب ما جاء فی فضل القرآن)

جلد ۴ صفحہ ۴۱۴، رقم الحدیث: ۲۹۱۵) نیز اس فرمان کی طرف کہ ”یہ قرآن اللہ کی طرف سے تمہارے لئے ایک دعوت ہے تو جتنا ہو سکے اس دعوت کو قبول کرو کیونکہ یہ قرآن اللہ کی مضبوط رستی ہے، ظاہر نور ہے، مفید شفاء ہے، جو اس پر مضبوطی سے عمل کرتا ہے تو اس کا بچاؤ کرتا ہے اور جو اسے اپنا لیتا ہے، اسے نجات دلاتا ہے۔“ (الحدیث)

(المستدرک للحاکم، کتاب فضائل القرآن، باب اخبار فی فضائل القرآن، جلد ۲ صفحہ ۲۵۶، رقم الحدیث: ۲۰۸۴)

اسی شعر کو اسی معنی میں شیخ شاطبی نے یوں لکھا ہے:

وَقَارِئُهُ الْمَرَضِيُّ قَرُّ مِثَالِهِ
كَالْأُتْرُجِ حَالِيهِ مُرِيحًا وَمُؤَكَّلًا
وَبَعْدُ فَحَبْلُ اللَّهِ فِينَا كِتَابُهُ
فَجَاهِدْ بِهِ حَبْلُ الْعِدَايِ مُتَجَبَّلًا

”قرآن پڑھنے والا پسندیدہ اور ٹھنڈک میں ہے، اسے لیموں سمجھو کہ خوشبو آرام دیتا اور کھایا جانے والا ہے اور پھر اس کے بعد سنو کہ ہمارے درمیان رستی اللہ کی کتاب ہے تو تم اس پر محنت کر لو۔“



شعر (۱۰۰)

إِنْ تَتْلَاهَا خَيْفَةً مِّنْ حَرِّ نَارٍ لَّظَى
أَطْفَأَتْ نَارَ لَظَى مِنْ وَرْدِهَا الشَّبِيمِ

(ترجمہ:) ”اگر تم ان آیتوں کو دوزخ کی آگ سے پیدا ہونے والی گرمی کے ڈر کی بناء پر پڑھنا چاہو تو (یاد رکھو کہ) تم اس کے سرد (سکون دینے والے) ورد کی وجہ سے دوزخ کی آگ بجھا ڈالو گے۔“

حضرتِ ناظم رحمہ اللہ نے جب آیتوں کے فائدے اور مرتبے بتا دیئے تو اب ان کی کچھ خصوصیتیں بھی بیان کرنا چاہتے ہیں چنانچہ ان فضائل کو ان کے مرتبوں میں شامل کر کے فرماتے ہیں: ”إِنْ تَتْلَاهَا خَيْفَةَ الْخ“
تحقیق الفاظ

”ان“ شرطیہ ہے ”تتلھا“ مضارع ہے ”تلا“ سے جس کا معنی پڑھا ہے یہ خطاب کا صیغہ ہے اور پہلے والے قاری سے خطاب ہے اصل میں ”تتلو“ تھا واو جزم آنے کی وجہ سے گر گئی ضمیر ”ایات“ کی طرف جاتی ہے۔

”خَيْفَةً“ (نصب سے) کہ مفعول لہ حصولی ہے ”تتلھا“۔ ”خيفه“ ”خوف“ ہی کی طرح ہے ڈرنے کے معنی میں ”مِن“ سے متعلق ہے ”حر“ کی ”نار“ کی طرف اضافت لایہ ہے۔

”لظى“ جہنم کے ناموں میں سے ایک نام ہے یا اس کے طبقوں میں سے ایک طبقہ ہے یہ غیر منصرف ہے تانیث اور ”عَلِمَ“ کی وجہ سے اور جو کہتا ہے کہ ”لظى“ کا فعل ہونا ممکن ہے اور ”هو“ اس کا فاعل ہے اور یہ ”نار“ کی صفت ہے تو اس نے علمِ عروض کی ہوا تک نہیں سونگھی اور پھر اس میں مشہور قاعدوں کی مخالفت پائی جاتی ہے جسے اہل علم اور فیض پہچاننے والے جانتے ہیں۔

اگر تم کہو کہ ناظم نے ”لظى“ نام کیوں لیا ہے جبکہ اس کے اور نام بھی ملتے ہیں؟ تو میں کہوں گا: کیونکہ اس کی گرمی دوسرے طبقوں کے مقابلے سخت تیز ہوتی ہے جیسے قصیدے کے کچھ شرح کرنے والوں نے لکھا ہے۔ اس پر غور کر لو۔

”اطفات“ شرط کی جزاء ہے اور یہ بھی خطاب کا صیغہ ہے۔

”نارَ لظی“ (نصب سے) ”اطفات“ کا مفعول ہے۔

اگر یہ کہا جائے کہ ناظم اسم ضمیر کی جگہ اسم ظاہر کیوں لائے ہیں کیونکہ یوں کہنا چاہیے تھا: ”اطفات نارہا؟“ تو میں کہوں گا کہ ضمیر لوٹنے کی جگہ کے گڈمڈ ہو جانے کی وجہ سے اور اس لئے بھی کہ ضمیر کا الگ الگ ہو جانا لازم نہ آئے۔

کچھ نسخوں میں ”حرَ لظی“ بھی آیا ہے لیکن پہلا نسخہ ”اطفاء“ کی وجہ سے بہتر ہے (کیونکہ آگ بجھائی جاتی ہے گرمی نہیں)۔

”من وِردھا“، ”من اَجلیہ“ ہے اور یہ ”اطفات“ سے متعلق ہے۔ ”الورد“ (واو پرزیر) پانی کو اوپر سے دیکھنا، یہ مصدر یہاں مفعول کے معنی میں ہے یعنی ”مورود“ ہے چنانچہ اس سے مراد پانی ہے اور ضمیر ”ایات“ کی طرف جاتی ہے۔

اس شعر میں استعارہ بالکنایہ ہے اور وہ یوں کہ ذہن میں ”ایات“ کو پانی سے تشبیہ دی کہ دونوں ہی زندگی کا سبب ہیں پھر پانی بول کر ذہن میں ”ایات“ مراد لی گئیں اور باہر مشبہ کو ذکر کر کے مشبہ بہ کو چھوڑ دیا پھر مشبہ بہ کا مناسب لفظ ”ورد“ مشبہ کے لئے لیا تو یہ استعارہ تخیلیہ ہو اور ”شیم“ اس استعارہ کی تشریح بنی۔

یہ بھی ہو سکتا ہے کہ ”ورد“ سے مراد قرآن کا ورد ہو جس کا مطلب ہے: روزانہ ہمیشہ کیلئے قرآن میں سے کچھ پڑھتے رہنا، اس معنی کو اس ضمیر کی طرف مضاف کرنا طاقت دیتا ہے جو قرآن کی طرف لوٹتی ہے جبکہ ”ورد“ کی صفت لفظ ”شیم“ (شین پرزیر براء پرزیر) سے کرنا بمعنی سرد سے کرنا پہلے معنی کو طاقت دیتا ہے جس کا جو دل چاہے کرے لیکن دوسرے معنی کے لحاظ سے ”شیم“ حرارت دور کرنے والا کے معنی میں ہوگا جو ظاہر ہے۔

شعر کا حاصل مطلب یوں ہوگا کہ تم قرآن کی آیتوں اور واضح دلیلوں کو آگ کی گرمی اور جبار بادشاہ کے عذاب سے ڈر کر پڑھو گے تو اس کی آگ کو بجھا ڈالو گے اور اس کا نقصان ختم کر دو گے کیونکہ تم قرآن کا پابندی سے وہ ورد کر رہے ہو گے جو جہنم کی آگ کی گرمی دور کر دیتا ہے۔

قرآن دیکھ کر پڑھنا کیوں زیادہ بہتر ہے؟

یہ بات ذہن میں رکھو کہ فقہاء کرام کے مطابق قرآن کی تلاوت کرنے میں سب سے بہتر یہ

ہے کہ اسے زبانی پڑھنے کی بجائے چھپے ہوئے قرآن کریم میں سے دیکھ کر پڑھا کرے کیونکہ قرآن کو پکڑنے میں ہاتھ کا دخل ہوگا، یونہی اسے اٹھانے میں اور اسے دیکھنے میں آنکھ کا دخل ہو سکے گا جو اس کے معنوں پر غور کرنے میں مدد دے گا اور اسی وجہ سے زیادہ تر صحابہ کرام رضوان اللہ علیہم صحف ہی سے دیکھ کر پڑھا کرتے تھے۔

مسواک، روزہ اور تلاوت کے فائدے

حضرت علی رضی اللہ عنہ فرماتے ہیں: تین چیزیں ایسی ہیں کہ وہ انسان کی یادداشت بڑھاتی ہیں اور بلغم ختم کرتی ہیں جو مسواک، روزہ اور قرآن کی تلاوت ہیں۔ (احیاء علوم الدین، کتاب آداب تلاوت القرآن، الباب الاول فی فضل القرآن واهلہ، جلد ۱ صفحہ ۳۲۲) یہ بھی کہا جاتا ہے کہ علماء کی زیارت یونہی ہے جیسے کعبہ کی زیارت۔

حضور ﷺ کا مبارک ارشاد ہے کہ قرآن پڑھتے رہا کرو کیونکہ اسے پڑھنے میں ہر حرف پر اللہ تعالیٰ دس نیکیاں عطا فرمائے گا۔ (الحدیث)

(المستدرک للحاکم، کتاب فضائل القرآن، جلد ۲ صفحہ ۲۵۶، رقم الحدیث: ۲۰۸۴)

دکھلاوا کرنے پر تلاوت کا ثواب نہیں

ایک نیک بزرگ بتاتے ہیں کہ ایک دن میں سحری کے وقت سورہ طہ پڑھ رہا تھا اور جب اسے پورا پڑھ لیا تو مجھے نیند آگئی جس میں میں نے ایک بزرگ کو آسمان سے اترتے دیکھا جس کے ہاتھ میں صحیفہ تھا، انہوں نے اسے میرے سامنے کھولا تو یکا یک سورہ طہ سامنے تھی، پھر دیکھا تو ایک لفظ کو چھوڑ کر باقی ہر لفظ کے نیچے دس نیکیاں لکھی تھیں کیونکہ میں نے وہاں دیکھا تو وہ جگہ خالی تھی اور اس کے نیچے بھی کچھ لکھا ہوا نہ تھا جس پر میں نے سوچا: اللہ کی قسم! میں نے تو یہ لفظ پڑھا تھا لیکن اس کا ثواب نظر نہیں آ رہا تو آخر اس میں حکمت کیا ہے؟ اس پر اس بزرگ نے کہا: تم نے اسے اس رات پڑھا، یہ سچ ہے اور اسے لکھ لیا گیا لیکن ہم نے کسی آواز دینے والے کو یوں کہتے سنا جو عرش کی طرف سے کہہ رہا تھا کہ اسے مٹا دو اور اس کا ثواب نہ لکھو چنانچہ ہم نے اسے مٹا دیا۔

وہ فرماتے ہیں کہ میں خواب ہی میں رونے لگا اور پوچھا کہ تم نے ایسا کیوں کیا؟ انہوں نے کہا کہ ایک آدمی گزرا تو تم نے اس کی خاطر اسے بلند آواز سے پڑھ دیا تو اس کا ثواب ختم ہو گیا۔ (انتہی)

بچوں کو قرآن پڑھانے پر اجر

مقامات میں لکھا ہے کہ ”ایک شخص رسول اکرم ﷺ کی خدمت میں حاضر ہوا اور عرض کی: یا رسول اللہ! جو اپنی اولاد کو قرآن پڑھائے تو اسے کتنا ثواب ملے گا؟ آپ نے فرمایا کہ قرآن اللہ کی کلام ہے جس کے ثواب کی انتہاء ہی نہیں اور میں جبریل علیہ السلام کے آنے تک اس کا ثواب نہیں بتا سکوں گا اور جب وہ آئے تو آپ نے ان سے پوچھا جس پر حضرت جبریل علیہ السلام نے عرض کی کہ میں اس وقت تک نہیں بتا سکوں گا جب تک اللہ تعالیٰ سے پوچھ نہ لوں چنانچہ جبریل نیچے آئے اور عرض کی کہ اے محمد! اللہ تعالیٰ آپ کو سلام فرماتا ہے اور فرماتا ہے کہ جو اپنے بچوں کو قرآن پڑھائے تو اسے جنت میں ہر حرف کے بدلے میں سونے کا ایک شہر ملے گا جس میں ایک ہزار محل ہوں گے اور ہر محل میں ایک ایک گھر ہوگا۔“

پھر ایک حدیث میں آیا ہے کہ ”جو قرآن پڑھ کر اس میں موجود مضمون پر عمل کرے تو قیامت کے دن اس کے والدین کو ایک ایسا تاج ملے گا کہ جس کی روشنی سورج کی روشنی سے زیادہ ہوگی“ (سنن ابوداؤد کتاب الوتر، باب فی ثواب قرآن، جلد ۲ صفحہ ۱۰۰، رقم الحدیث: ۱۳۵۴) چنانچہ اسی وجہ سے حضرت شاطبی رحمہ اللہ نے فرمایا ہے:

”تم راضی خوشی زندگی گزارو کہ تمہارے ماں باپ کو ایسے لباس ملیں گے جو نوری ہوں گے جو تاج ہوگا اور پوشاک ہوگی تو پھر تمہارا کیا خیال ہے اس نص کے بارے میں کہ جب اسے جزاء ملے گی تو وہ اہل اللہ اور نہایت خالص ہوں گے۔“



شعر (۱۰۱)

كَانَهَا الْحَوْضُ تَبَيَّضُ الْوُجُوهُ بِهِ

مِنَ الْعَصَاةِ وَقَدْ جَاؤُوهُ كَالْحَمَمِ

(ترجمہ:) ”یوں لگتا ہے کہ وہ آیتیں گویا حوضِ کوثر ہیں کہ جسے دیکھ کر گنہگاروں کے چہرے

مسکراتے ہوں گے حالانکہ وہ وہاں پہنچنے پر کونلوں جیسے سیاہ ہوئے ہوں گے۔“

حضرتِ ناظم رحمہ اللہ جب ان آیتوں کے کچھ فضائل و مراتب اور خواص بتا چکے تو اب قیامت میں ان آیتوں کی کچھ سفارشیں بتانا چاہتے ہیں جو گنہگاروں کے لئے ہوں گی چنانچہ فرمایا: ”کانہا

الحوض الخ۔“

تحقیق الفاظ

”كَانَ“ تشبیہ کیلئے ہے اور ضمیر ”ایات“ کی طرف جاتی ہے اور ”حوض“ سے مجازاً مراد پانی

ہے ”الحوض“ میں الف لام عہد کیلئے ہے چنانچہ حوض سے مراد حوضِ کوثر ہے کہ جس کا رسول

اللہ ﷺ سے وعدہ کیا گیا ہے جو اہل سنت کے اجماع اور صحیح حدیثوں سے ثابت ہے جیسے حضور علیہ

الصلوة والسلام نے فرمایا: ”میرے حوض کا پھیلاؤ ایک ماہ کے سفر جتنا ہے اس کے چاروں ضلعے برابر

ہیں اس کا پانی دودھ سے بڑھ کر سفید ہے، خوشبو کستوری سے بڑھ کر ہے، پیالے گنتی میں آسمان کے

ستاروں سے زیادہ ہیں جو بھی اس سے پئے گا تو کبھی پیاسا نہ ہوگا“ (صحیح البخاری، کتاب الرقاق، باب فی

الحوض، جلد ۲ صفحہ ۲۶۸، رقم الحدیث: ۶۵۷۹)۔

حوضِ کوثر کہاں ہوگا؟

”حوض“ کو ”صراط“ (اگلے شعر میں) سے پہلے لانے میں اس شخص کے قول کو اولیت

دے رہے ہیں جس نے کہا ہے کہ حشر کے دن ”حوض“، ”صراط“ سے پہلے ہوگا کیونکہ اس میں

اختلاف موجود ہے چنانچہ قرطبی فرماتے ہیں کہ صاحب القوت وغیرہ کے مطابق ”حوض“، ”صراط“

کے بعد آئے گا لیکن صحیح یہ ہے کہ حوض اس سے پہلے ہوگا، یونہی امام غزالی رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ کچھ

پہلے بزرگوں نے بتایا ہے کہ لوگ ”حوض“ کی طرف ”صراط“ کے بعد جائیں گے لیکن یہ اس قول

والے کی غلطی ہے چنانچہ قرطبی فرماتے ہیں کہ حوض کو پہلے ماننا مناسب ہے کیونکہ لوگ اپنی قبروں سے

پیا سے اٹھیں گے۔

حوض ایک ہوگا یا دو؟

یہ بھی کہتے ہیں کہ حوض دو ہوں گے ایک قیامت کے دن اور دوسرا جنت میں، یہ بھی کہتے ہیں کہ وہ صرف جنت ہی میں ہوگا لیکن قیامت کے دن اسی کو عرصاتِ محشر میں لائیں اور پھر وہاں سے جنت میں لے جائیں گے اور یہ بھی کہتے ہیں کہ یہ حوض ایک فرشتے کی پیٹھ پر ہوگا جسے وہ ادھر لے جائے گا جدھر نبی کریم ﷺ چلتے جائیں گے۔

”تبیض“ سے تشبیہ دینے کی وجہ بتائی جا رہی ہے، یعنی ”ایۃ“ حوض کے ساتھ اس بات میں مشابہ ہے کہ وہ سفید چہرے جیسا ہوگا۔

”تبیض“ کا جملہ مرفوع شمار ہو کر حوض کی صفت بنتا ہے۔

معرفہ کی صفت کبھی نکرہ بھی ہو سکتی ہے

اگر تم کہو کہ ”تبیض“ والے جملے کو ”حوض“ کی صفت کیسے بنایا جا سکتا ہے جبکہ نکرہ و معرفہ ہونے میں یہ دونوں ایک جیسے نہیں ہیں کیونکہ جملہ نکرہ ہوتا ہے؟ تو میں کہوں گا: یہ بات اپنی جگہ ثابت ہو چکی ہے کہ صفت دو طرح کی ہوتی ہے، ایک موصوف کے ساتھ خاص ہوتی ہے اور ایک موصوف کیلئے عام ہوتی ہے اور ایک جیسا ہونا دوسری صورت کیلئے لازم ہے پہلی میں نہیں اور یہاں یہ صفت پہلی صورت والی ہے جو ظاہر ہے۔

”الوجوه“ سے مراد یا تو واقعی چہرے ہوں گے یا مجاز لغوی یا حدنی کے طور پر چہروں والے ہوں گے اور حدنی کی تائید اس سے ہوتی ہے کہ ”العصاة“ سے اس کا بیان ہوا ہے۔

”بہ“ کا تعلق ”تبیض“ سے ہے اور ضمیر ”حوض“ کی طرف جاتی ہے اور ”من العصاة“، ”الوجوه“ کا بیان ہے۔ ”العصاة“، ”عاص“ کی جمع ہے جیسے ”غزاة“، ”غاز“ کی جمع ہے، ”وقد جاء وہ“ میں واو حال کیلئے ہے، جمع کی ضمیر ”العصاة“ کی طرف جاتی ہے اور مفعول کی ضمیر ”ہ“ حوض کی طرف جاتی ہے۔ ”کاف“ تشبیہ کا ہے۔

”الحمم“ (حاء پر پیش اور میم پر زبر) ”حُمَمہ“ کی جمع ہے جیسے ”تُھَمَمہ“ اس کا معنی کونڈلہ ہے، ”فحم“ اور ”حممہ“ میں فرق یہ ہے کہ ”فحم“ اس کو نلے کو کہتے ہیں جو لکڑیاں جلنے کے بعد تیار ہوتا ہے اور ”حممہ“ وہ جو کونڈلہ جلنے کے بعد رہ جاتا ہے (راکھ) رہا ”حِمَمہ“ (حاء پر زبر) تو یہ

زمین سے نکلنے والے گرم پانی کو کہتے ہیں جس سے بخار والوں اور مریضوں کو شفاء ملتی ہے چنانچہ حضور ﷺ فرماتے ہیں کہ ”عالم زمین سے نکلنے والے گرم پانی جیسا ہوتا ہے کہ قریبی اس سے دور ہوتے ہیں اور دور والے قریب ہوتے ہیں“ (تفسیر روح البیان، تفسیر سورۃ الواقعة، تحت آیت: ۶۵)۔

اس شعر میں اس حدیث کی طرف اشارہ ہے جس میں آیا ہے کہ کچھ مؤمن گنہگار جہنم میں جائیں گے اور اپنے گناہوں کے مطابق اس میں جلیں گے پھر وہاں سے نکل کر ”نہر حیات“ میں ڈالے جائیں گے۔

ایک روایت میں یہ بھی آتا ہے کہ نہر حیات کا ان پر پانی ڈالا جائے گا جس سے ان کی سیاہی ختم ہو جائے گی اور جسم سفید نکل آئے گا جو ہمارے مہربان پروردگار کا فضل و کرم ہوگا۔

شعر کا حاصل مطلب یہ ہے کہ واضح قسم کی آیتیں عرصاتِ محشر میں گنہگاروں کی سفارش کریں گی جیسے ہمارے نبی کریم ﷺ کا حوضِ جہنم سے نکلنے والے گنہگاروں کو جنت میں داخل ہونے سے ذرا پہلے ان کے چہروں کو سفید کر کے ٹھیک ٹھاک کر دے گا۔

اس میں حضور ﷺ کے اس فرمان کی طرف اشارہ ہے کہ ”قرآن سفارش کرے گا جو قبول ہوگی“ وہ اصلی بات بتانے والا سچا ہوگا، وہ جسے اپنے آگے کرے گا، اسے جنت میں پہنچا دے گا اور جسے اپنے پیچھے کرے گا، اسے جہنم میں پہنچا دے گا“ (المعجم الکبیر للطبرانی، جلد ۹ صفحہ ۱۳۳، رقم الحدیث: ۸۶۵۵)۔ یعنی قیامت کے دن قرآن بڑے اور چھوٹے گناہوں والوں کی سفارش کرے گا اور اپنے پڑھنے والوں اور عمل کرنے والوں کے مرتبے بلند کرے گا، وہ ان لوگوں کی شکایت کرے گا جو اس پر عمل نہ کر کے اسے ضائع کرتے ہیں، تلاوت نہیں کرتے، بھلا دیتے ہیں اور اس میں ترتیل (ٹھہر ٹھہر کر پڑھنا) نہیں کرتے۔

امام زہری فرماتے ہیں کہ جس کے بارے میں یہ گواہی دے گا کہ اس نے کوتاہی کی ہے تو وہ جہنم میں جائے گا۔

قرآن کس شکل میں شفاعت کرے گا؟

اگر یہ کہا جائے کہ قیامت کے دن قرآن کی شفاعت کیسے ہو سکے گی کیونکہ اگر قرآن سے مراد کلامِ نفسی ہے تو وہ اللہ کے ساتھ قائم ہے اور اس کا شفاعت کرنا یہ چاہتا ہے کہ وہ اللہ سے الگ چیز ہو اور یہ ہو نہیں سکتا اور اگر اس سے مراد کلامِ لفظی ہے تو وہ باقی نہ ہونے میں ایک عارضی چیز ہے اور اگر

مان بھی لیا جائے تو یہ ممکن نہیں کہ وہ حقائق بدلنے کیلئے تبدیلی کا جوہر بن جائے؟ تو ہم کہیں گے کہ اس کا جواب یہ دیا گیا ہے کہ اس دن اللہ تعالیٰ قرآن لفظی کو ایسا جسم دے گا جسے لوگ ویسے دیکھتے ہوں گے جیسے میزان میں عمل دیکھیں گے اور حقیقتوں کا تبدیل ہو جانا، ہر لحاظ سے باطل نہیں ہوتا بلکہ باطل یہ ہوتا ہے کہ واجب بدل کر ممکن بن جائے اور ممکن واجب بن جائے۔ اس پر غور کر لو۔



شعر (۱۰۲)

وَكَالصِّرَاطِ وَكَالْمِيزَانِ مَعْدِلَةً
فَالْقِسْطُ مِنْ غَيْرِهَا فِي النَّاسِ لَمْ يَقُمْ

(ترجمہ:) ”اور یہ آیتیں ایسا انصاف کریں گی جیسے پل صراط اور ترازو کریں گے چنانچہ اس دن ان کے علاوہ لوگوں کو انصاف نہیں مل سکے گا۔“

جب ناظم رحمہ اللہ نے آیتوں کے فائدے اور محشر کے دن ان کی فائدہ مند خصوصیتیں بتا دیں تو اس سوال کا وہم پیدا ہوا کہ کیا دنیا میں قرآن کے ایسے فائدے نہیں ہیں جیسے آخرت میں ہوں گے تو آپ نے اس کا جواب دیتے اور وہم دور کرتے ہوئے فرمایا: ”وَكَالصِّرَاطِ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

واو عاطفہ ہے اور ”کالصراط“ کا ”کأنھا“ پر عطف ہے یعنی قرآن کریم مقصد حاصل کرانے میں پل صراط کی طرح ہے۔

پل صراط کیسی ہوگی؟

”صراط“ ایک پل ہے جو جہنم کے اوپر بچھا ہوگا جس سے اگلے پچھلے مؤمن اور کافر گزریں گے جبکہ نبی کریم ﷺ ”سَلِّمْ سَلِّمْ“ فرماتے ہوئے اس کے پاس کھڑے ہوں گے۔ یہ بال سے زیادہ باریک اور تلوار سے بڑھ کر تیز ہوگی اور اس کے پاس طرح طرح کے لوگ ہوں گے۔

ایک روایت یہ ملتی ہے کہ یہ صراط کچھ لوگوں کیلئے تو بال سے بھی باریک ہوگی، کچھ کیلئے بڑی کھلی وادی جیسی ہوگی اور کچھ یوں گزریں گے کہ انہیں اس کا پتہ بھی نہ چل سکے گا۔

”صراط“ کو مشبہ بہ بنانے میں معتزلہ کا رد ہے کیونکہ وہ صراط کو مانتے ہی نہیں ہیں اور کہتے ہیں کہ ایسی چیز سے گزر جانا ممکن ہی نہیں ہے تو اسے بنانا ہی بے فائدہ ہے اور اگر بن جانا ممکن بھی ہے تو اس میں مؤمنوں اور انبیاء علیہم السلام کو تکلیف دینا بنے گا۔ ان کے اس قول کا رد یہ ہے کہ اسے پار کرنا ممکن ہوگا کیونکہ انبیاء علیہم السلام اور مؤمن اس سے آرام کے ساتھ گزر جائیں گے۔

میزان کیسی ہوگی؟

”میزان“ ایسی چیز کہلاتی ہے کہ جس کے ذریعے عملوں کا اندازہ معلوم ہو سکتا ہو اور اس کی اصل

حالت ذہن میں آنے والی نہیں ہے کہتے ہیں کہ اس میں عملوں کی کتابیں تولی جائیں گی اور یہ بھی کہتے ہیں کہ نیکیوں کے نورانی جسم بن جائیں گے جبکہ گناہوں کے جسم سیاہ ہوں گے اور یہ بھی بتایا گیا ہے کہ بندے کو ایک مرتبہ اس کی نیکیوں کے ساتھ تولا جائے گا اور ایک مرتبہ گناہوں کے ساتھ۔

”معدلة“، ”کالصراط“ کی بجائے ”کالمیزان“ کی تشبیہ و اضافت سے تمیز ہے۔ یہ مصدر میمی ہے یا پھر اسم آلہ ہے اور معنی یہ ہے کہ: آیتیں انصاف والی ہونے میں ”میزان“ جیسی ہیں چنانچہ اس میں بھی معتزلہ کا رد ہے کیونکہ وہ میزان کا بھی انکار کرتے ہیں اور کہتے ہیں کہ اس کا کوئی فائدہ بھی نہیں اور نہ اس سے کوئی غرض ہے۔

یہ بھی ممکن ہے کہ ”صراط“ اور ”میزان“ سے ان کی جنسیں مراد لی جائیں۔ ”صراط“ کی وجہ شبہ ناپسند کام اپنانے سے بچنا ہے اور اس کے ذریعے مقصد تک پہنچنا ہے اور میزان کے ساتھ وجہ شبہ انصاف قائم کرنا اور ظلم سے دور ہونا ہے۔

”فالقسط“ دوسری تشبیہ پر تفریح ہے معنی یہ ہوگا کہ جب قرآن انصاف کرنے میں میزان کی طرح ہے ”فالقسط الخ“ یہ لفظ ”قَسَطًا يَقْسُطُ“ سے ”نصر ينصر“ کی طرح ہے معنی انصاف کرنا ہے اور ”قسط“ ظلم کے معنی میں ہو تو ”قَسَطًا يَقْسُطُ“ ہوگا جیسے ”ضرب يضرب“۔

حضرت سعید بن جبیر کا حجاج کے سامنے علمی جواب

چنانچہ اسی لیے کہتے ہیں کہ حجاج نے حضرت سعید بن جبیر رضی اللہ عنہما کو بلایا تو وہ آگے حجاج نے پوچھا کہ اے سعید! آپ مجھے کیسا سمجھتے ہو؟ آپ نے فرمایا: ”إِنَّكَ قَاسِطٌ عَادِلٌ“ اس پر مجلس والوں نے حضرت سعید کی اس بات کو سراہا تو حجاج نے کہا کہ سراہنے کی ضرورت نہیں کیونکہ انہوں نے یہ کہہ کر بتایا ہے کہ تم زیادتی کرنے والے اور ظالم ہو جیسے اللہ تعالیٰ کے اس فرمان میں ہے: ”وَأَمَّا الْقَاسِطُونَ فَكَانُوا لِجَهَنَّمَ حَطَبًا“ (سورۃ الجن آیت: ۱۵) (رہے ظالم تو وہ جہنم کا ایندھن ہوں گے) اور حضرت سعید رضی اللہ عنہ نے ”عَادِلٌ“ سے مراد حق سے ہٹنے والا اور منہ پھیرنے والا لیا ہے۔ (انتہی)

”من غیرھا“ ”ظرف مستقر“ ”قسط“ کی صفت ہے اور ضمیر ”ایات“ کی طرف جاتی ہے۔

”فی الناس“، ”لم یقم“ سے متعلق ہے لیکن شعر کی ضرورت کیلئے اسے پہلے لائے ہیں یا یہ ضمیر ”قسط“ کی طرف لوٹی ہے یعنی لوگوں میں انصاف کرنا۔ ”الناس“ بشر کا نام ہے یہ یا تو نسیان سے ہے یا انس سے چنانچہ شاعر کا یہ قول اس کی تاکید کر رہا ہے:

وَمَا سُمِّيَ الْإِنْسَانُ إِلَّا لِأَنْسِهِ
وَلَا الْقَلْبُ إِلَّا أَنَّهُ يَتَقَلَّبُ

”انسان کو انسان صرف اس لئے کہا جاتا ہے کہ اس میں اُنس و پیار ہوتا ہے اور دل کو دل

اس بناء پر کہا جاتا ہے کہ بدلتا رہتا ہے۔“

یہاں صرف انسان ہی کا ذکر کیا ہے کیونکہ جنوں کے مقابلے میں اسے قرآن کی زیادہ ضرورت

ہوتی ہے یا اس کی شرافت کی وجہ سے کہ ان سے اس میں بڑھ کر ہے۔

پھر ”الناس“ سے مراد خاص لوگ ہیں یعنی ہمارے نبی کریم ﷺ کی اُمت دوسری اُمتوں کے

لوگ مراد نہیں کیونکہ اس سے آگے پیچھے اسی اُمت کی بات ہو رہی ہے۔

”لم یقم“ کا معنی ہے: دائمی نہ ہوگا اور نہ ہی برقرار ہوگا۔

شعر کا حاصل مطلب یہ ہے کہ ”واضح آیتیں، حق کو ظلم سے نکھارنے کیلئے ”صراط“ کی طرح ہیں

اور انصاف کرنے اور جھگڑے مٹانے میں ”میزان“ کی طرح ہیں اور جب ایسے ہے تو دنیا میں لوگوں

کا انصاف کرنا ترازو جیسے قرآن کے بغیر ممکن نہیں اور نہ ہی پائیدار ہے بلکہ اس کے علاوہ لوگوں میں

اجماع قائم نہ ہو سکے گا جبکہ دنیا اور دنیا والوں کا قیام انصاف ہی سے ممکن ہے انصاف شریعت کے ذریعے

ہو سکتا ہے شریعت قرآن کے ذریعے بنتی ہے اور اگر یہ آیات ثابت نہ ہوں تو دنیا قائم نہ رہ سکے گی اور نہ

ہی دنیا میں لوگوں کے جھگڑے ختم ہو سکیں گے۔



شعر (۱۰۳)

لَا تَعْجَبَنَّ لِحُسُودٍ رَّاحٍ يُنْكِرُهَا
تَجَاهِلًا وَهُوَ عَيْنُ الْحَاذِقِ الْفَهْمِ

(ترجمہ:)"تمہیں جہالت کی بناء پر اس حسد کرنے والے پر تعجب کی ضرورت نہیں کیونکہ وہ تو تجربہ کار اور سمجھدار ہونے کے باوجود حسد کئے جا رہا ہے۔"

جب حضرت ناظم رحمہ اللہ کے ذہن میں یہ بات آئی کہ اس مقام پر کچھ لوگوں کی طرف سے یوں سوال کیا جا سکتا ہے کہ اگر ان آیات میں اتنی خوبیاں ہیں تو مخطان کے بلیغ لوگ اور عدنان کے منصف ان کا انکار کیوں کرتے تھے؟ تو اس کا جواب، موقع کے مطابق، سوال کرنے والے کا شبہ دور کرتے ہوئے انہوں نے یوں دیا: "لَا تَعْجَبَنَّ الْخ"۔

تحقیق الفاظ

"لا تعجبین" نہی حاضر کا صیغہ ہے جسے نون خفیہ لگا کر تاکید بنایا گیا ہے، معنی ہوگا کہ تجھے کسی قسم کا تعجب نہیں ہونا چاہیے۔

"لحسود" اسی کے ساتھ تعلق رکھتا ہے۔ "حسود" بروز "صبور" ایسے آدمی کو کہا جاتا ہے جس میں بہت زیادہ حسد ہو۔

حسد اور غبطہ میں فرق

حسد اور "غبطہ" میں فرق یہ ہے کہ پہلا لفظ اس آرزو میں بولا جاتا ہے کہ دوسرے کی نعمت ختم ہی ہو جائے یا یہ آرزو ہوتی ہے کہ دوسرے کی نعمت اس کی بجائے مجھے مل جائے جبکہ دوسرے لفظ میں یہ تمنا ہوتی ہے کہ اس سے زائل ہوئے بغیر یہ نعمت مجھے بھی مل جائے۔

"رَّاحٍ" "صَّارٍ" کے معنی میں ہے اور اس کا اسم اس کے اندر ہی ہے جو "حسود" کی طرف لوٹتی ہے اور "ینکرہا" کا جملہ اس کی خبر ہے اور اس میں ضمیر بھی "حسود" ہی کی طرف لوٹتی ہے اور اس کے مفعول کی ضمیر "آیات" کی طرف لوٹتی ہے۔

"تجاهلًا" (نصب سے) "ینکر" کا مفعول ہے "تجاهل" کا معنی جہالت نہ ہونے کے باوجود جہالت دکھانا ہوتا ہے کیونکہ کافر لوگ آیتوں کی بلاغت و فصاحت اور ان میں غیبی خبروں کی وجہ

سے انہیں یونہی سچا سمجھتے تھے جیسے اپنی اولادوں کو پہچانتے تھے لیکن دشمنی اور تکبر کی بناء پر ان سے بے علمی دکھاتے تھے۔

”وَهُوَ“ میں واو حال کیلئے ہے اور ضمیر ”حسود“ کی طرف لوٹتی ہے۔

”عین“ سے مراد یہاں نفس اور ذات ہے یعنی ان آیتوں کے معنوں کے لحاظ سے اس کی ”حاذق“

کی طرف اضافت یونہی ہے جیسے ”شجر الاراک“ کی (یعنی بیانیہ ہے)۔

”حاذق“ کا معنی ماہر ہے اور ”فہم“ (زیر سے) ”حاذق“ کی صفت ہے اور ”فہم“ کا معنی

بہت سمجھدار ہے جس کی عقل مضبوط ہو اور زور سے لڑے۔ ”وہو عین الخ“ کی قید لگانا اس کی

جہالت کے انکار کو کاٹتا ہے بلکہ اس کی سرکشی کو ختم کرتا ہے اور اس کے باوجود اس میں اس لحاظ سے

قرآن کی بڑائی بنتی ہے کہ کسی شے کو عظیم شمار کرنا اس کی عظمت ظاہر کرتا ہے جسے ہر واقف کار جانتا

ہے۔



شعر (۱۰۴)

قَدْ تُنْكِرُ الْعَيْنُ ضَوْءَ الشَّمْسِ مِنْ رَمَدٍ
وَيُنْكِرُ الْفَمُّ طَعْمَ الْمَاءِ مِنْ سَقَمٍ

(ترجمہ:) ”ایسا ہوتا رہتا ہے کہ کسی تکلیف کی وجہ سے آنکھ سورج کی روشنی دیکھ نہیں سکتی اور بیماری کی وجہ سے منہ پانی کا مزہ نہیں لے سکتا۔“

جب حسد کرنے والوں کے انکار پر تعجب کرنے کا سبب بظاہر پوشیدہ تھا تو حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے ذہن میں موجود چیز کی مثال دکھائی دینے والی چیز اور ایک جانی پہچانی چیز سے دے کر اسے سمجھاتے ہوئے فرمایا ہے: ”قد تنکر العين الخ“۔

تحقیق الفاظ

”قد“ چیز کو تھوڑا بتانے یعنی تقلیل کیلئے ہوتا ہے۔ ”تنکر“، ”انکار“ سے ہے۔ ”عین“ سے یہاں مراد سر کی آنکھ ہے۔ ”ضوء“ سے مراد روشنی ہے، ناظم نے ”ضوء الشمس“ کہا ہے ”نورھا“ نہیں کہا کیونکہ ضیاء نور سے زیادہ طاقتور اور مکمل ہوتی ہے۔

نور اور ضیاء میں فرق

چنانچہ ضیاء اور نور میں فرق ہوتا ہے کیونکہ نور وہ حالت ہوتی ہے جو خود ظاہر اور دوسری چیز کو ظاہر کرتی ہے جبکہ ضیاء اس سے زیادہ طاقتور ہوتی ہے تو اسی بناء پر اللہ کے اس فرمان میں اسے ”شمس“ کی طرف مضاف کیا گیا: ”هُوَ الَّذِي جَعَلَ الشَّمْسَ ضِيَاءً وَالْقَمَرَ نُورًا“ (سورۃ یونس، آیت: ۵) اور کبھی یوں بھی کہا جاتا ہے: مناسب یہ ہے کہ نور ہر لحاظ سے طاقتور ہو کیونکہ اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: ”اللَّهُ نُورُ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ الْآيَةَ“ (سورۃ النور، آیت: ۳۵) تاہم تم سمجھتے ہو کہ یہ بات صرف اس وقت پوری ہو سکتی ہے جب آیت میں ”نور“ کا معنی ”مَنُور“ نہ ہو جبکہ مفسرین نے اس بات کا مطلب یہ فرق کر کے بتایا ہے کہ ”ضوء“ ذاتی روشنی ہوتی ہے جبکہ ”نور“ عارضی روشنی کو کہتے ہیں۔ اسے سمجھنے کی کوشش کرو۔

”الشمس“ دن میں نظر آنے والا ستارہ ہے جو دنیا کو روشن کرتا ہے۔ اس کی تفصیل پہلے آچکی

”من رَمِدٍ“ میں ”من“ مُنْشِئَہ ہے، یعنی بیانیہ وغیرہ نہیں جس کا تعلق ”تَنکِر“ سے ہے۔
 ”رمد“ (دونوں حرفوں پر زبر) آنکھ دکھنا چنانچہ ”رَمَدَتِ الْعَيْنُ“ چوتھے باب (”سَمِعَ يَسْمَعُ“) سے اس وقت کہتے ہیں جب وہ اُبل پڑے۔

اس مصرعہ میں جہالت کی بناء پر آیتوں کا انکار کرنے والے حاسد شخص کو اس آنکھ سے تشبیہ دی ہے جس میں تکلیف ہو کہ دونوں ہی نفع و نقصان میں برابر ہیں اور تکلیف والے کو دکھائی دینے والی چیز کا انکار کرنے پر تیار کر دیتی ہیں۔

”ایات“ کو سورج کی روشنی سے تشبیہ دی ہے کہ دونوں دکھائی دیتے ہیں ان میں پوشیدگی نہیں اور ہر چھوٹا بڑا انہیں جانتا ہے۔

”تجاہل“ کو ”رَمَدٍ“ (آنکھ دکھنے) سے تشبیہ دی ہے کہ دونوں ہی دوسرے کو تکلیف دیتے اور دکھائی دینے والی چیز کا انکار کرتے ہیں۔

خیال کرو تو یہاں ایک قیاس ترتیب دیا جاسکتا ہے جو یوں ہوگا کہ ایک حاسد شخص اس جیسا ہے جس کی آنکھ دکھتی ہو آیتیں سورج کی روشنی جیسی ہیں اور جاہل رہنا آنکھ کی تکلیف جیسا ہوتا ہے اور ہر ایسا شخص جو آنکھ میں تکلیف والے جیسا ہوتا ہے وہ سورج جیسی روشنی کا انکار کرے گا تو وہ دکھتی آنکھ جیسے شخص جیسا ہوگا تو نتیجہ یہ ہوگا کہ حاسد جہالت کی وجہ سے آیتوں کا انکار کرتا ہے۔

”وینکر“ واو عاطفہ ہے اور اس جملے کا عطف پہلے ”تَنکِر“ جملے پر ہے۔

”فَم“ کو شد دے کر پڑھا ہے کہ شعر کو اس کی ضرورت تھی ”فَم“ اصل میں ”فَوہ“ بروزن ”سَوَط“ ہے لفظ کو ہلکا یعنی تخفیف کیلئے ”ہاء“ حذف کر دی گئی کہ یہ حرف ”لین“ جیسی ہے چنانچہ اس لفظ کے دو حرف باقی رہ گئے تو انہوں نے لفظ ”لین“ پر بوجھ کی وجہ سے اس پر اعراب لگانا اچھا نہ سمجھا چنانچہ انہوں نے واو کو میم سے بدل دیا اور ”فَم“ کہہ دیا کیونکہ واو اور میم کا مخرج ہونٹ ہی ہیں۔
 ”فَم“ کے لفظ میں اصل کے لحاظ سے واو ہونے کی دلیل عربوں کا یہ قول ہے: ”تَفَوَّهت بِكذَا“ اور ”رَجُلٌ أَفْوَةٌ“ اور تصغیر بنانے میں ان کا قول ”فَوِيَّة“ ہے کیونکہ تصغیر لفظ کا اصل دکھا دیتی ہے۔

”طعم“ (نصب سے) ”ینکر“ کا مفعول ہے بمعنی مزہ لینا ”الماء“ اسم جنس ہے جو تھوڑے اور زیادہ پر بولا جاتا ہے۔ ”من“ منشیہ ”ینکر“ سے متعلق ہے۔ ”السقم“ بیماری کو کہتے ہیں۔

اس مصرعہ میں بھی ”حسود“ کو ”فم“ سے تشبیہ دی گئی ہے کہ اس منہ والے میں مرض ہے، تشبیہ اس بناء پر کہ دونوں میں واقعی طور پر حق تک پہنچنے میں رکاوٹ ہوتی ہے اور ”ایات“ کو لذیذ پانی سے تشبیہ اس بناء پر ہے کہ یہ ہر چیز کی زندگی کا سبب ہوتی ہیں اور ”تجاہل“ کی ”سقم“ سے تشبیہ اس بناء پر ہے کہ ”سقم“ والے کو تکلیف ہوتی ہے اور اس وجہ سے بھی کہ یہ حق تک پہنچنے سے رکاوٹ ہوتا ہے اور اس میں بھی پہلے کی طرح قیاس ترتیب دیا جاسکتا ہے تو اس پر غور کر لو اور حسد کرنے والوں جیسے نہ بنو کیونکہ مرتبے دینا اللہ کا کام ہے وہ جسے چاہے دیدے۔



ساتویں فصل:

معراج مصطفیٰ ﷺ

شعر (۱۰۵)

يَا خَيْرَ مَنْ يَمَّمُ الْعَافُونَ سَاحَتَهُ
سَعِيًّا وَفَوْقَ مُتُونِ الْأَيْنِقِ الرَّسْمِ

(ترجمہ:) ”اے ایسے سب لوگوں سے بڑھ کر شان والے کہ جن کی خدمت میں سائل یا تو دوڑتے ہوئے حاضر ہوتے ہیں یا پھر تیز ترین دوڑنے والی اونٹنیوں پر سوار ہو کر چلے آتے ہیں۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ جب آپ کے معجزوں کا ذکر کرتے ہوئے اس چیز کو بیان فرما رہے تھے جو آپ کی سب سے بڑی نشانی ہے یعنی وہ کتاب جو ایک یکتا سمندر اور قرآن ہے جو سب کچھ لئے ہوئے بہت بڑا ذخیرہ ہوتا ہے اور ذاتِ محبوب کا ذکر کرنے کے بعد دوبارہ اسی مطلوب کے ذکر کو شوق سے دہرانا چاہتے ہیں چنانچہ اس مقصد کیلئے یاء کا لفظ لائے ہیں جو چیز کے سامنے ہونے کا پتہ دیتا ہے تاکہ انہیں معلوم کرنے کیلئے ان کی ایسی خوبیاں بیان کریں کہ جو دکھائی دینے میں سورج کی طرح واضح ہیں چنانچہ فرمایا: ”یا خیر من یمم الخ۔“

تحقیق الفاظ

یاء کا لفظ دور والے کو آواز دینے کیلئے ہوتا ہے اور کبھی قریبی کو آواز دینے کیلئے بھی لایا جاتا ہے کہ اسے دور ہی سمجھ لیا جاتا ہے اس میں یا تو اس کی بزرگی ہوتی ہے جیسے کوئی بلانے والا ”یا اللہ“ یا ”یادرب“ کہے حالانکہ وہ شہ رگ سے بھی زیادہ قریب ہے اس میں اپنے آپ کو چھوٹا سا اور قریبی محفلوں سے دور سمجھا جاتا ہے یا پھر اس کی غفلت اور کم سمجھی پر اسے خبردار کرنا ہوتا ہے اور کبھی یہ تنبیہ کرنے کا ارادہ ہوتا ہے کہ وہ ایک ایسے عظیم کام کرنے کا ارادہ رکھتا ہے جس کی شان کا لحاظ ہوتا ہے اور جو یہاں آیا ہے یہ باء تو پہلے معنی کیلئے ہے یا تیسرے کے لئے تو اس پر غور کر لو۔

”خیر“ اسم تفضیل ہے اور ”مَنْ“ عموم کا معنی دینے والے لفظوں میں سے ہے۔

”یَمَمٌ“ کا معنی ”اس نے ارادہ کیا“ ہے یعنی ”اے ان میں سب سے بہتر جو ارادہ کرتے ہیں“
 ”العَافُونَ“، ”عَافِي“ کی جمع ہے، سوال کرنے والا کے معنی میں، اس کا معنی ”سوال کرنے والے“
 ہوگا۔

”السَّاحَةُ“ (نصب سے) ”یَمَمٌ“ کا مفعول ہے جس کا معنی گھر میں رہنے والی عورت ہے،
 اس کی ضمیر ”مَنْ“ کی طرف جاتی ہے ”السَّاحَةُ“ ان لفظوں میں سے ہے جن میں ”محلّ“ کا ذکر
 کر کے ”حال“ مراد لیا جاتا ہے کیونکہ مکان کی عزت مکان میں رہنے والے کی عزت سے ہوتی ہے
 چنانچہ ایک شاعر نے اسی وجہ سے کہا ہے:

”میرادل گھروں سے پیار کی بناء پر بے قابو نہیں بلکہ اس سے محبت کی بناء پر ہے جو ان
 میں رہا ہے۔“

تو اس کا معنی یہ ہوگا کہ: اے ان سب سے بہتر کہ سوالی جس کی ذات اور شخصیت کا ارادہ رکھتے
 ہیں۔

”سَعِيًّا“ نصب سے اس بناء پر کہ یہ ”العَافُونَ“ کے فاعل سے حال ہے۔

اگر یہ کہا جائے کہ یہ اس فاعل سے حال کیسے بن سکتا ہے جبکہ حال اور ذوالحال میں مطابقت ہی
 نہیں ہے کیونکہ حال تو مفرد ہے اور حال والا لفظ جمع ہے؟ تو میں کہوں گا کہ اس کا حال بننا اس کے
 افراد کی بناء پر ہے، یونہی کہا گیا ہے تو اس پر غور کر لو۔

یہاں ”سَعِي“ مصدر فاعل کے معنی میں ہے کہ یہ ”سَاعِينَ“ شمار ہوگا۔

”وَفُوقُ“ میں واو عاطفہ ہے اور ”فُوقُ“ ظرف ہے جو محذوف سے تعلق رکھتا ہے، یہ ”سَعِيًّا“
 پر معطوف ہے، یہ یوں ہوگا: ”پیٹھوں پر ہونے کی حالت میں“۔

”الْمَتُونُ“ جمع ”مَتْنُ“ ہے جو پیٹھ کے معنی میں ہے، جیسے شاعر کہتا ہے:

وَفَرَعٌ يَزِينُ الْمَتْنَ أَسْوَدُ فَاحِمٌ

أَيْتٌ كَقِنُو النَّخْلَةِ الْمُتَعَثِكِلُ

”پیٹھ کو سجانے والی شاخ کو نلے جیسی سیاہ ہے، وہ ایسے مضبوط ہے جیسے کھجور کا گھنا گچھا ہوتا
 ہے۔“

”الایبق“ نون سے پہلے یا، یہ اصل میں ”ایبق“ تھا جس میں نون پہلے اصل میں ”انوق“ تھا

”ناقہ“ کی جمع چنانچہ واو پہلے کر دی گئی تو ”اونق“ ہوا پھر اسے یاء سے بدلا کہ اور ہلکا ہو سکے۔
 ”الرسم“ (جر سے) یہ ”انیق“ کی صفت ہے اور یہ دو پیشوں کے ساتھ ”رُسوم“ کی جمع ہے جو ایسی اونٹنی ہوتی ہے جو زوردار جماع کی وجہ سے چلتے ہوئے زمین پر پاؤں کے نشان لگائے یا وہ اونٹنی جو تیز چلے اور دونوں معنوں کے لحاظ سے اس میں تجرید ہے (تھوڑا سا معنی لینا یہاں صرف اونٹنی مراد ہے)۔

یاد رہے کہ حضرت ناظم رحمہ اللہ کا قول ”فوق متون الخ“ پہلی کلام کو مکمل کرنے کیلئے ہے یعنی پہلی کلام یہ بتاتی ہے کہ قریب سے آنے والے سائلوں کا مقصد یہی کلام ہے جبکہ یہ کلام بتاتی ہے کہ دور سے آنے والے سائلوں کا یہ مقصد ہے اور اس کی خواہش وہ رکھتے ہیں جو ہر ایسے کمزور پر نظر رکھتے ہیں جو ہر گہرے راستے پر چل کر آتے ہیں کہ اپنے دنیاوی اور اخروی فائدے دیکھ سکیں اور وہ بھی مہربان نبی ﷺ کے روضہ مبارکہ کے پاس پہنچ کر۔

حاصل معنی یوں ہوگا: اے ہر اس شخص سے بہتر کہ جس کی طرف ضرورت مند اور مطلب پورا کرنے والے حاضری کا ارادہ رکھتے ہیں اور اے ان سب سے افضل کہ جن کی حاضری کیلئے سوار امید لگاتے ہیں چنانچہ آپ کا ان سب سے بہتر ہونا کہ جن کی حاضری یہ ضرورت مند دینا چاہتے ہیں یہ بتاتا ہے کہ آپ ان کی ضرورتیں پوری کرنے والے اور ان کی مانگی مرادیں دینے والے ہیں۔



شعر (۱۰۶)

وَمَنْ هُوَ الْاٰیَةُ الْكُبْرٰی لِْمُعْتَبِرٍ
وَمَنْ هُوَ النِّعْمَةُ الْعُظْمٰی لِْمُغْتَنِمٍ

(ترجمہ:) ”اور اے ایسے کمالات والے جو کھڑا کھونا پہچان کر چلنے والے کیلئے تو بہت بڑی نشانی ہیں اور اے وہ کہ نعمت کو غنیمت سمجھنے والے کیلئے بہت بڑی نعمت ہیں۔“

یہاں حضرت ناظم رحمہ اللہ عطف کے ذریعے نداء کا حرف دُہراتے ہیں تاکہ آپ کی شخصیت کا شوق اور بڑھے اور اس کے ساتھ آپ کی شاندار خوبیاں بتاتے ہیں اور پھر آپ کے سدرۃ المنتہیٰ کی طرف چڑھنے کا اشارہ کرتے ہیں چنانچہ فرماتے ہیں: ”ومن هو الاية الكبرى الخ۔“

تحقیق الفاظ

یہاں واؤ عاطفہ ہے اور ”من“ کا عطف پہلے شعر کے ”مُنادی“ یعنی ”خیر“ پر ہے، معنی یوں نکلے گا: اے وہ ذاتِ مبارکہ جو نشانی ہیں۔

”هُوَ“ الگ آنے والی ضمیر ہے جو قصر کا فائدہ دیتی ہے۔

”الایة“ سے مراد وہ علامت جس کے ذریعے حق و باطل میں تمیز ہو سکے۔

”الکبریٰ“، ”اکبر“ کی تانیث ہے اور ”معتبر“ کی تنوین کثرت کا معنی دیتی ہے، معنی یہ ہوگا: عبرت حاصل کرنے والے ہر شخص کیلئے اور ”معتبر“ سے مراد حق تعالیٰ اور اس کے ایسے دین کے بارے میں دلیلیں تلاش کرنے والا ہے جو حق و باطل کو الگ الگ کر دکھاتا ہے۔

واؤ عاطفہ ہے اور ”نعمة“ سے مراد ذہن میں آنے والی مفید چیز جو بھلائی کرتے ہوئے دوسرے کو دی جائے۔

نعمت دو طرح کی

یہ بھی کہا جاتا ہے کہ نعمت دو قسم کی ہوتی ہے، ایک فائدہ دینے والی جیسے بدن کی تندرستی، امن، عافیت، کھانے پینے والی چیزوں کا مزہ لینا اور نکاح کرنا اور دوسری نعمت نقصان کرنے والی چیزوں کو دور کرنے والی جیسے بیماریاں، مصیبتیں، سختیاں اور فقیری و محتاجی۔

تصوف میں نعمت کی قسمیں

تصوف کی کتابوں میں نعمتیں چھ قسم کی ہوتی ہیں: (۱) نعمتِ نفس: اس سے مراد عبادتیں اور بھلائی کرنا ہے اور نفس انہی دونوں میں مصروف رہتا ہے۔ (۲) نعمتِ قلب: یہ یقین اور ایمان ہے اور دل ان دونوں میں بدلتا رہتا ہے۔ (۳) نعمتِ روح: یہ خوف اور اُمید ہے اور روح ان دونوں میں ہی بدلتی رہتی ہے۔ (۴) نعمتِ عقل: اس سے مراد حکمت و دانائی اور کھل کر بیان کرنا ہے اور عقل بدل بدل کر دونوں کام کرتی ہے۔ (۵) نعمتِ معرفت: اس سے مراد ذکر کرنا اور قرآن پڑھنا ہے اور اس سے دونوں کام لئے جاتے ہیں۔ (۶) نعمتِ محبت: اس سے مراد اُلفت و محبت اور میل جول اور قطع تعلق سے بچنا ہے اور محبت یہ دونوں کام کرتی ہے۔

”النعمة“ یہاں اس سے مراد وہ ہستی ہے جس پر انعام ہو کیونکہ حضور ﷺ بہت بڑی نعمت ہیں اس لئے کہ آپ پوری مخلوق کیلئے رحمت ہیں اور اس کے ساتھ ساتھ ان سے بہت سی نعمتیں نکلی ہیں جن کی عام قسمیں گنا ممکن نہیں تو ایک ایک کر کے تفصیلاً گنا کیسے ممکن ہوگا؟

”العظمیٰ“، ”اعظم“ کی تانیث ہے۔

”المغتم“ یا تو نعمت کے ساتھ متعلق ہے یا ظرفِ مستقر ہے اور ”نعمة“ کی صفت ہے جیسے ناظم کا قول ”لمعتبر“، ”ایۃ“ کی صفت تھا یہ اسمِ فاعل کا صیغہ ہے جو اس محاورے سے نکلا ہے: ”أَخَذَ الْخَيْرَ وَاعْتَمَمَ بِهِ“ (اس نے خیرات لی اور اسے غنیمت سمجھا)۔

شعر کا مطلب یہ ہے کہ: سرورِ دو عالم ﷺ ہر اس شخص کیلئے بہت بڑی نعمت ہیں جو کھوٹا کھرا پہچان کر چلتا ہے کیونکہ وہ سب موجود چیزوں میں ہر لحاظ سے مکمل اور ان سب کیلئے بہت بڑی نعمت ہیں جو انہیں سمجھتا ہے اور سب سے بڑھ کر ہیں کہ وہ رحمت کے ساتھ ساتھ پوری ہدایت ہیں اندھیروں کو اٹھانے والے، شبہے دور کرنے والے زمین و آسمان میں سوال کرنے اور مانگنے والوں کا مقصد ہیں۔

معراج کی حکمت

یاد رہے کہ یہ اور اس سے پچھلا شعر رسول اللہ ﷺ کے بارے میں بتاتے ہیں کہ آپ کو معراج شریف کرانے کی حکمتیں اور راز کیا تھے تو سنئے کہ بلند ترین مقام پر رہنے والے فرشتوں میں ایک ہزار سال تک چار مسئلوں میں بحث ہوتی رہی اور انہوں نے مل کر ان کے حل کرنے کی پوری کوشش کی

لیکن کوئی حل نہ نکال سکے اور جب رسول اللہ ﷺ کو نبوت ملی تو انہیں یقین ہو گیا کہ انہیں صرف آپ ہی حل فرما سکیں گے چنانچہ وہ بارگاہِ الہی میں اسی مقصد کیلئے گڑگڑائے جس پر اللہ تعالیٰ نے اپنے حبیب ﷺ کو ایسے مقام پر بلایا کہ دونوں کے درمیان کمان کے دو کناروں جتنا یا اس سے بھی کم فاصلہ رہ گیا تو پھر اس نے اپنے اس خاص بندے کے ذمے جو بھی کچھ لگانا تھا لگا دیا چنانچہ اس میں سے ایک بات وہ تھی جو خود آپ ہی نے بتا دی کہ:

”میں نے اپنے پروردگار کو نہایت اعلیٰ صورت میں دیکھا تو اس نے مجھ سے پوچھا کہ اے محمد! یہ فرشتے کس بحث میں اُلجھے ہوئے ہیں؟ میں نے عرض کی کہ اسے تو ہی جانتا ہے چنانچہ اس نے اپنا دستِ قدرت میرے دونوں کندھوں کے درمیان رکھا جس کی ٹھنڈک میں نے اپنے دونوں پستانوں کے درمیان محسوس کی پھر ارشاد ہوا کہ اے محمد! کیا جانتے ہو کہ یہ فرشتے کس بحث میں اُلجھے ہوئے ہیں؟ اب میں نے عرض کی کہ ہاں! یہ گناہ مٹانے والی نجات دینے والی مرتبے بلند کرنے والی اور تباہ کرنے والے چیزوں کی پہچان کی اصل حقیقت جاننے میں اُلجھے ہوئے ہیں جس پر اس نے فرمایا کہ اے محمد! تو نے ٹھیک بتایا۔

پھر فرشتوں سے ارشاد فرمایا کہ اے فرشتو! ادھر آؤ اور سنو کہ تمہیں ان مشکل سوالوں کو حل کرنے والے مل گئے ہیں تو ان سے ان کا حل پوچھ لو چنانچہ سب سے پہلے حضرت اسرافیل علیہ السلام نے پوچھا: یا رسول اللہ! یہ گفارات کیا ہیں؟ آپ نے فرمایا کہ مشکلات میں بھی وضو کے دوران اچھی طرح پانی بہانا، اپنے قدموں سے چل کر جماعت سے جا ملنا اور ایک نماز سے فارغ ہوتے ہی اگلی نماز کی انتظار کرنا۔

پھر حضرت میکائیل علیہ السلام نے پوچھا کہ یا رسول اللہ! درجات کیا ہوتے ہیں؟ آپ نے فرمایا: لوگوں کو کھانا کھلانا، سلام کہنا عام کر دینا اور ایسے وقت میں نمازیں پڑھنا جب باقی لوگ سوئے ہوں۔

پھر حضرت جبریل علیہ السلام نے عرض کی کہ یا رسول اللہ! مُنجیات (نجات دلانے والی چیزیں) کون سی چیزیں ہیں؟ آپ نے فرمایا کہ اندر ہی اندر اور سب کے سامنے اللہ سے ڈرتے رہنا، فقیری اور امیری کی حالت میں درمیانے طریقے سے برتاؤ کرنا اور غصے اور

خوشی کے موقع پر انصاف کرنا۔

پھر حضرت عزرائیل علیہ السلام نے عرض کی کہ یا رسول اللہ! مہلکات (برباد کرنے والی چیزیں) کون کون سی ہیں؟ آپ نے فرمایا کہ لالچ کے پیچھے پڑنا، خواہشوں میں لگے رہنا اور انسان کا اپنے آپ کو سب سے بڑا سمجھنا۔

اس پر اللہ تعالیٰ نے فرمایا کہ انہوں نے ہر بات ٹھیک ٹھیک بتادی ہے۔

(سنن ترمذی، کتاب التفسیر، باب ومن سورۃ ص، جلد ۵ صفحہ ۱۵۹، رقم الحدیث: ۳۲۲۵)

صاحب بریقہ نے یہ بات شرح الطریقہ میں لکھی ہے۔



شعر (۱۰۷)

سَرَيْتَ مِنْ حَرَمٍ لَيْلًا إِلَى حَرَمٍ
كَمَا سَرَى الْبَدْدُ فِي دَاجٍ مِنَ الظُّلَمِ

(ترجمہ:) ”آپ تورات کے تھوڑے سے حصے میں ایک حرم (بیت اللہ) سے دوسرے حرم (مسجد اقصیٰ) تک اتنی آب و تاب سے تشریف لے گئے جیسے سخت تاریکی میں چاند روشنی پھیلاتے ہوئے چلا جاتا ہے۔“

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ جب پہلے دو شعروں میں آپ کو نداء دے چکے اور ساتھ ساتھ آپ کی ساری خوبیوں اور اعلیٰ درجے کے اخلاق کی طرف مختصر اشارہ کر گئے تو اس نداء کے جواب میں مختصر طور پر اپنے محبوب کے ایک اور عظیم کمال کی طرف بھی اشارہ کر دیا جو اللہ اس کی پوری مخلوق اور بندوں میں سب سے افضل اور خاص ہیں اور وہ کمال کسی بھی انسان کو نہ مل سکا نہ مل ہی سکے گا بلکہ وہ صرف دور کے آخری نبی ﷺ ہی کو ملنا ممکن تھا چنانچہ فرمایا: ”سريت من حرم الخ“۔

تحقیق الفاظ

”سريت“ میں حضور ﷺ سے خطاب ہے۔ عرب لوگ ”اسرای“ کو ”سرای“ بھی پڑھ لیتے ہیں جس کا معنی ہے: ”رات میں چلا“۔
کیا معراج روح اور جسم دونوں کو ہوئی؟

جو ”اسراء“ (معراج شریف) کا مقام آپ کو ہجرت سے پہلے حاصل ہوا وہ جسم اور روح دونوں کے ساتھ حاصل ہوا جس کے بارے میں یہ آیت بتاتی ہے: ”سُبْحٰنَ الَّذِيْ اَسْرٰى بِعَبْدِهِ الْاَيَةُ“ (سورۃ الاسراء آیت ۱) کیونکہ ”عبد“ جسم اور روح ہی کا نام ہے۔

۳۴ معراج

حضرت شیخ اکبر (ابن عربی) رحمہ اللہ بتاتے ہیں کہ رسول اکرم ﷺ کو کل چونتیس معراج ہوئے جن میں سے صرف ایک جسم و روح کے ساتھ تھا باقی صرف ان خوابوں میں ہوئے جنہیں آپ نبی ہونے سے پہلے دیکھا کرتے تھے۔

”من حرم“ ”سريت“ سے متعلق ہے ”حرم“ (دونوں زبروں سے) سے مراد حرم کعبہ

شریف ہے۔

بیت اللہ کیلئے قلعہ

کتاب ”دُرر“ میں یوں لکھا ہے: یہ بات ذہن میں رکھو کہ جب بیت اللہ شریف عظمت و شان والا تھا تو اس کیلئے ایک قلعہ بنایا گیا جو مکہ اور اس کے ارد گرد حفاظت کی خاص جگہ ہے، اسے حرم کہتے ہیں اور حرم کا بھی حرم ہے، یہ موافقت ہیں اور یہ مناسب نہیں کہ مکہ میں پہنچنے والا احرام باندھے بغیر وہاں سے گزرے۔ (انتہی)

حرم کی حدیں

تفسیر روح البیان میں ہے کہ حرم کی مدینہ منورہ کی طرف سے حد تین میل دور ہے، عراق کی طرف سے سات میل، بحر انہ کی طرف سے نو میل اور طائف کی طرف سے سات میل اور جدہ کی طرف سے دس میل ہے۔

پھر یاد رکھو کہ حرم کا لفظ اس پورے علاقے پر بولا جاتا ہے جو اس حرم میں داخل ہے چنانچہ اب راویوں کا یہ اعتراض نہ رہا کہ حضور ﷺ کی معراج تو سیدہ امّ ہانی بنت ابوطالب رضی اللہ عنہا کے گھر سے شروع ہوئی تھی اور وہ اس لئے کہ ان کا گھر حرم ہی میں تھا۔

”لَيْلًا“ پر نصب ”سَرِيَتْ“ کی طرف ہونے کی وجہ سے ہے یہ ”اسراء“ کی تاکید ہے اور عربوں کی زبان میں ”سَرِيَتْ“ رات ہی کی سیر کو کہا جاتا ہے تاکہ یہ نہ سمجھا جائے کہ معراج دن کو ہوئی تھی پھر یہ تنوین معراج کی مدت کے کم ہونے کا پتہ دیتی ہے کہ یہ رات کے مختصر وقت میں ہوئی کیونکہ اسم نکرہ لا کر چیز کا کچھ حصہ ہی بتانا ہوتا ہے اور یہ رات علماء کے ہاں ۲۷ رجب پیر کی رات تھی۔

معراج رات ہی کو کیوں؟

اگر تم کہو کہ معراج رات ہی کو کیوں ہوئی، دن کو کیوں نہ ہوئی کہ کوئی اعتراض اور طعنہ ہی نہ رہ جاتا چنانچہ رات کو کرانے میں حکمت کیا تھی؟ تو میں بتاؤں گا کہ اس کا جواب یہ دیا گیا ہے کہ رات میں کرانے کا مقصد محبت کے مقام میں پختگی کرنے کیلئے ہے کیونکہ اللہ تعالیٰ نے آپ کو حبیب اور خلیل بنا لیا ہوا ہے اور رات دو پیار کرنے والوں کیلئے بڑا خاص وقت ہوتا ہے اور سکون حاصل کرنے کیلئے رات ہی میں تنہائی کی ضرورت ہوتی ہے۔

کچھ علماء فرماتے ہیں کہ رات ہی میں معراج شاید اس آیت کے لحاظ سے ہے کہ ”لَيْلًا دَاذ“

الَّذِينَ آمَنُوا بِالْغَيْبِ وَلَيُفْتِنَنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا زِيَادَةً عَلَىٰ فِتْنَتِهِمْ“ (اللہ تعالیٰ ان لوگوں کا ایمان زیادہ کرے جو غیب پر ایمان لاتے ہیں اور کافروں کیلئے ان کی پہلی آزمائش اور زیادہ بڑھا دے) کیونکہ رات دن کے مقابلے میں رازوں کو زیادہ چھپاتی ہے۔

اس کی یہ حکمت بھی بتاتے ہیں کہ دن نے سورج کے اپنے اندر ہونے پر رات کو فخر جتایا تو اس سے کہا گیا کہ یوں فخر نہ کرو کیونکہ اگر دنیا کا یہ سورج تمہارے اندر چمکتا ہے تو جلد ہی موجودات کا سورج آسمان کی طرف جانے کیلئے رات میں چڑھے گا۔

کچھ اہل معرفت رات میں معراج کی حکمت یہ بتاتے ہیں کہ جب اللہ تعالیٰ نے رات کا نام و نشان ختم کرنا تھا اور دن کی روشنی ظاہر کرنا تھی تو رات غمگین ہو کر دل توڑ بیٹھی چنانچہ حضرت محمد ﷺ کو رات میں معراج ہوئی تاکہ انصاف ہو سکے۔

ابھی حضرت ناظم رحمہ اللہ کے تشبیہ دینے سے آگے ایک اور جواب آ رہا ہے تو اس کی انتظار کرو۔

”الی حرم“، ”سریت“ سے متعلق ہے۔ اس حرم سے مراد مسجد اقصیٰ والا حرم ہے اور اسے حرم کہنا مکہ کے حرم جیسا ہونے کی بناء پر ہے۔ یہ بھی بتاتے ہیں کہ اسے حرم کہنے کی وجہ اس کا عزت والا ہونا ہے۔

”کما سَرَى البدر الخ“ اس کی تشبیہ حضور ﷺ کی سیر سے مسافت طے کرنے اور روشنی دینے میں ہے اور مشبہ یہ میں کمی ہے۔

”فی داج من الظلم“، ”سری“ سے متعلق ہے اور ”داج“ محذوف موصوف کی صفت ہے اصل یوں بنتا ہے: ”فی لیلِ داج“ اور ”داجی“، ”دجی“ سے نکلا ہے جس کا معنی تاریکی ہے چنانچہ ”داج“ کا معنی اس کے اندھیرے رکنے والے ہیں۔

”من الظلم“، ”داج“ سے متعلق ہے جس میں ”راکد“ کا معنی پایا جاتا ہے۔ ”ظلم“ (ظلم پر پیش اور لام پر زبر) ”ظلمة“ کی جمع ہے مقصد تاریکی میں زور بھرنا ہے۔

یہ جو کہا گیا ہے کہ ناظم کا قول ”من الظلم“ ”ظلم“ کی صفت ہے اور ”ظلم“ سے مجازاً رات مراد ہے تو یہ بہت دور کی بات بنے گی۔

یاد رہے کہ علماء کے مطابق مسجد حرام سے مسجد اقصیٰ تک آپ کی معراج اور اس کے روح و جسم

کے ساتھ ہونے کا انکار کرنا کفر قرار دیا گیا ہے جس میں کسی کا اختلاف نہیں رہا مسجد اقصیٰ سے اوپر والے آسمانوں تک تو اس میں اختلاف پایا جاتا ہے تو اس کا انکار کرنے والا کافر نہیں کہلاتا۔



شعر (۱۰۸)

وَبِتَّ تَرْقِي إِلَىٰ أَنْ نِلْتَ مَنزِلَةً
مِّنْ قَابِ قَوْسَيْنِ لَمْ تُدْرِكْ وَلَمْ تُرْمِ

(ترجمہ:) ”آپ اس حد تک اوپر چڑھتے گئے کہ آخر قاب قوسین کے اس مقام تک جا پہنچے کہ جس کا نام ہی کسی نے نہ سنا تھا اور نہ ہی وہاں تک پہنچنے کی کسی نے خواہش کی۔“

جب پہلے شعر میں معتزلہ کی طرف سے اس وہم کی گنجائش تھی کہ آپ کی سیر تو مسجد حرام سے مسجد اقصیٰ تک تھی، کسی اور بلند مقام تک نہیں تھی تو آپ نے اس وہم کو دور کرنے کیلئے فرمایا: ”وَبِتَّ تَرْقِي إِلَىٰ“

تحقیق الفاظ

”بِتَّ“ ماضی مخاطب کا صیغہ ہے ”الْبَيْتُوتَةُ“ سے اور ایک نسخہ میں ”ظلت“ (ظاء پرزبر اور زیر) چنانچہ دونوں نسخوں کے مطابق یہ لفظ ”صِرْت“ کے معنی میں ہے۔
”تَرْقِي“ کا معنی ”اس نے ارادہ کیا“۔ ”إِلَىٰ“ کا تعلق ”تَرْقِي“ سے ہے ”نلت“ (نون پر زبر) ماضی مخاطب ہے ”نِيل“ مصدر سے جس کا معنی ہے: پہنچ جانا۔ ”مَنْزِلَةٌ“ (نصب سے) ”نلت“ کا مفعول ہے۔ ”مَنْ“ ”مَنْزِلَةٌ“ کا بیان ہے ”قَابِ قَوْسَيْنِ“ (نصب سے) لیا ہوا لفظ ہے جو قرآن میں سے لیا گیا ہے جسے حکایت کرنا کہتے ہیں۔ ”قَاب“ وقت کی مقدار ہوتی ہے اور ”قَوْسَيْنِ“ عرب کی قوسوں میں سے اس سے مراد بادب طریقے پر انتہائی قریب ہونا ہے آپ نے ”قَوْس“ کا ذکر کیا کیونکہ یہ قرآن میں آیا ہے اور قرآن عربی زبان ہی میں اُترا ہے اور ”قَابِ قَوْسَيْنِ“ کا لفظ لینے کی وجہ صرف یہ ہے کہ اس کا معنی انتہائی قریب ہونا ہے اور عربوں کی عادت ہے کہ دو امیر یا دو خلیفے جب صلح کرنا چاہتے ہیں تو اپنی اپنی کمائیں لے کر آ جاتے ہیں اور ان میں سے ایک کا سر دوسرے کی کمان کے سرے سے ملا دیتے ہیں۔

اب معنی یہ ہوگا کہ آپ ایسے مقام پر پہنچے جو انتہائی قریب تھا۔

حضور ﷺ کے اللہ کے قریب ہونے کا اور پاس ہونے کا مطلب مرتبہ کا قریب ہونا ہے، جگہ کا قریب ہونا نہیں اور نہ ہی وقت کا قریب ہونا ہے بلکہ یہ لطف و محبت کا قرب ہے نہ کہ انسان کے قریب ہونے جیسا۔

”لم تدرك“ مضارع مجہول مؤنث ہے اور یہ جملہ ”منزلة“ کی صفت ہے، معنی یوں ہوا کہ یہ مرتبہ تمہارے علاوہ کوئی انسان اور فرشتہ بھی نہیں لے سکا بلکہ اس تک پہنچنے کا کسی نے ارادہ تک نہیں کیا۔ ”لم ترم“ بھی مجہول کا صیغہ ہے، مصدر ”رَمَ“ ہے بمعنی طلب، معنی یوں ہوگا کہ تم اس مرتبے تک پہنچے ہو کہ یہ مرتبہ تیرے سوا آج تک کسی نے مانگا ہی نہیں کیونکہ یہ تیرے سوا کسی کو مل ہی نہیں سکتا تو جو ممکن ہی نہیں، اسے کیونکر مانگا جاسکتا ہے؟

اس شعر میں حدیث کے اس واقعہ کی طرف اشارہ ہے جس میں آپ نے بتایا تھا کہ مجھے جبریل سدرۃ المنتہیٰ تک لے پہنچے کہ اللہ جبار قریب بلکہ اور قریب ہو گیا اور مجھ سے قاب قوسین کے فاصلے یا اس سے بھی قریب تک ہو گیا، پھر کیا تھا، اللہ نے ان سے جو باتیں کرنا تھیں کر لیں۔

(صحیح البخاری، کتاب التوحید، باب قولہ تعالیٰ ”کلم اللہ موسیٰ تکلیما“ جلد ۴ صفحہ ۵۸، رقم الحدیث: ۷۱۷)

آپ کی دعاء اور اُمت پر کرم

حضرت علامہ مرزوقی رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ رسول اللہ ﷺ جب اللہ سے دو کمانوں کے درمیانی فاصلے تک پہنچے تو عرض کی کہ اے اللہ! تو میری اُمت سے کیا برتاؤ کرے گا؟ اللہ تعالیٰ نے فرمایا کہ میں ان پر رحمت کروں گا اور ان کے گناہوں کو نیکیوں سے بدل دوں گا، ان میں سے جو مجھ سے دعا کرے گا، میں قبول کروں گا اور کچھ مانگے تو میں اسے دے دوں گا اور جو مجھ پر بھروسہ کرے گا تو میں اس کے کام خود ہی کر دوں گا، دنیا میں میں گناہگاروں پر پردہ ڈالوں گا اور آخرت میں میں تمہیں ان کی سفارش کرنے دوں گا اور اگر کوئی حبیب اپنے حبیب کو مشکل میں نہ ڈالتا ہوتا تو میں تمہاری اُمت کا حساب بھی نہ لیتا۔

شعر نمبر ۱۰۷: طے شدہ شادی میں رکاوٹ کیلئے

اس شعر کی خصوصیت یہ ہے کہ جب کسی کی شادی باندھ دی گئی ہو اور وہ کھولنا چاہے تو تین انڈے لے کر انہیں اُبال لے اور ان کے چھلکے اتار کر پہلے مصرعہ کے اکیلے اکیلے حرف بانٹ کر دو

انڈوں پر لکھ دے اور دوسرا پورا مصرعہ دونوں کے تیسرے پر لکھے؛ چنانچہ تیسرا انڈا عورت کھالے اور دو
اس کا مرد کھالے اس سے انشاء اللہ اس کا باندھا ہوا نکاح کھل جائے گا۔ میرے استاذ محترم رحمہ اللہ
فرماتے ہیں کہ ہم نے اس کا تجربہ کیا ہے تو یہ سچ نکلا ہے۔



شعر (۱۰۹)

وَقَدَّمْتُكَ جَمِيعُ الْأَنْبِيَاءِ بِهَا
وَالرُّسُلِ تَقْدِيمًا مَخْدُومٍ عَلَى خَدَمِ

(ترجمہ:) ”تمام انبیاء اور رسولوں نے بیت المقدس میں آپ کو یوں سربراہ بنایا جیسے خدمت کرانے والے کو خدمت کرنے والوں کا سربراہ بنایا جاتا ہے۔“

جب آپ نے شبہ کرنے والوں کا شبہ دور کر دیا تو اب وہ مرتبے اور بھلائیاں بتانا چاہتے ہیں جو اس سیر کے دوران آپ کو ملی تھیں چنانچہ فرمایا: ”وقدمتك الخ“۔

تحقیق الفاظ

”قدمتك“، ”قدم“ سے فعل ماضی ہے یہ کبھی متعدی تو کبھی لازم ہوتا ہے اور یہاں پہلا ہے معنی یوں ہوگا کہ آپ کو تمام انبیاء علیہم السلام نے اپنا امام بنا کر آپ کی اقتداء کی اور آپ کو اپنا امام بنایا۔

”جمع“ (رفع سے) ”قدمتك“ کا فاعل ہے اس کے فعل کی تانیث اضافت کی بناء پر ہے یعنی ”جمع“، ”انبیاء“ کی طرف مضاف ہے اور ”الانبیاء“ جمع ہے اور ہر جمع مؤنث ہوتی ہے چنانچہ لفظ ”جمع“ نے ”انبیاء“ کی طرف اس کے مضاف ہونے کی وجہ سے تانیث لے لی جیسے اس جملے میں ہے: ”قُطِعَتْ بَعْضُ أَصَابِعِهِ“ یا ”تَلْتَقِطُهُ بَعْضُ السَّيَّارَةِ“ والی قراءت میں ہے یا جیسے شاعر کے اس کلام میں ہے:

وَمَا حُبُّ الدِّيَارِ شَغَفْنَ قَلْبِي .

نبی رسول سے عام ہوتا ہے۔

”بہا“ میں باء ”فی“ کے معنی میں ہے یہ ”قدمت“ سے متعلق ہے اور ضمیر بیت المقدس کی طرف جاتی ہے کیونکہ موقع بتا رہا ہے اور دوسرا حرم تو یہی معنی دے رہا ہے۔

”الرسول“ (جر سے) کا ”انبیاء“ پر عطف ہے اور ”رسل“ (راء اور سین پر پیش) ”رسول“ کی جمع ہے لیکن شعر میں وزن پورا کرنے کی بناء پر اسے ساکن پڑھا گیا ہے۔

”تقدیم“: مخدوم موصوف محذوف کی صفت ہے تاہم حرف جار ماننا ہوگا عبارت یوں ہو

گی: ”تقدیما مثل تقدیم المخدوم“ اور مصدر اپنے مفعول کی طرف مضاف ہے۔

”علی خدم“ کا تعلق ”تقدیم“ سے ہے اور ”خدم“ (دونوں پر زبر) کا معنی خادم ہے اور

یہاں ”مخدوم“ سے مراد رسول اللہ ﷺ ہیں اور خادم سے مراد باقی انبیاء علیہم السلام ہیں اور شعر

سے اس واقعہ کی طرف اشارہ ہے جو معراج کی رات ہوا کہ آپ سارے نبیوں کے امام بنے اور آپ

نے سب کو نماز پڑھائی کیونکہ یہ روایت ملتی ہے کہ جب حضور ﷺ بیت المقدس پہنچے تو براق سے اتر

کر دوسرے نبیوں کی طرح اسے ایک حلقہ سے باندھ دیا اور مسجد کی طرف تشریف لے گئے، یکا یک

دیکھا کہ وہ انبیاء علیہم السلام سے بھر چکی ہے، ادھر نماز کی تکبیر کہی گئی۔ آپ نے بتایا کہ ہم نے صفیں

باندھ کر انتظار شروع کی کہ ہمیں نماز کون پڑھائے گا، اس پر حضرت جبریل علیہ السلام نے میرا ہاتھ

پکڑتے ہوئے مجھے آگے کر دیا اور میں نے انہیں نماز پڑھائی اور باہر نکلا تو حضرت جبریل شراب اور

دودھ کا ایک ایک پیالہ لئے کھڑے تھے جن میں سے میں نے دودھ پینا پسند کیا جس پر انہوں نے

عرض کیا کہ آپ نے وہی پسند کیا ہے جس کے ساتھ انسان کی پرورش ہوتی ہے۔ (الحدیث)

(صحیح مسلم، کتاب الایمان، باب الاسراء برسول اللہ ﷺ، صفحہ ۹۸)

کیا بیت المقدس میں نماز معراج سے پہلے ہوئی؟

اس بات میں اختلاف ہے کہ آیا یہ نماز آپ کے آسمان کی طرف چڑھ جانے سے پہلے ہوئی یا

بعد میں؟ تاہم اس شعر سے تو واضح طور پر پتہ چل رہا ہے کہ یہ آپ کے آسمانوں کی طرف چڑھنے

سے پہلے ہوئی۔ ہاں قاضی عیاض رحمہ اللہ فرماتے ہیں کہ اس نماز کا آپ کے آسمانوں کی طرف

چڑھنے یا بعد میں ہونا برابر ہے کیونکہ حدیث میں یہی کچھ آیا ہے جس میں کوئی رکاوٹ نہیں۔ (انتہی)

نماز فرض تھی یا نفل

پھر اس کے فرض یا نفل ہونے میں بھی اختلاف ہے چنانچہ ایک روایت ملتی ہے کہ رسول

اکرم ﷺ نے انہیں یہ نماز آسمانوں کی طرف جانے سے پہلے پڑھائی تھی اور یہ نفل ہوگی مگر ایک اور

روایت میں ہے کہ انہیں بعد میں پڑھائی تو یہ فرض ہوگی یعنی صبح کی۔ مواہب میں یونہی ہے۔



شعر (۱۱۰)

وَأَنْتَ تَخْتَرِقُ السَّبْعَ الطَّبَاقَ بِهِمْ
فِي مَوْكِبٍ كُنْتَ فِيهِ صَاحِبَ الْعَلَمِ

(ترجمہ:) ”آپ نے جس مجمع میں جھنڈا اٹھایا ہوا تھا، اسے ساتھ لے کر سات آسمانوں کو چیرتے ہوئے آگے گزر گئے۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے آپ کے کمالات بتانے والا بیت المقدس کا واقعہ بتا دیا تو اب اس کے بعد کے چند ایسے واقعات بتانا چاہتے ہیں جو اوپر آسمانوں، اس سے اوپر عرش اور اس سے اوپر سدرۃ المنتہیٰ پر عجیب و غریب رازوں کی شکل میں آپ کے ساتھ واقع ہوئے چنانچہ فرمایا: ”وانت تخترق السبع الخ“۔

تحقیق الفاظ

واو عطف یا حال کیلئے ہے۔

”تخترق“، ”اخترق الطريق“ سے ہے جس کا معنی ہے: راستہ طے کیا اور اس سے گزرے معنی یہ کہ آپ گزرے اور سفر طے کیا، یہاں ماضی کی جگہ مضارع کا صیغہ لانے کی وجہ گزشتہ واقعات کو حال میں لانا ہے اور کسی دوسرے لفظ کی بجائے ”تخترق“ کا لفظ لانے میں فلسفیوں کا رد ہے جو کہتے ہیں کہ آسمان ایسے مضبوط جسم ہیں جو پھٹتے ملتے نہیں کیونکہ اگر پھٹتے ملتے تو لازمی طور پر یہ چھوٹے چھوٹے ٹکڑے ہو سکتے اور یوں اس سے پہلے ان کی یہ حدیں نہ ہوتیں کیونکہ پھٹ جانا سیدھی حرکت ہی میں ہوتا ہے۔

اس کا جواب یہ ہے کہ سارے جسم ایک دوسرے کی طرح ہوتے ہیں تو ان کا پھٹنا ملنا ممکن ہوگا، اب اگر اسے مان لیتے ہیں تو یہ بات صرف حدوں والوں میں پوری ہو سکے گی، دوسروں میں نہیں۔

”والسبع“ (نصب سے) ”تخترق“ کا مفعول ہے لیکن یہ محذوف موصوف کی صفت بنتی ہے، تو یوں ہوگا: ”السموات السبع“ جیسے اللہ تعالیٰ کے فرمان میں ہے: ”فَإِنْ خِفْتُمْ أَنْ لَا تَعْدِلُوا فَوَاحِدَةً“ (سورۃ النساء آیت: ۳) یعنی ”فَزَوْجَةً وَآحِدَةً“ ہے۔

”الطباق“ محذوف ”السموات“ کی صفت کے بعد دوسری صفت ہے اور یہ یا تو ”طابق“ کی مصدر ہے تو اس صورت میں اس کی تین صورتیں ہوں گی، پہلی یہ کہ اس کا معنی کچھ حصہ کا دوسرے

کے مطابق ہونا ہے جیسے ”طَابَقَ النَّعْلُ“ ہے اور یہ مصدر بن کر صفت ہے اور دوسرے یہ کہ اصل میں ”ذات الطبق“ ہے اور تیسری یہ کہ یہ یوں ہے جیسے ”فانما ہی اقبال و ادبار“ یا پھر یہ جمع ہے تو اس صورت میں یہ ”طَابِقُ“ کی جمع ویسے ہی ہوگی جیسے ”جَبَلُ“ کی ”جِبَالُ“ ہے اور کچھ کہتے ہیں کہ ”طَبَقَةٌ“ کی جمع ہے۔

”بِهِمْ“ ”تخترق“ سے حال ہے اور باءِ ملائمتہ یعنی ملانے کا معنی دیتی ہے تو یہ یوں ہوگا: ”مَارًا بِهِمْ“ (ان کے ہمراہ چلنے والا) اور ضمیر انبیاء و رسل کی طرف لوٹتی ہے تو اس صورت میں اس روایت کی طرف اشارہ ہوگا جس میں آپ نے فرمایا کہ جبریل آیا اور مجھے آسمانوں کی طرف لے چڑھا چنانچہ جب میں پہلے آسمان پر پہنچا تو جبریل نے آسمان کے نگران سے کہا کہ دروازہ کھولو اس نے پوچھا کہ کون ہو؟ بتایا: جبریل ہوں۔ اس نے پوچھا کہ تمہارے ساتھ کوئی اور بھی ہے؟ اس نے بتایا کہ میرے ساتھ محمد (ﷺ) ہیں۔ اس نے پوچھا کہ کیا انہیں بلایا گیا ہے؟ جبریل نے کہا: ہاں! چنانچہ اس نے کھولا تو ہم اس پر چڑھ گئے یکا یک دیکھا تو وہاں ایک آدمی بیٹھا تھا جس کی دائیں طرف سفید چہروں والے اور بائیں طرف سیاہ چہروں والے لوگ تھے وہ دائیں طرف دیکھتا تو ہنستا لیکن بائیں طرف دیکھ کر رو دیتا میں نے اسے سلام کیا تو وہ کہنے لگا: نیک نبی اور نیک بیٹے کا آنا مبارک ہو! میں نے جبریل سے پوچھا کہ یہ کون ہیں؟ اس نے بتایا کہ یہ آپ کے والد آدم (علیہ السلام) ہیں اور دہنی طرف والے سفید چہروں والے اصحابِ یمن یعنی جنتیوں کی روحیں ہیں اور بائیں طرف والے ان کی اولاد میں دوزخی ہیں۔

پھر وہ مجھے دوسرے آسمان کی طرف لے چڑھا اور اس کے نگران سے کہا کہ دروازہ کھولو اس پر نگران نے وہی کچھ کہا جو پہلا کہہ چکا تھا اس نے دروازہ کھولا تو ہم اس کے اوپر چڑھ گئے یکا یک دیکھا تو اس میں حضرت یحییٰ اور حضرت عیسیٰ (علیہما السلام) تھے۔

پھر تیسرے آسمان کی طرف لے گیا تو وہاں حضرت یوسف علیہ السلام تھے پھر چوتھے آسمان پر لے گیا تو وہاں اچانک حضرت ادریس (علیہ السلام) دیکھے پھر پانچویں آسمان پر لے گیا تو وہاں حضرت ہارون (علیہ السلام) تھے پھر چھٹے آسمان پر لے پہنچا تو وہاں حضرت موسیٰ (علیہ السلام) تھے پھر ساتویں آسمان پر لے گیا تو وہاں حضرت ابراہیم (علیہ السلام) ملے پھر اور اوپر لے گیا تو میں عرش کے برابر تھا جہاں چلتی قلم کی آواز سنی چنانچہ اللہ تعالیٰ نے میری امت پر پچاس نمازیں فرض کر دیں

جنہیں لے کر میں واپسی پر حضرت موسیٰ علیہ السلام کے پاس پہنچا، انہوں نے پوچھا کہ اللہ نے آپ کی اُمت پر کیا کچھ فرض کیا ہے؟ میں نے بتایا کہ پچاس نمازیں، انہوں نے کہا کہ اپنے پروردگار کے پاس جا کر ان میں کمی کرائیے کیونکہ آپ کی اُمت اتنی نہیں پڑھ سکے گی، میں واپس گیا تو اللہ نے دس گھٹا دیں، پھر حضرت موسیٰ کی طرف گیا تو بتایا کہ اس نے دس گھٹا دی ہیں، انہوں نے کہا کہ اپنے پروردگار کے پاس واپس جائیے کہ آپ کی اُمت اتنی نہیں پڑھ سکے گی، میں واپس گیا تو اللہ نے دس اور گھٹا دیں، پھر حضرت موسیٰ کے ہاں پہنچا تو انہوں نے پھر کہا کہ واپس اپنے پروردگار کے پاس جائیے کہ آپ کی اُمت انہیں بھی نہیں پڑھ سکے گی، آخر میں واپس گیا تو اللہ تعالیٰ نے فرمایا کہ یہ پانچ ہیں مگر درحقیقت پچاس ہیں۔ میں حضرت موسیٰ کی طرف پھر آیا تو انہوں نے پھر کہا کہ اپنے پروردگار کے پاس ایک مرتبہ پھر جائیے جس پر میں نے کہا کہ اب مجھے اپنے پروردگار سے شرم آ رہی ہے۔ (الحدیث) (صحیح البخاری، کتاب الصلاة، باب کیف فرضت الصلاة فی الاسراء، جلد ۱ صفحہ ۱۴۱، رقم الحدیث: ۳۴۹)

یہ بھی ہو سکتا ہے کہ ”بہم“ میں باء ”مع“ کے معنی میں ہو اور یہ یوں ہو: ”مُصَاحِبًا بِهِمْ“ تو اس صورت میں یہ اس واقعہ کی طرف اشارہ ہوگا جو ایک روایت میں آیا ہے کہ حضور ﷺ نے جب مسجد اقصیٰ میں انبیاء علیہم السلام کو نماز پڑھائی تو وہ میرے ساتھ ہی اوپر کے آسمانوں کی طرف گئے چنانچہ یہ بات اگلے پچھلے شعروں کے لحاظ سے مناسب ہے جو واضح ہے۔

”فسی موکب“ حال کے بعد دوسرا حال ہے تو یوں ہوگا: ”كائِنَا فِيهِمْ“۔ ”موکب“ گھوڑ سواروں کی جماعت لیکن یہاں ”بہم“ کے پہلے احتمال کی بناء پر فرشتوں کی جماعت مراد ہے کیونکہ ایک روایت ملتی ہے کہ حضور ﷺ اپنے دائیں بائیں فرشتوں کی بڑی تعداد لے کر چڑھے تھے اور دوسرے احتمال کی بناء پر انبیاء علیہم السلام بھی ہمراہ تھے۔

”كنت“ خطاب کا صیغہ ہے اور یہ اپنی خبر سے مل کر ”موکب“ کی صفت ہے اور ”فیہ“ کی ضمیر ”موکب“ کی طرف جاتی ہے۔

”العَلَم“ سے یہاں مراد یا تو جھنڈا ہے اور اس صورت میں حضور ﷺ کا ان میں جھنڈے والا ہونا بتاتا ہے کہ آپ ان کے رئیس تھے کیونکہ کسی بھی قوم میں علم والا ان کا رئیس ہوتا ہے یا یہ پہاڑ کے معنی میں ہے تو اس صورت میں اسے استعارہ کہنا واضح ہے کہ جھنڈا، مرتبے کیلئے استعارہ ہوگا تو معنی ہوگا کہ: جس لشکر میں آپ ایسے مرتبہ والے تھے کہ اس سے زیادہ مرتبہ ممکن ہی نہیں۔

شعر (۱۱۱)

حَتَّىٰ إِذَا لَمْ تَدَعْ شَأْوًا لِّمُسْتَبِقٍ
مِّنَ الدُّنْوِ وَلَا مَرَقًّى لِّمُسْتَنِمٍ

(ترجمہ:) ”اور یوں وہ موقع بھی آ گیا جب آپ نے قریب ہونے کی خاطر کسی کیلئے آگے پہنچ جانے کا موقع ہی نہ چھوڑا اور نہ ہی اوپر چڑھ جانے کی خاطر کسی کیلئے کوئی راہ رہنے دی۔“

جب پہلے شعر نے بتا دیا کہ حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام فرشتوں کو لے کر آسمانوں پر تشریف لے گئے اور اس سے وہم پیدا ہوا کہ انبیاء علیہم السلام ان سے الگ نہ ہوئے ہوں گے بلکہ ”قَابَ قَوْسَيْنِ“ تک پہنچے ہوں گے تو حضرت ناظم رحمہ اللہ اس وہم کو دور کرتے ہوئے یہ بتانا چاہتے ہیں کہ وہ مقام صرف نبی کریم ﷺ ہی کیلئے تھا چنانچہ فرمادیا: ”حتیٰ اذا لم تدع الخ“۔

تحقیق الفاظ

”حتیٰ“، ”تخترق“ کی انتہاء ہے ”اذا“ صرف ظرف ہونے کیلئے ہے تو جواب نہیں چاہتا یا شرط کیلئے ہے تو اس کا جواب محذوف ہو گا یا ان کا قول ”خففت“ یا ”لم تدع“ بمعنی ”لم تترك“ (تو نے نہیں چھوڑا) ہے۔

”الشأو“ انتہاء کا معنی ہے یعنی تم نے انتہائی مقام نہ چھوڑا۔

”لِمُسْتَبِقٍ“ یا تو ”لم تدع“ سے متعلق ہے یا ظرف مستقر ہے اور وہ اس بناء پر کہ یہ ”شأوا“ کی صفت ہے یہ اسم فاعل کا صیغہ ہے معنی ہے آگے جانے کا خواہش مند۔ تنوین تکثیر کیلئے ہے یعنی آگے جانے کے ہر خواہش مند کیلئے خواہ وہ نبی ہو یا فرشتہ۔

”مِنَ الدُّنْوِ“ یا ”لم تدع“ سے متعلق ہے یا ”شأوا“ کی صفت ہے یا ”دُنُو“ سے مراد اللہ کی طرف یا اللہ کی طرف سے قرب اللہ تعالیٰ کے قرب کا مطلب ہے: نہایت قریب ہونا، جگہ کا مزہ ہونا اور معرفت کا واضح ہونا اور حقیقت دیکھنا کیونکہ اللہ تعالیٰ کیلئے کوئی قرب نہیں اور نہ ہی اس کے عدل کے ساتھ۔

”لا مَرَقًّى“، ”شأوا“ پر عطف ہے نفی کا دوبارہ لانا تاکید کرنے کیلئے ہے اور ”مَرَقًّى“

(میم پر زبر اور راء پر سکون) ”چڑھنے کی جگہ“ اور ”المستنم“ بھی ترکیب میں ”مستبق“ کی طرح ہے، یہ اسمِ فاعل کا صیغہ ہے ”اِسْتَنَمَ“ سے یعنی اونچا ہوا اور ”مستنم“ سے مراد حضرت جبریل علیہ السلام ہیں کیونکہ وہ اُٹھنے والے اور اطمینان والے ہیں کیونکہ وہ طاقت والے عرش والے ہاں ٹھہرے ہوئے ہیں چنانچہ اس میں اس روایت کی طرف اشارہ ہے جس میں حضرت جبریل علیہ السلام کا حضور ﷺ کو اوپر لے جانے کا ذکر ہے اور آپ سدرۃ المنتہیٰ تک جا پہنچے۔

سدرۃ المنتہیٰ کیا ہے؟

سدرۃ المنتہیٰ ایک ایسا درخت ہے کہ اس کے پتے ہاتھی کے کانوں کی طرح ہیں اور اس کے نیچے دو نہریں تو دکھائی دیتی ہیں جبکہ دو چھپی ہوئی ہیں چنانچہ رسول اللہ ﷺ نے حضرت جبریل سے ان نہروں کے بارے میں پوچھا تو جبریل نے آپ کو بتایا کہ جو پوشیدہ ہیں وہ تو جنت میں ہیں اور جو دکھائی دیتی ہیں وہ نیل اور فرات ہیں پھر جبریل اسی مقام پر رُک گئے اور عرض کی کہ اگر میں انگلی کا پورا بھر بھی آگے جاؤں گا تو جل جاؤں گا چنانچہ اللہ تعالیٰ نے ان کے بارے میں فرمایا ہے: ”وَمَا مِنَّا إِلَّا لَهُ مَقَامٌ مَّعْلُومٌ“ (سورۃ الصافات آیت: ۱۶۴) اور حضور ﷺ کا مقام سدرۃ المنتہیٰ پر ہے۔

تفسیر انوار التنزیل میں ایک روایت ہے کہ یہ ساتویں آسمان میں ہے مخلوق کے علوم اور اعمال جو اوپر آئیں اور اس کے نیچے سے چڑھیں سب اسی میں جمع ہوتے ہیں۔ (انتہی)



شعر (۱۱۲)

خَفَضْتَ كُلَّ مَقَامٍ بِالْإِضَافَةِ إِذْ
نُودِيَتْ بِالرَّفْعِ مَثَلِ الْمُفْرَدِ الْعَلَمِ

(ترجمہ:) ”آپ نے اپنے مقام کے مقابلے میں عین اس وقت ہر مقام کو نیچے چھوڑ دیا جب آپ کو تنہا پہاڑ کی حیثیت میں اوپر جانے کیلئے بلایا گیا۔“

تحقیق الفاظ

”خفضت“ یا تو ”لم يدع“ سے بدل ہے یا ”اذا“ کا جواب ہے۔ ”خفض“ کا معنی ہے: مرتبہ گھٹا دینا اور ایک شے کو دوسری شے کے نیچے کر دینا، اسی سے اعراب میں ”خَفَضَ“ کا لفظ لیا گیا ہے۔ معنی ہے کہ آپ نے نیچے کر دیا اور اسے اس میں چھوڑ دیا۔

”كُلَّ مَقَامٍ“ (نصب سے) ”خفضت“ کا مفعول ہے اور ”مَقَامٍ“ (میم پر زبر) اسم مکان ہے یعنی ٹھہرنے کا مقام یعنی انبیاء علیہم السلام کے مقامات میں سے ہر مقام۔

”مَقَامٍ“ اور ”مَقَامٍ“ میں فرق

اگر تم کہو کہ ”مَقَامٍ“ (میم پر زبر) اور ”مَقَامٍ“ (میم پر پیش) میں کیا فرق ہے؟ تو میں کہوں گا کہ ان دونوں کے فرق میں اختلاف ہے چنانچہ کچھ نے کہا ہے کہ جب یہ ثلاثی مجرد سے لے کر پڑھا جائے تو اسے میم پر زبر سے پڑھا جائے جیسے ”قَامَ زَيْدٌ مَقَامَ عَمْرٍو“ اور جب مزید سے لے کر پڑھا جائے تو اسے میم پر پیش سے پڑھا جاتا ہے جیسے ”أَقِيمَ زَيْدٌ مَقَامَ عَمْرٍو“ لیکن اسے مولیٰ ابوالسعود نے اس وقت رد کر دیا جب کسی پوچھنے والے نے یوں پوچھا:

يَا وَحِيدَ الدَّهْرِ يَا شَيْخَ الْأَنَامِ

أَفْتِنَا فَرْقَ الْمَقَامِ وَالْمَقَامِ

”اے زمانے میں یکتا! اے لوگوں کے شیخ! ہمیں ”مَقَامٍ“ اور ”مَقَامِ“ کا فرق بتاؤ۔“

اس پر انہوں نے کہا کہ ان دونوں میں فرق یوں کریں گے کہ جب ”اقیم فلان“ یا ”قام فلان“ مقام فلان“ یا ”قام فلان مقام فلان“ نظر فلان“ تو دوسرے لفظ ”فلان“ کو دیکھو اگر وہ جگہ اسی کی تھی (جس جگہ دوسرا کھڑا ہو گیا) تو ”مَقَامِ“ (میم پر زبر) کہیں گے خواہ فعل ”اقَامَ“ پڑھا جائے یا

”قَامَ“ اور اگر واقعی دوسرے فلاں کے علاوہ کسی اور کی تھی تو ”مَقَام“ (میم پر پیش) پڑھا جائے گا۔ خواہ فعل ”اقیم“ ہو یا ”قام“ جیسے حروف قسم میں سے باء ہے کیونکہ قسم کھانے کیلئے اصل حرف باء ہی ہے جبکہ واو اسی سے بدلی ہوئی ہے اور تاء آئے تو وہ واو سے بدلی ہوگی چنانچہ جب کہا جائے کہ ”التاء اقیم مقام الواو“ تو ”مَقَام“ (میم پر پیش) کہا جائے گا کیونکہ یہ مقام واو کا نہیں بلکہ باء کا ہے اور جب کہا جائے: ”الواو اقیم مقام الباء“ تو ”مَقَام“ کہا جائے گا کیونکہ یہ مقام حقیقتہً باء کا ہے کیونکہ قسم کھانے کیلئے یہ اصل ہے اور جو یہاں آیا ہے ”مَقَام“ (میم پر زبر) ہے جیسے سمجھداروں سے پوشیدہ نہیں۔

”بالاضافة“، ”خفصت“ سے متعلق ہے اور ”اضافة“ سے یہاں مراد اس کا لغوی معنی ہے جو نسبت ہوتا ہے اور معنی ہوگا: اگر آپ کے مقام کی طرف نسبت کریں کیونکہ آپ کا مقام سارے انبیاء اور فرشتوں سے بلند تر ہے۔

اس فقیر کی رائے میں اس ”اضافة“ سے مراد وہ ”اضافة“ ہو سکتی ہے جو سورۃ اسراء میں آئی ہے، یعنی اللہ تعالیٰ کے فرمان ”سُبْحٰنَ الَّذِیْ اَسْرٰی بَعْدِہٖ“ (سورۃ الاسراء آیت: ۱) میں ہے کہ اس نے ”عبد“ کی اضافت اپنی طرف کی ہے جس سے مراد ہمارے وہ رسول ہیں جنہیں ”عُبودیۃ“ میں وہ کمال حاصل ہے جس کے اوپر اس معبود کی طرف کوئی مقام نہیں جس کے اوپر اور کوئی معبود نہیں جس سے اس بات کی طرف اشارہ ملتا ہے کہ آپ کو معراج جسم اور روح کے ساتھ ہوئی کیونکہ ”عبد“ کا لفظ اکٹھے دونوں پر بولا جاتا ہے جیسے پہلے بتایا جا چکا ہے۔

”اِذْ“ کا استعمال چار طرح

”اِذْ“، ”خَفَصْتُ“ کی طرف ہے یہ بات ذہن میں رکھئے کہ یہ ”اِذْ“ چار طریقوں سے استعمال کیا جاتا ہے ایک یہ کہ یہ گزشتہ زمانے کا اسم ہو اور اس وقت کبھی تو طرف ہوتا ہے جسے ”فَقَدْ نَصَرَهُ اللّٰهُ اِذْ اَخْرَجَهُ الَّذِیْنَ کَفَرُوْا“ (سورۃ التوبہ آیت: ۴۰) کبھی مفعول سے بدل ہوتا ہے جیسے ”وَ اِذْ کُرِفِی الْکِتٰبِ مَرِیْمَ اِذْ اَنْتَبَدْتُ“ (سورۃ مریم آیت: ۱۶) کبھی مفعول بہ ہوتا ہے جیسے ”وَ ذُکِّرُوْا اِذْ اَنْتُمْ قَلِیْلٌ“ (سورۃ الانفال آیت: ۲۶) اور کبھی اسم زمان کا مضاف الیہ ہوتا ہے جیسے ”یَوْمَئِذٍ“۔

دوسرے یہ کہ آئندہ زمانے کا اسم ہوتا ہے جیسے ”یَوْمَئِذٍ تَحَدِّثُ اَخْبَارَهَا“ (سورۃ الزلزلة آیت: ۴)۔

تیسرے یہ ”مفاجأة“ (اچانک کام) کیلئے ہوتا ہے جیسے ”خَرَجْتُ إِذْ زَيْدٌ قَائِمٌ“ (میں نکلا تو اچانک زید کو کھڑا دیکھا) لیکن یوں کم آتا ہے۔

چوتھے یہ کہ تعلیل (سبب بتانے) کیلئے آتا ہے جیسے ”لَنْ يَنْفَعَكُمْ الْيَوْمَ إِذْ ظَلَمْتُمْ“ (سورۃ الزخرف، آیت: ۳۹) (آج کسی صورت میں فائدہ نہ دے گا کہ تم نے ظلم کیا ہے)۔

یہاں اس کا استعمال اول سے اول کیلئے ہوا ہے لیکن جس نے اسے تعلیل کیلئے بنایا ہے تو اس نے تسلی بخش کام نہیں کیا۔

”نودیت“ فعل ماضی مجہول ہے اور ”نداء“ سے خطاب کا صیغہ ہے جس کا معنی کسی کی توجہ مانگنا ہے یہاں آواز اللہ کو دی جا رہی ہے اور یہ اس روایت کی بناء پر کہا ہے جس میں اللہ تعالیٰ نے حضور ﷺ سے اس رات فرمایا تھا: ”ادن يا محمد“، ”اے محمد (ﷺ)! آگے آ جاؤ“ آگے آ جاؤ“۔

”بالرفع“ کا معنی ہے: ”جب اللہ تعالیٰ نے آپ کو اوپر منگوا یا تو اس کے ساتھ ہی“ تو ”الرفع“ سے مراد اس کا لغوی معنی ہے، یعنی ”اٹھانا“ نحوی معنی مراد نہیں (پیش کا آنا)۔

”مِثْلَ“ (نصب سے) مصدر محذوف کی صفت ہے اور مفعول مطلق بن کر منصوب ہے۔

”المفرد“ کا معنی ہے: اپنی قوم میں تنہا۔

”الْعَلَمُ“ (دونوں زبروں سے) کا معنی ہے: ”بلند“ یہاں بلندی کے معنی اور اپنی جنس کی ساری چیزوں سے نکھرا ہونے میں تشبیہ ہے۔

شعر سے حاصل ہونے والا معنی یہ ہے: تم نے ایسا کیا ہے کہ انبیاء علیہم السلام اور صوفیہ کرام کے مقامات کو اس اضافت اور نسبت کی بناء پر بالکل نیچے چھوڑ دیا ہے جو رب کریم کی طرف ہے اور پھر اس شرافت کی نسبت پر جو تمہاری خالق عظیم کی طرف اس وقت ہوئی جب اللہ تعالیٰ نے اپنے فضل و کرم سے تمہاری توجہ اپنی طرف یوں کرائی کہ تمہیں سب لوگوں سے ایسے نکھارا جیسے کوئی امتیازی اور نکھرے لوگوں کو یوں کہہ کر تعظیم اور عزت سے طلب کرتا ہے کہ ”يا هذا الرجل“ (اے پیارے بندے!)۔

یاد رہے کہ اس شعر میں علم بدیع کی انوکھی بات آگئی ہے جسے ”صنعة مراعاة النظير“ کہتے ہیں جس کا مطلب ہے: ایک چیز اور اس کے مناسب چیزیں تضاد پیدا ہوئے بغیر اکٹھا کر دینا کیونکہ

حضرتِ ناظمِ رحمہ اللہ نے یہاں ”خفض“ (زیر دینا اور نیچے کرنا) اضافت (کسی طرف نسبت کرنا اور مضاف کرنا) نداء (آواز دینا اور حرفِ نداء کا استعمال کرنا) رَفَع (اٹھانا اور پیش لگانا) اور ”المفرد العلم“ (لفظ مفرد جو علم اور نام ہے اور اکیلا پہاڑ) (ان میں سے ہر لفظ سے دو دو معنی ہیں۔ ۱۲ چشتی) اور دوسری صفت ہے: ”صنعة الطباق“ جس کا معنی ہے: جملہ میں دو ایسے معنی اکٹھے کرنا جو آپس میں ایک دوسرے کے مقابلے پر ہوں کہ ”خفض“ اور ”رَفَع“ کو اکٹھا کیا ہے۔ اسے علمِ بدیع کی صنعتوں والے جانتے ہیں۔ اللہ رکاوٹوں سے حفاظت میں لینے والا ہے۔



شعر (۱۱۳)

كَيْمَا تَفُوزَ بِوَصْلِ اَيِّ مُسْتَتِرٍ
عَنِ الْعُيُونِ وَسِرِّ اَيِّ مُكْتَتِمٍ

(ترجمہ:) ”آپ کو اتنا قریب لانے کا مقصد ایک تو ایسی ملاقات تھی جو پوشیدہ ہونے کی وجہ سے کسی کو نظر نہ آسکی اور دوسرا یہ کہ آپ کو وہ راز مل سکیں جو بہت ہی چھپے ہوئے تھے۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب زمین سے بلند آسمانوں کی طرف عزت سے آپ کی سیر اور معراج کا بیان کر دیا جس کا اصل مقصد بہت ہی پوشیدہ تھا تو اب نہایت مختصر طریقے سے اس مقصد کو بیان کرنا چاہتے ہیں چنانچہ فرمایا: ”کیما تفوز الخ“۔

حکفین الفاظ

”کئی“ حرف جر ہے جو لام سیئہ کے معنی دیتا ہے ”مَا“ زائدہ ہے اور ”تَفُوزَ“، ”کئی“ کے بعد مقدر ”أَنَّ“ کی وجہ سے منصوب ہے یا اسی ”کئی“ کی وجہ سے منصوب ہے تو پھر ”کئی“، ”أَنَّ“ کے معنی میں ہوگا جس سے پہلے ”لام“ پوشیدہ ہوگی۔ ”تفوز“، ”فوز“ سے نکلا ہے یعنی کامیاب ہونا۔

”بِوَصْلِ“، ”تفوز“ سے متعلق ہے اور ”وَصَلَ“ سے مراد اللہ سے ملاقات اور وصال ہے۔

”اَيِّ مُسْتَتِرٍ“، ”اَيِّ مُسْتَتِرٍ“ کا معنی پوری طرح پوشیدہ ہو جانا ہے۔

”عَنِ الْعُيُونِ“، ”مستتر“ سے تعلق رکھتا ہے اور ”عُيُونِ“، ”عَيْنِ“ کی جمع ہے یعنی ماتھے

کی آنکھ تاہم یہاں اس سے مراد سب کی ساری آنکھیں ہیں جن میں فرشتوں اور انبیاء علیہم السلام کا آنکھوں سے چھپنا بھی شامل ہے۔

”سِرِّ“ (زیر سے) ”وَصَلَ“ پر معطوف ہے اور ”اَيِّ مُكْتَتِمٍ“ کا معنی ”اَيِّ مُسْتَتِرٍ“ یعنی

بہت پوشیدہ ہے۔

پھر یاد رہے کہ ناظم کے قول ”بِوَصْلِ“ میں حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کے اپنے پروردگار کی

زیارت کرنے اور اس سے راز و نیاز کی باتیں کرنے کی طرف اشارہ ہے۔

حضور ﷺ نے اللہ کو کس طرح دیکھا؟

علماء کا اس بارے میں اختلاف ہے کہ حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام نے معراج کی رات اپنے پروردگار کو دل کی آنکھوں سے دیکھا تھا یا سر کی آنکھوں سے؟ تو کچھ نے کہا ہے کہ آپ کی آنکھیں دل میں رکھ دی گئی تھیں چنانچہ آپ نے دل ہی کی آنکھوں سے دیکھا تو پھر اللہ تعالیٰ کے حضور ﷺ سے فرمان ”مَا كَذَبَ الْفُؤَادُ مَا رَأَى“ (سورۃ النجم آیت: ۱۱) کا معنی یہ ہوگا کہ ”دل نے اسے جھٹلایا نہیں جسے دل نے دیکھا“۔

کچھ حضرات نے کہا ہے کہ آپ نے انہی آنکھوں سے دیکھا کیونکہ حضور ﷺ نے فرمایا ہے کہ ”اللہ تعالیٰ نے حضرت موسیٰ کو کلام عطا فرمائی اور مجھے رؤیۃ“ یعنی دیکھنا (کنز العمال، کتاب القیامۃ، جلد ۱۴ صفحہ ۱۹۱، رقم الحدیث: ۳۹۲۰۰) اور یہ بھی فرمان ہے کہ ”میں نے اپنے پروردگار کو بہت اچھی صورت یعنی صفت میں دیکھا“ (سنن ترمذی، کتاب التفسیر، باب من سورۃ ص، جلد ۵ صفحہ ۱۵۹، رقم الحدیث: ۳۲۲۵)۔

صاحبِ کواشی کا عندیہ

اس پر کواشی کے مصنف نے کہا ہے کہ یہ دلیل نہیں بنتی کیونکہ جائز ہے کہ ناظم نے دل سے یوں دیکھنا مراد لیا ہو کہ اسے دوسروں سے زیادہ معرفت و پہچان عطا فرمادی۔

علامہ حقی کی تحقیق

علامہ حقی اس کے متعلق تفسیر روح البیان میں فرماتے ہیں: فقیر کہتا ہے کہ ”رؤیۃ“ کو ”کلام“ کے مقابلے میں لانا، آنکھ سے دیکھنا بتاتا ہے کیونکہ حضرت موسیٰ علیہ السلام نے ”دیکھنے“ کا سوال کیا تو انہیں روک دیا گیا تو اس کا مطلب حضور ﷺ کو اس بارے میں فضیلت و مرتبہ دینا ہے جس سے حضرت موسیٰ علیہ السلام کو منع کر دیا گیا اور یہ سر کی آنکھوں سے دیکھنا تھا اور پھر اس میں تو شک ہی نہیں کہ دل سے دیکھنے میں تو سارے انبیاء علیہم السلام بلکہ اولیاء بھی شامل ہیں اور یہ بات تو درست ہے کہ حضرت موسیٰ علیہ السلام نے اپنے پروردگار کو اس وقت اپنے دل کی آنکھ سے دیکھا تھا جب طور پر غشی میں گر گئے تھے اور اس سے زیادہ معرفت کا معنی لینا فائدہ مند نہیں۔ (انتہی)

کچھ علماء نے کہا ہے کہ اللہ تعالیٰ نے آیت میں حضور ﷺ کا دل سے دیکھنا مراد لیا ہے مگر آنکھ سے دیکھنا ذکر نہیں کیا کیونکہ آنکھ سے دیکھنا وہ راز ہے جو اللہ اور اس کے محبوب ہی کو معلوم ہے چنانچہ حضرت ناظم نے ”وَسِرِّ الْخ“ کہہ کر اسی طرح اشارہ کیا ہے۔

اس ساری بات کا نچوڑ یہ ہے کہ ہم رسول اللہ ﷺ کے آنکھ اور دل دونوں سے دیکھنے کی بات کریں گے کیونکہ حضرت امام مسلم نے مسلم شریف میں لکھا ہے کہ آپ نے فرمایا: میں نے اپنے پروردگار کو اپنی آنکھوں اور دل سے دیکھا ہے لیکن ہم نہیں جان سکتے کہ دیکھنے کی حالت کیسی تھی۔

پھر ناظم کے قول ”وسرّ ائی مکتّم“ میں ایسے رازوں کی طرف اشارہ ہے جنہیں حضرت محمد ﷺ کے علاوہ کوئی بھی نہیں دیکھ سکتا جیسے کہ اس فرمان میں ہے: ”فاوحی الی عبدہ ما اوحی“ چنانچہ کچھ فضلاء فرماتے ہیں کہ اللہ تعالیٰ نے وحی کئے گئے رازوں میں سے کچھ کو مخلوق سے اس بناء پر چھپا رکھا ہے کہ یہ آپ کی خاص محبت، معرفت اور مرتبوں کی بلندی ہے کیونکہ دوستوں کے درمیان دونوں جانب سے آپس میں کچھ ایسے راز و نیاز ہوتے ہیں کہ ان کے علاوہ انہیں کوئی بھی جان نہیں سکتا۔ (انتہی) چنانچہ ایک شاعر نے کہا ہے:

”رازوں کو صرف سمجھدار ہی چھپا سکتا ہے کیونکہ راز اچھے لوگوں کے ہاں چھپا ہوا ہی ہوتا ہے اور میرے پاس بھی راز ایسے گھر میں ہے کہ جسے تالا لگا ہوا ہے جس کی چابی گم ہو چکی اور وہ بالکل بند ہے۔“

ایک اور شاعر کہتا ہے:

”دوستوں کے درمیان پردے میں ایسے راز ہوتا ہے جسے بات اور قلم سے بتانا ممکن نہیں، یہ وہ راز ہے کہ لوگوں کو جس میں مقابلے کے طور پر محبت پائی جاتی ہے، یہ وہ نور ہوتا ہے کہ تیرے کے سمندر میں حیران رہتا ہے۔“

چنانچہ کچھ اہل حال فرماتے ہیں کہ اگر ان رازوں میں سے پہلوں اور پچھلوں کو ایک لفظ بھی بتا دیا جائے تو ایسے راز کے بوجھ سے سب مرجائیں جو حق تعالیٰ کی طرف سے اپنے خاص بندے کے دل پر اترے، انہیں صرف مصطفیٰ ﷺ ہی اٹھا سکتے ہیں جنہیں اللہ تعالیٰ نے ربانی، ملکوتی اور لاہوتی طاقتیں دے رکھی ہیں اور اگر ایسا نہ ہوتا تو ان میں سے ایک ذرہ بھی اٹھایا نہ جاسکتا کیونکہ یہ غیب کی عجیب و غریب خبریں اور ازلی راز ہیں کہ ان میں سے ایک لفظ بھی معلوم ہو جائے تو اللہ کے سارے حکم ہی بے کار ہو جائیں، روئیں اور جسم ختم ہو جائیں، رسمیں نہ رہیں اور عقلوں کے ساتھ علوم بھی ڈگمگا جائیں۔

اللہ نے آپ کو کون سی وحی فرمائی؟

بعض مفسرین کا کہنا ہے کہ اس رات حضور ﷺ کو جو کچھ بتایا گیا، تین قسم کا تھا، ایک تو آپ نے لوگوں تک پہنچا دیا جو اللہ کے حکم اور شریعت کے مسئلے تھے، ایک وہ جو خاص لوگوں کو بتائے، یہ اللہ کی معرفتوں سے تعلق رکھتے ہیں اور ایک وہ تھے جو خاص لوگوں میں سے بھی خاص لوگوں تک پہنچائے، یہ ہر چیز کی حقیقت اور ذوق و شوق سے پڑھے جانے والے علموں کے نتیجے ہیں اور ایک وہ دوسری قسم ہے جو آپ ہی سے تعلق رکھتی ہے اور آپ ہی کے لئے ہے اور وہ ایسا خاص راز ہے جو ان کے اور اللہ کے درمیان ہے۔



شعر (۱۱۴)

فَحَزَّتْ كُلَّ فِخَارٍ غَيْرَ مُشْتَرِكٍ
وَجُزَّتْ كُلَّ مَقَامٍ غَيْرَ مُزْدَحِمٍ

(ترجمہ:) ”چنانچہ آپ نے عزت کا ہر کام یوں کر لیا کہ کوئی دوسرا اس میں شامل نہ ہو سکا اور ہر مقام حاصل کرنے میں آپ کو کوئی بھی مشکل پیش نہ آئی۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے معراج کا آخری سبب یعنی اللہ کی زیارت اور آپ کا وہ راز حاصل کرنا بتا دیا جسے اولیاء انبیاء اور آسمانوں میں روشن ستاروں کی طرح رہنے والے فرشتے بھی نہ جانتے تھے تو اب وہ فضائل بتانا چاہتے ہیں جو اس ملاقات کے صلے میں حاصل ہوئے اور اُمت کو مزے اور خوشیاں دینے کے علاوہ ان کی دنیاوی مصیبتیں دور کرتے اور آخرت میں زبردست عذاب سے بچاتے ہیں چنانچہ فرمایا: ”فحزت کلّ مقام الخ۔“

تحقیق الفاظ

فاء وضاحت بتانے اور بات پر بات کرنے کیلئے ہے۔ ”حُزَّتْ“، ”قُلَّتْ“ کی طرح خطاب کا صیغہ ہے ”حَازَ“ سے یعنی جمع کر لئے اور یہ خطاب نبی کریم ﷺ سے ہے یعنی آپ نے اکٹھے کر لئے۔ ”کَلَّ“ (نصب سے) ”حزت“ کا مفعول ہے۔

”فخار“ (فاء کی زیر سے) وہ فضائل، فواضل اور شمائل جن کے ذریعے کوئی فخر کرے۔

”غیر“ (نصب سے) ”حزت“ کے فاعل سے حال ہے یا یہ ”کَلَّ“ کی صفت ہے اور مجرور اس بناء پر ہو سکتا ہے کہ ”فخار“ کی صفت ہو۔ ”جُزَّتْ“ کا ”حُزَّتْ“ پر عطف ہے یہ لفظ جیم اور زاء سے ہے ”جواز“ مصدر سے جیسے پہلا حاء اور زاء سے ہے ”حَوَزَ“ مصدر سے۔ ”جُزَّتْ“ کا معنی ہے گزر گئے، چلے گئے اور آپ آگے نکل گئے۔

”کَلَّ مقام“، ”کَلَّ فخار“ کی طرح ہے اور ”غیر مزدحم“، ”غیر مشترک“ کی طرح ہے اور ”المزدحم“، ”المشترک“ کی طرح ہے کیونکہ یہ دونوں ہی مفعول کے صیغے ہیں جو مصدر کا معنی رکھتے ہیں چنانچہ ”مُشْتَرِكٌ“ کا معنی ”اشتراک“ اور ”مُزْدَحِمٌ“ کا معنی اژدحام ہوا جس کا معنی اکٹھا ہونا ہے۔

حجاب ذہب اور حجاب لؤلؤ تک رسائی

ایک فاضل فرماتے ہیں کہ ”کل فخر غیر مشترك“ سے مراد وسیلہ بلند درجہ کوثر بڑی شفاعت، مقام محمود اور ابھرا ہوا جھنڈا ہے جبکہ مقام ”غیر مزدحم“ سے مراد مقام محبت، ختم نبوت، عام ہونے والی رسالت وغیرہ ہے اور اس کے ساتھ ساتھ اسراء کی حدیث میں رسول اللہ ﷺ کی اس روایت کی طرف اشارہ ہے جس میں آپ نے فرمایا تھا کہ میں آگے بڑھا، جبریل میرے پیچھے تھے جو مجھے سونے کے پردے تک لے گئے، انہوں نے دروازہ کھٹکھٹایا تو پوچھا گیا کہ کون ہو؟ انہوں نے کہا: میں جبریل ہوں اور میرے ساتھ محمد (ﷺ) ہیں، جس پر فرشتے نے کہا: اللہ اکبر! اور پھر پردے کے نیچے سے اپنا ہاتھ نکال کر مجھے اٹھاتے ہوئے اپنے سامنے بٹھالیا، یہ سب کچھ پل بھر میں ہو گیا حالانکہ پردے کی موٹائی کو پار کرنا چاہیں تو پانچ سو سال کا عرصہ لگ جائے، پھر کہنے لگا کہ اے محمد (ﷺ)! آگے ہو جائیے! میں آگے ہوا تو لمحہ بھر میں وہ فرشتہ مجھے حجاب لؤلؤ (موتی کا پردہ) پر لے گیا اور دروازہ کھٹکھٹایا، فرشتے نے پردے کے پیچھے سے پوچھا کہ یہ کون ہیں؟ تو اس فرشتے نے کہا کہ سونے کے پردے پر مقرر ہوں اور میرے ساتھ محمد (ﷺ) ہیں جس پر اس نے اللہ اکبر کہتے ہوئے پردے کے نیچے سے ہاتھ نکال کر مجھے اٹھایا اور اپنے سامنے کر لیا چنانچہ میں یونہی ایک پردے سے دوسرے پردے تک جاتا رہا اور فرشتے نے مجھے ستر پردوں میں سے پار گزار دیا جن میں سے ہر پردے کی موٹائی پانچ سو برس کی راہ تھی، پھر سبز رنگ کا ایسا ”رَفْرَف“ میرے قریب کیا کہ جس کی روشنی سورج کی روشنی سے کئی گنا زیادہ تھی، مجھے اس رفر ف پر بٹھا دیا گیا، پھر اٹھایا تو میں عرش تک جا پہنچا جہاں میں نے ایک عجیب معاملہ دیکھا، پھر عرش سے میرے لئے ایک قطرہ گرا جو میری زبان پر آگیا، وہ ایسا میٹھا تھا کہ مزہ لینے والے کسی نے بھی اس سے میٹھی چیز کا مزہ نہ لیا ہوگا چنانچہ اسی کی وجہ سے اللہ نے مجھے پہلوں اور پچھلوں کی ہر ہر بات بتادی۔ (الحديث)



شعر (۱۱۵)

وَجَلَّ مِقْدَارُ مَا وُلِّيتَ مِنْ رُتَبٍ
وَعَزَّ إِذْرَاكَ مَا أُولِيتَ مِنْ نِعَمٍ

(ترجمہ:) ”اور جن جن مرتبوں کا آپ کو والی بنایا گیا ان کا حساب لگائیں تو بہت زیادہ تھے اور جو نعمتیں آپ کو عطا کی گئیں، وہ کسی کے علم میں بھی نہیں آ سکتیں۔“

جب معراج کی رات میں ہمارے رسول ﷺ اور ہمارے پروردگار کے درمیان بڑے راز تھے جو نیک اور صالح لوگوں کی نظروں سے اتنے اوجھل تھے کہ اس رات میں ہونے والے واقعات کو بیان کرنے والے ان عظیم کاموں کے بیان سے عاجز ہیں تو حضرت ناظم نے بھی ارادہ کیا کہ ان سے اپنی عاجزی یوں دکھائے اور بتائے کہ یہ بہت بڑے کام تھے اور یہ بھی کہ دونوں کے درمیان ہونے والے ان رازوں اور باریکیوں کو پوری مخلوق میں سے کوئی بھی نہیں جانتا چنانچہ فرمایا: ”وجل مقدار الخ“۔

تحقیق الفاظ

واو استیناف (نئی بات شروع کرنا) کیلئے ہے۔ ”جَلَّ“ کا معنی عظیم ہونا، ”مقدار“ (رفع سے) ”جَلَّ“ کا فاعل ہے۔ ”وُلِّيتَ“ ماضی مجہول خطاب کا صیغہ ہے ”وَلَّاهُ“ سے یعنی اسے والی بنایا۔

”مِنْ رُتَبٍ“، ”مَا“ کا بیان ہے، یہ ”رتبہ“ کی جمع ہے۔ ”عَزَّ“ کا ”جَلَّ“ پر عطف ہے جس کا معنی تنگ ہونا اور کام کا کبھی کبھار ہونا ہے۔

”إِذْرَاكَ“ کا معنی کسی شے کو گھیرے میں لینا ذاتی اور صفاتی طور پر۔

”أُولِيتَ“ بھی ماضی مجہول خطاب کا صیغہ ہے لیکن ”أَوْلَّاهُ“ سے ہے جس کا معنی ”اسنے اسے عطا کیا“ ہے اور معنی بنتا ہے: جو آپ کو عطا کیا گیا۔

”مِنْ نِعَمٍ“، ”مَا“ کا بیان ہے، نون پرزیر اور عین پرزیر ”نعمة“ کی جمع ہے۔

”مَا أَوْحَى“ میں کیا تھا؟

حضرت ناظم کے قول ”ما وُلِّيتَ مِنْ رُتَبٍ“ میں یہ اشارہ ہے کہ حضور ﷺ قیامت کے دن

سب کی شفاعت کے والی و مالک ہوں گے کیونکہ یہ مرتبہ انہیں معراج کی رات مل گیا تھا اور یونہی اس

رات ملنے والی نعمتوں میں سے ”ما اوحی الیہ“ بھی ہے جس میں ہے کہ جنت سارے انبیاء علیہم السلام پر اس وقت تک حرام ہوگی جب تک آپ اس میں تشریف نہ لے جائیں گے اور کسی اُمت کا بھی اس میں داخلہ اس وقت تک حرام ہوگا جب تک آپ کی اُمت اس میں چلی نہ جائے گی اور پھر آپ کیلئے اللہ کا فرمان تھا کہ آپ نہ ہوتے تو میں آسمانوں کو پیدا نہ کرتا (کشف الخفاء للعجلونی، جلد ۲ صفحہ ۱۳۸) اور یونہی آپ کو اس میں جبروتی اور غالب رہنے والی قوت دی گئی جس کے ذریعے آپ دشمن لوگوں کو ہلاک کر سکیں وغیرہ ایسے واقعات ہیں جنہیں قلم لکھ نہیں سکتی۔

ناظم کے قول ”ما اولیت من نعم“ میں اس طرف اشارہ ہے کہ اللہ نے آپ کو اس رات پہلوں اور پچھلوں کے علم عطا فرمادینے آپ کی اُمت کو ساری اُمتوں سے بہتر بنایا اور اُمت کو نصیحت فرمادی کیونکہ حضور ﷺ بتاتے ہیں کہ معراج کی رات اللہ تعالیٰ نے میری اُمت کے بارے میں کئی باتیں فرمائیں جن میں سے ایک یہ کہ میں ان سے کل کا کام آج کرنے کو نہیں کہوں گا جبکہ وہ مجھ سے کل کی روزی مانگیں گے دوسری یہ کہ میں ان کی روزی کسی اور کو نہ دوں گا جبکہ یہ دوسروں کیلئے کام کریں گے تیسری یہ کہ وہ میری روزی کھا کر میری بجائے دوسروں کا شکر کریں گے میرے ساتھ خیانت کریں گے لیکن مخلوق سے صلح رکھیں گے چوتھی یہ کہ عزت تو میری ہے اور میں ہی عزت دیتا ہوں جبکہ وہ میرے علاوہ دوسروں سے عزت چاہیں گے اور پانچویں یہ کہ میں نے دوزخ تو ہر کافر شخص کیلئے پیدا کی ہے لیکن وہ اس میں داخل ہونے کی کوشش کریں گے اور آپ ان اُمتیوں سے فرمادیتے ہیں کہ اگر یہ کسی کے احسان کی وجہ سے اس کی بات مانیں گے تو پھر احسان کرنے میں ان سے بہتر ہوں کیونکہ میں انہیں بہت ساری نعمتیں دینے والا ہوں اور یہ کہ اگر تمہیں آسمان و زمین والوں سے کوئی ڈر ہوگا تو میں سنبھالوں گا کیونکہ میں ہی سنبھال سکتا ہوں اگر تم کسی سے اُمید لگانا چاہو تو بہتر میں ہوں اگر کسی کے ستانے پر تمہیں شرمندگی ہو تو یہ مجھ سے زیادہ کسی سے نہیں ہونی چاہیے کیونکہ ستانا تمہارا کام جبکہ معافی دینا میرا کام ہے اگر کسی کی خاطر مال و جان قربان کرنا چاہو تو یہ میرا حق ہے کیونکہ میں تمہارا معبود ہوں اور یونہی اگر تم کسی کو اس کے وعدے کی بناء پر سچا کرنا چاہو تو یہ بھی میرا حق ہے کیونکہ میں ہی تو سچا ہوں۔

یونہی اللہ تعالیٰ نے حضور ﷺ سے فرمایا کہ اے محمد (ﷺ)! میں تمہاری اُمت کو زیادہ مال نہیں دوں گا کہ کہیں قیامت کے دن ان کے حساب میں دیر نہ لگ جائے اور ان کی عمریں لمبی نہیں

کروں گا کہ کہیں ان کے دل سخت نہ ہو سکیں، میں انہیں اچانک موت نہ دوں گا کہ کہیں وہ توبہ کئے بغیر دنیا سے نہ چلے جائیں اور انہیں دنیا میں آخری وقت میں لاؤں گا کہ انہیں قبروں میں دیر تک قید نہ رہنا پڑے۔

روح البیان تفسیر القرآن، علامہ اسماعیل حقی رحمہ اللہ کی کتاب میں یونہی لکھا ہے جو کشف و عرفان والے ہیں۔



شعر (۱۱۶)

بُشْرَى لَنَا مَعْشَرَ الْإِسْلَامِ إِنَّ لَنَا
مِنَ الْعِنَايَةِ رُكْنًا غَيْرَ مُنْهَدِمٍ

(ترجمہ:) ”اے مسلمان ساتھیو! ہمیں اللہ کی مہربانی سے خوش ہونے کا حق ہے کہ ہمیں ایک ایسا سہارا مل گیا ہے جو ڈولے گا نہیں۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب اس قصہ کے اوّل سے لے کر اب تک میں وہ کچھ بتا دیا جس سے آپ کے سب سے افضل و اعلیٰ ہونے کا پتہ چلتا ہے آپ کے مرتبے اور درجے بتا دیئے اور یہ بتا دیا کہ آپ کو بہت زیادہ نعمتیں راز اور بہت سے الفاظ مبارکہ ملے تو گویا کسی کہنے والے نے کہا کہ کیا ان نعمتوں میں سے آپ کی اُمت کو بھی کچھ ملا ہے اور آپ کے معراج سے انہیں کچھ فائدہ پہنچا ہے حالانکہ آپ ان پر کرم فرمانے والے ہیں تو آپ نے انہیں خوشی و بشارت سنائی ہے اور وہ نعمت بتائی ہے جو انہیں اس معراج سے ملی ہے چنانچہ فرمایا: ”بشری لنا الخ“۔

تحقیق الفاظ

”بشری“ یا تو محذوف مبتداء کی خبر ہے کہ یوں ہے: ”هذه القصة بشري“۔ ”لنا“ صفت ہے یا یہ مبتداء ہے اور وہ یوں کہ ”خوشی ثابت ہوئی“ یا ”بشری“ مبتداء اور ”لنا“ اس کی خبر ہے اس صورت میں اس پر اعتراض ہو سکتا ہے کہ ”بشری“ تو نکرہ ہے اور نکرہ مبتداء نہیں بن سکتا جس کا جواب یہ ہے کہ اس کی خصوصیت موجود ہے کیونکہ اس کی صفت محذوف ہے اصل یوں ”بشری عظیم“ (بڑی خوشی) یا یہ معنی کے لحاظ سے فاعل ہے اور وہ یوں ”جو بشارت و خوشی ثابت ہے“۔

”بشری“ کا معنی خوشی ہے۔ ”مَعْشَرَ“ (نصب سے) یہ منادئ ہے یا اس میں خصوصیت ہے جس کی وجہ سے اس پر نصب ہے جیسے حدیث پاک میں آیا ہے کہ ”نَحْنُ مَعَاشِرُ الْأَنْبِيَاءِ لَا نُورَثُ“ (کنز العمال، کتاب الفہائل، جلد ۱۲ صفحہ ۲۲۰، رقم الحدیث: ۳۵۵۹۵ (بالفاظ مختلفہ)) (ہم جیسے خاص نبیوں کا کوئی وارث نہیں بن سکتا)۔

”مَعْشَرَ“ کا مفہوم

”مَعْشَرَ“ کا معنی جماعت ہے چنانچہ کلیات ابوالبقاء میں ہے: ”كُلُّ جَمَاعَةٍ أَمْرُهُمْ وَاحِدٌ“

فَهُوَ مَعْشَرٌ“ (ہر وہ جماعت جن کے کام ایک جیسے ہوں، وہ معشر ہوتا ہے) اور اسلام کی جماعت کا نام رکھنا صرف اس اُمت کیلئے ہے کیونکہ مسلمان کے نام سے نام رکھنا ان کی خصوصیت ہے، جیسے آگے آ رہا ہے۔

”إِنَّ“ (ہمزہ پر زیر) اس دعوے کا سبب ہے جو پہلے شعر سے سمجھ آیا یعنی وہ بشارت جو صرف ہمیں ہے چنانچہ اس سے قیاس یوں بن جائے گا: اے مسلمانوں کے گروہ! بشارت صرف ہمارے لئے ہے کیونکہ مہربانی کی بناء پر ہمیں وہ سہارا حاصل ہے جو گرنے والا نہیں اور جس کی یہ شان ہوگی تو بشارت اسی کو ہوگی تو نتیجہ صاف ہے۔

”لَنَا“ ظرفِ مستقر مرفوع ہے کہ ”إِنَّ“ کی خبر ہے جس کا اسم آگے رکنا ہے۔

”مِنَ الْعَنَايَةِ“ ظرفِ مستقر منصوب ہے کہ ”رُكْنَا“ سے حال ہے اسے ذوالحال سے پہلے لانے کی وجہ اس کا نکرہ ہونا ہے تاہم اسے ”رُكْنَا“ کی صفت بنانا بہت دور کی بات ہے جو ظاہر ہے۔

اُمت کی خصوصیات

”عَنَايَةِ“ سے مراد لوگوں کے فائدوں کا زیادہ خیال کرنا اور ان پر مہربانی کرنا ہے اور یہ وہ ازلی مہربانیاں ہیں جو انسانوں کو ہمیشہ کیلئے نیک بخت بنا دیتی ہیں اور یہ وہ خصوصیتیں ہیں جو باقی اُمتوں میں پائی نہیں جاتیں۔

- ☆ ان میں سے ایک مالِ غنیمت کا حلال ہونا ہے اس اُمت سے پہلے کسی کیلئے حلال نہ تھیں۔
- ☆ ایک یہ کہ ان کیلئے پوری سر زمین سجدہ کر لینے کی جگہ بنا دی گئی۔
- ☆ ایک یہ کہ ان کیلئے اس زمین کی مٹی پاک کرنے کا وسیلہ بنا دی گئی۔
- ☆ ایک ان میں سے وضو ہے کیونکہ وضو صرف انبیاء علیہم السلام ہی کرتے تھے، اُمتی نہیں کرتے تھے۔
- ☆ ایک یہ کہ ان کیلئے پوری پانچ نمازیں مقرر ہوئیں جبکہ ان کے علاوہ کسی کے لئے نہیں تھیں۔
- ☆ ایک ان میں سے اذان و تکبیر ہے۔
- ☆ ایک بسم اللہ شریف ہے کہ دوسری اُمتوں میں سے کسی پر نہ اُتری۔
- ☆ ایک امام کے پیچھے آمین کہنا۔
- ☆ ایک رکوع جو صرف انہی کیلئے مقرر ہوا۔
- ☆ ایک نماز میں فرشتوں کی صفیں بنانا۔

- ☆ ایک جمعہ کا مقرر ہونا۔
- ☆ ایک دعاء قبول ہونے کی وہ گھڑی جو جمعہ میں ہوتی ہے۔
- ☆ ایک رمضان کی پہلی رات میں اللہ کا ان پر نظر فرمانا اور وہ جس پر نظر فرماتا ہے تو اسے کبھی بھی عذاب نہیں دیتا۔
- ☆ ایک یہ کہ رمضان میں ان کیلئے جنت سجادی جاتی ہے اور اس کی ہر رات میں فرشتے ان کیلئے دعائیں کرتے ہیں اور اس کی آخری رات میں ان کے سارے گناہ بخش دیئے جاتے ہیں۔
- ☆ ایک سحری کھانا اور جلدی افطاری کرنا۔
- ☆ ایک لیلۃ القدر ہے۔
- ☆ ایک یہ کہ مصیبت آنے پر انہیں ”إِنَّا لِلّٰهِ وَإِنَّا إِلَيْهِ رَاجِعُونَ“ کہنا سکھایا گیا ہے۔
- ☆ ایک یہ کہ اللہ نے طاقت سے بڑا اور مجبور کر کے کام لینا ان سے اٹھا دیا ہے۔
- ☆ ایک یہ کہ اللہ تعالیٰ نے دین کے بارے میں ان سے تنگدلی دور کر دی ہے۔
- ☆ ایک یہ کہ اللہ بھول چوک اور بھول کر کام کرنے پر ان کی پکڑ نہیں فرماتا۔
- ☆ ایک یہ کہ مسلمان کا لفظ انبیاء علیہم السلام کے علاوہ صرف انہی پر بولا جاسکتا ہے کسی اور کے امتی پر نہیں۔
- ☆ ایک یہ کہ ان کی شریعت میں انسانی زندگی کیلئے سب کچھ موجود ہے تو یہ سب شریعتوں سے زیادہ مکمل ہے۔
- ☆ ایک یہ کہ گمراہ کرنے والی چیز پر یہ اکٹھے نہیں ہو سکتے۔
- ☆ ایک یہ کہ کسی کام پر اکٹھے ہو جائیں وہ دلیل بن جاتا ہے اور اس پر عمل ضروری ہو جاتا ہے اور پھر کسی مسئلے میں ان کا اختلاف رحمت گنا جاتا ہے (بشرط نیت)۔
- ☆ ایک یہ کہ انہیں تھوڑے عملوں پر ثواب زیادہ ملتا ہے۔
- ☆ ایک یہ کہ طاعون سے ان کیلئے شہادت اور رحمت بنتی ہے جبکہ دوسری امتوں کیلئے عذاب بنتی۔
- ☆ ایک یہ کہ ان میں سے دو کسی شخص کیلئے نیک ہونے کی شہادت دیدیں تو اسے جنت ضرور ملنا ہوتی ہے۔
- ☆ ایک یہ کہ انہیں سند دینے کی ہدایت کر دی گئی ہے (کہ حدیث ”الاسناد من الدین“ آیا ہے)

اور یہ صرف اسی اُمت میں ہے۔

- ☆ ایک یہ کہ انہیں کتابیں تصنیف کرنے کی توفیق ملی ہے۔
- ☆ ایک یہ کہ اقطاب، اوتاد، نُجباء اور ابدال صرف اسی اُمت میں ہوتے ہیں۔
- ☆ ایک یہ کہ اپنی قبروں میں جانے پر گنہگار ہوں گے لیکن ان سے نکلنے پر بے گناہ ہو جائیں گے کیونکہ مؤمنوں کی ان کیلئے بخشش کی دعائیں کرنے پر ان کے گناہ بخش دیئے جائیں گے۔
- ☆ ایک یہ کہ آخرت میں دوسری اُمتوں کی بجائے ان کی قبریں پہلے کھلیں گی۔
- ☆ ایک یہ کہ قیامت کے دن وضو کرنے کی وجہ سے انہیں چمکتے چہروں والے کہا جائے گا۔
- ☆ ایک یہ کہ موقف میں سب سے اونچی جگہ پر ہوں گے۔
- ☆ ایک یہ کہ اعمال نامے انہیں دائیں ہاتھوں میں دیئے جائیں گے۔
- ☆ ایک یہ کہ ان میں سے ستر ہزار حساب و کتاب کے بغیر جنت میں جائیں گے۔
- ☆ ایک یہ کہ ساری اُمتوں سے پہلے انہیں جنت میں بھیجا جائے گا۔

”رکن“ لغت میں کسی شے کے رکن کا مطلب اس کا ایسا مضبوط پہلو ہوتا ہے جس کے نام پر چیز کا نام رکھا جاتا ہے اللہ تعالیٰ فرماتا ہے: ”أَوْ أَوْىٰ إِلَىٰ رُكْنٍ شَدِيدٍ“ (سورۃ ہود آیت: ۸۰) (یا کسی مضبوط کنارے کا سہارا لے) لیکن اصطلاح (علماء کے نزدیک) میں وہ چیز جس کے ذریعے وہ چیز قائم ہوتا ہے، یہاں اس کا معنی لغوی ہے، یعنی سہارا، مقصد یہ کہ ہمارے پاس سہارا اور طاقتور پہلو ہے، یہ حضور ﷺ ہیں اور ان کی شریعت۔

”غیر منہدم“ (نصب سے) ”رکنا“ کی صفت ہے، یہ اسم فاعل کا صیغہ ہے ”انہدام“ سے جس کا معنی زائل ہو جانا ہے۔

معنی یہ ہو گا کہ یہ اپنے منسوخ ہونے کا ڈر نہیں دیتا کیونکہ یہ شریعت اللہ کی مہربانی سے قیامت تک باقی رہے گی۔



شعر (۱۱۷)

لَمَّا دَعَى اللَّهُ دَاعِيَنَا لِطَاعَتِهِ
بِأَكْرَمِ الرُّسُلِ - كُنَّا أَكْرَمَ الْأُمَمِ

(ترجمہ:) ”جب اللہ نے اپنی عبادت پر لگانے کیلئے ہمیں بلانے والے کو ”اکرم الرسل“
(سب رسولوں سے بڑے مرتبے والے) کا نام دے دیا تو پھر ہم ساری اُمتوں میں سے
اکرم یعنی زیادہ عزت والے ہو گئے۔“

جب پہلے شعر میں قیاس کا صغریٰ یعنی ناظم کا قول ”ان لنا من العناية الخ“ نظری یعنی واضح نہ
تھا چنانچہ اسے ثابت کرنے کیلئے فرمایا: ”لَمَّا دَعَى اللَّهُ الخ“ یہ قیاس اس طرح ترتیب پائے گا کہ
”ہمارے پاس ایک مضبوط سہارا موجود ہے کہ جب اللہ نے انہیں اکرم الرسل فرمایا جو ہمیں اللہ کی
طرف بلاتے ہیں تو ہم ”اکرم الامم“ (اُمتوں میں سے زیادہ عزت والے) ہو گئے کیونکہ اللہ کی
مہربانی سے ہمارے پاس نہ گرنے والا سہارا موجود ہے لیکن پہلا مقدمہ تو سچا ہے تو دوسرا بھی ویسا ہی
ہوا۔

تحقیق الفاظ اور ”لَمَّا“ کا استعمال

”لَمَّا“، ”اِذَا“ کے معنی میں ہے اس کے ساتھ لفظی یا معنوی طور پر فعل ماضی آتا ہے اور یہاں
اس کے ساتھ ماضی کا لفظ ہی ملا ہوا ہے اور اس کا جواب فعل ماضی کا لفظ ہی آئے گا جیسے یہاں آیا ہے
یا اس پر اتفاق ہے کہ معنوی ماضی ضرور ہوگی اور کبھی اس کا جواب ماضی ہوتا ہے جس پر فاء لگی ہوتی ہے
اور کبھی یہ جواب جملہ اسمیہ ہوتا ہے جس کے ساتھ ”اِذَا“ ہوتا ہے جو اچانک کا معنی دیتا ہے اور ابن
مالک کے نزدیک اس کے ساتھ فاء ملی ہوتی ہے جبکہ ابن عصفور کے نزدیک اس کے ساتھ فعل مضارع
لگا ہوتا ہے۔

کبھی یہ ”لَمَّا“، ”اِذَا“ کے معنی میں حرف استثناء ہوتا ہے تو پھر جملہ اسمیہ پر داخل ہوتا ہے جیسے
اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: ”اِنَّ كُلَّ لَفْظٍ لَمَّا عَلَيْهَا حَافِظٌ“ (سورۃ الطارق آیت: ۴) یعنی ”اِذَا عَلَيْهَا“
ہے۔ کبھی یہ ”لَمَّا“ فعل بھی ہوتا ہے جیسے ”لَمَّا لَمُّوا“۔
یہ حرف جزم بھی دیتا ہے جبکہ فعل مضارع پر آئے۔

ارشاد میں لکھا ہے کہ اللہ کے فرمان ”تِلْكَ الْقَرْيُ أَهْلَكْنَهُمْ لَمَّا ظَلَمُوا“ (سورۃ الکہف آیت: ۵۹) میں ”لَمَّا“ طرف ہے جو سبب بتانے کیلئے استعمال ہوتی ہے اور اس سے کوئی مقرر وقت مراد نہیں۔ (انتہی) یہاں بھی یونہی آیا ہے۔

”دَعَا“ کا معنی ”نام رکھا“ ہے۔ ”اللہ“ کا لفظ اس کا فاعل ہے ”دَاعِينَا“، ”دَعَا“ کا مفعول ہے، یاء پر سکون ضرورت کیلئے ہے، یہاں ”داعی“ سے ”رہاوی“ ہے اور دعوت دینے کا ذریعہ اور اس سے مراد رسول اللہ ﷺ ہیں۔

”لطاعتہ“ میں لام ”الی“ کے معنی میں ہے اور اس کا تعلق ”داعینا“ سے ہے اور ”طاعة“ کا معنی عبادت ہے اور ضمیر یا تو ”اللہ“ کی طرف جاتی ہے یا ”الداعی“ کی طرف جس سے رسول اللہ ﷺ مراد ہیں جن کی فرمانبرداری اللہ ہی کی فرمانبرداری ہے چنانچہ اسی بناء پر اللہ تعالیٰ نے فرمایا ہے: ”مَنْ يُطِيعِ الرَّسُولَ فَقَدْ أَطَاعَ اللَّهَ“ (سورۃ النساء آیت: ۸۰)۔

”باکرم الرسل“ کا تعلق ”دَعَا اللَّهَ“ سے ہے اور اللہ تعالیٰ کی طرف سے حضور ﷺ کا اسم گرامی ”اکرم الرسل“ رکھا جانا صحیح حدیثوں سے ثابت ہے جیسے حضور ﷺ نے فرمایا کہ ”میں اللہ کے ہاں ساری مخلوق سے بہتر ہوں، آدم اور ان کے علاوہ سب میرے جھنڈے تلے ہوں گے“ (مسند ابی یعلیٰ، مسند ابن عباس، جلد ۲ صفحہ ۳۶۸، رقم الحدیث: ۲۳۲۳)۔ تفصیل پہلے گزر چکی ہے۔

”کُنَّا“، ”لَمَّا“ کا جواب ہے ”اکرم الامم“ (نصب سے) ”کُنَّا“ کی خبر ہے۔ ”الامم“، ”امۃ“ کی جمع ہے اور اس کا معنی جماعت ہوتا ہے کیونکہ ہر امت اپنے نبی کے لیے جماعت ہی ہوتی ہے جبکہ نبی ان کا امام ہوتا ہے۔

حاصل یہ کہ نبی کریم ﷺ کا ”اکرم الرسل“ ہونا ہمارے ”اکرم الامم“ ہونے کا سبب ہے کیونکہ امت تابع ہوتی ہے جبکہ نبی متبوع ہوتا ہے اور تابع کا اکرم ہونا صرف اس بناء پر ہوتا ہے کہ اس کا متبوع اکرم ہے۔

کچھ علماء نے اس قضیہ کا اُلٹ کیا ہے جو ظاہر ہے۔

امت کی ایک اور عظمت

یاد رہے کہ اس امت کے اکرم ہونے پر حضرت ابو نعیم نے حضرت انس رضی اللہ عنہ کے حوالے سے ایک حدیث لکھی ہے کہ رسول اللہ ﷺ نے فرمایا: ”اللہ تعالیٰ نے بنو اسرائیل کے نبی حضرت

موسیٰ علیہ السلام کی طرف وحی فرمائی کہ جو مجھ سے ملنا چاہتا ہے لیکن حضرت محمد ﷺ کو ماننے سے انکار کرتا ہے تو میں اسے دوزخ میں ڈالوں گا۔ انہوں نے عرض کی کہ اے پروردگار! احمد کون ہیں؟ اللہ تعالیٰ نے فرمایا کہ میں نے جتنی بھی خلقت پیدا کی ہے ان سب میں سے وہ میرے ہاں بہترین ہیں، میں نے عرش پر اپنے نام کے ساتھ ان کا نام لکھا ہوا ہے اور یہ اس وقت جب میں نے مخلوق کو پیدا نہیں کیا تھا، جنت پوری مخلوق کیلئے اس وقت تک حرام ہے جب تک وہ اور ان کی اُمت اس میں داخل نہ ہو۔ انہوں نے پوچھا کہ ان کی اُمت کون سی ہے؟ اللہ نے فرمایا کہ وہ ایسے حمد کرنے والے ہیں کہ اوپر چڑھتے اور نیچے اترتے اللہ کی حمد کرتے ہیں اور ہر حالت میں تہبند کو درمیان باندھ کر اس کے کنارے ظاہر کر دیتے ہیں، دن کو روزہ رکھتے ہیں اور رات کو عبادت کرتے ہیں، میں ان کے تھوڑے سے عمل کو قبول کر کے انہیں جنت میں داخل کروں گا کیونکہ وہ ”لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ“ کی گواہی دیتے ہوں گے۔

اس پر حضرت موسیٰ علیہ السلام نے عرض کی کہ اے اللہ! مجھے اس اُمت کا نبی بنا دے تو اللہ تعالیٰ نے فرمایا کہ ان کا نبی انہی میں سے ہوگا، پھر عرض کی کہ مجھے اس نبی کی اُمت میں شامل کر دے۔ اللہ تعالیٰ نے فرمایا کہ تم پہلے آگئے ہو اور انہیں میں بعد میں لاؤں گا، ہاں جلد تجھے اور انہیں میں جنت میں اکٹھا کر دوں گا۔ (حلیۃ الاولیاء لابی نعیم، جلد ۳ صفحہ ۲۲۹، رقم الحدیث: ۴۵۲۴)



آٹھویں فصل:

جہادِ مصطفیٰ ﷺ

شعر (۱۱۸)

رَاعَتْ قُلُوبَ الْعِدَىٰ أَنْبَاءُ بَعْثَتِهِ
كَنْبَاءٍ أَجْفَلَتْ غُفْلًا مِّنَ الْغَنَمِ

(ترجمہ:) ”آپ کے نبی بننے کی خبروں نے دشمنوں کے دلوں میں دھڑکن یوں پیدا کر دی کہ جیسے شیر بے دھیان بکریوں میں گھبراہٹ پیدا کر دیتا ہے۔“

جب حضرت ناظم رحمہ اللہ واقعہ معراج اور اس کے ساتھ آپ کے ملاقات حاصل کرنے چھوٹے موٹے مرتبوں کو طے کرنے سدرۃ المنتہیٰ سے اوپر تک پہنچنے اور مقصد و امیدیں حاصل کرنے سے فارغ ہوئے تو اب آپ کے کچھ غزوات مجاہدوں اور آپ کے صحابہ کرام کی وہ بہادری بتانا چاہتے ہیں جو انہوں نے عبادتوں میں سخت محنت کرنے اور کافروں، سرکشوں کو دور کر کے زمین کو ٹیڑھے اور فساد کرنے والوں سے زمین کو پاک کرنے کیلئے جہاد کر کے دکھائی چنانچہ پہلے کافروں کے اس خوف کا ذکر کیا جو آپ کے نبی بننے کی خبروں نے ان کے دلوں کے اندر رعب کی شکل میں پیدا کر دیا تھا چنانچہ فرماتے ہیں: ”رَاعَتْ قُلُوبَ الْعِدَىٰ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”رَاعَتْ“، ”رَوَّع“ سے ہے، معنی خوف پیدا کرنا ہے۔

”قُلُوبَ الْعِدَىٰ“ (نصب سے) ”رَاعَتْ“ کا مفعول ہے اور یہ ”قَلْبُ“ کی جمع ہے جو

معلومات لینے کی جگہ ہے لیکن معلومات لینے کی حالت معلوم نہیں رہا اسے روح یعنی عقل کی قوت اور نفسِ ناطقہ کہنا تو اس کے بارے میں تلویح میں ہے کہ اس پر دلیل تو کیا شبہ بھی نہیں کیا جاسکتا۔

کبھی یہ ”قَلْبُ“ گوشت کے لوتھڑے پر بھی بولا جاتا ہے لیکن یہاں اس سے مراد پہلا معنی ہے

جو ظاہر ہے۔

”عدی“ (عین پرزیر اور الف مقصورہ) ”عدُو“ کی جمع ہے جیسے ”اعداء“ جمع ہے لیکن اس سے مراد دین کے دشمن یعنی کافر اور مشرک ہیں۔

”انباء“ (رفع سے) ”راعت“ کا فاعل ہے یہ ”نبأ“ کی جمع ہے جس کا معنی خبر دینا ہوتا ہے اور نبی بننے کی خبر اگرچہ ذاتی طور پر واحد ہے مگر اس کے لحاظ سے جمع بنتی ہے جن کی خبر دی گئی کیونکہ وہ بہت سارے ہیں یا خبر دینے والوں کے لحاظ سے جمع ہے یا پھر اس کی جمع مجاز ہے جس میں آپ کی عظمت و شان بنتی ہے۔ اس پر غور کر لو۔

”بِعْتَبِهِ“ مصدر ہے جس کا معنی رسالت و نبوت ہے اور ضمیر حضور ﷺ کی طرف جاتی ہے یعنی آپ کا رسول بننا اور نبوت کا دعویٰ کرنا، ان کے دینوں کو باطل ظاہر کرنا، ان کے دیکھنے میں ان کے بتوں کو توڑنا اس کی وجہ تھا۔

پھر اس گھبراہٹ کی مثل لائے کیونکہ آپ کے دشمن آپ کی نبوت کے اعلان پر بکھرے ہوئے تھے تو فرمایا: ”کِنْبَاءٌ“۔

”النبأ“ شیر کی آواز کو کہتے ہیں ”اجفلت“ کا جملہ ”نبأ“ کی صفت ہے اور یہ ان فعلوں میں سے ہے جن میں بھگانے کا معنی ہوتا ہے تو معنی ہوگا کہ ان خبروں نے انہیں بھگایا، بکھیر دیا اور ان میں گھبراؤ پیدا کیا۔

”غفلا“ (نصب سے) ”اجفلت“ کا مفعول ہے اور ”غفل“ (غین پر پیش) ”غافل“ کی جمع ہے۔

”الغنم“ اسم جنس ہے جو زیادہ اور کم پر بولا جاتا ہے۔

حاصل معنی یہ ہے کہ آپ کی نبوت کی خبروں اور علامتوں نے اہل کتاب اور مشرک دشمنوں کے دلوں کو ایسے ڈرا دھمکا دیا جیسے شیر کی آواز بے خبر بکریوں کو ڈرا دھمکا دیتی ہے اور بڑے رعب سے ان کے مجمع کو بکھیر دیتی ہے۔

اس حدیث میں اشارہ ہے کہ حضور ﷺ کو رعب و دبدبہ کی مدد حاصل تھی کیونکہ صحیح حدیث میں آتا ہے کہ حضور ﷺ نے فرمایا: ”مجھے ایک مہینے کے سفر سے رعب کی مدد دی گئی“ (صحیح البخاری، کتاب التیمم، جلد ۱ صفحہ ۱۳۳، رقم الحدیث: ۳۳۵) ایک حدیث میں دو ماہ کا ذکر ہے کیونکہ یہ ہیبت ان کے دلوں میں

جہاد اور لڑائی کے بغیر پیدا ہو جاتی تھی بلکہ یہ اللہ کی طرف سے تھی چنانچہ وہ دور دور سے آ کر نبی کریم ﷺ کی نبوت کو مان لیتے تھے۔



شعر (۱۱۹)

مَا زَالَ يَلْقَاهُمْ فِي كُلِّ مُعْتَرِكٍ
حَتَّىٰ حَكَّوْا بِالْقِنَا لِحْمًا عَلَىٰ وَضِيمٍ

(ترجمہ:) ”رسول اکرم ﷺ ہر معرکہ جنگ میں کافروں سے جنگ کرتے رہے جس کی

وجہ سے وہ کافر نیزوں پر لٹکے ہوئے گوشت کی طرح لٹک رہے ہوتے۔“

اب حضرت ناظم رحمہ اللہ حضور ﷺ کے جنگی معرکوں اور لشکروں کے ساتھ جہاد اور لڑائی کرنے کے ساتھ ساتھ نیزوں اور تیز تلواروں کے ذریعے ان پر قابو پانے کا بیان کرتے ہوئے فرماتے ہیں: ”ما زال یلقاہم الخ“۔

تحقیق الفاظ

”ما زال“ کا معنی مجازاً ”دام“ ہے۔ ”یلقاہم“، ”لقاء“ سے نکلا ہے جس کا معنی ملاقات کرنا ہے اس کا فاعل حضور ﷺ ہیں، مفعول کی ضمیر ”کفار“ کی طرف جاتی ہے اور ”یلقاہموا“ میں میم کی پیش کو شعر کی ضرورت کیلئے اشباع کر کے پڑھتے ہیں۔

”المعترك“ مفعول کے صیغہ پر ہے جس کا معنی معرکہ اور لڑائی کی جگہ ہے یعنی حضور ﷺ جنگ کی جگہ پر کافروں کا سامنا اس وقت کرتے تھے جب لڑائی کیلئے نکلتے اور پھر ان پر غالب ہو جاتے تھے۔

حضور ﷺ جن جنگوں میں خود لڑے

حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کے وہ غزوے جن میں آپ خود تشریف لے گئے ان کی تعداد انیس ہے جن میں سے نو میں آپ خود بھی لڑے تھے یہ بدر، أحد، مرسیع، خندق، بنو قریظہ، خیبر، حنین، طائف اور فتح مکہ تھے جن میں سے کچھ کا بیان انشاء اللہ آگے آئے گا۔

”حتیٰ“ کا لفظ مقدر سے متعلق ہے اصل عبارت یوں ہے: ”کان یلقاہم فی کل معترك ویقتلہم حتیٰ حکوا“۔ ”حکوا“، ”حکی“ سے ہے جس کا معنی مشابہ ہوئے جیسے شاعر کہتا ہے:

ظَلَمْنَاكَ فِي تَشْبِيهِ صُدْغَيْكَ بِالْمِسْكِ
وَقَاعِدَةُ التَّشْبِيهِ نُقْصَانُ مَا يُحْكِي

”ہم نے تمہاری زلفوں کو کستوری سے تشبیہ دی تو یہ بُرا کیا کیونکہ تشبیہ دینے کا قاعدہ یہ ہے کہ جس کی بات کی جائے (مشبہ) اس میں کمی ہوتی ہے۔“

جمع کی ضمیر ”کفار“ کی طرف جاتی ہے یعنی کفار مشابہ ہوئے۔

”بالقنا“ (قاف کی زبر سے) بمعنی نیزہ اس میں باء سیبہ ہے اور یہاں مضاف محذوف ہے

اصل یوں ہے: ”بسیب ضرب القنا“ (نیزہ مارنے کے سبب)۔

”لحمًا“، ”حکوا“ کا مفعول اور منصوب ہے۔ ”علی وَضَم“ طرف مستقر ہے جو

”لحمًا“ کی صفت ہے۔

”الْوَضَم“ (دونوں زبروں کے ساتھ) کا معنی لکڑی یا وہ لوہا جس سے قصاب گوشت کاٹتا ہے

اسے اس پر لٹکاتا ہے اور توجہ کرنے والے کیلئے اسے چھوڑ دیتا ہے اور اس میں دلچسپی رکھتا ہے۔

شعر کا حاصل معنی یہ ہے کہ: حضور ﷺ ہر معرکے اور لشکر میں اسلام کے دشمنوں کے ساتھ جہاد

کرتے رہے اور آخر کار انہیں زخمی یا قتل کر کے نیزوں کے سروں پر لگا چھوڑا جو اس گوشت جیسے لگتے

تھے جو لکڑی اور لوہے کے کندوں کے اوپر لٹکایا جاتا اور ننگا رکھا جاتا ہے۔

اس میں صحابہ کرام کو قصابوں سے، کافروں کو بکریوں سے، صحابہ کرام کے نیزوں کو قصابوں کے

ہتھیاروں سے تشبیہ دینا پوشیدہ نہیں، اس تشبیہ سے پتہ چلتا ہے کہ خود آپ، آپ کے صحابہ کرام اور

دوسرے ساتھی بہادر تھے جبکہ دشمنوں کے دل ظاہری اور پوشیدہ طور پر انتہائی بزدلی میں تھے اور ان کی

میتیں نہایت ذلت و رسوائی کے ساتھ نیزوں پر لٹکی ہوتی تھیں۔



شعر (۱۲۰)

وَدُّوا الْفِرَارَ فَكَادُوا يَغْبُطُونَ بِهِ
أَشْلَاءَ شَالَتْ مَعَ الْعِقْبَانِ وَالرَّخْمِ

(ترجمہ:) ”ان جنگوں میں کفار بھاگنا پسند کرتے تھے چنانچہ وہ یہ چاہتے تھے کہ گوشت کے ایسے ٹکڑے ہوتے کہ جنہیں عقاب اور مردار خور جانور اٹھالے جاتے۔“
حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب حضور ﷺ کے اللہ کی مہربانی پر نکلنے اور کفار کا مقابلہ کرتے ہوئے انہیں قتل کرنے کا بیان کر دیا تو اب چاہتے ہیں کہ ان غزوات میں ان کی شکست اور دلیری کے باوجود حضور ﷺ کے مقابلہ میں یکے بعد دیگرے بے چین ہو کر ایک دوسرے کے پیچھے بھاگنے کا ذکر کریں۔ چنانچہ فرمایا: ”ودوا الفرار الخ“۔

تحقیق الفاظ

”ودوا“، ”وَدَّ“ سے ہے جس کا معنی محبت ہے، عرب کہتے: ”وَدَّه“ یعنی اس نے اس سے محبت کی یا اس کا معنی آرزو ہے۔ جمع کی ضمیر کافروں کا پتہ دیتی ہے۔

”الفرار“ (نصب سے) ”ودوا“ کا مفعول ہے یعنی کفار حضور ﷺ کے مقابلہ اور جہاد سے بھاگنا پسند کرتے تھے کیونکہ ان میں مقابلہ اور بات چیت کی ہمت ہی نہ تھی۔

”فکادوا“ میں فاء عطف اور ”ودوا“ کی تفسیر کیلئے ہے۔ ”کاد“ افعالِ مقاربہ سے ہے یعنی قریب تھے ”یغبطون“ کا جملہ نصب کے ساتھ ”کاد“ کی خبر ہے جو ”غَبَطَ يَغْبِطُ“ سے ”ضرب يضرب“ جیسا ہے لیکن قاموس میں اسے ”ضرب“ اور ”سمع“ جیسا لکھا ہے۔ اس میں اسم ”غبطہ“ (غین کی زیر سے) ہے اور وہ یہ ہے کہ کوئی شخص دوسرے کی نعمت کو حاصل کرنا چاہے مگر اس کے ہاں سے ختم ہونے کا خیال نہ کرے، کبھی ”غبطہ“ سے اس کو لازم شے مراد لی جاتی ہے جو محبت اور خوشی ہے اور یہاں اس سے مراد پہلا معنی ہی ہے۔ ”غبطہ“ اور حسد کے درمیان فرق آیات کی بحث سے ذرا پہلے گزر چکا ہے تو اسے وہاں سے دیکھ لو۔

”بہ“ کا تعلق ”یغبطون“ سے ہے۔ باء سببیہ ہے ضمیر ”الفرار“ کی طرف جاتی ہے۔
”اشلاء“ (نصب سے) ”یغبطون“ کا مفعول ہے یہ ”اشیاء“ کی طرح ہے ”شَلُو“ کی

جمع ہے جس کا معنی عضو ہے۔

”شالت“ کا معنی اوپر اٹھے ہے ”شالت“ کا جملہ محل کے لحاظ سے منصوب ہے کہ یہ ”اشلا“ کی صفت ہے تو اس کی ضمیر اسی کی طرف جاتی ہے اور ”شالت“ کے فاعل سے حال بھی ہے یہ ”شالت“ کی ظرف نہیں بن سکتی جیسے قصیدہ کی شرح کرنے والوں میں سے کچھ نے کہا ہے کیونکہ وہ کہتے ہیں کہ کلمہ ”مَع“ تین طرح سے استعمال کیا جاتا ہے حال کے معنی میں جیسے ”جاء نی زید مع عمرو“ ظرف کے معنی میں یا ”بعد“ اور ”عند“ کے معنی میں آتا ہے اور یہاں ان دونوں میں سے کوئی بھی نہیں لیا جاسکتا چنانچہ یہ حال ہوگا ظرف نہیں ہوگا جو ظاہر ہے۔

”العقبان“ (عین پرزیر) ”عقاب“ کی جمع ہے یہ شکاری جانوروں میں ایک جانور ہے جسے پکڑ کر جانوروں کا شکار کیا جاتا ہے۔

”الرَّخْم“ (دونوں حرفوں پرزیر) جمع ”رخمہ“ ہے یہ وہ جانور ہے جو مردار کھاتا ہے (گدھ) اور کبھی مرغی کو بھی اٹھالے جاتا ہے اور جس نے کہا کہ ”رخم“ جنس ہے جس کا واحد ”رخمہ“ ہے تو وہ لغات کی کتابوں سے ناواقف ہے اور پختہ علماء اسے جانتے ہیں۔

شعر کا حاصل معنی یہ ہے: شرک والے اور سرکش کافروں نے جنگ میں شکست کھا کر چاہا کہ حضور ﷺ کے مقابلہ سے بھاگ جائیں تو وہ بہت زیادہ خوف اور پیٹ کی نفرت پر گوشت کے ان ٹکڑوں کے مطابق ہو جائیں جنہیں مردار خور جانور اٹھا کر لے جاتے ہیں مقصد یہ تھا کہ وہ نبی کریم ﷺ کے مقابلے میں جہاد سے جان چھڑالیں۔



شعر (۱۲۱)

تَمْضَى اللَّيَالِيَّ وَلَا يَدْرُونَ عِدَّتَهَا
مَا لَمْ تَكُنْ مِنْ لَيَالِي الْأَشْهُرِ الْحُرْمِ

(ترجمہ:) 'ان کفار کا حال یہ ہوا ہے کہ راتیں گزر رہی ہیں لیکن وہ جنگ سے روکے گئے عزت والے مہینوں (رجب ذیقعد ذی الحجہ اور محرم) کی راتوں کے علاوہ دوسری راتیں گننا نہیں جانتے' (ان کے ہوش اڑ چکے تھے)۔

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب کفار کے لڑائی کے خوف سے شکست کھا کر ان کا بھاگنا بتا دیا تو اب یہ بتانا چاہتے ہیں کہ ان میں اب تک خوف باقی ہے تو وہ ہر حال میں ان سے الگ اور دور نہیں اور ان کا ڈر انہیں اس حال تک لے گیا ہے کہ وہ مہینوں اور سالوں کی گنتی کرنا اس وقت تک نہیں جانتے جب تک چار خاص مہینوں میں وہ خاص دن نہیں آجاتے (جن میں جنگ منع ہے) چنانچہ فرمایا:

”تمضی الیالی الخ“۔

تحقیق الفاظ

”تمضی“ کا معنی گزرتی ہیں اور ”الیالی“، ”تمضی“ کا فاعل ہے اور اس ”لیالی“ میں مؤنث کو مذکر پر غالب کیا گیا ہے یعنی دنوں پر کیونکہ اگرچہ مؤنث پر مذکر کو غائب کرنا اصل ہے جیسے ”شمس“ اور ”قمر“ میں ”قمرین“ کہتے ہیں اور جیسے ”یآئہا الذین امنوا“ (سورۃ البقرہ آیت: ۱۰۴) کی طرح بہت سی آیتوں میں ہوتا ہے لیکن یہاں اصل کے خلاف کو ویسے ہی غالب کیا گیا ہے جیسے اصل میں ہوتا ہے اور اس لئے بھی کہ راتوں کا ذکر کرنے میں اس طرف اشارہ ہے کہ ان کے بُرے دن گزر رہے ہیں کیونکہ زمانے کی تاریکی اور سیاہی یہی بات بتاتی ہے اور اس لئے بھی کہ اس میں اس طرف اشارہ ہے کہ جب ان کا آرام والی راتوں میں یہ حال ہے تو دنوں کا حال کیسا ہوگا جن میں خرابیاں ہی خرابیاں ہوتی ہیں اور جس نے اسے تغلیب میں شمار نہیں کیا بلکہ اللہ تعالیٰ کے اس فرمان جیسا لیا ہے: ”سرابیل تقیکم الحر“ (سورۃ النحل آیت: ۸۱) تو وہ سمجھدار ہی نہیں۔

”ولا یدرون“ میں واو حال کیلئے ہے اور یہ ”درایہ“ سے ہے یعنی نہیں جانتے۔

”عدتہا“ (نصب سے) ”یدرون“ کا مفعول ہے اور یہ عین کے زیر کے ساتھ گنتی کرنے

کے معنی میں ہے اور اس کی ضمیر ”اللیالی“ کی طرف جاتی ہے، مطلب یہ ہے کہ وہ دنوں اور راتوں کو گنا نہیں جانتے کہ حضور ﷺ ان سے جنگ کرتے اور ان سے خوف کھاتے رہتے ہیں اور ہر وقت وہ غور و فکر کرتے اور سوچتے رہتے ہیں کہ جنگ کے اس عذاب اور آگ سے انہیں خلاصی مل جائے۔

”مالم“ میں ”ما“ ظرفیہ مصدریہ ہے یعنی ہمیشہ کے لئے۔

”لم تکن“ اور ”تکن“ میں مؤنث کی ضمیر ”اللیالی“ کی طرف جاتی ہے اور ”من“ کا تعلق ”تکن“ سے ہے۔

”اشهر“، ”شهر“ کی جمع ہے اور ”حرم“ (زیر سے) ”اشهر“ کی صفت ہے اور یہ دو پیش کے ساتھ ”حرام“ کی جمع ہے ”الاشهر الحرم“ سے مراد یہ چار مہینے ہیں: ذوالقعدہ، ذوالحجہ، محرم اور جب۔

بارہ مہینوں کے قدیم و جدید نام اور ان کی وجہ تسمیہ

محرم پہلا مہینہ ہے چنانچہ اسی لیے اس پر عموماً الف لام آتا ہے، عرب لوگ مہینوں کو بارہ شمار کرتے ہیں جن میں سے پہلا محرم ہے، ہاں دور جاہلیت میں اسے ”مَوْتَمَن“ کہتے تھے کیونکہ ان مہینوں میں لڑائیوں سے امن ملتا تھا چنانچہ اس کا نام محرم رکھا گیا کیونکہ ان میں جنگ کرنا حرام تھا اور محرم کہنے کی وجہ یہ بھی بتاتے ہیں کہ شیطان کیلئے اس میں جنت حرام ہو جاتی ہے۔

دوسرا مہینہ صفر ہے، جاہلیت کے دور میں اس کا نام ”نَاجِر“ تھا کیونکہ اونٹ اس میں بھگائے جاتے تھے، پھر اس کا نام صفر رکھا گیا کیونکہ اس میں درختوں کے پتے زرد ہو جاتے یا اس لئے کہ اس میں مکہ لوگوں سے خالی ہو جاتا تھا، لوگ سفر پر چلے جاتے، کہا جاتا تھا: ”دار صفر“ یعنی خالی یا اس لئے کہ جب اس میں کوئی آفت آتی یا بخار شروع ہوتا تو لوگوں کے رنگ زرد ہو جاتے تھے۔

تیسرا مہینہ ربیع الاول ہے جبکہ جاہلی زمانے میں اسے ”خُوَان“ کہتے تھے۔

چوتھا مہینہ ربیع الآخر ہے، دور جاہلیت میں اسے ”یصان“ کہتے تھے اور ان دونوں کو ”رَبِيعَيْن“ کہتے تھے کیونکہ لوگ ان دو ماہ کے دوران گھروں میں ٹھہرے رہتے تھے۔

پانچواں مہینہ جمادی الاولیٰ ہے جبکہ دور جاہلیت میں اسے ”حسین“ کہتے تھے۔

چھٹا مہینہ جمادی الآخرہ ہے جبکہ دور جاہلیت میں اسے ”ذنی“ کہتے تھے چنانچہ ان دونوں کا نام ”جَمَادِيَيْن“ رکھا گیا کہ ان دونوں مہینوں میں پانی جم جاتا تھا۔ ان ”جمادیین“ کے علاوہ باقی

مہینوں کے نام مذکور ہیں۔

ساتواں مہینہ رجب ہے دورِ جاہلیت میں اس کا نام ”أَصَمَّ“ تھا کیونکہ ان میں ہتھیاروں کی آواز سننے میں نہ آتی تھی اس بناء پر رجب نام پڑا کہ اس میں اللہ کی بڑائی ہے اور وہ لوگ اس کی عزت کرتے تھے۔ کتاب ”روضہ“ میں لکھا ہے کہ اللہ تعالیٰ رجب کے مہینے میں اُمّتِ محمد صلی اللہ علیہ وسلم کو عذاب نہیں دیتا۔

آٹھواں مہینہ شعبان ہے اسے دورِ جاہلیت میں ”عَجَلَام“ کہتے تھے پھر شعبان نام پڑا کہ اس میں عرب قبیلے لوٹ مار کیلئے نکل کر ادھر ادھر پھیل جاتے تھے یا اس لئے کہ اس میں کئی طرح کے نیک کام ہوتے تھے۔

نواں مہینہ رمضان ہے جسے دورِ جاہلیت میں ”نَاتِق“ کہتے تھے پھر یہ نام رمضان ہوا کیونکہ اس میں گناہ جلائے جاتے ہیں یا اس لئے کہ اس میں بارشیں زیادہ ہوتی تھیں۔

دسواں مہینہ شوال ہے جسے جہالت کے زمانے میں ”عَاذِل“ کہتے تھے پھر شوال نام پڑا کیونکہ اونٹنیاں اس میں دُم اونچی کر کے اونٹ کو دکھاتی تھیں کہ وہ حاملہ ہیں یا اس وجہ سے کہ لوگ اس میں گھر بار چھوڑ کر باہر چلے جاتے تھے۔

گیارہواں مہینہ ذوالقعدہ ہے جسے جہالت کے زمانے میں ”رَنَہ“ کہا جاتا تھا پھر ذوالقعدہ رکھا گیا کیونکہ عرب لوگ اس مہینے میں دشمن اور جنگ سے ہٹ کر اپنے ٹھکانوں پر بیٹھ جاتے تھے۔

بارہواں مہینہ ذوالحجہ ہے جسے دورِ جاہلیت میں ”بَرْك“ کہا جاتا تھا اور پھر اس کا نام ذوالحجہ رکھا گیا کیونکہ اس میں حج ہوتا ہے۔

یاد رہے کہ ان مہینوں کے یہ نام رکھنے کی وجہ وہ واقعے ہیں جو ان کے نام رکھنے کے موقع پر ہوتے تھے لیکن یہ نام رکھنا مکمل طور پر ان سببوں سے نہیں ہے۔

یہ بھی یاد رہے کہ ہفتے کے دن سات ہوتے ہیں جن میں سے پہلا ”سَبْت“ (ہفتہ) جیسے ایک شاعر نے لکھا ہے:

أَلَمْ تَرَ أَنَّ الدَّهْرَ يَوْمٌ وَلَيْلَةٌ

يَكْرَانِ مِنْ سَبْتٍ إِلَى سَبْتٍ

”کیا تم دیکھتے نہیں کہ زمانہ دن اور رات کا نام ہے جو ہفتہ سے ہفتہ تک بدل بدل کر آتا

ہے۔

اور دورِ جاہلیت میں ہفتے کے دنوں کے نام وہ نہیں جو عام مشہور ہیں کیونکہ وہ اتوار کو ”اول“ پیر کو ”اھون“ منگل کو ”جبار“ بدھ کو ”دبار“ جمعرات کو ”مونس“ جمعہ کو ”عروبہ“ اور ہفتہ کو ”شیار“ کہتے تھے۔

پھر ہفتے کے دنوں کے نام ان ناموں میں سے ہوتے ہیں جو غالب ہوتے ہیں چنانچہ ان پر الف لام آیا کرتا ہے اور کبھی اشنین پر الف لام نہیں لایا جاتا۔
شعر کا حاصل معنی یہ ہے کہ کافر اس حد تک پہنچ چکے تھے کہ راتیں گزرتی جاتیں لیکن انہیں سخت مصیبتوں اور غموں کی وجہ سے وہ انہیں گن نہ سکتے تھے کیونکہ وہ ان میں رنج اور پریشانیاں دیکھتے تھے جن کی وجہ سے انہیں دنوں اور راتوں کا حساب رکھنا یاد ہی نہیں رہتا تھا اور یہ اس وقت تک ہوتا جب تک اشہر الحرام (عزت والے چار مہینے) نہ آجاتے اور جب آجاتے تو وہ اپنے اپنے گھروں میں آرام کرتے اور نعمتیں کھاتے، کہیں جاننا نہ ہوتا کیونکہ نبی کریم ﷺ ان مہینوں میں جنگ سے فارغ ہوتے اور اپنے پروردگارِ عالم کی عبادت کیا کرتے۔



شعر (۱۲۲)

كَأَمَّا الدِّينُ ضَيْفٌ حَلٌّ سَاحَتَهُمْ
بِكُلِّ قَرْمٍ إِلَى لَحْمِ الْعِدَى قَرْمٍ

(ترجمہ:)"(کافر اس لئے بے چین ہیں کہ) گویا مسلمانوں کیلئے ان کا دین ایک مہمان آ گیا ہے جو ان کفار کی حویلیوں کے تمام ایسے بہادروں کو لے آیا ہے جو دشمن کے گوشت کا شوق رکھتے ہیں۔"

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب جنگوں میں مشرکوں کی شکست بتادی ان کا بھاگ جانا اور مقابلے کی ہمت نہ رکھنا بتا دیا تو یہاں پوچھا جا سکتا ہے کہ آخر اس شکست اور بے چینی کے سبب کیا تھے تو انہوں نے واضح طور پر اس کے سبب بتائے اور یہ بتا دیا کہ اس کا سبب ان کا اسلام سے مقابلہ تھا اور اسلام کے بارے میں آچکا ہے کہ اسلام ہمیشہ غالب رہے گا اور اس پر کسی بھی وقت میں کوئی غالب نہیں آ سکتا (مسند الفردوس، الجزء الاول، باب الالف، صفحہ ۸۳، رقم الحدیث: ۳۹۵) چنانچہ معمولی سی تشبیہ دے کر فرماتے ہیں: "کأما الدين الخ"۔

تحقیق الفاظ

"كَأَنَّ" تشبیہ کیلئے ہے اور "مَا" اس کا عمل روکتا ہے۔

دین کی وضاحت

"الدین" لغت میں "عادت" کو کہتے ہیں کیونکہ فراء کا قول ہے کہ آدمی کا دین اس کی عادت ہوتی ہے، حساب کا معنی بھی ہے جیسے فرمان الہی ہے: "ذَلِكَ الدِّينُ الْقِيَمُ" یعنی سیدھا حساب پھر اچھی بُری جزاء کیلئے بھی آتا ہے جیسے عربوں کا قول ہے کہ جیسا کرو گے ویسا بھرو گے پھر حماسہ میں ہے:

وَلَمْ يَبْقِ سِوَى الْعُدْوَا
بِ دَانَاهُمْ كَمَا دَانُوا

"دشمنی کے سوا چارہ ہی کیا تھا چنانچہ انہوں نے ان کے کئے کا بدلہ چکا دیا"۔

تاہم مشہور یہ ہے: اللہ نے ایک کام مقرر کر دیا ہے جو عقل رکھنے والوں کو ان کی اچھی پسند کے

مطابق اس طرف لے جاتا ہے جو ذاتی طور پر ان کا فائدہ کرے۔

پھر یاد رکھو کہ دین کا لفظ حق و باطل سب کاموں پر بولا جاتا ہے کیونکہ اس کا کام یقین رکھنا ہوتا ہے، کام حق ہو یا باطل چنانچہ اسی بناء پر کہا جاتا ہے: دینِ یہود و نصاریٰ باطل ہے جبکہ دینِ اسلام سچا ہے یہاں اس سے مراد اسلام ہے کیونکہ اللہ کا پسندیدہ دین اسلام ہی ہے۔

یہاں یہ بھی ممکن ہے کہ دین سے مراد صاحبِ دین ہوں اس کی طرف بلانے والے ہوں اور اسے ظاہر کرنے والے ہوں یعنی مجازی طور پر نبی کریم ﷺ اور یہ یوں ہوگا کہ سبب بنائی گئی چیز کا نام لے کر سبب مراد لے لیا جائے۔

”الضیف“ کا معنی مسافر ہے چنانچہ دین مشبہ اور ”ضیف“ مشبہ بہ ہے اور ”حل ساحتہم“ والا جملہ ”ضیف“ کی صفت ہے جو قید لگا کر تشبیہ کی وجہ بتاتا ہے۔

”حل“ کا معنی نازل ہوا ”ساحة“ کا معنی گھر کا ارد گرد، جمع کی ضمیر کفار کی طرف جاتی ہے۔ ”بکل قرم“، ”حَلَّ“ کے فاعل سے حال ہے یعنی گھر کے ساتھ ملا ہوا اور ساتھی۔ ”قرم“ (قاف پر زبر اور راء پر سکون) کا معنی سردار اور آقا ”کل قرم“ سے مراد رسول اکرم ﷺ کے صحابہ کرام ہیں۔

”الی لحم العدای“ کا تعلق آخر والے ”قَرِم“ کے ساتھ ہے۔ ”العدو“ سے مراد کافر ہیں اور ”قرم“ (جر کے ساتھ) ”ضیف“ کی صفت کے بعد صفت ہے یعنی ہر بہادر کی صفت یہ لفظی و معنوی لحاظ سے زیادہ قریبی معنی ہے اور ”قَرِم“ (راء پر زبر) کا معنی گوشت کا بہت شوق رکھنے والا۔

شعر کا مطلب یوں ہے: دینِ اسلام یا دین لانے والے جو بڑے بڑے نبیوں سے بھی بڑھ کر مرتبہ والے ہیں اس بادشاہ کی طرح ہیں جو ان کے صحن میں مہمانی کیلئے آتا ہے ان کے شہروں کی دیواروں پر قبضہ کرتا اور اپنے ساتھ وہ لشکر لاتا ہے جو سب کے سب دینِ اسلام کی باگ ڈور سنبھالنے والے اور اپنے آقا کے فرمانبردار ہیں جو ہر چیز کا خیال رکھ کر اس کی خدمت کیلئے تیار کھڑے ہیں اور دشمن کے گوشت میں دلچسپی رکھتے بد بختوں کو ذلیل کرتے ان کے جسموں کو چور کرتے ان کے شہروں کو برباد کرتے اور ان پر قابو پاتے ہوئے ان کی اولادوں کو قید کرتے ہیں جبکہ اسلام تو شکست کو قبول ہی نہیں کرتا کیونکہ وہ ہر وقت اونچا ہوتا اور غالب رہتا ہے کوئی دوسرا اس پر غالب آ ہی نہیں سکتا اور نہ ہی وہ مغلوب ہوتا ہے اگرچہ اس کے دشمن پہاڑوں جیسے مضبوط ہی کیوں نہ ہوں اور جو اس مضبوط دین

کی مخالفت پر تلا ہوا ہے تو اسے دنیا و آخرت میں ذلیل کر دینے والا عذاب ہوگا اور جو اس دنیا میں اس سے پیار کرے گا تو اللہ تعالیٰ اسے جنت کا حصہ دار ٹھہرائے گا۔



شعر (۱۲۳)

يَجْرُ بِحَرِّ خَمِيْسٍ فَوْقَ سَائِمِحَةٍ
يَزِيهِ بِمَوْجٍ مِّنَ الْاِبْطَالِ مُلْتَطِمٍ

(ترجمہ:) ”دین اپنے دریا جیسے گھوڑ سوار لشکر کو یوں لے چلتا ہے کہ گویا جنگجو بہادروں کی ایسی موج اور لہر ہے جو آپس میں مونڈھے کو مونڈھا مارتے چلتی ہے۔“

جب حضرت ناظم رحمہ اللہ نے کافروں کی شکست کا بیان اور اس کے سبب کا وہ سارا بیان ایسی گفتگو سے کر دیا جس میں کسی چھوٹے بڑے کو شک کرنے کی گنجائش نہ رہی تو اب ان کے لشکر کی بہادری اور عظیم صحابہ کی مضبوطی کے ساتھ ساتھ ان میں شامل پورے لشکریوں کی بات کرتے ہیں اور کسی کمی کے بغیر ہر طرف سے کثیر اور مکمل لشکر کا پتہ بتا دیا ہے فرماتے ہیں: ”يجر بحر الخميس الخ“۔

تحقیق الفاظ

”يجر“ کا جملہ محذوف مبتداء کی خبر ہے، اصل یوں ہے: ”هو يجر“ اور اس میں مستتر ضمیر اس دین کی طرف لوٹی ہے جس سے مراد رسول اللہ ﷺ ہیں، یہاں ماضی کے صیغے کی بجائے مضارع کا صیغہ لانے کا مقصد اچھی صورت کو آج کا بنا کر دکھانا ہے یا حضور ﷺ کی ذات مبارکہ کے لحاظ سے روانگی کا لیٹ (دیر) ہونا ہے۔

”بحر“ (نصب سے) ”يجر“ کا مفعول ہے اور ”بحر“ کی ”خميس“ کی طرف اضافت مشبہ بہ کی مشبہ کی طرف اضافت بنتی ہے، یہ شکل یوں ہے: ”لشکر دریا جیسا“ اور ”خميس“ سے مراد بہادر لشکر ہے۔

لشکر کے حصے

یاد رہے جنگ میں لشکر کو تیار کرنا ہو تو اس کے پانچ حصے ہوتے ہیں کیونکہ وہ لوگ لشکر کو ”مقدمہ“ ميمنه، ميسره، ساقہ“ اور ”قلب“ حصوں میں بانٹا کرتے تھے۔

”خميس“ یعنی جنگجو لشکر کی ”بحر“ سے تشبیہ صرف دبدبے اور تباہی کے علاوہ رُ کے بغیر ایک دوسرے کا مونڈھے سے مونڈھا ملا کر چلنے میں ہے جس سے مراد لشکر کا دریا ہے کہ جسے جنگوں میں

استعمال کرنے اور لڑائی کی طرف پہچانا ہوتا ہے۔

”فوق“، ”خمیس“ کی صفت ہے۔ ”سابحہ“ محذوف موصوف کی صفت ہے یعنی ”گویا کہ وہ لشکر تیز گھوڑوں کے اوپر تھا“۔

”السابعہ“، ”سبح“ سے ہے اور ”سبوح“ وہ خوبصورت گھوڑا ہوتا ہے جو سوار کو تھکائے بغیر اس کے نیچے چلتا ہے اور اسے کسی پریشانی میں نہیں ڈالتا وہ گویا ایک کشتی ہوتا ہے جو دریا میں چلتی ہے۔

”یرمی“ والا جملہ ”خمیس“ کی صفت ہے تو اس کی ضمیر اسی کی طرف لوٹی ہے یا ”بحر“ کی طرف لوٹی ہے۔

”الموج“، ”مباج البحر“ سے بنا ہے یعنی اس میں ہلچل پیدا ہوئی اور اس کا کچھ حصہ دوسرے سے ٹکراتا رہا، تاہم اس سے مراد تیر اور نیزے ہیں چنانچہ اس میں استعارہ مضرہ ہے کہ نیزوں اور تیروں کو دریا کی موجوں سے تشبیہ دی کیونکہ یہ ہلاک کرتے، چلتے رہتے ہیں ایک کو دوسرے پر کھینچتے اور ہلچل پیدا کرتے ہیں چنانچہ موج کو تیروں اور نیزوں سے تشبیہ دی چنانچہ موج کا ذکر کر کے نیزے اور تیر مراد لئے چنانچہ موج کا ذکر کر کے تیر اور نیزے مراد لئے تو ”یرمی“ اس استعارہ کو ذہن کے قریب کرتا ہے اور ”ابطال“ میں تجرید ہے یا موج میں استعارہ بالکنایہ ہے جو ظاہر ہے۔

”من الابطال“ ظرف مستقر ہے اس بناء پر کہ یہ ”موج“ کی صفت ہے یعنی یوں ہے: موج جو بہادروں سے حاصل ہے یا یہ ناظم کے آخر والے قول ”ملتطم“ کا بیان ہے۔ ”ابطال“ ”بطل“ کی جمع ہے جس کا معنی طاقتور بہادر ہے اور ”ملتطم“ (زیر سے) ”موج“ کی صفت ہے اور یہ اسم فاعل کا صیغہ ہے جس کا معنی ہلچل کی وجہ سے ایک حصے کو دوسرے پر مارنے والا ہے کیونکہ وہ سخت تیز ہوتی ہے چنانچہ ”ملتطم“ کی ضمیر جو ”موج“ کی طرف جاتی ہے اس میں استعارہ بالکنایہ ہے کیونکہ ”التطام“ سے یہاں مراد ایک دوسرے کو مارنا اور اسلحہ استعمال کرنا ہے جو واضح ہے۔

شعر کا حاصل معنی یہ ہے کہ نبی کریم ﷺ اپنے پانچ حصوں والے لشکر کو لے کر چلانے اور طاقت دینے والے تھے جس کے وہ حصے دریا کی طرح تھے اور سب کے سب بڑی حیثیت والے

ہوتے تھے جو سارے کے سارے سکون سے چلنے والے گھوڑوں پر سوار ہوتے اور ایسی اونٹنیوں پر سواری کرتے جو گھنے پانی پر کشتی کی طرح چل کر میدانِ جنگ میں پہنچتے اور پھر یہ لشکر کفار کی طرف نیزے اور تیراے پھینکتا جیسے دریاؤں کی موجیں ہوتی ہیں اور وہ جنگ کرنے اور اسلحہ استعمال کرنے والے تھے جو ہلچل مچا دیتا تھا، انہیں دشمنوں سے بھاگنے یا ان سے گریز کرنے کی ضرورت نہ تھی۔



شعر (۱۲۴)

مِنْ كُلِّ مُنْتَدِبٍ لِلَّهِ مُحْتَسِبٍ
يَسْطُو بِمُسْتَأْصِلٍ لِلْكَفْرِ مُضْطَلِمٍ

(ترجمہ:) ”اس لشکر کا ہر بہادر اللہ کے حکم پر چلتا، ثواب کی نیت سے جہاد کرتا، تیز تلوار سے حملہ کرتا اور کفر کو جڑ سے اکھاڑ پھینکنے والا تھا۔“

اب حضرت ناظم رحمہ اللہ اس عظیم لشکر کے بہاروں کی یہ خوبیاں شمار کر رہے ہیں کہ جنگ سے ان کا مقصد صرف اللہ تعالیٰ کا حکم ماننا تھا، وہ تلواروں اور نیزوں کو استعمال کرنے میں ماہر تھے تیروں اور اسلحہ کے علم میں تجربہ کار تھے۔ چنانچہ فرماتے ہیں: ”مِنْ كُلِّ مُنْتَدِبٍ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”من کل منتدب“، ”ابطال“ سے بدل ہے، یہ اسمِ فاعل کا صیغہ ہے ”انتداب“ سے جس کا معنی ہے: کسی کے ابھارنے پر کسی شے کی دعوت کو قبول کرنا، معنی ہوگا: ”اللہ کی دعوت قبول کرنے والا ہر شخص“ چنانچہ ناظم کے قول ”للہ“ میں مضاف حذف ہے۔

”محتسب“ (زیر سے) ”منتدب“ کی صفت ہے اور یہ بھی اسمِ فاعل کا صیغہ ہے ”احتساب“ سے جس کا معنی ہے: ”اللہ کی خاطر عمل کر کے اس میں خلوص دکھانا جس سے اللہ راضی ہو سکے“ جیسے رسول اللہ ﷺ کا فرمان ہے کہ ”مَنْ صَامَ رَمَضَانَ إِيمَانًا وَاحْتِسَابًا“ (الحديث)۔

(صحیح البخاری، کتاب الایمان، باب صوم رمضان، احتساباً من الایمان، جلد ۱ صفحہ ۲۶، رقم الحدیث: ۳۸)

”یسطو“ صفت کے بعد دوسری صفت ہے یا حال ہے اور اس کی ضمیر ”کل منتدب“ کی طرف جاتی ہے، ”یسطو“ کا معنی حملہ کرنا ہے اور دشمن پر قابو پانا۔

”بمستأصل“ میں باء ”مصاحبة“ یا ”استعانة“ کیلئے ہے جو ”یسطو“ سے متعلق ہے، یہ اسمِ فاعل کا صیغہ ہے ”استأصله“ سے یعنی اس نے اسے جڑ سے اکھاڑ پھینکا اور گرا کر نشان تک نہ چھوڑا یعنی ایسے آلہ سے جو جڑ سے اکھاڑنے والا ہے۔

”للكفر“، ”مستأصل“ سے متعلق ہے اور اس میں مجازِ حذفی ہے کہ ”اہل“ کا لفظ محذوف ہے، یہ اللہ کے اس فرمان جیسا ہے: ”وَاسْئَلِ الْقَرْيَةَ“ (سورة يوسف، آیت: ۸۲) یا کفر اکھاڑنے کا

مطلب کافروں کو اکھاڑ پھینکنا ہے۔ اس پر غور کر لو۔

”مصطلم“ (زیر سے) ”مستأصل“ کی صفت اور تاکید بھی ہے، یہ بھی اسمِ فاعل کا صیغہ ہے ”إِصْطَلَمَ“ سے یعنی اسے ہلاک کیا یعنی ہلاک کرنے والا۔

اس شعر میں حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کے اس فرمان کی طرف اشارہ ہے: ”إِنْتَدَبَ لِلَّهِ“ (صحیح البخاری، کتاب الایمان، باب الجهاد من الایمان، جلد ۱ صفحہ ۲۵، رقم الحدیث: ۳۶) (اس نے اللہ کا حکم مانا ہے) یہ اسے فرمایا جو اللہ کا حکم مان کر نکلا۔ حدیث کا معنی یہ ہے کہ جو اللہ کی رضا کیلئے اللہ کی خاطر جہاد کرنے نکلا اور اس کا ارادہ کر لیا تو اللہ تعالیٰ اس کی بخشش کا سامان کر دیتا ہے یا اس وعدہ کو جلد پورا کر دیتا ہے جو اس کے جہاد کے مقابلے میں ثواب دینے کے بارے میں کیا تھا، یا یہ معنی ہے کہ اللہ تعالیٰ اس کا وہ وعدہ پورا کرتا ہے جو اس نے جنت، حوروں اور غلاموں کے دینے کا کیا تھا۔

شعر کا حاصل معنی یوں ہے: یہ ماہر بہادر سارے گمراہوں کو برباد کرنے کیلئے حملہ کرتے ہیں تاکہ اپنے پروردگار کی دعوت دلچسپی اور اس کی طرف توجہ کیلئے قبول کرتے ہیں، خوشحالی اور تنگی میں اور منہ پھیرے اور موت سے ڈرے بغیر نیت خالص رکھنے کی کوشش کرتے ہیں اور ساتھ ساتھ اللہ کی رضا حاصل کرنے کا دھیان رکھتے ہیں جس میں انہیں کوئی غرض نہیں ہوتی اور نہ ہی اللہ کی طرف سے ثواب کی امید رکھتے ہیں، سب کے سب طاقتور ہتھیاروں اور ذلیل کافروں کو جڑ سے اکھاڑنے والے ہتھیار استعمال کرتے ہیں اور اس کیلئے فساد یوں کے خلاف تباہ کرنے والا اسلحہ استعمال کرتے ہیں جو فساد یوں کو روئے زمین سے ختم کر دے تاکہ زمین ان سے پاک ہو جائے۔



سعر (۱۲۵)

حَتَّىٰ غَدَتْ مِلَّةَ الْإِسْلَامِ وَهِيَ بِهِمْ
مِنْ بَعْدِ غُرْبَتِهَا مَوْصُولَةَ الرَّحْمِ

(ترجمہ:) ”آخر کار ملتِ اسلام جو انہی کی تھی اپنی بے بسی اور کمزوری کے بعد اپنے باہمی ملاپ کے اصل ٹھکانے پر آگئی۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب حضور ﷺ کے بارے میں بتا دیا کہ آپ مکمل لشکروں اور جنگی جتھوں کے آنے کا مرکز تھے اور آپ کے لشکروں کی کچھ خوبیاں بتادیں اور آپ کے لشکروں کے بہادر لوگوں کے حالات بیان کر دیئے تو اب سوال پیدا ہو سکتا تھا کہ ان کے جہاد کا فائدہ کیا ہوا؟ لڑائی کا کیا ہوا اور تلواریں چلانے کا نتیجہ کیا نکلا؟ تو اس گمان کو دور کرنے اور سارے کاموں کا نتیجہ بتانے کیلئے فرمایا: ”حتیٰ غدت الخ“۔

تحقیق الفاظ

”حتیٰ“ یا تو ”یجر“ کی انتہاء ہے یا ”یسطو“ کی اسے پہلے کے ساتھ خاص کرنا کسی خاص کرنے والے کے بغیر ہے جو ظاہر ہے۔

”غَدَتْ“، ”صَارَتْ“ کے معنی میں ہے ”مِلَّةَ الْإِسْلَامِ“ (رفع سے) ”غدت“ کا اسم ہے ”مِلَّة“ کی ”الاسلام“ کی طرف اضافت بیان ہے یعنی ملت جو خود اسلام ہے یہ ویسی اضافت ہے جو ”شجر الاراک“ میں ہے۔

دین شریعت ملت اور ناموس میں فرق

یاد رہے کہ دین شریعت ملت ناموس متحد بالذات (ایک ہی معنی دیتے) ہیں مگر کسی نہ کسی وجہ سے الگ الگ گئے جاتے ہیں کیونکہ وہ خاص طریقہ جو نبی کریم ﷺ سے ثابت ہوا ہے اگر اس کے سامنے عجز بن کر دکھایا جائے تو وہ دین ہے اس لحاظ سے کہ اس کی طرف آنے والے کمالات حاصل کرنے کی خاطر اس کے ذرا سے حصے کے پیاسے ہیں تو یہ شرع اور شریعت ہے اس لحاظ سے کہ اس طریقے سے لکھا جاتا ہے یا سارے لوگ مل کر اسے مانتے ہیں تو یہ ”مِلَّة“ ہے ”املال“ سے جس کا معنی لکھنا ہے یا ”امل“ سے ہے یعنی جمع ہونا اور اس لحاظ سے کہ اس پر ایک فرشتہ مقرر ہے جس کا نام

ناموس ہے تو یہ ناموس کہلاتی ہے۔

”وہی بہم“ میں واوِ حالیہ ہے اور یہ مبتداء ہے اور ”بہم“ ظرفِ مستقر اس کی خبر ہے ”ہی“ والی ضمیر ”ملة“ کی طرف لوٹی ہے معنی ہوگا: اس حال میں کہ اس طریقے کو ان صحابہ کی مدد حاصل ہے۔ ”من بعد غربتھا“ بعد والے لفظ سے متعلق ہے مؤنث کی ضمیر ”ملة الاسلام“ کی طرف لوٹی ہے اور ”غربة الاسلام“ سے مراد یہ ہے کہ اس شریعت کے احکام کو زندہ کرنا ہر ایک کے لئے انوکھا سا کام تھا کیونکہ ہر ایک کو نہ تو اس کی پہچان تھی اور نہ ہی ابھی اس سے اُلفت ہو سکی تھی پھر اس ”غربة“ کا مقصد یہ ہے کہ اس شریعت کا نہ تو کوئی انس و محبت رکھنے والا تھا نہ ساتھی تھا نہ حفاظت کرنے والا تھا نہ ایسا کوئی حمایتی تھا جو اس کے معاملہ کو سنبھال سکے اور اسے درست کرنے کی کوشش کرے جیسے پردیسی کو سنبھالا جاتا ہے۔

”موصولۃ الرحم“ (نصب سے) ”غدت“ کی خبر ہے یہ لفظ ”صلة“ سے بنا ہے۔ ”الرحم“ سے مراد قریبی ہونا ہے اور ”صلة الرحم“ کا مطلب ہے: قریبی رشتہ داروں سے ملنے کا دھیان رکھنا ان کے حالات کی خبر رکھنا اور جن کا خرچہ ذمے لگا ہو انہیں خرچہ دینا چنانچہ حدیث پاک میں آتا ہے: سب سے صلہ رحمی کرو خواہ سلام ہی کے ذریعے ہو (مرقات المفاتیح، کتاب الرقاق، باب فضل الفقراء، الفصل الثالث، جلد ۹ صفحہ ۱۱۳) اور ”صلة الاسلام“ کا مطلب ہے: اسے زندہ رکھنے کیلئے اس کی خدمت کرنا اور اس میں بہت سے لوگ شامل کرنے کی کوشش کرنا۔

شعر کا حاصل مطلب یہ ہے کہ حضور ﷺ کی طرف سے بہت سارے لشکر کو چلانا اصل مقصد تھا ان کے گرم و سرد دوزخ میں جانے والے اہل نار پر حملہ کرنے کا مقصد ملتِ اسلام بنانا تھا حالانکہ اسے ان سب کی مدد حاصل ہے یہ ان کے نزدیک محفوظ تھی یہ ان ساتھیوں اور دوستوں سے بھری ہوئی ہے جنہوں نے اسے جانیں دے کر عزت دی ہے اور پھر ان کے پیروکاروں اور ایسے پیروکاروں سے بھرپور ہے جو اس کی کتاب کو تازہ کر کے قیامت تک مانتے رہیں گے جبکہ پہلے وہ شریعت گویا انجانی اور پریشانی میں مبتلا تھی اور پھر اس کا کوئی ساتھی بھی نہ تھا۔

اس شعر میں حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کے اس فرمان کی طرف اشارہ ہے کہ ”اسلام غریبی میں شروع ہوا اور آگے چل کر پھر غریب ہو جائے گا چنانچہ غریبوں کو اس پر خوش ہونا ہوگا۔“

(صحیح مسلم، کتاب الایمان، باب بیان أن الاسلام بدأ غریباً، صفحہ ۸، رقم الحدیث: ۱۳۵)

شعر (۱۲۶)

مَكْفُولَةٌ اَبَدًا مِّنْهُمْ بِخَيْرٍ اَبٍ
وَخَيْرٍ بَعْلِ فَلَمْ تَيِّتُمْ وَلَمْ تَيْمِ

(ترجمہ:) ”چنانچہ ملت مجاہد صحابہ کی مسلسل جنگوں کے صلے میں ہمیشہ کیلئے محفوظ کر دی گئی اور اب نہ تو اسے کسی باپ کی ضرورت ہے نہ اچھے شوہر کی جس کی وجہ سے اسے نہ تو یتیم ہونے کا اندیشہ ہے اور نہ ہی بے شوہر ہونے کی فکر ہے۔“

اب حضرت ناظم رحمہ اللہ بتانا چاہتے ہیں کہ یہ ملت اسلام اہل اسلام کو زندہ رکھ کر قیامت تک باقی رہے گی اس میں نہ نسخ ہوگا اور نہ ہی کوئی تبدیلی اور نہ ہی ادھر ادھر ہونے پائے گی تو فرمایا: ”مکفولة ابدًا الخ“۔

تحقیق الفاظ

”مکفولة“ یا تو نصب سے ہے یا رفع سے پہلی صورت میں یا تو ”من“ موصولہ سے بدل ہے یا اس سے حرف عطف حذف کر کے اس پر معطوف ہے کیونکہ اس کی ضرورت ہے یا اس سے حال ہے یا ”غدت“ کی دوسری خبر ہے اور دوسری صورت میں یا تو مبتداء محذوف کی خبر ہے یعنی ”ہی“ کی یا یہ ”غدت“ کی دوسری خبر ہے اس پر غور کر لو۔

”مکفول“ اسم مفعول ہے ”کفل یکفل“ سے جس کا معنی ”ضامن ہوا“ ہے اور ”کفیل“ ضامن اور حفاظت کرنے والے کو کہتے ہیں تو ”مکفولہ“ کا معنی ”محفوظہ“ ہوا اور بچائی ہوئی۔ ”ابدًا“ ظرف ہونے کی وجہ سے منصوب ہے جو ”مکفولہ“ کی بنتی ہے جبکہ ”ابد“ زمانہ اور لمبے وقت کو کہتے ہیں اور ہمیشہ رہنے والی چیز کو بھی کہتے ہیں ”عنا“ قید الفوائد میں ہے کہ ”ابد“ سے مراد آئندہ کا وہ زمانہ ہے جس کی انتہاء نہ ہو جیسے ازل گزرا ہوا وہ زمانہ ہوتا ہے جس کی انتہاء نہ ہو اور کبھی یہ دونوں لفظ (ازل و ابد) اپنی اپنی ہی جمع کی طرف مضاف ہوا کرتے ہیں جیسے ”ابد الابد“ اور ”ازل الازل“ رہا ”سَرْمَد“ کا لفظ تو یہ دونوں کو شامل ہے۔ (انتہی)

”منہم“ کا تعلق ”مکفولہ“ سے ہے اور ضمیر کفار کی طرف جاتی ہے یعنی ”ان کی شرارتوں“

نقصانوں اور فساد برپا کرنے سے۔“

”بخیر اب“، ”مکفولة“ سے متعلق ہے اور اس ”اب“ سے مجاز اور استعارہ مصرحہ کے طور پر رسول اللہ ﷺ آپ کے صحابہ کرام اور اہل علم علماء مراد ہیں اور تشبیہ دینے کی وجہ اس کا ظاہر کرنے والا اور حفاظت کرنے والا ہونا ہے اور دشمنوں سے حفاظت کی کوشش کرنا ہے اور اس سے پہلے ملت کو ”ابن“ سے تشبیہ ہے اس بات میں کہ یہ ظاہر ہے فائدہ مند ہے اور اپنے باپ کے بعد موجود ہوتا ہے اور اسے ضرورت ہوتی ہے کہ اس کی حفاظت کرے۔

”خیر بعل“ کا عطف ”خیر اب“ پر ہے چنانچہ یہاں ”ابدًا“ کہنے کی قید کا اعتبار ہے۔ ”بعل“ شوہر کو کہتے ہیں جیسے اللہ تعالیٰ کے اس فرمان میں ہے: ”وَبُعُولَتُهُنَّ أَحَقُّ بِرِدِّهِنَّ الْآيَةَ“ (سورۃ البقرہ آیت: ۲۲۸) (ان کے شوہر ہی انہیں واپس کرنے کا حق رکھتے ہیں) ”بعل“ کا اصل معنی سردار اور مالک ہوتا ہے چنانچہ شوہر کو اس بناء پر شوہر کہا گیا کہ وہ اپنی بیوی کے معاملات کو سنبھالا کرتا ہے تو گویا وہ اس کا مالک اور رب ہے۔

”خیر بعل“ سے مراد رسول اللہ ﷺ آپ کے صحابہ کرام اور آپ کی امت کے وہ علماء ہیں جو آپ کے وارث ہیں چنانچہ نبی کریم ﷺ آپ کے صحابہ اور آپ کے وارثوں کو ”زوج المملۃ“ سے تشبیہ دینے کی وجہ یہ ہے کہ یہ سب ”مملۃ“ کی ضرورتوں کا خیال کرتے اور ظالموں سے اس کا بچاؤ کرتے ہیں اور ملت کو زوجہ سے تشبیہ دی گئی ہے کہ اسے بھی ضرورت ہوتی ہے کہ کوئی ایسا ہو جو اس کی ضرورتیں پوری کرے اور دشمن سے اسے بچا کر رکھے۔

”فَلَمَّ يَتِيم“ میں فاء تفریق کی ہے معنی ہوگا: ”جب ملت“ ”خیر اب“ کی وجہ سے ہمیشہ محفوظ ہو چکی ہے تو یہ یتیم نہیں کہلا سکتی چنانچہ ”یتیم“ کا لفظ ”يَتِيمٌ“ سے ہے جیسے ”عَلِمَ يَعْلَمُ“ ہوتا ہے عرب اس وقت ”يَتِيمٌ الْوَالِدُ“ کہتے ہیں جب اس کا باپ اس کے بچپن ہی میں فوت ہو جائے۔

یتیم کون ہوتا ہے؟

کہتے ہیں: ”الیتیم“ کا اصل معنی یکتا اور تنہا ہونا ہے اسی بناء پر یتیم کا لفظ کہا جاتا ہے اور یہ بھی بتایا جاتا ہے کہ مردوں میں یتیم وہ ہوتے ہیں جن کے باپ نہ ہوں، لیکن جب حیوانوں میں استعمال ہوگا تو یتیمی ماؤں کی وجہ سے بنے گی جبکہ پرندوں میں ماں اور باپ دونوں طرف سے ہوتی ہے اور یہ بھی کہا جاتا ہے کہ آدمیوں میں اسے کہا جاتا ہے جس کی ماں فوت ہو چکی ہو لیکن پہلی بات

زیادہ صحیح ہے۔

”لَمْ تَسْمِ“ کا عطف ”لَمْ تَسْمِ“ پر ہے کہ اسے ”خیر بعل“ کے ساتھ ملا جائے گا یعنی یہ لف نشر مرتب ہوگا، اصل معنی ہوگا کہ اس کا شوہر زندہ ہے تو یہ بیوہ نہ ہوگی۔ ”تَسْمِ“ کا لفظ ”امت المرأة“ سے لیا گیا ہے یہ اس وقت بولتے ہیں جب عورت کا شوہر فوت ہو جائے اور یہ اس سے فارغ ہو چکی ہو (ہم بیوہ کہہ دیتے ہیں) اسی سے اللہ تعالیٰ کا یہ فرمان ہے: ”وَأَنْكِحُوا الْأَيَامَى مِنْكُمْ“ (سورۃ النور آیت: ۳۲) (اپنی بیوہ ہو جانے والی عورتوں کا نکاح کر دیا کرو)۔

شعر کا حاصل معنی یوں ہے کہ: ملتِ اسلام بڑوں کے لڑکوں یا عظیم بادشاہوں کی بیٹیوں کی طرح محفوظ اور ہمیشہ بچی ہوئی ہے کیونکہ اس کے باپ سب بزرگ انبیاء کرام لوگوں میں سب سے بزرگ، آپ کے صحابہ کرام اور آپ کی امت کے علماء ہیں جو قیامت تک آپ کے وارث ہوں گے چنانچہ یہ ملت اس زوجہ جیسی ہوگی جس کے شوہر سب شوہروں سے بڑھ کر ہیں اور وہ نبی و رسول ان کے صحابہ اور ان کی امت کے وہ علماء ہیں جو سب کے سب دل پسند اور مقبول ہیں کیونکہ وہ اس ملت کا دھیان رکھتے ہیں اس کے فائدوں پر نظر رکھتے ہیں اور اسے اہل شرک و کفار جیسے غیروں سے بچائے رکھتے ہیں تو یہ سارے باپ اور عزت والے شوہر کتنے اچھے ہیں۔



شعر (۱۲۷)

هُمُ الْجِبَالُ فَسَلْ عَنْهُمْ مَّصَادِمَهُمْ
مَاذَا رَأَوْا مِنْهُمْ فِي كُلِّ مُصْطَلَمٍ

(ترجمہ:) ”وہ اپنے ارادوں اور وفاداری میں پہاڑوں جیسے مضبوط ہیں اور یہ بات تم ان کے جنگوں کے میدانوں سے پوچھ سکتے ہو کہ کافروں نے ہر میدان جنگ میں ان کے کیا کیا کرشمے دیکھے تھے۔“

جب حضرت ناظم رحمہ اللہ رسول انور ﷺ کی بہادری کی کچھ خوبیاں بتا چکے اور ان کے اپنے بہادروں کو ساتھ لے کر کفار کے ساتھ جہاد کے کمالات بتا چکے تو اب بتانا چاہتے ہیں کہ یہ بہادر معرکوں میں پہاڑوں جیسے مضبوط کیونکر تھے وہ جنگوں سے کیوں نہ بھاگے تھے تو فرمایا: ”ہم الجبال الخ۔“

تحقیق الفاظ

”ہم“ مبتداء ہے اور یہ ضمیر ان پہلے بہادروں کی طرف جاتی ہے۔

”الجبال“ (رفع سے) اس مبتداء کی خبر ہے اس میں الف لام حصر کا معنی دیتا ہے لیکن یوں کہ

یہ بات ہم کہہ رہے ہیں یہ ”جَبَل“ کی جمع ہے۔ ”ہم الجبال“ کا جملہ ”زید اسد“ کی طرح ہے وجہ شبہ ان حضرات کا ٹھہرا رہنا مضبوط ہونا اور ایسے وقت میں نہ بھاگنا ہے جب ان کے دشمن سختی دے اور ٹھوس پن کی بناء پر ہر طرف سے آجائیں۔

”فَسَلْ“ میں فاء یا تو سیئہ ہے یا تفریع کیلئے ہے اصل یوں ہوگا کہ اگر تم کو میری بات پر یقین

نہیں تو پوچھ لو۔ ”سَلْ“ امر کا صیغہ ”سَلَّ يَسْلُ“ سے معنی ہوگا کہ تمہیں ضرور پوچھنا ہوگا۔

”عنہم“ ”سل“ کی طرف ہے اور ضمیر کفار کی طرف جاتی ہے۔

”مصادمہم“ ”سل“ کا مفعول بہ ہے ضمیر ”ہم“ ”أبطال“ کی طرف جاتی ہے یہ میم

کی پیش کے ساتھ ”صَادِمٌ يُصَادِمٌ“ کی مصدر ہے جس کا معنی دو لشکروں کا جنگ کرنا اور کفار کے

گھوڑوں پر تلواریں چلانا ہے یہ بھی کہتے ہیں کہ یہ میم کی زبر کے ساتھ اسم مکان ہے جس کا معنی

میدان جنگ ہے۔

”مَاذَا رَأَوْا“، ”مَصَادِمُهُمْ“ سے بدل ہے چنانچہ معنی ہوگا کہ: ان سے پوچھو کہ ”انہوں نے کیا کرشمے دیکھے“ جمع کی ضمیر جو ”رَأَوْا“ میں ہے کفار کی طرف جاتی ہے ”الرَّؤْيَةُ“ کا مفعول محذوف ہے اصل ”رَأَوْهُ“ ہے یا ”مَاذَا“ کا عامل بعد میں ہے اسے پہلے اس بناء پر لایا گیا ہے کہ استفہام شروع میں آیا کرتا ہے۔

”مِنْهُمْ“ کا تعلق ”رَأَوْا“ سے ہے اور ضمیر ”اِبْطَال“ کی طرف جاتی ہے جس سے مراد صحابہ

کرام ہیں۔

”فِي كُلِّ مِصْطَدِمٍ“ کا تعلق ”رَأَوْا“ کے ساتھ ہے یہ اسم مکان بمعنی میدان جنگ ہے۔ شعر کا حاصل مطلب یہ ہے کہ: بہادر صحابہ کرام کی تشبیہ جبال سے ہے اور اگر تم کو مجھ پر یقین نہیں آتا تو پھر کفار سے ان بزرگوں کی لڑائی اور جنگ کے بارے میں پوچھ لو اور ان سے پتہ چلا لو کہ ان بہادروں نے ان سے جنگوں کے سارے میدانوں، لشکروں میں تلواریں اور تیر کیسے کیسے چلائے تھے۔



شعر (۱۲۸)

وَسَلُّ حُنَيْنًا وَسَلُّ بَدْرًا وَسَلُّ أُحُدًا
فُضُولٌ حَتْفٍ لَّهُمْ آدْهُی مِنَ الْوَحْمِ

(ترجمہ:) ”اور پھر حنین، بدر اور احد میں لڑنے والوں سے پوچھو کہ انہیں کئی طرح کی موت کیسے آئی تھی جو کسی بھی وباء سے زیادہ تباہی والی تھی۔“

حضرتِ ناظمِ رحمہ اللہ نے جب اپنے قول ”فی کل مصطدم“ میں کسی خاص جگہ کا نام لئے بغیر حضور ﷺ کی جنگوں کے بارے میں بتا دیا تو اب کچھ غزوات اور ان کے کچھ ناموں کو تبرک کے طور پر لے کر بتانا چاہتے ہیں چنانچہ فرماتے ہیں: ”وَسَلُّ حُنَيْنَا الْخ“۔

تحقیق الفاظ

واو عاطفہ ہے اور ”سَلُّ“ ویسے ہی امر ہے جیسے ابھی گزرا۔

”حُنَيْنًا“ (نصب سے) ”سَلُّ“ کا مفعول بہ ہے اصل ”اہل حنین“ ہے جیسے ”واسئل

القریة“ میں ہے یہ حاء کے پیش اور نون کی زبر سے مکہ اور طائف کے درمیان ایک وادی ہے جہاں دو فریقوں کے درمیان زبردست جنگ ہوئی تھی۔

واقعة جنگ حنین

جنگ حنین کا اصل واقعہ یہ ہے کہ رسول اکرم ﷺ مکہ کو فتح کرنے کے بعد وہاں پندرہ راتوں تک ٹھہرے رہے چنانچہ جب قبیلہ ہوازن نے اس بارے میں سنا تو ان کے امیر مالک بن عوف نصری نے قبیلہ ہوازن کو اکٹھا کرنے کا اعلان کیا تو ہوازن، ثقیف، بنو نضیر اور بنو سعد بن ابی بکر وغیرہ کے قبیلے اس کے پاس جمع ہو گئے اور رسول اکرم ﷺ سے جنگ کرنے کی ٹھان لی اور جب حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کو ان کے باریمیں پتہ چلا تو آپ نے شوال کی چھ راتیں رہنے پر ہفتے کے دن حکم فرمایا کہ سب لوگ حنین کے مقام پر پہنچ جائیں چنانچہ مکہ کی فتح میں شامل ہونے والے مسلمان دس ہزار کی تعداد میں نکل کھڑے ہوئے جن کے علاوہ تین ہزار دوسرے لوگ بھی شامل ہو گئے اسی دوران مسلمانوں میں سے ایک شخص نے اسلامی لشکر کو گھنادیکھ کر تکبر کے طور پر کہہ دیا کہ آج ہم پر یہ چند لوگ کیسے غالب آسکیں گے لیکن رسول اللہ ﷺ کو یہ بات پسند نہ آئی جس کا ذکر اللہ تعالیٰ کے اس فرمان

میں ہے: ”وَيَوْمَ حُنَيْنٍ إِذْ أَعْجَبْتَكُمْ كَثُرْتُكُمْ“ (سورۃ التوبہ: آیت: ۲۵) (یہ حنین کا دن تھا جب تم اپنی کثرت پر اترائے تھے) پھر سب تیار ہو گئے لیکن انہیں معلوم نہ تھا کہ دشمن ان کی گھات میں چھپا ہوا ہے، دشمن وادی کے اندھیروں والی جگہ پر چھپ کر بیٹھے تھے چنانچہ انہوں نے ان پر اچانک حملہ کر دیا، اب جو ہونا تھا ہو گیا کیونکہ اسلامی لشکر تکبر میں تھا اور وہ یہ بات بھول چکے تھے کہ اصل مددگار تو صرف اللہ ہی ہوتا ہے۔

مسلمان تتر بتر ہو چکے تھے اور رسول اللہ ﷺ اکیلے اپنی جگہ پر ڈٹے ہوئے تھے ان کے ساتھ ان کے چچا آپ کے سفید نچر کی لگام تھامے کھڑے تھے اور ان کے علاوہ حضرت ابوبکر، حضرت عمر، حضرت علی اور پانچ دوسرے صحابہ کرام رضی اللہ عنہم ساتھ تھے۔ رسول اکرم ﷺ نے اپنے نچر کو ایڑی لگاتے ہوئے کافروں کی طرف یوں فرماتے ہوئے موڑا کہ ”أَنَا النَّبِيُّ لَا كَذِبُ ☆ أَنَا ابْنُ عَبْدِ الْمُطَّلِبِ“ (میں کوئی جھوٹا نبی نہیں ہوں، میں تو عبدالمطلب کی اولاد میں سے ہوں)۔

اس کے بعد آپ نے بارگاہِ الہی میں عرض کی کہ اے اللہ! تو نے مجھ سے امداد کا وعدہ فرمایا (تفسیر ابی مسعود الجزء الثانی، سورۃ التوبہ: آیت: ۲۵) تو اب وہ بھیج دے، پھر حضرت عباس رضی اللہ عنہ سے فرمایا کہ لوگوں کو آواز دے دو وہ بہت بلند آواز تھے چنانچہ انہوں نے سب کو آواز دی تو انصار وغیرہ سب اکٹھے ہو گئے اور دونوں لشکر آمنے سامنے ہو گئے اللہ تعالیٰ نے وہ مدد اتار دی اور فرشتے اوپر سے ان کے پاس آ گئے، رسول اکرم ﷺ نے کفار کی طرف نظر فرمائی اور مٹی کی ایک مٹھی پکڑ کر ان کی طرف پھینکتے ہوئے پڑھا: ”إِنْهَزْمُوا وَرَبِّ الْكَعْبَةِ شَاهَتِ الْوُجُوهُ“ (صحیح مسلم، کتاب الجہاد باب فی غزوة حنین، صفحہ ۹۷، رقم الحدیث: ۱۷۷۵) (رب کعبہ کی قسم! تمہیں شکست ہوگی، ان کے چہرے بگڑ جائیں گے) چنانچہ وہ مٹی بادل کی طرح ان پر جا پڑی اور ہر ایک کی آنکھوں میں چلی گئی جس پر وہ شکست کھا گئے۔

غزوة بدر

”وَسَلَّ بَدْرًا“ ”سَلَّ“ ”عَامِلٌ كَوْزَنٌ پورا کرنے کیلئے لائے ہیں۔ ”بدر“ مکہ اور مدینہ کے درمیان ایک جگہ کا نام ہے جہاں عظیم جنگ ہوئی جس میں اللہ تعالیٰ نے اسلام اور مسلمانوں کو عزت دی حالانکہ یہ تھوڑے اور دشمن بھاری تعداد میں تھے اللہ تعالیٰ نے فتح کے ذریعے رسول اللہ ﷺ اور آپ کے صحابہ کرام کے چہروں پر خوشیاں بکھیر دیں جبکہ شیطان اور اس کے جتھوں کو ذلیل و خوار کر دیا، اللہ تعالیٰ فرماتا ہے: ”وَلَقَدْ نَصَرَكُمُ اللَّهُ بِبَدْرِ الْآيَةِ“ (سورۃ آل عمران: آیت: ۱۲۳)۔

یہ غزوہ اسلامی غزوات میں سے ایک عظیم غزوہ تھا، آپ اور آپ کے صحابہ کرام اس کیلئے رمضان المبارک میں نکلے تھے، ان کی تعداد تین سو پندرہ تھی جبکہ مشرک ایک ہزار کے لگ بھگ تھے۔ اس مقام پر عظیم جنگ ہوئی چنانچہ اللہ تعالیٰ نے اپنے پیارے رسول پر سکون نازل فرمایا اور فرشتوں کا جمگھٹا بھیجا جس پر مشرکوں میں سے اس دن ستر قتل ہوئے اور ستر ہی گرفتار ہوئے، اس دن قریش کے زیادہ تر سورے قتل ہو گئے۔ اس جنگ میں ایسے بہت سارے عجیب و غریب معجزے دیکھنے میں آئے جنہیں یہاں ذکر کرنے کی گنجائش نہیں خواہ تھوڑے ہی بتائے جائیں۔

”وسل احدًا“ کا عطف قریب کے فعل پر ہے یا دور والے پر۔ ”أحد“ (دو پیش کے ساتھ) مدینہ کے قریب ایک جگہ کا نام ہے جہاں جنگ ہوئی تھی۔

جنگِ احد کا واقعہ

واقعہ یہ ہوا کہ جب قریش کو بدر کے دن سخت شرمندگی اٹھانا پڑی کہ ان کے سورے قتل ہو گئے تو انہوں نے رسول اللہ ﷺ سے جنگ کرنے کی ٹھان لی چنانچہ بہت سارے قبیلوں نے ان کی ہاں میں ہاں ملا دی جن کی تعداد تین ہزار تک جا پہنچی جس پر انہوں نے رسول اللہ ﷺ کو اطلاع دی کہ ہم آ رہے ہیں، وہ جمعہ کا دن تھا۔ رسول اللہ ﷺ نے صحابہ کرام کو خطبہ دیا اور لوگوں کو تیاری کا حکم فرمایا، ارشاد فرمایا کہ اے لوگو! میں نے خواب میں ایک گائے ذبح ہوتے دیکھی ہے، پھر دیکھا کہ میں نے مضبوط زرہ پہن رکھی ہے، پھر دیکھا کہ میری تلوار کا کچھ حصہ ٹوٹ گیا ہے اور پھر دیکھا کہ میں گویا ایک مینڈھے کو پیچھے سوار کئے ہوئے ہوں۔ میں نے گائے کی تعبیر چند ان صحابہ سے کی ہے جو شہید کر دیئے جائیں گے، رہی مضبوط زرہ تو وہ مدینہ ہے، تلوار کا تھوڑا حصہ ٹوٹنے کی تعبیر یہ ہے کہ خود مجھے کچھ تکلیف پہنچے گی۔ رہا مینڈھا تو وہ قریش کا کبش الکتیبہ (طلحہ بن ابی طلحہ کا نام رکھا ہوا تھا) ہے، انہیں میں انشاء اللہ قتل کر دوں گا۔

رسول اللہ ﷺ نے اپنے اصحاب سے مشورہ کیا اور مدینہ منورہ ہی میں رہ کر لڑنے کا مشورہ دیا جبکہ صحابہ کرام نے عرض کی کہ یا رسول اللہ! آپ ہمیں دشمنوں ہی کے سامنے لے چلیں چنانچہ رسول اکرم ﷺ جمعہ کے دن چل پڑے اور جب لشکر آمنے سامنے ہو کر لڑنے لگے تو مشرکوں کو شکست ہوئی، لوگ غنیمت کا مال اکٹھا کرنے لگ گئے تو کافروں نے جمع ہو کر یکمشت ان پر حملہ کر دیا، کچھ مسلمان شہید ہو گئے اور رسول اللہ ﷺ کو بھی تکلیف پہنچی جس میں اللہ تعالیٰ کی کچھ حکمتیں تھیں، اللہ تعالیٰ

لوگوں کو اپنی بے پرواہی دکھانا چاہتا تھا اپنے پیاروں کو آزمانا چاہتا تھا تاکہ پتہ چل سکے کہ اس کے فیصلے پر کون راضی ہے اس کی بھیجی مصیبت پر کون صبر کرتا ہے اور اس کی نعمتوں پر شکر کون کرتا ہے۔
 ”فصول حَتْفٍ“ (نصب سے) ”سَلِّ“ کا مفعول ہے یوں تھا ”عن فصول“ (تھوڑے وقت میں ان کی تباہی) یہ ”فصل“ کی جمع ہے جو وقت کا تھوڑا سا حصہ ہوتا ہے۔ ”حتف“ کا معنی ہلاکت ہے یعنی ہلاکت کے وقت۔

”لہم“ طرف مستقر ”حتف“ کی صفت ہے ”ان کو حاصل ہے“۔
 ”ادھی“، ”فصول“ کی صفت ہے یا ”حتف“ کی یا پھر حال ہے۔ یہ اسم تفضیل کا صیغہ ہے ”دَہیہ“ سے جس کا معنی عظیم آفت اور نازل ہونے والی بڑی مصیبت۔
 ”من الوخم“، ”ادھی“ سے متعلق ہے اور یہ دوزبروں کے ساتھ ایک بیماری ہے جسے وباء کہا جاتا ہے جو ایسی بیماری ہے کہ جسے لگ جاتی ہے تو عام طور پر وہ اس سے بچ نہیں پاتا۔ شعر کا مطلب واضح ہے۔



شعر (۱۲۹)

الْمُصْدِرِي الْبَيْضِ حُمْرًا بَعْدَ مَا وَرَدَتْ
مِنَ الْعِدَى كُلِّ مُسَوِّدٍ مِّنَ اللَّحْمِ

(ترجمہ:) ”وہ بہادر جب اپنی پالش کر کے چمکائی ہوئی تلواریں دشمنوں کے کندھوں، لمبے اور سیاہ بالوں کے اوپر (یعنی سر پر) مارتے تو وہ خون سے سرخ ہو کر واپس آتیں۔“
اب امام بوسیری رحمہ اللہ بہادروں کی تلواریں استعمال کرنے کی مہارت اور تیروں کو ادھر ادھر جھٹ پٹ چلانے میں تجربہ کا بیان کرتے ہوئے فرماتے ہیں: ”المصدری الخ“۔

تحقیق الفاظ

”المصدری“ یا تو مدح کی بناء پر منصوب ہے عبارت یوں ہوگی: میں ”مصدری“ کی مدح کرتا ہوں“ یا اس بناء پر مجرور ہے کہ پچھلے شعر میں ”منہم“ کی ضمیر سے بدل ہے۔ یہ ”مصدر“ کی جمع ہے ”صدر“ سے اسم فاعل ہے جس کا معنی ہے: ”اس نے مڑنے والی بنا دی“۔ اصل میں ”مصدرین“ تھا اس کا نون اضافت کی وجہ سے گر گیا یہ اضافت ”الضارب الرجلی“ جیسی ہے۔ ”البيض“ کی جمع ہے جس سے مراد پالش کی ہوئی سفید تلواریں ہیں جیسے کسی شاعر نے کہا ہے:

وَقَدْ كَانَتِ الْبَيْضُ الْقَوَاضِبُ فِي الْوَعْيِ

بَوَاتِرُ فَهِيَ الْآنَ مِنْ بَعْدِهَا بَتْرُ

”ایک وقت وہ تھا کہ جنگ میں تیز تلواریں کاٹتی چلی جاتی تھیں لیکن اب اس کے بعد معمولی کاٹ رہی ہیں۔“

”حمرًا“ (نصب سے) یا تو یہ ”بيض“ سے حال ہے یا ان تلواروں سے حال ہے جو پالش کی ہوئی سفید ہوتے ہوئے خون سے سرخ رنگ کی ہو گئی تھیں۔ ”الحمر“ (حاء پر پیش اور میم پر سکون) ”احمر“ کی جمع ہے۔

”بعد“ ظرف ہے ”اصدار“ سے ”ما“ مصدر یہ ہے۔

”وردت“ کا معنی داخل ہوئیں اور ساتھ مل گئیں۔ ضمیر ”سیوف“ کی طرف جاتی ہے۔

”من العدای“ ظرف مستقر اور آخر میں آنے والے لفظ ”کُلُّ مُسَوِّدٍ“ سے حال ہے۔
 ”کل مسود“، ”وردت“ کا مفعول بہ ہے۔

”من اللمم“، ”مسود“ کا بیان ہے یہ لام پر زیر سے ”لِمْة“ کی جمع ہے یہ وہ بال ہیں جو کندھوں کی طرف آئے ہوتے ہیں تاہم مراد اس کی جڑیں ہیں یہ سر کو کہتے ہیں اس کا مقصد یہ ہے کہ کفار طاقتور تھے جو قتل ہو گئے۔

شعر کا حاصل معنی یوں ہے کہ ان صحابہ کرام اور بڑے بہادروں کو یوں سراہا جا رہا ہے کہ وہ پالش کی ہوئی ان تلواروں کو مار کر اس وقت واپس لاتے تھے جب وہ ان کے سروں پر لگتیں اور دھنس جاتیں اور جب وہ ان کے بدنوں اور گھوڑوں کے ٹکڑے کر دیتیں چنانچہ ان کی یہ تلواریں کیا خوب تلواریں تھیں اور خود وہ کتنے خوب تھے۔



شعر (۱۳۰)

وَالْكَاتِبِينَ بِسْمِ الْخَطِّ مَا تَرَكَتْ
أَقْلَامُهُمْ حَرْفَ جِسْمٍ غَيْرَ مُنْعَجِمٍ

(ترجمہ:) ”وہ بہادر مقام ”خط“ سے بنے گندی نیزوں کے ذریعے لکھتے (قتل کرتے) تھے اور ایسا ہو ہی نہ سکتا تھا کہ ان کے نیزوں والے قلم تو چلیں مگر کفار کے جسم کا کوئی نقطہ لگانے (زخمی کرنے) سے رہ جائے۔“

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے جب تلواروں کے استعمال کرنے میں بتا دیا کہ وہ بڑے بہادر تھے تو اب بتا رہے ہیں کہ وہ تیروں اور تلواروں کے استعمال میں بھی بہت ماہر اور تجربہ کار ہیں، فرماتے تھے: ”وَالْكَاتِبِينَ بِسْمِ الْخَطِّ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

واو عاطفہ ہے اور ”الکاتبین“ کا عطف ”المصدری“ پر ہے ”کاتب“ کا معنی سطریں کھینچنے اور کسی شے پر نقشہ بنانے والا ہوتا ہے۔

”بِسْمِ الْخَطِّ“ میں باء ”کاتبین“ سے متعلق ہے اور ”سْمِ“، ”حُمُر“ کے وزن پر ”اَسْمَر“ کی جمع ہے اس سے مراد تیروں کے پھل ہوتے ہیں۔

”الخط“ بحرین کا ایک شہر ہے جس کے نام پر نیزے یعنی اس کی لکڑیاں اور دستے بنتی ہیں، عرب کہتے ہیں: ”رماح خطیة“ یعنی خوبصورت اور بہت قیمتی نیزے۔ ”سمر“ کی ”خط“ کی طرف اضافت ذرا سے تعلق کی بناء پر ہے۔ ”مَا“ نافیہ ہے اور ”تَرَكَتْ“ والا جملہ ”الکاتبین“ سے حال ہے۔ ”اَقْلَامُهُمْ“ (رفع سے) ”تَرَكَتْ“ کا فاعل ہے، معنی بنے گا: ان کے قلموں نے نہ چھوڑا۔

یہ جملہ استینافیہ ہے۔ ”اَقْلَامُ“، ”قَلَمُ“ کی جمع ہے اور اس سے مراد تیر اور نیزے ہیں مجازی اور استعارہ بالکنایہ کے طور پر جو ظاہر ہے۔

”حرف جسم“، ”تَرَكَتْ“ کا مفعول ہونے کی وجہ سے منصوب ہے۔ ”حرف“ کا معنی طرف ہے یا کمزور اوٹنی جیسے کسی شاعر نے کہا ہے:

و حرف کنون تحت راء ولم یکن

بدال یؤم الرسم غیبہ النقط

اور ”حرف“ کی ”جسم“ کی طرف اضافت لام کے معنی میں ہے جب حرف کا پہلا معنی مراد ہو یا بیان کیلئے یا ویسی اضافت ہے جیسے مشبہ بہ کی مشبہ کی طرف ہوتی ہے عبارت یوں ہوگی: جسم جیسے حرف ہوتا ہے اس کے دوسرے معنی کے لحاظ سے اور جسم سے مراد ان کے جسم ہیں جن دشمنوں کے ساتھ آپ نے جنگ کی۔

”غیر منعجم“ (نصب سے) ”حرف جسم“ سے حال ہے لیکن جس نے اسے اس کی صفت بنایا ہے تو وہ اس کے معنی سے دور ہے جو ظاہر ہے۔

”منعجم“ اسم فاعل کا صیغہ ہے ”انعجم“ سے یعنی اس نے نقطہ لگنا قبول کر لیا۔ ”غیر منعجم“ کا معنی جس پر نقطہ نہ ہو لیکن یہ مجازی طور پر وہ شخص ہوتا ہے جس کو زخم لگے یا استعارہ تبعیہ کے طور پر جو پوشیدہ نہیں۔ اس پر غور کر لو۔

اس شعر میں علم بدیع کا ایہام تناسب پایا جاتا ہے کیونکہ اس میں ”کتابۃ خط، قلم، حرف“ اور ”منعجم“ کا ذکر ہوا ہے۔

شعر سے یہ معنی نکلتا ہے کہ صحابہ کرام دشمنوں کے جسموں کو گویا کاغذ بنا کر ان پر لکھتے اور نقش کرتے تھے جو حرف کی طرح تھے جو ایسے خطی نیزوں سے باریک بنے تھے جن کے ٹوٹنے کا ڈر نہ تھا اور ان کی ان قلموں نے جو نیزوں جیسی تھیں، کافروں کے جسموں کی ایک طرف بھی نہ چھوڑی بلکہ ان قلموں نے ان پر نقطے (زخم) لگائے اور تلواروں سے ان پر زخموں کے نقش بنا دیئے۔



شعر (۱۳۱)

شَاكِي السِّلَاحِ لَهُمْ سِيْمًا تُمَيِّزُهُمْ
وَالْوَرْدُ يَمْتَازُ بِالسِّيْمَا مِنْ السَّلْمِ

(ترجمہ:) ”بہادروں کے پورے ہتھیار تھے ان کی ایک خاص نشانی تھی جو انہیں دوسروں سے یوں الگ کر دکھاتی تھی جیسے گلاب کا پھول، کیکر کے درخت سے الگ لگتا تھا۔“

حضرت امام بوسیری رحمہ اللہ نے جب صحابہ کرام کی گہری وہ خوبیاں بتا دیں جن کی وجہ سے مشرکوں اور کتابیوں سے الگ قسم کے لگتے تھے تو اب یہ بھی بتانا چاہتے ہیں کہ وہ کپڑوں کے علاوہ اپنی ذاتوں اور خاص نشانیوں کی بناء پر الگ تھلگ تھے چنانچہ فرمایا: ”شاکي السلاح الخ“۔
تحقیق الفاظ

”شاکي السلاح“ یا تو ”المصدری“ کی صفت ہے یا اس سے حال ہے اور ”شاکي“ کا لفظ ”شائك“ سے الٹا کیا گیا ہے جس کا معنی ہے: مکمل ہتھیاروں والا جیسے شاعر نے کہا ہے:

لدى اسد شاکي السلاح مقذف

له لبد اظفارہ لم تقلم

”شیر کے نزدیک مکمل ہتھیاروں والا تھا جو تجربہ کار شہ سوار تھے جو منڈے پر تھا جس کے ناخن تراشے نہ گئے تھے۔“

یہ ”شاکي“ کی جمع ہے جو اصل میں ”شاکين“ تھا جس کا نون اضافت کی وجہ سے گرا دیا گیا اور اس کو مفرد کہنے کا خیال کر لینا کسی عقلمند کا کام نہیں چہ جائیکہ کوئی عالم فاضل اسے مفرد کہہ سکے جو ظاہر ہے۔

پھر ناظم نے ”شاکي السلاح“ کے لفظ میں پہلے ہو چکی تفصیل کو مختصر کر دیا ہے۔

”لهم“ ظرف مستقر ہے جسے خبر بنا کر پہلے لایا گیا ہے۔

”سِيْمَا“ مبتداء ہے اور یہ جملہ ”المصدری“ کی خبر کے بعد دوسری خبر ہے یا اس سے حال ہے اور جس لفظ کو آخر میں آنا چاہیے اسے پہلے لایا جائے تو صخر کا فائدہ ہوتا ہے۔ ”سِيْمَا“ کا معنی وہ علامت ہے جو انسان کے چہرے پر ہوتی ہے جس کے ذریعے اس کے کچھ حالات کا پتہ چل جاتا

ہے۔ ”تمیز ہم“، ”سیما“ کی خبر ہے اور اس ”تمیز“ کا معنی بکھر جانا ہوتا ہے۔ اس میں موجود ضمیر ”سیما“ کی طرف جاتی ہے اور یہ لفظ الف مقصورہ کی وجہ سے مؤنث ہے اس میں مفعول کی ضمیر ”الاصحاب“ کی طرف جاتی ہے معنی یہ بنے گا کہ ”صحابہ کرام کی ایسی نشانیاں تھیں جو انہیں کافروں سے الگ کر دیتی تھیں۔

”والورد“ ایک مقدر سوال کا جواب ہے گویا یوں کہا گیا کہ نشانی سے تو دو ایسی چیزیں الگ الگ ہو گئیں جو ایک ہی جنس کی تھیں کیونکہ ”اصحاب“ اور ”عدای“ سبھی تو بنو آدم ہیں تو ناظم نے اس کا جواب یوں کہہ کر ہلکی سی تشبیہ سے دیا۔

”الورد“ (واؤ کی زبر سے) جانے پہچانے پودے کا پھول ہے (گلاب کا) جسے عربی میں ”حَوْجَم“

کہا جاتا ہے۔

”السلم“ (دونوں زبروں سے) وہ درخت ہے جو ”ورد“ کے درخت سے ملتا جلتا ہے لیکن ”ورد“ کا پودا اچھی پیدائش اور نظر کو بھانے کی بناء پر اس سے الگ قسم کا لگتا ہے چنانچہ ”ورد“ درخت کے معنی میں مجاز ہے اور ”سلم“ مجاز ہے ”زهر السلم“ کیلئے (”سلم“ کا پھول) اس پر غور کر لو۔

شعر کا معنی یہ بنتا ہے کہ رسول اللہ ﷺ کے صحابہ کرام پورا اسلحہ رکھتے تھے وہ کافروں اور بد بختوں سے یوں الگ قسم کے تھے کہ ان میں ہلکی قسم کی خوبیاں اور خوبصورت نشانی تھی کیونکہ وہ کافروں پر سخت جبکہ آپس میں عاجزی اور انکساری کی وجہ سے رحم سے یوں پیش آتے تھے جیسے ”ورد“ کا درخت ”سلم“ کے درخت سے اور ”ورد“ کا پھول ”سلم“ کے پھول سے الگ تھلگ دکھائی دیتا ہے چنانچہ قرآن کریم کے اندر صحابہ کرام کے بارے میں آیا ہے کہ ”سَيَمَاهُمْ فِي وُجُوهِهِمْ مِّنْ أَثَرِ الشُّجُودِ“ (سورۃ الفتح، آیت: ۲۹) چنانچہ وہ وجود کائنات کے باغوں میں درختوں اور اسلامی لشکروں اور جتھوں کی کیاریوں کے شگوفے ہوئے۔



شعر (۱۳۲)

تُهْدِي إِلَيْكَ رِيَا حُ النَّصْرِ نَشْرَهُمْ
فَتَحْسِبُ الزَّهْرَ فِي الْأَكْمَامِ كُلِّ كَيْبِي

(ترجمہ:) ”ان بہادروں کو ملنے والی خدائی مدد کی ہوا میں تمہارے پاس ان کے کارنامے پہنچا رہی ہیں تو تم ان دلیروں کو یوں سمجھو کہ جیسے وہ غلافوں میں شگوفے تھے۔“

اب امام بوصیری رحمہ اللہ یہ بتانا چاہتے ہیں کہ ان بہادروں کو ہر جنگ میں غیبی امداد ملتی تھی جو اگرچہ بعض جنگوں کے اندر لوگوں کو نظر نہ آتی تھیں چنانچہ فرماتے ہیں: ”تهدى اليك الخ“۔
تحقيق الفاظ

”تهدى“، ”أهدى يهدى“ سے ہے، معنی ”پہنچاتی ہیں“ ہے یا معنی ہے: ”ہدیہ پہنچانا“۔
”اليك“، ”تهدى“ سے متعلق ہے اور یہ خطاب ہر ایک کو ہے اور ”تهدى“ کا جملہ حال ہے اور ”رياح“ (رفع سے) ”تهدى“ کا فاعل ہے یہ ”ريح“ کی جمع ہے اور ”رياح النصر“ سے مراد امداد کر کے طاقت دینا ہے جیسے حضور ﷺ کا فرمان ہے: ”نصرت بالصبا وأهلك عاڈ بالدبور“ (صحیح البخاری، کتاب الاستقاء، باب قول النبی نصرت بالصبا، جلد ۱ صفحہ ۳۵۴، رقم الحدیث: ۱۰۵۳) (مجھے صبا کی ہوا کے ذریعے امداد دی گئی ہے جبکہ قوم عاڈ چھلی ہوا کے ذریعے ہلاک کر دیئے گئے تھے) اور ”رياح“ سے مراد مصیبتیں ہیں، جیسے شاعر کہتا ہے:

إِذَا هَبَّتْ رِيَا حُكَ فَاغْتَنِمَهَا
فُعُقْبِي كُلِّ عَاصِفَةٍ سُكُونُ

’جب تمہیں مصیبتیں گھیر لیں تو انہیں غنیمت سمجھو کیونکہ ہر جھلکا اور تیز ہوا کے بعد سکون مل جایا کرتا ہے۔‘

اور ”رياح“ کا ”نصر“ (بمعنی امداد) کی طرف مضاف ہونا مجاز ہے کیونکہ قرآن کریم میں آیا ہے: ”وَمَا النَّصْرُ إِلَّا مِنْ عِنْدِ اللَّهِ“ (سورۃ الانفال، آیت: ۱۰)۔

”نشرہم“ (نصب سے) ”تهدى“ کا مفعول ہے اور ضمیر صحابہ کرام کی طرف جاتی ہے۔
”نشر“ کا حقیقی معنی پیاری خوشبو ہے اور یہاں اس سے مراد ان کی ستھری اور عجیب خبریں ہیں چنانچہ

اس میں استعارہ اور مجاز واضح ہے۔

”فتحسب“ میں فاء تفریع کیلئے ہے۔ یہ خطاب کا صیغہ ہے جس کا معنی ”تم گمان کرو گے“۔
 ”الزھر“ (نصب سے) ”تحسب“ کا مفعول اور اس میں الف لام استغراق کیلئے ہے یعنی

ہر پھول اور ”الزھر“ پودے کا شگوفہ ہوتا ہے۔

”فی الاکمام“ ظرف مستقر ہے جو ”الزھر“ سے حال ہے یا اس کی صفت ہے اور
 ”اکمام“ بھی جمع ہے جو اکیلی چیزوں کی اکیلی چیزوں کی طرف تقسیم چاہتی ہے مطلب یہ ہوا کہ
 پھولوں میں ہر ایک ہر ہر شگوفے میں ہے اور جو ”اکمام“ کو ”کُم“ (کاف پر پیش) کی جمع بناتا ہے
 اور اس کے لام کو مضاف الیہ کا بدلہ کہتا ہے یعنی ”رسول اللہ“ اور شعر میں تبدیلی کا خیال کرتا ہے تو وہ
 زبردستی کرتا ہے۔

”کُلّ کَمّی“ (نصب سے) ”تحسب“ کا دوسرا مفعول ہے۔ اس کا معنی بہادر ہے اس کی

یاء پر شدہ ہے وزن فعیل ہے لیکن ضرورت کی خاطر شد نہیں پڑھتے۔

قصیدہ بردہ شریف کے زیادہ تر شارحین اس شعر میں ”قَلْب“ (اَلٹ پلٹ) مانتے ہیں اور کہتے
 ہیں کہ ”تحسب“ کا دوسرا مفعول (”کُلّ کَمّی“) معنوی طور پر پہلے مفعول (الزھر) سے پہلے
 آیا ہے تو پھر اس کا معنی یوں ہوگا: تم یہ سمجھو کہ ہر بہادر اپنی اپنی زرہ میں یوں ہے جیسے پھول غلاف
 میں ہوتا ہے۔

شعر سے یہ معنی نکلتا ہے کہ صحابہ کرام کی تمام جنگوں میں مدد ہوتی تھی اور وہ کافروں پر یوں
 غالب ہو جایا کرتے تھے کہ ان کی ہر طرف پھیلنے والی خبریں تمہاری طرف آنے والا یہ تحفہ (کہ جب
 بھی امداد کی ہوائیں چلیں اور ان کی تائید کی خبریں گردش کیں) ان کی خبریں دیتا ہے اور اگر ایسا ہے تو
 تمہیں گمان کرنا ہوگا کہ جب بھی تم پھولوں کو ان کے غلافوں میں دیکھو گے تو وہ گویا یہی بہادر صحابی
 ہوں گے جو زرہوں میں دکھائی دیں گے کیونکہ جیسے پھول ستھری خوشبو دیتے ہیں، یونہی یہ صحابہ خوشبو
 دیتے ہیں اور عجیب مہک رکھتے ہیں۔

شعر (۱۳۳)

كَانَهُمْ فِي ظُهُورِ الْخَيْلِ نَبْتُ رَبِّي

مِنْ شِدَّةِ الْحَزْمِ لَا مِنْ شِدَّةِ الْحَزْمِ

(ترجمہ:) ”گویا یہ بہادر گھوڑوں کے تنگ گسے ہونے کی وجہ سے نہیں بلکہ ماہر گھوڑا سوار ہونے کی وجہ سے گھوڑوں کی پیٹھوں پر یوں ابھرے دکھائی دیتے ہیں کہ جیسے ٹیلے پر سبزہ ابھرا ہوتا ہے۔“

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے جب بہادروں کے بارے میں بتا دیا کہ وہ تلواریں چلانے میں ماہر تھے تو بتانا چاہتے ہیں کہ وہ میدان جنگ میں گھوڑوں کے استعمال کا بھی بہت زیادہ تجربہ رکھتے تھے چنانچہ فرمایا: ”کانہم الخ“۔

تحقیق الفاظ

”کان“ تشبیہ کیلئے ہے اور ضمیر صحابہ کرام کی طرف جاتی ہے۔

”فی ظہور“ ظرف مستقر ہے جو ضمیر سے حال ہے اور ”ظہور“ ”ظہر“ کی جمع ہے، معنی

پیٹھ ہے۔ ”الخیل“ اسم جنس ہے جو ہر مذکر اور مؤنث پر بولا جاتا ہے۔ ”نبت“ کا ”ربی“ کی

طرف مضاف ہونا ایسا ہے جیسے ”شجر الاراک“ کی اضافت ہے۔ ”ربی“ (الف مقصورہ ”رَبْوَةٌ“

راء پر تینوں حرکتیں آ سکتی ہیں)۔ ”اصحاب“ کی ”نبت الربی“ اور ”خیولہم“ کی ”ربی“ سے

تشبیہ ثابت ہونے اور دیر تک مقرر رہنے میں ہے کیونکہ ”نبت ربی“ ساری بوٹیوں کے مقابلے میں

زمین میں زیادہ تر تک جمی رہتی ہے کیونکہ اس کی جڑیں زیادہ لمبی ہوتیں اور پانی تک چلی جاتی ہیں۔

”من شدۃ“ کا تعلق کاف تشبیہ سے ہے اس کی شین پر زیر ہے اور ”الحزم“ (حاء پر زبر اور

زاء پر سکون) بوٹی کی طاقت اور استعمال کی رعایت کرنے کے معنی میں ہے۔

”لامن شدۃ“ یہ ایک وہم کو دور کرنے کیلئے ہے جو پہلے سے پیدا ہو سکتا ہے اور وہ یہ کہ ان کا

گھوڑوں پر ثابت ہونا اس وجہ سے ممکن ہے کہ ان زینوں میں مضبوطی، مضبوط باندھنے کی وجہ سے ہے

ان کی ذاتوں کی وجہ سے نہیں تو ناظم اس وہم کو ”من شدۃ الحزم لامن شدۃ الحزم“ سے دور

کرتے ہیں۔ دوسرا لفظ ”شدۃ“ (شین پر زبر) سے ہے جیسے دوسرا ”حزم“ (حاء اور زاء پر پیش کے

ساتھ ہے یہ ”حزام“ کی جمع ہے یہ ایسی چیز ہے کہ جس سے گھوڑوں کی زین کو اس کی پیٹھ پر گس کر اور مضبوطی سے باندھا جاتا ہے۔

شعر کا معنی یہ نکلتا ہے کہ صحابہ کرام گھوڑوں کو استعمال کرنے میں ماہر تھے اور وہ ان پر ہلنے کے بغیر مضبوطی سے یوں بیٹھتے تھے جیسے ”نبت ربی“ ہوتی ہے کہ اس میں مضبوطی اور ٹھہراؤ ہوتا ہے اور جمی ہوتی ہے اور مضبوطی کی طاقت رکھتی ہے اس سے نہیں جس کے ساتھ اس کی زینیں باندھی جاتی ہیں اور نہ اس سے جس سے جھول باندھا جاتا ہے۔



شعر (۱۳۴)

طَارَتْ قُلُوبُ الْعِدَى مِنْ بَأْسِهِمْ فَرَقًا
فَمَا تَفَرَّقُ بَيْنَ الْبِهِمِ وَالْبِهِمِ

(ترجمہ:) ”دشمنوں کے دل صحابہ کرام سے جنگ کی بناء پر بے قابو ہو گئے تھے چنانچہ وہ بکریوں کے بچوں اور بہادروں میں تمیز تک نہیں کر سکتے تھے۔“

حضرت امام بوسیری رحمہ اللہ نے جب یہ بتا دیا کہ صحابہ کرام انتہائی بہادر، مضبوط اور جنگ کے اوزار استعمال کرنے میں بڑی مہارت رکھتے تھے تو اب ان کے نتیجے کی بناء پر اس خوف کو بتانے لگے ہیں جو دشمنوں کی عقلوں اور دلوں میں آچکا ہے چنانچہ فرمایا: ”طارت الخ“۔
تحقیق الفاظ

”طارت“ کا جملہ ابتدائی ہے اور یہ لفظ ”طيران“ سے لیا گیا ہے جس کا معنی اپنی جگہ سے ہلنا ہے۔

”قلوب العدی“ (رفع سے) ”طارت“ کا فاعل ہے اور اس میں مجاز اور استعارہ پایا جاتا ہے چنانچہ ”طاعت“ میں استعارہ تبعیہ اور ”القلوب“ میں استعارہ مکنیہ ہے جو واضح ہے اور اس سے پتہ چلتا ہے کہ ”طيران القلب“ سے مراد دل کا بے چین اور پریشان ہونا ہے۔
”من باسہم“ کا تعلق ”طارت“ سے ہے ”من“ ابتدائیہ ہے اور ”باس“ کا معنی سختی ہے جیسے اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: ”وَاطْعَمُوا الْبَائِسَ الْفَقِيرَ“ (سورۃ الحج، آیت: ۲۸) جمع کی ضمیر ”اصحاب“ کی طرف جاتی ہے۔

”فرقا“ (نصب سے) ”طارت“ کا مفعول لہ حصولی ہے جیسے ”قَعَدْتُ عَنِ الْحَرْبِ جُبْنًا“ میں ہے یا اس کا مفعول مطلق ہے یا اس کی نسبت سے تمیز ہے یا اس کے فاعل سے حال ہے۔ خود سوچو!

”فما“ میں فاء تفریع کیلئے ہے یا سیبہ اور ”ما“ نفی کے معنی میں ہے۔

”تفرَّق“، ”تفریق“ سے ہے اور اس میں پوشیدہ ضمیر قلوب کی طرف جاتی ہے۔

پہلا ”بہم“ (باء پرزبر اور ہاء پر سکون) ”بہمہ“ سے جس کا معنی بکری کا بچہ ہے اور دوسرا

”بہم“ (باء پر پیش اور ہاء پر زبر) ”بہمہ“ (باء پر پیش اور ہاء پر سکون) بہادر کا معنی دیتا ہے۔
اس شعر میں علم بدیع کی اصطلاح ”جناس محرف“ ہے ”بہم“ اور ”بہم“ میں جبکہ
”فرقا“ اور ”تفرق“ میں ”جناس شبیہ بالمشتق“ ہے۔

شعر کا معنی یہ نکلتا ہے کہ دشمنوں کے دل جنگ میں ان صحابہ کرام کی مضبوطی دیکھ کر بے چین اور
گھبرائے ہوئے تھے ان کی عقلیں یوں جواب دے چکی تھیں کہ انہیں بہادر اور بکری کے بچے کی تمیز
بھی نہ رہی تھی۔



شعر (۱۳۵)

وَمَنْ تَكُنْ بِرَسُولِ اللَّهِ نُصْرَتُهُ
إِنْ تَلَّقَهُ الْأُسْدُ فِي أَجَامِهَا تَجْم

(ترجمہ:) ”جسے رسول اکرم ﷺ کی مدد حاصل ہو جاتی ہے تو اس کی راہ میں جنگلی شیر بھی رکاوٹ نہیں بن سکتے۔“

حضرت امام بوسیری رحمہ اللہ نے جب یہ بتا دیا کہ صحابہ کرام کو سارے غزووں میں الہی امداد ملتی رہی اور وہ کافروں، دوزخیوں سے بھاگنے والے نہ تھے تو اب اس بات کا سبب بتاتے ہیں کہ ان میں یہ خوبی کس وجہ سے تھی چنانچہ فرماتے ہیں: ”وَمَنْ تَكُنْ بِرَسُولِ اللَّهِ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

واو ابتدائیہ ہے ”مَنْ“ شرطیہ ہے ”تَكُنْ“ (جزم سے) یا تو تامہ ہے یا ناقصہ۔ ”بِرَسُولِ اللَّهِ“ تَكُنْ کی خبر ہے جو پہلے آگئی ہے اس کی باء یا تو استعانتہ کیلئے ہے یا سببیہ ہے اور اس لفظ کو پہلے لانے میں شعر کی ضرورت کا خیال ہے۔ ”نُصْرَتُهُ“ (رفع سے) ”تَكُنْ“ کا فاعل ہے اور اس کی اضافت یا تو فاعل کی طرف ہے یا مفعول کی طرف۔ ”إِنْ“ شرطیہ ہے۔ ”تَلَّقَهُ“ ”إِنْ“ کی وجہ سے مجزوم ہے اصل میں ”تَلَّقَاهُ“ تھا مفعول کی ضمیر ”أُسْدُ“ (ہمزہ پر پیش اور سین پر سکون) کی طرف جاتی ہے یہ ”أُسْدُ“ کی جمع ہے جس کا معنی شیر ہے اور یہ (پیش کے ساتھ) ”تَلَّقَهُ“ کا فاعل ہے اور ”تَلَّقَهُ“ کے مفعول کو اس کے فاعل سے پہلے لانے میں یہ اشارہ ہے کہ پیدل شخص اپنی مرضی سے شیر کے سامنے نہیں آتا۔

”فِي أَجَامِهَا“ یا تو ”تَلَّقَهُ“ سے متعلق ہے یا آخر میں آنے والے ”تَجْم“ سے متعلق ہے۔ ”أَجَامُ“ (مد سے) ”أَجْمَةُ“ کی جمع ہے یہ وہ زمین ہوتی ہے جس میں بہت سارے نرکل (کانے) کے پودے ہوں ”أَجَامُ“ کی اس ضمیر کی طرف اضافت جو شیر کی طرف لوٹتی ہے صرف تھوڑے سے تعلق کی وجہ سے ہے اور پھر ”فِي أَجَامِهَا“ کہنے کی شرط اور قید لگانا زیادہ زوردار مبالغہ پیدا کرتا ہے کیونکہ شیر جنگل میں ہو کر اس حالت سے زیادہ خوف والا ہوتا ہے جو جنگل سے باہر ہوتی ہے کیونکہ یہ وہاں اپنے میدان میں دوسروں کو ہٹانے میں زیادہ زور رکھتا ہے۔

”نجم“ (تاء پر زبر اور جیم پر زبر) ”وَجَمَّ يَجْمُ وَجُومًا“ سے ہے یہ یا تو غمگین کا معنی دیتا ہے یا چپ ہونے کا اس میں پوشیدہ ضمیر ”اسد“ کی طرف جاتی ہے اور یہ جملہ دوسری شرط کا جواب ہے اور جملہ شرطیہ پہلی شرط کا جواب ہے۔

شعر کا معنی یہ بنتا ہے کہ صحابہ کرام کو جہاد میں مدد صرف رسول اللہ ﷺ کے ذریعے ملتی تھی کیونکہ جسے دشمن کے مقابلے میں رسول اللہ ﷺ کے ذریعے مدد حاصل ہو جاتی ہے تو وہ تمام مصیبتوں اور شکست سے محفوظ اور بچا ہوا ہوتا ہے چنانچہ اگر سارے کے سارے شیر اپنی اپنی جگہوں میں اپنے سامنے آنے والوں کو ہلاک کرنے کا خیال کریں حالانکہ وہ وہاں زیادہ دلیر ہوتے ہیں تو وہ اپنی حالت میں رُک جاتے ہیں کیونکہ انہیں رسول اللہ ﷺ کا خوف اور احترام ہوتا ہے۔

یاد رہے کہ اس شعر میں اس واقعہ کی طرف اشارہ ہے جس میں آپ کے غلام حضرت سفینہ رضی اللہ عنہا کا شیر کو نیچا دکھانے کا ذکر ہے اور وہ اس وقت جب رسول انور ﷺ نے انہیں یمن میں حضرت معاذ رضی اللہ عنہ کی طرف بھیجا تھا راستے میں انہیں شیر مل گیا جس پر حضرت سفینہ رضی اللہ عنہ نے اس سے کہا کہ میں رسول اللہ ﷺ کا غلام ہوں اور ان کا خط بھی میرے پاس ہے چنانچہ وہ شیر کانپ کر راستے سے ہٹ گیا تھا۔

ایک اور روایت میں حضرت سفینہ رضی اللہ عنہا بتاتے ہیں کہ میری کشتی ٹوٹ گئی تو میں ایک جزیرے کی طرف جانکلا یکا یک دیکھا تو شیر سامنے تھا میں نے اس سے کہا کہ میں رسول اللہ ﷺ کا غلام ہوں جس پر اس نے اپنے مونڈھے سے مجھے اشارہ کیا اور پھر میرے راستے پر ڈال دیا۔



شعر (۱۳۶)

وَلَنْ تَرَى مِنْ وَلِيٍّ غَيْرَ مُنْتَصِرٍ
بِهِ وَلَا مِنْ عَدُوٍّ غَيْرَ مُنْقَصِمٍ

(ترجمہ:) ”تم آپ کا ایسا کوئی غلام نہ دیکھو گے کہ جسے حضور ﷺ سے مدد نہ ملی ہو اور نہ ہی آپ کا ایسا دشمن دیکھو گے جو ذلیل اور رسوا نہ ہو۔“

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ اب پہلے شعر کی خفیہ بات کو اس شعر کے ذریعے اور زیادہ مضبوط کرتے ہیں چنانچہ فرماتے ہیں: ”ومن ترى الخ“۔

تحقیق الفاظ

واو عاطفہ ہے حرف ”لَنْ“ نافیہ اور ”ترى“ خطاب کا صیغہ ہے یا تو یہ آنکھوں سے دیکھنے کے معنی میں ہے یا ذہن میں سوچنے کے معنی دیتا ہے۔

”من ولی“ میں حرف ”من“ زائدہ ہے اور ”ولی“ کی تثنین تکثیر کیلئے ہے۔ ”ولی“ کا معنی قریب ہونے والا ہے ”غیر“ کا لفظ یا تو زیر کے ساتھ ہے کہ یہ ”ولی“ کی صفت ہے یا پیش سے ہے کہ محذوف مبتداء کی خبر ہے یا حال ہونے کی وجہ سے اس پر نصب ہے اور یہ سب معنی اس صورت میں ہیں جب ”رؤية“ کا معنی آنکھوں سے دیکھنا ہو ورنہ یہ دوسرا مفعول ہوگا۔

”منتصر“ اسم مفعول ہے ”انتصر“ سے۔ ”بہ“ اسی سے متعلق ہے اور ضمیر حضور ﷺ کی طرف جاتی ہے اس مدد سے مراد طاقت و قوت دینا ہے اور جو ”منتصر“ کو صاد پر زیر پڑھ کر اسے اسم فاعل بناتا ہے تو شعر کے معنی سے غافل ہے۔

”ولا من عدو“ کا ”من ولی“ پر عطف ہے یعنی تم حضور ﷺ کے دشمن کو بھی نہیں دیکھو گے۔

”غیر“ کا لفظ یا تو جز یا رفع یا نصب سے ہے۔ ”منقصم“ اسم فاعل ہے ”انقصم“ سے جس کا معنی ہے: کٹ گیا اور الگ ہو گیا۔ یہ لفظ کچھ نسخوں میں فاء سے بھی آیا ہے تو یہ جدا کرنے کے بغیر توڑنا ہوگا جیسے پہلا جدا کرنے سے ہے۔

شعر کا معنی یہ بنا کہ صحابہ کرام کو حضور ﷺ سے ہر وقت مدد حاصل تھی کیونکہ تمہیں جاننے اور

دیکھنے میں ایسا کوئی نہیں ملے گا جو آپ کا غلام ہو کر مدد سے رہ جائے اور یونہی آپ کا کوئی دشمن نہ دیکھو گے جو ذلیل نہ ہوا ہو بلکہ آپ کے ہر غلام کو مدد ملی اور ہر دشمن ذلیل و خوار ہوا۔

علماء و اولیاء کو آقا کی مدد ملتی ہے

یاد رہے کہ تمام اولیاء کرام کو حضور ﷺ کی مدد ملی ہوئی ہے چنانچہ اسی بناء پر حضرت شیخ احمد مہتمم ولی اللہ فرماتے ہیں کہ قطب اس وقت تک قطب نہ بنتے، نہ اوتاؤ اوتاؤ بنتے اور نہ عماد عماد بنتے جب تک انہیں رسول اللہ ﷺ کی مدد حاصل نہ ہوتی اور جب تک وہ آپ کی تعظیم نہ کرتے اور آپ کی شریعت کو عظیم نہ جانتے اور جو شریعت کا مخالف ہوتا ہے وہ حضور ﷺ کا مخالف ہوتا ہے اور یونہی جو عالموں میں سے آپ کی شریعت کا مخالف ہوتا ہے اور جو بھی حضور ﷺ کو تکلیف دینے کی بات کرتا ہے تو وہ آپ کا دشمن ہوتا ہے اور اسی وجہ سے علامہ ہتھی نے روح البیان میں ایک بڑے عالم کے بارے میں اس کی یہ بات بتائی ہے کہ میں کچھ غافلوں کی محفل میں تھا کہ اس نے یہاں تک کہہ دیا کہ کوئی شخص خواہشِ نفسانی سے بچ نہیں سکتا اور حضور ﷺ کی طرف اشارہ کرتے ہوئے کہا کہ اگرچہ فلاں بھی ہوں کہ انہوں نے بھی تو فرمایا ہوا ہے کہ تمہاری اس پوری دنیا میں سے مجھے تین چیزیں پسند ہیں: خوشبو اور عورتیں اور نماز میں میری آنکھوں کی ٹھنڈک ہے (السنن الکبریٰ کتاب النکاح باب الرغبۃ فی النکاح جلد ۷ صفحہ ۱۲۵ رقم الحدیث: ۱۳۴۵۴)۔ اس پر میں نے اس سے کہا کہ کیا تجھے اللہ سے شرم نہیں آتی، حضور ﷺ نے یہ تو نہیں فرمایا کہ میں خود ان چیزوں کو پسند کرتا ہوں بلکہ انہوں نے تو فرمایا ہے کہ مجھے یہ چیزیں پسند کرائی گئی ہیں تو پھر ایسے شخص کو بُرا بھلا کیوں کہا جا سکتا ہے جسے اللہ کی طرف سے عزت دینے کی خاطر یوں فرمایا گیا ہو۔

پھر اس کی اس گفتگو پر مجھے بہت غم ہوا چنانچہ میں نے سرکارِ دو عالم ﷺ کی خواب میں زیارت کی جس میں آپ نے فرمایا کہ غم کرنے کی ضرورت نہیں کیونکہ میں نے اس کا کام تمام کر دیا ہے پھر میں نے سن ہی لیا کہ وہ اپنی کھیتی یا کاروبار کی طرف گیا تو راستے ہی میں قتل ہو گیا۔

اللہ تعالیٰ انبیاء علیہم السلام اور ان کے وارث علماء و اولیاء کے بارے میں ایسی بکو اس کرنے سے

پناہ دے۔ (انتہی) آمین!

شعر (۱۳۷)

أَحَلُّ أُمَّتَهُ فِي حِرْزٍ مِثْلِهِ
كَاللَّيْثِ حَلٌّ مَعَ الْأَشْبَالِ فِي أَجْمِ

(ترجمہ:) ”سید دو عالم ﷺ نے اپنی امت کو اپنے دامن میں لے کر یوں پناہ دے رکھی ہے جیسے شیر جنگل میں اپنے بچوں کو پوری حفاظت میں لیتا ہے۔“

جب پہلے شعروں سے یہ معلوم ہو رہا تھا کہ حضور ﷺ سے مدد اوروں کی بجائے صرف صحابہ کرام ہی کو ملتی ہے تو حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے اس خیال کو رد کرتے ہوئے اور مدد کو عام کرتے ہوئے فرمایا: ”أَحَلُّ أُمَّتَهُ“ یعنی اسے اتارا یا لے لیا۔

تحقیق الفاظ

”أُمَّتَهُ“، ”أَحَلُّ“ کا مفعول ہے۔

امت کی دو قسمیں

امت کی دو قسمیں ہیں، ایک امتِ اجابت، یہ وہ لوگ ہیں جو حضور ﷺ کو مانتے ہیں اور امتِ دعوت، یہ وہ لوگ ہیں جنہیں حضور ﷺ کی طرف سے دعوتِ اسلام ملی ہو، یہاں اس سے مراد پہلی امت ہے۔

”فِي حِرْزٍ“ کا تعلق ”أَحَلُّ“ سے ہے، یہ لفظ حاء کی زیر سے ہے جس کا معنی قلعہ اور حفاظت ہے چنانچہ اس میں دین کو مضبوط قلعے سے اس بناء پر تشبیہ ہے کہ اس کے ذریعے اس میں داخل ہونے والے کو پناہ ملتی ہے۔

”كَاللَّيْثِ“، ”أَحَلُّ“ کے فاعل سے حال ہے۔ ”لَيْثٌ“ شیر کا اسم ہے اور دوسرا ”حَلٌّ“، ”اللَّيْثُ“ سے اس بناء پر صفت ہے کہ اس میں لام عہد ذہنی کیلئے ہے یا پھر حال ہے اور بھی اُتارا کے معنی میں ہے۔

”الْأَشْبَالُ“، ”شَبَلٌ“ (شین پر زیر) سے ہے جس کا معنی شیر کا بچہ ہے۔

”فِي أَجْمِ“ دوسرے ”حَلٌّ“ سے متعلق ہے اور یہ لفظ دونوں حرفوں پر زبر والا ہے جس کا معنی

وہ مکان اور جگہ ہے جس میں شیر رہتا ہو۔

حضرتِ ناظم رحمہ اللہ نے ہمارے نبی کریم ﷺ کو طاقت ور ہونے کی بناء پر شیر سے تشبیہ دی ہے اور اس کے ساتھ ساتھ زبردست بہادری، رعب و دبدبہ، سخت پکڑ اور اولاد کی حمایت میں تشبیہ ہے اور اولاد کو اس کی اولاد سے اس بناء پر تشبیہ دی ہے کہ آپ شیر کی طرح اس کی زندگی کا سبب ہیں اور ”مِلَّة“ کو جنگل سے اس بناء پر تشبیہ دی ہے کہ یہ دونوں ہی حفاظت کرنے اور دوسروں کے نقصان سے بچانے کا سبب ہیں۔

اس شعر کا مطلب یوں بنتا ہے کہ رسول اللہ ﷺ نے اپنی اُمت کو اپنے مضبوط دین میں یوں اتار لیا ہوا ہے جیسے شیر اپنے بچوں کو حفاظت کی خاطر جنگل میں اپنے ساتھ رکھتا ہے چنانچہ کوئی بھی شخص آپ کی اُمت پر قابو پا کر ان پر ظلم نہیں کر سکتا اور نہ ہی ان پر کوئی مصیبت نازل ہو سکتی ہے۔ اگر تم کہو کہ بارہا تم خود بھی دیکھتے ہو کہ آپ کی اُمت پر ان کے دشمن غالب ہو جاتے ہیں اور ان پر بے شمار مصیبتیں اُتر پڑتی ہیں تو پھر حضرتِ ناظم رحمہ اللہ کی طرف سے یہ دو شعر کیسے صحیح گئے جا سکتے ہیں؟ تو میں کہوں گا کہ ناظم کے نزدیک اُمتوں کا آخرت کی مصیبتوں سے محفوظ ہونا مراد ہے اور پھر زمین میں دھنسنے، شکلیں بگڑنے جیسی مصیبتوں سے بچاؤ ہے جو دنیا میں باقی اُمتوں پر نازل ہوتی رہیں تاہم تم یوں بھی کہہ سکتے ہو کہ آپ کی اُمت ان گذشتہ ساری مصیبتوں اور کسی کے قابو آنے سے بچی ہوئی ہے لیکن جس پر کوئی قابو پالیتا ہے اور اس پر مصیبتیں نازل ہوتی ہیں تو آپ کی پوری طرح اُمت ہی نہیں کیونکہ آپ کی اُمت تو وہی ہو سکتی ہے جو آپ کی پیروی کرے اور آپ کی پیروی تو وہی کر سکتا ہے جو دنیا سے منہ موڑ لے کیونکہ حضور ﷺ تو صرف اللہ اور روزِ قیامت ہی کی طرف بلاتے رہے ہیں، وہ دنیا سے ہٹے ہوئے تھے اور اس کے جلدی میں مل جانے والے مزوں سے بھی دور تھے چنانچہ جو دنیا سے منہ موڑ لے گا، مصیبتوں اور دشمنوں کے قابو میں آنے سے بچا ہوگا لیکن جو آپ کے طریقے سے ہٹ گیا، آپ کی پیروی سے باز آ گیا، دنیا کا لالچ کرنے لگا اور ایسے لوگوں کے ساتھ مل گیا جن کے بارے میں اللہ تعالیٰ نے فرما رکھا ہے کہ ”فَأَمَّا مَنْ طَغَىٰ وَآثَرَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا فَإِنَّ الْجَحِيْمَ هِيَ الْمَأْوٰى“ (سورۃ النازعات آیت: ۳۷-۳۹) (جو سرکش ہو کر دنیا کو پسند کرنے لگا تو اس کا ٹھکانا جہنم ہے) تو وہ آپ کی راہ سے ہٹ چکا اور آپ کی اُمت ہونے سے انکار کر بیٹھا تو اس پر مصیبتیں ہی تو نازل ہوں گی اور وہ دشمن ہی کے قابو میں آئے گا۔ اے بندے! ذرا غور تو کرو تم صبح سے لے کر شام تک جلدی ملنے والی چیزوں کے لالچ کرتے ہو اور دنیا فانی کے علاوہ ہلتے بھی نہیں ہو

اور پھر یہ لالچ بھی رکھتے ہو کہ کل تم ان کی اُمت اور پیروکاروں میں شمار ہو سکو گے۔ ہائے ہزار افسوس! ہماری سوچ کتنی دور ہے اور لالچ کتنا بُرا ہے۔

یاد رہے کہ اس شعر میں اس حدیثِ قدسی کی طرف اشارہ ہے کہ ”لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ“ میرا قلعہ ہے اور جو میرے قلعے میں آ گیا تو وہ میرے عذاب سے بچ جائے گا“ (مرقاۃ المفاتیح، کتاب الصلاة، باب الذکر بعد الصلاة، الفصل الثالث، جلد ۳ صفحہ ۵۸) اور پھر اللہ کے اس فرمان کی طرف بھی اشارہ ہے کہ ”الْأَنْبِيَاءُ أَوْلَىٰ بِالْمُؤْمِنِينَ مِنْ أَنْفُسِهِمْ وَأَزْوَاجُهُ أُمَّهَاتُهُمْ“ (سورۃ الاحزاب، آیت: ۶) (نبی کریم ﷺ مسلمانوں کی اپنی ذاتوں کے لحاظ سے ان سے زیادہ قریب اور آپ کی پاکدامن بیویاں ان کی مائیں ہیں) بلکہ ایک اور شاذ قراءت میں یوں بھی ہے کہ ”وَهُوَ أَبٌ لَّهُمْ“ (اور آپ ان کے باپ ہیں)۔



شعر (۱۳۸)

كَمْ جَدَلْتُ كَلِمَاتُ اللَّهِ مِنْ جَدَلٍ

فِيهِ وَكَمْ خَصَمَ الْبُرْهَانَ مِنْ خَصِمٍ

(ترجمہ:) ”ایسے کئی موقعے آچکے ہیں کہ اللہ کے کلمات یعنی قرآن نے آپ کے مقابلہ

کرنے والوں کو پٹخ اور پچھاڑ دیا اور بہت مرتبہ ایسا بھی ہوا کہ برہان یعنی آپ کے معجزوں

نے سخت دشمنوں پر بھی قابو پالیا۔“

جب پہلے شعر سے پتہ چل چکا کہ اسلام ایک مضبوط قلعہ ہے اس پر کوئی بھی دشمن غالب نہیں آ

سکتا بلکہ دشمنوں پر یہی غالب آتا ہے تو اب حضرت ناظم رحمہ اللہ اس کی ذرا وضاحت فرماتے ہیں:

”کم جدلت کلمات اللہ الخ۔“

تحقیق الفاظ

”کم“ خبریہ ہے جو کثرت کا معنی دیتا ہے۔ ”جدلت“ ”تجدیل“ سے ہے جس کا معنی

زمین پر رکھنا ہے یعنی بہت مرتبہ زمین پر رکھ دیا اور پٹخا۔

”کلمات اللہ“ (رفع سے) ”جدلت“ کا فاعل ہے اس سے مراد قرآن کریم ہے کیونکہ

اسلام اسی کو کہتے ہیں۔ ”من جدل“ ”جدلت“ کا مفعول ہے۔ ”من“ زائدہ ہے اور ”جدل“

(دال پر زیر) یعنی بہت جھگڑا۔ ”فیہ“ کا تعلق ”جدل“ سے ہے۔ ضمیر یا تو ”مِلَّة“ کی طرف جاتی

ہے اسے اسلام اور دین بنا کر یا رسول اللہ کا لفظ دے کر تو یوں یہ مجاز حدنی ہوگا عبارت یوں ہوگی:

”فی دین رسول اللہ۔“

”کم خصم“ کا عطف ”کم جدلت“ پر ہے اور یہ لفظ شد سے اور زیادہ مبالغہ کیلئے ہے

معنی ہوگا کہ جھگڑے میں بہت مرتبہ غالب ہوا۔

”البرهان“ (رفع سے) ”خصم“ کا فاعل ہے اس برہان میں معجزے اور واضح کرامتیں بھی

شامل ہیں۔

”خصم“ میں ”من“ زائد ہے جیسے ”من جدل“ میں زائد ہے۔ اسے مثبت جملے میں زیادہ

کیا جاسکتا ہے جیسے ”قَدْ كَانَ مِنْ مَطَرٍ“ (بارش ہوئی) تاہم یہاں آئے ہوئے دو فعل دیکھنے میں

مثبت (ان میں نفی نہیں) ہیں لیکن یہ اپنے اندر نفی کا معنی رکھتے ہیں، غور کر لو۔
 ”خَصِم“ (صاد پر زیر) کا معنی بہت جھگڑالو ہے۔

شعر کا مطلب یوں ہے: اللہ کی طرف سے آنے والے کلمات نے جھگڑے میں بہت جھگڑالو شخص کو زمین پر بہت مرتبہ پٹخا ہے اور بہت مرتبہ ٹھوس دلیل نے بڑے جھگڑالو کو قابو میں لیا ہے۔



شعر (۱۳۹)

كَفَّاكَ بِالْعِلْمِ فِي الْأُمَّيِّ مُعْجَرَةً
فِي الْجَاهِلِيَّةِ وَالْتَّادِيْبِ فِي الْيُتْمِ

(ترجمہ:) ”تم اسی پر غور کر لو تو آپ کے معجزے ماننے کیلئے یہی کافی ہو گا کہ ایک امی (کسی سے نہ پڑھنے والا) دینی علم سے خالی دور میں زبردست علم کا مالک ہو اور یتیم ہو کر بھی ہر کام یوں کرتا ہو جیسے اسے کرنا چاہیے۔“

جب پہلے شعر سے پتہ چل چکا کہ حضور ﷺ میں ایسا معجزہ تھا کہ دشمن ان کے قابو میں آ جاتا تھا تو ضرورت تھی کہ ان معجزات کا کچھ پتہ چل سکے چنانچہ حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے چند مشہور معجزات کا ذکر کرتے ہوئے فرمایا: ”كفأك بالعلم الخ“۔

تحقیق الفاظ

”كفأك“ کا معنی ہے: تمہیں اتنا ہی کافی ہے خطاب ہر ایک سے ہے ”بالعلم“ میں باء یونہی زائدہ ہے جیسے ”كفى بالله“ میں ہے۔ ”العلم“ کا لام عہد ذہنی کیلئے ہے۔ ”فی الامی“ ”العلم“ کی صفت ہے یا اس سے حال ہے ”امی“ کی نسبت ”ام“ سے ہے جس کا معنی اصل ہے لیکن اس کا مشہور معنی وہ شخص ہے جو لکھنا نہیں جانتا خط میں سے پڑھ نہیں سکتا کسی استاد سے پڑھا ہوا نہیں اور عام عادت کے مطابق کسی پڑھانے والے کے سامنے نہیں بیٹھا بلکہ ویسا ہی ہو جیسے اصل میں پیدا ہوا۔

اس کے معنی یوں بھی بتاتے ہیں کہ ”امی“، ”ام عرب“ کی طرف منسوب ہے اور یہ وہ قوم ہے جسے عام طور پر لکھنے اور حساب کرنے سے واقفیت نہ تھی۔

”معجزة“ (نصب سے) یونہی تمیز ہے جیسے ”طاب زید نفسا“ میں ہے۔ معجزہ کا معنی گزر چکا ہے لیکن یہاں عام طور پر اس سے مراد عادت سے ہٹ کر کام کرنا ہے۔ اسے یاد رکھو! تاہم جس نے اس کا گزرا ہوا معنی لیا ہے تو اسے بصیرت نہیں اور تم خوب واقف ہو تو غور کر لو۔

”فی الجاہلیة“ کا تعلق ”علم“ سے ہے یعنی جاہلیت کے وقت میں اس سے مراد وہ وقت ہے جس میں پہلی شریعت اصلی نہ رہی اور نہ ہی اس میں آئندہ وحی آئی اور لوگ دین کے بارے

میں بکھر گئے اس دور کو ”فترۃ“ بھی کہتے ہیں۔

”التادیب“ (زیر سے) ”علم“ پر معطوف ہے ”تادیب“ کا معنی یہ ہے کہ حضور ﷺ ادب سکھانے والے تھے گندا کام نہیں کرتے تھے نہ ہی بُرا بول بولتے اور نہ ہی دل کے سخت تھے کیونکہ (بچپن سے نبوت تک بھی) آپ میں سارے اخلاق بہترین تھے۔

”فی الیتیم“ کا تعلق بے دھڑک ”تادیب“ سے ہوگا ”یتیم“ (دونوں حرفوں پر پیش) باپ کے فوت ہو جانے اور بیٹے کے بچپن ہی سے بے باپ ہو جانے کو کہتے ہیں۔

شعر سے یہ معنی نکلتا ہے کہ حضور ﷺ کے معجزے بہت زیادہ اور مشہور تھے اور جب تم آپ کی طرف دل کی آنکھوں سے دیکھو تو اے بھائی! تمہیں آپ کے معجزات اور بے حساب علموں کی نشانیاں نظر آئیں گی کیونکہ آپ نے کسی استاد سے پڑھنا نہ تھا نہ ہی ادیبوں کے ساتھ اس دور میں لکھنا سیکھا جس میں لوگ بہت زیادہ جاہل تھے اور نہ رکنے والی گمراہی تھی اور یونہی تمہیں یہ جان لینا کافی ہے کہ آپ بہترین اخلاق سکھاتے تھے اور اپنی یتیمی اور بچپن کے دور میں بھی کمال کے ادیب تھے بلکہ پیدائشی طور پر بھی۔



نویں فصل:

رسولِ کریم ﷺ کو وسیلہ بنانا

شعر (۱۴۰)

خَدَمْتُهُ بِمَدِيحٍ أَسْتَقِيلُ بِهِ
ذُنُوبَ عُمَرٍ مَضَى فِي الشَّعْرِ وَالْحَدَمِ

(ترجمہ:) ”میں نے سرورِ کونین ﷺ کی شان میں یہ قصیدہ اس لیے لکھا ہے کہ اس کے ذریعے عمر کے پہلے حصے کے وہ گناہ معاف کرالوں جو شعر کہتے اور حکمرانوں کو سہراہتے گزرا ہے۔“

حضرت امام بوسیری رحمہ اللہ جب آپ کی کچھ خوبیاں ’معجزات‘ معراج اور غزوات کا بیان کرتے ہوئے صحابہ کرام کی کچھ خوبیاں بتا چکے تو اب ارادہ کر لیا کہ آپ کی جناب میں رحم کی اپیل کریں اور آپ ہی کی ذاتِ کریمہ سے شفاعت کی درخواست کریں اور اس کے ساتھ ساتھ اس مبارک قصیدہ کو لکھنے کی غرض بتاتے ہوئے فرماتے ہیں: ”خدمته بمدیح الخ“۔

تحقیق الفاظ

”خدمته“ بولنے والا خود اپنی ذات کے بارے میں بولا ہوا لفظ ہے ”خدمته“ سے یعنی میں نے اُن کی مدح کی، ضمیر حضور ﷺ کی طرف جاتی ہے یہ جملہ استینافیہ (نئی بات) ہے۔ ”مدیح“ وہ چیز جس کے لیے کسی کو سراہا جائے یعنی جس میں کسی کے فضائل بتائے جائیں یہاں اس سے یہی قصیدہ مراد ہے۔ ”استقیل“ والا جملہ ”مدیح“ کی صفت ہے یا اس سے حال ہے ”استقالہ“ سے ہے یعنی معافی مانگنا۔ ”بہ“ کا اسی سے تعلق ہے، بآء استعانة کیلئے ہے، ضمیر ”مدیح“ کی طرف جاتی ہے۔ ”ذنوب“ (نصب سے) ”استقیل“ کا مفعول ہے ”ذنب“ کی جمع ہے جو چھوٹے بڑے گناہوں کو شامل ہے۔

”عظمیر الانسان“ سے مراد اس کی زندگی کی مدت ہے۔ ”ذنوب“ کی اضافت ”فی“ کے معنی میں ہے، جملہ ”مضی“، ”عمر“ کی صفت ہے، جس کا معنی ہے: گزری ہوئی یعنی پوری عمر نہیں

بلکہ صرف گزری ہوئی الخ۔

”فی الشعر“، ”مضی“ سے متعلق ہے اور اس سے مراد وزن دار کلام جو ارادے سے ہو جیسے شعر وہ ہوتا ہے جو دو مصرعوں سے بنے اور قطعہ وہ ہوتا ہے جو سات شعروں سے بنے، قصیدہ وہ جو دس یا اس سے زائد شعروں والا ہو یہاں اس سے مراد مصدری معنی یعنی وزن والی کلام ہے جو ارادے سے کہی گئی اور اگر اول مراد ہو تو اس میں مضاف مقدر ہوگا یعنی شعر استعمال کرنے اور لانے میں۔

”خدم“ (میم پرزیر سے) کا عطف ”الشعر“ پر ہے اور ”خدم“ (حاء پرزیر اور دال پرزیر) ”خدمة“ کی جمع ہے تاہم معنی ہوگا کئی طرح کی خدمت یا مخلوق کی خدمت میں غور کر لو۔

شعر سے حاصل معنی یوں ہے: میں حضور ﷺ کی اس قصیدے میں خوبیاں لکھ کر یہ چاہتا ہوں کہ اس کے ذریعے اللہ تعالیٰ سے ان چھوٹے بڑے گناہوں سے معافی مانگوں جو گزشتہ عمر میں میں لوگوں کی مدح و مذمت کر کے کر چکا ہوں اور جن میں دنیا داروں کی خدمت ان کے ہاں بیٹھ کر غلط غرضوں کیلئے کی ہے کیونکہ بتایا جاتا ہے کہ ناظم اپنی پہلی عمر میں بادشاہوں کے قریبی تھے ان کی خدمت کرتے اور ان کی مدح میں شعر لکھ کر ان کی پریشانیاں دور کرتے اور ان کے دشمنوں کی بُرائی کرتے۔ اس میں بڑا مقصد دنیا کا مال لینا اور بڑا عہدہ حاصل کرنا ہوتا تھا چنانچہ قصیدہ کے شروع کے اندر اس بارے میں کچھ بتایا جا چکا ہے۔

اس شعر میں علم بدیع کی ایک صنعت ”رَدُّ الْعُجْزِ عَلَى الصَّدْرِ“ موجود ہے (شعر کے آخر میں

وہ لفظ لانا جو شعر کے شروع میں آیا ہو اسے بہت خوب گنا جاتا ہے) جیسے اس شعر میں ہے:

سَرِيْعٌ اِلَى ابْنِ الْعَمِّ يَلْطُمُ وَجْهَهُ

وَلَيْسَ اِلَى دَاعِي النِّدَاءِ بِسَرِيْعٍ

”وہ چچا زاد بھائی کو تھپڑ مارنے میں تو جلدی کر رہا ہے لیکن جو بلا رہا ہے اس کی طرف جلد

کرنے کی اسے ضرورت نہیں“۔



شعر (۱۴۱)

إِذْ قَلْدَانِي مَا تُخْشِي عَوَاقِبُهُ
كَأَنِّي بِهِمَا هَدَىٰ مِّنَ النَّعْمِ

(ترجمہ:) ”شعر کہنے اور شاہوں کی مدح کرنے نے ایسا جکڑا ہوا تھا کہ اس کے انجام سے ڈر لگ رہا ہے اور لگتا ہے کہ میں ان دونوں کاموں کی وجہ سے قربانی کا جانور بن چکا ہوں“ (جسے ذبح ہی ہونا ہوتا ہے)۔

جب پہلے شعر میں ان شعروں کے اندر شعر کہنے اور نوکری کرنے سے ملے گناہوں پر معافی مانگنے کا ذکر کر دیا تو پوچھا جاسکتا ہے کہ کیا شعر کہنے اور نوکری کی وجہ سے واقعی تم گنہگار ہو چکے ہو اور اسی وجہ سے گناہوں پر معافی مانگ رہے ہو؟ چنانچہ اس کے جواب میں بتایا کہ ہاں! ”اذ قلدانی الخ“۔

تحقیق الفاظ

”اذ“ کا لفظ معافی مانگنے کا سبب بتا رہا ہے اور ”قلدانی“ تشبیہ کا صیغہ ہے تشبیہ کی ضمیر ”شعر“ اور ”خِدم“ کی طرف جاتی ہے۔ ”قلد“، ”تقلید“ سے ہے معنی گلے میں پٹہ ڈالنا۔ ”قلدانی“ میں ”شعر“ اور ”خدم“ کی طرف نسبت مجاز ہے اور ان نسبتوں میں شمار ہوتی ہے جن میں سبب کی طرف نسبت ہوتی ہے اور ”قلد“ میں استعارہ تبعیہ ہے اور وہ یوں کہ ”ائم“ (گناہ) کے ساتھ لازم چیز کو ”قلادہ“ کے ساتھ تشبیہ صرف لازم ہونے اور جدا نہ ہونے سے ہے جو ظاہر ہے۔

”ما تخشی“ اس جگہ میں آیا ہے کہ کوئی اور لفظ ہوتا تو اس پر نصب آتی اب محلاً منصوب ہے کہ ”قلد“ کا دوسرا مفعول ہے یہ مجہول کا صیغہ ہے مصدر ”خشیتہ“ ہے جس کا معنی ڈرنا ہے۔ ”عواقبہ“ (رفع سے) ”تخشی“ کا نائب فاعل ہے یہ ”عاقبہ“ کی جمع ہے اس کی ضمیر ”ما“ کی طرف جاتی ہے اور ”بما تخشی عواقبہ“ سے مراد وہ گناہ اور بوجھ ہیں جو ان دونوں کاموں کی وجہ سے پلے پڑے۔

”کأن“ تشبیہ کیلئے ہے اور ”بہما“ ظرف مستقر اور ”کأن“ کے اسم سے حال ہے تشبیہ کی ضمیر ”شعر اور خدم“ کی طرف جاتی ہے۔

اگر تم کہو: مناسب تو یہ تھا کہ ضمیر مفرد لا کر اسے ”ما“ کی طرف لوٹایا جاتا کیونکہ ”ما“ کا لفظ

”قلادہ“ کی طرح ہے یعنی ”شعر“ اور ”خدم“ کے مقابلے میں تو میں کہوں گا کہ جب ”شعر“ اور ”خدم“ ”ما تخشی عواقبہ“ قلادۃ کے دو مضبوط سبب ہیں تو سبب کو ذکر کر کے مُسَبَّب مراد لے لیا گیا جو ظاہر ہے۔

”هَدَى“ (رفع سے) ”أَنَّ“ کی خبر ہے اور اس لفظ (ہاء کی زبر اور دال کے سکون سے) سے مراد وہ جانور ہے جو مکہ میں بھیجا جائے کہ وہاں ذبح ہو سکے اور اس کی شان یہ ہو کہ اس کی گردن میں کچھ لٹکا دیا جائے جس سے پتہ چل سکے کہ وہ قربانی کیلئے ہے اور کوئی اسے کسی اور مقصد کیلئے لے نہ سکے۔

”من النعم“، ”هدى“ کا بیان ہے یہ نون اور عین کی زبر کے ساتھ اونٹ گائے اور بکری کیلئے بولا جاتا ہے۔

ناظم کے اپنے آپ کو ”هدى“ جیسا کہنے میں اس بات کی طرف اشارہ ہے کہ وہ ہر معاملے میں حق تعالیٰ کی طرف دھیان رکھتے ہیں اور انہیں اُن کاموں پر بھی دھیان رکھنا ہوتا ہے کہ جن کاموں سے آخرت خراب ہوتی ہو جیسے اللہ کے علاوہ کسی اور کی طرف توجہ کرنا جیسے اللہ کا یہ حکم چاہتا ہے: ”فَإِنَّمَا تُولُوا فَتَمَّ وَجْهُ اللَّهِ“ (سورۃ البقرہ آیت: ۱۱۵)۔

شعر سے حاصل معنی یوں ہے: میری طرف سے اللہ کی بارگاہ میں اپنے گناہوں پر معافی مانگنا ضروری ہے کیونکہ ان کا سبب شعر اور خدمت ہیں جو بُرے ہیں تو گناہوں اور ایسے بوجھوں پر یہ کام لازم ہے کہ جن کی وجہ سے آخرت خراب ہوتی ہے کہ وہ طرح طرح کے ہیں ان سے قیامت میں عذاب ہوگا تو گویا میں نے ان دونوں کی وجہ سے ہلاکت کا سامان کر لیا ہے جیسے پٹے والی قربانی ہوتی ہے جو ذبح کیلئے تیار رکھی جاتی ہے اگرچہ میرا دل خالق سموات سے پھرتا نہیں۔



شعر (۱۴۲)

أَطَعْتُ غَيِّ الصَّبَا فِي الْحَالَتَيْنِ وَمَا
حَصَلْتُ إِلَّا عَلَى الْأَثَامِ وَالنَّدَمِ

(ترجمہ:) ”میں ان دونوں کاموں میں بچوں جیسی بے پرواہی سے کام لیتا رہا لیکن گناہوں اور شرمندگی کے علاوہ کچھ نہ کمایا۔“

جب پچھلے شعر سے پتہ چلا کہ شعر و خدمت کا کام حضرت امام بو صیری رحمہ اللہ نے عمر کے کچھ حصے میں کیا تو اب بتانا چاہتے ہیں کہ اس کام میں لگے رہنے اور نیکی کا کوئی کام نہ کرنے کا آخر سبب کیا تھا چنانچہ فرماتے ہیں کہ ”اطعت غی الصبا الخ“۔

تحقیق الفاظ

”اطعت“ یعنی میں نے فرمانبرداری کی۔ ”غی الصبا“ (نصب سے) ”اطعت“ کا مفعول ہے اور ”غی“ (یاء پر شد) کا معنی سرکشی اور گمراہی۔ ”صبی“ (صاد پر زیر اور الف مقصورہ سے) بچپن اور ”غی الصبا“ سے مراد غلط کاموں سے دھوکا کھانا اور جھگڑوں کے طریقے اپنانا چند روزہ دنیا کی طرف جھکاؤ رکھنا اور آنے والے حالات پر توجہ نہ دینا اور دونوں حالتوں میں یہ لفظ ”اطعت“ سے متعلق ہے یا ظرف مستقر ہے اور ”غی الصبا“ کی صفت ہے مطلب ہوگا: جو دونوں حالتوں میں حاصل ہے اور دونوں حالتوں سے مراد شعر اور خدمت ہے۔

اس مصرعہ سے ثابت ہو رہا ہے کہ شعر و خدمت میں لگے رہنے کا سبب بچپن اور جوانی رہی۔ اس پر غور کر لو۔

”وما حصلت“ میں واو حال کیلئے ہے اور ”ما“ نافیہ ہے۔ ”حصلت“ (شد سے) ”حَصَلَ مِنْ كَذَا“ سے لیا گیا ہے یعنی یہ کام کرنے پر تیار رہا تو معنی یہ ہوگا کہ ان دونوں کی وجہ سے میں کچھ نہ کرسکا۔

”الا“ استثناء کیلئے ہے۔ ”اثام“ جمع ”اثم“ یعنی گناہ ”ندم“ (دونوں زبروں سے) شرمندگی اور اس سے مراد وہ چیز جس سے شرمندگی ہوتی ہے ورنہ شرمندگی خود تو توبہ کا نام ہے اور یہ نجات کا سبب بنتی ہے۔

کہتے ہیں کہ شعر میں لفت و نثر مرتب ہے کیونکہ ”اثام“ کی ”شعر“ جبکہ ”ندم“ کی ”خدم“ کی طرف نظر ہے۔

شعر کا یہ معنی نکلتا ہے: میں نے موافقت کی اور شعر استعمال کرنے، خدمت میں مشغول ہونے، دونوں میں عمر ضائع کرنے میں بچپن اور جوانی کی بے راہی پر مخالفت نہیں کی اور گناہ، شرمندگی، حسرت و غمگین ہونے کے علاوہ کچھ نہیں کیا۔



شعر (۱۴۳)

فِيَا خَسَارَةً نَفْسٍ فِي تِجَارَتِهَا
لَمْ تَشْتَرِ الدِّينَ بِالدُّنْيَا وَلَمْ تَسْمِ

(ترجمہ:) ”تو سنو! مجھے اپنے آپ کے ایسا سودا کرنے میں نفس کے گھاٹے پر سخت افسوس ہے کہ اس نے سودا کرتے وقت دنیا کے مقابلے میں دین پر عمل نہیں کیا اور نہ ہی ایسی تیاری کر سکا۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب یہ بتا دیا کہ وہ گناہوں اور کئی بوجھوں میں گھرے ہوئے تھے اور وہ کچھ حاصل نہیں کر سکے تو اب اپنے آپ میں حسرت و شرمساری ظاہر کرتے ہیں اور فاء تفریح کے ساتھ فرماتے ہیں: ”فیا خسارۃ نفس الخ“۔

تحقیق الفاظ

یاء نداء کیلئے ہے ”خسارۃ“ (نصب سے) مناد کی مضاف ہے نفس کی طرف اور ”خسارۃ“ کو نداء کرنا مجاز ہے کیونکہ اسے متوجہ نہیں کیا جاسکتا۔ اس میں بہت زیادہ حسرت میں مبالغہ کیا ہے اور گویا ”خسارہ“ ہی کو آواز دے دی ہے چنانچہ فرمایا: اے حسرت! آ جا کہ تیرے آنے کا وقت ہو چکا ہے۔

ابن الشیخ نے سورہ یسین میں لکھا ہے کہ ایسے مقام پر نداء کرنا صرف تنبیہ کیلئے ہوتا ہے۔ (انتہی) ”خسارۃ“ تجارت میں وہ گھاٹا پہنچانا جو بے مقصد ہوتا ہے۔

”نفس“ کی تنوین مضاف الیہ کے بدلے میں ہے اصل ”نَفْسِي“ ہے۔

”فی تجارتها“ سے متعلق ہے اور یہاں مضاف محذوف ہے اصل ”وقت تجارتها“ ہے جو دنیا میں ہوتی ہے۔ ”تجارۃ“ کا معنی خرید و فروخت میں نفع کی خواہش کرنا اور یہاں اللہ کی رضا اور ثواب چاہنا مراد ہے۔ ناظم کے نفس نے اپنے سودے بازی میں گھاٹا صرف اس لئے کھایا ہے کہ اس نے دنیا سے منہ موڑنے کی تیاری کی ہے اور طاقت ہوتے ہوئے مولیٰ کی عبادت میں لگنے سے توجہ ہٹائی ہے تو گویا وہ اللہ کی طرف رجوع کرنے کی طاقت ہی نہیں رکھتا چنانچہ اسی لئے فرمایا: ”لم تشتتر الدین الخ“ تو جملہ ”لم تشتتر“ استینافیہ ہے گویا یوں کہا گیا کہ تمہارے نفس

نے گھاٹا کیوں کھایا؟ تو اس کا جواب اس وضاحت سے دیا کہ ”لم تشتتر الخ“۔
 ”تشتتر“ کی ضمیر نفس کی طرف جاتی ہے، معنی یہ ہے کہ اس نے پسند نہیں کیا، نہ اختیار کیا اور نہ ہی بدلنا چاہا۔

”الدین“ (نصب سے) ”تشتتری“ کا مفعول بہ ہے اور یہاں دین سے مراد اس کا وہ کمال ہے جس کا دار و مدار دنیاوی و آخرت کی بلاؤں سے نجات ہے۔

”بالدنیا“ کا تعلق ”لم تشتتر“ سے ہے چنانچہ اسی لئے کہا گیا ہے: تمہاری دنیا ہر ایسی چیز ہے جو تمہیں تمہارے مولا سے دور کر دے اور یہاں یہ قیمت کے مرتبہ پر ہے۔

”لم تسم“ کا عطف ”لم تشتتر“ پر ہے، یہ ”سام یسوم سوماً“ سے ہے اور ”السوم“ کا مطلب وہ کام ہیں جو خرید و فروخت سے پہلے کئے جاتے ہیں اور یہ مبالغہ کیلئے ہے۔

پھر یاد رہے کہ ”اشتراء“ سے مراد مجازاً تبدیلی کرنا ہے اور ”السوم“ سے مراد مجازاً ارادہ کرنا ہے۔

یہ بھی ہو سکتا ہے کہ اس شعر میں استعارہ تمثیلیہ ہو تو اس پر غور کر لو۔

شعر سے حاصل معنی یہ ہے: اے میرے نفس کے گھاٹے! ادھر آؤ کیونکہ یہ تمہارے آنے کا وقت ہے تاکہ تمہاری قوم اس کی تجارت میں تجھ سے تعجب کرے کیونکہ تُو نے دنیا کے بدلے میں دین نہیں لیا اور نہ ہی باقی کے بدلے میں فانی کو بدلا ہے پھر تمہارا یہ ارادہ بھی نہیں کہ اچھی نیت اور سچے ارادے سے دنیا کو چھوڑ کر دین حاصل کر لو۔

روح البیان میں آیا ہے کہ اللہ تعالیٰ نے روح کو نورانی اور اوپر کی دنیا کا بنایا جبکہ نفس کو ظلمانی (اندھیرے والا) بنایا پھر دونوں کو آپس میں ملا کر دونوں کا بنیادی مال طبیعت میں رچی وہ تیاری بنادی جو اس قابل ہے کہ کمال حاصل کرنے کے ساتھ ساتھ قربت الہیہ، معرفت الہیہ، گھاٹے اور نقصان میں ترقی کرے چنانچہ جو ایمان لا کر اپنے نفس اور مال کے ساتھ اللہ کی راہ میں جہاد کرے اور اپنی ہر حالت میں اللہ کی رضا چاہے تو اس کی روح نفع میں رہے گی جبکہ اس کا نفس گھاٹے میں رہے گا اور جو اللہ و رسول پر ایمان نہ لائے اور ان دونوں کا انکار کرے یا ایمان تو لائے مگر کوئی اچھا عمل ہرگز نہ کرے تو اس کی روح اور نفس دونوں گھاٹے میں ہوں گے چنانچہ ایک عقلمند پر لازم ہے کہ موت آنے سے پہلے اپنی محنت کرے اور اپنی تجارت سے یوں نفع لے لے کہ اپنے نفس اور مال کو اللہ کی رضا حاصل

کرنے کیلئے قربان کر دے کیونکہ اسلام جیسے بنیادی مال کی سلامتی جب تک موجود ہوتی ہے تو یہ ممکن ہے کہ وہ جھٹ پٹ میں نفع حاصل کر لے اور اگر تالی پر تالی مارنے کا دوسرا موقع نہیں بنتا تو پھر بے مقصد کاموں میں اپنی زندگی برباد نہ کرے کیونکہ موقع مل جانا ہی غنیمت ہوتا ہے، اسی لئے ایک فارسی شاعر نے کہا ہے:

مکن عمر ضائع بفسوس و حیف

کہ فرصت عزیز ست والوقت سیف

”اپنی عمر کو افسوس کرنے میں ضائع نہ کرو کیونکہ وقت مل جانا بڑی بات ہے جبکہ وقت تیزی سے نکل جاتا ہے۔“



شعر (۱۴۴)

وَمَنْ يَبِيعُ أَجْلاً مِّنْهُ بِعَاجِلِهِ
يَبِينُ لَهُ الْغَبْنُ فِي بَيْعٍ وَفِي سَلَمٍ

(ترجمہ:) ”جو آخرت کیلئے کچھ کرنے کی بجائے دنیا ہی میں لگن رہتا ہے تو کوئی نیکی نہ کرنے کی وجہ سے دنیا و آخرت میں خرابی پیدا کر بیٹھتا ہے۔“

جب پہلے شعر میں معلوم ہو گیا کہ انہوں نے آخرت کی بجائے دنیا خریدی ہے کیونکہ حضرت امام بوسیری رحمہ اللہ بات کے مخالف پہلو مانتے ہیں تو گویا یوں کہا گیا کہ جو آخرت کے بدلے میں دنیا لینے کا سودا کرتا ہے تو اسے کیا حاصل ہوا؟ آپ اسی کا جواب دیتے ہیں: ”ومن یبع اجلا الخ۔“

تحقیق الفاظ

واو ابتدائیہ ہے ”مَنْ“ اسم شرط ہے اور مبتداء ہے ”یَبِيعُ“ مضارع مجزوم ہے ”بَاعَ یَبِيعُ بیعاً“ سے ”بیع“ (بیچنا) اور یونہی ”ابتیاع“ (خریدنا) آپس میں ضدیں ہیں جو خریدار اور بیچنے والے کے کام پر بولے جاتے ہیں جیسے بیچنا اور خریدنا لیکن یہاں اس سے مراد وہ کام ہے جو بیچنے والے کے کام پر واقع ہوتا ہے اور اس سے مجازی معنی مراد لیا جاتا ہے یعنی بدلہ میں کچھ لینا اور ہاتھ سے نکالنا۔

”اجلاً“ (نصب سے) ”یَبِيعُ“ کا مفعول ہے اور ”اجل“ اسے کہتے ہیں جو کچھ دیر اور مدت کے بعد آتا ہے اور یہاں اس سے مراد آخرت اور دین سے تعلق رکھنے والی چیز ہے کیونکہ اس کا نتیجہ آخرت میں نظر آئے گا۔

”منہ“ ظرف مستقر ہے اور ”اجل“ کی صفت ہے اور ضمیر دین کی طرف جاتی ہے اور جو ”منہ“ کی ضمیر کو ”مَنْ“ کی طرف لوٹاتا ہے تو وہ خواہ مخواہ کا زور لگاتا ہے اس پر غور کر لو۔

”بعاجلہ“، ”بیع“ کے ساتھ تعلق رکھتا ہے اور ”عاجل“ اس کام کو کہتے ہیں جو فوراً ہو جائے تاہم اس سے یہاں مراد دنیا ہے اور یہ اس قیمت لگانے کا مقام ہے جس کا بیع میں اعتبار کیا جاتا ہے بشرطیکہ اس پر باء داخل ہو۔ ”عاجلہ“ کی ضمیر ”مَنْ“ کی طرف جاتی ہے اور ”یَبِيعُ“ والا جملہ شرط کی جزاء ہے اور یہ جزم والا مضارع ہے ”بَانَ یَبِيعُ“ سے ”یَبِيعُ“ کا معنی ”جلدی ظاہر ہونا ہے“ تو

”یین“ کا معنی ہوگا: ”جلدی ظاہر ہوگا“ جیسے شاعر کا قول ہے:

سَوْفَ تَرَىٰ إِذَا انْجَلَى الْغُبَارُ

أَفْرَسٌ تَحْتَكَ أُمَّ حِمَارُ

”جب گرد و غبار ختم ہو جائے گا تو تم جلد دیکھ لو گے کہ تمہارے نیچے گھوڑا ہے یا گدھا“۔

”لہ“ کی ضمیر ”مَنْ“ کی طرف جاتی ہے۔ ”الغبین“ (رفع سے) ”یین“ کا فاعل ہے اور

”غبین“ (غبین پر زبر اور باء پر سکون) سے مراد وہ نقصان جو پورا ہو اور بہت زیادہ زائد ہو۔

”فی بیع“ کا تعلق ”غبین“ سے ہے یا یہ اس کی صفت ہے ”فی سلم“ کا ”فی بیع“ پر

عطف ہے اور ”فی جارہ“ کو دوبارہ لانا شعر کی ضرورت کیلئے ہے۔

”بیع“ کی قسمیں

”بیع“ کا لفظ بیع کی قسموں کیلئے عام ہے جیسے دکھائی دینے والی چیز کو دکھائی دینے والی چیز سے

بیچنا، اسے ”مُقَايَضَه“ (ایک چیز دے کر دوسری لینا) کہتے ہیں اور نقد چیز کا قرض کے بدلے بیچنا

”مَدَايِنَه“ (قرض کا معاملہ کرنا) کہلاتا ہے، قیمت کے بدلے قیمت بیچنے کو ”صَرَف“ (خرچ کرنا)

کہتے ہیں، نقد کے بدلے بعد میں کچھ لینے کو ”سَلَم“ کہتے ہیں (دونوں حرفوں پر زبر) اور جس چیز کا

ہم ذکر کر رہے ہیں وہ ”سَلَم“ میں داخل ہے چنانچہ اسی بناء پر ناظم اس کا نام واضح کر رہے ہیں چنانچہ

فرمایا: ”وَفِي سَلَم“۔

اس شعر میں استعارہ مُصَرَّحہ ہے جسے اہل بیان جانتے ہی ہیں اور یہ اس شخص کا رد ہے جو یہ کہتا

ہے کہ دنیا نقد اور آخرت ادھار ہے اور نقد دے کر ادھار کی بات کرنا سمجھ میں آنے والا معاملہ نہیں

کیونکہ ”سَلَم“ اسے کہتے ہیں کہ نقد دے کر ادھار چیز لے اور ماہر و تجربہ کار تاجر ”سَلَم“ کو مانتے

ہیں۔

یاد رہے کہ اللہ تعالیٰ نے انسان کو دنیا و آخرت سے جوڑ کر بنایا ہے اور دنیا و آخرت میں سے ہر

ایک کا دوسرے کی طرف مکمل جھکاؤ ہے جس سے وہ غذاء لیتا ہے، قوت لیتا ہے اور اس سے مکمل ہوتا

ہے چنانچہ اس کی دنیوی جزاء میں (جو نفسِ امارہ ہے) جہنم کے طبقوں کی طرف راہ ہے اور آخرت کی

جزاء (روح) میں جنت کے طبقوں کی طرف راہ ہے اور ان دونوں میں سے ”قلب“ یعنی دل کو پیدا

کیا گیا اور اس کا رحمت اور قہر دو انگلیوں کے درمیان راہ ہے چنانچہ اللہ تعالیٰ جس کے بارے میں چاہتا

ہے کہ وہ اس کے قہر کو ظاہر کرنے والا ہو تو اس کے دل کو ٹیڑھا کر دیتا ہے اور اس کا چہرہ دنیا کی طرف پھیر دیتا ہے اور وہ دنیا میں دلچسپی لیتا ہے اور اسی کو نفیس سمجھتا ہے اور آخر کار جہنم کے طبقوں کی طرف پہنچ جاتا ہے اور جس کے بارے میں اللہ تعالیٰ چاہتا ہے کہ وہ اس کی مہربانی کا اظہار کرے تو اس کے دل کو قائم کر دیتا ہے اور اس کا رخ اوپر والے جہان کی طرف کر دیتا ہے اور وہ آخرت میں دلچسپی لیتا ہے اور اس کے بارے میں پوری کوشش کرتا ہے۔



شعر (۱۴۵)

إِنْ أَتِ ذَنْبًا فَمَا عَهْدِي بِمُنْتَقِضٍ
مِّنَ النَّبِيِّ وَلَا حَبْلِي بِمُنْصَرِمٍ

(ترجمہ:) ”میں اگرچہ بہت بڑا گنہگار ہوں لیکن میرا رشتہ اپنے پیارے نبی ﷺ سے ٹوٹنے والا بالکل نہیں اور نہ اس تعلق کی رستی ٹوٹ سکتی ہے۔“

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے جب اس بات کا ذکر کر دیا کہ ان کا نفس گناہوں اور بوجھوں کی وادیوں میں ڈوبا ہوا ہے اس نے اپنی اس سودے بازی میں گھاٹا کھایا ہے اور ایسا کوئی نفع نہیں کمایا جو آخرت میں اس کے کام آسکے اور اس سے سمجھ لیا کہ حشر اور میقات کے دن دردناک عذاب سے اسے کامیابی اور چھٹکارا حاصل نہ ہو سکے گا چنانچہ ان کا نفس گھبراہٹ کے ساتھ حیران و پریشان ہو گیا اور اسے اس بات میں بے اُمیدی نظر آئی کہ وہ ان گناہوں سے نجات پاسکے گا تو اپنے نفس کو تسلی اور اُنس دینا شروع کیا اور اپنی تنہائی اور پریشانی کو اس بیان کے ساتھ دور کرنا شروع کیا جو اس کی بخشش کا سبب ہو چنانچہ فرمایا: ”ان ات ذنبا الخ“۔

تحقیق الفاظ

”إِنْ“ حرف شرط ہے ”ات“ (ہمزہ پر مدّ اور تاء پر زیر) بات کرنے والے کی خود ذات یعنی متکلم کا صیغہ ہے اس کا اصل ”آتٰی یأتی“ ہے یاء جزم کی وجہ سے گر گئی تو ”إِنْ ات“ کا معنی ”اگر میں کروں“ ہوا۔

”ذَنْبًا“ (نصب سے) ”ات“ کا مفعول ہے اور یہ ”ذنب“ عام ہے جو ایک ایک کر کے سارے گناہوں پر بولا جاتا ہے۔ ”فَمَا“ میں فاء جزاء کیلئے ہے یعنی میں غمگین نہیں ہوں گا اُمید لگانا اور معافی مانگنا نہیں چھوڑوں گا یا معنی یہ ہے کہ اے میرے نفس! غم نہ کر حیران نہ ہو اور اُمید نہ توڑ تو ان دونوں صورتوں میں عبارت کے اندر حذف کرنا جائز بنتا ہے تو ناظم کا قول ”ما عہدی“ محذوف جزاء کا سبب اور علت ہے جو ظاہر ہے۔

”ما“ نافیہ ہے اور ”عہد“ سے مراد میثاق اور پکا وعدہ مراد ہے اور اس سے ان کی مراد توحید دین اور عقائد پر مضبوطی سے لگنا ہے۔

”المنتقض“، ”نَقَضَ الْعَهْدَ“ سے لیا گیا ہے یعنی عہد کو پورا نہ کیا۔

”من النبی“ کا تعلق ”منتقض“ سے ہے۔ ”ولا حبلی“ کا عطف ”وما عہدی“ پر ہے

نفی دوبارہ لانے میں اسے پکا کرنا ہے مطلب یہ ہوا کہ ”میری رستی بالکل ٹوٹنے والی نہیں الخ“۔

”حَبْل“ سے مراد وہ وسیلے اور ذریعے ہیں جو ان کے اور نبی کریم ﷺ کے درمیان ہیں بلکہ زیادہ

بہتر تو یہ ہے کہ ”عہد“ اور ”حبل“ سے مراد وہ ہو جو اگلے شعر میں آ رہا ہے اور وہ ایسا وعدہ ہے جو

ان کے محمد نام رکھنے میں آ رہا ہے۔

”منصرم“ اسمِ فاعل کا صیغہ ہے جس کا معنی کٹنے والا ہے۔

شعر کا معنی یہ نکلتا ہے کہ اگر میں گناہ کر چکا ہوں اور بُرائی کما چکا ہوں تو میں اس کے ڈھانپنے اور

بخشے جانے کی اُمید رکھتا ہوں کیونکہ میرا عہد جو میرا ایمان ہے، ٹوٹنے والا نہیں کیونکہ گناہ کر کے تو بہ توڑ

لینا، ایمان کے عہد کو توڑے گا نہیں اور اس لئے بھی یہ عہد نہیں ٹوٹ سکتا کہ میری رستی یعنی آگے آنے

والا عہد حضور سید عالم ﷺ سے ٹوٹنے والا نہیں بلکہ ہر حال اور ہر وقت میں مجھے اس کی اُمید ہے۔



شعر (۱۴۶)

فَإِنِّي ذِمَّةٌ مِّنْهُ بِتَسْبِيَّتِي
مُحَمَّدًا وَهُوَ أَوْفَى الْخَلْقِ بِالذِّمَمِ

(ترجمہ:) ”کیونکہ مجھے اپنا نام محمد رکھنے پر ان کی ضمانت مل چکی ہے اور وہ پوری کائنات میں سب سے بڑھ کر ذمہ نبھانے والے ہیں۔“

جب پچھلے شعر میں حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ بتا چکے ہیں کہ ان کا نبی کریم ﷺ کے ساتھ عہد اور ذمہ موجود ہے لیکن اس کے مفہوم میں وضاحت نہیں تھی تو اسے دور کرتے ہوئے اسے واضح کرتے ہوئے فرماتے ہیں: ”فان لي ذمة الخ“۔

تحقیق الفاظ

فاء تفسیر کیلئے ہے اور ”ذمة“ کا معنی امن دینا ہے جیسے حضور ﷺ کے اس فرمان میں ہے: ”وَيَسْعَىٰ بِذِمَّتِهِمْ أَذْنَاهُمْ“ (سنن ابوداؤد کتاب الديات باب ايقاد المسلم بالکافر، جلد ۴ صفحہ ۲۳۸، رقم الحدیث: ۲۵۳۰) (ان میں سے کم درجہ ان کا ذمہ لے گا) اور یہ لفظ ”عہد“ کرنے پر بھی بولا جاتا ہے۔

”منہ“ طرف مستقر ہے اور ”ذمة“ کی صفت ہے اور ضمیر نبی کریم ﷺ کی طرف جاتی ہے۔ ”بتسمیتی“ کا تعلق ”ذمة“ سے ہے اس میں باء سببیہ ہے اور ”تسمية“ اگر فعل معلوم کی مصدر ہے تو اس کی اضافت پہلے مفعول کی طرف ہوگی اور فاعل نہیں ہوگا عبارت یوں ہوگی: ”اللہ تعالیٰ کا میرا نام رکھنا“ کیونکہ یہ القاب آسمان سے اترتے ہیں اور جس کا نام ہوں ان پر بولے جاتے ہیں یا معنی ہے: ”میرے مستمی کا نام محمد رکھنا“ اور یہ بھی ہو سکتا ہے کہ نبی کریم ﷺ نے خواب میں انہیں محمد کہہ کر خطاب فرمایا ہو یا بیداری ہی میں فرما دیا ہو جیسے کچھ بڑے مشائخ کے ساتھ یوں ہو چکا ہے تو پھر اصل یوں ہوگا ”حضور ﷺ کی طرف سے میرا نام رکھنا“۔

”محمدًا“ (نصب سے) ”تسمیہ“ کا دوسرا مفعول ہے۔

عظمتِ نام محمد (ﷺ)

یاد رہے کہ ”محمد“ کا نام نہایت کریم و شریف ہے جو حضور ﷺ کے مبارک ناموں میں سے بڑا عظمت والا ہے سب میں سے خاص اور مشہور ہے اللہ تعالیٰ نے آپ کو یہی نام لے کر پکارا

ہے اور دنیا و آخرت میں یہی نام رکھا ہے، یہ کلمہ توحید سے خاص تعلق رکھتا ہے اور حضرت آدم علیہ السلام کی کنیت ابو محمد ہے اور آپ خط لکھتے وقت یوں لکھا کرتے تھے: ”من محمد رسول اللہ“ اور درود پڑھنے والے اسی نام کو لے کر آپ پر درود پڑھتے ہیں اور جب ملک الموت آپ کی روح انور کو لے کر آسمان کی طرف گئے ہیں تو یہی کہتے ہوئے گئے ہیں کہ ”الحمد لله“ اس سے بڑھ کر تفصیل کتابوں میں نہیں ملے گی۔

پھر ناظم کا قول ”وہو الخ“ نئی بات یعنی استیناف والا جملہ ہے اور ضمیر حضور ﷺ کی طرف جاتی ہے۔ ”اَوْفَى“ مبالغہ کا صیغہ ہے تفصیل (مرتبہ دینے) کیلئے جو ”وَفَى“ (مد) سے ہے مضارع ”يَفِي“۔ یہ اس وقت کہتے ہیں جب کرنے والے کام کا لحاظ رکھا جائے یا یہ ”وَفَى“ سے ہے ”اَتَمَّ“ کے معنی میں یعنی پوری مخلوق میں سے بڑھ کر پورا۔

”خَلَقَ“ کا معنی لوگ اور مخلوقات ہے۔

”ذِمَمَ“ (ذال پر زیر) ”ذَمَّه“ کی جمع ہے۔

شعر کا حاصل مطلب یہ ہے: ناظم نے فرمایا کہ میرا عہد اور پکا وعدہ حضور ﷺ کے ساتھ ہے کیونکہ میرا نام محمد ہے جو بتاتا ہے کہ انہیں آپ سے محبت ہے اور جس کا نام ہو اس کی مخالفت کرنے پر نام نہیں بدلا کرتا اور حضور ﷺ ذمہ داریوں کو نبھانے میں سب سے زیادہ پورے ہیں چنانچہ ان ذمہ داروں کو آخرت میں ذمہ داریوں کی شفاعت فرما کر حق ادا کریں گے۔

اس شعر میں اس حدیث کی طرف اشارہ ہے جس میں آپ نے بتایا تھا کہ ”جبریل میرے پاس آئے اور عرض کی کہ اے محمد! اللہ تعالیٰ آپ کو سلام فرماتے ہوئے یہ ارشاد فرما رہا ہے کہ مجھے اپنی عزت اور بزرگی کی قسم جو آپ کے نام پر نام رکھے گا تو میں اسے دوزخ کا عذاب نہیں دوں گا“ (حاشیۃ البجیری علی الخطیب، باب بحث النحت، جلد ۱ صفحہ ۱۲۴) اور پھر اس حدیث کی طرف اشارہ ہے کہ اللہ تعالیٰ نے فرمایا: ”مجھے اس کی طرف سے شرم آتی ہے جو میرے حبیب والا نام رکھے“ (المدخل لابن الحاج، الجزء الاول، فصل فی ذکر النعوت، صفحہ ۹۵)۔

حضرت قاضی عیاض رحمہ اللہ شفاء میں فرماتے ہیں کہ اللہ تعالیٰ اور اس کے فرشتے اس شخص کیلئے بخشش کا حکم فرماتے ہیں جس کا نام محمد اور احمد ہو (کتاب الشفاء، الجزء الاول، الباب الثالث فی الاخبار، صفحہ ۱۸۴) چنانچہ اسی وجہ سے علماء کرام کے نام عام طور پر محمد ہوتے ہیں۔

شعر (۱۴۷)

إِنْ لَمْ يَكُنْ فِي مَعَادِي أَخِذًا بِبِيَدِي
فَضْلًا وَإِلَّا فَقُلْ يَا زَلَّةَ الْقَدَمِ

(ترجمہ:) ”اگر قیامت میں آپ نری مہربانی فرماتے ہوئے مجھے (خدا نخواستہ) اپنے دامن میں نہیں لیتے ہیں تو بوسیری کہہ دو کہ ہائے افسوس! غلطی تو میری طرف سے ہے۔“
حضرت امام بوسیری رحمہ اللہ اب یہ بتانا چاہتے ہیں کہ وہ معجزات اور معراج والے آقا (صلی اللہ علیہ وسلم) کی شفاعت کیلئے بہت زیادہ محتاج ہیں اور رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم کی شفاعت کے علاوہ دنیا میں کسی اور سے اُمید لگائے ہوئے نہیں ہیں چنانچہ فرماتے ہیں: ”ان لم یکن الخ“۔

تحقیق الفاظ

”ان لم یکن“ جملہ شرطیہ ہے اور ضمیر حضور صلی اللہ علیہ وسلم کی طرف جاتی ہے۔ اس شرط کے جواب کی دو صورتیں ہیں ایک یہ کہ ان کا قول آئندہ اس کا جواب ہے اور دوسرے یہ کہ جواب محذوف ہے جو یوں ہے تو کہہ دو کہ اے دکھی دل اور بُرے حال والے!
”المعاد“ مصدر ہے طرف مکان یا زمان ہے اور اس سے مراد موت اور اس کے بعد کی حالت ہے۔

”أَخِذْ بِالْيَدِ“ سے مراد دیکھنا، امداد کرنا اور مشکلات کو دور کرنا ہے۔

”فَضْلًا“ (نصب سے) یہ اس نسبت سے تمیز ہے جو ”أَخِذْ“ کی اپنے فاعل کی طرف ہے
”فَضْلٌ“ کا لفظ لانے میں اس طرف اشارہ ہے کہ یہ آپ پر لازم کام نہیں، اگر شفاعت فرمائیں گے تو یہ آپ کی مہربانی اور احسان ہوگا۔

”إِلَّا“ میں علماء کا اختلاف ہے کچھ حضرات بتاتے ہیں کہ یہ اصل میں ”إِنْ لَمْ يَكُنْ“ ہے ”إِنْ“ کا نون ”لَمْ“ کی لام میں داخل (مُدْغَم) کر دیا گیا ہے تو اس شرط کی جزاء محذوف ہے اگر ان کا قول ”ان لم یکن“ کا جواب بنتا ہے اور اگر ”فَقُلْ“ اس شرط کا جواب ہے تو پھر ”ان لم یکن“ کا جواب محذوف ہوگا۔

اس شرط و جواب کا جملہ ”ان لم یکن“ کی تاکید بنے گا۔ اس پر غور کر لو۔

حرف ”آلا“ کیا ہے؟

کچھ علماء کہتے ہیں کہ ”آلا“ کا لفظ تنوین اور ہمزہ کی زیر سے ہے جس کا معنی عہد بنتا ہے، فرمان الہی ہے: ”لَا يَرْقُبُونَ فِي مُؤْمِنٍ إِلَّا وَّلَا ذِمَّةً“ (سورۃ التوبہ، آیت: ۱۰) (مشرک کسی مسلمان کے بارے میں نہ قریبی ہونے کا لحاظ کرتے ہیں نہ کسی عہد کا) اور یہی زیادہ بہتر ہے۔

”فقل“ کا لفظ اس سے خطاب ہے جسے ناظم نے اپنے اندر فرض کر رکھا ہے۔

”يَا زَلَّةَ الْقَدَمِ“ کا مطلب ہے کہ آ جاؤ! تمہارے آنے کا وقت ہے اور ”زلة القدم“ سے مراد ہلاکتوں میں پڑنا ہے اور یہ بھی ہو سکتا ہے کہ اس کا معنی جہنم میں گرنے کے دوران پل صراط سے پاؤں پھسلنا ہو۔

حاصل معنی یہ ہے کہ میں جناب رسول کریم ﷺ کی شفاعت کا یوں محتاج ہوں کہ آپ مجھے تباہیوں اور تکلیف دینے والے عذاب سے بچالیں گے اور اگر آپ اپنے فضل یعنی وعدے سے بڑھ کر احسان فرماتے ہوئے اور عہد یعنی ذمہ داری پوری فرماتے ہوئے میری مدد نہ فرمائیں گے تو پھر خطاب اور ڈانٹ کرتے ہوئے اپنے آپ سے کہہ دو کہ اے پھسلے قدم والے، بُرے حال والے، پریشان دل والے اور بُری آخرت والے۔



شعر (۱۴۸)

حَاشَاهُ أَنْ يُحْرِمَ الرَّاجِيَ مَكَارِمَهُ
أَوْ يَزْجِعَ الْجَارُ مِنْهُ غَيْرَ مُحْتَرَمٍ

(ترجمہ:) ”یہ تو ہو ہی نہیں سکتا کہ آپ سے مہربانیوں کی اُمید لگانے والا کسی صورت میں محروم ہو جائے یا آپ کی پناہ میں رہنے والا آپ سے باعزت اور بامراد ہو کر واپس نہ آئے۔“

جب پچھلے شعر میں یہ وہم پیدا ہو سکتا تھا کہ اُمید لگانے اور درخواست کرنے والے کا سوال حضور ﷺ کی بارگاہ اقدس میں مانے جانے سے رہ بھی سکتا ہے تو حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے اس وہم کو دور کرتے ہوئے فرمایا: ”حاشاہ الخ“۔

تحقیق الفاظ

”حاشاہ“ کا معنی یہ ہے کہ میں حضور ﷺ کو ایسی مدد نہ فرمانے سے پاک اور بری کر رہا ہوں۔ مفعول کی ”ہ“ ضمیر حضور ﷺ کی طرف جاتی ہے۔

”يُحْرِمُ“، ”حَرَمَ يَحْرِمُ“ سے ہے جیسے ”ضرب يضرب“ ہے یا ”أَحْرَمَ“ سے ہے ”اسے روکا“ کے معنی میں یہ دو مفعولوں کی طرف متعدی ہوتا ہے یہ فعل معلوم یا مجہول کا صیغہ ہے اور ”الراجی“ کی یاء پر سکون شعر کی ضرورت کیلئے ہے۔ اس کا معنی سوال کرنے والا ہے۔

”مکارمہ“ (نصب سے) ”الراجی“ کا مفعول ہے یہاں اس سے مراد حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کی طرف سے مہربانیاں اور خیراتیں ہیں۔

”يُزْجِعُ“ (نصب سے) ”يُحْرِمُ“ پر معطوف ہے یہ ”زجع يزجع“ سے لازم اور متعدی آتا ہے اور یہاں لازم ہے یعنی ”لَوَّئِ“ یا متعدی ہوگا تو پھر ”الجار“ کا لفظ یا تو منصوب ہے یا مرفوع ہے۔ اس کا معنی قریب ہونے والا ہے اور کبھی ”جار“ کا لفظ اس پر بولا جاتا ہے جو پڑوس میں پناہ چاہنے والا ہو۔ ”منہ“ کی ضمیر حضور ﷺ کی طرف لوٹی ہے۔

”غیر محترم“، ”يُزْجِعُ“ کے فاعل سے حال ہے۔

شعر کا معنی یوں نکلتا ہے کہ حضور ﷺ اس بات سے پاک ہیں کہ اپنی اُمید لگانے والے کو محروم

کردیں اور سوال کرنے والے کو مہربانی سے رہنے دیں یا اپنی پناہ مانگنے والے کو عزت دیئے بغیر واپس فرمادیں کیونکہ آپ کرم فرمانے اور عزت بنانے کا مرکز ہیں بلکہ پوری کائنات آپ ہی کی ذات سے مدد مانگا کرتی ہے۔



شعر (۱۴۹)

وَمُنْذُ الْزَمْتُ أَفْكَارِي مَدَائِحَهُ
وَجَدْتُهُ لِخَلَاصِي خَيْرٌ مُلْتَزِمٌ

(ترجمہ:) ”جب سے میں نے اپنی سوچوں کو اس طرف لگا لیا ہے کہ لازمی طور پر ان کی مدح خوانی میں لگا رہوں گا تو دیکھ رہا ہوں کہ میری نجات کیلئے ان کے در سے بہتر کوئی اور در نہیں ہے۔“

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے امیدواروں کی اُمیدوں اور درخواستیں کرنے والوں کی درخواستوں کو رد کرنے سے رسول اللہ ﷺ کو پاک بنا دیا ہے تو اب ارادہ کیا کہ آپ کی ان حکمتوں سے اس مہربانی کا ذکر کر دیں جو دنیا میں ان پر ہوئی کہ ان کے درِ پاک سے اُمید ہو چکی۔ چنانچہ فرمایا:

”وَمُنْذُ الْزَمْتُ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

”منذ“ میں ”وجدت“ کا عمل ہے یا یہ لفظ مبتداء ہے اور یہ اس کا معنی پہلی مدت ہے جو میری سوچوں کو لازم ہے۔ ”الزمت“، ”الزمتہ الشیء“ سے ہے یعنی میں نے اسے چیز کا ذمہ دیا ہے تو اس نے اسے مان لیا ہے۔ ”افکار“، ”فکر“ کی جمع ہے جس کا معنی عقل والی قوت کو نہ حاضر ہونے والی چیز کو حاضر کرنے کیلئے استعمال کرنا ہے اور یہاں اس سے مراد آپ کی رضاء آپ کے ذکر اور آپ کی محبت سے لمحہ بھر کیلئے بھی الگ نہ ہونا ہے۔

”مدائحه“ (نصب سے) ”الزمت“ کا مفعول ہے یہ ”مدیح“ کی جمع ہے جس سے مراد آپ کی بہترین مہربانیاں اور ستھرے اخلاق ہیں۔

”خلاص“ کا معنی کامیابی اور مصیبتوں اور بلاؤں سے نجات ہے جن سے مراد دنیا کی مشکلیں ہیں جیسے جسم میں بیماری وغیرہ۔

”خیر ملتزم“ (نصب سے) ”وجدت“ کا دوسرا مفعول ہے یہ اسمِ فاعل کا صیغہ ہے جس کا معنی اپنے وعدہ پر لگے ہوئے ہر ایک ایک کا بہتر ہونا ہے۔

شعر کا حاصل معنی یہ ہے کہ میں اس پہلی مدت سے جب میں نے اپنی سوچوں میں آپ کی

مدحیں خالص نیت سے لازم کر رکھی ہیں تو میں نے انہیں دیکھا اور جانا ہے کہ آپ نے میرا ذمہ اٹھالیا ہے اور میری تنہائی میں ہر سختی اور بلاء سے مجھے بچانا شروع کر دیا ہے چنانچہ یہ چیز آپ کے اچھے کرم اور بہترین اخلاص سے پیدا ہوئی ہے۔



شعر (۱۵۰)

وَلَنْ يَّفُوتَ الْغَنَى مِنْهُ يَدًا تَرَبَّتْ

إِنَّ الْحَيَا يُنْبِتُ الْأَزْهَارَ فِي الْأَكْمِ

(ترجمہ:) ”آپ کی بہت بڑی مہربانی مٹی لگے ہاتھ کو محروم نہیں رکھتی کیونکہ جب بارش ہوتی ہے تو ٹیلوں پر بھی پھول پیدا کر دیتی ہے۔“

جب پہلے شعر سے پتہ چلا ہے کہ آپ عطا فرمانا جانتے ہیں اور کام کی بارش کرنے کا حق رکھتے ہیں تو حضرت امام بوسیری رحمہ اللہ اپنی انتہائی عاجزی اور آپ کی بہت بڑی شفقت اور عطاؤں کا ایسا بیان کرتے ہیں جو حق نہ رکھنے والوں تک بھی پہنچتی ہیں چنانچہ فرمایا: ”وَلَنْ يَّفُوتَ الْغَنَى“۔

تحقیق الفاظ

”یفوت“، ”فوت“ سے ہے اور ”غنی“ (غین کی زیر اور مقصورہ سے) کرم نوازی اس سے مراد حضور ﷺ کی شفاعت ہے۔

”منہ“ ظرف مستقر ”غنی“ کی صفت یا اس سے حال ہے اور ضمیر حضور ﷺ کی طرف جاتی ہے۔ ”یدًا“ سے مراد ”ہاتھ سے“ ہے ”تربت“ سے مراد محتاج ہوئے اور ”ید“ سے مراد محتاج لوگوں کے ہاتھ ہیں کیونکہ نکرہ نفی کے تحت آئے تو عموم کا معنی دیتا ہے اور یہ بھی کہا گیا ہے کہ ”غنی“ سے مراد مال ہے چنانچہ یہاں پر ”ندی“ والا نسخہ اس کی تائید کرتا ہے۔

”حیا“ اور ”حیاء“ میں فرق اور عجیب واقعہ

”ان الحیا“ میں استیناف ہے اور پہلے حکم کی مثال پیش کی گئی ہے۔ ”حیا“ (قصر سے) کا معنی بارش ہے اور مدّ (”حیاء“) سے ہو تو معنی حیاء کرنا ہے۔

تمہارا یہ مصنف (خرپوٹی) بتاتا ہے کہ مجھے مکہ میں اس شخص نے بتایا جن کی ملاقات سے میں مشرف ہوا اور ان کے ان فرمانوں پر فخر کیا جو انہوں نے بڑے بزرگوں سے سنے ہوئے تھے کہ مکہ کے ایک بزرگ نے خواب میں رسول اللہ ﷺ کی زیارت کے دوران آپ سے کچھ پوچھنا چاہا تو آپ نے فرمایا: پوچھو! میں نے عرض کی: یا رسول اللہ! ”الحیا من الایمان“ (الف مقصورہ سے) کہ کیا حیاء ایمان کا حصہ ہے؟ فرمایا: نہیں! وہ بیدار ہوئے اور اس پر تعجب کیا اور یہ واقعہ مکہ کے علماء کو سنایا، وہ

بھی اس پر حیران ہوئے کیونکہ انہیں اس صحیح روایت کا بھی یقین تھا اور یہ بھی جانتے تھے کہ اسے روایت کرنے والے ٹھوس اور ایماندار ہیں کیونکہ یہ لفظ بخاری شریف وغیرہ میں لکھا ہوا ہے چنانچہ انہوں نے دوسری رات بارگاہ اقدس میں انہیں دوبارہ توجہ کرنے کیلئے کہا، انہوں نے ایسا کیا تو حضور ﷺ کو ویسے ہی فرماتے سنا، انہوں نے علماء سے پھر بات کی، انہوں نے پھر توجہ کیلئے کہا تو تین راتوں تک انہوں نے یونہی کیا لیکن معاملہ ویسا ہی رہا چنانچہ انہوں نے اکٹھے ہو کر اس واقعہ کو لکھ کر مصر کے بادشاہ اور علماء کے پاس بھیجا۔ یہ واقعہ عظیم محدث علامہ شمس الدین بن حجر رحمہ اللہ کے دور میں ہوا، ابن حجر بھی یہ سن کر حیران ہوئے اور بادشاہ سے کہنے لگے کہ اس شخص کو بلائیں تاکہ وہ ہمارے پاس آئیں، ہم انہیں دیکھیں اور ان کی زبان سے سنیں۔

بادشاہ نے سفر خرچ کیلئے نقد رقم دے کر ایک شخص کو اس کے پاس بھیجا لیکن انہوں نے رقم لینے سے انکار کر دیا اور اسے لے کر بادشاہ کے پاس پہنچنے کے لئے چلے، پہنچے تو علماء اور بڑے بڑے لوگوں نے ان کا استقبال کیا پھر انہیں دیکھ کر ان سے پوچھا تو انہوں نے وہی واقعہ دہرا دیا جس پر وہ حیران ہو گئے چنانچہ انہوں نے یہ مسئلہ شام کے محدث امام برہان الدین رحمہ اللہ کی طرف بھیجا تو انہوں نے کہا کہ میں چاہتا ہوں اس شخص کو دیکھ کر خود اسی کی زبانی سنوں چنانچہ وہ انہیں ان کے پاس لے کر گئے تو وہاں بھی انہوں نے یہی واقعہ بتایا جس پر امام برہان الدین کو اس لفظ کے مدد والے ہونے اور الف مقصورہ والے ہونے میں فرق کا پتہ چلا چنانچہ انہوں نے فرمایا کہ رسول اللہ ﷺ نے سچ فرمایا ہے کیونکہ ”حیا“ الف مقصورہ سے ہو تو اس کا معنی بارش ہے لیکن حدیث میں یہ لفظ مدد والا ہے لیکن پھر بھی آپ بارگاہ اقدس سے پوچھئے، انہوں نے یونہی کیا تو انہوں نے آپ کی زیارت میں پوچھا تو آپ نے فرمایا کہ معاملہ یونہی ہے اللہ تعالیٰ تمہیں اور تمہارے استاد برہان الدین کو برکت دے۔ (انتہی)

”یُنْبِت“ کا ”حیا“ کی طرف اسناد مجازی ہے کہ یہ اپنے سبب کی طرف اسناد ہے۔

”الازہار“ (نصب سے) ”یُنْبِت“ کا مفعول ہے، یہ ”زہر“ کی جمع ہے۔

”اکم“ (دو حرفوں پر زبر) ”اکمہ“ کی جمع ہے جس کا معنی پہاڑ کی وہ چوٹی ہے جس پر پانی نہ

ٹھہر سکے۔

آپ کی سخاوت کو جو د سے تشبیہ دی ہے کہ عام طور پر اس میں نفع ہے اور اس بات سے نظر ہٹائی

ہے کہ آپ کی جگہ کوئی اور کچھ دے سکے۔

اس میں اس بات کی طرف اشارہ ہے کہ حضور انور ﷺ دونوں جہانوں کیلئے رحمت ہیں؛ پھر ظاہری اور باطنی طور پر عالم حضرات کے غنی ہونے کا سبب ہیں۔



شعر (۱۵۱)

وَلَمْ أُرِدْ زَهْرَةَ الدُّنْيَا الَّتِي اقْتَطَفْتُ

يَدًا زُهَيْرٍ بِمَا أَثْنَى عَلَيَّ هَرَمٌ

(ترجمہ:)"مجھے دنیا کی ان بہاروں کو حاصل کرنے کا شوق نہیں جنہیں "ہرم" کی تعریف کر کے زہیر کے دونوں ہاتھوں نے سمیٹا تھا۔"

جب پہلے شعر سے یہ بات نکلتی تھی کہ حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے آخرت کے نفع کو چھوڑ کر دنیا کا نفع حاصل کرنے کا ارادہ کیا ہے تو آپ نے اس خیال کو دور کرتے ہوئے فرمایا: "ولم ازد زهرة الدنيا الخ"۔

تحقیق الفاظ

"لم اُرد" کا مطلب ہے مجھے امید نہیں اور نہ ہی میں چاہتا ہوں۔

"زهرة" (نصب سے) "لم اُرد" کا مفعول ہے اور "زهرة الدنيا" سے مراد اس کی خوبصورتی، سامان، تروتازگی اور بہاریں ہیں۔ اس لفظ کے ساتھ اشارہ کیا ہے کہ یہ "زہرہ" کی طرح جلد ختم ہونے والی ہے اور یہ اشارہ بھی ہے کہ لوگ اس کے حسن اور لالچ کی خاطر اس کی آزمائش کا دھوکا کھائیں گے۔ کچھ نسخوں میں "هذه الدنيا" ہے جو تحقیر (حقیر اور گھٹیا سمجھنا) کیلئے ہے جیسے اللہ تعالیٰ کے فرمان میں ہے: "أَهَذَا الَّذِي يَذْكُرُ الْهَتَكُمْ" (سورۃ الانبیاء آیت: ۳۶) (کیا یہی وہ ہے جو تمہارے خداؤں کی بات کرتا تھا)۔

"والتي" "زہرہ" کی صفت ہے دنیا کی نہیں۔

"قطفت" "قطف الثمر" (اس نے پھل توڑا) سے ہے "اقتطفها" (اسے اچک لیا) اور یہ دونوں ہی اس شعر میں لئے گئے ہیں۔

زہیر شاعر کا تعارف

"یدا زہیر" "اقتطفت" کا فاعل ہے جو اصل میں "یدان" تھا زہیر بہت بڑے شاعر کا نام ہے جو زہیر ابوسلمی ہے حضرت عمر بن خطاب رضی اللہ عنہ کسی کو ان سے پہلے نہ گنتے تھے اور فرماتے تھے کہ زہیر بہترین شاعر ہے ان کے لڑکے کعب صحابی تھے جنہوں نے قصیدہ "بانس سعاد" لکھا

تھا۔

ابن درید کی وشاح میں ہے کہ زہیر کی کنیت ابو بکیر تھی اور ان کے علاوہ کسی اور نے ذکر کیا ہے کہ وہ حضور ﷺ کی نبوت سے پہلے فوت ہو گئے تھے۔

ثعلب میں حضرت ابن عباس رضی اللہ عنہما کی روایت ہے: مجھے حضرت عمر رضی اللہ عنہ نے فرمایا کہ اپنے سب سے اعلیٰ شاعر کا کلام سناؤ تو میں نے پوچھا کہ اے امیر المؤمنین! وہ کون ہیں؟ انہوں نے بتایا کہ زہیر ہیں۔

ابن الاعرابی لکھتے ہیں کہ زہیر کا شاعری میں وہ مقام تھا جو کسی اور کا نہیں تھا، ان کے والد شاعر، وہ خود شاعر، ان کے ماموں شاعر، بہن سلمیٰ شاعرہ، کعب اور بکیر دونوں بیٹے شاعر، ان کی بہن خنساء شاعرہ تھے چنانچہ حضرت معاویہ رضی اللہ عنہ فرماتے تھے: دورِ جاہلیت کے شاعروں میں زہیر بن ابوسلمیٰ بہت بڑا شاعر تھا جبکہ اس کے بیٹے حضرت کعب رضی اللہ عنہ دورِ اسلام کے بہت بڑے شاعر تھے۔

”بما اثنی“ میں باء سببیہ ہے یا بدل کیلئے ہے ”ما“ یا موصولہ ہے عبارت یوں ہے: ”الذی اثنی بہ“ یا مصدر یہ ہے یوں ہے: ”باثنائہ“۔

”ہرم“ (ہاء پرزبر اور راء پرزیر) یہ ہرم بن سنان تھا جو عرب کے بادشاہوں میں سے بہترین تھا، زہیر نے اس کی شان میں بہت سے قصیدے لکھے تھے جن میں سے وہ قصیدہ بھی ہے جس کا پہلا شعر یہ ہے:

غشیت دیارا بالقیع فتہمد

دوارس قد اقوین من امّ معبد

”میں نے بقیع میں کئی ایسے گھروں کو ڈھانکا، جو ویران ہو چکے تھے، ان کے نشان مٹ

چکے اور وہ امّ معبد سے زیادہ طاقت میں تھے“۔

بادشاہ کی طرف سے زہیر کو نقد عطیے اور کئی پوشاکیں ملی تھیں۔ شعر کا مطلب واضح ہے۔



دسویں فصل:

بارگاہِ مصطفیٰ ﷺ میں درخواستیں

شعر (۱۵۲)

يَا اَكْرَمَ الْخَلْقِ مَا لِي مِنْ الْوُدِّ بِهِ
سِوَاكَ عِنْدَ حُلُولِ الْحَادِثِ الْعَمَمِ

(ترجمہ:) ”اے پوری کائنات میں سب سے پیارے (محبوب)! جب مجھ پر بے شمار

پریشانیاں اتر رہی ہوں تو ایسے میں میں اپنا رونا دھونا آپ کے علاوہ کسے جاساؤں؟“
حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب حضور ﷺ کی ذاتی اور صفاتی خوبیاں اور کمالات بتادیئے تو پھر
غائبانہ باتیں بتانے کے بعد سامنے سمجھ کر اپنی اُمیدی پوری کرنے کیلئے براہِ راست درخواست کی
کیونکہ سوال کرتے ہوئے خطاب کرنا بات مانے جانے کے لیے غائبانہ طور پر خطاب کے مقابلے میں
زیادہ بہتر ہوتا ہے چنانچہ عرض کی: ”یا اكرم الخلق الخ“۔

تحقیق الفاظ

حضور ﷺ کے کریم ہونے کے بارے میں اس سے پہلے تفصیلی گفتگو ہو چکی ہے۔ اسے یاد رکھو!
”الخلق“ میں الف لام جنس کا ہے یا استغراق کا اس سے مراد مخلوق ہے۔ کچھ نسخوں میں ”یا
اکرم الرُّسُل“ تاہم اس سے حضور علیہ الصلوٰۃ والسلام کا ساری مخلوق سے افضل ہونا بطور دلالت
لازمی ہے۔ ”ما“ نافیہ ہے جو ”لیس“ کے معنی میں ہے۔ ”الوذ“ کا معنی درخواست کرتا ہوں ہے۔
”اعوذ بہ“ کا تعلق ”الوذ“ سے ہے اور ضمیر حضور ﷺ کی طرف جاتی ہے یعنی اللہ کی بارگاہ
میں شفاعت کیلئے (درخواست کرتا ہوں)۔

”سواک“ ظرف ہونے کی وجہ سے منصوب ہے۔ ”عند“، ”الوذ“ سے متعلق ہے۔

”عمم“ دونوں حرفوں پر زبریں اور پہلی میم پر زبر دونوں طرح لکھے ملتے ہیں یہ لفظ ”عمم“ سے ہے
جس کا معنی شامل ہونا اور گھیرا ڈالنا ہے اور ”حادث“ سے مراد پوری مخلوق ہے یا تو یہ موت ہے جو قیامت
صغریٰ ہے یا قیامت ہے جو قیامت کبریٰ ہے اور اس کے حلول و نزول سے مراد اس کے وقت کا آنا ہے۔

شعر (۱۵۳)

وَلَنْ يَضِيقَ رَسُولَ اللَّهِ جَاهُكَ بِي

إِذِ الْكَرِيمِ تَجَلَّى بِاسْمِ مُنْتَقِمِ

(ترجمہ:) ”یا رسول اللہ! جب اللہ کریم ”مُنْتَقِمِ“ (بدلہ لینے والا) کی شان میں آ کر ہر ایک کے سامنے ہوگا تو میری شفاعت پر رسول اللہ ﷺ کوئی فرق نہیں پڑے گا۔“
حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے رسول اکرم ﷺ کی خدمت میں دوبارہ نداء سے کام لیا ہے کہ آپ کو مانگنے اور مرادیں حاصل کرنے کا لالچ ہے، چنانچہ لکھا: ”وَلَنْ يَضِيقَ الْخ“۔

تحقیق الفاظ

واوِ حالیہ ہے۔ ”رَسُولَ اللَّهِ“ اس بناء پر منصوب ہے کہ اس کا حرف نداء محذوف ہے۔ ”الجاه“ کا معنی عزت ہے جس میں مرتبہ بلند ہوتا ہے۔ ”بِي“ کا معنی ہے: ”بشفاعتی“ اور میرا خیال کرنا۔ ”إِذِ“ بمعنی ”اذا“ ہے جو ظرف ہے ”تَجَلَّى“ یا توحاء کے ساتھ ہے جس کا معنی ہے: صفت والا ہوا یا جیم کے ساتھ جس کا معنی ہوگا: ظاہر اور سامنے ہوا۔ ”بِاسْمِ مُنْتَقِمِ“ یعنی ”مُنْتَقِمِ“ کی صفت میں۔ یاد رہے کہ حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے سب سے پہلے اللہ کا اسم گرامی ”کریم“ ذکر کر کے اسی کا ذکر کیا ہے حالانکہ یہ اللہ کی جمالی صفتوں میں سے ہے پھر اس کا نام مبارک ”مُنْتَقِمِ“ ذکر کیا جو بدلہ لینے کے مقام پر ہے حالانکہ یہ اس کی جلالی صفت ہے دونوں کے ذکر سے مقصد درمیانہ درجہ دینا ہے اور یہ کہ لوگوں کے دل نہ ٹوٹ سکیں یہ بڑی باریک ملاوٹ ہے اور بہتر معجون ہے۔

اگر تم کہو کہ ناظم کے قول ”إِذِ الْكَرِيمِ الْخ“ سے یہ بات نکلتی ہے کہ وہ آئندہ دور تک ”مُنْتَقِمِ“ ہوگا، ازل میں نہ تھا حالانکہ یہ خوبی اس میں ازل اور ابد میں ہے تو میں کہوں گا کہ ناظم اس میں بتانا چاہتے ہیں کہ جب کریم کے منتقم ہونے کا کامل اثر ظاہر ہوگا جیسے ظاہر ہے۔

شعر (۱۵۴)

فَإِنَّ مِنْ جُودِكَ الدُّنْيَا وَضَرَّتْهَا
وَمِنْ عُلُومِكَ عِلْمَ اللُّوحِ وَالْقَلَمِ

(ترجمہ:) ”کیونکہ اس دنیا اور اس کی ساری رونقیں آپ ہی کے طفیل ہیں اور لوح و قلم کے بے شمار علم آپ کے علموں کے مقابلے میں تھوڑی سی حیثیت رکھتے ہیں۔“

جب پہلے شعر میں امام بوصیری رحمہ اللہ نے ذرا پردے میں بات کی تھی تو اب آپ اسے تفصیل سے بتاتے ہیں اور سبب کا ذکر کرتے ہیں چنانچہ فرماتے ہیں: ”فإن من جودك الخ“۔
تحقیق الفاظ

”الجود“ کا مطلب ہے: کسی تک مناسب شے یوں پہنچانا کہ اس میں نہ تو بدلہ میں کچھ لینا ہو اور نہ ہی کوئی اور غرض ہو۔

”الدنيا“ (تقدیری نصب سے) ”ان“ کا اسم ہے اور دنیا کی ”مَضْرَت“ یہی آخرت ہے ناظم نے آخرت کو ”ضَرَّة“ کہا ہے کیونکہ ان دونوں کا اکٹھا ہونا مشکل ہے لیکن اللہ کی توفیق والے کیلئے مشکل نہیں جیسے دو عورتوں کو جمع کرنا مشکل ہے جیسے حضور ﷺ نے فرمایا ہے: جو اپنی آخرت کو پسند کرتا ہے تو اپنی دنیا خراب کرتا ہے اور جو اپنی دنیا پسند کرتا ہے وہ اپنی آخرت بگاڑ لیتا ہے۔ (الحديث) اس سلسلے میں بہت لطیف شعر یوں ہیں:

عَتَبْتُ عَلَى الدُّنْيَا لِتَاخِيرِ عَالَمِ
وَتَقْدِيمِ ذِي جَهْلٍ فَقَالَ خُذِ العُدْرِي
بَنُوا الجَهْلِ اَوْلَادِي لِذَاكَ وَفَعَتْهُمُ
وَاَهْلُ النَّهْيِ اَوْلَادُ ضَرَّتِي الْاُخْرَى

”میں نے دنیا پر ناراضگی کی ہے کہ جہان کے ختم ہونے میں دیر ہے اور جاہل کو آگے کرنے پر کی تو اس نے کہا: میں مجبور ہوں جاہل میری اولاد ہیں تو میں اسی وجہ سے ان کی شان بتاتا ہوں اور عقلمند میری قیامت والی اولاد ہیں۔“

کہتے ہیں کہ دونوں جہانوں پر آپ کی سخاوت یوں ہے کہ آپ ماہیات اور حقیقتوں کو وجود دینے

والے ہیں اور ہر موجود چیز پر آپ کی سخاوت چل رہی ہے تو گویا دونوں جہان آپ کی سخاوت کا صدقہ ہیں یا یوں کہنا مجاز ہوگا اور وہ یوں کہ ان دونوں میں بھلائی کا ہونا آپ کا کرم ہے اور آپ کی شفاعت کی برکت سے ہے۔

اس شعر میں حدیث ”لولاك“ کی طرف ہلکا سا اشارہ ہے۔

”من علومك“ کا ”من جودك“ پر عطف ہے۔

”العلوم“، ”علم“ کی جمع ہے یہ یا تو اپنے ہی معنی پر ہے یا معلوم کے معنی میں ہے یعنی یوں ہوگا کہ: لوح و قلم آپ کے معلومات میں سے ہیں یعنی وہ علوم جو لوح و قلم سے حاصل ہوتے ہیں۔

”علم اللوح“ (نصب ہے) ”الدنیا“ پر معطوف ہے ”اللوح“ سے مراد وہی کتاب مبین ہے۔ اس میں موجود بڑائی، باریکی اور حروف اور ان کی لکھائی عقل میں آنے والی چیزیں نہیں۔

لوحیں چار ہیں

کہتے ہیں کہ لوحیں چار ہیں جن میں سے ایک لوح قضاء ہے جس میں مٹنے اور ڈالی جانے والی کوئی چیز نہیں، یہی عقل اول کی لوح ہے، دوسری لوح القدر، یہ نفسِ ناطقہ کلّیہ کی وہ لوح ہے جس میں لوح اول کی کلّیات کو تفصیل سے بیان کیا گیا ہے اور اس کا تعلق اس کو ثابت رکھنے میں ہے، اسی کو لوح محفوظ کہتے ہیں اور تیسری لوح نفس جزئیہ سماویہ ہے جس میں اس جہان کی ہر شے کی شکل اور مقدار لکھی ہوئی ہے اور چوتھی لوح ہیولیٰ ہے جس میں اس عالم شہادت اور قلم کی ہر صورت موجود ہے اور یہی وہ لوح ہے جو سب چیزوں سے پہلے پیدا کی گئی، اللہ تعالیٰ نے اس کے تین سوساٹھ پہلو بنائے ہیں جن میں ہر پہلو میں اجمالی علموں کی تین سوساٹھ قسمیں ہیں، جن کی تفصیل اس نے لوح میں دی ہے۔

حضرت شیخ محی الدین ابن عربی رحمہ اللہ فرماتے ہیں: یاد رکھو کہ جب اللہ تعالیٰ نے قلم پر تجلی فرمائی تو اس میں سے دوسرا موجود نکلا جس کا نام اس نے لوح رکھا اور قلم کو حکم دیا کہ اس کی طرف جھکاؤ کرے اور اس میں وہ سب کچھ لکھ دے جو قیامت تک ہونے والا ہے۔ (انتہی)

حضرت امام شعرانی رحمہ اللہ نے اپنی کتاب ”الیواقیت والجوہر“ میں لکھا ہے کہ اگر تم کہو کہ کیا کسی ولی کو پتہ ہے کہ قیامت تک ہونے والے کاموں کی وہ تعداد جسے قلم نے لوح پر لکھا ہے، کتنی ہے تو اس کا جواب حضرت شیخ رحمہ اللہ نے فتوحاتِ مکیہ کے باب ۱۶۸ میں لکھا ہے کہ اللہ نے جنہیں ان چیزوں کی اطلاع دی ہے، ان میں سے میں بھی ہوں۔ پھر شیخ فرماتے ہیں کہ اللہ تعالیٰ نے اُم

الکتاب (قرآن کریم) میں موجود بنیادی قسم کے علموں کی تعداد بتا دی ہے جو ایک لاکھ اسیس ہزار چھ سو قسم ہیں، جن میں سے ہر ایک قسم میں کئی کئی علم موجود ہیں۔ (انتہی)

پھر یاد رہے کہ علماء کے مطابق ”علم“ مصدر ہے جو اپنے فاعل کی طرف مضاف ہے یعنی لوح و قلم میں موجود چیزوں کا علم جس پر یوں کہنے کی ضرورت ہوگی کہ انہیں علم اور سمجھ ہے۔

کچھ کہتے ہیں کہ ”علم“ اپنے مفعول کی طرف مضاف ہے یعنی یوں ”لوگوں کا لوح و قلم کے بارے میں علم“ اور یہ بھی کہتے ہیں کہ اللہ تعالیٰ نے حضور ﷺ کو ہر اس چیز کا علم دیا ہے جو قلم نے لوح محفوظ میں لکھ دیا ہے اور آپ نے اسے دیکھا بھی ہے کیونکہ لوح و قلم دونوں ہی ایک حد ہے تو جو کچھ ان میں ہے اس کی تعداد بھی محدود ہوگی اور حد والی چیز کو مکمل طور پر حد والا ہی جان سکتا ہے۔

یہاں شیخ زادہ رحمہ اللہ (شارح قصیدہ بردہ شریف) فرماتے ہیں کہ یہ تو تمہاری سوجھ بوجھ کے مطابق ہے لیکن جس کی بصیرت والی آنکھ میں نور الہی کا سرمہ موجود ہے تو وہ اپنے ذوق کے مطابق دیکھ سکتا ہے کہ لوح و قلم کے سارے علوم حضور ﷺ کے علم کے سامنے ویسے ہی تھوڑے سے ہیں جیسے آپ کے علوم، علم الہی کے سامنے ایک جز ہیں۔

شعر سے حاصل معنی یہ ہے کہ حضور ﷺ ظاہری اور باطنی نعمتوں کو مبداء اول (اللہ تعالیٰ) سے لینے کیلئے ایک ذریعہ ہیں، یہ وہ نعمتیں ہیں جو اوپر اور نیچے والی کائنات میں موجود ہیں اور جب یوں ہے تو پھر ناظم کو مرتبہ دینے میں اس کی مہربانی اور کافی ہونے میں آپ کا کیا حرج ہے کیونکہ اس کے علم میں اس کے دودھ پینے تک حال موجود ہے تو اس کی شفاعت میں کمی نہیں ہونی چاہیے۔



شعر (۱۵۵)

يَا نَفْسُ لَا تَقْنَطِي مِنْ زَلَّةٍ عَظُمَتْ
إِنَّ الْكَبَائِرَ فِي الْغُفْرَانِ كَاللَّمَمِ

(ترجمہ:) ”اے میرے نفس! کوئی بڑی غلطی ہونے پر بے اُمید ہونے کی ضرورت نہیں کیونکہ بخشش ہوگی تو بڑے گناہ بھی چھوٹوں ہی کی طرح بخش دیئے جائیں گے۔“

حضرت امام بوسیری رحمہ اللہ جب حضور ﷺ کی طرف سے شفاعت پر اُمید لگانے کا ذکر کر کے فارغ ہو گئے تو اپنے نفس کو حوصلہ دینے کیلئے اس سے ”یا“ کہہ کر بات کرتے ہیں اور سمجھتے ہیں کہ وہ نزدیکی کے گمان سے دور ہے اور پھر نفس کو بے اُمید ہونے سے روکتے ہوئے فرماتے ہیں کہ ”یا نفس الخ“۔

تحقیق الفاظ

کہتے ہیں کہ ”نفس“ کے لفظ پر یہاں پیش ہے کہ یہ نداء کئے جانے والا مفرد معرفہ ہے اور زیر سے بھی پڑھا گیا ہے کہ یہ نداء کیا گیا متکلم کی طرف مضاف ہے۔ صرف نفس ہی کو خطاب کرنے میں یہ بتایا جا رہا ہے کہ بے اُمیدی صرف نفس ہی سے پیدا ہوتی ہے۔

”لَا تَقْنَطِي“، ”قُنُوط“ سے ہے جو بڑی بے اُمیدی ہوتی ہے اور مفردات میں ہے کہ ”قُنُوط“ بھلائی کے کاموں سے بے اُمید ہونے کا نام ہے چنانچہ فارسی زبان میں آتا ہے کہ ”بھلائی سے بے اُمید ہو جانا“۔

پھر یاد رکھو کہ اللہ کی رحمت سے بے اُمیدی فطرتِ اسلامیہ کے نہ رہنے کی علامت ہے کیونکہ اس سے حق تعالیٰ اور بندے کے درمیان تعلق نہیں رہتا کیونکہ اگر اس کے نور میں سے کچھ باقی ہے تو بندہ اسے اس کی اس رحمت کا اثر سمجھے گا جو بڑی وسیع اور اس کے غضب پر بڑھی ہوئی ہے چنانچہ اس کے اثر کا اس کی طرف پہنچنا اس بناء پر ہے کہ یہ اس بقیہ کے ذریعے عالم نور سے ملا ہوا ہے۔

”زَلَّةٌ“ گناہ کو کہتے ہیں خواہ وہ بڑا ہو یا چھوٹا ”زَلَّةٌ“ وہ نہیں جو انبیاء علیہم السلام کے حق میں آئی ہے۔ ”عظمت“ کا معنی بڑی اور واضح۔

”ان الكبائر“ یہ نہیں کی علت ہے۔ یہ ”کبیرہ“ کی جمع ہے، یہ وہ گناہ ہیں کہ شارع علیہ الصلوٰۃ والسلام خاص طور پر ان کے بارے ڈانٹ بتاتے ہیں۔

”الذنب“ وہ جرم ہے کہ اس کے کرنے والے کو شریعت میں بُرا کہا جاتا ہے۔

کبیرہ گناہ کون کون سے؟

بڑے گناہوں کے بارے میں روایات کئی قسم کی ملتی ہیں چنانچہ حضرت ابن عمر رضی اللہ عنہما ان کی گنتی نو (۹) بتاتے ہیں جن میں یہ شامل ہیں: اللہ کا شریک بنانا، ناحق کسی کو قتل کرنا، نیک خاتون پر زنا کی تہمت لگانا، زنا کرنا، جنگ کے میدان سے بھاگ جانا، جادو کرنا، یتیم کا مال کھانا، مسلمان والدین کی بے فرمانی کرنا اور حرم میں بے دینی کی باتیں کرنا۔

یہ بھی کہتے ہیں کہ جس بے فرمانی پر کوئی ڈنٹا رہے تو وہ گناہ کبیرہ بنتی ہے اور جس سے بخشش مانگ لے وہ صغیرہ بن جاتی ہے۔

اس کی تفصیل ابن نجیم کے ایک مستقل رسالے میں ملے گی جس میں انہوں نے کبیرہ گناہ گنائے ہیں۔

”فی الغفران“، ”کاللمم“ کے کاف سے متعلق ہے ”لمم“ چھوٹے گناہ ہیں۔

شعر کا حاصل معنی یوں ہے کہ اے نفس! اللہ کی رحمت اور بخشش سے ایسی بے اُمیدی نہ کرو جو ان

گناہوں سے پیدا ہوتی ہے جو تمہارے گناہوں پر ڈٹے رہنے کی وجہ سے بڑے بن گئے کیونکہ بڑے

گناہ اس اللہ کی بخشش کے سامنے چھوٹے گناہوں جیسے ہوتے ہیں جو گناہوں کو بہت بخشنے والا ہے

کیونکہ اللہ تعالیٰ نے تاکید کے طور پر اپنے قول میں گناہوں کی بخشش کے متعلق فرمایا ہے: ”إِنَّ اللَّهَ

يَغْفِرُ الذُّنُوبَ جَمِيعًا“ (سورۃ الزمر آیت: ۵۳) خواہ کتنے ہی زیادہ کیوں نہ ہوں اور ریت کے

ذروں، پتوں اور ستاروں جتنے ہی کیوں نہ ہوں بڑے ہوں یا چھوٹے وغیرہ۔

کہتے ہیں کہ جب اللہ تعالیٰ کا یہ فرمان نازل ہوا کہ: ”الَّذِينَ يَجْتَنِبُونَ كَبَائِرَ الْإِثْمِ

وَالْفَوَاحِشِ إِلَّا اللَّمَمَ“ (سورۃ النجم آیت: ۳۲) تو حضور ﷺ نے وزن میں یہ کلام پڑھا:

إِنْ تَغْفِرِ اللَّهُمَّ فَاغْفِرْ جَمًّا

فَأَيُّ عَبْدٍ لَكَ مَا أَلَمَّا

”اے اللہ! اگر تو بخشنا چاہتا ہے تو سارے گناہ بخش دے کیونکہ پھر ایسا کون ہوگا جو دوبارہ

گناہ کرے۔“

شعر (۱۵۶)

لَعَلَّ رَحْمَةَ رَبِّي حِينَ يَقْسِمُهَا
تَأْتِي عَلَى حَسَبِ الْعَصِيَانِ فِي الْقِسْمِ

(ترجمہ:) ”(غور سے سنو) اللہ تعالیٰ جب اپنی رحمتیں بانٹ رہا ہوگا تو بانٹ میں گناہوں کے مطابق ہی ملیں گی۔“

حضرت ناظم رحمہ اللہ نے جب ”ان الكبائر الخ“ کہہ کر نفس کو بے اُمیدی کرنے سے روکنے کا سبب بتایا تو اس پر ایک اور سبب بڑھا دیا کیونکہ یہ ایک ضروری کام ہے تو فرمایا: ”لعل رحمة ربی الخ“۔

تحقیق الفاظ

”لعل“ اُمید رکھنے کے معنی میں ہے اسے لانے کا مقصد یہ ہے کہ زیادہ بہتر کام کرنا اللہ تعالیٰ پر لازم نہیں ہوتا کیونکہ اس کو اپنے کاموں کا اختیار ہے چنانچہ اس کا کوئی بھی کام فضل و کرم انصاف اور حکمت سے خالی نہیں ہوتا۔

”رحمة“، ”لعل“ کا اسم ہونے کی وجہ سے منصوب ہے ”حین“ بعد کے مصرعہ میں آنے والے ”تأتي“ کی ظرف ہے۔

”يقسمها“ یعنی ایسے بانٹے گا جیسے ”تأتي“ کے صلے میں بتایا گیا ہے۔

”الحسب“ کا معنی ہے قدر و قیمت۔ ”العصيان“ چھوٹے بڑے سب گناہوں کو شامل ہے۔

”فی“، ”حَسَبِ“ کی ظرف ہے۔ ”القسم“ (قاف پرزیر اور سین پرزیر) ”قسمة“ کی جمع ہے یعنی حصہ۔

شعر کا حاصل معنی یوں ہے کہ اے میرے نفس اتنا رہ! اللہ کی رحمت اور بخشش سے نا اُمید نہ ہو کیونکہ اللہ کی بخشش کے سامنے بڑے گناہ بھی چھوٹے گناہوں جیسے ہوں گے جبکہ مجھے اُمید اور لالچ ہے کہ اللہ تعالیٰ رحمت اور بخشش تقسیم کرے گا تو ہر ایک کے حصے میں وہ گناہوں کی مقدار کے مطابق آئے گی۔

اس شعر میں اس طرف اشارہ ہے جو حضرت ابو ہریرہ رضی اللہ عنہ نے بتایا تھا کہ میں نے رسول

اللہ صلی اللہ علیہ وسلم کو فرماتے سنا تھا کہ ”اللہ تعالیٰ نے رحمت کے سو حصے بنائے ہیں جن میں سے ننانوے اپنے پاس رکھے ہیں اور زمین پر ان میں سے ایک حصہ اتارا ہے چنانچہ اسی حصے کی بناء پر پوری مخلوق آپس میں رحمت سے پیش آتی ہے حتیٰ کہ چوپایہ اپنے بچے کیلئے پاؤں اٹھاتا ہے کہ وہ اس کا دودھ پی سکے (صحیح مسلم، کتاب التوبۃ، باب فی سعة رحمۃ اللہ تعالیٰ، صفحہ ۱۳۸۱، رقم الحدیث: ۲۷۵۲) تو یہ چیز بتاتی ہے کہ مسلمانوں کو یہ ابھارا جا رہا ہے، اُمید اور خوشخبری دلائی جا رہی ہے کیونکہ یہ اسی ایک رحمت کا نتیجہ ہے کہ ہمیں ظاہری اور باطنی رحمتیں مل رہی ہیں تو پھر تمہارا ان سو رحمتوں کے بارے میں کیا خیال ہے جو آخرت میں ملیں گی اور پھر یہ شعر اس روایت کی طرف بھی اشارہ ہے کہ ”ایک آدمی کو قیامت میں لایا جائے گا اور کہا جائے گا کہ اسے اس کے چھوٹے گناہ دکھاؤ لیکن بڑے چھپائے رکھو پھر اس سے کہا جائے گا کہ تم نے فلاں دن فلاں گناہ کیا تھا؟ وہ مانے گا اور انکار نہیں کرے گا لیکن بڑے گناہوں سے ڈرتا ہو گا جس پر ارشاد ہو گا کہ اسے ہر اس کی ہوئی بُرائی کے بدلے میں ایک نیکی دے دو اس پر وہ کہے گا: میرے گناہ تو اتنے ہیں جنہیں تم جانتے ہی نہیں۔“

راوی کہتے ہیں کہ میں نے رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم کو یہ سن کر اتنا ہنستے دیکھا کہ آپ کی ڈاڑھیں دکھائی دینے لگیں (مسند امام احمد بن حنبل، مسند الانصار، جلد ۸ صفحہ ۹۰، رقم الحدیث: ۲۱۳۵۱) جس سے اُمید کے وسیع ہونے کا پتہ چلتا ہے۔



شعر (۱۵۷)

يَا رَبِّ وَاجْعَلْ رَجَائِي غَيْرَ مُنْعَكِسٍ
لَدَيْكَ وَاجْعَلْ حِسَابِي غَيْرَ مُنْخَرِمٍ

(ترجمہ:) ”اے میرے پروردگار! میں تجھ سے جو جو اُمیدیں لگائے رکھتا ہوں، انہیں رڈ نہ فرما اور تیری رحمت کے بارے جو میں یقین رکھتا ہوں، اس پر مجھے بے اُمید نہ ہونے دے۔“

حضرت ناظم امام بوصیری رحمہ اللہ نے پچھلے شعر میں اللہ تعالیٰ کے بارے میں غائب کے الفاظ استعمال کئے تھے لیکن اب ان کی جگہ خطاب کے صیغے کی طرف مڑے ہیں کیونکہ خطاب کے ساتھ اُمید لگانا قبول ہونے میں زیادہ اثر دکھاتا ہے چنانچہ فرمایا: ”یا رب الخ“۔

تحقیق الفاظ

یاء کا لفظ کسی دور والے کو آواز دینے کیلئے لیا گیا ہے لیکن کبھی قریب کیلئے وہ لفظ لایا جاتا ہے جو دور والے کیلئے ہوتا ہے کیونکہ آواز دینے والے کو یہ لالچ ہوتا ہے کہ جسے جس کام کیلئے بلایا گیا ہے وہ اس کی طرف توجہ دے یا وہ اپنے آپ کو یہ سمجھتا ہے کہ وہ حقیر ہونے کی وجہ سے اس کے قریب ہونے کے لائق نہیں۔

”رَبِّ“ کی یاء محذوف ہے کہ صرف زبردینے ہی پر گزارہ کر لیا گیا ہے۔ ”رَبِّ“ کا معنی مالک ہے پھر ساتھی اور کسی شے کو آہستہ آہستہ مکمل کرنے والا ہوتا ہے۔

”واجعل“ کچھ نسخوں میں ”فاجعل“ (فاء سے) ہے۔ ”رجاء“ کا معنی اُمید لگانا ہے تو پھر یا تو یہ اسم مفعول کے معنی میں ہے یا اسم مصدر ہے یعنی نجات اور نیک بختی کی اُمید لگانا۔

”غیر منعکس“ (نصب سے) ”اجعل“ کا مفعول ہے جس کا معنی رڈ نہ ہونے والا ہے کیونکہ اُمید کا اُلٹ ہونا نقصان ہوتا ہے اور جس چیز کی اُمید لگائی جاتی ہے اس کا اُلٹ ہونا ہلاکت اور بد بختی ہے۔ ”لدای“ کا معنی قریب ہونا ہے۔

”الحساب“ کا لفظ تین معنوں کیلئے آتا ہے: گننا، خیال رکھنا اور گمان کرنا اور یہاں یہ سب

جائز ہیں چنانچہ پہلے کے لحاظ سے معنی یہ ہے کہ اپنی پے در پے نعمتیں میرے پاس کر دے دوسرے کے

لحاظ سے یہ ہے کہ میرا خیال رکھ کہ میں تجھ سے اور زیادہ نعمتیں لے سکوں اور تیسرے کے لحاظ سے یہ ہے کہ میں تمہارے بارے میں اچھا گمان رکھتا ہوں کیونکہ تُو نے خود فرمایا ہوا ہے کہ میں اپنے بندے کے گمان کے قریب ہوتا ہوں۔

(صحیح البخاری، کتاب التوحید، باب قول اللہ تعالیٰ ”وَسَخَّرَ لَكُمُ اللَّهُ نَفْسَهُ“ جلد ۴ صفحہ ۵۴۱، رقم الحدیث: ۷۴۰۵)

”غیر منخرم“ کا معنی ہے: نہ ٹوٹنے والا یہ ”خَرَمَهُ“ سے ہے یعنی اس نے اسے کاٹ دیا۔



شعر (۱۵۸)

وَالطَّفُ بِعَبْدِكَ فِي الدَّارَيْنِ إِنَّ لَهُ
صَبْرًا مَّتَى تَدْعُهُ الْأَهْوَالُ يَنْهَزِمُ

(ترجمہ:) ”اور اپنے اس بندے پر دونوں جہانوں میں مہربانی کا برتاؤ فرما کیونکہ گھبراہٹیں آتے ہی اس کا صبر ڈول جاتا ہے۔“

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ یہاں اللہ تعالیٰ کی ہر ایک پر مہربانی دیکھتے ہوئے اس سے اُمید لگا کر دعاء ختم کر رہے ہیں چنانچہ عرض کرتے ہیں کہ ”والطف بعبدك الخ“۔

تحقیق الفاظ

”الطف“ پوشیدہ قسم کا اچھا برتاؤ یا وہ کام جس کا ظاہر میں کوئی سبب نہ ہو۔

نیک و بد کو پوشیدہ رکھنے کی حکمت

علماء فرماتے ہیں کہ بندے کی عاقبت کو اس سے چھپائے رکھنا بھی اللہ تعالیٰ کی اس پر مہربانی ہے کیونکہ اگر اسے پتہ چل جائے کہ وہ نیک بخت ہے تو وہ نیک عمل تھوڑے کرے گا اور اپنے آپ ہی کو اچھا سمجھنے لگے گا اور اگر اسے پتہ چل جائے کہ وہ بد بخت ہے تو وہ بے اُمید ہو کر اللہ کے سامنے عاجزی کرنا چھوڑ دے گا۔

پھر یہ بھی کہتے ہیں کہ اللہ تعالیٰ کا اس کی موت کو اس سے چھپانا بھی اس کی طرف سے مہربانی

ہے۔

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے اسمِ ضمیر کی جگہ اسمِ ظاہر ذکر کیا ہے اور فرمایا ہے: ”بعبدك“،

”ببی“ نہیں فرمایا جس کا مقصد اللہ سے مہربانی مانگنا ہے جیسے شاعر نے کہا: ”إِلٰهِیْ عَبْدُكَ الْعَاصِیُ

أَتَاكَ“ (کہ اے اللہ! تیرا گنہگار بندہ تیری بارگاہ میں حاضر ہے)۔

”إِنَّ لَهُ“ استیناف ہے کہ نئی بات شروع کی ہے اور یہی اللہ کی مہربانی کیلئے سبب ہے۔

”فی الدارين“، ”الطف“ سے متعلق ہے اور ان دونوں سے مراد دنیا و آخرت ہے۔

”صبرا“ (نصب سے) ”ان“ کا اسم ہے اور ”لہ“ اس کی خبر ہے۔ ”متی“ ظرفِ زمانی

کا لفظ ہے جس میں وہ شرط بھی موجود ہے جو فعل کو جزم دیتی ہے۔

”تدعہ“ کو پڑھنے کے تین طریقے ہیں؛ دال سے جس کا معنی ہے: ”اسے بلائی ہیں“ راء سے جس کا معنی ہے: ”اسے ڈراتی ہیں“۔ اور آخری ”تَلَّقَهُ“، ”ملاقا“ سے۔

”الاهوال“، ”ہول“ کی جمع ہے، معنی سختی اور ڈر ہے۔

”ینہزم“ جزاء بننے کی وجہ سے مجزوم اور یہ جملہ شرطیہ اپنی جزاء سے مل کر ”صبرا“ کی صفت

ہے۔

حاصل معنی یہ ہے: اے مہربان! اپنے اس کمزور بندے پر مہربانی اور احسان فرما جو اپنے گناہ مانتا ہے اور دنیا و آخرت میں اسے سختیوں اور گھبراہٹوں سے بچائے رکھ کیونکہ تیرے بندے کا صبر ایسا ہے کہ جب اسے مشکلات پیش آتی ہیں تو اس کا صبر بھاگ جاتا ہے کہ وہ بہت کمزور ہے۔



شعر (۱۵۹)

وَأَذْنَ لِسُحْبِ صَلَوةٍ مِّنْكَ دَائِمَةً
عَلَى النَّبِيِّ بِمَنْهَلٍ وَمُنْسَجِمٍ

(ترجمہ:) ”(اے اللہ!) تو ان رحمت کے بادلوں کو اجازت دے دے کہ یہ اس نبی (ﷺ) پر شب و روز موسلا دھار بارش برساتے چلے جائیں۔“

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ نے جب یہ سمجھ لیا کہ حضور ﷺ کی خدمت اور پیروی کرنے میں ہر وقت اور ہر دن میں ایسا کوئی ذریعہ نہیں جو آپ سے بڑھ کر طاقت والا اور مضبوط ہو تو عرض کی کہ ”واذن لسحب صلوة“ الخ۔

واو عطفہ ہے یہ جملہ ”اجعل“ اور ”الطف“ پر معطوف ہے جس کا معنی اجازت دینا ہے ”والسحب“ جمع ”سحاب“ ہے اور ”صلوة“ سے مراد زیادہ سے زیادہ بزرگی اور عزت ہے۔

”منك“، ”صلوة“ کی صفت ہے اور ”دائمة“ اس کی صفت کے بعد دوسری صفت ہے۔ ”علی النبی“ کا تعلق ”صلوة“، ”دائمة“ سے ہے یا مقدر سے ہے۔ ”النبی“ سے مراد حضرت سیدنا محمد ﷺ ہیں۔

”بمنهل“ کا تعلق ”اِذْنُ“ سے ہے یعنی اجازت دے کہ موسلا دھار بارش کریں اور رکنے نہ پائیں، ”انہلت السماء“ سے ہے یعنی مسلسل برسیں، ”انهل المطر“ اس وقت کہتے ہیں جب بارش چلتی رہے۔

”منسجم“، ”سَجَمَ الدَّمْعُ وَأَنْسَجَمَ“ سے لیا گیا ہے جس کا معنی بہہ جانا ہے۔

حضرت امام بوصیری رحمہ اللہ کتنی اچھی شخصیت کے مالک ہیں کہ شعر میں بہترین طریقہ پر درود شریف کے ذکر اس کے دائمی ہونے، نازل ہونے، شروع کہاں سے ہونے، کہاں رکنے اور اس کی بہتات کو انصباب میں پھر اس کے عام ہونے، روانگی رہنے، جگہ بتانے، اسے بارشوں کے ساتھ تشبیہ دینے اور ان کے لیے بادل ثابت کرنے کو ایک شعر میں سمودیا ہے۔

کہتے ہیں: ”اِذْنُ“ میں یہ بتایا گیا ہے کہ درودوں کے بادل بن کر حاضر ہوتے ہیں اور اللہ کی

طرف سے اجازت ملنے کی انتظار میں ہوتے ہیں اور یہ اجازت تو ثابت ہے کیونکہ اللہ تعالیٰ اور اس کے فرشتے درود پاک پڑھتے ہی رہتے ہیں۔



شعر (۱۶۰)

وَالْأَلِ وَالصَّحْبِ ثُمَّ التَّابِعِينَ لَهُمْ
أَهْلَ التَّقَى وَالتَّقَى وَالْحِلْمِ وَالْكَرَمِ

(ترجمہ:) ”اور پھر یہ بادل آپ کی ایسی آل پاک صحابہ کرام اور ان کے تابعین پر برسا کریں کہ جو سب کے سب اللہ سے ڈرنے والے گناہوں سے پاک حوصلے والے اور مہربان تھے۔“

جب بندے کا اللہ کے قرب میں ہونے کا دار و مدار جیسے نبی کریم ﷺ پر ہے ویسے ہی آپ کی آل اور صحابہ و تابعین پر بھی ہے تو اسی وجہ سے آپ پر درود کے بعد ان سب پر بھی درود بھیجا ہے کہ اس میں اللہ کا قریبی بننا، امت کو راہ ہدایت پر چلنے کا طریقہ بتانا اور امت ہی کو مکمل کرنا پایا جاتا ہے تو لکھا:

”والال الخ“

تحقیق الفاظ

یہ بھی کہتے ہیں کہ ہر پرہیزگار اور ستھرا آل ہی ہے۔

یہاں وضاحت کی ضرورت ہے کیونکہ یہاں آل سے مراد حضور ﷺ کے اہل بیت ہیں۔
”الصحب“ لفظ ”صاحب“ کو مختصر کیا گیا ہے تاہم یہ اس شخص کے نزدیک ”صاحب“ کی جمع ہے جو ”رکب“ کو ”راکب“ کی جمع بناتا ہے۔ پھر ”ثم“ کا لفظ لانے میں اس طرف تشبیہ ہے کہ ان کا مرتبہ آل و اصحاب کے بعد آتا ہے یا صرف وزن کا لحاظ رکھ کر لایا گیا ہے جیسے ایک شاعر کے قول میں ہے:

”وعجمة ثم جمع ثم ترکیب“

”لہم“ کا تعلق ”التابعین“ سے ہے، ضمیر ”الاصحاب“ اور ”الال“ کی طرف جاتی ہے۔
”اہل التقی“ (زیر سے) ان میں سے ہر ایک کی صفت ہے یا رفع سے ہے جو محذوف مبتداء کی خبر ہے یعنی ”ہم“ کی اور ”التقی“ (پیش سے) تقویٰ جیسے ”ثراث“ ہے، تقویٰ کا معنی ہے: حرام کاموں سے بچنا اور ان کاموں سے بھی جو شبہ والے ہیں۔

”التقی“ نیک لوگ اور گناہوں سے پاک، بعض نسخوں میں یہاں ”النہی“ ہے جو ”نہیہ“

کی جمع ہے، یہ عقل کو کہتے ہیں اور ”الحلم“، ”الکرم“ کا بیان وہاں ہو چکا ہے جہاں آپ کی خوبیاں بتائی گئی ہیں تو ذہن میں رکھو۔

شعر کا مطلب یہ ہے کہ اے بھلائیاں اور عطائیں کرنے والے! تو ہمیشہ کی رحمت اپنے چنے ہوئے نبیؐ پسند کئے ہوئے رسولؐ ان کے اہل بیتؑ صحابہ اور ان کے ایسے تابعین پر اتارا کر جن میں ہر طرح کی خوبیاں اور اچھے اخلاق ہیں، جیسے تقویٰ، ستھرا ہونا، بردباری و حوصلہ اور مہربان ہونا اور وہ لوگ ہر لحاظ سے کامل تھے کہ اشرف المخلوقات کی بارگاہ میں ان کے سامنے ہوتے تھے چنانچہ اسی بناء پر وہ اس سلام و درود کے حقدار ہوئے۔



شعر (۱۶۱)

مَا رَنَّحْتُ عَذَابَاتِ الْبَانَ رِيْحٌ صَبَا
وَاطْرَبَ الْعَيْسَ حَادِي الْعَيْسِ بِالنَّعْمِ

(ترجمہ:) ”ان پر بارش کا یہ سلسلہ اس وقت تک جاری رہے جب تک صبح کی پیاری پیاری ہوا ”بان“ درخت کی ٹہنیوں کو ہلاتی رہے اور جب تک اونٹوں کو ہانکنے والے انہیں ہانکتے وقت خاص طریقے کی سُریریں لگاتے رہیں۔“

پھر درودِ پاک کے بعد وہ کچھ بیان کیا جس کے ذریعے اس کا سلسلہ جاری رہے اور قیامت تک یہ کام ہوتا رہے۔ اس لئے کہا: ”ما رنحت الخ“۔

تحقیق الفاظ

”ما“ مصدریہ ہے جس کا معنی مدت ہے اور یہ مدت دنیا کے رہنے تک کی ہے۔
”رَنَّحْتُ“ کا معنی ہے: ہلاتی اور ادھر ادھر جھکتی رہے۔ ”عذبات“، ”رَنَّحْتُ“ کا مفعول ہے اور یہ ”عذبة“ کی جمع ہے جس کا معنی ٹہنی ہے۔ ”البان“ درختوں کی ایک قسم ہے جیسے قصیدہ مبارکہ کی ابتداء میں بتایا گیا ہے۔

”ریح“ (رفع سے) ”رَنَّحْتُ“ کا فاعل ہے یہ مؤنث سماعی ہے اور اس کی صبا کی طرف اضافت ویسی ہی ہے جیسے عام لفظ کی خاص کی طرف ہوتی ہے جیسے ”شجر الاراک“ میں ہے۔ صبا وہ ہوا ہے جو دن رات کے برابر ہونے کے وقت سورج چڑھنے کی جگہ سے چلتی ہے۔

ہوا کے چار اقسام

حلیۃ الکیمیت میں یوں لکھا ہے: یاد رہے کہ ہوائیں چار طرح کی ہوتی ہیں ”صبا“ اسے ”قبول“ بھی کہتے ہیں یہ بے چین شخص کی وجہ سے نکلنے والا سانس ہوتا ہے۔

ابن خلکان نے بتایا ہے کہ ”صبا“ کی ہوانے اپنے پروردگار سے اجازت مانگی کہ حضرت یوسف علیہ السلام کی ہوا کو حضرت یعقوب علیہ السلام تک بشیر کے ان تک قمیص پہنچانے سے پہلے پہنچا دئے چنانچہ اسے اجازت دے دی گئی تو اس نے ان تک پہنچا دی یہی وجہ ہے ہر غمگین شخص صبا کی ہوا کے ذریعے سکون حاصل کرتا ہے یہ مشرق سے چلتی ہے اور جب یہ بدنوں پر چلتی ہے تو انہیں

تروتازہ اور نرم کر دیتی ہے اور انسان کے شوق کو ان کے وطنوں اور دوستوں تک پہنچنے کیلئے ابھارتی ہے۔ (وفیات الاعیان لابن خلکان، الجزء الرابع، حرف المیم، صفحہ ۶۳، رقم الحدیث: ۵۹۰)

دوسری ”جنوب“ یہ بادلوں کو اکٹھا کرتی ہے اور گھوڑا اسی سے پیدا کیا گیا ہے جیسے حاکم ابو عبد اللہ نیشاپوری نے حضرت علی بن ابوطالب رضی اللہ عنہ کے بیان کے مطابق لکھا ہے کہ نبی کریم ﷺ نے فرمایا: جب اللہ تعالیٰ نے گھوڑے کو پیدا کرنا چاہا تو ”جنوب“ ہوا کو حکم دیا کہ میں تجھ سے ایک مخلوق پیدا کرنا چاہتا ہوں تو جلدی آؤ! وہ حاضر ہو گئی اسی دوران حضرت جبریل علیہ السلام آئے اور اس میں سے مٹھی بھر لے لی تو اللہ تعالیٰ نے فرمایا کہ یہ میرے قبضے میں ہے اور پھر اس سے سیاہی مائل سرخ رنگ کا گھوڑا بنا دیا اور فرمایا کہ میں نے تجھے گھوڑا بنا دیا ہے اور عرب کا جانور بنا کر ان سارے مویشیوں سے بڑھا دیا ہے۔ (الحدیث) (کنز العمال، کتاب الجھاد، جلد ۴ صفحہ ۱۹۹، رقم الحدیث: ۱۱۳۷۸)

”شمال“ جسے ”دَبُور“ بھی کہتے ہیں یہ وہ ہوا ہوتی ہے جو مکانوں کو گراتی اور درخت اکھاڑ پھینکتی ہے اور یہی وہ ”ریح عقیم، عاصِف“ اور ”صَرَصَر“ ہے جس کا قرآن کریم میں ذکر ہے اور قرآن میں جہاں جہاں ”ریح“ کا لفظ آیا ہے اس سے مراد ”دَبُور“ ہے۔

”اَطْرَب“ کا معنی ہے: اسے جھومنے پر لگا دیا۔ ”طَرَب“ (دوز بروں سے) یہ وہ پھرتیلا پن ہے جو انسان کو بہت خوشی کے موقع پر ملتا ہے۔

”العیس“، ”اعیس“ کی جمع ہے جیسے ”بیض“، ”ابیض“ کی جمع ہے یہ سفید گھوڑے یا ایسے کو کہتے ہیں جس کی سفیدی میں زرد رنگ بھی ملا ہوا ہو۔

”حادی العیس“ (رفع سے) ”اَطْرَب“ کا فاعل ہے ”حادی“ اونٹوں کو چلانے اور رکھوالی کرنے والے کو کہتے ہیں ”عیس“ کو دوبارہ لانا صرف مزہ لینے کیلئے ہے۔

”نغم“ (دونوں حرفوں پر زبر) ”نغمہ“ کی جمع ہے جو خوبصورت آواز ہوتی ہے۔

قصیدہ کے آخر میں ”نغم“ کا لفظ لانے میں یہ بتایا جا رہا ہے کہ اس قصیدہ کو پڑھتے وقت طرز لگا کر پڑھو کیونکہ شعروں میں ہے اور یہ ہر ایک جانتا ہے کہ شعر طرز لگا کر ہی پڑھے جاتے اور انہیں دلچسپ کیا جاتا ہے۔

شعر سے حاصل معنی یہ ہے کہ: اے بھلائی اور فیض عطا فرمانے والے! بادلوں کو اس کی اجازت اور حکم دے کہ جب تک ”بان“ درخت کو ہوا ہلاتی رہے اور سفید اونٹوں کو ہانکنے والے مزے کی آواز

سے ہانکتے رہیں۔

اللہ مالک و علام کی مدد اور سید الانام ﷺ کی شفاعت پر میں یہ کتاب ماہ رمضان ۱۴۴۲ھ میں لکھ کر فارغ ہوا۔ میں اپنے علمی بھائیوں سے درخواست کروں گا کہ اگر میری بے علمی اور بے خیالی کی وجہ سے اس میں کوئی غلطی یا خرابی رہ گئی ہے تو اسے درست کر دیں کیونکہ یہ میری پہلی تصنیف ہے جس میں اللہ تعالیٰ کی مدد شامل ہے حالانکہ میرے حالات اچھے نہ تھے اور دل بھی پریشان تھا۔ میں نے اپنے استادوں اور بڑے بڑے علماء سے اس میں راہنمائی لی ہے۔ والحمد للہ رب العلمین و صلی اللہ تعالیٰ علی سیدنا محمد وآلہ وصحبہ اجمعین وسلم تسلیماً کثیراً۔

الحمد للہ کہ مورخہ ۲۸ جنوری ۲۰۱۵ء کو شروع کیا جانے والا یہ ترجمہ آج دن ۱۱ بج کر دس منٹ پر پورا ہو جس کی تفصیر پر علمی برادران کی طرف سے تنبیہ اور مبلغ صحت تک رسائی کی صورت میں دعاء و تحسین کا حق رکھتا ہوں اور اسی بناء پر اپنے شیخ، شیخ الاسلام خواجہ قمر الدین سیالوی، فقیہ و مفتی اعظم پاکستان الحاج ابوالخیر مفتی محمد نور اللہ نعیمی بصیر پور، مفتی اعظم پاکستان سید ابوالبرکات قادری الوری لاہور، مفتی اعظم پاکستان مفتی محمد حسین نعیمی اور حضرت العلام علامہ ابوالحسنات محمد اشرف سیالوی سرگودھا رحمہم اللہ جیسے دور کے نامور اساتذہ کرام کیلئے دلی گہرائیوں سے دعاء کرتا ہوں اللہ تعالیٰ ان کے مراتب میں اضافہ فرماتا جائے۔ آمین

شاہ محمد چشتی سیالوی (پتو)

محلہ محمود پورہ، قصور

0321-6577473



(للْبَابُجُورِيِّ)

شرح قصيدته

تأليف

شرح شيخ الاسلام
الشيخ ابراهيم الباجوري

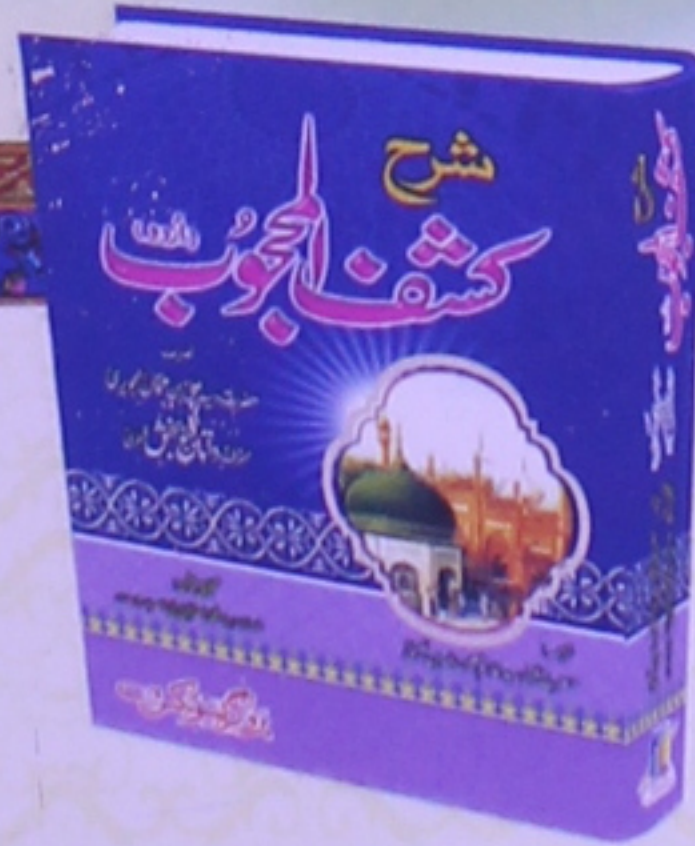
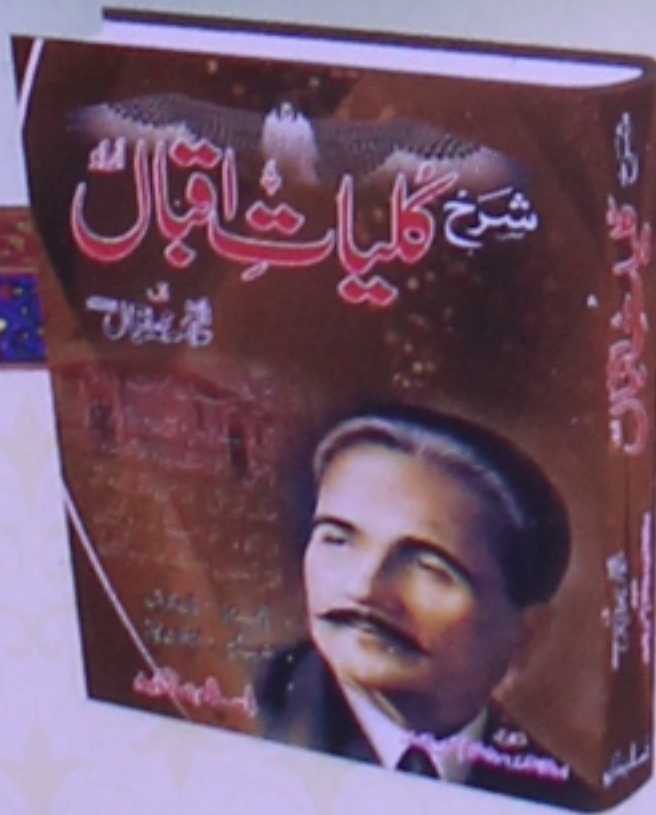
مترجم

حافظ حامد حسين القادري الشازلي

مكتبة الكعبة، غزني، سرحد
اردو بازار، لاہور
فون 042-37124354 فکس 042-37352795

پروفیسر سید سعید

ہمارے ادارے کی دیگر مطبوعات
دلکش طباعت، تحقیقی اور منفرد موضوعات معیار اور جدت کی علامت



یوسف مارکیٹ، غزنی سٹریٹ
اردو بازار، لاہور

فون 042-37124354 فیکس 042-37352795

پروکسپس بکس